तेतिरीय ब्राह्मणम्

Colophon

This document was typeset using X₂MT_EX, and uses the Siddhanta font extensively. It also uses several MT_EX macros designed by *H. L. Prasād*. Practically all the encoding was done with the help of Ajit Krishnan's mudgala IME (http://www.aupasana.com/).

Acknowledgements

The initial ITRANS encodings of some of these texts were obtained from http://sanskritdocuments.org/ and https://sa.wikisource.org/. Thanks are also due to Ulrich Stiehl (http://sanskritweb.de/) for hosting a wonderful resource for Yajur Veda, and also generously sharing the original Kathaka texts edited by Subramania Sarma. See also http://stotrasamhita.github.io/about/

FOR PERSONAL USE ONLY
NOT FOR COMMERCIAL PRINTING/DISTRIBUTION

अनुऋमणिका

| তা | प्टकम् १ | | | | | | | | | | | | | | | | | 1 |
|----|-------------------|--|---|---|---|---|---|---|--|---|---|---|---|---|---|---|---|-----|
| | प्रथमः प्रश्नः . | | | | | | | | | | | | | | | | | 1 |
| | द्वितीयः प्रश्नः | | • | • | • | • | • | • | | | • | • | | | • | | | 23 |
| | तृतीयः प्रश्नः | | | | | | | | | | | | | | | | | 37 |
| | चतुर्थः प्रश्नः . | | | | | | | | | | | | | | | | | 55 |
| | पञ्चमः प्रश्नः . | | | | | | | | | | | | | | | | | 74 |
| | षष्ठमः प्रश्नः . | | | | | | | | | | | | | | | | | 92 |
| | सप्तमः प्रश्नः . | | | | | | | | | | | | | | | | | 112 |
| | अष्टमः प्रश्नः | | | | | | | | | | | | • | | • | | | 130 |
| अ | ष्टकम् २ | | | | | | | | | | | | | | | | | 141 |
| | प्रथमः प्रश्नः . | | | | | | | | | | | | | | | | | 141 |
| | द्वितीयः प्रश्नः | | | | | | | | | | | | | | | | | 157 |
| | तृतीयः प्रश्नः | | | | | | | | | | | | | | | | | 177 |
| | चतुर्थः प्रश्नः . | | | | | | | | | | | | | | | | | 192 |
| | पञ्चमः प्रश्नः . | | | | | | | | | | | | | | | | | 214 |
| | षष्ठमः प्रश्नः . | | | | | | | | | | | | | | | | | 228 |
| | सप्तमः प्रश्नः . | | | | | | | | | | | | | | | | | 257 |
| | अष्टमः प्रश्नः | | | • | • | | | • | | • | • | | • | • | • | • | • | 276 |
| अ | ष्टकम् ३ | | | | | | | | | | | | | | | | | 300 |
| | प्रथमः प्रश्नः . | | | • | • | • | • | • | | • | • | • | • | • | • | | | 300 |
| | | | | | | | | | | | | | | | | | | |

| | _ | | | | | | | | | | | | | | | | | | |
|-----|-------------------|----------------|--------|-----|----------------|------------|------|------|-----|----|--|--|---|---|--|--|---|---|-----|
| | द्वितीयः प्रश्नः | | | | | | | | | | | | | | | | • | | 320 |
| | तृतीयः प्रश्नः | | | | | | | | | | | | | | | | | | 344 |
| | चतुर्थः प्रश्नः . | | | | | | • | | | • | | | • | | | | • | | 366 |
| | पञ्चमः प्रश्नः . | | | | | | | | | | | | | | | | | | 371 |
| | षष्ठमः प्रश्नः . | | | | | | | | | | | | | | | | | | 380 |
| | सप्तमः प्रश्नः . | | | | | | | | | • | | | • | | | | • | | 394 |
| | अष्टमः प्रश्नः | | | | | | | | | | | | | | | | | | 430 |
| | नवमः प्रश्नः . | | | | | | | | | | | | | | | | | | 458 |
| ~~ | | | | | | | | | | | | | | | | | | | |
| तीं | त्तरीय आरण | पव | 5म् | | | | | | | | | | | | | | | | 485 |
| | प्रथमः प्रश्नः — | _ | भरु | णुऽ | _र ि | 1 : | | | | | | | | | | | | | 485 |
| | द्वितीयः प्रश्नः | | | | | | | | | | | | | | | | | | 520 |
| | तृतीयः प्रश्नः | | | | | | | | | | | | | | | | | | 535 |
| | चतुर्थः प्रश्नः . | | | | | | | | | | | | | | | | | | 549 |
| | पञ्चमः प्रश्नः . | | | | | | | | | | | | | | | | | | 575 |
| | षष्टः प्रश्नः . | | | | | | | | | | | | | | | | | | 605 |
| | सप्तमः प्रश्नः – | _ 3 | शीक्ष | गुट | ह | र्री | | | | | | | | | | | | | 619 |
| | अष्टमः प्रश्नः – | <u> </u> | ब्रह्म | ान | न्द | ्व | ह्री | | | | | | | | | | | | 625 |
| | नवमः प्रश्नः — | _) | गुर | बह | द्गी | | | | | | | | | | | | | | 631 |
| | दशमः प्रश्नः – | _ 1 | नहा | ना | रा | या | गोप | र्ना | नेष | त् | | | • | • | | | | • | 636 |
| | ~ ~ ~ | <i>></i> ~ | | | | | | | | | | | | | | | | | |
| कृष | ग्गयजुर्वेदीयत | नांच | तरं | य | [<u>-</u> 7 | わ | ठ | क | म् | | | | | | | | | | 673 |
| | प्रथमः प्रश्नः . | | | | | | • | | | • | | | • | • | | | • | • | 673 |
| | द्वितीयः प्रश्नः | | | | | | | | | | | | | | | | | | 686 |

| अनुऋमणिका | iii |
|-----------|-----|
| | |

| तृतीयः प्रश्नः |
|----------------|
|----------------|

प्रथमः प्रश्नः 1

॥ अष्टकम् १॥

॥प्रथमः प्रश्नः॥

॥ तैत्तिरीयब्राह्मणे प्रथमाष्टके प्रथमः प्रपाठकः॥

ब्रह्म सन्धंत्तं तन्में जिन्वतम्। क्षत्र र सन्धंत्तं तन्में जिन्वतम्। इष् र सन्धंत्तं तां में जिन्वतम्। ऊर्ज्र सन्धंत्तं तां में जिन्वतम्। उर्ज्र सन्धंत्तं तां में जिन्वतम्। पृष्टिर सन्धंत्तं तां में जिन्वतम्। पृष्टिर सन्धंत्तं तां में जिन्वतम्। पृश्चन्त्सन्धंत्तं तान्में जिन्वतम्। पृजार सन्धंत्तं तां में जिन्वतम्। पृश्चन्त्सन्धंत्तं तान्में जिन्वतम्। स्तुतोऽस् जनंधाः। देवास्त्वां शुक्रपाः प्रणंयन्तु॥१॥

स्वीराः प्रजाः प्रंजनयन्परीहि। शुक्रः शुक्रशोविषा। स्तुतोऽसि जनेधाः। देवास्त्वां मन्थिपाः प्रणंयन्तु। सुप्रजाः प्रजाः प्रंजनयन्परीहि। मन्थी मन्थिशोविषा। सञ्जग्मानौ दिव आपृंथिव्यायुः। सन्धंत्तं तन्मे जिन्वतम्। प्राणः सन्धंत्तं तं मे जिन्वतम्। अपानः सन्धंत्तं तं मे जिन्वतम्॥२॥ व्यानः सन्धंत्तं तं मे जिन्वतम्। अत्रः सन्धंत्तं तन्मे जिन्वतम्। श्रोत्रः सन्धंत्तं तन्मे जिन्वतम्। श्रोत्रः सन्धंत्तं तन्मे जिन्वतम्। श्रात्रः सन्धंत्तं तन्मे जिन्वतम्। आयुः स्थात्तं तन्मे जिन्वतम्। आयुः स्थात्तं तन्मे जिन्वतम्। आयुः स्थात्तं तां मे जिन्वतम्। आयुः स्थात्तां तन्मे जिन्वतम्। आयुः स्थात्तां तां मे जिन्वतम्। आयुः स्थात्तां तन्मे जिन्वतम्। आयुः स्थात्तां तां मे जिन्वतम्। आयुः स्थातां तन्मे प्राणः स्थाः प्राणं मे धत्तम्। प्राणं यज्ञायं धत्तम्॥३॥ प्राणः यज्ञपंतये धत्तम्। चक्षुं स्थाः स्थाः प्राणं यज्ञपंतये धत्तम्। चक्षुं य्ज्ञपंतये धत्तम्। चक्षुं स्थाः स्थाः स्थाः प्राणं यज्ञपंतये धत्तम्। चक्षुं य्ज्ञपंतये धत्तम्। चक्षुं य्ज्ञपंत्रपंतये धत्तम्। चक्षुं य्ज्ञपंतये धत्तम्। चक्षुं य्ज्ञपंत्रपंतये धत्तम्। चक्षुं याप्तये धत्यये धत्तम्। चक्षुं याप्तये धत्तम्यः याप्तये धत्तम्। चक्षुं याप्तये धत्तम्यः याप्तये धत्तम्यः याप्तये धत्तम्यः याप्यये धत्तम्यः याप्तये धत्तम्यः याप्यये विष्यये व

धत्तम्। चक्षुंर्य्ज्ञपंतये धत्तम्। श्रोत्रई स्थः श्रोत्रं मे धत्तम्। श्रोत्रं यज्ञायं धत्तम्। श्रोत्रं यज्ञपंतये धत्तम्। तौ देवौ शुक्रामन्थिनौ। कुल्पयंतुं दैवीर्विशंः। कुल्पयंतुं मानुंषीः॥४॥

इष्मूर्जम्समास् धत्तम्। प्राणान्पशुषुं। प्रजां मियं च यजंमाने च। निरंस्तः शण्डंः। निरंस्तो मर्कः। अपंनृत्तौ शण्डामर्को सहामृनां। शुक्रस्यं समिदंसि। मृन्थिनः समिदंसि। स प्रथमः सङ्कृतिर्विश्वकर्मा। स प्रथमो मित्रो वरुणो अग्निः। स प्रथमो बृह्स्पतिश्चिकित्वान्। तस्मा इन्द्रांय सुतमा जुहोमि॥५॥ न्यन्त्वपानः सन्धतं तं में जिन्वतं प्राणं यज्ञायं धतं मानुंपीर्ग्निर्हे चं॥ (ब्रह्मं क्षत्रं तदिष्मूर्जः रिवं पृष्टं प्रजां तां पृश्न्तान्त्सन्धतं तत्याणमंपानं व्यानं तं चक्षः श्रोतं मनस्तद्वाचं ताम। इपादिपश्चे वाचं तां में पृश्वन्तमन्थतं तत्याणमंपानं व्यानं तं चक्षः श्रोतं मनस्तद्वाचं ताम। इपादिपश्चे वाचं तां में पृश्वन्तमन्थतं तत्याणमंपानं व्यानं तं चक्षः श्रोतं मनस्तद्वाचं ताम। इपादिपश्चे वाचं तां में पृश्वन्तमन्थतं तत्याणमंपानं व्यानं तं चक्षः श्रोतं मनस्तद्वाचं ताम। इपादिपश्चे वाचं तां में पृश्वन्तमन्थतं तानमें प्राणादित्रितंये तं मेऽन्यत्र तन्में॥१॥——[१]

कृत्तिंकास्विग्निमादंधीत। एतद्वा अग्नेर्नक्षंत्रम्। यत्कृत्तिंकाः। स्वायांमैवैनं देवतांयामाधायं। ब्रह्मवर्चसी भवति। मुखं वा एतन्नक्षंत्राणाम्। यत्कृत्तिंकाः। यः कृत्तिंकास्विग्नमांधृत्ते। मुख्यं एव भवति। अथो खलुं॥६॥

अग्निन्क्षत्रमित्यपंचायन्ति। गृहान् ह् दाहुंको भवति। प्रजापंती रोहिण्यामग्निमंसृजत। तं देवा रोहिण्यामादंधत। ततो वै ते सर्वान्नोहानरोहन्। तद्रोहिण्यै रोहिणित्वम्। यो रोहिण्यामग्निमांधत्ते। ऋभ्नोत्येव। सर्वान्नोहान्नोहति। देवा वै भुद्राः सन्तोऽग्निमाधित्सन्त॥७॥ तेषामनाहितोऽग्निरासीत्। अथैंभ्यो वामं वस्वपांकामत्। ते पुनंवस्वोरादंधता ततो वै तान् वामं वसूपावर्तता यः पुराऽभद्रः सन्पापीयान्तस्यात्। स पुनंवस्वोर्ग्निमादंधीता पुनंरेवैनं वामं वसूपावर्तते। भुद्रो भंवति। यः कामयेत् दानकामा मे प्रजाः स्युरितिं। स पूर्वयोः फल्गुंन्योरग्निमादंधीत॥८॥

अर्यम्णो वा एतन्नक्षंत्रम्। यत्पूर्वे फल्गुंनी। अर्यमिति तमांहुर्यो ददांति। दानंकामा अस्मै प्रजा भंवन्ति। यः कामयंत भगी स्यामिति। स उत्तंरयोः फल्गुंन्योर्ग्निमादंधीत। भगंस्य वा एतन्नक्षंत्रम्। यद्त्तंरे फल्गुंनी। भग्येव भंवति। कालकुआ वै नामासुंरा आसन्॥९॥

ते सुंवर्गायं लोकायाग्निमंचिन्वत। पुरुष इष्टंकामुपांदधात्पुरुष इष्टंकाम्। स इन्द्रौं ब्राह्मणो ब्रुवांण इष्टंकामुपांधत्त। एषा में चित्रा नामेतिं। ते सुंवर्गं लोकमा प्रारोहन्। स इन्द्र इष्टंकामावृंहत्। तेऽवांकीर्यन्त। येऽवाकींर्यन्त। त ऊर्णावभंयोऽभवन्। द्वावुदंपतताम्॥१०॥

तौ दिव्यौ श्वानांवभवताम्। यो भ्रातृंव्यवान्त्स्यात्। स चित्रायामग्रिमादंधीत। अवकीर्यैव भ्रातृंव्यान्। ओजो बलंमिन्द्रियं वीर्यमात्मन्धंत्ते। वसन्तौ ब्राह्मणौंऽग्निमादंधीत। वसन्तो वै ब्रौह्मणस्यर्तुः। स्व एवैनंमृतावाधायं। ब्रह्मवर्चसी भंवति। मुखं वा एतदंतूनाम्॥११॥

यद्वंसन्तः। यो वसन्ताऽग्निमांधत्ते। मुख्यं एव भंवति। अथो योनिमन्तमेवैनं प्रजातमाधंत्ते। ग्रीष्मे राजन्यं आदंधीत। ग्रीष्मो वै राजन्यंस्युर्तुः। स्व एवैनंमृतावाधायं। इन्द्रियावी भंवति। श्रदि वैश्य आदंधीत। श्रद्धे वैश्यंस्युर्तुः॥१२॥

स्व प्वैनंमृतावाधायं। पृशुमान्नंवति। न पूर्वयोः फल्गुंन्योर्ग्निमार्दधीत। पृषा वै जंघन्यां रात्रिः संवत्स्रस्यं। यत्पूर्वे फल्गुंनी। पृष्टित एव संवत्स्रस्याग्निमाधायं। पापीयान्भवति। उत्तरयोरा दंधीत। एषा वै प्रंथमा रात्रिः संवत्स्रस्यं। यद्त्तंरे फल्गुंनी। मुख्त एव संवत्स्रस्याग्निमाधायं। वसीयान्भवति। अथो खलुं। यदैवैनं यज्ञ उपनमैत्। अथादंधीत। सैवास्यर्द्धिः॥१३॥

खल्बांधित्सन्त फल्गुंन्योरुग्निमादंधीतासन्नपततामृतूनां वैश्यंस्युर्तुरुत्तरे फल्गुंनी षट्वं॥२॥———[२]

उद्धंन्ति। यदेवास्यां अमेध्यम्। तदपंहन्ति। अपोऽवौक्षिति शान्त्यै। सिकंता निवंपति। एतद्वा अग्नेवैश्वान्रस्यं रूपम्। रूपेणैव वैश्वान्रमवंरुन्धे। ऊषां निवंपति। पृष्टिर्वा एषा प्रजननम्। यदूषाः ॥१४॥

पुष्टामिव प्रजनेनेऽग्निमाधेत्ते। अथो संज्ञानं एव। संज्ञान् र् ह्येतत्पंशूनाम्। यदूषाः। द्यावांपृथिवी सहास्ताम्। ते वियती अंब्रूताम्। अस्त्वेव नौं सह यज्ञियमितिं। यदुमुष्यां युज्ञियमासीत्। तद्स्यामंदधात्। त ऊषां अभवन्॥१५॥

यद्स्या यज्ञियमासींत्। तद्मुष्यांमद्धात्। तद्दश्चन्द्रमंसि कृष्णम्। ऊषांन्निवपंत्रदो ध्यांयेत्। द्यावांपृथिव्योर्व यज्ञियेऽग्निमाधंत्ते। अग्निर्देवेभ्यो निलायत। आखू रूपं कृत्वा। स पृंथिवीं प्राविंशत्। स ऊतीः कुर्वाणः पृथिवीमनु समंचरत्। तदांखुकरीषमंभवत्॥१६॥

यदांखुकरीष संम्भारो भवंति। यदेवास्य तत्र न्यंक्तम्। तदेवावंरुन्थे। ऊर्जं वा एत रसं पृथिव्या उपदीका उदिहन्ति। यद्वल्मीकम्। यद्वल्मीकव्पा संम्भारो भवंति। ऊर्जमेव रसं पृथिव्या अवंरुन्थे। अथो श्रोत्रंमेव। श्रोत्र ह्यंतत्पृथिव्याः। यद्वल्मीकः॥१७॥

अबंधिरो भवति। य एवं वेदे। प्रजापंतिः प्रजा अंसृजत। तासामन्नमुपाँक्षीयत। ताभ्यः सूदमुपप्राभिनत्। ततो वै तासामन्नं नाक्षीयत। यस्य सूदेः सम्भारो भवंति। नास्यं गृहेऽन्नं क्षीयते। आपो वा इदमग्रे सिल्लमांसीत्। तेनं प्रजापंतिरश्राम्यत्॥१८॥

कथिम्द स्यादितिं। सोऽपश्यत्पष्करपूर्णं तिष्ठंत्। सोऽमन्यत। अस्ति वै तत्। यस्मिन्निदमिष् तिष्ठतीतिं। स वंराहो रूपं कृत्वोप न्यंमञ्जत्। स पृथिवीम्ध और्च्छत्। तस्यां उपहत्योदंमञ्जत्। तत्पुंष्करपूर्णेंऽप्रथयत्। यदप्रथयत्॥१९॥ तत्पृंथिव्यै पृंथिवित्वम्। अभूद्वा इदिमितिं। तद्भूम्यै भूमित्वम्। तां दिशोऽनु वातः समंवहत्। ता शर्कराभिरदृश्हत्। शं वै नोंऽभूदितिं। तच्छर्कराणा शर्कर्त्वम्। यद्वंराहिवंहत श् सम्भारो भवंति। अस्यामेवाछंम्बद्धारमृग्निमाधंत्ते। शर्करा भवन्ति धृत्यै॥२०॥

अथों शन्त्वायं। सरेता अग्निर्भयेष्य इत्यांहुः। आपो वर्रणस्य पत्नंय आसन्। ता अग्निर्भ्यंध्यायत्। ताः समंभवत्। तस्य रेतः परांऽपतत्। तिद्धरंण्यमभवत्। यिद्धरंण्यमुपास्यंति। सरेतसमेवाग्निमाधंत्ते। पुरुष इन्ने स्वाद्रेतंसो बीभत्सत् इत्यांहुः॥२१॥

उत्तर्त उपाँस्यत्यबींभत्सायै। अति प्रयंच्छति। आर्तिमेवाति प्रयंच्छति। अग्निर्देवेभ्यो निलायत। अश्वी रूपं कृत्वा। सौंऽश्वत्थे संवत्सरमंतिष्ठत्। तदंश्वत्थस्यांश्वत्थत्वम्। यदाश्वत्थः सम्भारो भवंति। यदेवास्य तत्र न्यंक्तम्। तदेवावंरुन्थे॥२२॥

देवा वा ऊर्जं व्यंभजन्त। ततं उदुम्बर् उदंतिष्ठत्। ऊर्ग्वा उदुम्बरंः। यदौदुंम्बरः सम्भारो भवंति। ऊर्जमेवावंरुन्थे। तृतीयंस्यामितो दिवि सोमं आसीत्। तं गांयत्र्याऽहरत्। तस्यं पूर्णमंच्छिद्यत। तत्पूर्णोऽभवत्। तत्पूर्णस्यं पर्णत्वम्॥२३॥ यस्यं पर्णमयंः सम्भारो भवंति। सोमपीथमेवावंरुन्थे। देवा वै ब्रह्मंत्रवदन्त। तत्पूर्ण उपांश्रणोत्। सुश्रवा वै नामं। यत्पंण्मयंः सम्भारो भवंति। ब्रह्मवर्च्समेवावं रुन्धे। प्रजापंतिर्श्निमंसृजत। सोंऽबिभेत्प्र मां धक्ष्यतीतिं। त॰ शम्यांऽशमयत्॥२४॥

तच्छुम्यै शमित्वम्। यच्छंमीमयः सम्भारो भवंति। शान्त्या अप्रंदाहाय। अग्नेः सृष्टस्यं यतः। विकंङ्कतं भा आंच्छंत्। यद्वैकंङ्कतः सम्भारो भवंति। भा एवावं रुन्धे। सहंदयोऽग्निराधेय इत्यांहुः। मुरुतोऽद्भिरग्निमंतमयन्। तस्यं तान्तस्य हृदंयमाच्छंन्दन्। साऽशनिरभवत्। यद्शनिहतस्य वृक्षस्यं सम्भारो भवंति। सहंदयमेवाग्निमा धंत्ते॥२५॥

ऊषां अभवन्नभवद्वल्मीकौंऽश्राम्यदप्रंथयद्वृत्यें बीभत्सत् इत्यांहू रुन्धे पर्णृत्वमंशमयदच्छिन्दुङ् स्नीणिं

द्वादशस् विकामेष्वग्निमा दंधीत। द्वादंश मासाः संवत्सरः। संवत्सरादेवैनंमव्रुख्या धंत्ते। यद्वांदशस् विकामेष्वा दधीत। परिमित्मवं रुन्धीत। चक्षुंर्निमित् आदंधीत। इयद्वादंश विकामा (३) इति। परिमितं चैवापंरिमितं चावं रुन्धे। अनृतं वै वाचा वंदति। अनृतं मनसा ध्यायति॥२६॥

चक्षुर्वे स्त्यम्। अद्रा(३)गित्यांह। अदंर्श्वमितिं। तत्स्त्यम्। यश्वक्षुंर्निमितेऽग्निमांधत्ते। स्त्य एवैन्मा धंत्ते। तस्मादाहिताग्निर्नानृतं वदेत्। नास्यं ब्राह्मणोऽनांश्वान्गृहे वंसेत्। स्त्ये ह्यंस्याग्निराहितः। आग्नेयी वै रात्रिः॥२७॥ आग्नेयाः प्शवंः। ऐन्द्रमहंः। नक्तं गार्हंपत्यमा दंधाति। पृश्नेवावं रुन्धे। दिवांऽऽहवनीयम्। इन्द्रियमेवावं रुन्धे। अधींदिते सूर्यं आहवनीयमा दंधाति। एतस्मिन्वे लोके प्रजापंतिः प्रजा अंसृजत। प्रजा एव तद्यजंमानः सृजते। अथों भूतं चैव भंविष्यचावं रुन्धे॥२८॥

इडा वै मांन्वी यंज्ञानूकाशिन्यांसीत्। साऽशृंणोत्। असुंरा अग्निमादंधत् इतिं। तदंगच्छत्। त आंहवनीयमग्र आदंधतः। अथा गार्हंपत्यम्। अथान्वाहार्यपचनम्। साऽब्रंवीत्। प्रतीच्यंषा् श्रीरंगात्। भृद्रा भूत्वा परां भविष्यन्तीतिं॥२९॥ यस्यैवमृग्निरांधीयतें। प्रतीच्यंस्य श्रीरंति। भृद्रो भूत्वा परांभवति। साऽशृंणोत्। देवा अग्निमादंधत् इतिं। तदंगच्छत्। तेंऽन्वाहार्यपचनमग्र आदंधतः। अथ् गार्हंपत्यम्। अथांहवनीयम्ं। साऽब्रंवीत्॥३०॥

प्राच्येषा्ड् श्रीरंगात्। भृद्रा भूत्वा सुंवर्गं लोकमेष्यन्ति। प्रजां तु न वेत्स्यन्त इति। यस्यैवमृग्निराधीयते। प्राच्यंस्य श्रीरंति। भृद्रो भूत्वा सुंवर्गं लोकमेति। प्रजां तु न विंन्दते। साऽब्रंवीदिडा मनुम्। तथा वा अहं तवाग्निमाधांस्यामि। यथा प्र प्रजयां पृश्मिर्मिथुनैर्जनिष्यसे॥३१॥

प्रत्यस्मिल्लाँके स्थास्यसिं। अभि सुंवर्गं लोकं जेष्यसीतिं। गार्हंपत्यमग्र आदंधात्। गार्हंपत्यं वा अनुं प्रजाः पृशवः प्रजांयन्ते। गार्हंपत्येनैवास्मैं प्रजां पृशून्प्राजनयत्। अथौन्वाहार्यपर्चनम्। तिर्यिङ्किंव वा अयं लोकः। अस्मिन्नेव तेनं लोके प्रत्यंतिष्ठत्। अथाहवनीयम्। तेनैव सुंवर्गं लोकमभ्यंजयत्॥३२॥

यस्यैवम् ग्रिरांधीयतें। प्र प्रजयां पृशुभिं मिथुनैर्जायते। प्रत्यस्मिल्लौंके तिष्ठति। अभि सुवर्गं लोकं जयति। यस्य वा अयंथादेवतमग्निरांधीयतें। आ देवतांभ्यो वृथ्यते। पापीयान्भवति। यस्यं यथादेवतम्। न देवतांभ्य आवृंध्यते। वसीयान्भवति॥३३॥ भृगूंणां त्वाऽङ्गिरसां व्रतपते व्रतेनादंधामीतिं भृग्विङ्गरसामादंध्यात्। आदित्यानां त्वा देवानां व्रतपते व्रतेनादंधामीत्यन्यासां ब्राह्मंणीनां प्रजानाम्। वरुणस्य त्वा राज्ञौ व्रतपते व्रतेनादंधामीति राज्ञंः। इन्द्रंस्य त्वेन्द्रियेणं व्रतपते व्रतेनादंधामीतिं राजन्यंस्य। मनों स्त्वा ग्रामण्यों व्रतपते व्रतेनादंधामिति वैश्यंस्य। ऋभूणां त्वां देवानां व्रतपते व्रतेनादंधामीतिं रथकारस्यं। यथादेवतमग्निराधीयते। न देवतान्य आवृध्यते। वसीयान्भवति॥३४॥

ध्यायति वै रात्रिश्चावंरुन्धे भविष्युन्तीत्यंब्रवीज्ञनिष्यसेंऽजयद्वसींयान्भवति नवं च॥४॥———[४]

प्रजापंतिर्वाचः स्त्यमंपश्यत्। तेनाग्निमाधंत्त। तेन् वै स आंभ्रोत्। भूर्भुवः सुवरित्याह। एतद्वै वाचः स्त्यम्। य एतेनाग्निमाध्ते। ऋभ्रोत्येव। अथो स्त्यप्रांशूरेव भंवति। अथो य एवं विद्वानंभिचरंति। स्तृणुत एवैनम्॥३५॥ भूरित्यांह। प्रजा एव तद्यजंमानः सृजते। भुव इत्यांह। अस्मिन्नेव लोके प्रतितिष्ठति। सुव्रित्यांह। सुव्र्ग एव लोके प्रतितिष्ठति। त्रिभिरक्षरैर्गार्हंपत्यमा दंधाति। त्रयं इमे लोकाः। एष्वंवैनं लोकेषु प्रतिष्ठितमाधंत्ते। सर्वैः पश्चिमेराहवनीयम्॥३६॥

सुवर्गाय वा एष लोकायाधीयते। यदांहवनीयः। सुवर्ग एवास्मै लोके वाचः सत्य सर्वमाप्नोति। त्रिभिर्गार्हंपत्यमा दंधाति। पश्चभिराहवनीयम्। अष्टौ सम्पंद्यन्ते। अष्टाक्षरा गायत्री। गायत्रौंऽग्निः। यावांनेवाग्निः। तमाधंत्ते॥३७॥

प्रजापंतिः प्रजा अंसृजत। ता अंस्मात्सृष्टाः परांचीरायन्। ताभ्यो ज्योतिरुदंगृह्णात्। तं ज्योतिः पश्यंन्तीः प्रजा अभि समावर्तन्त। उपरीवाग्निमुद्गृह्णीयादुद्धरन्। ज्योतिरेव पश्यंन्तीः प्रजा यजंमानम्भि समावर्तन्ते। प्रजापंतेरक्ष्यंश्वयत्। तत्परांऽपतत्। तदश्वंऽभवत्। तदश्वंस्याश्वत्वम्॥३८॥

पृष वै प्रजापंतिः। यद्ग्निः। प्राजाप्त्योऽश्वंः। यदश्वं पुरस्तान्नयंति। स्वमेव चक्षुः पश्यंन्प्रजापंतिरनूदेंति। वृज्जी वा पृषः। यदश्वंः। यदश्वं पुरस्तान्नयंति। जातानेव भ्रातृंव्यान्प्रणुंदते। पुनरा वर्तयति॥३९॥

जुनिष्यमाणानेव प्रतिनुदते। न्यांहवनीयो गार्हंपत्य-मकामयत। निगार्हंपत्य आहवनीयम्। तौ विभाजुं नाशंक्रोत्। सोऽर्श्वः पूर्ववाङ्गूत्वा। प्राश्चं पूर्वमुदंवहत्। तत्पूर्ववाहंः पूर्ववाद्गम्। यदर्श्वं पुरस्तान्नयंति। विभंक्तिरेवैनंयोः सा। अथो नानांवीर्यावेवैनौं कुरुते॥४०॥

यदुपर्युपरि शिरो हरेंत्। प्राणान् विच्छिंन्द्यात्। अधोऽधः शिरो हरति। प्राणानां गोपीथायं। इयत्यग्रें हरति। अथेयत्यथेयंति। त्रयं इमे लोकाः। पृष्वंवैनं लोकेषु प्रतिष्ठित्माधंत्ते। प्रजापंतिरिग्नमंसृजत। सोऽबिभेत्प्र मा धक्ष्यतीतिं॥४१॥

तस्यं त्रेधा मंहिमानं व्यौहत्। शान्त्या अप्रदाहाय। यत्रेधाऽग्निराधीयतें। महिमानंमेवास्य तद्यूहित। शान्त्या अप्रदाहाय। पुन्रा वंर्तयति। महिमानंमेवास्य सन्दंधाति। पृशुर्वा पुषः। यदश्वः। पुष रुद्रः॥४२॥

यद्गिः। यदश्वंस्य प्दें ऽग्निमांद्ध्यात्। रुद्रायं प्शूनिपंदध्यात्। अपृशुर्यज्ञंमानः स्यात्। यन्नाकृमयेत्। अनंवरुद्धा अस्य पृशवंः स्युः। पार्श्वत आक्रंमयेत्। यथाऽऽहिंतस्याग्नेरङ्गांरा अभ्यव्वर्तेरन्। अवंरुद्धा अस्य पृशवो भवंन्ति। न रुद्रायापिदधाति॥४३॥

त्रीणिं ह्वी १ षि निर्वपति। विराजं एव विक्रान्तं यजंमानो ऽनु विक्रमते। अग्नये पवमानाय। अग्नये पावकायं। अग्नये शुचंये। यद्ग्नये पवमानाय निर्वपति। पुनात्येवैनम्। यद्ग्नये पावकार्य। पूत एवास्मिन्नन्नार्छं दधाति। यद्ग्रये शुचये। ब्रह्मवर्चसमेवास्मिन्नुपरिष्टादधाति॥४४॥

एन्माह्वनीयं धत्तेऽश्वत्वं वंर्तयति कुरुत् इतिं रुद्रो दंधाति यदग्रये शुचंय एकं च॥५॥——[५]

देवासुराः संयंत्ता आसन्। ते देवा विजयमुंप्यन्तः। अग्नौ वामं वसु सं न्यंदधत। इदमुं नो भविष्यति। यदिं नो जेष्यन्तीति। तद्ग्निर्नोत्सहंमशक्नोत्। तत् त्रेधा विन्यंदधात्। पृशुषु तृतीयम्। अप्सु तृतीयम्। आदित्ये तृतीयम्॥४५॥

तद्देवा विजित्यं। पुन्रवांरुरुत्सन्त। तेंऽग्नये पवंमानाय पुरोडाशंम्ष्टाकंपालं निरंवपन्। पृशवो वा अग्निः पवंमानः। यदेव पृशुष्वासींत्। तत्तेनावांरुन्धत। तेंऽग्नये पावकायं। आपो वा अग्निः पांवकः। यदेवाप्स्वासींत्। तत्तेनावांरुन्धत॥४६॥

तें ऽग्नये श्चंये। असौ वा आंदित्यों ऽग्निः श्चिः। यदेवादित्य आसीत्। तत्तेनावां रुन्धत। ब्रह्मवादिनों वदन्ति। तनुवो वावैता अंग्र्याधेयंस्य। आग्नेयो वा अष्टाकंपालो ऽग्र्याधेयमिति। यत्तन्निर्वपेत्। नैतानि। यथा ऽऽत्मा स्यात्॥४७॥

नाङ्गांनि। ताह्येव तत्। यदेतानिं निर्वपेत्। न तम्। यथाऽङ्गांनि स्युः। नात्मा। ताह्येव तत्। उभयांनि सह निरुप्यांणि। यज्ञस्यं सात्मत्वायं। उभयं वा एतस्येन्द्रियं वीर्यमाप्यते॥४८॥

यौंऽग्निमांधत्ते। ऐन्द्राग्नमेकांदशकपालमनु निर्वपेत्। आदित्यं

चुरुम्। इन्द्राग्नी वै देवानामयातमायामानौ। ये एव देवते अयातयाग्नी। ताभ्यांमेवास्मां इन्द्रियं वीर्यमवं रुन्धे। आदित्यो भवति। इयं वा अदितिः। अस्यामेव प्रतितिष्ठति। धेन्वै वा एतद्रेतः॥४९॥

यदाज्यम्। अनुडुहंस्तण्डुलाः। मिथुनमेवावंरुन्थे। घृते भंवति। यज्ञस्यालूक्षान्तत्वाय। चृत्वारं आर्षेयाः प्राश्ञंन्ति। दिशामेव ज्योतिंषि जुहोति। पृशवो वा पृतानिं हुवी १षिं। पृष रुद्रः। यद्ग्रिः॥५०॥

यत्मद्य एतानि ह्वी १ षि निर्वपैत्। रुद्रायं पृशूनिपं दध्यात्। अपृशुर्यज्ञमानः स्यात्। यन्नानुनिर्वपैत्। अनंवरुद्धा अस्य पृश्ववः स्युः। द्वादृशस् रात्रीष्वनु निर्वपेत्। संवृत्सरप्रतिमा व द्वादृश् रात्रयः। संवृत्सरणैवास्मे रुद्र शंमियत्वा। पृशूनवंरुन्थे। यदेकंमेकमेतानि ह्वी १ षि निर्वपैत्॥ ५१॥

यथा त्रीण्यावपंनानि पूरयेत्। तादक्तत्। न प्रजनंनमुच्छि १ षेत्। एकं निरुप्यं। उत्तरे समंस्येत्। तृतीयंमेवास्मै
लोकमुच्छि १ षति प्रजनंनाय। तं प्रजयां पृशुभिरनु
प्रजायते। अथो य्ज्ञस्यैवैषाऽभिक्रांन्तिः। रथचकं प्रवंतियति।
मनुष्यरथेनैव देवरथं प्रत्यवंरोहति॥५२॥

ब्रह्मवादिनों वदन्ति। होत्व्यंमग्निहोत्राँ(३) न होत्व्या(३) मितिं। यद्यजुंषा जुहुयात्। अयंथापूर्वमाहुंती जुहुयात्। यन्न जुंहुयात्। अग्निः परां भवेत्। तूष्णीमेव होत्व्यम्। यथापूर्वमाहुंती जुहोतिं। नाग्निः परांभवति। अग्नीधें ददाति॥५३॥

अग्निम्ंखानेवर्त्न्प्रीणाति। उपबर्हणं ददाति। रूपाणामवं-रुद्धै। अश्वं ब्रह्मणें। इन्द्रियमेवावंरुन्धे। धेनु १ होत्रें। आशिषं प्वावंरुन्धे। अनुङ्गाहंमध्वर्यवें। विहुर्वा अनुङ्गान्। विहेरध्वर्युः॥५४॥

विह्नित्वे विह्नि यज्ञस्यावंरुन्थे। मिथुनौ गावौ ददाति। मिथुनस्यावंरुद्धौ। वासो ददाति। सर्वदेवृत्यं वै वासंः। सर्वा एव देवताः प्रीणाति। आ द्वांदशभ्यो ददाति। द्वादंश मासाः संवत्सरः। संवत्सर एव प्रतितिष्ठति। कामंमूर्धं देयम्। अपंरिमितस्यावंरुद्धौ॥५५॥

आदित्ये तृतीयम्प्स्वासीत्तत्तेनावांरुन्यत् स्यादांप्यते रेतोऽग्निरेकंमेकमेतानिं हुवीर्शं निर्वर्पेत्प्रत्यवंरोहति ददात्यध्वर्युर्देयमेकं च॥६॥————[६]

घर्मः शिर्स्तद्यम्गिः। सिम्प्रियः पृश्भिभ्वत्। छुर्दिस्तोकाय् तनंयाय यच्छ। वातंः प्राणस्तद्यम्गिः। सिम्प्रियः पृश्भिभ्वत्। स्वदितं तोकाय् तनंयाय पितुं पंच। प्राचीमनुं प्रदिशं प्रेहिं विद्वान्। अग्नेरंग्ने पुरो अग्निभ्वेह। विश्वा आशा दीद्यांनो विभांहि। ऊर्जं नो धेहि द्विपदे चतुंष्पदे॥५६॥ अर्कश्चक्षुस्तद्सौ सूर्यस्तद्यम्गिः। सिम्प्रियः पश्भिभ्वत्।

यत्ते शुक्र शुक्रं वर्चः शुक्रा तुन्ः। शुक्रं ज्योतिरजंस्रम्। तेनं मे दीदिहि तेन त्वाऽऽदंधे। अग्निनांऽग्ने ब्रह्मंणा। आनुशे व्यानशे सर्वमायुर्व्यानशे। ये ते अग्ने शिवे तुनुवौं। विरार्द्वं स्वरार्द्वं। ते माविशतां ते मां जिन्वताम्॥५७॥

ये तें अग्ने शिवे तन्वौं। सम्माद्वांभिभूश्चं। ते माविंशतां ते मां जिन्वताम्। ये तें अग्ने शिवे तन्वौं। विभूश्चं पिर्भूश्चं। ते मा विंशतां ते मां जिन्वताम्। ये तें अग्ने शिवे तन्वौं। प्रभ्वी च प्रभूतिश्च। ते मा विंशतां ते मां जिन्वताम्। यास्तें अग्ने शिवास्तन्वंः। ताभिस्त्वाऽऽदंधे। यास्तें अग्ने घोरास्तन्वंः। ताभिरमुं गंच्छ॥५८॥

चतुंष्पदे जिन्वतां तुनुवृस्त्रीणिं च॥७॥------[७]

इमे वा एते लोका अग्नयं। ते यदव्यांवृत्ता आधीयेरन्। शोचयेयुर्यजंमानम्। घर्मः शिर् इति गार्हंपत्यमा देधाति। वातः प्राण इत्यंन्वाहार्यपचंनम्। अर्कश्चक्षुरित्यांहवनीयम्। तेनैवैनान्व्यावंतियति। तथा न शोचयन्ति यजमानम्। रथन्तरम्भिगांयते गार्हंपत्य आधीयमांने। राथंन्तरो वा अयं लोकः॥५९॥

अस्मिन्नेवैनं लोके प्रतिष्ठितमा धेत्ते। वामदेव्यम्भिगांयत उद्धियमांणे। अन्तरिक्षं वै वांमदेव्यम्। अन्तरिक्ष एवैनं प्रतिष्ठितमाधेत्ते। अथो शान्तिर्वे वांमदेव्यम्। शान्तमेवैनं पश्रव्यंमुद्धंरते। बृहद्भिगांयत आहवनीयं आधीयमाने। बार्हतो वा असौ लोकः। अमुर्ष्मिन्नेवैनं लोके प्रतिष्ठितमार्धत्ते। प्रजापंतिरग्निमंसृजत॥६०॥

सोऽश्वोऽवारों भूत्वा परांङैत्। तं वांरवन्तीयेंनावारयत। तद्वांरवन्तीयंस्य वारवन्तीयृत्वम्। श्यैतेनं श्येती अंकुरुत। तच्छौतस्यं श्यैतृत्वम्। यद्वांरवन्तीयंमिभ् गायंते। वार्यित्वैवैनं प्रतिंष्ठितमा धंत्ते। श्यैतेनं श्येती कुंरुते। घर्मः शिर् इति गार्हंपत्यमादंधाति। सशीर्षाणमेवैनमा धंत्ते॥६१॥

उपैन्मुत्तंरो युज्ञो नंमित। रुद्रो वा एषः। यद्ग्निः। स आंधीयमान ईश्वरो यजंमानस्य पृश्न् हि॰सिंतोः। सिम्प्रियः पृश्मिर्भुविदित्यांह। पृश्मिरेवैन्॰ सिम्प्रियं करोति। पृश्नामहि॰सायै। छुर्दिस्तोकाय तनंयाय युच्छेत्यांह। आशिषंमेवैतामा शांस्ते। वातंः प्राण इत्यंन्वाहार्यपर्चनम्॥६२॥

सप्राणमेवेनमा धंत्ते। स्वदितं तोकाय तनयाय पितुं प्चेत्यांह। अन्नमेवास्मैं स्वदयति। प्राचीमनुं प्रदिशं प्रेहिं विद्वानित्यांह। विभेक्तिरेवैनयोः सा। अथो नानांवीर्यावेवैनौं कुरुते। ऊर्जं नो धेहि द्विपदे चतुंष्पद इत्यांह। आशिषंमेवैतामा शांस्ते। अर्कश्चक्षुरित्यांहवनीयम्। अर्को वै देवानामन्नम्॥६३॥ अन्नमेवावं रुन्थे। तेनं मे दीदिहीत्यांह। समिन्थ एवैनम्। आनशे व्यांनश इति त्रिरुदिङ्गयति। त्रयं इमे लोकाः।

पृष्वेवेनं लोकेषु प्रतिष्ठितमा धत्ते। तत्तथा न कार्यम्। वीङ्गितमप्रतिष्ठितमा दंधीत। उद्धृत्यैवाधायांभिमन्नियः। अवीङ्गितमेवेनं प्रतिष्ठितमाधत्ते। विराद्वं स्वराद्व यास्ते अग्ने शिवास्तनुवस्ताभिस्त्वाऽऽदंध इत्यांह। एता वा अग्नेः शिवास्तनुवंः। ताभिरेवेन् समर्धयति। यास्ते अग्ने घोरास्तनुवस्ताभिरमुं गुच्छेतिं ब्रूयाद्यं द्विष्यात्। ताभिरेवेनं पराभावयति॥६४॥

लोकों ऽसृजतैनुमार्थत्ते ऽन्वाहार्युपर्चनं देवानामन्नमेनुं प्रतिष्ठितुमार्थत्ते पश्चं च॥८॥————[८]

श्मीग्रभीद्ग्निं मंन्थति। एषा वा अग्नेर्यज्ञियां तृनूः। तामेवास्मै जनयति। अदितिः पुत्रकामा। साध्येभ्यो देवेभ्यौ ब्रह्मीद्नमंपचत्। तस्यां उच्छेषंणमददुः। तत्प्राश्ञौत्। सा रेतोऽधत्त। तस्यै धाता चौर्यमा चांजायेताम्। सा द्वितीयंमपचत्॥६५॥

तस्यां उच्छेषंणमददुः। तत्प्राश्नांत्। सा रेतोंऽधत्त। तस्यैं मित्रश्च वरुणश्चाजायेताम्। सा तृतीयंमपचत्। तस्यां उच्छेषंणमददुः। तत्प्राश्नांत्। सा रेतोंऽधत्त। तस्या अश्शंश्च भगंश्चाजायेताम्। सा चंतुर्थमंपचत्॥६६॥

तस्यां उच्छेषंणमददुः। तत्प्राश्नांत्। सा रेतोंऽधत्त। तस्या इन्द्रंश्च विवंस्वाङ्श्चाजायेताम्। ब्रह्मौद्नं पंचति। रेतं एव तद्दंधाति। प्राश्नंन्ति ब्राह्मणा ओंद्नम्। यदाज्यंमुच्छिष्यंते। तेनं सुमिधोऽभ्यज्या दंधाति। उच्छेषंणाद्वा अदिंती

रेतोऽधत्त॥६७॥

उच्छेषंणादेव तद्रेतों धत्ते। अस्थि वा एतत्। यत्समिधंः। एतद्रेतंः। यदाज्यम्। यदाज्यंन समिधोऽभ्यज्यादधांति। अस्थ्येव तद्रेतंसि दधाति। तिस्र आदंधाति मिथुन्त्वायं। इयंतीर्भवन्ति। प्रजापंतिना यज्ञमुखेन् सम्मिताः॥६८॥

इयंतीर्भवन्ति। युज्ञपुरुषा सम्मिताः। इयंतीर्भवन्ति। एतावृद्धे पुरुषे वीर्यम्। वीर्यसम्मिताः। आर्द्रा भंवन्ति। आर्द्रमिव हि रेतः सिच्यते। चित्रियस्याश्वत्थस्यादंधाति। चित्रमेव भंवति। घृतवंतीभिरा दंधाति॥६९॥

एतद्वा अग्नेः प्रियं धामं। यद्धृतम्। प्रियेणैवैनं धाम्ना समर्धयति। अथो तेजंसा। गायत्रीभिन्नाह्मणस्यादंध्यात्। गायत्रछंन्दा वै ब्राह्मणः। स्वस्य छन्दंसः प्रत्ययन्स्त्वायं। त्रिष्टुग्भी राजन्यंस्य। त्रिष्टुप्छंन्दा वै राजन्यंः। स्वस्य छन्दंसः प्रत्ययन्स्त्वायं॥७०॥

जगंतीभिवेंश्यंस्य। जगंतीछन्दा वै वैश्यंः। स्वस्य छन्दंसः प्रत्ययन्स्त्वायं। तः संवत्स्रं गोंपायेत्। संवत्स्रः हि रेतों हितं वर्धते। यद्येनः संवत्स्रे नोपनमैत्। स्मिधः पुन्रादंध्यात्। रेतं एव तिद्धतं वर्धमानमेति। न मार्समंश्जीयात्। न स्नियमुपेयात्॥७१॥

यन्मा १ समंश्जीयात्। यत्स्रियंमुपेयात्। निर्वीयः स्यात्।

नैनंमग्निरुपंनमेत्। श्व आंधास्यमांनो ब्रह्मौद्नं पंचति। आदित्या वा इत उत्तमाः सुंवर्गं लोकमांयन्। ते वा इतो यन्तं प्रतिनुदन्ते। पृते खलु वावादित्याः। यद्वाँह्मणाः। तैरेव सन्त्वं गंच्छति॥७२॥

नैनं प्रतिनुदन्ते। ब्रह्मवादिनों वदन्ति। क्वां सः। अग्निः कार्यः। योऽस्मै प्रजां पृश्न्मंजनयतीति। शल्कैस्ता १ रात्रिंम् ग्निमिन्धीत। तस्मिन्नुपव्युषम् रणी निष्टंपेत्। यथंर्षभायं वाशिता न्यांविच्छायति। ताहगेव तत्। अपोद्ह्य भस्माग्निं मन्थति॥ ७३॥

सैव साऽग्नेः सन्तंतिः। तं मंथित्वा प्राश्चमुद्धंरित। संवत्सरमेव तद्रेतों हितं प्रजनयित। अनांहित्स्तस्याग्निरित्यांहुः। यः समिधोऽनांधायाग्निमांधृत्त इतिं। ताः संवत्सरे पुरस्तादादंध्यात्। संवत्सरादेवेनंमव्रुध्याधंत्ते। यदिं संवत्सरेऽनाद्ध्यात्। द्वादृश्यां पुरस्तादादंध्यात्। संवत्सरप्रंतिमा व द्वादंश्य रात्रंयः। संवत्सरमेवास्याहिता भवन्ति। यदिं द्वादृश्यां नाद्ध्यात्। त्र्यहे पुरस्तादादंध्यात्। आहिता एवास्यं भवन्ति॥७४॥

हितीयंमपचचतुर्थमंपचददिती रेतींऽधत्त सम्मिता घृतवंतीभि्रादंधाति राज्नन्यः स्वस्य छन्दंसः प्रत्ययन्स्त्वार्थेयाद्गच्छिति मन्थित् रात्रंयश्च्त्वारिं च॥१॥————[९] प्रजापितः प्रजा असृजत। स रिरिचानोऽमन्यत। स तपोऽतप्यत। स आत्मन्वीर्यमपश्यत्। तदंवर्धत।

तदंस्मात्सहंसोध्वंमंसृज्यत। सा विराडंभवत्। तां देवासुरा व्यंगृह्णत। सो उब्रवीत्प्रजापंतिः। मम् वा एषा॥७५॥ दोहां एव युष्माकृमितिं। सा ततः प्राच्युदंक्रामत्। तत्प्रजापंतिः पर्यंगृह्णात्। अर्थवं पितुं में गोपायेतिं। सा द्वितीयमुदंक्रामत्। तत्प्रजापंतिः पर्यगृह्णात्। नर्य प्रजां में गोपायेतिं। सा तृतीयमुदंक्रामत्। तत्प्रजापंतिः पर्यगृह्णात्। शङ्स्यं पश्नमें गोपायेतिं॥७६॥

सा चंतुर्थमुदंक्रामत्। तत्प्रजापंतिः पर्यगृह्णात्। सप्रथ स्भां में गोपायेति। सा पश्चममुदंक्रामत्। तत्प्रजापंतिः पर्यगृह्णात्। अहं बुध्रिय मत्रं मे गोपायेति। अग्नीन् वाव सा तान्व्यंक्रमत। तान्प्रजापंतिः पर्यगृह्णात्। अथो पङ्किमेव। पङ्किर्वा एषा ब्राह्मणे प्रविष्टा॥७७॥

तामात्मनोऽधि निर्मिमीते। यद्ग्निराधीयतें। तस्मदितावंन्तो-ऽग्नय आधीयन्ते। पाङ्कां वा इद सर्वम्। पाङ्केनैव पाङ्काई स्पृणोति। अर्थवं पितुं में गोपायेत्यांह। अन्नमेवैतेनं स्पृणोति। नर्य प्रजां में गोपायेत्यांह। प्रजामेवैतेनं स्पृणोति। शङ्स्यं पृश्नमें गोपायेत्यांह॥७८॥

पृश्नेवैतेनं स्पृणोति। सप्रंथ सुभां में गोपायेत्यांह। सुभामेवैतेनेंन्द्रिय स्पृणोति। अहें बुधिय मर्त्रं मे गोपायेत्यांह। मत्रंमेवैतेन श्रिय स्पृणोति। यदांन्वाहार्यपचंनेऽन्वाहार्यं पचंन्ति। तेन् सौंऽस्याभीष्टंः प्रीतः। यद्गार्हंपत्य आज्यंमधिश्रयंन्ति सम्पत्नींर्याजयंन्ति। तेन् सौंऽस्याभीष्टंः प्रीतः। यदांहवनीये जुह्वंति॥७९॥

तेन् सोंऽस्याभीष्टंः प्रीतः। यत्मभायां विजयंन्ते। तेन् सोंऽस्याभीष्टंः प्रीतः। यदांवस्थेऽज्ञ्र्ं हरंन्ति। तेन् सोंऽस्याभीष्टंः प्रीतः। तथांऽस्य सर्वे प्रीता अभीष्टा आधींयन्ते। प्रवस्थमेष्यन्नेवमुपंतिष्ठेतैकंमेकम्। यथां ब्राह्मणायं गृहेवासिने परिदायं गृहानेतिं। तादगेव तत्। पुनरागत्योपंतिष्ठते। सा भांगेयमेवेषां तत्। सा ततं ऊर्ध्वारोहत्। सा रोहिण्यंभवत्। तद्रोहिण्ये रोहिणित्वम्। रोहिण्याम्ग्रिमादंधीत। स्व एवेनं योनौ प्रतिष्ठितमाधंते। ऋश्नोत्येनेन॥८०॥

एषा पुशून्में गोपायेति प्रविष्टा पुशून्में गोपायेत्यांह जुह्वंति तिष्ठते सप्त चं॥१०॥———[१०]

ब्रह्म सन्धंत्तं कृत्तिंका्सूद्धंन्ति द्वाद्शसुं प्रजापंतिर्वाचो देवासुरास्तद्ग्निर्नेद्धर्मश्शिरं इमे वै शंमीगुर्भात्प्रजापंतिः स रिरिचानः स तपः स आत्मन्वीर्यं दशं॥१०॥

ब्रह्म सन्धंत्तं तौ दिव्यावथों शन्त्वाय प्राच्येषां यदुपर्युपरि यत्सद्यः सोऽश्वोऽवारों भूत्वा जर्गतीभिरशीतिः॥८०॥

ब्रह्म सन्धंत्तमृध्नोत्येंनेन॥

हरिः ओम्॥

॥इति श्रीकृष्णयजुर्वेदीयतैत्तिरीयब्राह्मणे प्रथमाष्टके प्रथमः

22 प्रथमः प्रश्नः

प्रपाठकः समाप्तः॥

॥ द्वितीयः प्रश्नः॥

॥ तैत्तिरीयब्राह्मणे प्रथमाष्टके द्वितीयः प्रपाठकः॥

उद्धन्यमानम्स्या अंमेध्यम्। अपं पाप्मानं यर्जमानस्य हन्तु। शिवा नंः सन्तु प्रदिश्श्वतंस्रः। शं नों माता पृथिवी तोकंसाता। शं नों देवीर्भिष्टये। आपों भवन्तु पीतयें। शं योर्भि स्रंवन्तु नः। वैश्वान्रस्यं रूपम्। पृथिव्यां पंरिस्रसां। स्योनमा विंशन्तु नः॥१॥

यदिदं दिवो यददः पृथिव्याः। सञ्जज्ञाने रोदंसी सम्बभूवर्तुः। ऊषाँन्कृष्णमंवतु कृष्णमूषाँः। इहोभयौर्यज्ञियमागंमिष्ठाः। ऊतीः कुर्वाणो यत्पृथिवीमचरः। गुहाकारमाखुरूपं प्रतीत्यं। तत्ते न्यंक्तमिह सम्भरंन्तः। शतं जीवेम शरदः सवीराः। ऊर्जं पृथिव्या रसमाभरेन्तः। शतं जीवेम शरदेः पुरूचीः॥२॥ वुम्रीभिरनुंवित्तं गुहांसु। श्रोत्रं त उर्व्यबंधिरा भवामः। प्रजापितिसृष्टानां प्रजानाम्। क्षुधोऽपंहत्यै सुवितं नो अस्तु। उप प्रभिन्नमिषमूर्जं प्रजाभ्यः। सूदं गृहेभ्यो रसुमाभंरामि। यस्यं रूपं बिभ्रंदिमामविंन्दत्। गुहा प्रविष्टाः सरि्रस्य मध्यै। तस्येदं विहंतमाभरंन्तः। अछंम्बद्धारमस्यां विधेम॥३॥ यत्पर्यपंश्यत्सरिरस्य मध्यैं। उर्वीमपंश्यञ्जगंतः प्रतिष्ठाम्। तत्पुष्कंरस्यायतंनाद्धि जातम्। पर्णं पृथिव्याः प्रथंन १ हरामि। याभिरद ५ हज्जगंतः प्रतिष्ठाम्। उर्वीमिमां विश्वजनस्यं भर्त्रीम्।

ता नंः शिवाः शर्कराः सन्तु सर्वाः। अग्ने रेतंश्चन्द्र हरंण्यम्। अद्भाः सम्भूतम्मृतं प्रजासं। तत्सम्भरंत्रुत्तरतो निधायं॥४॥ अतिप्रयच्छं दुरितिं तरेयम्। अश्वो रूपं कृत्वा यदंश्वत्थेऽतिष्ठः। संवत्सरं देवेभ्यो निलायं। तत्ते न्यंक्तमिह सम्भरंन्तः। शतं जीवेम शरदः सवीराः। ऊर्जः पृथिव्या अध्युत्थितोऽसि। वनंस्पते शतवंल्शो विरोह। त्वयां वयमिष्मूर्जं मदंन्तः। रायस्पोषंण सिम्षा मंदेम। गायत्रिया हियमाणस्य यत्तै॥५॥

पूर्णमपंतत्तृतीयंस्यै दिवोऽधि। सोऽयं पूर्णः सोमपूर्णाद्धि जातः। ततो हरामि सोमपीथस्यावंरुद्धौ। देवानां ब्रह्मवादं वदंतां यत्। उपार्श्वणोः सुश्रवा वै श्रुतोऽसि। ततो मामाविंशतु ब्रह्मवर्च्सम्। तत्सम्भर्ड् स्तदवंरुन्धीय साक्षात्। ययां ते सृष्टस्याग्नेः। हेतिमशंमयत्प्रजापंतिः। तामिमामप्रदाहाय॥६॥

श्मी शान्त्ये हराम्यहम्। यत्ते सृष्टस्यं यतः। विकेङ्कत्ं भा आँच्छं ज्ञातवेदः। तयां भासा सम्मितः। उकं नो लोकमनु प्रभाहि। यत्ते तान्तस्य हृदयमाच्छिन्दञ्जातवेदः। मुरुतोऽद्भिस्तमियत्वा। एतत्ते तदश्चनेः सम्भेरामि। सात्मां अग्ने सहृदयो भवेह। चित्रियादश्वत्थात्सम्भृता बृहुत्यः॥७॥

शरीरम्भि सङ्स्कृताः स्थ। प्रजापंतिना यज्ञमुखेन् सम्मिताः। तिस्रस्त्रिवृद्धिर्मिथुनाः प्रजात्यै। अश्वत्थाद्धेव्य- वाहाद्धि जाताम्। अग्नेस्तुनूं युज्ञिया् सम्भेरामि। शान्तयोनि शमीगुर्भम्। अग्नये प्रजनियतवें। यो अश्वत्थः शमीगुर्भः। आरुरोह त्वे सर्चां। तं ते हरामि ब्रह्मणा॥८॥

यज्ञियैं केतुभिं सह। यं त्वां समभंरञ्जातवेदः। यथाशरीरं भूतेषु न्यंक्तम्। स सम्भृंतः सीद शिवः प्रजाभ्यः। उरुं नों लोकमनुंनेषि विद्वान्। प्रवेधसे क्वये मेध्याय। वची वन्दारुं वृष्भाय वृष्णें। यतो भ्यमभंयं तन्नो अस्तु। अवं देवान् यंजेहेड्यान्। समिधाऽग्निं दुंवस्यत॥९॥

घृतैर्बोधयतातिंथिम्। आऽस्मिन् ह्व्या जुंहोतन। उपं त्वाऽग्ने ह्विष्मितीः। घृताचींर्यन्तु हर्यत। जुषस्वं स्मिधो ममं। तं त्वां स्मिद्धिरङ्गिरः। घृतेनं वर्धयामसि। बृहच्छोंचा यविष्ठा। स्मिध्यमानः प्रथमो नु धर्मः। सम्कुभिरज्यते विश्ववारः॥१०॥

शोचिष्केशो घृतिनेणिक्पाव्कः। सुयज्ञो अग्निर्यज्ञथांय देवान्। घृतप्रंतीको घृतयोनिर्ग्निः। घृतेः सिमंद्धो घृतम्स्यान्नम्। घृतप्रुषंस्त्वा स्रितो वहन्ति। घृतं पिबन्त्सुयजां यिक्षे देवान्। आयुर्दा अंग्ने ह्विषो जुषाणः। घृतप्रंतीको घृतयोनिरेधि। घृतं पीत्वा मधु चारु गव्यम्। पितेव पुत्रम्भिरंक्षतादिमम्॥११॥ त्वामंग्ने सिमधानं यंविष्ठ। देवा दूतं चंक्रिरे हव्यवाहम्। उरुज्रयंसं घृतयोनिमाहुंतम्। त्वेषं चक्षुंदिधिरे चोदयन्वंति। त्वामंग्ने प्रदिव आहुंतं घृतेनं। सुम्नायवंः सुष्मिधा समीधिरे। स वांवृधान ओषंधीभिरुक्षितः। उरु ज्रयारंसि पार्थिवा वितिष्ठसे। घृतप्रंतीकं व ऋतस्यं धूर्षदम्। अग्निं मित्रं न संमिधान ऋं अते॥१२॥

इन्धांनो अको विदर्थेषु दीद्यंत्। शुक्रवंर्णामुद्दं नो यश्सते धियम्। प्रजा अंग्रे संवांसय। आशांश्च प्रशुभिः सह। राष्ट्राण्यंस्मा आधेहि। यान्यासंन्त्सिवृतुः स्व। मही विश्पत्नी सदंने ऋतस्यं। अर्वाची एतं धरुणे रयीणाम्। अन्तर्वत्नी जन्यं जात्वेदसम्। अध्वराणां जनयथः पुरोगाम्॥१३॥

आरोहतं दशत् शक्वंरीर्ममं। ऋतेनां मु आयुंषा वर्चसा सह। ज्योग्जीवन्त उत्तरामुत्तरा समाम्। दर्शमहं पूर्णमां यज्ञं यथा यजौ। ऋत्वियवती स्थो अग्निरंतसौ। गर्भं दधाथां ते वामहं देदे। तत्सत्यं यद्वीरं बिभृथः। वीरं जनिय्ष्यर्थः। ते मत्प्रातः प्रजनिष्येथे। ते मा प्रजाते प्रजनिय्ष्यर्थः॥१४॥

प्रजयां पृशुभिर्ब्रह्मवर्चसेनं सुवर्गे लोके। अनृतात्स्त्यमुपैमि। मानुषाद्देव्यमुपैमि। देवीं वाचं यच्छामि। शल्केर्ग्निमिन्धानः। उभौ लोकौ संनेम्हम्। उभयौर्लोकयोर् ऋध्वा। अति मृत्युं तराम्यहम्। जातवेदो भुवंनस्य रेतः। इह सिश्च तपसो यज्जनिष्यते॥१५॥

अग्निमंश्वत्थादिधं हव्यवाहम्ं। शुमीगुर्भाञ्चनयुन् यो मंयोुभूः।

अयं ते योनिर्ऋत्वियः। यतो जातो अरोचथाः। तं जानन्नंग्र आरोह। अथां नो वर्धया र्यिम्। अपेत् वीत् वि चं सर्पतातः। येऽत्र स्थ पुंराणा ये च नूतंनाः। अदांदिदं यमोऽवसानं पृथिव्याः। अर्ऋत्रिमं पितरों लोकमंस्मै॥१६॥

अग्नेर्भस्मांस्यग्नेः पुरीषमिस। संज्ञानंमिस काम्धरंणम्। मियं ते काम्धरंणं भूयात्। संवंः सृजािम् हृदंयािन। स॰सृष्टं मनों अस्तु वः। स॰सृष्टः प्राणो अस्तु वः। सं या वंः प्रियास्तुन्वंः। सं प्रिया हृदंयािन वः। आत्मा वो अस्तु सिम्प्रियः। सिम्प्रयास्तनुवो ममं॥१७॥

कल्पेतां द्यावांपृथिवी। कल्पेन्तामाप् ओषंधीः। कल्पेन्तामुग्नयः पृथंक्। मम् ज्यैष्ठ्यांय सन्नंताः। येंऽग्नयः समनसः। अन्तरा द्यावांपृथिवी। वासंन्तिकावृत् अभि कल्पंमानाः। इन्द्रंमिव देवा अभि सं विंशन्तु। दिवस्त्वां वीर्येण। पृथिव्ये मंहिम्ना॥१८॥

अन्तिरक्षस्य पोषेण। सूर्वपंशुमादेधे। अजीजनन्नमृतं मर्त्यांसः। अस्रेमाणं तरणिं वीडुजंम्भम्। दश् स्वसारो अग्रुवंः समीचीः। पुमार्रसं जातम्भि सर्रभन्ताम्। प्रजापंतेस्त्वा प्राणेनाभि प्राणिमि। पूष्णः पोषेण् मह्यम्। दीर्घायुत्वायं शतशांरदाय। श्तर श्रारद्ध आयुंषे वर्चसे॥१९॥ जीवात्वे पुण्यांय। अहं त्वदंस्मि मदंसि त्वमेतत्। ममांसि

योनिस्तव् योनिरस्मि। ममैव सन्वहं ह्व्यान्यंग्ने। पुत्रः पित्रे लोक्कुञ्जातवेदः। प्राणे त्वाऽमृत्मादंधामि। अन्नादमृन्नाद्याय। गोप्तारं गुप्त्यै। सुगार्हपत्यो विदहृन्नरातीः। उषसः श्रेयंसीः श्रेयसीर्दधंत्॥२०॥

अग्नें स्पत्नारं अप बाधंमानः। रायस्पोष्मिष्मूर्जम्समासुं धेहि। इमा उ मामुपंतिष्ठन्तु रायः। आभिः प्रजाभिरिह संवंसेय। इहो इडां तिष्ठतु विश्वरूपी। मध्ये वसौदीदिहि जातवेदः। ओजंसे बलांय त्वोद्यंच्छे। वृषंणे शुष्मायायुंषे वर्चसे। स्पत्नतूरंसि वृत्रतूः। यस्ते देवेषुं महिमा सुंवर्गः॥२१॥

यस्तं आत्मा पृशुषु प्रविष्टः। पृष्टियां ते मनुष्येषु पप्रथे। तयां नो अग्ने जुषमाण एहिं। दिवः पृथिव्याः पर्यन्तिरक्षात्। वातांत्पशुभ्यो अध्योषंधीभ्यः। यत्रं यत्र जातवेदः सम्बभूथं। ततों नो अग्ने जुषमाण एहिं। प्राचीमनुं प्रदिशं प्रेहिं विद्वान्। अग्नेरंग्ने पुरो अंग्निर्भवेह। विश्वा आशा दीद्यांनो वि भाहि॥२२॥

ऊर्जं नो धेहि द्विपदे चतुंष्पदे। अन्वग्निरुषसामग्रंमख्यत्। अन्वहांनि प्रथमो जातवेदाः। अनु सूर्यस्य पुरुत्रा चं रश्मीन्। अनु द्यावांपृथिवी आतंतान। विक्रंमस्व महाश् असि। वेदिषन्मानुंषेभ्यः। त्रिषु लोकेषुं जागृहि। यदिदं दिवो यददः पृंथिव्याः। संविदाने रोदंसी सं बभूवतुंः॥२३॥ तयोः पृष्ठे सींदत् जातवेदाः। शम्भः प्रजाभ्यंस्तन्वे स्योनः। प्राणं त्वाऽमृत् आ दंधामि। अन्नादमन्नाद्यांय। गोप्तारं गृत्यै। यत्ते शुक्र शुक्रं वर्चः शुक्रा तृनः। शुक्रं ज्योतिरजंस्रम्। तेनं मे दीदिह् तेन त्वाऽऽदंधे। अग्निनाऽग्ने ब्रह्मणा। आन्शे व्यानशे सर्वमायुर्व्यानशे॥२४॥

नर्य प्रजां में गोपाय। अमृतत्वायं जीवसें। जातां जीन्ष्यमाणां च। अमृते सत्ये प्रतिष्ठिताम्। अथवं पितुं में गोपाय। रसमन्नंमिहायुंषे। अदंब्यायोऽशींततनो। अविषन्नः पितुं कृणा। शङ्स्यं पृशून्में गोपाय। द्विपादो ये चतुंष्यदः॥२५॥

अष्टाशंफाश्च य इहाग्नें। ये चैकंशफा आशुगाः। सप्रंथ सभां में गोपाय। ये च सभ्याः सभासदः। तानिन्द्रियावंतः कुरु। सर्वमायुरुपांसताम्। अहं बुध्निय मन्नं मे गोपाय। यमृषंयस्त्रेविदा विदुः। ऋचः सामानि यजूर्षेष। सा हि श्रीरमृतां सताम्॥२६॥

चतुंः शिखण्डा युवृतिः सुपेशाँः। घृतप्रंतीका भुवंनस्य मध्यैं।
मर्मृज्यमाना मह्ते सौभंगाय। मह्यं धुक्ष्व यजंमानाय
कामान्। इहैव सन्तत्रं सतो वो अग्नयः। प्राणेनं वाचा
मनंसा बिभर्मि। तिरो मा सन्तमायुर्मा प्रहांसीत्।
ज्योतिषा वो वैश्वानरेणोपंतिष्ठे। पश्चधाऽग्नीन्व्यंक्रामत्।

विराद्गृष्टा प्रजापंतेः। ऊर्ध्वाऽऽरोहद्रोहिणी। योनिंर्ग्नेः प्रतिष्ठितिः॥२७॥

विश्व-तु नः पुरूचीर्विधेम निधाय यत्तेऽप्रदाहाय बृह्त्यौ ब्रह्मणा दुवस्यत विश्ववार इममृञ्जते पुरोगां प्रजनिय्ययो जिन्घ्यते उस्मै मर्म महिम्ना वर्चसे दर्धत्सुवर्गो भीहि सम्बभूवतुरायुर्व्यानशे चतुंष्पदः सतां प्रजापंतेर्द्वे चं॥१॥——[१]

नवैतान्यहांनि भवन्ति। नव वै सुंवर्गा लोकाः। यदेतान्यहांन्युपयन्तिं। नवस्वेव तत्सुंवर्गेषुं लोकेषुं सित्रणः प्रतितिष्ठंन्तो यन्ति। अग्निष्टोमाः परः सामानः कार्या इत्यांहुः। अग्निष्टोमसंम्मितः सुवर्गो लोक इति। द्वादंशाग्निष्टोमस्यं स्तोत्राणि। द्वादंश मासाः संवत्सरः। तत्तन्न सूर्क्यम्॥ उक्थ्यां एव संप्तद्शाः परः सामानः कार्याः॥२८॥

प्शवो वा उक्थानि। पृश्नामवंरुद्धौ। विश्वजिद्भिजितां-विग्निष्टोमौ। उक्थ्याः सप्तद्शाः परंः समानः। ते सङ्स्तुंता विराजम्भि सम्पंद्यन्ते। द्वे चर्चावितिरिच्येते। एकया गौरतिरिक्तः। एक्याऽऽयुंरूनः। सुव्गो वै लोको ज्योतिः। ऊर्ग्विराट्॥२९॥

सुवर्गमेव तेनं लोकम्भि जंयन्ति। यत्पर्* राथंन्तरम्। तत्प्रंथमेऽहंन्कार्यम्। बृहद्वितीयें। वैरूपं तृतीयें। वैराजं चंतुर्थे। शाक्करं पंश्रमे। रैवत १ षष्ठे। तद्ं पृष्ठेभ्यो नयंन्ति। सन्तनंय एते ग्रहां गृह्यन्ते॥३०॥ अतिग्राह्याः परंः सामस्। इमानेवैतैर्लोकान्त्सन्तंन्वन्ति। मिथुना एते ग्रहां गृह्यन्ते। अतिग्राह्याः परंः सामस्। मिथुनमेव तैर्यजमाना अवंरुन्थते। बृहत्पृष्ठं भवति। बृहद्वे स्वर्गो लोकः। बृहतैव स्वर्गं लोकं यन्ति। त्रयस्त्रिष्शि नाम साम। माध्यं दिने पवंमाने भवति॥३१॥

त्रयंस्त्रि श्रष्टे देवताः। देवतां प्रवावं रुन्धते। ये वा इतः परांश्वश् संवत्स्रमृप्यन्ति। न हैंनं ते स्वस्ति समंश्जुवते। अथ् येऽमृतोऽर्वाश्चमप्यन्ति। ते हैंन इस्वस्ति समंश्जुवते। पृतद्वा अमुतोऽर्वाश्चमुपंयन्ति। यदेवम्। यो हु खलु वाव प्रजापंतिः। स उवेवेन्द्रेः। तदुं देवेभ्यो नयंन्ति॥३२॥

कार्या विराङ्गृह्यन्ते पर्वमाने भवतीन्द्र एकं च॥२॥————[२]

सन्तंतिर्वा पृते ग्रहाः। यत्परंः सामानः। विष्वान्दिंवाकीर्त्यम्। यथा शालाये पक्षंसी। पृवः संवत्स्रस्य पक्षंसी। यदेतेन गृह्येरन्। विष्ची संवत्स्रस्य पक्षंसी व्यवंस्रः सेयाताम्। आर्तिमार्च्छंयुः। यदेते गृह्यन्ते। यथा शालांये पक्षंसी मध्यमं वःशम्भि संमायच्छंति॥३३॥

पृवर संवत्स्रस्य पक्षंसी दिवाकीर्त्यंम्भि सं तंन्वन्ति। नार्तिमार्च्छंन्ति। एकविर्शमहंभविति। शुक्राग्रा ग्रहां गृह्यन्ते। प्रत्युत्तंब्य्ये सयत्वायं। सौर्यं एतदहंः पृशुरालंभ्यते। सौर्योऽतिग्राह्यों गृह्यते। अहंरेव रूपेण समर्धयन्ति। अथो

अह्नं एवेष बलिहिंयते। सप्तैतदहंरतिग्राह्यां गृह्यन्ते॥३४॥ सप्त वै शीर्षण्याः प्राणाः। असावादित्यः शिरंः प्रजानांम्। शीर्षन्नेव प्रजानां प्राणान्दंधाति। तस्मात्सप्त शीर्षन्प्राणाः। इन्द्रों वृत्र हत्वा। असुरान्पराभाव्यं। स इमाल्लोंकानुभ्यंजयत्। तस्यासौ लोकोऽनंभिजित आसीत्। तं विश्वकर्मा भूत्वाऽभ्यंजयत्। यहैश्वकर्मणो गृह्यते॥३५॥ सुवर्गस्यं लोकस्याभिजित्यै। प्र वा पुतेंऽस्माल्लोकाच्यंवन्ते। ये वैश्वकर्मणं गृह्णते। आदित्यः श्वो गृह्यते। इयं वा अदितिः। अस्यामेव प्रति तिष्ठन्ति। अन्यौन्यो गृह्येते। विश्वांन्येवान्येन कर्माणि कुर्वाणा यंन्ति। अस्यामुन्येन प्रति तिष्ठन्ति। तावाऽपंरार्धात्संवत्सरस्यान्यौन्यो गृह्येते। तावुभौ सह महाव्रते गृह्येते। यज्ञस्यैवान्तं गत्वा। उभयौर्लोकयोः प्रतितिष्ठन्ति। अर्क्यमुक्थं भेवति। अन्नाद्यस्यावंरुद्धौ॥३६॥ सुमायच्छंत्यतिग्राह्मां गृह्मन्ते गृह्मतें संवत्सुरस्यान्योंन्यो गृह्मते पश्चं च॥३॥ $lue{3}$ एकवि श्रा एष भंवति। एतेन वै देवा एंकवि श्रोनं। आदित्यमित उत्तम र सुंवर्गं लोकमारोहयन्। स वा एष इत एंकवि १ शः। तस्य दशावस्तादहांनि। दशं पुरस्तांत्।

स वा एष विराज्युंभ्यतः प्रतिष्ठितः। विराजि हि वा एष उंभ्यतः प्रतिष्ठितः। तस्मांदन्तरेमौ लोकौ यन्। सर्वेषु सुवर्गेषुं लोकेष्वंभितपंत्रेति॥३७॥ देवा वा आंदित्यस्यं सुवर्गस्यं लोकस्यं। परांचोऽतिपादा-दंबिभयुः। तं छन्दोभिरदृ १ हुन्धृत्ये। देवा वा आंदित्यस्यं सुवर्गस्यं लोकस्यं। अवांचोऽवपादादंबिभयुः। तं पृश्चभीं रश्मिभिरुदंवयन्। तस्मादेकवि १ शेऽहुन्पश्चं दिवाकीत्यांनि क्रियन्ते। रश्मयो वै दिवाकीत्यांनि। ये गांयुत्रे। ते गांयत्रीषूत्तंरयोः पर्वमानयोः॥३८॥

पृति पर्वमानयोः स्पराणि पर्श्वं च॥४॥

[8]**.**

अप्रंतिष्ठां वा पुते गंच्छन्ति। येषा रं संवत्सरेऽनाप्तेऽथं। एकाद्शिन्याप्यते। वैष्णवं वांमनमालंभन्ते। यज्ञो वे विष्णुंः। यज्ञमेवालंभन्ते प्रतिष्ठित्यै। ऐन्द्राग्नमालंभन्ते। इन्द्राग्नी वे देवानामयातयामानौ। ये एव देवते अयांतयाम्नी। ते एवालंभन्ते॥४०॥

वैश्वदेवमालंभन्ते। देवतां एवावंरुन्थते। द्यावापृथिव्यां धेनुमालंभन्ते। द्यावापृथिव्योरेव प्रतिं तिष्ठन्ति। वायुव्यं वृत्समार्लभन्ते। वायुरेवैभ्यों यथाऽऽयत्नाद्देवता अवंरुन्धे। आदित्यामविं वृशामार्लभन्ते। इयं वा अदितिः। अस्यामेव प्रतिं तिष्ठन्ति। मैत्रावरुणीमार्लभन्ते॥४१॥

मित्रेणैव यज्ञस्य स्विष्टं शमयन्ति। वर्रणेन् दुरिष्टम्। प्राजापत्यं तूप्रं महाव्रत आलंभन्ते। प्राजापत्योऽतिग्राह्यो गृह्यते। अहंरेव रूपेण समर्धयन्ति। अथो अहं एवैष बिलिहिंयते। आग्नेयमा लंभन्ते प्रति प्रज्ञांत्यै। अजुपेत्वान् वा एते पूर्वेर्मासैरवं रुन्धते। यदेते गृव्याः पृशवं आलुभ्यन्तें। उभयेषां पशूनामवंरुद्धे॥४२॥

यदितिरिक्तामेकादृशिनीमालभैरन्। अप्रियं भ्रातृंव्यम्भ्यति-रिच्येत। यद्दौ द्दौ पृशू समस्येयुः। कनीय आयुः कुर्वीरन्। यदेते ब्राह्मणवन्तः पृशवं आलुभ्यन्तै। नाप्रियं भ्रातृंव्यम्भ्यंतिरिच्यंते। न कनीय आयुः कुर्वते॥४३॥

ते पुवालंभन्ते मैत्रावरुणीमालंभुन्तेऽवंरुख्ये सप्त चं॥५॥------[५]

प्रजापंतिः प्रजाः सृष्ट्वा वृत्तोऽशयत्। तं देवा भूताना् र रस्ं तेजंः सम्भृत्यं। तेनैनमभिषज्यन्। महानंववृतीिते। तन्मंहावृतस्यं महाव्रतृत्वम्। महद्भृतमिति। तन्मंहावृतस्यं महाव्रतृत्वम्। मृह्तो वृतमिति। तन्मंहावृतस्यं महाव्रतृत्वम्। पश्चविश्शः स्तोमो भवति॥४४॥

चतुंर्वि श्रात्यर्धमासः संवत्सुरः। यद्वा पुतस्मिन्त्संवत्सुरेऽधि

प्राजांयत। तदन्नं पञ्चिष्ट्शमंभवत्। मध्यतः क्रियते। मध्यतो ह्यन्नंमशितं धिनोति। अथों मध्यत एव प्रजानामूर्ग्धीयते। अथ् यद्वा इदमंन्ततः क्रियतें। तस्मादुदन्ते प्रजाः समेधन्ते। अन्ततः क्रियते प्रजनंनायैव। त्रिवृच्छिरों भवति॥४५॥

त्रेधाविहित १ हि शिरंः। लोमं छ्वीरस्थिं। परांचा स्तुवन्ति। तस्मात्तत्सदृगेव। न मेद्यतोऽनुं मेद्यति। न कृश्यतोऽनुं कृश्यति। पश्चदृशौंऽन्यः पृक्षो भंवति। स्प्तदृशौंऽन्यः। तस्माद्वया १ स्यन्यत्रम्धम्भि पूर्यावर्तन्ते। अन्यत्रतो हि तद्गरीयः क्रियते॥ ४६॥

पश्चिविष्श आत्मा भेवति। तस्मौन्मध्यतः पृशवो वरिष्ठाः। एकविष्शं पुच्छम्। द्विपदांसु स्तुवन्ति प्रतिष्ठित्यै। सर्वेण सह स्तुवन्ति। सर्वेण ह्यौत्मनाऽऽत्मन्वी। सहोत्पतंन्ति। एकैकामुच्छिषेषन्ति। आत्मन्न ह्यङ्गोनि बद्धानि। न वा एतेन सर्वः पुरुषः॥४७॥

यदित इंतो लोमांनि द्तो नुखान्। पृिरमादं क्रियन्ते। तान्येव तेन प्रत्युंप्यन्ते। औदुंम्बर्स्तल्पों भवति। ऊर्ग्वा अन्नमुदुम्बरंः। ऊर्ज पृवान्नाद्यस्यावंरुद्धे। यस्यं तल्प्सद्यमनंभिजित् स्यात्। स देवाना स्याम्यंक्षे। तल्प्सद्यंमभिजंयानीति तल्पंमा्रुह्योद्गांयेत्। तल्प्सद्यंमेवाभि जंयति॥४८॥ यस्यं तल्प्सद्यंम्भिजिंत्र् स्यात्। स देवाना्र् साम्यंक्षे। तल्प्सद्यं मा परांजेषीति तल्पंमारुह्योद्गायत्। न तल्प्सद्यं परांजयते। प्रेङ्के शर्सति। महो वै प्रेङ्कः। महंस प्वान्नाद्यस्यावंरुद्धे। देवासुराः संयंत्ता आसन्। त आंदित्ये व्यायंच्छन्त। तं देवाः समजयन्॥४९॥

ब्राह्मणश्चं शूद्रश्चं चर्मकर्ते व्यायंच्छेते। दैव्यो वै वर्णो ब्राह्मणः। असुर्यः शूद्रः। इमंऽरात्सुरिमे सुंभूतमंऋन्नित्यंन्यत्रो ब्रूंयात्। इम उद्वासीकारिणं इमे दुंभूतमंऋन्नित्यंन्यत्रः। यदेवैषां सुकृतं या राद्धिः। तदंन्यत्रोऽभि श्रीणाति। यदेवैषां दुष्कृतं याऽरांद्धिः। तदंन्यत्रोऽपं हन्ति। ब्राह्मणः सं जंयति। अमुमेवादित्यं भ्रातृंव्यस्य संविंन्दन्ते॥५०॥

भुवृति भुवृति क्रियते पुरुषो जयत्यजयञ्जयञ्जयत्येकं च॥६॥—————[६]

उद्धन्यमानं नवैतानि सन्तंतिरेकिव्रश्य एषोऽप्रतिष्ठां प्रजापंतिर्वृत्तष्यट्॥६॥ उद्धन्यमानः शोचिष्केशोऽग्नें सपन्नानितग्राह्मां वैश्वदेवमालंभन्ते पश्चाशत्॥५०॥ उद्धन्यमानुः संविन्दन्ते॥

हरिः ओम्॥ ॥इति श्रीकृष्णयजुर्वेदीयतैत्तिरीयब्राह्मणे प्रथमाष्टके द्वितीयः प्रपाठकः समाप्तः॥

॥ तृतीयः प्रश्नः॥

॥ तैत्तिरीयब्राह्मणे प्रथमाष्टके तृतीयः प्रपाठकः॥

देवासुराः संयंत्ता आसन्। ते देवा विजयमुंप्यन्तः। अग्नीषोमंयोस्तेज्ञस्विनींस्तुनः सन्न्यंदधत। इदम्ं नो भविष्यति। यदिं नो जेष्यन्तीतिं। तेनाुग्नीषोमाुवपांकामताम्। ते देवा विजित्यं। अग्नीषोमाुवन्वैंच्छन्। तेंऽग्निमन्वं-विन्दत्रृतुषूत्संत्रम्। तस्य विभंक्तीभिस्तेज्ञस्विनींस्तुन्र्र्वारुन्धत॥१॥

ते सोम्मन्वंविन्दन्। तमंघ्नन्। तस्यं यथाऽभिज्ञायं त्नूर्व्यगृह्णत्। ते ग्रहां अभवन्। तद्ग्रहांणां ग्रह्त्वम्। यस्यैवं विदुषो ग्रहां गृह्यन्तें। तस्य त्वंव गृहीताः। नानांऽऽग्नेयं पुनर्धिये कुर्यात्। यदनांग्नेयं पुनर्धिये कुर्यात्। व्यृद्धमेव तत्॥२॥

अनाँग्नेयं वा एतिक्रियते। यत्समिधस्तनूनपांतिमिडो बर्हिर्यजिति। उभावाँग्नेयावाज्यंभागौ स्याताम्। अनाँज्यभागौ भवत् इत्यांहुः। यदुभावाँग्नेयावन्वश्चाविति। अग्नये पर्वमानायोत्तरः स्यात्। यत्पर्वमानाय। तेनाज्यंभागः। तेनं सौम्यः। बुधंन्वत्याग्नेयस्याज्यंभागस्य पुरोऽनुवाक्यां भवति॥३॥

यथां सुप्तं बोधयंति। ताहगेव तत्। अग्निन्यंक्ताः

पत्नीसंयाजानामृचंः स्युः। तेनाँग्नेयः सर्वं भवति। एक्धा तेंज्ञस्विनीं देवतामुपैतीत्यांहः। सैनंमीश्वरा प्रदह् इति। नेति ब्रूयात्। प्रजनंनं वा अग्निः। प्रजनंनमेवोपैतीति। कृतयंजुः सम्भृंतसम्भार् इत्यांहः॥४॥

न सम्भृत्याः सम्भाराः। न यजुः कार्यमिति। अथो खर्णु। सम्भृत्यां एव सम्भाराः। कार्यं यजुः। पुनराधेयंस्य समृद्धै। तेनोपा १ प्रचरित। एष्यं इव वा एषः। यत्पुनराधेयः। यथोपा १ शु नृष्टमिच्छति॥ ५॥

ताहगेव तत्। उचैः स्विष्टकृतमुत्सृंजित। यथां नृष्टं वित्त्वा प्राह्मयमितिं। ताहगेव तत्। एक्धा तेजस्विनीं देवतामुपैतीत्यांहुः। सैनंमीश्वरा प्रदह् इतिं। तत्तथा नोपैति। प्रयाजानूयाजेष्वेव विभेक्तीः कुर्यात्। यथापूर्वमाज्यंभागौ स्याताम्। एवं पंत्रीसंयाजाः॥६॥

तद्वैश्वान्रवंत्प्रजनंनवत्तर्मुपैतीतिं। तदांहुः। व्यृंद्धं वा एतत्। अनौग्नेयं वा एतिक्रियत् इतिं। नेतिं ब्रूयात्। अग्निं प्रंथमं विभक्तीनां यजति। अग्निमुंत्तमं पंत्नीसंयाजानांम्। तेनांग्नेयम्। तेन समृद्धं क्रियत इतिं॥७॥

अक्ट्यतेव तद्वंवित सम्प्रंतसम्भार इत्यांहरिच्छितं प्रवीसंयाजा नवं चाराम्हर्मा देवा वै यथादर्शं यज्ञानाहर्रन्त। यौऽग्निष्टोमम्। य उक्थ्यम्। योऽतिरात्रम्। ते सहैव सर्वे वाज्येयंमपश्यन्। ते।

अन्यों ऽन्यस्मै नातिष्ठन्त। अहम्नेनं यजा इति। तें ऽब्रुवन्। आजिमस्य धांवामेति॥८॥

तस्मिन्नाजिमेधावन्। तं बृह्स्पित्ररुदंजयत्। तेनायजत। स स्वाराज्यमगच्छत्। तिमन्द्रौऽब्रवीत्। माम्नेनं याज्येतिं। तेनेन्द्रमयाजयत्। सोऽग्रं देवतानां पर्येत्। अगच्छत्स्वाराज्यम्। अतिष्ठन्तास्मै ज्यैष्ठाय॥९॥

य एवं विद्वान् वांज्येयेन् यजंते। गच्छंति स्वारांज्यम्। अग्रर्थं समानानां पर्येति। तिष्ठंन्तेऽस्मै ज्यैष्ठ्यांय। स वा एष ब्राह्मणस्यं चैव रांज्नन्यंस्य च यज्ञः। तं वा एतं वांज्येय इत्यांहुः। वाजाप्यो वा एषः। वाज्र्ड् ह्येतेनं देवा ऐप्सन्। सोमो वै वांजपेयः। यो वै सोमं वाजपेयं वेदं॥१०॥

वाज्येवैनं पीत्वा भवति। आऽस्यं वाजी जांयते। अत्रं वै वाज्येयः। य एवं वेदं। अत्यन्नम्। आऽस्यानादो जांयते। ब्रह्म वै वाज्येयः। य एवं वेदं। अत्ति ब्रह्मणाऽन्नम्। आऽस्यं ब्रह्म जांयते ॥११॥

वाग्वै वार्जस्य प्रस्वः। य एवं वेदं। क्रोतिं वाचा वीर्यम्। ऐनं वाचा गंच्छति। अपिवतीं वाचं वदति। प्रजापितिर्देवेभ्यों यज्ञान्व्यादिंशत्। स आत्मन्वांज्येयंमधत्त। तं देवा अंब्रुवन्। एष वाव यज्ञः। यद्वांज्येयंः॥१२॥

अप्येव नोऽत्रास्त्विति। तेभ्यं पुता उज्जितीः प्रायंच्छत्। ता

वा एता उन्नितयो व्याख्यांयन्ते। युज्ञस्यं सर्वत्वायं। देवतांनामनिर्भागाय। देवा वै ब्रह्मण्श्वान्नस्य च् शमंलुमपांच्चन्। यद्वह्मणः शमंलुमासीत्। सा गाथां नाराशङ्स्यंभवत्। यदन्नस्य। सा सुरां॥१३॥

तस्माद्गायंतश्च मृत्तस्यं च न प्रंतिगृह्यम्ं। यत्प्रंतिगृह्णीयात्। शमंलं प्रतिगृह्णीयात्। सर्वा वा एतस्य वाचोऽवंरुद्धाः। यो वांजपेययाजी। या पृथिव्यां याऽग्रौ या रंथन्तरे। याऽन्तरिक्षे या वायौ या वांमदेव्ये। या दिवि याऽऽदित्ये या बृह्ति। याऽप्सु यौषंधीषु या वनस्पतिषु। तस्माद्धाजपेययाज्यार्त्विजीनः। सर्वा ह्यंस्य वाचोऽवंरुद्धाः॥१४॥ ध्रावामेति ज्येष्ठांय वदं ब्रह्मा जांयते वाज्येयः सुराऽऽत्विंजीन एकं चारा [२]

देवा वै यद्न्यैर्ग्रहैं य्ज्ञस्य नावारंन्थत। तदंतिग्राह्यैरतिगृह्या-वारुन्थत। तदंतिग्रह्यांणामतिग्राह्यत्वम्। यदंतिग्राह्यां गृह्यन्तें। यदेवान्यैर्ग्रहैं य्ज्ञस्य नावंरुन्थे। तदेव तैरंतिगृह्यावंरुन्थे। पश्चं गृह्यन्ते। पाङ्कों युज्ञः। यावानेव युज्ञः। तमास्वाऽवंरुन्थे॥१५॥

सर्व ऐन्द्रा भवन्ति। एक्धैव यजमान इन्द्रियं दंधित। सप्तदंश प्राजापत्या ग्रहां गृह्यन्ते। सप्तद्शः प्रजापंतिः। प्रजापंतेरास्यैं। एकंयुर्चा गृह्णाति। एक्धैव यजमाने वीर्यं दधाति। सोम्ग्रहा इश्चं सुराग्रहा इश्चं गृह्णाति। एतद्वे देवानां पर्ममन्नम्। यत्सोमं:॥१६॥ पृतन्मंनुष्यांणाम्। यत्सुरां। प्रमणेवास्मां अन्नाद्येनावंर-मन्नाद्यमवंरुन्थे। सोम्ग्रहान्गृंह्णाति। ब्रह्मंणो वा पृतत्तेर्जः। यत्सोमः। ब्रह्मंण पृव तेर्जसा तेजो यर्जमाने दधाति। सुराग्रहान्गृंह्णाति। अन्नंस्य वा पृतच्छमंलम्। यत्सुरां॥१७॥ अन्नंस्यैव शमंलेन शमंलं यर्जमानादपंहन्ति। सोम्ग्रहा इश्चं सुराग्रहा इश्चं गृह्णाति। पुमान् व सोमः। स्त्री सुरां। तिन्मंथुनम्। मिथुनम्वास्य तद्यज्ञे करोति प्रजनंनाय। आत्मानंमेव सोमग्रहेः स्पृंणोति। जायाः सुराग्रहेः। तस्माद्याजपेययाज्यंमुष्मिं ह्याँके स्त्रियः सम्भवति। वाजपेयांभिजितः ह्यांस्य॥१८॥

पूर्वे सोमग्रहा गृंह्यन्ते। अपंरे सुराग्रहाः। पुरोऽक्षरं सोमग्रहान्त्सांदयति। पृश्चाद्क्षरं सुंराग्रहान्। पाप्वस्यसस्य विधृंत्ये। एष वे यजंमानः। यत्सोमः। अन्नर् सुरां। सोमग्रहाइश्चं सुराग्रहाइश्चं सुराग्रहाइश्चं व्यतिषज्जित। अन्नाद्येनैवेनं व्यतिषजित॥१९॥

संपृचेः स्था सं मां भ्रेणं पृङ्केत्यांह। अत्रं वै भ्रम्। अन्नाद्यंनैवेन् स्स्मृंजिति। अन्नस्य वा एतच्छमंलम्। यत्सुरां। पाप्मेव खलु वे शमंलम्। पाप्मना वा एनमेतच्छमंलेन व्यतिषजिति। यत्सोमग्रहा इश्चं सुराग्रहा इश्चं व्यतिषजिति। विपृचेः स्था वि मां पाप्मनां पृङ्केत्यांह। पाप्मनैवेन स्शामंलेन व्यावित्यति॥२०॥ तस्मौद्वाजपेययाजी पूतो मेध्यो दक्षिण्यः। प्राङुद्देवित सोमग्रहेः। अमुमेव तैर्लोकम्भिजंयित। प्रत्यङ्ख्सुंराग्रहेः। इममेव तैर्लोकम्भिजंयित। प्रतिष्ठन्ति सोमग्रहेः। यावदेव सत्यम्। तेनं सूयते। वाज्रसृद्धाः सुराग्रहान् हंरन्ति। अनृतेनैव विशृ स् सर्सृंजिति। हिर्ण्यपात्रं मधौः पूर्णं दंदाति। मुध्व्योऽसानीति। एकधा ब्रह्मण् उपं हरित। एकधेव यजंमान् आयुस्तेजो दधाति॥२१॥

आह्वाऽवंकन्धे सोमः शर्मलं यत्सुरा ह्यंस्थेनं व्यतिषजित व्यवंतियति स्वति च्वति चावाि चावाि विश्वाि व्यवंति स्वति च्वति चावाि वावाि वावि वावाि वावि वावाि वाव

मारुत्या बृंह्तः स्तोत्रम्। एतावंन्तो वै यंज्ञक्रतवंः। तान्पशुभिरेवावंरुन्थे। आत्मानंमेव स्पृंणोत्यग्निष्टोमेनं। प्राणापानावुक्थेन। वीर्यर् षोड्शिनंः स्तोत्रेणं। वार्चमितरात्रेणं। प्रजां बृंह्तः स्तोत्रेणं। इममेव लोकम्भिजंयत्यग्निष्टोमेनं। अन्तरिक्षमुक्थेन॥२३॥

सुवर्गं लोकः षोडशिनः स्तोत्रेणं। देवयानानेव पथ आरोहत्यतिरात्रेणं। नाकः रोहति बृह्तः स्तोत्रेणं। तेजं एवात्मन्धंत्त आग्नेयेनं पृशुनां। ओजो बलंमैन्द्राग्नेनं। इन्द्रियमैन्द्रेणं। वाचर् सारस्वत्या। उभावेव देवलोकं च मनुष्यलोकं चाभिजंयित मारुत्या वृशयाँ। सप्तदंश प्राजापत्यान्पशूनालंभते। सप्तदृशः प्रजापंतिः॥२४॥

प्रजापंतेरास्यै। श्यामा एकंरूपा भवन्ति। एविमेव हि प्रजापंतिः समृंद्धौ। तान्पर्यप्रिकृतानुत्सृंजिति। मुरुतों यज्ञमंजिघा स्मन्य्रजापंतेः। तेभ्यं एतां मारुतीं वृशामालंभत। तयैवैनांनशमयत्। मारुत्या प्रचर्य। एतान्त्संज्ञंपयेत्। मुरुतं एव शंमियत्वा॥२५॥

पृतेः प्रचंरति। युज्ञस्याघांताय। पृक्धा वपा जुंहोति। पृक्देव्त्यां हि। पृते। अथां पृक्धेव यजंमाने वीर्यं दधाति। नैवारेणं सप्तदंशशरावेणैतर्हि प्रचंरति। पृतत्पुंरोडाशा होते। अथां पश्नामेव छिद्रमपिदधाति। सार्स्वत्योत्तमया प्रचंरति। वाग्वे सरंस्वती। तस्मौत्प्राणानां वागुंत्तमा। अथौं प्रजापंतावेव युज्ञं प्रतिष्ठापयति। प्रजापंतिरहि वाक्। अपंत्रदती भवति। तस्मौन्मनुष्यौः सर्वां वाचं वदन्ति॥२६॥ अतिराज्ञम्नतिरक्षमुक्थंन प्रजापंतिः शमिवत्वोत्तमया प्रचंरति पद चं॥४॥————[४]

सावित्रं जुंहोति कर्मणः कर्मणः पुरस्तांत्। कस्तद्वेदेत्यांहुः। यद्वांजपेयंस्य पूर्वं यदपंरमिति। सवितृप्रंसूत एव यथापूर्वं कर्माणि करोति। सवनसवने जुहोति। आक्रमणमेव तत्सेतुं यजमानः कुरुते। सुवृर्गस्यं लोकस्य सम्धि।

वाचस्पतिर्वाचंम्द्य स्वंदाति न इत्यांह। वाग्वै देवानां पुराऽन्नंमासीत्। वाचंमेवास्मा अन्नई स्वदयति॥२७॥

इन्द्रंस्य वज्रोऽसि वार्त्रघ्न इति रथंमुपावंहरति विजित्यै। वाजंस्य नु प्रंसवे मातरं महीमित्यांह। यचैवेयम्। यचास्यामिधे। तदेवावंरुन्थे। अथो तस्मिन्नेवोभयेऽभिषिंच्यते। अप्स्वंन्तरमृतंमप्सु भेषजमित्यश्वांन्यल्पूलयति। अप्सु वा अश्वंस्य तृतीयं प्रविष्टम्। तदंनुवेन्नववंप्रवते। यद्प्सु पंल्पूलयंति॥२८॥

यदेवास्याप्सु प्रविष्टम्। तदेवावंरुन्थे। बहु वा अश्वोऽमेध्यमुपंगच्छति। यद्प्सु पंल्पूलयंति। मेध्यांनेवैनांन्करोति। वायुर्वां त्वा मनुंर्वा त्वेत्यांह। एता वा एतं देवता अग्रे अश्वमयुञ्जन्। ताभिरेवैनान् युनक्ति। सवस्योज्ञित्यै। यजुंषा युनक्ति व्यावृत्त्ये॥२९॥

अपाँन्नपादाशुहेम्निति सम्माँष्टिं। मेध्यांनेवैनाँन्करोति। अथो स्तौत्येवैनांनाजि संरिष्यतः। विष्णुक्रमान्क्रंमते। विष्णुरेव भूत्वेमाल्लाँकान्भिजंयति। वैश्वदेवो वै रथंः। अङ्को न्यङ्कावभितो रथं यावित्यांह। या एव देवता रथे प्रविष्टाः। ताभ्यं एव नमंस्करोति। आत्मनोऽनाँत्ये। अशंमरथम्भावुकोऽस्य रथो भवति। य एवं वेदं॥३०॥

देवस्याहर संवितुः प्रंसवे बृहस्पतिंना वाज्जिता वाजं

जेषमित्यांह। स्वितृप्रंसूत एव ब्रह्मणा वाज्मुज्ञंयति। देवस्याहर संवितुः प्रंस्वे बृह्स्पतिना वाज्जिता वर्षिष्ठं नाकर्र रुहेयमित्यांह। स्वितृप्रंसूत एव ब्रह्मणा वर्षिष्ठं नाकर्र रोहति। चात्वांले रथच्कं निर्मितर रोहति। अतो वा अङ्गिरस उत्तमाः सुंवर्गं लोकमांयन्। साक्षादेव यजंमानः सुवर्गं लोकमंति। आवेष्टयति। वज्रो व रथः। वज्रेणैव दिशोऽभिजंयति॥३१॥

वाजिना सामं गायते। अत्रं वै वार्जः। अत्रंमेवावंरुन्थे। वाचो वर्ष्मं देवेभ्योऽपाँकामत्। तद्वन्स्पतीन्प्राविंशत्। सैषा वाग्वन्स्पतिंषु वदित। या दुंन्दुभौ। तस्माँ दुन्दुभिः सर्वा वाचोऽतिंवदित। दुन्दुभीन्त्समाप्नन्ति। पुरमा वा एषा वाक्॥३२॥

या दुन्दुभौ। प्रमयैव वाचाऽवरां वाचमंवरुन्थे। अथों वाच एव वर्ष्म् यजमानोऽवरुन्थे। इन्द्रांय वाचं वद्तेन्द्रं वाजं जापयतेन्द्रो वाजंमजयिदित्यांह। एष वा एतर्हीन्द्रंः। यो यजंते। यजमान एव वाज्मुज्जयित। सप्तदंश प्रव्याधानाजिं धांवन्ति। सप्तद्श स्तोत्रं भंवति। सप्तदंशसप्तदश दीयन्ते॥३३॥

स्प्तद्शः प्रजापंतिः। प्रजापतेराप्त्यै। अवांऽसि सप्तिरिस वाज्यंसीत्याह। अग्निर्वा अर्वा। वायुः सप्तिः। आदित्यो वाजी। एताभिरेवास्मै देवतांभिर्देवर्थं युनिक्ति। प्रष्टिवाहिनं युनिक्त। प्रष्टिवाही वै देवर्थः। देवर्थमेवास्मै युनिक्त॥३४॥ वार्जिनो वार्जं धावत काष्ठां गच्छतेत्यांह। सुवर्गो वै लोकः काष्ठां। सुवर्गमेव लोकं यंन्ति। सुवर्गं वा एते लोकं यंन्ति। य आजिं धावंन्ति। प्राश्चो धावन्ति। प्राङिव हि सुवर्गो लोकः। चत्सृभिरन्ं मन्नयते। चत्वारि छन्दा सि। छन्दोभिरवेनांन्त्सुवर्गं लोकं गंमयति॥३५॥

प्र वा एतें उस्माल्लोकाच्यंवन्ते। य आजिं धावंन्ति। उदं च् आवर्तन्ते। अस्मादेव तेनं लोकान्नयंन्ति। रथविमोचनीयं जुहोति प्रतिष्ठित्ये। आ मा वार्जस्य प्रस्वो जंगम्यादित्यांह। अन्नं वै वार्जः। अन्नमेवावंरुन्थे। यथालोकं वा एत उन्नयन्ति। य आजिं धावंन्ति॥३६॥

कृष्णलं कृष्णलं वाज्रसृद्धः प्रयंच्छति। यमेव ते वाजं लोकमुञ्जयंन्ति। तं पंरिकीयावंरुन्धे। एक्धा ब्रह्मण् उपंहरति। एक्धेव यजंमाने वीर्यं दधाति। देवा वा ओषंधीष्वाजिमंयुः। ता बृह्स्पति्रुदंजयत्। स नीवारान्निरंवृणीत। तन्नीवाराणां नीवारत्वम्। नैवारश्चरुर्भविति॥३७॥

एतद्वै देवानां पर्ममन्नम्। यन्नीवाराः। प्रमेणैवास्मां अन्नाद्येनावंरम्नाद्यमवंरुन्थे। स्प्तदंशशरावो भवति। स्प्तद्शः प्रजापंतिः। प्रजापंतेराप्त्ये। क्षीरे भंवति। रुचेमेवास्मिन्दधाति। सर्पिष्वान्भवति मेध्यत्वायं।

बार्हस्पत्यो वा एष देवतंया॥३८॥

यो वांज्येयेन यजंते। बार्हस्पत्य एष च्रः। अश्वांन्त्सरिष्यतः सस्रुषश्चावं घ्रापयति। यमेव ते वाजं लोकमुञ्जयंन्ति। तमेवावंरुन्थे। अजींजिपत वनस्पतय इन्द्रं वाजं विमुंच्यध्वमितिं दुन्दुभीन् विमुंश्चति। यमेव ते वाजं लोकमिन्द्रियं दुन्दुभयं उज्जयंन्ति। तमेवावंरुन्थे॥३९॥

अभिजंयित वा एषा वार्ग्दीयन्तेऽस्मै युनक्ति गमयित य आजिं धार्वन्ति भवित देवतंयाऽष्टौ चं॥६॥ [६]

तार्प्यं यजंमानं परिधापयति। यज्ञो वै तार्प्यम्। यज्ञेनैवैन् समर्धयति। दुर्भमयं परिधापयति। पवित्रं वै दुर्भाः। पुनात्येवैनम्। वाजं वा एषोऽवंरुरुत्सते। यो वाजपयेन् यजंते। ओषंधयः खलु वै वाजः। यद्दंभ्मयं परिधापयंति॥४०॥

वाज्स्यावंरुद्धै। जाय एहि सुवो रोहावेत्यांह। पिनया एवैष यज्ञस्यान्वारम्भोऽनंवच्छित्त्यै। सप्तदंशारित्वर्यूपों भवति। सप्तद्शः प्रजापंतिः। प्रजापंतेरास्यै। तूप्रश्चतुंरिश्नर्भवति। गौधूमं चुषालम्। न वा एते ब्रीहयो न यवाः। यद्गोधूमाः॥४१॥

एविमेव हि प्रजापंतिः समृद्धै। अथों अमुमेवास्मैं लोकमन्नवन्तं करोति। वासोभिर्वेष्टयति। एष वै यर्जमानः। यद्यूपंः। सुर्वेदेवृत्यं वासंः। सर्वाभिरेवैनं देवतांभिः समर्धयति। अथों आक्रमणमेव तत्सेतुं यर्जमानः कुरुते। सुवर्गस्यं लोकस्य समेष्ट्रौ। द्वादंश वाजप्रसुवीयांनि जुहोति॥४२॥

द्वादेश मार्साः संवत्सरः। संवत्सरमेव प्रीणाति। अथो संवत्सरमेवास्मा उपंदधाति। सुवर्गस्यं लोकस्य सम्धि। दशिमः कल्पै रोहति। नव वै पुरुषे प्राणाः। नाभिर्दश्मी। प्राणानेव यथास्थानं कल्पयित्वा। सुवर्गं लोकमेति। पृतावद्वै पुरुषस्य स्वम्॥४३॥

यावंत्र्राणाः। यावंदेवास्यास्ति। तेनं सह सुंवर्गं लोकमेति। सुवंदेवा अग्नित्याह। सुवर्गमेव लोकमेति। अमृतां अभूमेत्याह। अमृतंमिव हि सुंवर्गो लोकः। प्रजापंतेः प्रजा अभूमेत्याह। प्राजापत्यो वा अयं लोकः। अस्मादेव तेनं लोकान्नैति॥४४॥

समहं प्रजया सं मयां प्रजेत्यांह। आशिषंमेवेतामा शांस्ते। आसपुटैर्घन्ति। अत्रं वा इयम्। अन्नाद्यंनैवैन् समर्धयन्ति। ऊषैर्घन्ति। एते हि साक्षादन्नम्। यदूषाः। साक्षादेवैनंमन्नाद्यंन् समर्धयन्ति। पुरस्तांत्प्रत्यश्चं घ्रन्ति॥४५॥

सुवर्गी लोकः॥४६॥

अमृतं एव स्वं लोके प्रतितिष्ठति। श्तमानं भवति। श्तायुः पुरुषः श्तेन्द्रियः। आयुंष्येवेन्द्रिये प्रतिं तिष्ठति। पृष्ट्ये वा एतद्रूपम्। यद्जा। त्रिः संवत्सरस्यान्यान्पशून्परि प्रजायते। बस्ताजिनम्ध्यवं रोहति। पृष्ट्यांमेव प्रजनेने प्रतितिष्ठति॥४७॥

प्रिथापयंति गोधूमां जुहोति स्वं नैति प्रत्यश्चं प्रत्ति लोको नवं चाणा———[७] स्प्तान्नहोमाञ्चहोति। स्प्ता वा अन्नानि। यावन्त्येवान्नांनि। तान्येवावं रुन्थे। स्प्ता ग्राम्या ओषंधयः। स्प्तार्ण्याः। उभयीषामवं रुद्धे। अन्नस्यान्नस्य जुहोति। अन्नस्यान्नस्यावं रुद्धे। यद्वां जपेययाज्यनं व रुद्धस्याश्नीयात्॥४८॥

अवंरुद्धेन् व्यृंद्धोत। सर्वस्य समवदायं जुहोति। अनंवरुद्धस्यावंरुद्धो। औद्मंबरेण स्रुवेणं जुहोति। ऊर्ग्वा अन्नमुदुम्बरंः। ऊर्ज एवान्नाद्यस्यावंरुद्धौ। देवस्यं त्वा सवितुः प्रंस्व इत्यांह। स्वितृप्रंसूत एवैनं ब्रह्मणा देवतांभिर्भिषिश्चिति। अन्नस्यान्नस्याभिषिश्चिति। अन्नस्यान्नस्यावंरुद्धौ॥४९॥

पुरस्तौत्प्रत्यश्चंमभिषिश्चिति। पुरस्ताद्धि प्रंतीचीन्मन्नंमृद्यतैं। शीर्षतोऽभिषिश्चिति। शीर्षतो ह्यन्नंमृद्यतें। आ मुखांद्न्ववंस्नावयित मुख्त एवास्मां अन्नाद्यं दधाति। अग्नेस्त्वा साम्रौज्येनाभिषिश्चामीत्र एष वा अग्नेः स्वः। तेनैवैनंमभिषिश्चिति। इन्द्रंस्य त्वा

साम्रांज्येनाभिषिंश्वामीत्यांह॥५०॥

इन्द्रियमेवास्मिन्नेतेनं दधाति। बृह्स्पतेंस्त्वा साम्रांज्येनाभि-षिश्चामीत्यांह। ब्रह्म वे देवानां बृह्स्पतिः। ब्रह्मणैवैनंमभि-षिश्चति। सोमग्रहा इश्चांवदानीयानि चर्त्विग्भ्य उपहरन्ति। अमुमेव तैर्लोकमन्नंवन्तं करोति। सुराग्रहा इश्चांनवदानीयानि च वाज्यस्द्राः। इममेव तैर्लोकमन्नंवन्तं करोति। अथो उभयीष्वेवाभिषिच्यते। विमाथं कुर्वते वाज्यसृतः॥५१॥

इन्द्रियस्यावंरुद्धै। अनिंरुक्ताभिः प्रातः सव्ने स्तुंवते। अनिंरुक्तः प्रजापंतिः। प्रजापंतेराप्त्यै। वाजंवतीभिर्माध्यं दिने। अत्रं वै वाजंः। अत्रंमेवावंरुन्धे। शिपिविष्ट-वंतीभिस्तृतीयसव्ने। युज्ञो वै विष्णुः। पृशवः शिपिः। युज्ञ एव पृशुषु प्रतिं तिष्ठति। बृहदन्त्यं भवति। अन्तंमेवैन ई श्रियै गंमयति॥५२॥

अश्रीयादत्रंस्यात्रस्यावंरुखा इन्द्रंस्य त्वा साम्रांज्येनाभिषिश्चामीत्यांह वाज्यतः शिष्क्षिणि चाटा [८] नृषदं त्वेत्यांह। प्रजा वै नृन्। प्रजानां मेवेतेनं सूयते। द्रुषद्मित्यांह। वनस्पतंयो वे द्रु। वनस्पतीं नामेवेतेनं सूयते। भुवनसद्मित्यांह। यदा वे वसींयान्भवंति। भुवंनमगृत्रिति वे तमांहः। भुवंनमेवेतेनं गच्छति॥५३॥

अप्सुषदं त्वा घृत्सद्मित्यांह। अपामेवैतेनं घृतस्यं सूयते। व्योमसद्मित्यांह। यदा वे वसीयान्भवंति। व्योमागन्निति वे तमांहुः। व्योमैवैतेन गच्छति। पृथिविषदं त्वाऽन्तरिक्षसद्मित्यांह। एषामेवैतेनं लोकानार् सूयते। तस्मौद्वाजपेययाजी न कश्चन प्रत्यवंरोहति। अपीव हि देवतानार सूयते॥५४॥

नाक्सद्मित्यांह। यदा वै वसीयान्भवंति। नाकंमगन्निति वै तमाहुः। नाकंमेवेतेनं गच्छति। ये ग्रहाः पश्चज्ञनीना इत्यांह। पश्चज्ञनानांमेवेतेनं सूयते। अपार रस्मुद्धंयस्मित्यांह। अपामेवेतेन रसंस्य सूयते। सूर्यरिश्मर स्माभृंतमित्यांह सश्कत्वायं॥५५॥

गुच्छति सूयते नवं च॥९॥=

[8]

इन्द्रों वृत्र हत्वा। असुंरान्पराभाव्यं। सोऽमावास्यां प्रत्यागंच्छत्। ते पितरंः पूर्वेद्युरागंच्छन्। पितृन् यज्ञोऽगच्छत्। तं देवाः पुनंरयाचन्त। तमेंभ्यो न पुनंरददुः। तेंऽब्रुवन्वरं वृणामहै। अर्थ वः पुनंदिस्यामः। अस्मभ्यंमेव पूर्वेद्यः क्रियाता इति॥५६॥

तमें भ्यः पुनंरददुः। तस्मौत्पितृभ्यः पूर्वेद्यः क्रियते। यत्पितृभ्यः पूर्वेद्यः करोति। पितृभ्यं एव तद्यज्ञं निष्क्रीय यजमानः प्रतंनुते। सोमाय पितृपीताय स्वधा नम् इत्यांह। पितुरेवाधि सोमपीथमवंरुभ्धे। न हि पिता प्रमीयमाण आहैष सोमपीथ इति। इन्द्रियं वै सोमपीथः। इन्द्रियमेव सोमपीथमवं रुभ्धे। तेनैन्द्रियेणं द्वितीयां जायामभ्यंश्रुते॥५७॥

एतद्वे ब्राह्मणं पुरा वांजवश्रवसा विदामं ऋन्। तस्मात्ते

द्वेद्वे जाये अभ्याक्षत। य एवं वेदे। अभि द्वितीयां जायामंश्रुते। अग्नयें कव्यवाहंनाय स्वधा नम् इत्याह। य एव पितृणाम्गिः। तं प्रीणाति। तिस्र आहुंतीर्जुहोति। त्रिर्निदंधाति। षद्भम्पंद्यन्ते॥५८॥

षड्वा ऋतवंः। ऋतूनेव प्रीणाति। तूष्णीं मेक्षणमादंधाति। अस्ति वा हि षष्ठ ऋतुर्न वाँ। देवान् वे पितॄन्प्रीतान्। मृनुष्याः पितरोऽनु प्रपिपते। तिस्र आहुंतीर्जुहोति। त्रिर्निदंधाति। षद्मम्पंद्यन्ते। षड्वा ऋतवंः॥५९॥

ऋतवः खलु वै देवाः पितरंः। ऋतूनेव देवान्पितॄन्प्रींणाति। तान्प्रीतान्। मनुष्याः पितरोऽनु प्रपिपते। सकृदाच्छिन्नं बर्हिर्भवति। सकृदिव हि पितरंः। त्रिर्निदंधाति। तृतीये वा इतो लोके पितरंः। तानेव प्रींणाति। पराङावंतिते॥६०॥

ह्रीका हि पितरंः। ओष्मणौं व्यावृत् उपाँस्ते। ऊष्मभांगा हि पितरंः। ब्रह्मवादिनों वदन्ति। प्राश्या (३) त्र प्राश्या (३) मितिं। यत्प्रांश्रीयात्। जन्यमन्नमद्यात्। प्रमायुंकः स्यात्। यन्न प्रांश्रीयात्। अहंविः स्यात्॥६१॥

पितृभ्य आवृंश्चेत। अवघ्रेयंमेव। तन्नेव प्राशितं नेवाप्रांशितम्। वीरं वा वै पितरंः प्रयन्तो हरंन्ति। वीरं वां ददति। दृशां छिनत्ति। हरंणभागा हि पितरंः। पितृनेव निरवंदयते। उत्तंर आयुंषि लोमं छिन्दीत। पितृणाङ् ह्येतर्हि नेदीयः॥६२॥

नमंस्करोति। नुमुस्कारो हि पिंतृणाम्। नमों वः पितरो रसाय। नमों वः पितरः शुष्मांय। नमों वः पितरो जीवायं। नमों वः पितरः स्वधायै। नमों वः पितरो मन्यवै। नमों वः पितरो घोरायं। पितरो नमों वः। य पुतस्मिं ह्याँके स्थ॥६३॥ युष्मा इस्ते ऽनुं। यें ऽस्मिल्लोंके। मां ते ऽनुं। य एतस्मिल्लोंके स्थ। यूयं तेषां विसेष्ठा भूयास्त। यैंऽस्मिल्लौंके। अहं तेषां वसिष्ठो भूयासमित्यांह। वसिष्ठः समानानां भवति। य एवं विद्वान्पितृभ्यः करोति। एष वै मनुष्याणां यज्ञः॥६४॥ देवानां वा इतंरे यज्ञाः। तेन वा एतत्पितृलोके चरित। यत्पतृभ्यंः करोतिं। स ईंश्वरः प्रमेतोः। प्राजापत्ययर्चा पुनरेतिं। यज्ञो वै प्रजापंतिः। यज्ञेनेव सह पुनरेतिं। न प्रमायुंको भवति। पितृलोके वा एतद्यजंमानश्चरति। यत्पतृभ्यंः करोति। स ईंश्वर आर्तिमार्तोः। प्रजापंतिस्त्वावैनं तत् उन्नेतुमर्हतीत्यांहुः। यत्रांजापत्ययर्चा पुनरैतिं। प्रजापंतिरेवैनं तत उन्नयित। नार्तिमार्च्छति यर्जमानः॥६५॥ इत्यंश्रुते पद्यन्ते पद्यन्ते पड्डा ऋतवों वर्ततेऽहंिवः स्यान्नेदीयः स्थ युज्ञो यर्जमानश्चरित् यत्पितृभ्यः [80] करोति पर्श्व च॥१०॥।

देवासुरा अग्नीषोमयोर्देवा वै यथादर्शं देवा वै यद्न्यैग्रीहैर्ब्रह्मवादिनो नाग्निष्टोमो न सांवित्रं देवस्याहं तार्प्यर सप्तान्नहोमान्नृषदं त्वेन्द्रों वृत्रर हुत्वा दर्श॥१०॥

देवासुरा वाज्येवैनं तस्माँद्वाजपेययाजी देवस्याहं वाजस्यावंरुद्धा इन्द्रियमेवास्मिन् ह्लीका हि पितरः पश्चंषष्टिः॥६५॥ देवासुरा यर्जमानः॥

हरिः ओम्॥ ॥इति श्रीकृष्णयजुर्वेदीयतैत्तिरीयब्राह्मणे प्रथमाष्टके तृतीयः प्रपाठकः समाप्तः॥

॥चतुर्थः प्रश्नः॥

॥ तैत्तिरीयब्राह्मणे प्रथमाष्टके चतुर्थः प्रपाठकः॥

उभये वा एते प्रजापंतेरध्यंसृज्यन्त। देवाश्चासुंराश्च। तान्न व्यंजानात्। इमें ऽन्य इमें ऽन्य इतिं। स देवान् १ शूनंकरोत्। तान्भ्यंषुणोत्। तान्प्वित्रंणापुनात्। तान्प्रस्तांत्प्वित्रंस्य व्यंगृह्णात्। ते ग्रहां अभवन्। तद्ग्रहांणां ग्रहत्वम्॥१॥

देवता वा एता यर्जमानस्य गृहे गृंह्यन्ते। यद्ग्रहाः। विदुरेनं देवाः। यस्यैवं विदुषं एते ग्रहां गृह्यन्तें। एषा वै सोम्स्याहुंतिः। यदुंपा्रशुः। सोमेन देवाङ्स्तंपयाणीति खलु वै सोमेन यजते। यदुंपा्रशुं जुहोतिं। सोमेनैव तद्देवाङ्स्तंपयति। यद्ग्रहां जुहोतिं॥२॥

देवा एव तद्देवान्गंच्छन्ति। यचंम्सां जुहोतिं। तेनैवानुंरूपेण् यजमानः सुवृगं लोकमेति। किं न्वेतदग्रं आसीदित्यांहुः। यत्पात्राणीतिं। इयं वा एतदग्रं आसीत्। मृन्मयांनि वा एतान्यांसन्। तैर्देवा न व्यावृतंमगच्छन्। त एतानिं दारुमयांणि पात्रांण्यपश्यन्। तान्यंकुर्वत॥३॥

तैर्वे ते व्यावृतंमगच्छन्। यद्दांरुमयांणि पात्रांणि भवंन्ति। व्यावृतंमेव तैर्यजमानो गच्छति। यानि दारुमयांणि पात्रांणि भवंन्ति। अमुमेव तैर्लोकम्भिजंयति। यानि मृन्मयांनि। इममेव तैर्लोकमभिजंयति। ब्रह्मवादिनों वदन्ति। काश्चतंस्रः स्थालीर्वायव्याः सोम्ग्रहंणीरिति। देवा वै पृश्जिंमदुह्नन्॥४॥ तस्यां पृते स्तनां आसन्। इयं वै पृश्जिः। तामांदित्या आंदित्यस्थाल्या चतुंष्पदः पृश्चनंदुह्नन्। यदांदित्यस्थाली भवंति। चतुंष्पद पृव तयां पृश्चन् यज्ञंमान इमां दुहे। तामिन्द्रं उक्थ्यस्थाल्येन्द्रियमंदुह्न्। यदुंक्थ्यस्थाली भवंति। इन्द्रियमेव तया यज्ञंमान इमां दुहे। तां विश्वं देवा आंग्रयणस्थाल्योर्जमदुह्न्। यदांग्रयणस्थाली भवंति॥५॥

ऊर्जमेव तया यजंमान इमां दुंहे। तां मंनुष्यौ ध्रुवस्थाल्याऽऽयुंरदुह्नन्। यद्धुंवस्थाली भवंति। आयुंरेव तया यजंमान इमां दुंहे। स्थाल्या गृह्णातिं। वायव्येन जुहोति। तस्मांदन्येन पात्रेण प्शून्दुहन्तिं। अन्येन प्रतिंगृह्णन्ति। अथौं व्यावृतंमेव तद्यजंमानो गच्छति॥६॥

गृह्तं ग्रहाँ जुहोत्यंकुर्वतादुह्न्नाग्रयणस्थाली भवंति नवं चारा [१]
युव १ सुराममिश्विना। नर्मुचावासुरे सर्चा। विपिपाना
श्रीभस्पती। इन्द्रं कर्म स्वावतम्। पुत्रिमेव पितरांवश्विनोभा।
इन्द्रावंतं कर्मणा दु १ सनांभिः। यत्सुरामं व्यपिंबः शचींभिः।
सर्रस्वती त्वा मघवन्नभीष्णात्। अहाँ व्यग्ने ह्विरास्येते।
सुचीवं घृतं चुमू इंव सोमः॥७॥

वाज्यसिन रियमस्मे सुवीरम्। प्रशस्तं धेहि यशसं बृहन्तम्। यस्मिन्नश्वांस ऋष्भासं उक्षणंः। वशा मेषा अंवसृष्टास् आहुंताः। कीलालपे सोमंपृष्टाय वेधसें। हृदा मृतिं जनय चारुंम्ययें। नाना हि वां देवहिंत्र सदों मितम्। मा सर्सृक्षाथां पर्मे व्योमन्। सुरा त्वमिसं शुष्मिणी सोमं एषः। मा मां हिरसीः स्वां योनिमाविशन्॥८॥

यदत्रं शिष्ट रसिनंः सुतस्यं। यदिन्द्रो अपिंबच्छचींभिः। अहं तदंस्य मनंसा शिवेनं। सोम्र राजांनिम्ह भंक्षयामि। द्वे स्रुती अंश्णवं पितृणाम्। अहं देवानांमुत मर्त्यांनाम्। ताभ्यांमिदं विश्वं भुवंन्र समेति। अन्तरा पूर्वमपंरं च केतुम्। यस्ते देव वरुण गायुत्रछंन्दाः पार्शः। तं तं पृतेनावं यजे॥९॥

यस्ते देव वरुण त्रिष्टुप्छुंन्दाः पार्शः। तं तं पृतेनावं यजे। यस्ते देव वरुण जगंतीछन्दाः पार्शः। तं तं पृतेनावं यजे। सोमो वा पृतस्यं राज्यमादंत्ते। यो राजा सन्नाज्यो वा सोमेन यजंते। देवसुवामेतानि ह्वी १ षि भवन्ति। पृतावंन्तो वै देवाना १ स्वाः। त पृवास्में स्वान्प्रयंच्छन्ति। त एनं पुनः सुवन्ते राज्यायं। देवसू राजां भवति॥१०॥

सोमं आविशन् यंजे राज्यायैकं च॥२॥———[२]

उदंस्थाद्देव्यदितिर्विश्वरूपी। आयुर्यज्ञपंतावधात्। इन्द्रांय कृण्वती भागम्। मित्राय वर्रुणाय च। इयं वा अग्निहोत्री। इयं वा एतस्य निषीदति। यस्याग्निहोत्री निषीदंति। तामुत्थांपयेत्। उदंस्थाद्देव्यदितिरिति। इयं वै देव्यदितिः॥११॥ इमामेवास्मा उत्थापयित। आयुर्यज्ञपंतावधादित्यांह। आयुरेवास्मिन्दधाति। इन्द्रांय कृण्वती भागं मित्राय वरुंणाय चेत्यांह। यथायजुरेवैतत्। अवंतिं वा एषेतस्य पाप्मानं प्रतिख्याय निषीदित। यस्यांग्निहोत्र्युपंसृष्टा निषीदंति। तां दुग्ध्वा ब्रांह्मणायं दद्यात्। यस्यान्नं नाद्यात्। अवंतिमेवास्मिन्पाप्मानं प्रतिमुश्चति॥१२॥

दुग्ध्वा दंदाति। न ह्यदंष्टा दक्षिणा दीयतें। पृथिवीं वा एतस्य पयः प्रविशति। यस्यौग्निहोत्रं दुह्यमांन् स्कन्दंति। यद्द्य दुग्धं पृथिवीमसंक्त। यदोषंधीरप्यसंर्द्यदापंः। पयो गृहेषु पयो अग्नियासं। पयो वत्सेषु पयो अस्तु तन्मयीत्यांह। पयं एवात्मन्गृहेषुं पृशुषुं धत्ते। अप उपंसृजति॥१३॥

अद्भिरेवैनंदाप्रोति। यो वै यज्ञस्यार्ते नानांति स् स स् सृजितं। उमे वै ते तर्ह्यार्च्छंतः। आर्च्छंति खलु वा एतदंग्निहोत्रम्। यदुह्यमांन् स् स्कन्दंति। यदंभिदुह्यात्। आर्ते नानांतं यज्ञस्य स स् सृजेत्। तदेव यादकीदक्षे होत्व्यम्। अथान्यां दुग्ध्वा पुनं रहोत्व्यम्। अनांतेनेवार्तं यज्ञस्य निष्कं रोति॥१४॥

यद्यद्वंतस्य स्कन्देंत्। यत्ततोऽहुंत्वा पुनेरेयात्। य्ज्ञं विच्छिंन्द्यात्। यत्र स्कन्देंत्। तन्निषद्य पुनेर्गृह्णीयात्। यत्रैव स्कन्दंति। ततं पुवैनृत्पुनेर्गृह्णाति। तदेव यादकीदक्रं होत्व्यम्। अथान्यां दुग्ध्वा पुनेर्होत्व्यम्। अनार्तेनैवार्तं

यज्ञस्य निष्कंरोति॥१५॥

वि वा एतस्यं यज्ञिष्ठं द्यते। यस्याँग्निहोत्रेंऽधिश्रिंते श्वाऽन्त्रा धावंति। रुद्रः खलु वा एषः। यद्ग्निः। यद्गमंन्वत्या वर्तयाँत्। रुद्रायं पृश्निपं दध्यात्। अपृशुर्यजंमानः स्यात्। यद्पौंऽन्वतिषिश्चेत्। अनाद्यमग्नेरापंः। अनाद्यमाभ्यामपि दध्यात्। गार्हंपत्याद्भस्मादायं। इदं विष्णुर्विचंक्रम् इतिं वैष्णुव्यर्चाऽऽहंवनीयाँद्धश्सयन्नुद्रंवेत्। यज्ञो वै विष्णुंः। यज्ञेनैव यज्ञश् सन्तनोति। भस्मना पृदमपि वपति शान्त्याँ॥१६॥

वै देव्यदितिर्मुश्रति स्जिति करोति करोत्याभ्यामपिं दध्यात् पश्चं च॥३॥lacktriangle

नि वा एतस्यांहवनीयो गार्हंपत्यं कामयते। निगार्हंपत्य आहवनीयम्। यस्याग्निमनुंद्धृत् सूर्योऽभि निम्नोचंति। दुर्भेण् हिरंण्यं प्रबद्धां पुरस्तांद्धरेत्। अथाग्निम्। अथांग्निहोत्रम्। यद्धिरंण्यं पुरस्ताद्धरंति। ज्योतिर्वे हिरंण्यम्। ज्योतिरेवैनं पश्यनुद्धरित। यदग्निं पूर्व हरत्यथांग्निहोत्रम्॥१७॥

भागधेयेंनैवेनं प्रणंयति। ब्राह्मण आंर्षेय उद्धेरेत्। ब्राह्मणो वै सर्वा देवताः। सर्वाभिरेवेनं देवतांभिरुद्धंरति। अग्निहोत्रम्प्साद्यातिमंतोरासीत। ब्रतमेव हृतमन्ं म्रियते। अन्तं वा एष आत्मनो गच्छति। यस्ताम्यंति। अन्तंमेष य्ज्ञस्यं गच्छति। यस्याग्निमनुंद्धृत सूर्योऽभि निम्रोचंति॥१८॥ पुनंः समन्यं जुहोति। अन्तेनैवान्तं युज्ञस्य निष्कंरोति। वरुणो वा एतस्यं युज्ञं गृंह्णाति। यस्याग्निमनुंद्धृत् स् सूर्योऽभि निम्नोचंति। वारुणं चुरुं निर्वपेत्। तेनैव युज्ञं निष्क्रीणीते। नि वा एतस्याहवनीयो गार्हंपत्यं कामयते। नि गार्हंपत्य आहवनीयम्॥ यस्याग्निमनुंद्धृत् सूर्योऽभ्युंदेति। चतुर्गृहीतमाज्यं पुरस्तांद्धरेत्॥१९॥

अथाग्निम्। अथाँग्निहोत्रम्। यदाज्यं पुरस्ताद्धरंति। एतद्वा अग्नेः प्रियं धामं। यदाज्यम्। प्रियेणैवैनं धाम्ना समर्धयति। यद्ग्निं पूर्वे १ हर्त्यथाँग्निहोत्रम्। भागधेयेनैवैनं प्रणयति। ब्राह्मण आर्षेय उद्धरेत्। ब्राह्मणो वै सर्वा देवताः॥२०॥

सर्वाभिरेवेनं देवतांभिरुद्धंरित। परांची वा एतस्मैं व्युच्छन्ती व्यंच्छिति। यस्याग्निमनुंद्धृत् सूर्योऽभ्यंदेति। उषाः केतुनां जुषताम्। यज्ञं देवेभिरिन्वितम्। देवेभ्यो मधुमत्तम् स्वाहेतिं प्रत्यिङ्कषद्याज्यंन जुहुयात्। प्रतीचीमेवास्मै विवासयित। अग्निहोत्रमुंप्साद्यातमितोरासीत। व्रतमेव हृतमनुं म्रियते। अन्तं वा एष आत्मनों गच्छिति॥२१॥

यस्ताम्यंति। अन्तंमेष यज्ञस्यं गच्छति। यस्याग्निमनुंद्धृत्र् सूर्योऽभ्यंदेतिं। पुनंः समन्यं जुहोति। अन्तेंनैवान्तं यज्ञस्य निष्करोति। मित्रो वा एतस्यं यृज्ञं गृह्णाति। यस्याग्निमनुंद्धृत्र् सूर्योऽभ्यंदेतिं। मैत्रं चुरुं निर्वपेत्। तेनैव युज्ञं निष्क्रींणीते। यस्यांहवनीयेऽनुंद्वाते गार्हंपत्य उद्वायेंत् ॥२२॥

यदांहवनीयमनुंद्वाप्य गार्हंपत्यं मन्थैंत्। विच्छिंन्द्यात्। भ्रातृंव्यमस्मै जनयेत्। यद्वै यज्ञस्यं वास्त्व्यं क्रियतें। तदनुं रुद्रोऽवंचरित। यत्पूर्वमन्ववस्येत्। वास्त्व्यंमुग्निमुपांसीत। रुद्रोंऽस्य पृशून्यातुंकः स्यात्। आहुवनीयंमुद्वाप्यं। गार्हंपत्यं मन्थेत्॥२३॥

ड्तः प्रंथमं जंज्ञे अग्निः। स्वाद्योनेरिधं जातवेदाः। स गांयित्रया त्रिष्टुभा जगंत्या। देवेभ्यों ह्व्यं वहतु प्रजानित्रिति। छन्दोभिरेवैन्ड् स्वाद्योनेः प्रजनयित। गार्हंपत्यं मन्थित। गार्हंपत्यं वा अन्वाहिताग्नेः पृशव उपं तिष्ठन्ते। स यदुद्वायंति। तदनुं पृशवोऽपं क्रामन्ति। इषे रुय्यै रंमस्व॥२४॥

सहंसे द्युम्नायं। ऊर्जेऽपत्यायेत्यांह। पृशवो वै र्यिः। पृश्नेवास्मे रमयति। सारुस्वतौ त्वोत्सौ सिमंन्धातामित्यांह। ऋख्सामे वै सारस्वतावुत्सौं। ऋख्सामाभ्यांमेवैन्ध् सिमंन्धे। सम्राडंसि विराड्सीत्यांह। रथन्त्रं वै सम्राट्। बृहद्विराट्॥२५॥

ताभ्यांमेवैन् सिनंभे। वज्रो वै च्क्रम्। वज्रो वा एतस्यं यज्ञं विच्छिनत्ति। यस्यानों वा रथों वाऽन्त्राऽग्नी याति। आहुवनीयंमुद्वाप्यं। गार्हंपत्यादुद्धंरेत्। यदंग्ने पूर्वं प्रभृतं प्दश् हि तैं। सूर्यस्य रृश्मीनन्वांतृतानं। तत्रं रियष्टामनु सं भंरैतम्। सं नंः सृज सुमृत्या वार्जवृत्येतिं॥२६॥

पूर्वेणैवास्यं य्ज्ञेनं य्ज्ञमनु सन्तंनोति। त्वमंग्ने स्प्रथां असीत्यांह। अग्निः सर्वां देवताः। देवतांभिरेव य्ज्ञः सन्तंनोति। अग्नयं पथिकृतं पुरोडाशंमृष्टाकंपालं निर्वपत्। अग्निमेव पंथिकृत् स्वेनं भाग्धेयेनोपंधावति। स एवैनं य्ज्ञियं पन्थामिपं नयति। अनुङ्वान्दक्षिणा। वृही ह्येष समृद्धे॥२७॥

हर्त्यथाँग्रिहोत्रं निम्नोचंति हरेहेवतां गच्छत्युद्धायँन्मन्थेद्रमस्य बृहिद्धराहिति नवं च (नि वै पूर्वं त्रीणि निम्नोचंति दुर्भेण् यद्धिरंण्यमग्निहोत्रं पुनर्वरुंणो वारुणं नि वा पुतस्याभ्यंदेतिं चतुर्गृहीतमाञ्यं यदाञ्यं पराँच्युषाः पुनर्मित्रो मैत्रं यस्यांहवनीयेऽनुंद्धाते गार्हंपत्यो यद्धै मन्थेदुद्धरेत्॥)॥४॥———[४] यस्यं प्रातः सवने सोमोऽतिरिच्यते। माध्यं दिन् स् सवनं कामयंमानोऽभ्यतिरिच्यते। गौर्धयति मुरुतामिति धयंद्वतीषु कुर्वन्ति। हिनस्ति वै सुन्ध्यधीतम्। सुन्धीव खलु वा पृतत्। यत्सवनस्यातिरिच्यते। यद्धयंद्वतीषु कुर्वन्ति। सुन्धेः शान्त्यै। गायुत्र सामं भवति पश्चद्दशः स्तोमः। तेनैव प्रांतः सवनान्नयंन्ति॥२८॥

म्रुत्वंतीषु कुर्वन्ति। तेनैव माध्यं दिनात्सवंनान्नयंन्ति। होतुंश्चम्समनून्नयन्ते। होताऽनुं शश्सिति। मध्यत एव यज्ञश् समादंधाति। यस्य माध्यं दिने सवंने सोमोऽतिरिच्यंते। आदित्यं तृतीयसवनं कामयंमानोऽभ्यतिरिच्यते। गौरिवीत श् सामं भवति। अतिरिक्तं वै गौरिवीतम्। अतिरिक्तं यत्सवनस्यातिरिच्यते॥२९॥

अतिरिक्तस्य शान्त्यैं। बण्महा असि सूर्येतिं कुर्वन्ति। यस्यैवादित्यस्य सर्वनस्य कामेनातिरिच्यंते। तेनैवेनं कामेन समर्थयन्ति। गौरिवीत सामं भवति। तेनैव मार्थ्यं दिनात्सर्वनान्नयंन्ति। स्प्तद्वशः स्तोमंः। तेनैव तृंतीयसवनान्नयंन्ति। होतुंश्चमसमनून्नयन्ते। होताऽनुं शस्मित॥३०॥

मध्यत एव यज्ञ समाद्धाति। यस्यं तृतीयसवने सोमोऽतिरिच्यंत। उक्थ्यं कुर्वीत। यस्योक्थ्यंऽतिरिच्यंत। अतिरात्रं कुर्वीत। यस्यांतिरात्रंऽतिरिच्यंत। तत्त्वे दुष्प्रज्ञानम्। यजमानं वा एतत्पृशवं आसाह्यंयन्ति। बृहत्सामं भवति। बृहद्वा इमाल्लाँकान्दांधार। बार्ह्नताः पृशवंः। बृहतैवास्में पृश्नन्दांधार। शिपिविष्टवंतीषु कुर्वन्ति। शिपिविष्टो वे देवानां पृष्टम्। पृष्ट्येवेन् समर्धयन्ति। होत्ंश्चम्समनूत्रंयन्ते। होताऽनुंश स्सति। मध्यत एव यज्ञ समादंधाति॥३१॥

युन्ति सर्वनस्यातिरिच्यंते शश्सित दाधाराष्टौ चं॥५॥-------[५]

एकैंको वै जनतांयामिन्द्रंः। एकं वा एताविन्द्रंमिभ सर्भुनुतः। यौ द्वौ सर्थ सुनुतः। प्रजापंतिर्वा एष वितायते। यद्यज्ञः। तस्य ग्रावाणो दन्ताः। अन्यतरं वा पृते सर्स्सुन्वतोर्निबंप्सित। पूर्वेणोपसृत्यां देवता इत्यांहुः। पूर्वोपसृतस्य वै श्रेयांन्भवति। एतिवन्त्याज्यांनि भवन्त्यभिजित्यै॥३२॥

म्रुत्वंतीः प्रतिपदंः। म्रुतो वै देवानामपंराजितमायतंनम्। देवानामेवापंराजित आयतंने यतते। उभे बृहद्रथन्तरे भंवतः। इयं वाव रंथन्तरम्। असौ बृहत्। आभ्यामेवैनंमन्तरंति। वाचश्च मनंसश्च। प्राणाचापानाचे। दिवश्चं पृथिव्याश्चं॥३३॥

सर्वस्माद्वित्ताद्वेद्यात्। अभिवर्तो ब्रह्मसामं भेवति। सुवर्गस्यं लोकस्याभिवृत्त्यै। अभिजिद्भंवति। सुवर्गस्यं लोकस्याभिजित्यै। विश्वजिद्भंवति। विश्वंस्य जित्यै। यस्य भूया स्मो यज्ञकृतव इत्यांहुः। स देवतां वृङ्कः इति। यद्यंग्निष्टोमः सोमः पुरस्तात्स्यात्॥३४॥

उक्थ्यं कुर्वीत। यद्युक्थंः स्यात्। अतिरात्रं कुर्वीत। यज्ञुक्रतुभिरेवास्यं देवतां वृङ्के। यो वै छन्दोभिरभिभवंति। स सर्सुन्वतोर्भिभवति। संवेशायं त्वोपवेशाय त्वेत्यांह। छन्दार्स्सि वै संवेश उपवेशः। छन्दोभिरेवास्य छन्दार्स्स्यभिभवति। इष्टर्गो वा ऋत्विजांमध्वर्युः॥३५॥

इष्टर्गः खलु वै पूर्वोऽर्षुः क्षीयते। प्राणांपानौ मृत्योमां पात्मित्यांह। प्राणापानयोरेव श्रंयते। प्राणांपानौ मा माहासिष्टमित्यांह। नैनं पुराऽऽयुंषः प्राणापानौ जंहितः। आर्तिं वा एते नियंन्ति। येषां दीक्षितानां प्रमीयंते। तं यदंववर्जेयुः। ऋूर्कृतांमिवैषां लोकः स्यात्। आहंर दहेतिं ब्रूयात्॥३६॥

तं देक्षिणतो वेद्यै निधायं। सूर्प्राज्ञियां ऋग्भिः स्तुंयुः। इयं वै सर्पतो राज्ञीं। अस्या एवेनं परिंददित। व्यृंद्धं तिदत्यांहुः। यत्स्तुतमनंनुशस्तमिति। होतां प्रथमः प्रांचीनावीती मार्जालीयं परीयात्। यामीरंनुब्रुवन्। सूर्प्राज्ञीनां कीर्तयेत्। उभयोर्वेनं लोकयोः परिंददित॥३७॥

अथों धुवन्त्येवैनम्ं। अथो न्यंवास्में हुवते। त्रिः परियन्ति। त्रयं इमे लोकाः। एभ्य एवैनं लोकभ्यों धुवते। त्रिः पुनः परियन्ति। षद्मम्पंद्यन्ते। षड्वा ऋतवंः। ऋतुभिरेवैनं धुवते। अग्र आयू १षि पवस् इतिं प्रतिपदं कुर्वीरन्। रथन्तरसांमेषा स्यात्। आयुरेवात्मन्दंधते। अथों पाप्मानंमेव विज्ञहंतो यन्ति॥३८॥
अभिजित्ये पृथ्याश्च स्यादंख्युंर्ब्र्याङ्कोकयोः परिद्रवित कुर्वीर्ड्डकोणि च॥६॥———[६]

असुर्यं वा एतस्माद्वर्णं कृत्वा। पृशवो वीर्यमपं क्रामन्ति। यस्य यूपो विरोहंति। त्वाष्ट्रं बंहुरूपमालंभेत। त्वष्टा वै रूपाणांमीशे। य एव रूपाणामीशें। सोंऽस्मिन्पशून् वीर्यं यच्छति। नास्मौत्पशवो वीर्यमपं क्रामन्ति। आर्तिं वा एते नियन्ति। येषां दीक्षितानांमग्निरुद्वायंति॥३९॥ यदांहवनीयं उद्घायेंत्। यत्तं मन्थेंत्। विच्छिंन्द्यात्। भ्रातृंव्यमस्मे जनयेत्। यदांहवनीयं उद्घायेंत्। आग्नींद्धादुद्धंरेत्। यदाग्नींद्ध उद्घायेंत्। गार्हंपत्यादुद्धंरेत्। यद्गार्हंपत्य उद्घायेंत्। अतं एव पुनर्मन्थेत्॥४०॥

अत्र वाव स निर्लयते। यत्र खलु वै निर्लीनमृत्तमं पश्यंन्ति। तदेनमिच्छन्ति। यस्माद्दारोरुद्वायेत्। तस्यारणीं कुर्यात्। कुमुकमिपं कुर्यात्। एषा वा अग्नेः प्रिया तन्ः। यत्क्रुंमुकः। प्रिययैवैनं तनुवा समर्धयति। गार्हंपत्यं मन्थति॥४१॥

गार्हंपत्यो वा अग्नेर्योनिः। स्वादेवैनं योनैर्जनयति। नास्मै भ्रातृंव्यं जनयति। यस्य सोमं उपदस्यैत्। सुवर्ण् हिरंण्यं द्वेधा विच्छिद्यं। ऋजी्षेऽन्यदांधूनुयात्। जुहुयादन्यत्। सोममेवाभिषुणोति। सोमं जुहोति। सोमस्य वा अभिष्यमाणस्य प्रिया तनूरुदंक्रामत्॥४२॥

तत्सुवर्ण् हरंण्यमभवत्। यत्सुवर्ण् हरंण्यं कुर्वन्ति। प्रिययैवेनं तनुवा समर्धयन्ति। यस्याक्रीत् सोमंमपहरंयुः। कीणीयादेव। सैव ततः प्रायंश्चित्तिः। यस्यं कीतमंपहरंयुः। आदाराङ्श्चं फाल्गुनानिं चाभिषुंणुयात्। गायत्री यश्सोममाहंरत्। तस्य योऽरंशुः पराऽपंतत्॥४३॥

त आंदारा अंभवन्। इन्द्रों वृत्रमंहन्। तस्यं वृल्कः परांऽपतत्। तानिं फाल्गुनान्यंभवन्। पृशवो वै फाल्गुनानिं। प्शवः सोमो राजां। यदांदारा इश्चं फाल्गुनानिं चाभिषुणोतिं। सोममेव राजांनम्भिषुणोति। शृतेनं प्रातः सव्ने श्रीणीयात्। दभ्ना मध्यं दिने॥४४॥

नीत्मिश्रेणं तृतीयसवने। अग्निष्टोमः सोमः स्याद्रथन्त्रसामा। य पुवर्त्विजो वृताः स्युः। त एनं याजयेयुः। एकां गां दक्षिणां दद्यात्तेभ्यं पुव। पुनः सोमं क्रीणीयात्। यज्ञेनैव तद्यज्ञमिंच्छति। सैव ततः प्रायंश्चित्तिः। सर्वाभयो वा पुष देवताभयः सर्वेभ्यः पृष्ठभ्यं आत्मान्मागुरते। यः स्त्रायांगुरते। पृतावान्खलु व पुरुषः। यावदस्य वित्तम्। सर्ववदसेनं यजेत। सर्वपृष्ठोऽस्य सोमः स्यात्। सर्वाभ्यः पृव देवताभ्यः सर्वेभ्यः पृष्ठभ्यं आत्मानं निष्क्रीणीते॥४५॥

उद्वार्यति मन्थेन्मन्थत्यकामत्पुराऽपंतन्मुध्यन्दिन आगुरते पश्चं च॥७॥————[9]

पर्वमानः सुवर्जनः। प्वित्रेण विचंर्षणिः। यः पोता स पुंनातु मा। पुनन्तुं मा देवज्नाः। पुनन्तु मनंवो धिया। पुनन्तु विश्वं आयवः। जातंवेदः प्वित्रंवत्। प्वित्रंण पुनाहि मा। शूक्रेणं देव दीद्यंत्। अग्ने कत्वा कतू रनुं॥४६॥

यत्ते प्वित्रंम्चिषिं। अग्ने वितंतमन्त्रा। ब्रह्म तेनं पुनीमहे। उभाभ्यां देव सवितः। प्वित्रंण स्वेनं च। इदं ब्रह्मं पुनीमहे। वैश्वदेवी पुनती देव्यागांत्। यस्ये बह्बीस्तनुवो वीतपृष्ठाः। तया मदंन्तः सधमाद्येषु। वयः स्यांम पतंयो रयीणाम्॥४७॥

वैश्वानरो रिश्मिर्मिम् पुनातु। वार्तः प्राणेनेषिरो मयोभूः। द्यावांपृथिवी पर्यसा पर्योभिः। ऋतावंरी यज्ञियं मा पुनीताम्। बृहद्भिः सवितस्तृभिः। वर्षिष्ठैर्देव मन्मंभिः। अग्ने दक्षैः पुनाहि मा। येनं देवा अपुनत। येनाऽऽपो दिव्यं कशः। तेनं दिव्येन् ब्रह्मणा॥४८॥

इदं ब्रह्मं पुनीमहे। यः पांवमानीर्ध्येतिं। ऋषिंभिः सम्भृंत्र् रसम्। सर्वर् स पूतमंश्ञाति। स्वृद्तिं मांतृरिश्वंना। पावमानीर्यो अध्येतिं। ऋषिंभिः सम्भृत्र् रसम्। तस्मै सरस्वती दहे। क्षीर्र सूर्पिर्मधूंदकम्। पावमानीः स्वस्त्ययंनीः॥४९॥

सुदुघा हि पर्यस्वतीः। ऋषिभिः सम्भृतो रसः। ब्राह्मणेष्वमृत रे हितम्। पावमानीर्दिशन्तु नः। इमं लोकमथो अमुम्। कामान्त्समर्धयन्तु नः। देवीर्देवैः समाभृताः। पावमानीः स्वस्त्ययंनीः। सुदुघा हि घृतश्चर्तः। ऋषिभिः सम्भृतो रसः॥५०॥

ब्राह्मणेष्वमृत १ हितम्। येनं देवाः प्वित्रेण। आत्मानं पुनते सदा। तेनं सहस्र्धारेण। पावमान्यः पुनन्तु मा। प्राजापत्यं प्वित्रम्। श्रातोद्यांम १ हिर्ण्मयम्। तेनं ब्रह्मविदों व्यम्। पूतं ब्रह्मं पुनीमहे। इन्द्रंः सुनीती सह मां पुनातु। सोमः स्वस्त्या वर्रुणः समीच्यां। यमो राजां प्रमृणाभिः पुनातु मा। जातवेदा मोर्जयंन्त्या पुनातु॥५१॥

अनुं रयीणां ब्रह्मणा स्वस्त्ययंनीः सुदुघा हि घृंतृश्चृत् ऋषिंभिः सम्भृंतो रसः पुनातु त्रीणिं च॥८॥ [८]

प्रजा वै स्त्रमांसत् तप्स्तप्यंमाना अर्जुह्वतीः। देवा अंपश्यश्चम्सं घृतस्यं पूर्णं स्वधाम्। तमुपोदंतिष्ठन्तमंजुहवुः। तेनांधमास अर्जुमवांरुन्थत। तस्मांदर्धमासे देवा इंज्यन्ते। पितरोऽपश्यश्चम्सं घृतस्यं पूर्णं स्वधाम्। तमुपोदंतिष्ठन्तमंजुहवुः। तेनं मास्यूर्ज्मवांरुन्थत। तस्मांन्मासि पितृभ्यः क्रियते। मनुष्यां अपश्यश्चम्सं घृतस्यं पूर्णं स्वधाम्॥५२॥

तम्पोदंतिष्ठ्-तमंजुहवुः। तेनं द्व्यीमूर्ज्मवांरुन्थत। तस्माद्विरह्नां मनुष्येभ्य उपहियते। प्रातश्चं सायं चं। प्रावोऽपश्यश्चम्सं घृतस्यं पूर्णं स्वधाम्। तमुपोदंतिष्ठ्-त-मंजुहवुः। तेनं त्र्यीमूर्ज्मवारुन्थत। तस्मात्रिरह्नंः प्रावः प्रेरंते। प्रातः संङ्गवे सायम्। असुरा अपश्यश्चम्सं घृतस्यं पूर्णं स्वधाम्॥५३॥

तम्पोदंतिष्ठन्तमंजुहवुः। तेनं संवत्सर ऊर्ज्मवांरुन्थत। ते देवा अंमन्यन्त। अमी वा इदमंभूवन्। यद्वयः सम इतिं। त एतानिं चातुर्मास्यान्यंपश्यन्। तानि निरंवपन्। तैरेवैषान्तामूर्जमवृञ्जत। ततों देवा अभवन्। पराऽसुंराः॥५४॥ यद्यजंते। यामेव देवा ऊर्जम्वारुन्थत। तान्तेनावंरुन्थे। यत्पितृभ्यः करोतिं। यामेव पितर ऊर्जमवारुन्थत। तान्तेनावंरुन्थे। यदांवस्थेऽन्नु हरंन्ति। यामेव मंनुष्यां ऊर्जमवारुन्थत। तान्तेनावंरुन्थे। यद्दक्षिणां ददांति॥५५॥

यामेव पृशव ऊर्जम्वारुन्धत। तान्तेनावंरुन्धे। यचांतुर्मास्यैर्यजंते। यामेवासंरा ऊर्जम्वारुन्धत। तान्तेनावंरुन्धे। भवंत्यात्मनां। परांस्य भ्रातृंव्यो भवति। विराजो वा एषा विक्रांन्तिः। यचांतुर्मास्यानिं। वैश्वदेवेनास्मिल्लोंके प्रत्यंतिष्ठत्। वरुणप्रघासेरन्तिरक्षे। साकमेधेरमुष्मिल्लोंके। एष ह् त्वावेतत्सर्वं भवति। य एवं विद्वाङ्श्चांतुर्मास्यैर्यजंते॥५६॥ मनुष्यं अपश्यश्चम्सं वृतस्यं पूर्णं स्वधामसंरा अपश्यश्चम्सं वृतस्यं पूर्णं स्वधामसंरा विद्वात्यितिष्ठच्वाति चाडा [९]

अग्निर्वाव संवत्स्रः। आदित्यः पंरिवत्स्रः। चन्द्रमां इदावत्स्रः। वायुरंनुवत्स्रः। यद्वैश्वदेवेन् यजंते। अग्निमेव तत्संवत्स्रमांप्रोति। तस्माद्वैश्वदेवेन् यजंमानः। संवत्स्रीणाः स्वस्तिमाशांस्त इत्याशांसीत। यद्वेरुणप्रघासैर्यजंते। आदित्यमेव तत्पंरिवत्स्रमांप्रोति॥५७॥

तस्मौद्धरुणप्रघासैर्यजंमानः। पृरिवृत्स्रीणाई स्वस्तिमाशौस्त् इत्याशांसीत। यत्सांकमेधेर्यजंते। चन्द्रमंसमेव तिदंदावत्स्र-मौप्रोति। तस्मौत्साकमेधेर्यजंमानः। इदावृत्स्रीणाई स्वस्तिमाशौस्त इत्याशांसीत। यत्पितृयुज्ञेन यजंते। देवानेव तद्नववंस्यति। अथवा अंस्य वायुश्चांनुवत्स्रश्चाप्रींता- वुच्छिंष्येते। यच्छुंनासीरीयेंण यजंते॥५८॥

वायुमेव तदंनुवत्स्रमाँप्रोति। तस्माँच्छुनासी्रीयेण् यजंमानः। अनुवृत्स्रीणाई स्वस्तिमाशाँस्त इत्याशांसीत। संवृत्स्रं वा एष ईंप्स्तीत्यांहुः। यश्चांतुर्मास्यैर्यजंत इति। एष ह त्वै संवत्स्रमाँप्रोति। य एवं विद्वाइश्चांतुर्मास्यैर्यजंते। विश्वे देवाः समयजन्त। तैंऽग्निमेवायंजन्त। त एतं लोकमंजयन्॥५९॥

यस्मिन्नग्निः। यद्वैश्वदेवेन यजंते। एतमेव लोकं जंयति। यस्मिन्नग्निः। अग्नेरेव सायुंज्यमुपैति। यदा वैश्वदेवेन यजंते। अर्थ संवत्स्रस्यं गृहपंतिमाप्नोति। यदा संवत्स्रस्यं गृहपंतिमाप्नोतिं। अर्थ सहस्रयाजिनंमाप्नोति। यदा संहस्रयाजिनंमाप्नोतिं॥६०॥

अर्थं गृहमेधिनंमाप्नोति। यदा गृहमेधिनंमाप्नोति। अथाग्निर्भवति। यदाग्निर्भवंति। अथ् गौर्भवति। एषा वै वैश्वदेवस्य मात्राँ। एतद्वा एतेषांमव्मम्। अतोतो वा उत्तराणि श्रेयार्श्स भवन्ति। यद्विश्वे देवाः समयंजन्त। तद्वैश्वदेवस्यं वैश्वदेवत्वम्॥६१॥

अथांदित्यो वरुण् राजानं वरुणप्रघासैरयजत। स एतं लोकमंजयत्। यस्मिन्नादित्यः। यद्वरुणप्रघासैर्यजंते। एतमेव लोकं जंयति। यस्मिन्नादित्यः। आदित्यस्यैव सार्युज्यमुपैति। यदांदित्यो वरुण् राजांनं वरुणप्रघासै- रयंजत। तद्वंरुणप्रघासानां वरुणप्रघासत्वम्। अथ् सोमो राजा छन्दार्श्स साकमेधैरयजत॥६२॥

स पृतं लोकमंजयत्। यस्मिईश्चन्द्रमां विभाति। यत्सांकमेधेर्यजंते। एतमेव लोकं जंयित। यस्मिईश्चन्द्रमां विभाति। चन्द्रमंस एव सायुंज्यमुपैति। सोमो वै चन्द्रमाः। एष ह त्वै साक्षात्सोमं भक्षयित। य एवं विद्वान्त्सांकमेधेर्यजंते। यत्सोमंश्च राजा छन्दाईसि च समैधंन्त॥६३॥

तत्सांकमेधाना रे साकमेधत्वम्। अथुर्तवः पितरः प्रजापंतिं पितरं पितृयज्ञेनायजन्त। त एतं लोकमंजयन्। यस्मिन्नृतवः। यत्पितृयज्ञेन यजंते। एतमेव लोकं जयित। यस्मिन्नृतवः। ऋतूनामेव सायुंज्यमुपैति। यद्दतवः पितरः प्रजापंतिं पितरं पितृयज्ञेनायंजन्त। तत्पितृयज्ञस्यं पितृयज्ञत्वम्॥६४॥

अथौषंधय इमं देवं त्र्यंम्बकैरयजन्त प्रथेमहीतिं। ततो वै ता अप्रथन्त। य एवं विद्वा इस्त्र्यंम्बकैर्यजंते। प्रथंते प्रजयां पृश्निः। अथं वायुः पंरमेष्ठिन इश्वासीरीयेणायजत। स एतं लोकमंजयत्। यस्मिन्वायुः। यच्छुंनासीरीयेण यजंते। एतमेव लोकं जंयति। यस्मिन्वायुः॥६५॥

वायोरेव सायुंज्यमुपैति। ब्रह्मवादिनों वदन्ति। प्र चौतुर्मास्ययाजी मीयता (३) न प्रमीयता (३) इति। जीवन्वा एष ऋतूनप्येति। यदिं वसन्तौ प्रमीयंते। वसन्तो भंवति। यदि ग्रीष्मे ग्रीष्मः। यदि वर्षासुं वर्षाः। यदि श्रिरि श्रित्। यदि हेमंन् हेम्न्तः। ऋतुर्भूत्वा संवत्स्रमप्येति। संवत्सरः प्रजापंतिः। प्रजापंतिर्वावषः॥६६॥

परिवृत्स्रमाँप्रोति शुनासीरीयेण यजंतेऽजयन्त्सहस्रयाजिनंमाप्रोतिं वैश्वदेवृत्वः सांकमेधेरंयजत स्मैधंन्त पितृयज्ञृत्वं जंयित् यस्मिन्वायुर्हेम्न्तस्रीणिं च॥१०॥—————————[१०]

उभयें युवर सुराममुदंस्थान्नि वै यस्यं प्रातः सव्न एकैकोऽसुर्यं पर्वमानः प्रजा वै स्त्रमांसताग्निर्वाव संवत्सरो दर्श॥१०॥

उभये वा वैषः॥ उभये वा वैषः॥

हरिः ओम्॥ ॥इति श्रीकृष्णयजुर्वेदीयतैत्तिरीयब्राह्मणे प्रथमाष्टके चतुर्थः प्रपाठकः समाप्तः॥

॥पञ्चमः प्रश्नः॥

॥ तैत्तिरीयब्राह्मणे प्रथमाष्टके पञ्चमः प्रपाठकः॥

अग्नेः कृत्तिंकाः। शुक्रं प्रस्ताञ्च्योतिर्वस्तांत्। प्रजापंते रोहिणी। आपः प्रस्तादोषंधयोऽवस्तांत्। सोमंस्येन्वका विततानि। प्रस्ताद्वयंन्तोऽवस्तांत्। रुद्रस्यं बाहू। मृग्यवंः प्रस्तांद्विक्षारोऽवस्तांत्। अदित्ये पुनर्वसू। वातः प्रस्तांदार्द्रम्वस्तांत्॥१॥

बृह्स्पतेंस्तिष्यः। जुह्वंतः प्रस्ताद्यजंमाना अवस्तांत्। सूर्पाणांमाश्रेषाः। अभ्यागच्छंन्तः प्रस्तांदभ्यानृत्यंन्तो-ऽवस्तांत्। पितृणां मुघाः। रुदन्तः प्रस्तांदपश्रू १ शोऽवस्तांत्। अर्यम्णः पूर्वे फल्गुंनी। जाया प्रस्तांदषभोऽवस्तांत्। भगस्योत्तरे। वहुतवंः प्रस्ताद्वहंमाना अवस्तांत्॥२॥

देवस्यं सिवतुर्हस्तः। प्रस्तः प्रस्तौत्सिनिर्वस्तौत्। इन्द्रंस्य चित्रा। ऋतं प्रस्तौत्सत्यम्वस्तौत्। वायोर्निष्ठाौ व्रतिः। प्रस्तादसिद्धिर्वस्तौत्। इन्द्राग्नियोर्विशांखे। युगानि प्रस्तौत्कृषमाणा अवस्तौत्। मित्रस्यानूराधाः। अभ्यारोहेत्प्रस्तांद्भ्यारूढम्वस्तौत्॥३॥

इन्द्रंस्य रोहिणी। शृणत्प्रस्तांत्प्रतिशृणद्वस्तांत्। निर्ऋत्ये मूलवर्हंणी। प्रतिभुञ्जन्तंः पुरस्तांत्प्रतिशृणन्तोऽवस्तांत्। अपां पूर्वा अषाढाः। वर्चः पुरस्तात्सिनित्वस्तांत्। विश्वेषां देवानामुत्तंराः। अभिजयंत्पुरस्तांद्भिजिंतम्वस्तांत्। विष्णौः श्रोणा पृच्छमानाः। पुरस्तात्पन्थां अवस्तांत्॥४॥

वसूना् श्रविष्ठाः। भूतं प्रस्ताद्भृतिर्वस्तांत्। इन्द्रंस्य श्तिभेषक्। विश्वव्यचाः प्रस्तांद्विश्वक्षितिर्वस्तांत्। अजस्यैकंपदः पूर्वे प्रोष्ठपदाः। वैश्वान्तरं प्रस्तांद्वश्वावस्वम्-वस्तांत्। अहेंर्बुधियस्योत्तरे। अभिष्ठिश्चन्तः प्रस्तांदिभि-षुण्वन्तोऽवस्तांत्। पूष्णो रेवतीं। गावंः प्रस्तांद्वत्सा अवस्तांत्। अश्विनोरश्वयुजौं। ग्रामंः प्रस्तात्सेनाऽवस्तांत्। यमस्योपभर्गणोः। अपकर्षन्तः प्रस्तांदप्वहंन्तोऽवस्तांत्। पूर्णा पृश्वाद्यते देवा अद्धुः॥५॥

आुर्द्रमुवस्ताद्वहंमाना अवस्तादुभ्यारूढमुवस्तात्पन्थां अवस्ताद्वत्सा अवस्तात्पश्चं च॥१॥————[१]

यत्पुण्यं नक्षंत्रम्। तद्बद्धंर्वीतोपव्युषम्। यदा वै सूर्यं उदेतिं। अथ नक्षंत्रं नैतिं। यावंति तत्र सूर्यो गच्छेंत्। यत्रं जघन्यं पश्येंत्। तावंति कुर्वीत यत्कारी स्यात्। पुण्याह एव कुरुते। एव॰ ह वै यज्ञेषुं च श्तद्यंम्नं च मात्स्यो निरवसाय्यां चंकार॥६॥

यो वै नंक्षत्रियं प्रजापंतिं वेदं। उभयोरेनं लोकयौर्विदुः। हस्तं एवास्य हस्तः। चित्रा शिरः। निष्ट्या हृदंयम्। ऊरू विशाखे। प्रतिष्ठाऽनूराधाः। एष वै नंक्षत्रियः प्रजापंतिः। य एवं वेदं। उभयोरेनं लोकयौर्विदुः॥७॥

अस्मि इश्वामुष्मि ईश्व। यां कामयेत दुहितरं प्रिया

स्यादितिं। तां निष्ट्यांयां दद्यात्। प्रियेव भंवति। नेव तु पुन्रागंच्छति। अभिजिन्नाम् नक्षंत्रम्। उपरिष्टादषाढानांम्। अवस्तांच्छ्रोणायें। देवासुराः संयंत्ता आसन्। ते देवास्तस्मिन्नक्षंत्रेऽभ्यंजयन्॥८॥

यद्भ्यजंयन्। तदंभिजितोंऽभिजित्त्वम्। यं कामयेतानपज्य्यं जयेदितिं। तमेतस्मिन्नक्षंत्रे यातयेत्। अनुपज्य्यमेव जयित। पापपंराजितिमव् तु। प्रजापंतिः पृशूनंसृजत। ते नक्षंत्रं नक्षत्रमुपांतिष्ठन्त। ते समावन्त प्वाभवन्। ते रेवतीमुपांतिष्ठन्त॥९॥

ते रेवत्यां प्राभवन्। तस्माँद्रेवत्यां पशूनां कुंवीत। यत्किं चाँर्वाचीन् सोमाँत्। प्रैव भवन्ति। स्िललं वा इदमन्त्रासीत्। यदत्रंरन्। तत्तारंकाणां तारकृत्वम्। यो वा इह यजते। अमु स लोकं नक्षते। तन्नक्षंत्राणां नक्षत्रत्वम्॥१०॥

देवगृहा वै नक्षंत्राणि। य एवं वेदं। गृह्यंव भंवति। यानि वा इमानि पृथिव्याश्चित्राणि। तानि नक्षंत्राणि। तस्मादश्चीलनाम इश्चित्रे। नावंस्येन्न यंजेत। यथां पापाहे कुंरुते। तादगेव तत्। देवनुक्षुत्राणि वा अन्यानि॥११॥

यम्नक्षत्राण्यन्यानिं। कृत्तिंकाः प्रथमम्। विशांखे उत्तमम्। तानिं देवनक्षत्राणिं। अनूराधाः प्रथमम्। अपभरंणीरुत्तमम्। तानिं यमनक्षत्राणिं। यानिं देवनक्षत्राणिं। तानि दक्षिणेन

परियन्ति। यानि यमनक्षत्राणि॥१२॥

तान्युत्तरेण। अन्वेषामरात्स्मेति। तदंनूराधाः। ज्येष्ठमेषाम-विध्यमेति। तज्ञ्येष्ठघ्नी। मूलंमेषामवृक्षामेति। तन्मूलवर्हणी। यन्नासंहन्त। तदंषाढाः। यदश्लोणत्॥१३॥

तच्छ्रोणा। यदर्शणोत्। तच्छ्रविष्ठाः। यच्छ्तमभिषज्यन्। तच्छ्रतभिषक्। प्रोष्ठपदेषूदंयच्छन्त। रेवत्यांमरवन्त। अश्वयुजोरयुञ्जत। अपभरणीष्वपांवहन्। तानि वा एतानि यमनक्ष्रत्राणि। यान्येव देवनक्ष्रत्राणि। तेषुं कुर्वीत यत्का्री स्यात्। पुण्याह एव कुंरुते॥१४॥

चकारैवं वेदोभयोरेनं लोकयोविंदुरजयत्रेवतीमुपातिष्ठन्त नक्षत्रत्वमुन्यानि यानिं यमनक्षत्राण्यस्रोणद्यमनक्षत्राणि

त्रीणिं च॥२॥=======[२]

देवस्यं सिवतुः प्रातः प्रमुवः प्राणः। वर्रणस्य सायमास्वोऽपानः। यत्प्रतीचीनं प्रातस्तनौत्। प्राचीनर् सङ्गवात्। ततो देवा अग्निष्टोमं निर्रामिमत। तत्तदात्तंवीयं निर्मार्गः। मित्रस्यं सङ्गवः। तत्पुण्यं तेज्रस्व्यहंः। तस्मात्तर्रहं पृशवः सुमायन्ति। यत्प्रतीचीनर् सङ्गवात्॥१५॥

प्राचीनं मध्यं दिनात्। ततो देवा उक्थ्यं निरंमिमत। तत्तदात्तंवीर्यं निर्मार्गः। बृह्स्पतेंर्मध्यं दिनः। तत्पुण्यं तेज्स्व्यहंः। तस्मात्तर्ह् तेक्ष्णिष्ठं तपति। यत्प्रंतीचीनं मध्यं दिनात्। प्राचीनंमपराह्णात्। ततो देवाः षोड्शिनं निरंमिमत।

तत्तदात्तंवीयं निर्मार्गः॥१६॥

भगंस्यापराह्नः। तत्पुण्यं तेज्रस्व्यहंः। तस्मांदपराह्ने कुंमार्यो भगंमिच्छमांनाश्चरन्ति। यत्प्रंतीचीनंमपराह्नात्। प्राचीन रं सायात्। ततो देवा अंतिरात्रं निरंमिमत। तत्तदात्तंवीर्यं निर्मार्गः। वरुणस्य सायम्। तत्पुण्यं तेज्रस्व्यहंः। तस्मात्तर्हि नानृतं वदेत्॥१७॥

ब्राह्मणो वा अष्टाविश्शो नक्षंत्राणाम्। स्मानस्याहुः पश्च पुण्यानि नक्षंत्राणि। चृत्वार्यक्षीलानि। तानि नवं। यचं प्रस्तान्नक्षंत्राणां यचावस्तांत्। तान्येकांदश। ब्राह्मणो द्वांदशः। य एवं विद्वान्त्संवत्सरं व्रतं चरंति। संवत्सरेणैवास्यं व्रतं गुप्तं भवति। स्मानस्याहुः पश्च पुण्यानि नक्षंत्राणि। चत्वार्यक्षीलानि। तानि नवं। आग्नेयी रात्रिः। ऐन्द्रमहंः। तान्येकांदश। आदित्यो द्वांदशः। य एवं विद्वान्त्संवत्सरं व्रतं चरंति। संवत्सरेणैवास्यं व्रतं गुप्तं भवति॥१८॥

सङ्गुवाथ्योंडुशिनुं निरंमिमत् तत्तदात्तंवीर्यं निर्माुर्गो वंदेद्भवति समानस्याहुः पश्च पुण्यांनि नक्षंत्राण्यष्टौ न्रीवराज्या

ब्रह्मवादिनों वदन्ति। कित् पात्रांणि यज्ञं वंहुन्तीतिं। त्रयोदशेतिं ब्रूयात्। स यद्भूयात्। कस्तानि निरंमिमीतेतिं। प्रजापंतिरितिं ब्रूयात्। स यद्भूयात्। कुत्स्तानि निरंमिमीतेतिं। आत्मन इतिं। प्राणापानाभ्यांमेवोपाई-

श्वन्तर्यामौ निरंमिमीत॥१९॥

व्यानादुंपा श्रुसवंनम्। वाच ऐंन्द्रवायवम्। दुक्षुक्रतुभ्यां मैत्रावरुणम्। श्रोत्रांदाश्विनम्। चक्षुंषः शुक्रामृन्थिनौं। आत्मनं आग्रयणम्। अङ्गेभ्य उक्थ्यम्। आयुंषो ध्रुवम्। प्रतिष्ठायां ऋतुपात्रे। यज्ञं वाव तं प्रजापंतिर्निरंमिमीत। स निर्मितो नाद्धियत् समंब्लीयत। स एतान्य्रजापंतिरिपवापानंपश्यत्। तां निरंवपत्। तैर्वे स यज्ञमप्यंवपत्। यदंपिवापा भवंन्ति। यज्ञस्य धृत्या असंब्लयाय॥२०॥

उपार्श्वन्तर्यामौ निरंमिमीतामिमीत् षद्वं॥४॥■

[8]

ऋतमेव पंरमेष्ठि। ऋतं नात्येति किश्चन। ऋते संमुद्र आहितः। ऋते भूमिरियङ्श्रिता। अग्निस्तिग्मेनं शोचिषां। तप् आक्रान्तमुष्णिहां। शिर्स्तप्स्याहितम्। वैश्वानरस्य तेजंसा। ऋतेनांस्य नि वर्तये। सत्येन परि वर्तये। तपंसाऽस्यानुं वर्तये। शिवेनास्योपं वर्तये। शुग्मेनांस्याभि वर्तये। तद्दतं तत्सत्यम्। तद्द्रतं तच्छंकेयम्। तेनं शकेयं तेनं राध्यासम्॥२१॥

यद्धर्मः पूर्यवंतियत्। अन्तांन्पृथिव्या दिवः। अग्निरीशांन् ओजंसा। वरुंणो धीतिभिः सह। इन्द्रों मुरुद्धिः सिखंभिः सह। अग्निस्तिग्मेनं शोचिषां। तप् आक्रांन्तमुष्णिहां। शिर्स्तप्स्याहितम्। वैश्वान्रस्य तेजंसा। ऋतेनांस्य नि वंतिये। सत्येन परिं वर्तये। तपंसाऽस्यानुं वर्तये।

शिवनास्योपं वर्तये। शुग्मेनांस्याभि वर्तये। तद्दतं तत्सत्यम्। तद्दतं तच्छंकेयम्। तेनं शकेयं तेनं राध्यासम्॥२२॥

यो अस्याः पृंथिव्यास्त्वचि। निवर्तयत्योषंधीः। अग्निरीशांन् ओजंसा। वर्रुणो धीतिभिः सह। इन्द्रों मुरुद्धिः सर्खिभिः सह। अग्निस्तिग्मेनं शोचिषां। तप आक्रांन्तमुष्णिहां। शिर्स्तप्स्याहितम्। वैश्वान्रस्य तेजंसा। ऋतेनांस्य नि वर्तये। सत्येन परि वर्तये। तपंसाऽस्यानुं वर्तये। शिवेनास्योपं वर्तये। शग्मेनांस्याभि वर्तये। तद्दतं तत्सत्यम्। तद्दतं तच्छंकेयम्। तेनं शकेयं तेनं राध्यासम्॥२३॥

एकं मास्मुदंसृजत्। प्रमेष्ठी प्रजाभ्यः। तेनाभ्यो मह् आवंहत्। अमृतं मर्त्याभ्यः। प्रजामनु प्र जांयसे। तदं ते मर्त्यामृतम्। येन मासां अर्धमासाः। ऋतवः परिवत्स्राः। येन ते ते प्रजापते। ईजानस्य न्यवंतियन्। तेनाहमस्य ब्रह्मणा। निवंतियामि जीवसे अग्निस्तिग्मेनं शोचिषां। तप् आक्रान्तमुष्णिहां। शिर्स्तप्स्याहितम्। वैश्वानरस्य तेजंसा। ऋतेनास्य नि वंतिये। सत्येन परि वर्तये। तपंसाऽस्यानं वर्तये। शिवेनास्योपं वर्तये। श्रग्मेनांस्याभि वंतिये। तद्तं तत्सत्यम्। तद्वतं तच्छंकेयम्। तेनं शकेयं तेनं राध्यासम्॥२४॥

परिवर्तये सहाभिवर्तय उष्णिहां राध्यास्ं न्यवर्तयृत्रुपंवर्तये चृत्वारिं च। (ऋतमेव षोडंश। यद्धर्मो यो अस्याः सप्तदंशसप्तदश। एकं मासं चतुर्वि शतिः)॥५॥————[५]

देवा वै यद्यज्ञेऽकुंर्वत। तदसुंरा अकुर्वत। तेऽसुंरा ऊर्ध्वं पृष्ठेभ्यो नापंश्यन्। ते केशानग्रेऽवपन्त। अथ् श्मश्रूंणि। अथोपपृक्षौ। तत्स्तेऽवाश्च आयन्। परांऽभवन्। यस्यैवं वपंन्ति। अवांङेति॥२५॥

अथो परैव भंवति। अथं देवा ऊर्ध्वं पृष्ठेभ्योऽपश्यन्। त उपपृक्षावग्रेऽवपन्त। अथ् श्मश्रृंणि। अथ् केशान्। तत्स्तेऽभवन्। सुवर्गं लोकमायन्। यस्यैवं वपन्ति। भवंत्यात्मनां। अथो सुवर्गं लोकमेति॥२६॥

अथैतन्मनुंवित्रे मिथुनमंपश्यत्। स श्मश्रूण्यग्रेऽवपतः। अथोपपक्षौः। अथ् केशान्। ततो वै स प्राजायत प्रजयां पृश्भिः। यस्यैवं वपंन्ति। प्र प्रजयां पृश्भिर्मिथुनैर्जायते। देवासुराः संयंत्ता आसन्। ते संवत्सरे व्यायंच्छन्तः। तान्देवाश्चांतुर्मास्यैरेवाभि प्रायुंञ्जत॥२७॥

वैश्वदेवनं चतुरों मासोंऽवृञ्जतेन्द्रंराजानः। ताञ्छीर्षं नि चार्वर्तयन्त परिं च। वरुणप्रघासैश्चतुरों मासोंऽवृञ्जत् वरुणराजानः। ताञ्छीर्षं नि चार्वर्तयन्त परिं च। साक्रमेधेश्चतुरों मासोंऽवृञ्जत सोमंराजानः। ताञ्छीर्षं नि चार्वर्तयन्त परिं च। या संवत्सर उंपजीवाऽऽसींत्। तामेषामवृञ्जत। ततों देवा अभवन्। पराऽसुंराः॥२८॥

य एवं विद्वाः श्वांतुर्मास्यैर्यजंते। भ्रातृंव्यस्यैव मासो वृक्ता।

शीर्षं नि चं वर्तयंते परि च। येषा संवत्सर उंपजीवा। वृङ्के तां भ्रातृंव्यस्य। क्षुधाऽस्य भ्रातृंव्यः परां भवति। लोहितायसेन नि वंर्तयते। यद्वा इमाम्भिर्ऋतावागंते निवर्तयति। पृतदेवैना रूपं कृत्वा निवर्तयति। सा ततः श्वश्वो भूयंसी भवंन्त्येति॥ २९॥

प्र जांयते। य एवं विद्वाल्लौंहितायसेनं निवर्तयंते। एतदेव रूपं कृत्वा नि वर्तयते। स ततः श्वश्वो भूयान्भवंत्रेति। प्रैव जांयते। त्रेण्या शंलुल्या नि वंर्तयेत। त्रीणि त्रीणि वै देवानांमृद्धानि। त्रीणि छन्दा रंसि। त्रीणि सर्वनानि। त्रयं इमे लोकाः॥३०॥

ऋध्यामेव तद्वीर्यं पृषु लोकेषु प्रतिं तिष्ठति। यचांतुर्मास्ययाज्यांत्मनो नावद्येत्। देवेभ्य आवृंश्च्येत। चृतृषु चंतृषु मासेषु नि वंतयेत। प्रोक्षंमेव तद्देवेभ्यं आत्मनोऽवंद्यत्यनांत्रस्काय। देवानां वा पृष आनीतः। यश्चांतुर्मास्ययाजी। य पृवं विद्वान्नि चं वृत्यंते परिं च। देवतां पृवाप्येति। नास्यं रुद्रः प्रजां पृशून्भि मंन्यते॥३१॥

एत्येत्ययुश्चतासुंरा एति लोका मन्यते॥६॥————[६]

आयुंषः प्राण १ सन्तंनु। प्राणादंपान १ सन्तंनु। अपानाद्यान १ सन्तंनु। व्यानाचक्षुः सन्तंनु। चक्षुंषः श्रोत्र १ सन्तंनु। श्रोत्रान्मनः सन्तंनु। मनंसो वाच १ सन्तंनु। वाच आत्मान १ सन्तंनु। आत्मनंः पृथिवी १ सन्तंनु। पृथिव्या अन्तरिक्ष १ सन्तंनु। अन्तरिक्षाद्दिव १ सन्तंनु। दिवः सुवः सन्तंनु॥ ३२॥ अन्तरिक्ष् सन्तंनु द्वे चं॥७॥------[७]

इन्द्रों दधीचो अस्थिभिः। वृत्राण्यप्रतिष्कुतः। ज्ञ्घानं नवृतीर्नवं। इच्छन्नश्वंस्य यच्छिरंः। पर्वतेष्वपंश्रितम्। तिद्वंदच्छर्यणावंति। अत्राह् गोरमंन्वत। नाम् त्वष्टुंरपीच्यम्। इत्था चन्द्रमंसो गृहे। इन्द्रमिद्गाथिनों बृहत्॥३३॥

इन्द्रंम्केभिर्किणः। इन्द्रं वाणीरनूषत। इन्द्रं इद्धर्योः सचौ। सम्मिश्च आवंचो युजौ। इन्द्रों वृज्री हिर्ण्ययः। इन्द्रों दीर्घाय चक्षंसे। आ सूर्यर्थ रोहयिद्वि। वि गोभिरद्रिंमैरयत्। इन्द्रं वाजेषु नो अव। सहस्रंप्रधनेषु च॥३४॥

उग्र उग्राभिक्तिभिः। तिमन्द्रं वाजयामिस। महे वृत्राय हन्तेवे। स वृषां वृष्भो भुंवत्। इन्द्रः स दामने कृतः। ओजिंष्टः स बले हितः। द्युम्नी श्लोकी स सौम्यः। गिरा वज्रो न सम्भृतः। सबेलो अनंपच्युतः। वृवक्षुरुग्रो अस्तृतः॥३५॥

बृहचास्तृंतः॥८॥————[८]

देवासुराः संयंता आसन्। स प्रजापंतिरिन्द्रं ज्येष्ठं पुत्रमप् न्यंधत्त। नेदेनमसुरा बलीया श्सोऽहन्त्रितिं। प्रह्लादों हु वै कायाध्वः। विरोचन् श्रू स्वं पुत्रमप् न्यंधत्त। नेदेनं देवा अहन्त्रितिं। ते देवाः प्रजापंतिमुपस्मेत्योंचुः। नाराजकस्य युद्धमस्ति। इन्द्रमन्विंच्छामेतिं। तं यंज्ञकृतुभिरन्वैंच्छन्॥३६॥

तं यंज्ञऋतुभिर्नान्वंविन्दन्। तमिष्टिंभिरन्वैच्छन्। तमिष्टिंभिरन्वंविन्द

तिदेशीनामिष्टित्वम्। एष्टंयो हु वै नामं। ता इष्टंय इत्याचंक्षते प्रोक्षेण। प्रोक्षंप्रिया इव हि देवाः। तस्मां पृतमांग्नावैष्ण्वमेकांदशकपालं दीक्षणीयं निरंवपन्। तदंपद्रुत्यांतन्वत। तान्पंत्रीसंयाजान्त उपानयन्॥३७॥

ते तदंन्तमेव कृत्वोदंद्रवन्। ते प्रांयणीयंमभि समारोहन्। तदंपद्रुत्यांतन्वत। ताञ्छुय्यंन्त उपांनयन्। ते तदंन्तमेव कृत्वोदंद्रवन्। त आंतिथ्यमभि समारोहन्। तदंपद्रुत्यांतन्वत। तानिडान्त उपांनयन्। ते तदंन्तमेव कृत्वोदंद्रवन्। तस्मादेता पृतदंन्ता इष्टंयः सन्तिष्ठन्ते॥३८॥

एव र हि देवा अर्कुर्वत। इति देवा अंकुर्वत। इत्यु वै मंनुष्याः कुर्वते। ते देवा ऊंचुः। यद्वा इदमुचैर्यज्ञेन चराम। तन्नोऽसुराः पाप्माऽनुंविन्दन्ति। उपार्शूप्सदां चराम। तथा नोऽसुराः पाप्मा नानुंवेत्स्यन्तीति। त उपार्शूप्सदंमतन्वत। तिस्र एव सामिधेनीरनूच्यं॥३९॥

स्रुवेणांघारमाघार्य। तिस्रः परांचीराहुंतीर्हुत्वा। स्रुवेणांपसदं जहवां चंकुः। उग्रं वचो अपांवधीन्त्वेषं वचो अपांवधी क्र्याहेति। अश्नम्यापिपासे ह वा उग्रं वचः। एनश्च वैरंहत्यं च त्वेषं वचः। एत ह वाव तचंतुर्धाविहितं पाप्मानं देवा अपंजिष्ठिरे। तथो एवैतदेवंविद्यर्जमानः। तिस्र एव सांमिधेनीर्नूच्यं। स्रुवेणांघारमाघार्य॥४०॥

तिस्रः परांचीराहुंतीर्हुत्वा। स्रुवेणोप्सदं जुहोति। उग्रं वचो अपांवधीन्त्वेषं वचो अपांवधीक् स्वाहेतिं। अशन्यापिपासे ह् वा उग्रं वचः। एनंश्च वैरहत्यं च त्वेषं वचः। एतमेव तचंतुर्धाविहितं पाप्मानं यजमानोऽपं हते। तेऽभिनीयैवाहः पशुमाऽलंभन्त। अहं एव तद्देवा अवंतिं पाप्मानं मृत्युमपंजिघ्नरे। तेनांभिनीयेव रात्रेः प्राचंरन्। रात्रिया एव तद्देवा अवंतिं पाप्मानं मृत्युमपंजिघ्नरे॥ ४१॥

तस्मादिम्निनीयैवाहंः पृशुमा लंभेत। अहं एव तद्यजंमानोऽवंर्तिं पाप्मानं भ्रातृं व्यानपं नुदते। तेनांभिनीयेव रात्रेः प्रचरेत्। रात्रिया एव तद्यजंमानोऽवंर्तिं पाप्मानं भ्रातृं व्यानपं नुदते। स एष उपवस्थीयेऽहंन्द्विदेवृत्यः पृशुरा लंभ्यते। द्वयं वा अस्मिल्लोंके यजंमानः। अस्थि च मार्सं चं। अस्थि चैव तेनं मार्सं च यजंमानः सङ्स्कुंरुते। ता वा एताः पश्च देवताः। अग्नीषोमांवग्निर्मित्रावरुंणौ॥४२॥

पृश्चपृश्ची वै यर्जमानः। त्वङ्गार्सः स्नावाऽस्थिं मृञ्जा। पृतमेव तत्पंश्चधाविहितमात्मानं वरुणपाशान्मंश्चित। भेषजतांयै निर्वरुणत्वायं। तर सप्तिभृश्छन्दोभिः प्रातरंह्वयन्। तस्मौत्सप्त चंतुरुत्तराणि छन्दार्सि प्रातरनुवाकेऽनूच्यन्ते। तमेतयोपस्मेत्योपासीदन्। उपास्मै गायता नर् इतिं। तस्मादेतयां बहिष्पवमान उपसद्यः॥४३॥

ऐच्छुन्नन्य इस्तिष्ठन्ते ऽनूच्यानूच्यं सुवेणांघारमाघार्य रात्रिया एव तद्देवा अवंर्तिं पाप्पानं मृत्युमपंजिन्नरे

मित्रावरुंणौ नवं च (देवा यजमानो देवा देवा यजमानो यजमानः प्राचेरं प्रचेरेदालंभन्तालंभेत मृत्युमपंजिष्ठरे भ्रातृंच्यान्॥)॥९॥———[९]

स संमुद्र उत्तर्तः प्राज्वेलद्भूम्यन्तेनं। एष वाव स संमुद्रः। यच्चात्वालः। एष उवेव स भूम्यन्तः। यद्वेद्यन्तः। तदेतित्रिशलं त्रिपूरुषम्। तस्मात्तं त्रिवितस्तं खेनन्ति। स सुवर्णरज्ञताभ्यां कुशीभ्यां परिगृहीत आसीत्। तं यद्स्या अध्यजनंयन्। तस्मादादित्यः॥४४॥

अथ् यत्सुंवर्णरज्ञताभ्यां कुशीभ्यां परिगृहीत् आसींत्। साऽस्यं कौशिकतां। तं त्रिवृताऽभि प्रास्तुंवत। तं त्रिवृताऽदंदत। तं त्रिवृताऽहंरन्। यावंती त्रिवृतो मात्रां। तं पंश्रद्शेनाभि प्रास्तुंवत। तं पंश्रद्शेनादंदत। तं पंश्रदशेनाहंरन्। यावंती पश्रदशस्य मात्रां॥४५॥

तः संप्तद्रशेनाभि प्रास्तुंवत। तः संप्तद्रशेनादंदत। तः संप्तद्रशेनाहं रन्। यावंती सप्तद्रशस्य मात्रां। तस्यं सप्तद्रशेनं ह्रियमांणस्य तेजो हरों ऽपतत्। तमें कि वि १ शेनाभि प्रास्तुंवत। तमें कि वि १ शेनादंदत। तमें कि वि १ शेनाहं रन्। यावंत्येक वि १ शस्य मात्रां। ते यित्रवृतां स्तुवतें॥ ४६॥

त्रिवृतैव तद्यजंमान्मादंदते। तं त्रिवृतैव हंरन्ति। यावंती त्रिवृतो मात्रां। अग्निर्वे त्रिवृत्। यावद्वा अग्नेदंहंतो धूम उदेत्यानु व्येतिं। तावंती त्रिवृतो मात्रां। अग्नेरेवैनं तत्। मात्रा॰ सायुंज्य॰ सलोकतां गमयन्ति। अथ यत्पंश्रदशेनं स्तुवते"। पुश्रुद्शेनैव तद्यजंमानुमादंदते॥४७॥

तं पंश्चद्रशेनेव हंरन्ति। यावंती पश्चद्रशस्य मात्राँ। चन्द्रमा वै पंश्चद्रशः। एष हि पंश्चद्रश्यामंपक्षीयतें। पृश्चद्रश्यामांपूर्यतें। चन्द्रमंस पृवेनं तत्। मात्रा सायुंज्य सलोकतांं गमयन्ति। अथ् यत्संप्तद्रशेनं स्तुवतें। स्प्तद्रशेनेव तद्यजंमान्मादंदते। तर् संप्तद्रशेनेव हंरन्ति॥४८॥

यावंती सप्तद्रशस्य मात्रां। प्रजापंतिर्वे संप्तद्रशः। प्रजापंतिरेवेनं तत्। मात्राष्ट्र सायुंज्य सलोकतां गमयन्ति। अथ् यदेकिविष्शेनं स्तुवतें। एकविष्शेनेव तद्यजंमान्मादंदते। तमेकिविष्शेनेव हरन्ति। यावंत्येकिविष्शस्य मात्रां। असो वा आंदित्य एकिविष्शः। आदित्यस्यैवेनं तत्॥४९॥

मात्रा सायंज्य सलोकतां गमयन्ति। ते कुश्यौं। व्यंप्रन्। ते अंहोरात्रे अंभवताम्। अहंरेव सुवर्णाऽभवत्। रज्ता रात्रिः। स यदांदित्य उदेतिं। एतामेव तत्सुवर्णां कुशीमनु समेति। अथ यदंस्तमेतिं। एतामेव तद्रजतां कुशीमनुसंविंशति। प्रह्लादों हु वे कांयाध्वः। विरोचन् इं स्वं पुत्रमुदांस्यत्। स प्रंद्रोऽभवत्। तस्मांत्प्रद्रादुंद्कं नाचांमेत्॥५०॥

आदित्यः पंश्चद्शस्य मात्रां स्तुवते पश्चद्शेनेव तद्यजंमान्मादंदते सप्तद्शेनेव हंरन्त्यादित्यस्यैवेनं तिर्द्विशित चत्वारिं च॥१०॥——————————————————————[१०]

ये वै चृत्वारः स्तोमाः। कृतं तत्। अथ् ये पश्चं। किलः सः। तस्माचतुंष्टोमः। तचतुंष्टोमस्य चतुष्टोमृत्वम्। तदांहुः। कृतमानि तानि ज्योती रेषि। य पृतस्य स्तोमा इतिं। त्रिवृत्पंश्चदशः संप्तदश एंकवि रशः॥५१॥

पुतानि वाव तानि ज्योती १षि। य पुतस्य स्तोमाः। सौंऽब्रवीत्। सप्तद्शेनं ह्रियमांणो व्यंलेशिषि। भिषज्यंत मेतिं। तमिश्वनौ धानाभिरभिषज्यताम्। पूषा कंरम्भेणं। भारती परिवापेणं। मित्रावरुंणौ पयस्यंया। तदांहुः॥५२॥

यद्श्विभ्यां धानाः। पूष्णः कंरम्भः। भारंत्ये परिवापः। मित्रावरुणयोः पयस्याऽथं। कस्माद्तेषा हिवषामिन्द्रमेव यंजन्तीतिं। एता ह्यंनं देवता इति ब्रूयात्। एतैर्ह्विर्भि-रभिषज्य इस्तस्मादितिं। तं वसंवोऽष्टाकंपालेन प्रातः सव्नेऽभिषज्यन्। रुद्रा एकांदशकपालेन् माध्यं दिने सर्वने। विश्वं देवा द्वादंशकपालेन तृतीयसवने॥५३॥

स यद्ष्टाकंपालान्प्रातः सब्ने कुर्यात्। एकांदशकपालान्माध्यं दिने सबंने। द्वादंशकपालाङ्स्तृतीयसब्ने। विलोम् तद्यज्ञस्यं क्रियेत। एकांदशकपालानेव प्रांतः सब्ने कुंर्यात्। एकांदशकपालान्माध्यं दिने सबंने। एकांदशकपालाङ्-स्तृतीयसब्ने। यज्ञस्यं सलोम्त्वायं। तदांहुः। यद्वसूनां प्रातः सबनम्। रुद्राणां माध्यं दिनः सबंनम्। विश्वेषां देवानां तृतीयसवनम्। अथं कस्मांदेतेषा १ ह्विषामिन्द्रंमेव यंजन्तीति। एता ह्येनं देवता इति ब्रूयात्। एतैर्ह्विर्भिरभि-षज्य १ स्तस्मादिति॥५४॥

एक्विर्श आंहुस्तृतीयसवुने प्रांतः सवुनं पश्चं च॥११॥------[११]

तस्यावांचोऽवपादादंबिभयुः। तमेतेषुं सप्तसु छन्दंः स्वश्रयन्। यदश्रंयन्। तच्छ्रांयन्तीयंस्य श्रायन्तीयत्वम्। यदवांरयन्। तद्वांरवन्तीयंस्य वारवन्तीयत्वम्। तस्यावांच प्वावंपादादंबिभयुः। तस्मां पृतानिं सप्त चंतुरुत्तराणि छन्दा इस्युपांदधुः। तेषामित त्रीण्यंरिच्यन्त। न त्रीण्युदंभवन्॥५५॥

स बृंह्तीमेवास्पृंशत्। द्वाभ्यांमक्षरांभ्याम्। अहोरात्राभ्यांमेव। तदांहुः। कृतमा सा देवाक्षंरा बृह्ती। यस्यान्तत्प्रत्यतिष्ठत्। द्वादंश पौर्णमास्यः। द्वादृशाष्टंकाः। द्वादंशामावास्याः। एषा वाव सा देवाक्षंरा बृहती॥५६॥

यस्यान्तत्प्रत्यतिष्ठिदिति। यानि च छन्दा ईस्यत्यिरिच्यन्त। यानि च नोदर्भवन्। तानि निर्वीर्याणि हीनान्यंमन्यन्त। साऽब्रंबीद्वहृती। मामेव भूत्वा। मामुप सङ्श्रंयतेति। चतुर्भिरक्षरैरनुष्टुग्बृंहृतीं नोदंभवत्। चतुर्भिरक्षरैंः पुङ्किःबृंहृती-मत्यंरिच्यत। तस्यांमेतानि चत्वार्यक्षराण्यपच्छिद्यां-दधात्॥५७॥

ते बृंह्ती एव भूत्वा। बृह्तीमुप् समंश्रयताम्। अष्टाभि-

रक्षरैरुष्णग्रबृंह्तीं नोदंभवत्। अष्टाभिरक्षरैष्ग्रिष्टुग्रबृंह्तीमत्यं-रिच्यत। तस्यांमेतान्यष्टावृक्षराण्यपच्छिद्यांदधात्। ते बृंह्ती एव भूत्वा। बृह्तीमुप समंश्रयताम्। द्वाद्शभिर्क्षरैर्गायत्री बृंह्तीं नोदंभवत्। द्वाद्शभिर्क्षरैर्जगंती बृह्तीमत्यंरिच्यत। तस्यांमेतानि द्वादंशाक्षराण्यपच्छिद्यांदधात्॥५८॥

ते बृंह्ती एव भूत्वा। बृह्तीमुप् समंश्रयताम्। सौंऽब्रवीत्प्रजापंतिः। छन्दा स्मि रथों मे भवत। युष्माभिर्हमेतमध्वांनमनु सश्चराणीतिं। तस्यं गायत्री च जगंती च पृक्षावंभवताम्। उष्णिकं त्रिष्टुष्च प्रष्ट्रौं। अनुष्टुष्यं पृङ्किश्च ध्रयौं। बृह्त्येवोद्धिरंभवत्। स एतं छन्दोर्थमास्थायं। एतमध्वांनमनु समंचरत्। एत ह् व छन्दोर्थमास्थायं। एतमध्वांनमनु सश्चरित। येनैष एतत्सश्चरित। य एवं विद्वान्त्सोमेन यजंते। य उं चैनमेवं वेदं॥५९॥

अभवन्वाव सा देवाक्षंरा बृह्त्यंदधाद्वादंशाक्षराँण्यपच्छिद्यांदधादास्थाय षद्वं॥१२॥———[१२]
अग्नेः कृत्तिंका यत्पुण्यं देवस्यं सिवतुर्ब्रह्मवादिनः कत्यृतमेव देवा वा आयुंषः प्राणिमन्द्रों
दधीचो देवासुराः स प्रजापंतिः स संमुद्रो ये वै चत्वार्स्तस्यावांचो द्वादंश॥१२॥
अग्नेः कृत्तिंका देवगृहा ऋतमेवध्यामेव तिस्रः परांचीर्ये वै चत्वारो नवंपश्चाशत्॥५९॥
अग्नेः कृत्तिंका य उं चैनमेवं वेदं॥

हरिः ओम्॥

॥इति श्रीकृष्णयजुर्वेदीयतैत्तिरीयब्राह्मणे प्रथमाष्टके पश्चमः

पञ्चमः प्रश्नः 91

प्रपाठकः समाप्तः॥

॥षष्ठमः प्रश्नः॥

॥ तैत्तिरीयब्राह्मणे प्रथमाष्टके षष्ठः प्रपाठकः॥

अनुंमत्यै पुरोडाशंमृष्टाकंपालं निर्वपिति। ये प्रत्यश्चः शम्यांया अवृशीयंन्ते। तन्नैर्ऋतमेकंकपालम्। इयं वा अनुंमितिः। इयं निर्ऋतिः। नैर्ऋतेन् पूर्वेण् प्रचंरित। पाप्मानंमेव निर्ऋतिं पूर्वां निरवंदयते। एकंकपालो भवति। एक्धैव निर्ऋतिं निरवंदयते। यदहुंत्वा गार्हंपत्य ईयुः॥१॥

रुद्रो भूत्वाऽग्निरंनूत्थायं। अध्वर्युं च यजंमानं च हन्यात्। वीह् स्वाहाऽऽहुंतिं जुषाण इत्यांह। आहुंत्यैवैन र्श्वमयति। नार्तिमार्च्छंत्यध्वर्युर्न यजंमानः। एकोल्मुकेनं यन्ति। तिद्ध निर्ऋत्यै भाग्धेयम्। इमान्दिशं यन्ति। एषा वै निर्ऋत्यै दिक्। स्वायांमेव दिशि निर्ऋतिं निरवंदयते॥२॥

स्वर्नृत इरिणे जुहोति प्रद्रे वाँ। पृतद्वै निर्ऋंत्या आयतंनम्। स्व पृवायतंने निर्ऋतिं निरवंदयते। पृष ते निर्ऋते भाग इत्याह। निर्दिशत्येवैनांम्। भूतें ह्विष्मंत्यसीत्यांह। भूतिंमेवोपावंतिते। मुश्रेममश्हंस् इत्यांह। अश्हंस पृवैनं मुश्रति। अङ्गुष्ठाभ्यां जुहोति॥३॥

अन्तत एव निर्ऋतिं निरवंदयते। कृष्णं वासंः कृष्णतूषं दक्षिणा। एतद्वे निर्ऋत्ये रूपम्। रूपेणैव निर्ऋतिं

निरवंदयते। अप्रंतीक्षमायंन्ति। निर्ऋंत्या अन्तर्हित्यै। स्वाहा नमो य इदं चकारेति पुनरेत्य गार्हंपत्ये जुहोति। आहंत्यैव नंमस्यन्तो गार्हंपत्यमुपावंर्तन्ते। आनुमतेन प्रचंरति। इयं वा अनुमतिः॥४॥

इयमेवास्मै राज्यमन् मन्यते। धेनुर्दक्षिणा। इमामेव धेनुं कुंरुते। आदित्यं चुरुं निर्वपति। उभयींष्वेव प्रजास्वभिषिंच्यते। देवींषु च मानुषीषु च। वरो दक्षिणा। वरो हि राज्य समृद्धे। आग्नावेष्ण्वमेकादशकपालं निर्वपति। अग्निः सर्वा देवताः॥५॥

विष्णुंर्यज्ञः। देवतांश्चेव यज्ञं चार्व रुन्धे। वामनो वही दक्षिणा। यद्वही। तेनांश्चेयः। यद्वांमनः। तेनं वैष्णुवः समृद्धे। अग्नीषोमीयमेकांदशकपालं निर्वपति। अग्नीषोमांभ्यां वा इन्द्रों वृत्रमंहन्नितिं। यदंग्नीषोमीयमेकांदशकपालं निर्वपति॥६॥

वार्त्रघमेव विजित्यै। हिरंण्यं दक्षिणा समृद्धै। इन्द्रों वृत्र हत्वा। देवतांभिश्चेन्द्रियेणं च व्यार्ध्यत। स एतमैन्द्राग्नमेकांदशकपालमपश्यत्। तिन्नरंवपत्। तेन् वै स देवतांश्चेन्द्रियञ्चावांरुन्ध। यदैन्द्राग्नमेकांदशकपालं निर्वपंति। देवतांश्चेव तेनेन्द्रियं च यजमानोऽवंरुन्धे। ऋष्मो वृही दक्षिणा॥७॥

यद्वही। तेनाँग्रेयः। यदंष्भः। तेनैन्द्रः समृंद्धै। आग्नेयमृष्टाकंपालं निर्वपति। ऐन्द्रं दिधं। यदाँग्नेयो भवंति। अग्निर्वे यंज्ञमुखम्। यज्ञमुखमेवर्द्धिं पुरस्ताँद्धत्ते। यदैन्द्रं दिधं॥८॥

इन्द्रियमेवावंरुन्धे। ऋष्भो वृही दक्षिणा। यद्वही। तेनांग्नेयः। यदंष्भः। तेनैन्द्रः समृद्धै। यावंतीवे प्रजा ओषंधीनामहुंतानामाश्ञन्। ताः परांऽभवन्। आग्रयणं भंवति हुताद्यांय। यजंमानुस्यापंराभावाय॥९॥

देवा वा ओषंधीष्वाजिमंयः। ता इंन्द्राग्नी उदंजयताम्। तावेतमैंन्द्राग्नं द्वादंशकपालं निरंवृणाताम्। यदैंन्द्राग्नो भवत्युज्जित्यै। द्वादंशकपालो भवति। द्वादंश् मासाः संवत्सरः। संवत्सरेणैवास्मा अन्नमवंरुन्धे। वैश्वदेवश्वरुर्भवति। वैश्वदेवं वा अन्नम्। अन्नमेवास्मैं स्वदयति॥१०॥

प्रथम्जो वृत्सो दक्षिणा समृद्धे। सौम्य श्र्यामाकं च्रं निर्वपति। सोमो वा अंकृष्टपच्यस्य राजां। अकृष्टपच्यमेवास्में स्वदयति। वासो दक्षिणा। सौम्य हि देवत्या वासः समृद्धे। सरंस्वत्ये च्रं निर्वपति। सरंस्वते च्रम्। मिथुनमेवावं रुन्थे। मिथुनौ गावौ दक्षिणा समृद्धे। एति वा एष यंज्ञमुखादध्याः। योंऽग्नेर्देवताया एतिं। अष्टावेतानिं ह्वी १ षि भवन्ति। अष्टाक्षंरा गायत्री। गायत्रोंऽग्निः। तेनैव यंज्ञमुखादध्यां अग्नेर्देवतांयै नैतिं॥११॥ र्डुयुर्नि्रवंदयतेऽङ्गुष्ठाभ्यां जुहोत्यनुंमितर्देवतां निर्वपंति वही दक्षिणा यदैन्द्रं दध्यपंराभावाय स्वदयित् गावौ दक्षिणा समृद्धौ पद्गाश॥———[१]

वैश्वदेवेन वै प्रजापंतिः प्रजा अंसृजत। ताः सृष्टा न प्राजायन्त। सौंऽग्निरंकामयत। अहमिमाः प्रजंनयेयमिति। स प्रजापंतये शुचंमदधात्। सोंऽशोचत्प्रजामिच्छमांनः। तस्माद्यं चं प्रजा भुनिक्त यं च न। तावुभौ शोंचतः प्रजामिच्छमांनौ। तास्वग्निमप्यंसृजत्। ता अग्निरध्यौत्॥१२॥ सोमो रेतोंऽदधात्। स्विता प्राजंनयत्। सरंस्वती वाचंमदधात्। पूषाऽपोषयत्। ते वा पृते त्रिः संवत्स्रस्य प्रयुंज्यन्ते। ये देवाः पृष्टिंपतयः। संवत्सरो वै प्रजापंतिः। संवत्सरेणैवासमै प्रजाः प्राजंनयत्। ताः प्रजा जाता म्रुतोंऽग्नन्। अस्मानिष् न प्रायुंक्षतेतिं॥१३॥

स एतं प्रजापंतिर्मारुतः सप्तकंपालमपश्यत्। तन्निरंवपत्। ततो वै प्रजाभ्योऽकल्पत। यन्मांरुतो निरुप्यतें। यज्ञस्य क्रृष्ट्यें। प्रजानामघाताय। सप्तकंपालो भवति। सप्तगंणा वै मुरुतः। गुणुश एवास्मै विशं कल्पयति। स प्रजापंतिरशोचत्॥१४॥

याः पूर्वाः प्रजा असृक्षि। मुरुत्स्ता अंवधिषुः। कथमपंराः सृजेयेति। तस्य शुष्मं आण्डं भूतं निरंवर्तत। तद्युदंहरत्। तदंपोषयत्। तत्प्राजांयत। आण्डस्य वा एतद्रूपम्। यदामिक्षां। यद्युद्धरंति॥१५॥

प्रजा एव तद्यजंमानः पोषयति। वैश्वदेव्यांमिक्षां भवति। वैश्वदेव्यों वै प्रजाः। प्रजा एवास्मै प्रजंनयति। वाजिनमानयति। प्रजास्वेव प्रजांतासु रेतों दधाति। द्यावापृथिव्यं एकंकपालो भवति। प्रजा एव प्रजांता द्यावापृथिवीभ्यांमुभ्यतः परि गृह्णाति। देवासुराः संयंत्ता आसन्। सौंऽग्निरंब्रवीत्॥१६॥

मामग्ने यजत। मया मुखेनासुंराञ्जेष्यथेतिं। मां द्वितीयमिति सोमों ऽब्रवीत्। मया राज्ञां जेष्यथेतिं। मां तृतीयमिति सिवता। मया प्रसूता जेष्यथेतिं। मां चंतुर्थीमिति सरंस्वती। इन्द्रियं वोऽहं धांस्यामीतिं। मां पंश्चमितिं पूषा। मयां प्रतिष्ठयां जेष्यथेतिं॥१७॥

तैंऽग्निना मुखेनासुंरानजयन्। सोमेन राज्ञां। स्वित्रा प्रसूताः। सरंस्वतीन्द्रियमंदधात्। पूषा प्रतिष्ठाऽऽसींत्। ततो वै देवा व्यंजयन्त। यदेतानिं ह्वी १ विं निरुप्यन्ते विजित्यै। नोत्तरवेदिमुपंवपति। पृशवो वा उंत्तरवेदिः। अजांता इव् ह्यंतर्हिं पशवंः॥१८॥

ऐदित्यंशोचद्युद्धरंत्यब्रवीत्प्रतिष्ठयां जेष्य्रथेत्येतर्हिं पुशवंः॥२॥_____[२]

त्रिवृह्यर्हिर्भविति। माता पिता पुत्रः। तदेव तन्मिथुनम्। उल्बं गर्भो जरायं। तदेव तन्मिथुनम्। त्रेधा बर्हिः सन्नेद्धं भवित। त्रयं इमे लोकाः। एष्वेव लोकेषु प्रतिं तिष्ठति। एकधा पुनः सन्नेद्धं भवित। एकं इव ह्ययं लोकः॥१९॥ अस्मिन्नेव तेनं लोके प्रतितिष्ठति। प्रमुवों भवन्ति। प्रथम्जामेव पृष्टिमवंरुन्थे। प्रथम्जो वृत्सो दक्षिणा समृद्धे। पृषदाज्यं गृह्णाति। पृशवो व पृषदाज्यम्। पृश्नेवावं रुन्थे। पृश्रगृहीतं भवति। पाङ्गा हि पृशवंः। बहुरूपं भवति॥२०॥ बहुरूपा हि पृशवः समृद्धे। अग्निं मन्थन्ति। अग्निमृंखा व प्रजापंतिः पृजा असृजत। यद्ग्निं मन्थन्ति। अग्निमृंखा अग्निमृंखा पृव तत्प्रजा यजमानः सृजते। नवं प्रयाजा इंज्यन्ते। नवानूयाजाः। अष्टौ ह्वी १षि। द्वावांघारौ। द्वावाज्यंभागौ॥२१॥

त्रिष्शत्सम्पंद्यन्ते। त्रिष्शदंक्षरा विराट्। अत्रं विराट्। विराजैवान्नाद्यमवंरुन्धे। यजंमानो वा एकंकपालः। तेज् आज्यम्। यदेकंकपाल आज्यंमानयंति। यजंमानमेव तेजंसा समर्धयति। यजंमानो वा एकंकपालः। पृशव् आज्यम्॥२२॥

यदेकंकपाल आर्ज्यमानयंति। यर्जमानमेव पृशुभिः समर्धयति। यदल्पमानयंत्। अल्पां एनं पृशवों भुअन्त उपंतिष्ठेरन्। यद्धह्वांनयंत्। बहवं एनं पृशवोऽभुअन्त उपंतिष्ठेरन्। बह्वांनीयाविः पृष्ठं कुर्यात्। बहवं एवैनं पृशवों भुअन्त उपंतिष्ठन्ते। यर्जमानो वा एकंकपालः। यदेकंकपालस्यावद्येत्॥२३॥

यजंमानुस्यावंद्येत्। उद्घा माद्येद्यजंमानः। प्र वां मीयेत।

स्कृदेव होत्व्यः। स्कृदिव हि सुवर्गो लोकः। हुत्वाऽभि जुहोति। यजमानमेव सुवर्गं लोकं गमियत्वा। तेजसा समर्धयति। यजमानो वा एकंकपालः। सुवर्गो लोक आहवनीयः॥२४॥

यदेकंकपालमाहवनीयें जुहोतिं। यजंमानमेव सुंवर्गं लोकं गंमयति। यद्धस्तेन जुहुयात्। सुवर्गाल्लोकाद्यजंमानमवंविध्येत्। सुचा जुंहोति। सुवर्गस्यं लोकस्य समंष्ट्री। यत्प्राङ्घदेत। देवलोकम्भिजंयेत्। यद्देक्षिणा पिंतृलोकम्। यत्प्रत्यक्॥२५॥

रक्षा १सि यज्ञ १ हंन्युः। यदुदङ्कं। मनुष्यलोकम्भिजंयेत्। प्रतिष्ठितो होत्व्यः। एकंकपालं वे प्रतितिष्ठंन्तं द्यावांपृथिवी अनु प्रतितिष्ठतः। द्यावांपृथिवी ऋतवः। ऋतून् यज्ञः। यज्ञं यजमानः। यजमानं प्रजाः। तस्मात्प्रतिष्ठितो होत्व्यः॥२६॥

वाजिनों यजित। अग्निर्वायुः सूर्यः। ते वै वाजिनः। तानेव तद्यंजित। अथो खल्बाहुः। छन्दा रेसि वै वाजिन इति। तान्येव तद्यंजिति। ऋख्सामे वा इन्द्रंस्य हरी सोम्पानौं। तयोः परिधयं आधानम्। वाजिनं भागधेयम्॥२७॥

यदप्रंहत्य पिर्धीं जुंहुयात्। अन्तराधानाभ्यां घासं प्रयंच्छेत्। प्रहत्यं पिर्धीं जुंहोति। निराधानाभ्यामेव घासं प्रयंच्छिति। बर्हिषिं विषिश्चन्वाजिनमा नंयति। प्रजा वै बर्हिः। रेतो वाजिनम्। प्रजास्वेव रेतों दधाति। समुपह्यं भक्षयन्ति।

पुतत्सोमपीथा ह्यंते। अथों आत्मन्नेव रेतों दधते। यजंमान उत्तमो भंक्षयति। पुशवो वै वाजिनम्। यजंमान पुव पश्निप्रतिष्ठापयन्ति॥२८॥

प्रजापंतिः सिवता भूत्वा प्रजा अंसृजत। ता एंन्मत्यंमन्यन्त। ता अंस्मादपाँकामन्। ता वरुणो भूत्वा प्रजा वरुणेनाग्राहयत्। ताः प्रजा वरुणगृहीताः। प्रजापंतिं पुन्रुपांधावन्नाथिम् च्छमांनाः। स एतान्य्रजापंतिर्वरुणप्रघासानंपश्य तां निरंवपत्। तैर्वे स प्रजा वरुणपाशादंमुश्चत्। यद्वंरुणप्रघासा निरुप्यन्ते॥२९॥

प्रजानामवंरुणग्राहाय। तासां दक्षिणो बाहुन्यंक्र आसींत्। स्वयः प्रसृंतः। स पृतां द्वितीयाँन्दक्षिणतो वेदिमुदंहन्। ततो वे स प्रजानां दक्षिणं बाहुं प्रासारयत्। यद्वितीयाँन्दक्षिणतो वेदिमुद्धन्ति। प्रजानांमेव तद्यजंमानो दक्षिणं बाहुं प्रसारयि। तस्माचातुर्मास्ययाज्यंमुष्मिं ह्याँक उभयाबांहुः। यज्ञाभिजित् क्ष् द्यंस्य। पृथमात्राद्वेदी असंम्भिन्ने भवतः॥३०॥

तस्मौत्पृथमात्रं व्यश्सौं। उत्तरस्यां वेद्यांमुत्तरवेदिमुपं वपति। पृशवो वा उत्तरवेदिः। पृशूनेवावंरुन्थे। अथों यज्ञपुरुषोऽनंन्तरित्ये। पृतद्वौह्मणान्येव पश्चं हुवीश्षिं। अथेष ऐन्द्राग्नो भंवति। प्राणापानौ वा पृतौ देवानौम्। यदिन्द्राग्नी।

षष्ठमः प्रश्नः

यदैंन्द्राग्नो भवंति॥३१॥

प्राणापानावेवावं रुन्थे। ओजो बलं वा पृतौ दैवानांम्। यदिन्द्राग्नी। यदैन्द्राग्नो भवति। ओजो बलंमेवावं रुन्थे। मारुत्यांमिक्षां भवति। वारुण्यांमिक्षां। मेषी चं मेषश्चं भवतः। मिथुना एव प्रजा वंरुणपाशान्मुंश्चति। लोमशौ भंवतो मेध्यत्वायं॥३२॥

श्मीपणिन्युपं वपति। घासमेवाभ्यामिपं यच्छति। प्रजापितमृत्राद्यं नोपानमत्। स एतेनं श्तेध्मेन ह्विषाऽत्राद्यमवांरुन्थ। यत्पंरः श्तानिं शमीपणिनि भवंन्ति। अन्नाद्यस्यावंरुद्धे। सौम्यानि वे क्रीरांणि। सौम्या खलु वा आहुंतिर्दिवो वृष्टिंश्च्यावयित। यत्क्रीरांणि भवंन्ति। सौम्ययैवाहुंत्या दिवो वृष्टिमवंरुन्थे। काय एकंकपालो भवति। प्रजानांङ्कन्त्वायं। प्रतिपूरुषङ्कंरम्भपात्राणि भवन्ति। जाता एव प्रजा वंरुणपाशान्मुंश्चति। एक्मितिरिक्तम्। जनिष्यमाणा एव प्रजा वंरुणपाशान्मुंश्चति॥३३॥

निरुप्यन्ते भवतो भवंति मेध्यत्वायं रुन्धे षद्वं॥४॥______[४]

उत्तरस्यां वेद्यांमन्यानि ह्वी १ षि सादयति। दक्षिणायां मारुतीम्। अपधुरमेवेनां युनक्ति। अथो ओजं एवासामवं हरति। तस्माद्वह्मणश्च क्षत्राच्च विशोऽन्यतोऽपऋमिणीः। मारुत्या पूर्वया प्रचरित। अनृतमेवावं यजते। वारुण्योत्तरया। अन्तत एव वरुणमवं यजते। यदेवाध्वर्युः करोतिं॥३४॥ तत्प्रंतिप्रस्थाता कंरोति। तस्माद्यच्छ्रेयाँ-क्रोति। तत्पापीयान्करोति। पत्नीं वाचयति। मेध्यांमेवैनां करोति। अथो तपं पुवैनामुपं नयति। यज्जारः सन्तन्न प्रंब्र्यात्। प्रियं ज्ञातिः रुन्ध्यात्। असौ में जार इति निर्दिशेत्। निर्दिश्यैवैनं वरुणपाशेनं ग्राहयति॥३५॥

प्रघास्यान् हवामह् इति पत्नीमुदानंयति। अह्वंतैवैनांम्। यत्पत्नी पुरोनुवाक्यांमनुब्रूयात्। निर्वींर्यो यजंमानः स्यात्। यजंमानोऽन्वांह। आत्मन्नेव वीर्यन्थत्ते। उभौ याज्यार्थः सवीर्यत्वायं। यद्ग्रामे यदर्गण्य इत्यांह। यथोदितमेव वर्रुणमवं यजते। यजुमानदेवत्यो वा आहवनीयः॥३६॥

भातृव्यदेवत्यों दक्षिणः। यदांहवनीयें जुहुयात्। यजंमानं वरुणपाशेनं ग्राहयेत्। दक्षिणेऽग्रौ जुंहोति। भ्रातृंव्यमेव वरुणपाशेनं ग्राहयति। शूर्पेण जुहोति। अन्यंमेव वरुणमवं यजते। शीर्षत्रंधि निधायं जुहोति। शीर्षत एव वरुणमवं यजते। प्रत्यिङ्गिष्ठं जुहोति॥३७॥

प्रत्यङ्केव वंरुणपाशान्निर्मृच्यते। अऋन्कर्म कर्मकृत इत्यांह। देवाऽनृणं निरवदायं। अनृणा गृहानुप प्रेतेति वावैतदांह। वर्रुणगृहीतं वा पृतद्यज्ञस्यं। यद्यज्ञंषा गृहीतस्यांतिरिच्यंते। तुषांश्च निष्कासश्चं। तुषैश्च निष्कासेनं चावभृथमवैति। वर्रुणगृहीतेनैव वर्रुणमवयज्ञते। अपोऽवभृथमवैति॥३८॥

अप्सु वै वर्रुणः। साक्षादेव वर्रुणमवंयजते। प्रतियुतो वर्रुणस्य पाश इत्यांह। व्रुणपाशादेव निर्मुच्यते। अप्रतिक्षमा यंन्ति। वर्रुणस्यान्तर्हित्यै। एधौं ऽष्येधिषीमहीत्यांह। समिधेवाग्निन्नमस्यन्तं उपायंन्ति। तेजों ऽसि तेजो मियं धेहीत्यांह। तेजं एवात्मन्धंत्ते॥३९॥

कुरोतिं ग्राहयत्याहवुनीयुस्तिष्ठं जुहोत्युपोऽवभृथमवैति धत्ते॥५॥—————[५]

देवासुराः संयंता आसन्। सौंऽग्निरंब्रवीत्। ममेयमनींकवती तनूः। तां प्रीणीत। अथासुंरान्भि भंविष्यथेतिं। ते देवा अग्नयेऽनींकवते पुरोडाशंमुष्टाकंपालं निरंवपन्। सौंऽग्निरनींकवान्त्स्वेनं भाग्धेयेन प्रीतः। चृतुर्धाऽनींकान्यजनयत। ततों देवा अभवन्। पराऽसुंराः॥४०॥

यद्ग्रयेऽनींकवते पुरोडाशंमृष्टाकंपालं निर्वपंति। अग्निमेवानींकवन्त्र् स्वेनं भाग्धेयेंन प्रीणाति। सौंऽग्निरनींकवान्त्स्वेनं भाग्धेयेंन प्रीतः। चृतुर्धाऽनींकानि जनयते। असौ वा आंदित्यौंऽग्निरनींकवान्। तस्यं र्श्मयोऽनींकानि। साक्ष् सूर्येणोद्यता निर्वपति। साक्षादेवास्मा अनींकानि जनयति। तेऽसुंराः परांजिता यन्तः। द्यावांपृथिवी उपांश्रयन्॥४१॥

ते देवा मुरुद्धाः सान्तप्नेभ्यंश्चरं निरंवपन्। यन्मुरुद्धाः सान्तप्नेभ्यंश्चरं निर्वपंति। द्यावांपृथिवीभ्यांमेव तदुंभयतो यजमानो भ्रातृंव्यान्त्सन्तंपति। मुध्यन्दिने निर्वपति। तर्हि हि तेक्ष्णिष्ठन्तपंति। चुरुर्भविति। सूर्वतं पृवैनान्त्सन्तंपिति। ते देवाः श्वोविज्यिनः सन्तंः। सर्वासान्दुग्धे गृहमेधीयं चुरुं निरंवपन्॥४२॥

आशिता एवाद्योपंवसाम। कस्य वाऽहेदम्। कस्यं वा श्वो भवितेतिं। स शृतोंऽभवत्। तस्याहुंतस्य नाश्वन्। न हि देवा अहुंतस्याश्वन्तिं। तेंऽब्रुवन्। कस्मां इम॰ होंष्याम् इतिं। मुरुद्धों गृहमेधिभ्य इत्यंब्रुवन्। तं मुरुद्धों गृहमेधिभ्योंऽजुहवुः॥४३॥

ततो देवा अभवन्। पराऽसुंराः। यस्यैवं विदुषो मुरुद्धो गृहमेधिभ्यो गृहे जुह्वंति। भवंत्यात्मनां। परांऽस्य भ्रातृंव्यो भवति। यद्वै यज्ञस्यं पाक्त्रा ऋियतें। पृश्वव्यंन्तत्। पाक्त्रा वा पृतिक्रियते। यन्नेध्माबुर्हिर्भवंति। न सांमिधेनीर्न्वाहं॥४४॥

न प्रयाजा इज्यन्तै। नानूयाजाः। य एवं वेदे। पृशुमान्भंवति। आज्यंभागौ यजति। यज्ञस्यैव चक्षुंषी नान्तरेति। मुरुतों गृहमेधिनों यजति। भागधेयेनैवैनान्त्समंध्यति। अग्निइस्वंष्ट्रकृतंं यजति प्रतिष्ठित्यै। इडान्तो भवति। पृशवो वा इडां। पशुष्वेवोपरिष्टात्प्रतितिष्ठति॥४५॥

असुंरा अश्रयन्गृहमे्धीयं चुरुं निरंवपन्नजुहबुर्न्वाहेडाँन्तो भवितु द्वे चं॥६॥————[६]

यत्पन्नीं गृहमेधीयंस्याश्जीयात्। गृह्मेध्येव स्यात्। वि त्वंस्य यज्ञ ऋध्येत। यन्नाश्जीयात्। अगृहमेधी स्यात्। नास्यं यज्ञो

व्यृंद्धोत। प्रतिवेशं पचेयुः। तस्याँश्जीयात्। गृह्मेध्येव भविति। नास्यं यज्ञो व्यृंद्धाते॥४६॥

ते देवा गृहम्धीयेन्ष्ट्वा। आशिता अभवन्। आञ्चताभ्येञ्जत। अनु वृत्सानवासयन्। तेभ्योऽसुराः क्षुधं प्राहिण्वन्। सा देवेषुं लोकमवित्वा। असुरान्पुनरगच्छत्। गृहम्धीयेन्ष्ट्वा। आशिता भवन्ति। आञ्चतेऽभ्येञ्जते॥४७॥

अनुं वृत्सान् वांसयन्ति। भ्रातृंव्यायैव तद्यजंमानः क्षुधं प्रहिंणोति। ते देवा गृंहमेधीयेनेष्ट्वा। इन्द्रांय निष्कासन्त्र्यंदधुः। अस्मानेव श्व इन्द्रो निहिंतभाग उपावर्तितेति। तानिन्द्रो निहिंतभाग उपावंतित। गृहमेधीयेनेष्ट्वा। इन्द्रांय निष्कासं निदंध्यात्। इन्द्रं एवैनं निहिंतभाग उपावंतित। गार्हंपत्ये जुहोति॥४८॥

भागधेयेनैवैन् समंध्यति। ऋषभमाह्वयति। वृषद्भार एवास्य सः। अथो इन्द्रियमेव तद्वीर्यं यजंमानो भ्रातृव्यंस्य वृङ्के। इन्द्रो वृत्र हत्वा। परौं परावतंमगच्छत्। अपाराधमिति मन्यंमानः। सौऽब्रवीत्। क इदं वेदिष्यतीतिं। तैऽब्रुवन्मुरुतो वर्रं वृणामहै॥४९॥

अर्थ व्यं वेदाम। अस्मभ्यंमेव प्रंथम हिविर्निरुप्याता इति। त एंन्मध्यंक्रीडन्। तत्क्रीडिनांङ्कीडित्वम्। यन्मरुद्धाः क्रीडिभ्यः प्रथम हिविर्निरुप्यते विजित्यै। साक र सूर्येणोद्यता निर्वपति। एतस्मिन्वै लोक इन्द्रों वृत्रमंहन्त्समृद्धै। एतद्वाँह्मणान्येव पश्चं ह्वी रिषे। एतद्वाँह्मण ऐन्द्राग्नः। अथैष ऐन्द्रश्चरुभंवति॥५०॥

उद्धारं वा एतिमन्द्र उदंहरत। वृत्र॰ हृत्वा। अन्यासुं देवतास्विधे। यदेष ऐन्द्रश्चरुर्भवंति। उद्धारमेव तं यजमान उद्धरते। अन्यासुं प्रजास्विधे। वैश्वकुर्मण एकंकपालो भवति। विश्वान्येव तेन कर्माणि यजमानोऽवंरुन्थे॥५१॥

ऋद्धतुंऽभ्यंञ्जते जुहोति वृणामहै भवत्यृष्टौ चं॥७॥______[9]

वैश्वदेवन् वै प्रजापंतिः प्रजा अंसृजत। ता वंरुणप्रघासैर्वरुणपाशादे साकुमेधेः प्रत्यंस्थापयत्। त्र्यंम्बकै रुद्रं निरवादयत। पितृयज्ञेनं सुवर्गं लोकमंगमयत्। यहैं श्वदेवन् यजंते। प्रजा एव तद्यजंमानः सृजते। ता वंरुणप्रघासैर्वरुणपाशान्मं श्वति। साकुमेधेः प्रतिष्ठापयति। त्र्यंम्बकै रुद्रं निरवंदयते॥५२॥ पितृयज्ञेनं सुवर्गं लोकं गंमयति। दक्षिणतः प्रांचीनावीती निर्वपति। दक्षिणावृद्धि पितृणाम्। अनांदत्य तत्। उत्तर्त एवोपवीय निर्वपत्। उभये हि देवाश्चं पितरंश्चेज्यन्तें। अथो यदेव दक्षिणार्धेऽधि श्रयंति। तेनं दक्षिणावृत् सोमांय पितृमतें पुरोडाश् प्रद्रंपालं निर्वपति। संवत्सरो वै सोमंः पितृमान्॥५३॥

संवृत्सरमेव प्रीणाति। पितृभ्यों बर्हिषद्धों धानाः। मासा

वै पितरों बर्हिषदंः। मासांनेव प्रींणाति। यस्मिन्वा ऋतौ पुरुषः प्रमीयंते। सौंऽस्यामुष्मिं ह्याँके भंवति। बहुरूपा धाना भंवन्ति। अहोरात्राणांमभिजिंत्यै। पितृभ्यौंऽग्निष्वात्तेभ्यों मन्थम्। अर्धमासा वै पितरौंऽग्निष्वात्ताः॥५४॥

अर्धमासानेव प्रीणाति। अभिवान्यांयै दुग्धे भवति। सा हि पितृदेवत्यंन्दुहे। यत्पूर्णम्। तन्मंनुष्यांणाम्। उपर्यर्धो देवानांम्। अर्धः पितृणाम्। अर्ध उपमन्थति। अर्धो हि पितृणाम्। एक्योपंमन्थति॥५५॥

एका हि पिंतृणाम्। दक्षिणोपंमन्थति। दक्षिणावृद्धि पिंतृणाम्। अनार्भ्योपंमन्थति। तद्धि पितृन्गच्छंति। इमान्दिश्ं वेदिमुद्धंन्ति। उभये हि देवाश्चं पितरंश्चेज्यन्तें। चतुंः स्रक्तिर्भवति। सर्वा ह्यनु दिशंः पितरंः। अखांता भवति॥५६॥

खाता हि देवानांम्। मध्यतोंऽग्निराधीयते। अन्ततो हि देवानांमाधीयतें। वर्षीयानिध्म इध्माद्भंवति व्यावृत्त्ये। परिश्रयति। अन्तर्हितो हि पितृलोको मंनुष्यलोकात्। यत्पर्रुषि दिनम्। तद्देवानांम्। यदंन्तरा। तन्मंनुष्यांणाम्॥५७॥

यत्समूलम्। तत्पंतृणाम्। समूलं बुर्हिर्भवति व्यावृत्त्यै। दक्षिणा स्तृंणाति। दक्षिणावृद्धि पितृणाम्। त्रिः पर्येति। तृतीये वा इतो लोके पितरंः। तानेव प्रीणाति। त्रिः पुनः पर्येति। षद्धं पंद्यन्ते॥५८॥

षड्वा ऋतवंः। ऋतूनेव प्रीणाति। यत्प्रंस्त्रं यज्ञंषा गृह्णीयात्। प्रमायुंको यज्ञंमानः स्यात्। यन्न गृह्णीयात्। अनायतनः स्यात्। तूष्णीमेव न्यंस्येत्। न प्रमायुंको भवंति। नानांयतनः। यत्रीन्यंरिधीन्यंरिद्ध्यात्॥५९॥

मृत्युना यर्जमानं परिगृह्णीयात्। यन्न परिद्ध्यात्।
रक्षारेसि य्ज्ञर हंन्युः। द्वौ परिधी परिद्धाति।
रक्षंसामपहत्ये। अथों मृत्योरेव यर्जमान्मृत्सृंजिति।
यत्रीणिं त्रीणि ह्वीर्ध्यंदाहरेयुः। त्रयंस्रय एषार साकं
प्रमीयरन्। एकैकमनूचीनांन्युदाहंरन्ति। एकैक एवेषांमन्वश्रः
प्रमीयते। कृशिपुं कशिप्व्यांय। उपबर्हंणमुपबर्हृण्यांय।
आञ्जनमाञ्जन्यांय। अभ्यञ्जनमभ्यञ्जन्यांय। यथाभागमेवनांन्प्रीणाति

निरवंदयते पितृमानंग्निष्वात्ता एक्योपं मन्थृत्यखांता भवति मनुष्यांणां पद्यन्ते परिद्ध्यान्मीयते पर्श्व

व॥८॥————[८]

अग्नये देवेभ्यः पितृभ्यः सिम्ध्यमानायानुं ब्रूहीत्यांह। उभये हि दैवाश्चं पितरंश्चेज्यन्तें। एकामन्वांह। एका हि पितृणाम्। त्रिरन्वांह। त्रिर्हि देवानांम्। आघारावाघांरयति। यज्ञप्रषोरनंन्तरित्ये। नार्षेयं वृंणीते। न होतांरम्॥६१॥ यदांर्षेयं वृंणीत। यद्धोतांरम्। प्रमायुंको यज्ञंमानः स्यात्। प्रमायुंको होतां। तस्मान्न वृंणीते। यज्ञंमानस्य होतुंर्गोपीथायं। अपं बर्हिषः प्रयाजान् यंजिति। प्रजा वै ब्र्हिः। प्रजा एव मृत्योरुत्सृंजिति। आज्यंभागौ यजित॥६२॥

यज्ञस्यैव चक्षुंषी नान्तरंति। प्राचीनावीती सोमं यजित। पितृदेवत्यां हि। एषाऽऽहुंतिः। पश्चकृत्वोऽवं द्यति। पश्च ह्यंता देवताः। द्वे पुरोऽनुवाक्ये। याज्यां देवतां वषद्वारः। ता एव प्रीणाति। सन्तंतमवं द्यति॥६३॥

ऋतूना सन्तंत्यै। प्रैवैभ्यः पूर्वया पुरोऽनुवाक्यंयाऽऽह। प्रणंयति द्वितीयंया। गमयति याज्यंया। तृतीये वा इतो लोके पितरंः। अहं पृवैनान्पूर्वया पुरोऽनुवाक्यंयाऽत्यानंयति। रात्रिये द्वितीयंया। ऐवैनान् याज्यंया गमयति। दक्षिणतोऽवदायं। उदङ्काति कामति व्यावृत्त्यै॥६४॥

आ स्वधेत्याश्रांवयित। अस्तुं स्वधेतिं प्रत्याश्रांवयित। स्वधा नम् इति वषंद्वरोति। स्वधाकारो हि पितृणाम्। सोम्मग्रें यजित। सोमंप्रयाजा हि पितरंः। सोमं पितृमन्तं यजित। संवत्सरो वै सोमंः पितृमान्। संवत्सरमेव तद्यंजित। पितृन्बरिहषदों यजित॥६५॥

ये वै यज्वांनः। ते पितरों बर्हिषदः। तानेव तद्यंजित। पितृनंग्निष्वात्तान् यंजिति। ये वा अयंज्वानो गृहमेधिनः। ते पितरोंऽग्निष्वात्ताः। तानेव तद्यंजिति। अग्निङ्कं व्यवाहंनं यजित। य एव पितृणाम्गिः। तमेव तद्यंजिति॥६६॥ अथो यथाऽग्निः स्विष्टकृतं यजिति। ताहगेव तत्। एतते तत् ये च त्वामन्वितिं तिसृषुं स्रक्तीषु निदंधाति। तस्मादा तृतीयात्पुरुषान्नाम् न गृह्णन्ति। एतावन्तो हीज्यन्तें। अत्रं पितरो यथाभागं मन्दध्वमित्यांह। ह्लीका हि पितरंः। उदंश्चो निष्क्रांमन्ति। एषा वै मनुष्यांणान्दिक्। स्वामेव तिदृशमनु निष्क्रांमन्ति॥६७॥

आह्वनीयमुपंतिष्ठन्ते। न्यंवास्मै तद्भुंवते। यत्सत्यांहवनीयैं। अथान्यत्र चरंन्ति। आतिमंतोरुपंतिष्ठन्ते। अग्निमेवोपंद्रष्टारं कृत्वा। पितृन्निरवंदयन्ते। अन्तं वा एते प्राणानां गच्छन्ति। य आतिमंतोरुप तिष्ठंन्ते। सुसन्दर्शन्त्वा व्यमित्यांह॥६८॥

प्राणो वै सुंस्न्हक्। प्राणमेवात्मन्दंधते। योजा न्विन्द्र ते हरी इत्यांह। प्राणमेव पुनंरयुक्त। अक्षन्नमीमदन्त हीति गार्हंपत्यमुपंतिष्ठन्ते। अक्षन्नमीमदन्ताथ त्वोपंतिष्ठामह् इति वावैतदांह। अमीमदन्त पितरंः सोम्या इत्यभि प्रपंद्यन्ते। अमीमदन्त पितरोऽथं त्वाऽभि प्रपंद्यामह् इति वावैतदांह। अपः परिषिश्चति। मार्जयंत्येवैनान्॥६९॥

अथों तुर्पयंत्येव। तृप्यंति प्रजयां पृशुभिः। य एवं वेदं। अपं बर्हिषावन्याजौ यंजति। प्रजा वे बर्हिः। प्रजा एव मृत्योरुत्सृंजति। चृतुरंः प्रयाजान् यंजति। द्वावंन्याजौ। षद्वं पंद्यन्ते। षङ्घा ऋतवंः। ऋतूनेव प्रीणाति। न पत्यन्वांस्ते। न संयांजयन्ति। यत्पत्यन्वासीत। यत्संयाजयेयुः।

षष्ठमः प्रश्नः

प्रमायुंका स्यात्। तस्मान्नान्वांस्ते। न संयोजयन्ति। पित्निये गोपीथार्य॥७०॥

होतांरमाज्यंभागौ यजित् सन्तंतुमवंद्यति व्यावृत्त्यै बर्ह्षिषदी यजित् तमेव तद्यंजुत्यनु
निष्क्रांमन्त्याहैनानृतवो नवं च॥९॥—————[९]

प्रतिपूरुषमेकंकपालां निर्वपित। जाता एव प्रजा रुद्रान्निरवंदयते। एकमितिरिक्तम्। जनिष्यमाणा एव प्रजा रुद्रान्निरवंदयते। एकंकपाला भवन्ति। एक्धैव रुद्रन्निरवंदयते। नाभिघांरयति। यदंभिघारयैत्। अन्तर्वचारिण र् रुद्रं कुर्यात्। एकोल्मुकेनं यन्ति॥७१॥

ति रुद्रस्यं भाग्धेयम्ं। इमान्दिशं यन्ति। एषा वै रुद्रस्य दिक्। स्वायांमेव दिशि रुद्रन्निरवंदयते। रुद्रो वा अंपृशुकांया आहुंत्ये नातिष्ठत। असौ ते पृशुरिति निर्दिशेद्यं द्विष्यात्। यमेव द्वेष्टिं। तमंस्मै पृशुं निर्दिशति। यदि न द्विष्यात्। आखुस्ते पृशुरितिं ब्रूयात्॥७२॥

न ग्राम्यान्पशून् हिनस्ति। नारण्यान्। चृतुष्पथे जुंहोति। एष वा अंग्रीनां पङ्घीशो नामं। अग्निवत्येव जुंहोति। मध्यमेनं पूर्णेनं जुहोति। सुग्ध्येषा। अथो खलुं। अन्तमेनैव होत्व्यम्। अन्तत एव रुद्रं निरवंदयते॥७३॥

एष ते रुद्र भागः सह स्वस्राऽम्बिक्येत्यांह। शुरद्वा अस्याम्बिका स्वसां। तया वा एष हिनस्ति। य॰ हिनस्ति। तयैवैन र् सह शंमयति। भेषजङ्गव इत्यांह। यावंन्त एव ग्राम्याः पृशवंः। तेभ्यों भेषजं करोति। अवाम्ब रुद्रमंदिमहीत्यांह। आशिषंमेवैतामा शास्ते॥७४॥

त्र्यम्बकं यजामह् इत्यांह। मृत्योर्मुक्षीय माऽमृतादिति वावैतदांह। उत्किरन्ति। भगस्य लीप्सन्ते। मूतेंकृत्वाऽऽसंजन्ति। यथा जनं यतेंऽवसं करोतिं। ताहगेव तत्। एष तें रुद्र भाग इत्यांह निरवंत्त्ये। अप्रंतीक्षमा यन्ति। अपः परिषिश्चति। रुद्रस्यान्तर्हित्ये। प्र वा एतेंऽस्माल्लोकाच्यंवन्ते। ये त्र्यम्बकैश्चरंन्ति। आदित्यं चरुं पुनरेत्य निर्वपति। इयं वा अदिंतिः। अस्यामेव प्रतिं तिष्ठन्ति॥७५॥

युन्ति ब्रूयान्निरवंदयते शास्ते सिश्चति षद्वं॥१०॥-------[१०]

अर्नुमत्यै वैश्वदेवेन् ताः सृष्टास्त्रिवृत्युजापंतिः सिव्तोत्तंरस्यान्देवासुराः सौंऽग्निर्यत्पत्नीं वैश्वदेवेन् ता वंरुणप्रघासैरुग्नयें देवेभ्यः प्रतिपूरुषन्दशं॥१०॥

अनुंमत्यै प्रथम्जो वृत्सो बंहुरूपा हि पृशवृस्तस्मांत्पृथमात्रं यद्ग्रयेऽनींकवत उद्धारं वा अग्नयें देवेभ्यः प्रतिपूरुषं पश्चंसप्ततिः॥७५॥

अनुंमत्यै प्रतिंतिष्ठन्ति॥

हरिः ओम्॥ ॥इति श्रीकृष्णयजुर्वेदीयतैत्तिरीयब्राह्मणे प्रथमाष्टके षष्ठः प्रपाठकः समाप्तः॥

सप्तमः प्रश्नः

॥सप्तमः प्रश्नः॥

॥ तैत्तिरीयब्राह्मणे प्रथमाष्टके सप्तमः प्रपाठकः॥

पृतद्वाँह्मणान्येव पश्चं ह्वी १ षिं। अथेन्द्रांय शुनासीरांय पृरोडाशं द्वादंशकपालं निर्वपिति। संवृत्सरो वा इन्द्राशुनासीरंः। संवृत्सरेणैवास्मा अन्नमवं रुन्थे। वायव्यं पयो भवित। वायुर्वे वृष्ट्ये प्रदापियता। स पृवास्मे वृष्टिं प्रदापयित। सौर्यं एकंकपालो भवित। सूर्येण वा अमुर्ष्मिं छोके वृष्टिंधृता। स पृवास्मे वृष्टिं नियंच्छित॥१॥ द्वाद्रशग्व १ सीरं दक्षिणा समृद्धे। देवासुराः संयंत्ता आसन्। ते देवा अग्निमंब्रुवन्। त्वयां वीरेणासुरान्भिमंवामेति। सौंऽब्रवीत्। त्रेधाऽहमात्मानं विकिरिष्य इतिं। स त्रेधाऽऽत्मानं व्यंकुरुत। अग्निन्तृतीयम्। रुद्रन्तृतीयम्। वर्रणन्तृतीयम्॥२॥

सौंऽब्रवीत्। क इदन्तुरीयमितिं। अहमितीन्द्रौंऽब्रवीत्। सन्तु सृंजावहा इतिं। तौ समंसृजेताम्। स इन्द्रंस्तुरीयंमभवत्। यदिन्द्रंस्तुरीयमभंवत्। तिदंन्द्रतुरीयस्थैंन्द्रतुरीयृत्वम्। ततो वै देवा व्यंजयन्त। यदिंन्द्रतुरीयं निरुप्यते विजित्यै॥३॥ विहिनीं धेनुदिक्षंणा। यद्वहिनीं। तेनांग्रेयी। यद्गैः। तेनं रौद्री। यद्धेनुः। तेनैन्द्री। यत्स्री सृती दान्ता। तेनं वारुणी समृद्धै। प्रजापंतिर्य्ज्ञमंसृजत॥४॥

त र सृष्ट रक्षा ईस्यजिघा र सन्। स पृताः प्रजापंतिरात्मनों देवता निरंमिमीत। ताभिवें स दिग्भ्यो रक्षा ईसि प्राणुंदत। यत्पंश्चावृत्तीयं जुहोतिं। दिग्भ्य पृव तद्यजंमानो रक्षा ईसि प्रणुंदते। समूं छ रक्षः सन्दंग्ध रक्षः इत्यांह। रक्षा ईस्येव सन्दंहित। अग्नयं रक्षोघ्ने स्वाहेत्यांह। देवतांभ्य पृव विजिग्यानाभ्यों भाग्धेयं करोति। प्रष्टिवाही रथो दक्षिणा समृंद्धे॥५॥

इन्द्रों वृत्र हत्वा। असुंरान्पराभाव्यं। नमुंचिमासुरन्नालंभत। तश्शच्यांऽगृह्णात्। तौ समंलभेताम्। सौंऽस्माद्भिशुंनतरोऽभवत्। सौंऽब्रवीत्। सुन्धार सन्दंधावहै। अथु त्वाऽवं स्रक्ष्यामि। न मा शुष्कंणु नार्द्रेणं हनः॥६॥

न दिवा न नक्तमिति। स एतम्पां फेर्नमिसिश्चत्। न वा एष शुष्को नार्द्रो व्युष्टाऽऽसीत्। अनुंदितः सूर्यः। न वा एतद्दिवा न नक्तम्। तस्यैतस्मिं ह्योंके। अपां फेर्नेन् शिर् उदंवर्तयत्। तदेन्मन्वंवर्तत। मित्रंद्रुगतिं ॥७॥

स पृतानंपामार्गानंजनयत्। तानंजुहोत्। तैर्वे स रक्षार्स्यपाहत। यदंपामार्गहोमो भवंति। रक्षंसामपंहत्यै। पृकोल्मुकेनं यन्ति। तिद्धे रक्षंसां भाग्धेयम्। इमान्दिशं यन्ति। पृषा वै रक्षंसान्दिक्। स्वायांमेव दिशि रक्षारंसि हन्ति॥८॥

स्वकृत इरिणे जुहोति प्रद्रे वां। एतद्वे रक्षंसामायतनंम्।

स्व प्वायतंने रक्षा रेसि हन्ति। पूर्णमयेन स्रुवेणं जुहोति। ब्रह्म वै पूर्णः। ब्रह्मणैव रक्षा रेसि हन्ति। देवस्यं त्वा सिवृतः प्रमुव इत्याह। स्वितृप्रंसूत पुव रक्षा रेसि हन्ति। हृत र रक्षो ऽवंधिष्म रक्ष इत्याह। रक्षंसा इस्तृत्यै। यहस्ते तद्दक्षिणा निरवंत्ये। अप्रतीक्षमायंन्ति। रक्षंसाम्नतर्हित्ये॥९॥

युच्छुति वरुंणुन्तृतीयुं विजित्या असृजत् समृंद्धौ हनो मित्रंद्रुगितिं हन्ति स्तृत्यै त्रीणिं च॥१॥[१]

धात्रे पुरोडाशं द्वादंशकपालं निर्वपिति। संवृत्सरो वै धाता। संवृत्सरेणैवास्मैं प्रजाः प्रजनयित। अन्वेवास्मा अनुंमितर्मन्यते। राते राका। प्र सिनीवाली जनयित। प्रजास्वेव प्रजातासु कुह्वां वाचन्दधाति। मिथुनौ गावौ दक्षिणा समृद्धे। आग्नावैष्णवमेकांदशकपालं निर्वपित। ऐन्द्रावैष्णवमेकांदशकपालम्॥१०॥

वैष्णविश्रेकपालम्। वीर्यं वा अग्निः। वीर्यमिन्द्रंः। वीर्यं विष्णुः। प्रजा एव प्रजाता वीर्यं प्रतिष्ठापयति। तस्मात्प्रजा वीर्यावतीः। वामन ऋषभो वही दक्षिणा। यद्वही। तेनांग्रेयः। यदंषभः॥११॥

तेनैन्द्रः। यद्वांमनः। तेनं वैष्णवः समृद्धै। अग्नीषोमीयमेकांदशकपालं निर्वपति। इन्द्रासोमीयमेकांदशकपालम्। सौम्यश्रुरुम्। सोमो वै रेतोधाः। अग्निः प्रजानां प्रजनियता। वृद्धानामिन्द्रः प्रदापयिता। सोमं एवास्मै रेतो दर्धाति॥१२॥

अग्निः प्रजां प्रजांनयति। वृद्धामिन्द्रः प्रयंच्छति। बुभुदंक्षिणा

समृंद्धै। सोमापौष्णश्चरुन्निर्वपति। ऐन्द्रापौष्णश्चरुम्। सोमो वै रेतोधाः। पूषा पंशूनां प्रजनियता। वृद्धानामिन्द्रः प्रदापयिता। सोमं एवास्मै रेतो दर्धाति। पूषा पुशून्प्रजनयति॥१३॥

वृद्धानिन्द्रः प्रयंच्छति। पौष्णश्चरुभंवति। इयं वै पूषा। अस्यामेव प्रतितिष्ठति। श्यामो दक्षिणा समृद्धौ। बृहु वै पुरुषो मेध्यमुपंगच्छति। वैश्वान्रं द्वादंशकपालं निर्वपति। संवृत्स्रो वा अग्निवैश्वान्रः। संवृत्स्रेणैवैन इं स्वदयति। हिरंण्यं दक्षिणा॥१४॥

प्वित्रं वै हिरंण्यम्। पुनात्येवैनम्ं। बहु वै रांजन्योऽनृंतं करोति। उपं जाम्ये हरंते। जिनातिं ब्राह्मणम्। वद्त्यनृंतम्। अनृंते खलु वै क्रियमांणे वरुणो गृह्णाति। वारुणं यंवमयं चरुन्निवंपति। वरुणपाशादेवैनं मुश्चति। अश्वो दक्षिणा। वारुणो हि देवत्याऽश्वः समृंद्धौ॥१५॥

रुन्नुवेष्ण्वमेकांदशकपालं यहंपुमा दर्थात पूण पृश्चन्नजंनयति हिरंण्यं दक्षिण् दक्षिणेकं चारा [२]
रिक्रिनांमेतानि ह्वी १ षि भवन्ति। एते वै राष्ट्रस्यं प्रदातारंः।
एतेंऽपादातारंः। य एव राष्ट्रस्यं प्रदातारंः। येंऽपादातारंः।
त एवास्मै राष्ट्रं प्रयंच्छन्ति। राष्ट्रमेव भवति। यत्समाहत्यं
निर्वपेत्। अरिक्रनः स्युः। यथायथन्निर्वपित रिक्रित्वायं॥१६॥
यत्सद्यो निर्वपेत्। यावंतीमेकेन ह्विषाऽऽशिषंमव रुन्थे।
तावंतीमवंरुन्थीत। अन्वहन्निर्वपिति। भूयंसीमेवाशिष्मवं

रुन्थे। भूयंसो यज्ञकृतूनुपैति। बार्ह्स्पृत्यश्चरुन्निर्वपिति ब्रह्मणो गृहे। मुख्त एवास्मै ब्रह्म सङ्श्यति। अथो ब्रह्मन्नेव क्षत्रमुन्वारम्भयति। शितिपृष्ठो दक्षिणा समृद्धौ॥१७॥

ऐन्द्रमेकांदशकपाल र राज्ञन्यंस्य गृहे। इन्द्रियमेवावं रुन्थे। ऋषभो दक्षिणा समृद्धे। आदित्यं चरुं मिहंष्ये गृहे। इयं वा अदितिः। अस्यामेव प्रतितिष्ठति। धेनुदिक्षिणा समृद्धे। भगांय चरुं वावातांये गृहे। भगंमेवास्मिन्दधाति। विचित्तगर्भा पष्ठौही दक्षिणा समृद्धे॥१८॥

नैर्ऋतं चरुं पंरिवृत्त्यै गृहे कृष्णानां व्रीहीणान्नखिनिर्मिन्नम्। पाप्मानमेव निर्ऋतिन्निरवंदयते। कृष्णा कूटा दक्षिणा समृद्धै। आग्नेयमृष्टाकंपाल समृद्धै। गृहे। सेनामेवास्य सङ्श्यंति। हिरंण्यं दक्षिणा समृद्धै। वारुणन्दशंकपाल स्मृत्स्यं गृहे। वरुणसवमेवावं रुन्थे। महानिरष्टो दक्षिणा समृद्धै। महानिरष्टो दक्षिणा समृद्धै। मारुत सप्तकंपालङ्गामण्यो गृहे॥१९॥

अत्रं वै मुरुतः। अत्रंमेवावं रुन्धे। पृश्जिदक्षिणा समृद्धे। सावित्रं द्वादंशकपालङ्कृत्तुर्गृहे प्रसूत्ये। उपध्वस्तो दक्षिणा समृद्धे। आश्विनन्द्विकपाल संङ्ग्रहीतुर्गृहे। अश्विनौ वै देवानां भिषजौ। ताभ्यांमेवास्मे भेषजं करोति। स्वात्यौ दक्षिणा समृद्धे। पौष्णं चुरुं भागदुघस्यं गृहे॥२०॥

अन्नं वै पूषा। अन्नमेवावं रुन्धे। श्यामो दक्षिणा

समृद्धै। रौद्रङ्गांवीधुकश्चरुमंक्षावापस्यं गृहे। अन्तृत एव रुद्रन्निरवंदयते। शृबलु उद्घारो दक्षिणा समृद्धै। द्वादंशैतानिं ह्वी १ षि भवन्ति। द्वादंश मासाः संवत्सरः। संवत्सरेणैवास्मै राष्ट्रमवंरुन्थे। राष्ट्रमेव भवति॥ २१॥

यन्न प्रति निर्वपैत्। रिव्ननं आशिषोऽवंरुन्धीरन्। प्रतिनिर्वपिति। इन्द्रांय सुत्राम्णं पुरोडाश्मेकांदशकपालम्। इन्द्रांया होमुचै। आशिषं एवावंरुन्धे। अयं नो राजां वृत्रहा राजां भूत्वा वृत्रं वध्यादित्यांह। आशिषंमेवैतामा शौस्ते। मैत्राबारहस्पत्यं भंवति। श्वेतायै श्वेतवंत्सायै दुग्धे॥२२॥

बार्ह्स्पत्ये मैत्रमि दधाति। ब्रह्मं चैवास्मैं क्षत्रं चे समीची दधाति। अथो ब्रह्मंत्रेव क्षत्रं प्रतिष्ठापयित। बार्ह्स्पत्येन पूर्वेण प्रचेरित। मुख्त एवास्मै ब्रह्म सङ्श्यंति। अथो ब्रह्मंत्रेव क्षत्रमन्वारंम्भयित। स्वयं कृता वेदिर्भवित। स्वयन्दिनं बर्हिः। स्वयं कृत इध्मः। अनंभिजितस्याभिजित्ये। तस्माद्राज्ञामरंण्यम्भिजितम्। सैव श्वेता श्वेतवंत्सा दक्षिणा समृद्धे॥२३॥

र्िवृत्वाय समृंद्धौ पष्टौही दक्षिणा समृंद्धौ ग्राम्ण्यों गृहे भागदुघस्यं गृहे भविति दुग्धेंऽभिजिंत्यै द्वे

र्च॥३॥————[३]

देवसुवामेतानि ह्वी १ षि भवन्ति। एतावंन्तो वै देवाना १ स्वाः। त एवास्मैं स्वान्प्रयंच्छन्ति। त एंन १ सुवन्ते। अग्निरेवैनं गृहपंतीना स्पवते। सोमो वनस्पतीनाम्। रुद्रः पंशूनाम्। बृह्स्पतिवीचाम्। इन्द्रौ ज्येष्ठानौम्। मित्रः सत्यानौम्॥२४॥

वर्रणो धर्मपतीनाम्। एतदेव सर्वं भवति। स्विता त्वां प्रस्वानारं स्वतामिति हस्तंङ्गृह्णाति प्रसूत्ये। ये देवा देवः सुवः स्थेत्यांह। यथायजुरेवेतत्। महते क्षत्रायं महत आधिपत्याय महते जानराज्यायेत्यांह। आशिषंमेवेतामा शांस्ते। एष वो भरता राजा सोमोऽस्माकं ब्राह्मणानार राजेत्यांह। तस्मात्सोमराजानो ब्राह्मणाः। प्रति त्यन्नामं राज्यमंधायीत्यांह॥२५॥

राज्यमेवास्मिन्प्रतिदधाति। स्वां तनुवं वर्रणो अशिश्रेदित्यांह। वरुणस्वमेवावंरुन्धे। शुचैर्मित्रस्य व्रत्यां अभूमेत्यांह। शुचिमेवेनं व्रत्यं करोति। अमन्मिह महुत ऋतस्य नामेत्यांह। मनुत एवेनम्। सर्वे व्राता वर्रणस्याभूवित्रित्यांह। सर्ववातमेवेनं करोति। वि मित्र एवेररांतिमतारीदित्यांह॥२६॥

अरांतिमैवैनंन्तारयति। असूंषुदन्त युज्ञियां ऋतेनेत्यांह। स्वदयंत्येवैनम्। व्यं त्रितो जरिमाणंत्र आन्डित्यांह। आयुंरेवास्मिन्दधाति। द्वाभ्यां विमृष्टे। द्विपाद्यजमानः प्रतिष्ठित्ये। अग्नीषोमीयंस्य चैकांदशकपालस्य देवसुवां चं ह्विषांमुग्नयें स्विष्टकृतें समवंद्यति। देवतांभिरेवैनंमुभ्यतः परिंगृह्णाति। विष्णुऋमान्क्रंमते। विष्णुंरेव भूत्वेमाश्लौंकान्भिजंयति।

मुत्यानांमधायोत्यांहातारीदित्यांह कमतु एकं च॥४॥————[४]

अर्थेतः स्थेतिं जुहोति। आहुंत्यैवैनां निष्क्रीयं गृह्णाति। अथो ह्विष्कृंतानामेवाभिघृंतानाङ्गृह्णाति। वहंन्तीनाङ्गृह्णाति। एता वा अपा॰ राष्ट्रम्। राष्ट्रमेवास्में गृह्णाति। अथो श्रियंमेवैनंमभिवंहन्ति। अपां पतिंर्सीत्यांह। मिथुनमेवाकंः। वृषांऽस्यूर्मिरित्यांह॥२८॥

ऊर्मिमन्तंमेवैनं करोति। वृष्सेनोंऽसीत्यांह। सेनांमेवास्य सङ्श्यंति। ब्रजिक्षितः स्थेत्यांह। एता वा अपां विशंः। विशंमेवास्मै पर्यूहति। मुरुतामोजः स्थेत्यांह। अन्नं वै मरुतः। अन्नमेवावंरुन्थे। सूर्यंवर्चसः स्थेत्यांह॥२९॥

राष्ट्रमेव वेर्चस्व्यंकः। सूर्यंत्वचसः स्थेत्यांह। सृत्यं वा एतत्। यद्वर्षंति। अनृतं यदातपंति वर्षंति। सृत्यानृते एवावंरुन्थे। नैन र्रं सत्यानृते उंदिते हिर्इंस्तः। य एवं वेदं। मान्दाः स्थेत्यांह। राष्ट्रमेव ब्रह्मवर्चस्यंकः॥३०॥

वाशाः स्थेत्यांह। राष्ट्रमेव वृश्यंकः। शक्वंरीः स्थेत्यांह। पृशवो वै शक्वंरीः। पृश्नेवावंरुन्थे। विश्वभृतः स्थेत्यांह। राष्ट्रमेव पंयस्व्यंकः। जनभृतः स्थेत्यांह। राष्ट्रमेवेन्द्रियाव्यंकः। अग्नेस्तेजस्याः स्थेत्यांह॥३१॥

राष्ट्रमेव तेजस्व्यंकः। अपामोषंधीना रसः स्थेत्यांह।

राष्ट्रमेव मंध्व्यंमकः। सार्स्वतङ्ग्हं ङ्गृह्णाति। एषा वा अपाम्पृष्ठम्। यत्सरंस्वती। पृष्ठमेवैन रं समानानां करोति। षोड्शिभंगृह्णाति। षोडंशकलो वे पुरुषः। यावांनेव पुरुषः। तस्मिन्वीर्यं दधाति। षोड्शिभंजीहोतिं षोड्शिभंगृह्णाति। द्यात्रिरंश्वत्सम्पंद्यन्ते। द्यात्रिरंशदक्षराऽनुष्टुक्। वागेनुष्टुप्सर्वाणि छन्दा रंसि। वाचैवैन र सर्वेभिष्छन्दोंभिर्भिषिश्चति॥३२॥ क्रिंगित्यांह प्रयंवर्षसः स्थत्यांह ब्रह्मवर्षस्यंकस्तेज्रस्याः स्थत्यांहेव प्रवंप्षद चं॥५॥——[५]

देवीरापः सं मध्मतीर्मध्मतीभिः सृज्यध्वमित्यांह। ब्रह्मणैवेनाः सर सृजिति। अनाधृष्टाः सीद्तेत्यांह। ब्रह्मणैवेनाः सादयित। अन्तरा होतुंश्च धिष्णियं ब्राह्मणाच्छुर्सिनश्च सादयित। आग्नेयो व होतां। ऐन्द्रो ब्राह्मणाच्छुर्सी। तेजंसा चैवेन्द्रियेणं चोभ्यतां राष्ट्रं परिगृह्णाति। हिर्रण्येनोत्पंनाति। आहुंत्यै हि प्वित्रांभ्यामृत्पुनन्ति व्यावृंत्त्यै॥३३॥

श्तमानं भवति। श्तायुः पुरुषः श्तेन्द्रियः। आयुंष्येवेन्द्रिये प्रतितिष्ठति। अनिभृष्टम्सीत्यांह। अनिभृष्ट्र् ह्यंतत्। वाचो बन्धुरित्यांह। वाचो ह्यंष बन्धुंः। तृपोजा इत्यांह। तृपोजा ह्यंतत्। सोमंस्य दात्रमसीत्यांह॥३४॥

सोमंस्य ह्यंतद्दात्रम्। शुक्रा वंः शुक्रेणोत्प्नामीत्यांह। शुक्रा ह्यापंः। शुक्र॰ हिरंण्यम्। चन्द्राश्चन्द्रेणेत्यांह। चन्द्रा ह्यापंः। चन्द्र॰ हिरंण्यम्। अमृतां अमृत्नेनत्यांह। अमृता ह्यापंः। अमृत्र हिरंण्यम्॥३५॥

स्वाहां राज्ञसूयायेत्यांह। राज्ञसूयांय ह्यंना उत्पुनाति। स्थमादों द्युम्निनीरूर्ज एता इतिं वारुण्यर्चा गृह्णाति। वरुणस्वमेवावंरुन्थे। एकंया गृह्णाति। एक्धेव यजंमाने वीर्यं द्याति। क्षत्रस्योल्बंमिस क्षत्रस्य योनिर्सीतिं तार्प्यश्चोष्णीषं च प्रयंच्छति सयोनित्वायं। एकंशतेन दर्भपुश्चीलैः पंवयति। श्तायुर्वे पुरुषः श्तवीर्यः। आत्मैकंश्तः॥३६॥

यावांनेव पुरुषः। तस्मिन्वीर्यं दधाति। दध्यांशयति। इन्द्रियमेवावं रुन्धे। उदुम्बरमाशयति। अन्नाद्यस्यावंरुद्धै। शष्पांण्याशयति। सुरांबिलमेवेनं करोति। आविदं एता भेवन्ति। आविदंमेवेनंङ्गमयन्ति॥३७॥

अग्निरेवैनुङ्गार्हंपत्येनावति। इन्द्रं इन्द्रियेणं। पूषा पृश्निः।
मित्रावर्रुणौ प्राणापानाभ्याम्। इन्द्रो वृत्राय वज्रमुदंयच्छत्।
स दिवंमिलेखत्। सौंऽर्यम्णः पन्थां अभवत्। स आवित्रे
द्यावांपृथिवी धृतव्रंते इति द्यावांपृथिवी उपांधावत्। स
आभ्यामेव प्रसूत इन्द्रो वृत्राय वज्रं प्राहंरत्। आवित्रे
द्यावांपृथिवी धृतव्रंते इति यदाहं॥३८॥

आभ्यामेव प्रसूतो यजमानो वज्रं भ्रातृंव्याय प्रहंरति। आविन्ना देव्यदितिर्विश्वरूपीत्यांह। इयं वै देव्यदितिर्विश्वरूपी। अस्यामेव प्रतिं तिष्ठति। आविन्नोऽयम्सावांमुष्यायणौऽस्यां विश्यंस्मित्राष्ट्र इत्यांह। विशेवैन र राष्ट्रेण समंध्यति। महते क्षत्रायं महत आधिपत्याय महते जानराज्यायेत्यांह। आशिषंमेवैतामा शांस्ते। एष वो भरता राजा सोमोऽस्माकं ब्राह्मणानार राजेत्यांह। तस्मात्सोमंराजानो ब्राह्मणाः॥३९॥

इन्द्रंस्य वज्रोऽसि वार्त्रघ्न इति धनुः प्रयंच्छति विजित्यै। श्रृ वार्ष्यं वार्धनाः स्थेतीषूनं। श्रृ वेवास्यं वार्धन्ते। पात मा प्रत्यश्चं पात मा तिर्यश्चं मा पातेत्यांह। तिस्रो व शंर्व्याः। प्रतीची तिरश्च्यनूचीं। ताभ्यं पृवैनं पान्ति। दिग्भ्यो मा पातेत्यांह। दिग्भ्य पृवैनं पान्ति। विश्वाभ्यो मा नाष्ट्राभ्यः। पातेत्यांह। अपंरिमितादेवैनं पान्ति। हिरंण्यवर्णावुषसां विरोक इति त्रिष्ठभां बाहू उद्गृह्णाति। इन्द्रियं व वीर्यन्त्रिष्ठक्। इन्द्रियमेव वीर्यमुपरिष्टादात्मन्यंत्ते॥४०॥

व्यावृत्त्यै दात्रमुसीत्यांहामृत्र् हिरंण्यमेकशृतो गंमयुन्त्याहं ब्राह्मणा नाष्ट्राभ्यः पातेत्यांह चृत्वारिं च॥६॥ [६]

दिशो व्यास्थांपयति। दिशाम्भिजिंत्यै। यदंनु प्रक्रामेंत्। अभि दिशों जयेत्। उत्तु माँद्येत्। मनुसाऽनु प्रक्रांमित। अभि दिशों जयति। नोन्माँद्यति। सुमिधुमा तिष्ठेत्यांह। तेजं एवावंरुन्थे॥४१॥

उग्रामा तिष्ठेत्यांह। इन्द्रियमेवावंरुन्थे। विराज्मातिष्ठेत्यांह। अन्नाद्यंमेवावंरुन्थे। उदीचीमा तिष्ठेत्यांह। पृशूनेवावंरुन्थे। ऊर्ध्वामातिष्ठेत्याह। सुवर्गमेव लोकम्भिजंयति। अनूर्ज्जिहीते। सुवर्गस्यं लोकस्य समेष्ट्यै॥४२॥

मारुत एष भंवति। अत्रं वै मुरुतः। अत्रंमेवावंरुन्थे। एकंविश्शतिकपालो भवति प्रतिष्ठित्यै। योऽरण्येऽनुवाक्यों गणः। तं मध्यत उपंदधाति। ग्राम्येरेव पृशुभिरार्ण्यान्पृशून्परि गृह्णाति। तस्माँद्राम्येः पृशुभिरार्ण्याः पृशवः परिगृहीताः। पृथिर्वैन्यः। अभ्यंषिच्यत॥४३॥

स राष्ट्रन्नाभंवत्। स एतानिं पार्थान्यंपश्यत्। तान्यंजुहोत्। तैर्वे स राष्ट्रमंभवत्। यत्पार्थानिं जुहोतिं। राष्ट्रमेव भंवति। बार्हस्पत्यं पूर्वेषामुत्तमं भंवति। ऐन्द्रमुत्तंरेषां प्रथमम्। ब्रह्मं चैवास्मैं क्षत्रं चं स्मीचीं दधाति। अथो ब्रह्मंत्रेव क्षत्रं प्रतिष्ठापयति॥४४॥

षद्व्रस्तांदिभिषेकस्यं जुहोति। षड्वपिरेष्टात्। द्वादंश् सम्पंद्यन्ते। द्वादंश् मासाः संवत्सरः। संवत्सरः खलु वै दैवानां पूः। देवानांमेव पुरं मध्यतो व्यवंसपिति। तस्य न कृतंश्चनोपांव्याधो भंवति। भूतानामवेष्टीर्जुहोति। अत्रात्र वै मृत्युर्जायते। यत्रयत्रैव मृत्युर्जायते। ततं एवेन्मवयजते। तस्माद्वाज्सूयेनेजानो नाभिचंरित्वै। प्रत्यगेनमभिचारः स्तृंणुते॥४५॥ सोमंस्य त्विषिरस् तवेव मे त्विषिर्भूयादितिं शार्दूलचर्मोपंस्तृणाति। यैव सोमे त्विषिः। या शाँदूले। तामेवावंरुन्थे। मृत्योवां एष वर्णः। यच्छाँदूलः। अमृत्र हिरंण्यम्। अमृतंमसि मृत्योमां पाहीति हिरंण्यमुपाँस्यति। अमृतंमेव मृत्योर्न्तर्धते। शतमानं भवति॥४६॥

श्तायुः पुरुषः श्तेन्द्रियः। आयुंष्येवेन्द्रिये प्रतितिष्ठति। दिद्योन्मां पाहीत्युपरिष्टादिधे निदंधाति। उभयतं एवास्मै शर्म दधाति। अवैष्टा दन्दश्का इति क्रीब॰ सीसेन विध्यति। दन्दश्कांनेवावयजते। तस्मांत्क्रीबन्दंन्दश्का द॰शुंकाः। निरंस्तन्नमुंचेः शिर इति लोहितायसन्निरंस्यति। पाप्मानमेव नमुंचिन्निरवंदयते। प्राणा आत्मनः पूर्वेऽभिषिच्या इत्यांहः॥४७॥

सोमो राजा वर्रणः। दैवा धंर्मसुवंश्च ये। ते ते वाचरं सुवन्तान्ते तें प्राणर सुंवन्तामित्यांह। प्राणानेवात्मनः पूर्वान्भिषिश्चति। यद्भूयात्। अग्नेस्त्वा तेजंसाऽभिषिश्चामीति। तेजस्व्यंव स्यात्। दुश्चर्मा तु भंवेत्। सोमंस्य त्वा द्युम्नेनाभिषिश्चामीत्यांह। सौम्यो वै देवतंया पुरुषः॥४८॥

स्वयैवैनं देवतंयाऽभिषिश्चिति। अग्नेस्तेज्सेत्यांह। तेजं एवास्मिन्दधाति। सूर्यस्य वर्चसेत्यांह। वर्चं एवास्मिन्दधाति। इन्द्रंस्येन्द्रियेणेत्यांह। इन्द्रियमेवास्मिन्दधाति। मित्रावरुणयोवीर्येणेत्यांह वीर्यमेवास्मिन्दधाति। मुरुतामोजुसेत्यांह॥४९॥

ओजं पुवास्मिन्दधाति। क्षुत्राणांङ्क्षुत्रपंतिर्सीत्यांह। क्षुत्राणांमेवेनं क्षुत्रपंतिं करोति। अति दिवस्पाहीत्यांह। अत्यन्यान्पाहीति वावेतदांह। समावंवृत्रन्नध्रागुदींचीरित्यांह। राष्ट्रमेवास्मिन्ध्रुवमंकः। उच्छेषंणेन जुहोति। उच्छेषंणभागो व रुद्रः। भागधेयेंनैव रुद्रन्निरवंदयते॥५०॥

उदं ब्रिंत्याग्री द्धे जुहोति। पृषा वै रुद्रस्य दिक्। स्वायां मेव दिशि रुद्र त्रिरवंदयते। रुद्र यते ऋयी पर्त्रामेत्यां ह। यद्वा अस्य ऋयी पर्त्रामं। तेन वा पृष हिंनस्ति। यश हिनस्ति। तेनै वैन शंमयति। तस्मै हुतमंसि यमेष्टं मुसीत्यां ह। यमादेवास्यं मृत्युमवंयजते॥५१॥

प्रजांपते न त्वदेतान्यन्य इति तस्यै गृहे जुंहुयात्। याङ्कामयेत राष्ट्रमंस्यै प्रजा स्यादिति। राष्ट्रमेवास्यै प्रजा भवति। पूर्णमयेनाध्वर्युर्भिषिश्चिति। ब्रह्मवर्चसमेवास्मिन्त्विषेन्दधाति। औदुंम्बरेण राजन्यः। ऊर्जमेवास्मिन्नन्नाद्यंन्दधाति। आश्वंत्थेन् वैश्यः। विशंमेवास्मिन्पुष्टिन्दधाति। नैयंग्रोधेन् जन्यः। मित्राण्येवास्मै कल्पयति। अथो प्रतिष्ठित्यै॥५२॥

भुवृत्याहुः पुरुषु ओजुसेत्याह निरवंदयते यजते जन्यो द्वे चं॥८॥------[८]

इन्द्रंस्य वज्रोंऽसि वार्त्रघ इति रथंमुपावंहरति विजित्यै। मित्रावरुणयोस्त्वा प्रशास्त्रोः प्रशिषां युनुज्मीत्यांह। ब्रह्मणैवैनं देवतांभ्यां युनक्ति। प्रष्टिवाहिनं युनक्ति। प्रष्टिवाही वै देवर्थः। देवर्थमेवास्मै युनक्ति। त्रयोऽश्वां भवन्ति। रथंश्चतुर्थः। द्वौ संव्येष्ठसारथी। षद्वं पंद्यन्ते॥५३॥

षङ्घा ऋतवंः। ऋतुभिरेवैनं युनक्ति। विष्णुऋमान्क्रंमते। विष्णुरेव भूत्वेमाल्रौंकान्भिजंयति। यः क्ष्तियः प्रतिहितः। सौंऽन्वारंभते। राष्ट्रमेव भंवति। त्रिष्टुभाऽन्वारंभते। इन्द्रियं वै त्रिष्टुक्। इन्द्रियमेव यजंमाने दधाति॥५४॥

म्रुतां प्रस्वे जेष्मित्यांह। म्रुद्धिरेव प्रसूत उज्जयित। आप्तं मन् इत्यांह। यदेव मन्सैप्सीत्। तदांपत्। राजन्यं जिनाति। अनांकान्त पुवाकंमते। वि वा पृष इंन्द्रियेणं वीर्येणर्ध्यते। यो राजन्यं जिनाति। सम्हमिन्द्रियेणं वीर्येणेत्यांह॥५५॥

इन्द्रियमेव वीर्यमात्मन्धंते। पृशूनां मृन्युरंसि तवेव मे मृन्युर्भूयादिति वाराही उपानहावुपं मुश्रते। पृशूनां वा एष मृन्युः। यद्वंराहः। तेनैव पंशूनां मृन्युमात्मन्धते। अभि वा इय स्पुष्वाणङ्कांमयते। तस्येश्वरेन्द्रियं वीर्यमादांतोः। वाराही उपानहावुपंमुश्रते। अस्या एवान्तर्धत्ते। इन्द्रियस्यं वीर्यस्यानांत्ये॥५६॥

नमों मात्रे पृंथिव्या इत्याहाहि १ सायै। इयंद्स्यायुंर्स्यायुंर्मे धेहीत्यांह। आयुंरेवात्मन्धंत्ते। ऊर्ग्स्यूर्जं मे धेहीत्यांह।

ऊर्जमेवात्मन्धेत्ते। युङ्कांसि वर्चोसि वर्ची मिये धेहीत्यांह। वर्च एवात्मन्धेत्ते। एक्धा ब्रह्मण उपंहरति। एक्धेव यर्जमान् आयुरूर्जं वर्चो दधाति। रथविमोचनीयां जुहोति प्रतिष्ठित्ये॥५७॥

त्रयोऽश्वां भवन्ति। रथंश्चतुर्थः। तस्मांचतुर्जुहोति। यदुभौ सहावतिष्ठंताम्। समानं लोकिमंयाताम्। सह संङ्ग्रहीत्रा रथवाहंने रथमादंधाति। सुवर्गादेवैनं लोकादन्तर्दधाति। हुर्सः श्रुंचिषदित्यादंधाति। ब्रह्मणैवैनंमुपावहरंति। ब्रह्मणाऽऽदंधाति। अतिंच्छन्दसाऽऽदंधाति। अतिंच्छन्दा वै सर्वाणि छन्दार्शसे। सर्वेभिरेवैन्ञ्छन्दोभिरादंधाति। वर्ष्म् वा एषा छन्दंसाम्। यदतिंच्छन्दाः। यदतिंच्छन्दसा दधांति। वर्ष्म् वर्ष्मेवैन समानानां करोति॥५८॥

पुद्यन्ते दुधाति वीर्येणेत्याहानाँत्ये प्रतिष्ठित्ये ब्रह्मणाऽऽदंधाति सप्त चं॥९॥————[९]

मित्रोंऽसि वर्रुणोऽसीत्याह। मैत्रं वा अहंः। वारुणी रात्रिः। अहोरात्राभ्यांमेवनंमुपावंहरति। मित्रोंऽसि वर्रुणोऽसीत्यांह। मैत्रो व दक्षिणः। वारुणः सुव्यः। वैश्वदेव्यांमिक्षां। स्वमेवनौं भागधेयंमुपावंहरति। समहं विश्वैदिवरित्यांह॥५९॥

वैश्वदेव्यों वै प्रजाः। ता पुवाद्याः कुरुते। क्षत्रस्य नाभिंरसि क्षत्रस्य योनिंर्सीत्यंधीवासमास्तृंणाति सयोनित्वायं। स्योनामा सींद सुषदामा सीदेत्यांह। यथायजुरेवैतत्। मा त्वां हिश्सीन्मा मां हिश्सीदित्याहाहिश्सायै। निषंसाद धृतव्रंतो वरुंणः पुस्त्यांस्वा साम्रांज्याय सुक्रतुरित्यांह। साम्रांज्यमेवैनश् सुक्रतुं करोति। ब्रह्मा(३)न्त्वश् रांजन्ब्रह्माऽसिं सविताऽसिं सृत्यसंव इत्यांह। सवितारंमेवैनश्सत्यसंवं करोति॥६०॥

ब्रह्मा(३)न्त्व र रांजन्ब्रह्माऽसीन्द्रोंऽसि सृत्यौजा इत्यांह। इन्द्रंमेवैन र सृत्यौजंसं करोति। ब्रह्मा(३)न्त्व र रांजन्ब्रह्माऽसिं मित्रोंऽसि सुशेव इत्यांह। मित्रमेवैन र सुशेवं करोति। ब्रह्मा(३)न्त्व र रांजन्ब्रह्मासि वरुंणोऽसि सृत्यधूर्मेत्यांह। वरुंणमेवैन र सृत्यधूर्माणं करोति। सृविताऽसिं सृत्यसंव इत्यांह। गायत्रीमेवैतेनांभि व्याहंरित। इन्द्रोंऽसि सृत्यौजा इत्यांह। त्रिष्टुभंमेवैतेनांभि व्याहंरित॥६१॥

मित्रोंऽसि सुशेव इत्यांह। जगंतीमेवैतेनांभि व्याहंरति। सत्यमेता देवताः। सत्यमेतानि छन्दा रेसि। सत्यमेवावंरुन्थे। वर्रुणोऽसि सत्यधुर्मेत्यांह। अनुष्टुर्भमेवैतेनांभि व्याहंरति। सत्यानृते वा अनुष्टुप्। सत्यानृते वर्रुणः। सत्यानृते एवावंरुन्थे॥६२॥

नैन रे सत्यानृते उंदिते हि इंस्तः। य एवं वेदं। इन्द्रंस्य वज्रों ऽसि वार्त्रघ्न इति स्प्यं प्रयंच्छति। वज्रो वै स्प्यः। वज्रेणैवास्मां अवरपुर १ रन्धयति। एव १ हि तच्छ्रेयः। यदंस्मा पृते रध्येयुः। दिशोऽभ्यंय र राजांऽभूदिति पश्चाक्षान्प्रयंच्छित।
पृते वै सर्वेऽयाः। अपंराजायिनमेवेनं करोति॥६३॥
ओद्नमुद्धुंवते। प्रमेष्ठी वा एषः। यदोद्नः। प्रमामेवेन् इं
श्रियंङ्गमयित। सुश्लोकाँ (४) सुमंङ्गलाँ (४) सत्यराजा (३)
नित्यांह। आशिषंमेवेतामा शांस्ते। शौनः शेपमाख्यांपयते।
वरुणपाशादेवेनं मुश्रिति। प्रः शतं भवित। शतायुः
पुरुषः शतेन्द्रियः। आयुंष्येवेन्द्रिये प्रतिं तिष्ठति। मारुतस्य
चैकंविश्शितकपालस्य वैश्वदेव्यै चामिक्षांया अग्नये
स्वष्टकृतं समवंद्यति। देवतांभिरेवेनंमुभ्यतः परि गृह्णाति।
अपान्नश्रे स्वाहोर्जो नश्रे स्वाहाऽग्नये गृहपंतये स्वाहेतिं
तिस्र आहंतीर्जुहोति। त्रयं इमे लोकाः। एष्वंव लोकेषु प्रतिं
तिष्ठति॥६४॥

देवैरित्यांह स्त्यसंवं करोति त्रिष्टुभंमेवैतेनांभि व्याहंरित सत्यानृते एवावंरुन्धे करोति श्तेन्द्रियण्यट् चं॥१०॥————[१०]

पृतद्वाँह्मणानि धात्रे रित्तनाँन्देवसुवाम्र्थेतो देवीर्दिशः सोम्स्येन्द्रंस्य मित्रो दर्श॥१०॥ पृतद्वाँह्मणानि वैष्ण्वित्रंकपालमन्नं वै पूषा वाशाः स्थेत्यांह् दिशो व्यास्थांपयृत्युदंबुरेत्य ब्रह्मा ३ न्त्व॰ रांजुङ्श्चतुंष्पष्टिः॥६४॥

पुतद्वाँह्मणानि प्रतितिष्ठति॥

हरिः ओम्॥ ॥इति श्रीकृष्णयजुर्वेदीयतैत्तिरीयब्राह्मणे प्रथमाष्टके सप्तमः प्रपाठकः समाप्तः॥

॥अष्टमः प्रश्नः॥

॥ तैत्तिरीयब्राह्मणे प्रथमाष्टके अष्टमः प्रपाठकः॥

वर्रणस्य सुषुवाणस्यं दश्धेन्द्रियं वीर्यं परांऽपतत्। तत्स्र सृद्धिरन् समंसर्पत्। तत्स्र सृपारं सरसृत्वम्। अग्निनां देवेनं प्रथमेऽह्न्ननु प्रायुंङ्कः। सरस्वत्या वाचा द्वितीर्यं। स्वित्रा प्रंस्वेनं तृतीर्यं। पूष्णा प्रशुभिश्चतुर्थे। बृह्स्पतिना ब्रह्मंणा पश्चमे। इन्द्रेंण देवेनं षष्ठे। वर्रुणेन् स्वयां देवत्या सप्तमे॥१॥

सोमेन राज्ञांऽष्ट्रमे। त्वष्ट्रां रूपेणं नव्मे। विष्णुंना यज्ञेनांप्रोत्। यत्स्रस्पृपो भवंन्ति। इन्द्रियमेव तद्वीर्यं यज्ञंमान आप्रोति। पूर्वापूर्वा वेदिर्भवति। इन्द्रियस्यं वीर्यस्यावंरुख्ये। पुरस्तांदुप्सदार् सौम्येन प्रचंरति। सोमो वै रेतोधाः। रेतं एव तद्दंधाति। अन्त्ररा त्वाष्ट्रेणं। रेतं एव हितन्त्वष्टां रूपाणि विकंरोति। उपरिष्टाद्वैष्ण्वेनं। यज्ञो वै विष्णुंः। यज्ञ एवान्ततः प्रतिं तिष्ठति॥२॥

सुपुमे देधाति पर्श्व च॥१॥————[१]

जामि वा एतत्कुंर्वन्ति। यत्मद्यो दीक्षयंन्ति सद्यः सोमं क्रीणन्ति। पुण्डरिस्रजां प्रयंच्छत्यजामित्वाय। अङ्गिरसः सुवर्गं लोकं यन्तिः। अप्सु दीक्षात्पसी प्रावेशयन्। तत्पुण्डरीकमभवत्। यत्पुण्डरिस्रजां प्रयच्छंति। साक्षादेव दींक्षात्पर्सी अवंरुन्धे। दुशभिंवत्सत्रैः सोमंं क्रीणाति। दशांक्षरा विराट्॥३॥

अन्नं विराट्। विराजैवान्नाद्यमवं रुन्थे। मुष्करा भविन्ति सेन्द्रत्वायं। दशपेयों भवित। अन्नाद्यस्यावंरुद्धै। शृतं ब्राँह्मणाः पिंबन्ति। शृतायुः पुरुषः शृतेन्द्रियः। आयुंष्येवेन्द्रिये प्रतितिष्ठति। स्प्तदशः स्तोत्रं भविति। स्प्तदशः प्रजापंतिः॥४॥

प्रजापंतेरास्यै। प्राकाशाविध्वर्यवे ददाति। प्रकाशमेवैनंङ्गमयति। स्रजंमुद्गात्रे। व्येवास्मैं वासयति। रुकार होत्रैं। आदित्यमेवास्मा उन्नयति। अर्थं प्रस्तोतृप्रतिहुर्तृभ्याम्। प्राजापत्यो वा अर्थः। प्रजापंतेरास्यै॥५॥

द्वादंश पष्टौहीर्ब्रह्मणें। आयुंरेवावंरुन्धे। वृशां मैंत्रावरुणायं। राष्ट्रमेव वृश्यंकः। ऋष्मं ब्राह्मणाच्छु १ सिनें। राष्ट्रमेवेन्द्रियाव्यंकः। वासंसी नेष्टापोतुभ्याम्। प्वित्रे एवास्यैते। स्थूरिं यवाचितमंच्छावाकायं। अन्तृत एव वरुणमवं यजते॥६॥

अनङ्गाहं मृग्नीधं। विह्नुर्वा अनुङ्गान्। विह्नं रृग्नीत्। विह्नं विह्नं यज्ञस्यावं रुन्धे। इन्द्रंस्य सुषुवाणस्यं त्रेधेन्द्रियं वीर्यं परांऽपतत्। भृगुस्तृतीयमभवत्। श्रायन्तीयन्तृतीयम्। सरंस्वती तृतीयम्। भार्गवो होतां भवति। श्रायन्तीयं ब्रह्मसामं भंवति। वार्वन्तीयंमग्निष्टोमसामम्। सार्स्वतीर्पो गृह्णाति।

इन्द्रियस्यं वीर्यस्यावंरुद्धै। श्रायन्तीयं ब्रह्मसामं भंवति। इन्द्रियमेवास्मिन्वीर्यं श्रयति। वार्वन्तीयंमग्निष्टोमसामम्। इन्द्रियमेवास्मिन्वीर्यं वारयति॥७॥

विराद्गजापंतिरश्वः प्रजापंतेरास्यै यजते ब्रह्मसामं भवति सप्त चं॥२॥_____[२]

ईश्वरो वा एष दिशोऽनून्मंदितोः। यन्दिशोऽनुं व्यास्थापयंन्ति। दिशामवेष्टयो भवन्ति। दिश्वेव प्रतिं तिष्ठत्यनुंन्मादाय। पश्चं देवतां यजित। पश्च दिशंः। दिश्वेव प्रतिं तिष्ठति। हिवषोहिवष इष्ट्वा बांर्हस्पत्यम्भिघांरयति। यज्मानदेवत्यों व बृहस्पतिः। यजमानमेव तेजंसा समर्धयति॥८॥

आदित्यां मृल्हाङ्गर्भिणीमा लंभते। मारुतीं पृश्विं पष्टौहीम्। विशं चैवास्मे राष्ट्रं चं स्मीचीं दधाति। आदित्यया पूर्वया प्रचंरति। मारुत्योत्तंरया। राष्ट्र एव विश्वमनुंबध्नाति। उचैरादित्याया आश्वांवयति। उपार्शु मारुत्ये। तस्मौद्राष्ट्रं विशमतिंवदति। गर्भिण्यांदित्या भवति॥९॥

इन्द्रियं वै गर्भः। राष्ट्रमेवेन्द्रियाव्यंकः। अगुर्भा मांकृती। विश्वे मुरुतः। विश्वंमेव निरिन्द्रियामकः। देवासुराः संयंत्ता आसन्। ते देवा अश्विनौः पूषन्वाचः सृत्यः संत्रिधायं। अनृतेनासुरान्भ्यंभवन्। तैंऽश्विभ्यां पूष्णे पुरोडाशं द्वादंशकपालं निर्वपन्। ततो वै ते वाचः सृत्यमवांरुन्थत॥१०॥

यद्श्विभ्यां पूष्णे पुरोडाशुं द्वादेशकपालन्निर्वपति। अनृतेनैव भ्रातृंव्यानभिभूयं। वाचः सत्यमवंरुन्धे। सरंस्वते सत्यवाचे चरुम्। पूर्वमेवोदितम्। उत्तंरेणाभि गृंणाति। सवित्रे सत्यप्रसवाय पुरोडाशं द्वादंशकपालं प्रसूत्यै। दूतान्प्रहिणोति। आविदं पुता भवन्ति। आविदंमेवेनंङ्गमयन्ति। अथों दूतेभ्यं एव न छिंद्यते। तिसृधन्व शुंष्कदितिर्दक्षिणा समृद्धौ॥११॥

अर्धयति भवत्यरुन्धत गमयन्ति द्वे चं॥३॥।

आग्नेयमष्टाकंपालं निर्वपति। तस्माच्छिशिरे कुरुपश्चालाः प्राश्ची यान्ति। सौम्यश्चरुम्। तस्मौद्धसन्तं व्यवसायादयन्ति। सावित्रं द्वादेशकपालम्। तस्मौत्पुरस्ताद्यवानाः सवित्रा विरुम्धते। बार्हस्पत्यश्रुरुम्। सुवित्रैव विरुध्यं। ब्रह्मणा यवानादंधते। त्वाष्ट्रमष्टाकंपालम्॥१२॥

रूपाण्येव तेनं कुर्वते। वैश्वानरं द्वादंशकपालम्। तस्मां ज्ञघन्यं नैदांघे प्रत्यर्श्वः कुरुपश्चाला याँन्ति। सारस्वतश्चरित्रवंपति। तस्मौत्प्रावृषि सर्वा वाचों वदन्ति। पौष्णेन व्यवंस्यन्ति। मैत्रेणं कृषन्ते। वारुणेन विधृंता आसते। क्षेत्रपत्येनं पाचयन्ते। आदित्येनादंधते॥१३॥

मासिमाँ स्येतानि हवी १ विं निरुप्याणीत्यां हुः। तेनै वर्तू न्प्रयुंङ्क इतिं। अथो खल्वांहुः। कः संवत्सरश्जीविष्यतीतिं। षडेव पूँर्वेद्युर्निरुप्यांणि। षडुंत्तरेद्युः। तेनैवर्तून्प्रयुंङ्के।

दक्षिणो रथवाहनवाहः पूर्वेषां दक्षिणा। उत्तर् उत्तरेषाम्। संवृत्सरस्यैवान्तौ युनक्ति। सुवृर्गस्यं लोकस्य समेष्ठ्यै॥१४॥ लाष्ट्रमष्टाकंपालन्दधते युनक्तोकं च॥४॥

इन्द्रंस्य सुषुवाणस्यं दश्धेन्द्रियं वीर्यं परांऽपतत्। स यत्प्रंथमन्त्रिरष्ठीवत्। तत्क्वंलमभवत्। यद्वितीयम्। तद्वदंरम्। यत्तृतीयम्। तत्कुर्कन्धुं। यन्नुस्तः। स सि्र्हः। यदक्ष्यौः॥१५॥

स शाँदूलः। यत्कर्णयोः। स वृकंः। य ऊर्धः। स सोमंः। याऽवांची। सा सुराँ। त्रयाः सक्तंवो भवन्ति। इन्द्रियस्यावंरुद्धौ। त्रयाणि लोमांनि॥१६॥

त्विषिमेवावंरुन्थे। त्रयो ग्रहाः। वीर्यमेवावंरुन्थे। नाम्नां दश्मी। नव वै पुरुषे प्राणाः। नाभिर्दश्मी। प्राणा इन्द्रियं वीर्यम्। प्राणानेवन्द्रियं वीर्यं यजमान आत्मन्धत्ते। सीसेन क्रीबाच्छष्पाणि क्रीणाति। न वा पृतदयो न हिरंण्यम्॥१७॥ यत्सीसम्। न स्त्री न पुमान्। यत्क्रीबः। न सोमो न सुरा। यत्सीत्रामणी समृंद्धौ। स्वाद्वीन्त्वां स्वादुनेत्यांह। सोमंमेवैनां करोति। सोमोंऽस्यश्विभ्यां पच्यस्व सरंस्वत्यै पच्यस्वेन्द्रांय सुत्राम्णे पच्यस्वेत्यांह। पृताभ्यो ह्यंषा देवतांभ्यः पच्यंते। तिस्रः स॰सृंष्टा वसति॥१८॥

तिस्रो हि रात्रीः ऋीतः सोमो वसंति। पुनातुं ते परिस्रुतमिति यजुंषा पुनाति व्यावृंत्त्यै। पुवित्रेण पुनाति। पुवित्रेण हि सोमं पुनिन्ति। वारेण शश्वंता तनेत्यांह। वारेण हि सोमं पुनिन्ति। वायुः पूतः पवित्रेणेति नैतयां पुनीयात्। व्यृंद्धा ह्यंषा। अतिपवितस्यैतयां पुनीयात्। कुविद्ङ्गेत्यनिरुक्तया प्राजापत्ययां गृह्णाति॥१९॥

अनिरुक्तः प्रजापितः। प्रजापितेरास्यै। एकंयुर्चा गृह्णाति। एक्धेव यजमाने वीर्यं दधाति। आश्विनन्धूम्रमालंभते। अश्विनौ वै देवानां भिषजौं। ताभ्यांमेवास्में भेषजं कंरोति। सार्स्वतं मेषम्। वाग्वै सर्रस्वती। वाचैवैनं भिषज्यति। ऐन्द्रमृष्भ सैन्द्रत्वायं॥२०॥

अक्ष्योर्लोमानि हिरंण्यं वसति गृह्णाति भिषज्युत्येकं च॥५॥—————[५]

यत्रिषु यूपेष्वालभेत। बृहिर्धाऽस्मांदिन्द्रियं वीर्यं दध्यात्। भ्रातृंव्यमस्मै जनयेत्। एक्यूप आलंभते। एक्षेवास्मिन्निन्द्रियं वीर्यं दधाति। नास्मै भ्रातृंव्यञ्जनयित। नेतेषां पशूनां पुरोडाशां भवन्ति। ग्रहंपुरोडाशां ह्यंते। युवः सुरामंमिश्वनेतिं सर्वदेवत्यं याज्यानुवाक्यं भवतः। सर्वा एव देवताः प्रीणाति॥२१॥

ब्राह्मणं परिक्रीणीयादुच्छेषंणस्य पातारम्ं। ब्राह्मणो ह्याहुंत्या उच्छेषंणस्य पाता। यदिं ब्राह्मणन्न विन्देत्। वल्मीक्वपायामवं नयेत्। सैव ततः प्रायंश्चित्तिः। यद्वै सौत्रामण्ये व्यृद्धम्। तदंस्यै समृद्धम्। नानादेवृत्याः पृशवंश्च पुरोडाशाँश्च भवन्ति समृद्धै। ऐन्द्रः पंशूनामृत्तमो भवति। ऐन्द्रः पुरोडाशानां प्रथमः॥२२॥

इन्द्रिये एवास्मैं समीचीं दधाति। पुरस्तांदनूयाजानां पुरोडाशैः प्रचंरति। पृशवो वै पुरोडाशौः। पृशूनेवावं रुन्धे। ऐन्द्रमेकांदशकपालं निर्वपति। इन्द्रियमेवावं रुन्धे। सावित्रं द्वादंशकपालं प्रसूत्यै। वारुणन्दशंकपालम्। अन्तृत एव वर्रणमवं यजते। वर्डंबा दक्षिणा॥२३॥

उत वा एषाऽश्वर्थ सूते। उताऽश्वंतरम्। उत सोमं उत सुराँ। यत्सौँत्रामणी समृंद्धौ। बार्ह्स्पत्यं पृशूं चंतुर्थमंतिपवितस्या लंभते। ब्रह्म वे देवानां बृह्स्पतिंः। ब्रह्मणैव यज्ञस्य व्यृंद्धमिपं वपति। पुरोडाशंवानेष पृशुर्भवित। न ह्यंतस्य ग्रहं गृह्णन्तिं। सोमंप्रतीकाः पितरस्तृण्णुतेतिं शतातृण्णायारं समवंनयित॥२४॥

श्वायुः पुरुषः श्वेन्द्रियः। आयुंष्येवेन्द्रिये प्रतिंतिष्ठति। दक्षिणेऽग्नौ जुंहोति। पापवस्यसस्य व्यावृत्त्यै। हिरंण्यमन्तरा धारयति। पूतामेवैनां जुहोति। श्वतमानं भवति। श्वायुः पुरुषः श्वेन्द्रियः। आयुंष्येवेन्द्रिये प्रतिंतिष्ठति। यत्रैव श्वेतातृण्णान्धारयंति॥२५॥

तन्निदंधाति प्रतिष्ठित्यै। पितृन् वा एतस्यैन्द्रियं वीर्यं गच्छति। य सोमोऽति पवंते। पितृणां यौज्यानुवाक्यांभिरुपं तिष्ठते।

यदेवास्यं पितृनिन्द्रियं वीर्यं गच्छंति। तदेवावं रुन्थे। तिसृभिरुपं तिष्ठते। तृतीये वा इतो लोके पितरंः। तानेव प्रीणाति। अथो त्रीणि वै यज्ञस्यैन्द्रियाणिं। अध्वर्युर्होतां ब्रह्मा। त उपंतिष्ठन्ते। यान्येव यज्ञस्यैन्द्रियाणिं। तैरेवास्मैं भेषजं करोति॥२६॥

प्रीणाति प्रथमो दक्षिणा समवंनयति धारयंतीन्द्रियाणि चत्वारिं च $\| \epsilon \|$

अग्निष्टोममग्र आहंरति। यज्ञमुखं वा अंग्निष्टोमः। यज्ञमुखमेवारभ्यं स्वमा क्रमते। अथैषोंऽभिषेचनीयंश्चतुस्त्रिष्ट्शपंवः भवति। त्रयंस्त्रिष्श्दे देवताः। ता पुवाप्नोति। प्रजापंतिश्चतुस्त्रिष्ट्शः। तमेवाप्नोति। स्र्श्र एष स्तोमानामयंथापूर्वम्। यद्विषंमाः स्तोमाः॥२७॥

पृतावान् वै युज्ञः। यावान्यवंमानाः। अन्तः श्लेषंणन्त्वा अन्यत्। यत्समाः पर्वमानाः। तेनाऽसर्श्शरः। तेनं यथापूर्वम्। आत्मनैवाग्निष्टोमेनुर्प्नोतिं। आत्मना पुण्यो भवति। प्रजा वा उक्थानिं। पृशवं उक्थानिं। यदुक्थ्यों भवत्यन् सन्तंत्त्यै॥२८॥

स्तोमाँः पुशर्व उक्थान्येकं च॥७॥-----[७]

उपं त्वा जामयो गिर् इतिं प्रतिपद्भवित। वाग्वै वायुः। वाच एवैषों ऽभिषेकः। सर्वासामेव प्रजाना र सूयते। सर्वा एनं प्रजा राजेतिं वदन्ति। एतमु त्यन्दश् क्षिप् इत्यांह। आदित्या वै प्रजाः। प्रजानांमेवेतेनं सूयते। यन्ति वा एते यंज्ञमुखात्। ये संम्भार्या अऋन्॥२९॥

यदाह् पर्वस्व वाचो अंग्रिय् इति। तेनैव यंज्ञमुखान्नयंन्ति। अनुष्टुक्प्रंथमा भवति। अनुष्टुगुंत्तमा। वाग्वा अनुष्टुक्। वाचैव प्रयन्ति। वाचोद्यंन्ति। उद्वंतीर्भवन्ति। उद्वद्वा अनुष्टुभों रूपम्। आनुष्टुभो राजुन्यः॥३०॥

तस्मादुद्वंतीर्भवन्ति। सौर्यनुष्टुगुंत्तमा भंवति। सुवर्गस्यं लोकस्य सन्तंत्यै। यो वै स्वादेतिं। नैनर्ं स्व उपनमित। यः सामंभ्य एतिं। पापींयान्त्सुषुवाणो भंवति। एतानि खलु वै सामानि। यत्पृष्ठानिं। यत्पृष्ठानि भवन्ति॥३१॥

तैर्व स्वान्नैतिं। यानिं देवराजाना् सामानि। तैर्मुष्मिं ह्याँक ऋंध्रोति। यानिं मनुष्यराजाना् सामानि। तैर्स्मिह्याँक ऋंध्रोति। उभयोर्व लोकयोर् ऋध्रोति। देवलोके चं मनुष्यलोके चं। एकवि शोंऽभिषेचनीयंस्योत्तमो भंवति। एकवि शां अध्याः। सप्तद्शो दंशपेयंः॥३२॥

विङ्वा एंकविष्शः। राष्ट्र संप्तद्शः। विशं एवैतन्मंध्यतों ऽभिषिंच्यते। तस्माद्वा एष विशां प्रियः। विशो हि मध्यतों ऽभिषिच्यतें। यद्वा एंनम्दो दिशोऽनुं व्यास्थापयंन्ति। तत्सुंवर्गल्लोकम्भ्या रोहित। यदिमल्लोंकन्न प्रत्यवरोहेंत्। अतिजनं वेयात्। उद्वां माद्येत्। यदेष प्रतीचीनः स्तोमो भवंति। इममेव तेनं लोकं प्रत्यवरोहित। अथों अस्मिन्नेव लोके प्रतिं तिष्ठत्यनुन्मादाय॥३३॥

अर्ऋत्राजुन्यों भवंन्ति दशुपेयों माद्येत्रीणिं च॥८॥—————[८]

इयं वै रंज्ता। असौ हरिणी। यद्रुक्मौ भवंतः। आभ्यामेवैनंमुभ्यतः पिरं गृह्णाति। वर्रुणस्य वा अभिष्च्यमांनस्यापः। इन्द्रियं वीर्यन्तिरंघ्रन्। तत्सुवर्ण् हर्रण्यमभवत्। यद्रुक्ममंन्तर्दधांति। इन्द्रियस्यं वीर्यस्यानिर्घाताय। श्तमांनो भवति शतक्षंरः। श्तायुः पुरुषः श्तेन्द्रियः। आयुंष्येवेन्द्रिये प्रतितिष्ठति। आयुर्वे हिर्ण्यम्। आयुष्यां पृवेनंमुभ्यति क्षरन्ति। तेजो वे हिर्ण्यम्। तेज्रस्यां पृवेनंमुभ्यति क्षरन्ति। वर्चो वे हिर्ण्यम्। वर्चस्यां पृवेनंमुभ्यति क्षरन्ति। वर्चो वे हिर्ण्यम्। वर्चस्यां पृवेनंमभ्यति क्षरन्ति॥ ३४॥

युतक्षेरोऽष्टौ चं॥९॥------

-[3]

अप्रंतिष्ठितो वा एष इत्यांहुः। यो रांजुसूयेंन यर्जत् इतिं। यदा वा एष एतेनं द्विरात्रेण् यर्जते। अथं प्रतिष्ठा। अथं संवत्सरमाप्नोति। यावंन्ति संवत्सरस्यांहोरात्राणि। तावंतीरेतस्यं स्तोत्रीयाः। अहोरात्रेष्वेव प्रतिं तिष्ठति। अग्निष्टोमः पूर्वमहंर्भवति। अतिरात्र उत्तरम्॥३५॥ नानैवाहोरात्रयोः प्रतिं तिष्ठति। पौर्णमास्यां पूर्वमहंर्भवति। व्यष्टकायामुत्तंरम्। नानैवार्धमासयोः प्रतिंतिष्ठति। अमावास्यांयां पूर्वमहंर्भवति। उद्दृष्ट उत्तरम्। नानैव मासयोः प्रतिंतिष्ठति। अथो खलुं। ये एव संमानपक्षे पुंण्याहे स्यातांम्। तयोः कार्यं प्रतिष्ठित्ये॥३६॥ अपृश्व्यो द्विरात्र इत्यांहुः। द्वे ह्यंते छन्दंसी। गायत्रं च त्रेष्टुंभं च। जगंतीमन्तर्यन्ति। न तेन जगंती कृतत्यांहुः। यदंनान्तृतीयसवने कुर्वन्तीतिं। यदा वा पृषाऽहीनस्याहुर्भजंते। साह्रस्यं वा सर्वनम्। अथैव जगंती कृता। अथं पश्व्यंः। व्युंष्टि्वा पृष द्विरात्रः। य पृवं विद्वान्द्विरात्रेण यजंते। व्येवास्मां उच्छति। अथो तमं पृवापं हते। अग्निष्टोममन्तत आ हंरति। अग्निः सर्वा देवताः। देवतांस्वेव प्रतिं तिष्ठति॥३७॥

उत्तंरं प्रतिष्ठित्ये पश्च्यः सप्त चं॥१०॥**=[१०]** वर्रुणस्य जामि वा ईंश्वर आंश्रेयिमन्द्रंस्य यित्रिष्वंग्रिष्टोममुपं त्वेयं वे रंज्ताऽप्रंतिष्ठितो दर्श॥१०॥ वर्रुणस्य यद्श्विभ्यां यित्रेषु तस्मादुर्द्वतीः सप्तित्रिर्श्शत्॥३७॥ वर्रुणस्य प्रतितिष्ठति॥

हरिः ओम्॥ ॥इति श्रीकृष्णयजुर्वेदीयतैत्तिरीयब्राह्मणे प्रथमाष्टके अष्टमः प्रपाठकः समाप्तः॥

॥ अष्टकम् २॥

॥प्रथमः प्रश्नः॥

॥ तैत्तिरीयब्राह्मणे द्वितीयाष्टके प्रथमः प्रपाठकः॥

अङ्गिरसो वै स्त्रमांसत। तेषां पृश्चिर्धर्मधुगांसीत्। सर्जीषणांजीवत्। तेंऽब्रुवन्। कस्मै नु स्त्रमांस्महे। येंऽस्या ओषधीर्न जनयांम् इतिं। ते दिवो वृष्टिमसृजन्त। यावंन्तः स्तोका अवापंद्यन्त। तावंतीरोषंधयोऽजायन्त। ता जाताः पितरों विषेणांलिम्पन्॥१॥

तासाँ अध्या रुप्यन्त्येत्। तेँ ऽब्रुवन्। क इदिमृत्थमं करिति। वयं भागधेयं मिच्छमाना इति पितरौँ ऽब्रुवन्। किं वों भागधेयमिति। अग्निहोत्र एव नो ऽप्यस्त्वत्यं ब्रुवन्। तेभ्यं एतद्भां गुधेयं प्रायंच्छन्। यद्भुत्वा निमार्ष्टि। ततो वै त ओषंधीरस्वदयन्। य एवं वेदं॥२॥

स्वदंन्तेऽस्मा ओषंधयः। ते वृत्समुपावांसृजन्। इदं नों हृव्यं प्रदांप्येतिं। सौंऽब्रवीद्वरं वृणे। दशं मा रात्रींर्जातन्न दोहन्। आसङ्गवं मात्रा सह चंराणीतिं। तस्मांद्वत्सञ्जातन्दश् रात्रीर्न दुहन्ति। आसङ्गवं मात्रा सह चंरति। वारेवृत्र् ह्यंस्य। तस्मांद्वत्स संस्पृष्टध्य रुद्रो घातुंकः। अति हि सन्धान्धयंति॥३॥

प्रजापंतिर्शिमंसृजत। तं प्रजा अन्वंसृज्यन्त। तमंभाग उपाँस्त। सौंऽस्य प्रजाभिरपाँकामत्। तमंवरुरुंत्समानोऽन्वैत्। तमंवरुधन्नाशंक्रोत्। स तपोंऽतप्यत। सौंऽग्निरुपांरम्तातांपि वै स्य प्रजापंतिरितिं। स रराटादुदंमृष्ट॥४॥

तद्धृतमंभवत्। तस्माद्यस्यं दक्षिणतः केशा उन्मृंष्टाः। ताञ्चेष्ठलक्ष्मी प्रांजापृत्येत्यांहुः। यद्रराटांदुदमृष्ट। तस्मांद्रराटे केशा न संन्ति। तद्ग्रौ प्रागृंह्णात्। तद्यंचिकित्सत्। जुहवानी ३ मा हौषा ३ मितिं। तद्विंचिकित्सायै जन्मं। य एवं विद्वान् विंचिकित्संति॥५॥

वसीय एव चेतयते। तं वाग्भ्यंवदञ्जुहुधीतिं। सौंऽब्रवीत्। कस्त्वम्सीतिं। स्वैव ते वागित्यंब्रवीत्। सोंऽजुहोत्स्वाहेतिं। तत्स्वांहाकारस्य जन्मं। य एव इस्वांहाकारस्य जन्म वेदं। क्रोतिं स्वाहाकारेणं वीर्यम्। यस्यैवं विदुषंः स्वाहाकारेण जुह्वंति॥६॥

भोगांयैवास्यं हुतं भंवति। तस्या आहुंत्यै पुरुषमसृजत। द्वितीयंमजुहोत्। सोऽश्वंमसृजत। तृतीयंमजुहोत्। स गामंसृजत। चृतुर्थमंजुहोत्। सोऽविंमसृजत। पृश्रृममंजुहोत्। सोऽजामंसृजत॥७॥

सौंऽग्निरंबिभेत्। आहुंतीभिवैं मांऽऽप्नोतीतिं। स प्रजापंतिं पुनः प्राविंशत्। तं प्रजापंतिरब्रवीत्। जायुस्वेतिं। सौंऽब्रवीत्। किं भांगुधेयंमुभि जंनिष्य इतिं। तुभ्यंमेवेद हूंयाता इत्यंब्रवीत्। स पृतद्भांग्धेयंम्भ्यंजायतः। यदंग्निहोत्रम्॥८॥ तस्मांदग्निहोत्रमुंच्यते। तद्धूयमांनमादित्यौंऽब्रवीत्। मा हौंषीः। उभयोर्वे नांवेतदितिं। सौंऽग्निरंब्रवीत्। कथन्नौं होष्यन्तीतिं। सायमेव तुभ्यं जुहुवन्ं। प्रातर्मह्यमित्यंब्रवीत्। तस्मांदग्नयं साय हूंयते। सूर्याय प्रातः॥९॥

आग्नेयी वै रात्रिः। ऐन्द्रमहंः। यदनंदिते सूर्ये प्रातर्जुहुयात्। उभयंमेवाग्नेय स्यात्। उदिते सूर्ये प्रातर्जुहोति। तथाग्नयं साय ह्यते। सूर्याय प्रातः। रात्रिं वा अनुं प्रजाः प्र जांयन्ते। अहा प्रतिं तिष्ठन्ति। यत्सायं जुहोति॥१०॥

प्रैव तेनं जायते। उदिते सूर्यें प्रातर्जुहोति। प्रत्येव तेनं तिष्ठति। प्रजापंतिरकामयत् प्रजायेयेति। स एतदिग्निहोत्रं मिथुनमपश्यत्। तदुदिते सूर्येऽजुहोत्। यजुंषाऽन्यत्। तूष्णीम्न्यत्। ततो व स प्राजायत। यस्यैवं विदुष् उदिते सूर्येऽग्निहोत्रं जुह्वंति॥११॥

प्रैव जांयते। अथो यथा दिवाँ प्रजानन्नेतिं। ताहगेव तत्। अथो खल्वांहुः। यस्य वै द्वौ पुण्यौं गृहे वसंतः। यस्तयोर्न्य श्र् राधयंत्यन्यन्न। उभौ वाव स तावृच्छ्तीतिं। अग्निं वावादित्यः सायं प्र विंशति। तस्मांद्ग्निर्दूरान्नक्तंन्दहशे। उभे हि तेजंसी सं पद्येते॥१२॥ उद्यन्तं वावादित्यम्ग्निरन् स्मारोहित। तस्माँखूम एवाग्नेर्दिवां दहशे। यद्ग्रये सायं जुंहुयात्। आ सूर्याय वृश्चेत। यत्सूर्याय प्रातर्जुहुयात्। आऽग्नये वृश्चेत। देवतांभ्यः स्मदंन्दध्यात्। अग्निज्योतिज्योतिः सूर्यः स्वाहेत्येव साय होत्व्यम्। सूर्यो ज्योतिज्योतिरंग्निः स्वाहेतिं प्रातः। तथोभाभ्या साय हूंयते॥१३॥

उभाभ्यां प्रातः। न देवतांभ्यः समदंन्दधाति। अग्निज्यांतिरित्यांह। अग्निर्वे रेतोधाः। प्रजा ज्योतिरित्यांह। प्रजा एवास्मै प्र जनयति। सूर्यो ज्योतिरित्यांह। प्रजास्वेव प्रजातासु रेतों दधाति। ज्योतिरग्निः स्वाहेत्यांह। प्रजा एव प्रजाता अस्यां प्रतिष्ठापयति॥१४॥

तूष्णीमृत्तंरामाहुंतिं जुहोति। मिथुन्त्वाय् प्रजाँत्यै। यद्दिते सूर्ये प्रांतर्जुहुयात्। यथाऽतिंथये प्रद्वंताय शून्यायांवस्थायांहार्य हर्रन्ति। ताहगेव तत्। क्वाह् तत्स्तद्भवतीत्यांहुः। यत्स न वेदं। यस्मै तद्धर्न्तीतिं। तस्माद्यदौष्मं जुहोतिं। तदेव संम्प्रति। अथो यथा प्रार्थमौषसं पंरिवेवेष्टि। ताहगेव तत्॥१५॥

अमृष्ट् विचिकित्संति जुह्वंत्युजामंसुजताग्निहोत्र सूर्याय प्रातर्जुहोति जुह्वंति संपद्येते हूयते स्थापयति सम्प्रति द्वे चं॥२॥—————[२]

रुद्रो वा एषः। यद्ग्निः। पत्नी स्थाली। यन्मध्येऽग्नेरंधिश्रयैत्।

रुद्राय पत्नीमपि दध्यात्। प्रमायुंका स्यात्। उदीचोऽङ्गांरान्निरूह्याधि श्रयति। पत्निये गोपीथायं। व्यन्तान्करोति। तथा पत्यप्रमायुका भवति॥१६॥

घर्मो वा एषोऽशाँन्तः। अहंरहः प्र वृंज्यते। यदंग्निहोत्रम्। प्रतिषिश्चेत्पृशुकांमस्य। शान्तिमिव हि पंश्व्यम्। न प्रतिषिश्चेद्वह्मवर्च्सकांमस्य। सिमंद्धमिव हि ब्रह्मवर्च्सम्। अथो खलुं। प्रतिषिच्यंमेव। यत्प्रतिषिश्चति॥१७॥

तत्पंश्वयम्। यञ्जुहोति। तद्बंह्मवर्चिस। उभयंमेवाकः। प्रच्युंतं वा एतद्स्माल्लोकात्। अगंतन्देवलोकम्। यच्छृतः ह्विरनंभिघारितम्। अभि द्यांतयति। अभ्येवैनंद्वारयति। अथों देवत्रैवैनंद्रमयति॥१८॥

पर्याग्नि करोति। रक्षंसामपंहत्यै। त्रिः पर्याग्नि करोति। त्र्यांवृद्धि युज्ञः। अथों मेध्यत्वायं। यत्प्राचीनंमुद्वासयेत। यजंमान शुचाऽर्पयेत्। यद्देक्षिणा। पितृदेवत्य स्यात्। यत्प्रत्यक्॥१९॥

पत्नी र्श्वा प्रियंत्। उदीचीन् मुद्दां सयित। एषा वै देवमनुष्याणा र्श्वान्ता दिक्। तामे वैन्दनू द्वां सयित शान्त्यैं। वर्त्म करोति। यज्ञस्य सन्तंत्ये। निष्टंपित। उपैव तत्स्तृंणाित। चतुरुन्नंयित। चतुंष्पादः पृशवंः॥२०॥

पुशूनेवावंरुन्धे। सर्वांन्पूर्णानुन्नंयति। सर्वे हि पुण्यां

राद्धाः। अनूच् उन्नयिति। प्रजायां अनूचीन्त्वायं। अनूच्येवास्यं प्रजाऽर्धुंका भवति। सम्मृंशित् व्यावृत्त्यै। नाहोष्यन्तुपं सादयेत्। यदहोष्यन्नुपसादयेत्। यथाऽन्यस्मां उपनिधायं॥२१॥

अन्यस्मैं प्रयच्छंति। ताहगेव तत्। आऽस्मैं वृश्चेत। यदेव गार्हंपत्येऽधि श्रयंति। तेन गार्हंपत्यं प्रीणाति। अग्निरंबिभेत्। आहुंतयो माऽत्येष्यन्तीतिं। स एता १ समिधंमपश्यत्। तामाऽधंत्त। ततो वा अग्नावाहुंतयोऽध्रियन्त॥२२॥ यदंन १ समयंच्छत। तत्सिमधंः समित्त्वम। समिधमा

यदेन १ समयंच्छत्। तत्स्मिधंः सिम्त्वम्। स्मिध्मा दंधाति। सम्वैनं यच्छति। आहुंतीनान्भृत्यैं। अथों अग्निहोत्रम्वेष्मवंत्करोति। आहुंतीनां प्रतिष्ठित्ये। ब्रह्मवादिनों वदन्ति। यदेका १ स्मिधंमाधाय द्वे आहुंती जुहोतिं। अथं कस्या १ स्मिधं द्वितीयामाहुंतिं जुहोतीतिं॥२३॥

यद्वे स्मिधांवा द्घ्यात्। भ्रातृंव्यमस्मै जनयेत्। एका र स्मिधंमाधायं। यजुंषाऽन्यामाहुंतिं जुहोति। उभे एव स्मिद्वंती आहुंती जुहोति। नास्मै भ्रातृंव्यञ्जनयति। आदींप्तायां जुहोति। समिद्धमिव हि ब्रह्मवर्च्सम्। अथो यथाऽतिंथिं ज्योतिंष्कृत्वा पंरि वेवेष्टि। ताहगेव तत्। चतुरुन्नंयति। द्विर्जुंहोति। तस्मांद्विपाचतुंष्पादमत्ति। अथौं द्विपद्येव चतुंष्पदः प्रतिं ष्ठापयति॥२४॥ उत्तरावंतीं वै देवा आहुंतिमजुंहवुः। अवांचीमसुंराः। ततों देवा अभवन्। पराऽसुंराः। यङ्कामयेत् वसीयान्त्स्यादिति। कनीयस्तस्य पूर्व हृत्वा। उत्तरं भूयों जुहुयात्। एषा वा उत्तरावृत्याहुंतिः। तान्देवा अंजुहवुः। तत्नस्तंऽभवन्॥२५॥ यस्यैवं जुह्वंति। भवंत्येव। यङ्कामयेत् पापीयान्तस्यादिति।

यस्यव जुह्वात। भवत्यव। यङ्कामयत् पापायान्तस्यादात। भूयस्तस्य पूर्वर्षं हुत्वा। उत्तर्रङ्कानीयो जुहुयात्। एषा वा अवाच्याहुंतिः। तामसुंरा अजुहवुः। तत्नस्ते परांऽभवन्। यस्यैवं जुह्वंति। परैव भविति॥२६॥

हुत्वोपं सादयत्यजांमित्वाय। अथो व्यावृत्त्यै। गार्हंपत्यं प्रतींक्षते। अनंनुध्यायिनमेवेनं करोति। अग्निहोत्रस्य वे स्थाणुरंस्ति। तं य ऋच्छेत्। यज्ञस्थाणुमृंच्छेत्। एष वा अग्निहोत्रस्यं स्थाणुः। यत्पूर्वाऽऽहुंतिः। तां यदुत्तंरयाऽभि जुंहुयात्॥२७॥

यज्ञस्थाणुमृंच्छेत्। अतिहाय पूर्वामाहुंतिं जुहोति। यज्ञस्थाणुमेव परिं वृणक्ति। अथो भ्रातृंव्यमेवास्वाऽतिं क्रामति। अवाचीन सायमुपंमार्ष्टि। रेतं एव तद्दंधाति। ऊर्ध्वं प्रातः। प्र जनयत्येव तत्। ब्रह्मवादिनों वदन्ति। चतुरुन्नंयति॥२८॥

द्विर्जुहोति। अथ क्वं द्वे आहुंती भवत् इतिं। अग्नौ वैश्वान्र इतिं ब्रूयात्। एष वा अग्निर्वेश्वान्रः। यद्वांह्मणः। हुत्वा द्विः प्राश्ञांति। अग्नावेव वैश्वान्रे द्वे आहुंती जुहोति। द्विर्जुहोतिं। द्विर्निमाँष्टिं। द्विः प्राश्ञांति॥२९॥

षद्भम्पंद्यन्ते। षड्वा ऋतवंः। ऋतूनेव प्रींणाति। ब्रह्मवादिनों वदन्ति। कुं देवत्यंमग्निहोत्रमितिं। वैश्वदेवमितिं ब्र्यात्। यद्यजुंषा जुहोतिं। तदैंन्द्राग्नम्। यत्तूष्णीम्। तत्प्रांजापत्यम्॥३०॥

यित्रमार्ष्टि। तदोषंधीनाम्। यिद्वितीयम्। तत्यंतृणाम्। यत्प्राश्ञांति। तद्गर्भाणाम्। तस्माद्गर्भा अनंश्ञन्तो वर्धन्ते। यदाचामंति। तन्मंनुष्यांणाम्। उदंङ्घर्यावृत्याचांमति॥३१॥

आत्मनों गोपीथायं। निर्णेनेक्ति शुद्धौं। निष्टंपित स्वगाकृंत्यै। उद्दिंशित। सप्तर्षीनेव प्रीणाति। दक्षिणा पूर्यावंर्तते। स्वमेव वीर्यमनुं पूर्यावंर्तते। तस्माद्दक्षिणोऽर्धं आत्मनों वीर्यावत्तरः। अथों आदित्यस्यैवावृत्मनुं पूर्यावंर्तते। हुत्वोप् समिन्धे॥३२॥

ब्रह्मवर्चसस्य समिं छै। न बर्हिरनु प्र हेरेत्। असई स्थितो वा एष यज्ञः। यदिग्निहोत्रम्। यदेनु प्रहरेत्। यज्ञं विच्छिंन्द्यात्। तस्मान्नानुं प्रहृत्यम्। यज्ञस्य सन्तंत्यै। अपो नि नंयति। अवभृथस्यैव रूपमंकः॥३३॥

अभव-भवति जुहुयात्रयति मार्ष्टि द्विः प्राश्ञांति प्राजापृत्यमाचांमतीन्थेऽकः॥४॥————[४]

ब्रह्मवादिनों वदन्ति। अग्निहोत्रप्रांयणा युज्ञाः। किं प्रांयणमग्निहोत्रमितिं। वृत्सो वा अग्निहोत्रस्य प्रायंणम्। अग्निहोत्रं यज्ञानाम्। तस्यं पृथिवी सदंः। अन्तरिक्षमाग्नीद्भम्। द्यौर्हंविर्धानम्। दिव्या आपः प्रोक्षंणयः। ओषंधयो बर्हिः॥३४॥

वन्स्पतंय इध्मः। दिशः परिधयः। आदित्यो यूपः। यजंमानः पृशुः। समुद्रोऽवभृथः। संवृत्सरः स्वंगाकारः। तस्मादाहिताग्रेः सर्वमेव बंरिह्ष्यंन्दत्तं भवति। यत्सायं जुहोतिं। रात्रिंमेव तेनं दक्षिण्यां कुरुते। यत्प्रातः॥३५॥

अहंरेव तेनं दक्षिण्यं कुरुते। यत्ततो ददांति। सा दक्षिणा। यावन्तो वै देवा अहंतमादन्। ते परांऽभवन्। त एतदिग्निहोत्र श् सर्वस्येव समवदायां जुहवुः। तस्मादाहुः। अग्निहोत्रं वै देवा गृहाणां निष्कृतिमपश्यित्रिति। यत्सायं जुहोति। रात्रिया एव तद्धुताद्यांय॥३६॥

यजंमान्स्यापंराभावाय। यत्प्रातः। अहं एव तद्धुताद्यांय। यजंमान्स्यापंराभावाय। यत्ततोऽश्ञ्ञातिं। हुतमेव तत्। द्वयोः पर्यसा जुहुयात्पशुकांमस्य। एतद्वा अग्निहोत्रं मिथुनम्। य एवं वेदं। प्र प्रजयां पृशुभिंमिंथुनैर्जायते॥३७॥

इमामेव पूर्वया दुहे। अमूमुत्तंरया। अधिश्रित्योत्तंरमा नयति। योनांवेव तद्रेतः सिश्चति प्रजनंने। आज्येन जुहुयात्तेजंस्कामस्य। तेजो वा आज्यम्। तेजस्व्येव भंवति। पर्यसा पृशुकांमस्य। एतद्वे पंशूना रूपम्। रूपेणैवास्में पृशूनवंरुन्धे॥३८॥

पृशुमानेव भंवति। दुभ्नेन्द्रियकांमस्य। इन्द्रियं वै दिधे। इन्द्रियाव्येव भंवति। युवाग्वां ग्रामंकामस्यौष्धा वै मंनुष्याः। भागुधेयेनैवास्में सजातानवं रुन्धे। ग्राम्येव भंवति। अयंज्ञो वा पुषः। योऽसामा॥३९॥

चतुरुन्नंयति। चतुंरक्षर॰ रथन्तरम्। र्थन्तरस्यैष वर्णः। उपरीव हरति। अन्तरिक्षं वामदेव्यम्। वामदेव्यस्यैष वर्णः। द्विर्जुहोति। द्यंक्षरं बृहत्। बृह्त एष वर्णः। अग्निहोत्रमेव तत्सामन्वत्करोति॥४०॥

यो वा अंग्निहोत्रस्योंपुसदो वेदं। उपैनमुपुसदों नमन्ति। विन्दतं उपस्तारम्। उन्नीयोपं सादयति। पृथिवीमेव प्रीणाति। होष्यन्नुपंसादयति। अन्तरिक्षमेव प्रीणाति। हुत्वोपं सादयति। दिवंमेव प्रीणाति। एता वा अंग्निहोत्रस्योंपुसदं:॥४१॥

य एवं वेदं। उपैनमुप्सदों नमन्ति। विन्दतं उपस्तारम्ं। यो वा अग्निहोत्रस्याश्रांवितं प्रत्याश्रांवित् होतांरं ब्रह्माणं वषद्कारं वेदं। तस्य त्वेव हुतम्। प्राणो वा अग्निहोत्रस्याश्रांवितम्। अपानः प्रत्याश्रांवितम्। मनो होतां। चक्षुंर्ब्रह्मा। निमेषो वंषद्कारः॥४२॥ य एवं वेदं। तस्य त्वंव हुतम्। सायं यावांनश्च वै देवाः प्रांत्यांवांणश्चाग्निहोत्रिणों गृहमागंच्छन्ति। तान् यन्न तर्पयेत्। प्रज्ञयांऽस्य पृशुभिविं तिष्ठेरन्। यत्तर्पयेत्। तृप्ता एंनं प्रज्ञयां पृशुभिस्तर्पयेयुः। सृजूर्देवैः सायं यावंभिरितिं साय सम्मृंशति। सृजूर्देवैः प्रातर्यावंभिरितिं प्रातः। ये चैव देवाः सायं यावांनो ये चं प्रातर्यावांणः॥४३॥

तानेवोभयाईस्तर्पयति। त एनन्तृप्ताः प्रजयां पृश्भिंस्तर्पयन्ति। अरुणो हं स्माहौपविशिः। अग्निहोत्र एवाहर सायं प्रात्वें अग्नित्येभ्यः प्र हंरामि। तस्मान्मत्पापीयारसो आतृंच्या इति। चतुरुन्नयति। द्विर्जुहोति। स्मित्संप्तमी। सप्तपंदा शक्नेरी। शाक्नरो वर्ज्ञः। अग्निहोत्र एव तत्सायं प्रात्वें यजंमानो आतृंच्याय प्र हंरति। भवंत्यात्मनां। पराऽस्य आतृंच्यो भवति॥४४॥

प्रजापंतिरकामयतात्म्न्वन्में जायेतेतिं। सोंऽजुहोत्। तस्मौत्मन्वदंजायत। अग्निर्वायुरांदित्यः। तेंऽब्रुवन्। प्रजापंतिरहौषीदात्मन्वन्में जायेतेतिं। तस्यं वयमंजनिष्मिह। जायंतात्र आत्मन्वदिति तेंऽजुहवुः। प्राणानांमग्निः। तनुवैं वायुः॥४५॥

चक्षुंष आदित्यः। तेषा ५ हुतादंजायत् गौरेव। तस्यै

पर्यसि व्यायंच्छन्त। ममं हुतादंजिन् ममेति। ते प्रजापंतिं प्रश्नमायन्। स आंदित्यों ऽग्निमंब्रवीत्। यत्रो नौ जयात्। तन्नौं सहास्दिति। कस्यै कोऽहौंषीदितिं प्रजापंतिरब्रवीत्कस्यै क इतिं। प्राणानां महिमत्यग्निः॥४६॥ तन्त्रवां अहिमितिं वायः। चक्षुंषोऽहिमत्यांदित्यः। य एव प्राणानामहौषीत्। तस्यं हुतादंजनीतिं। अग्नेरहुतादंजनीतिं। तदंग्निहोत्रस्यांग्निहोत्रत्वम्। गौर्वा अंग्निहोत्रम्। य एवं वेद गौरंग्निहोत्रमितिं। प्राणापानाभ्यां मेवाग्निः समर्धयित। अव्यर्धुकः प्राणापानाभ्यां भवति॥४७॥

य एवं वेदं। तौ वायुरंब्रवीत्। अनु मा भंजत्मितिं। यदेव गार्हंपत्येऽधिश्रित्यांहवनीयंम्भ्युंद्रवान्ं। तेन त्वां प्रीणानित्यंब्र्ताम्। तस्माद्यद्वार्हंपत्येऽधिश्रित्यांहवनीयंम्भ्युंद्रवंति। वायुमेव तेनं प्रीणाति। प्रजापंतिर्देवताः सृजमानः। अग्निमेव देवतानां प्रथममंसृजता सौंऽन्यदांलुम्भ्यंमिवित्वा॥४८॥ प्रजापंतिम्भि पूर्यावंतित। स मृत्योरंबिभेत्। सोऽमुमांदित्यमात्मनो निर्रमिमीत। त हृत्वा परांद्व्यावंतित। ततो वे स मृत्युमपांजयत्। अप मृत्युं जंयित। य एवं वेदं। तस्माद्यस्यैवं विदुषंः। उतैकाहमुत द्यहन्न जुह्नंति। हृतमेवास्यं भवति। असौ ह्यांदित्यांऽग्निहोत्रम्॥४९॥

तुनुवै वायुर्ग्निर्भवत्यविंत्वा भवत्येकं च॥६॥

[٤]

रौद्रङ्गविं। वायव्यंमुपंसृष्टम्। आश्विनन्दुह्यमानम्।

सौम्यन्दुग्धम्। वारुणमधि श्रितम्। वैश्वदेवा भिन्दवंः। पौष्णमुदंन्तम्। सारुस्वतं विष्यन्दंमानम्। मैत्र॰ शरंः। धातुरुद्वांसितम्। बृह्स्पतेरुत्रीतम्। स्वितुः प्र क्रान्तम्। द्यावापृथिव्य है ह्रियमाणम्। ऐन्द्राग्नमुपंसन्नम्। अग्नेः पूर्वाऽऽह्तिः। प्रजापतेरुत्तंरा। ऐन्द्र॰ हुतम्॥५०॥

उद्वांसित॰ सप्त चं॥७॥————[७]

दक्षिणत उपं सृजित। पितृलोकमेव तेनं जयित। प्राचीमा वर्तयित। देवलोकमेव तेनं जयित। उदींचीमावृत्यं दोग्धि। मनुष्यलोकमेव तेनं जयित। पूर्वौ दुह्याञ्चेष्ठस्यं ज्यैष्ठिनेयस्य। यो वां गृतश्रीः स्यात्। अपंरौ दुह्यात्किनिष्ठस्यं कानिष्ठिनेयस्य। यो वा बुभूषेत्॥५१॥

न सं मृंशति। पाप्वस्यसस्य व्यावृत्त्यै। वायव्यं वा पृतदुपंसृष्टम्। आश्विनन्दुह्यमानम्। मैत्रन्दुग्धम्। अर्थम्ण उद्वास्यमानम्। त्वाष्ट्रमुंत्रीयमानम्। बृह्स्पतेरुत्रीतम्। सवितुः प्रक्रान्तम्। द्यावापृथिव्य ई ह्रियमाणम्॥५२॥

प्रेन्द्राग्नमुपं सादितम्। सर्वांभ्यो वा एष देवतांभ्यो जुहोति। योंऽग्निहोत्रं जुहोतिं। यथा खलु वै धेनुन्तीर्थे तर्पयंति। एवमंग्निहोत्री यजंमानन्तर्पयति। तृप्यंति प्रजयां पृशुभिः। प्र सुंवर्गं लोकं जांनाति। पश्यंति पुत्रम्। पश्यंति पौत्रम्। प्र प्रजयां पृशुभिंमिथुनैर्जायते। यस्यैवं विदुषोंऽग्निहोत्रं जुह्वंति। य उं चैनदेवं वेदं॥५३॥

| वं॥८॥[८] |
|----------------|
| वं॥८॥•••••••[८ |

त्रयो वै प्रैयमेधा आंसन्। तेषात्रिरेकौंऽग्निहोत्रमंजुहोत्। द्विरेकः। स्कृदेकः। तेषां यस्त्रिरजुंहोत्। स ऋचाऽजुंहोत्। यो द्विः। स यजुंषा। यः स्कृत्। स तूष्णीम्॥५४॥

यश्च यजुषाऽजुंहोद्यश्चं तूष्णीम्। तावुभावाँर्भुताम्। तस्माद्यजुषाऽऽहुंतिः पूर्वा होत्व्याँ। तूष्णीमृत्तंरा। उभे एवधी अवंरुन्थे। अग्निज्यीतिज्यीतिंर्ग्निः स्वाहेतिं सायं जुंहोति। रेतं एव तद्दंधाति। सूर्यो ज्योतिज्यीतिः! सूर्यः स्वाहेतिं प्रातः। रेतं एव हितं प्र जंनयति। रेतो वा एतस्यं हितन्न प्र जांयते॥५५॥

यस्याँग्निहोत्रमहुंत्र सूर्योऽभ्यंदेतिं। यद्यन्ते स्यात्। उन्नीय् प्राङ्कदाद्रंवेत्। स उपसाद्यातिमेतोरासीत। स यदा ताम्यैत्। अथ् भूः स्वाहेतिं जुहुयात्। प्रजापंतिर्वे भूतः। तमेवोपांसरत्। स एवैन्नत् उन्नयति। नार्तिमार्च्छति यजमानः॥५६॥

तूष्णीआयते यजमानः॥९॥———[९]

यद्ग्रिमुद्धरंति। वसंवस्तर्द्धग्निः। तस्मिन् यस्य तथांविधे जुह्नंति। वसुंष्वेवास्यांग्निहोत्रः हुतं भंवति। निहिंतो धूपायञ्छेते। रुद्रास्तर्द्धग्निः। तस्मिन् यस्य तथांविधे जुह्नंति। रुद्रेष्वेवास्यांग्निहोत्रः हुतं भंवति। प्रथमिष्धममर्चिरा लंभते। आदित्यास्तर्द्धग्निः॥५७॥

तस्मिन् यस्य तथांविधे जुह्वंति। आदित्येष्वेवास्यांग्निहोत्तरं हुतं भंवति। सर्वं एव संवृंश इध्म आदींप्तो भवति। विश्वं देवास्तर्द्याग्निः। तस्मिन् यस्य तथांविधे जुह्वंति। विश्वंष्वेवास्यं देवेष्वंग्निहोत्तरं हुतं भंवति। नित्रामृचिरुपावैति लोहिनीकेव भवति। इन्द्रस्तर्द्याग्निः। तस्मिन् यस्य तथांविधे जुह्वंति। इन्द्रं एवास्यांग्निहोत्तरं हुतं भंवति॥५८॥

अङ्गारा भवन्ति। तेभ्योऽङ्गारेभ्योऽर्चिरुदंति। प्रजापंतिस्तर्ह्याग्निः। तिस्मन् यस्य तथांविधे जुह्वंति। प्रजापंतावेवास्यांग्निहोत्र ए हुतं भवति। शरोऽङ्गारा अध्यूहन्ते। ब्रह्म तर्ह्याग्निः। तिस्मन् यस्य तथांविधे जुह्वंति। ब्रह्मंत्रेवास्यांग्निहोत्र ए हुतं भवति। वसुंषु रुद्रेष्वांदित्येषु विश्वंषु देवेषुं। इन्द्रें प्रजापंतौ ब्रह्मन्ं। अपंरिवर्गमेवास्यैतासुं देवतांसु हुतं भवति। यस्यैवं विदुषोंऽग्निहोत्रं जुह्वंति। य उं चैनदेवं वेदं॥५९॥

आदित्यास्तर्ह्यग्निरिन्द्रं एवास्याँग्निहोत्र हुतं भवित देवेषुं चृत्वारिं च (यद्ग्नित्रिहितः प्रथम सर्वं एव नित्रामङ्गाराः शरोऽङ्गारा ब्रह्म वसुंष्वृष्टौ ॥)॥१०॥————[१०]

ऋतन्त्वां सृत्येन परिषिश्चामीतिं सायं परिषिश्चति। सृत्यन्त्वर्तेन परिषिश्चामीतिं प्रातः। अग्निर्वा ऋतम्। असावादित्यः सृत्यम्। अग्निमेव तदादित्येनं सायं परिषिश्चति। अग्निनांऽऽदित्यं प्रातः सः। यावदहोरात्रे भवतः। तावदस्य लोकस्यं। नार्तिनं रिष्टिः। नान्तो न

पंर्युन्तौंऽस्ति। यस्यैवं विदुषौंऽग्निहोत्रं जुह्वंति। य उंचैनदेवं वेदं॥६०॥

अङ्गिरसः प्रजापंतिर्ग्निर रुद्र उत्तरावंतीं ब्रह्मवादिनौंऽग्निहोत्रप्रांयणा युज्ञा प्रजापंतिरकामयतात्मुन्वद्रौद्रङ्गविं दक्षिणृतस्त्रयो वे यद्ग्निमृतन्त्वां सृत्येनैकांदश॥११॥ अङ्गिरसः प्रैव तेनं पृशूनेव यन्निमार्ष्टि यो वा अग्निहोत्रस्योपसदो दक्षिणृतष्ष्रष्टिः॥६०॥ अङ्गिरसो य उंचैनदेवं वेदं॥

हरिंः ओम्॥ ॥इति श्रीकृष्णयजुर्वेदीयतैत्तिरीयब्राह्मणे द्वितीयाष्टके प्रथमः प्रपाठकः समाप्तः॥

॥द्वितीयः प्रश्नः॥

॥ तैत्तिरीयब्राह्मणे द्वितीयाष्टके द्वितीयः प्रपाठकः॥

प्रजापंतिरकामयत प्रजाः सृंजेयेतिं। स एतन्दशंहोतारमपश्यत्। तं मनंसाऽनुद्रुत्यं दर्भस्तम्बंऽजुहोत्। ततो वै स प्रजा अंसृजत। ता अंस्मात्सृष्टा अपौक्रामन्। ता ग्रहेंणागृह्णात्। तद्गहंस्य ग्रहत्वम्। यः कामयेत् प्रजायेयेति। स दर्शहोतार् मनसाऽनुद्रुत्यं दर्भस्तम्बे जुंहुयात्। प्रजापंतिर्वे दशंहोता॥१॥ प्रजापंतिरेव भूत्वा प्रजांयते। मनंसा जुहोति। मनं इव हि प्रजापंतिः। प्रजापंतेरास्यैं। पूर्णयां जुहोति। पूर्ण इंव हि प्रजापंतिः। प्रजापंतेराध्यै। न्यूनया जुहोति। न्यूनाद्धि प्रजापंतिः प्रजा असृंजत। प्रजानाः सृष्टौ॥२॥ दुर्भस्तुम्बे जुंहोति। एतस्माद्वै योनें प्रजापंतिः प्रजा असृजत। यस्मदिव योनैंः प्रजापंतिः प्रजा असृजत। तस्मदिव योनेः प्रजायते। ब्राह्मणो दक्षिणत उपास्ते। ब्राह्मणो वै प्रजानांमुपद्रष्टा। उपद्रष्टुमत्येव प्रजायते। ग्रहो भवति। प्रजाना ५ सृष्टानान्धृत्यैं। यं ब्रौह्मणं विद्यां विद्वा ५ सं यशो नर्च्छेत्॥३॥

सोऽरंण्यं प्रेत्यं। दुर्भस्तम्बमुद्भर्था। ब्राह्मणन्दंक्षिणतो निषाद्यं। चतुंहींतृन्व्याचंक्षीत। एतद्वे देवानां पर्मङ्गृद्धं ब्रह्मं। यचतुंर्होतारः। तदेव प्रंकाृशं गंमयति। तदेनं प्रकाृशङ्गतम्। प्रकाशं प्रजानाँङ्गमयति। दुर्भस्तम्बमुद्भथ्य व्याचेष्टे॥४॥

अग्निवान् वै देर्भस्तम्बः। अग्निवत्येव व्याचेष्टे। ब्राह्मणो देक्षिणत उपाँस्ते। ब्राह्मणो वै प्रजानांमुपद्रष्टा। उपद्रष्टुमत्येवैनं यशे ऋच्छति। ईश्वरन्तं यशोर्तोरित्यांहुः। यस्यान्ते व्याचष्ट् इतिं। वर्स्तस्मै देयः। यदेवैनं तत्रोपनमंति। तदेवावं रुन्थे॥५॥

अग्निमादधांनो दशंहोत्राऽरणिमवं दध्यात्। प्रजांतमेवैनमा धंत्ते। तेनैवोद्गुत्यांग्निहोत्रं जुंहुयात्। प्रजांतमेवैनं ज्ञुहोति। ह्विर्निर्वृप्स्यन्दशंहोतारं व्याचंक्षीत। प्रजांतमेवैनं निर्वृपति। सामिधेनीरंनुवृक्ष्यन्दशंहोतारं व्याचंक्षीत। सामिधेनीरेव सृष्ट्वाऽऽरभ्य प्रतंनुते। अथो युज्ञो व दशंहोता। युज्ञमेव तंनुते॥६॥

अभिचर्न्दर्शहोतारं जुहुयात्। नव् वै पुरुषे प्राणाः। नाभिद्शमी। सप्राणमेवनम्भि चरित। एतावृद्धे पुरुषस्य स्वम्। यावंत्प्राणाः। यावंदेवास्यास्ति। तद्भि चरित। स्वकृत् इरिणे जुहोति प्रदरे वा। एतद्वा अस्य निर्ऋतिगृहीतम्। निर्ऋतिगृहीत एवेनं निर्ऋत्या ग्राहयित। यद्वाचः कूरम्। तेन वषंद्वरोति। वाच एवेनं कूरेण् प्र वृश्चित। ताजगार्तिमार्च्छति॥७॥

प्रजापंतिरकामयत दर्शपूर्णमासौ सृजेयेति। स एतश्चतुंर्होतारमपश्यत्। तं मनंसाऽनुद्रुत्यांहवनीयेंऽजुहोत्। ततो वै स दंर्शपूर्णमासावंसृजतः। तावंस्मात्सृष्टावपांकामताम्। तौ ग्रहेंणागृह्णात्। तद्गहंस्य ग्रह्त्वम्। दुर्शपूर्णमासावालभंमानः। चतुंर्होतारं मनंसाऽनुद्रुत्यांहवनीयें जुहुयात्। दुर्शपूर्णमासावेव सृष्ट्वाऽऽरभ्य प्रतंनुते॥८॥

ग्रहों भवति। दुर्श्पूर्णमासयौः सृष्टयोर्धृत्यै। सोंऽकामयत चातुर्मास्यानि सृजेयेति। स एतं पश्चंहोतारमपश्यत्। तं मनंसाऽनुद्रुत्यांहवनीयेंऽजुहोत्। ततो वै स चातुर्मास्यान्यंसृजत। तान्यंस्मात्सृष्टान्यपाँकामन्। तानि ग्रहेणागृह्णात्। तद्ग्रहंस्य ग्रह्त्वम्। चातुर्मास्यान्यालभंमानः॥९॥ पश्चंहोतार् मनंसाऽनुद्रुत्यांहवनीयें जुहुयात्। चातुर्मास्यान्येव सृष्ट्वाऽऽरभ्य प्रतंनुते। ग्रहों भवति। चातुर्मास्यानार्थं सृष्टानान्धृत्यै। सोंऽकामयत पशुबन्धर सृजेयेति। स एतर षड्ढोतारमपश्यत्। तं मनंसाऽनुद्रुत्यांहवनीयेंऽजुहोत्। ततो वे स पंशुबन्धमंसृजत। सोंस्मात्सृष्टोऽपाँकामत्। तङ्गहेंणागृह्णात्॥१०॥

तद्गहंस्य ग्रह्त्वम्। पृशुब्न्थेनं युक्ष्यमाणः। षङ्कौतारं मनंसाऽनुद्रुत्याहवनीये जुहुयात्। पृशुब्न्थमेव सृष्ट्वाऽऽरभ्यु प्र तन्ते। ग्रहो भवति। पृशुब्न्थस्यं सृष्टस्य धृत्यै। सोऽकामयत सौम्यमध्वर सृजेयेति। स एत स्प्रहोतारमपश्यत्। तं मनंसाऽनुद्रुत्यांहवनीयेंऽजुहोत्। ततो वै स सौम्यमंध्वरमंसृजत॥११॥

सौंऽस्मात्सृष्टोऽपाँकामत्। तङ्ग्रहेणागृह्णात्। तद्ग्रहंस्य ग्रह्त्वम्। दीक्षिष्यमाणः। सप्तहोतारं मनंसाऽनुद्रुत्यांहवनीयें जुहुयात्। सौम्यमेवाध्वर सृष्ट्वाऽऽरभ्य प्र तंनुते। ग्रहों भवति। सौम्यस्यौध्वरस्यं सृष्टस्य धृत्यैं। देवेभ्यो वै यज्ञो न प्राभंवत्। तमेतावच्छः समंभरन्॥१२॥

यत्संम्भाराः। ततो वै तेभ्यों युज्ञः प्राभंवत्। यत्संम्भारा भवन्ति। युज्ञस्य प्रभूत्ये। आतिथ्यमासाद्य व्याचंष्टे। युज्ञमुखं वा आतिथ्यम्। मुख्त एव युज्ञः सम्भृत्य प्र तंनुते। अयज्ञो वा एषः। योऽप्रक्षीकः। न प्रजाः प्रजायेरन्। पत्नीर्व्याचंष्टे। युज्ञमेवाकः। प्रजानां प्रजननाय। उपसत्सु व्याचंष्टे। एतद्वै पत्नीनामायतंनम्। स्व एवैनां आयत्नेऽवंकल्पयति॥१३॥

तुनुत् आलभंमानोऽगृह्णादसृजताभरआयेर्न्थ्यद्गं॥२॥—————[२]

प्रजापंतिरकामयत् प्रजाययेविते। स तपोऽतप्यत। स त्रिवृत् स्तोमंमसृजत। तं पेश्चद्रशः स्तोमों मध्यत उदंतृणत्। तौ पूर्वपृक्षश्चापरपृक्षश्चांभवताम्। पूर्वपृक्षन्देवा अन्वसृंज्यन्त। अपरुपृक्षमन्वसृंगः। ततो देवा अभवन्। पराऽसुंगः। यङ्कामयेत् वसीयान्तस्यादिति॥१४॥

तं पूर्वपक्षे यांजयेत्। वसीयानेव भवति। यङ्कामयेत् पापीयान्तस्यादितिं। तमंपरपक्षे यांजयेत्। पापीयानेव

भंवति। तस्मौत्पूर्वपृक्षोऽपरपृक्षात्केरुण्यंतरः। प्रजापंतिर्वे दशंहोता। चतुंर्होता पश्चंहोता। षङ्कोता स्प्तहोता। ऋतवेः संवत्सरः॥१५॥

प्रजाः प्शवं इमे लोकाः। य एवं प्रजापंतिं बहोर्भ्यार्सं वेदं। बहोरेव भूयाँ-भवति। प्रजापंतिर्देवासुरानंसृजत। स इन्द्रमपि नासृंजत। तन्देवा अंब्रुवन्। इन्द्रं नो जन्येतिं। सौंऽब्रवीत्। यथाऽहं युष्माङ्स्तप्साऽसृंक्षि। एविमन्द्रं जनयध्वमितिं॥१६॥

ते तपोऽतप्यन्त। त आत्मिन्निन्द्रंमपश्यन्। तमंब्रुवन्। जायस्वेतिं। सोंऽब्रवीत्। किं भांगुधेयंमुभि जंनिष्य इतिं। ऋतून्त्संवत्स्रम्। प्रजाः पृशून्। इमाल्लौंकानित्यंब्रुवन्। तं वै माऽऽहुंत्या प्र जंनयतेत्यंब्रवीत्॥१७॥

तश्चतुंर्होत्रा प्राजंनयन्। यः कामयेत वीरो म् आजांयेतेति। स चतुंर्होतारं जुहुयात्। प्रजापंतिवै चतुंर्होता। प्रजापंतिरेव भूत्वा प्रजायते। जजन्दिन्द्रंमिन्द्रियाय स्वाहेति ग्रहेण जुहोति। आऽस्यं वीरो जायते। वीर॰ हि देवा एतयाऽऽहुंत्या प्राजंनयन्। आदित्याश्चाङ्गिरसश्च सुवर्गे लोकैंऽस्पर्धन्त। व्यं पूर्वे सुवर्गं लोकिंमियाम वयं पूर्व इति॥१८॥

त अदित्या एतं पश्चेहोतारमपश्यन्। तं पुरा प्रांतरनुवाकादाग्नीं भ्रेऽजुहवुः। ततो वै ते पूर्वे सुवुर्गं लोकमायन्। यः सुंवर्गकामः स्यात्। स पश्चेहोतारं पुरा प्रांतरनुवाकादाग्नींध्रे जुहुयात्। संवृत्सरो वै पश्चेहोता। संवृत्सरः सुंवर्गो लोकः। संवृत्सर एवर्तुषुं प्रतिष्ठाये। सुवृर्गं लोकमेति। तेंऽब्रुवृन्नङ्गिरस आदित्यान्॥१९॥

क्वं स्थ। क्वं वः सुद्ध्यो हूव्यं वंक्ष्याम् इति। छन्दः स्वित्यंब्रुवन्। गायत्रियात्रिष्टुभि जगत्यामिति। तस्माच्छन्दः सु सुद्ध्य आदित्येभ्यः। आङ्गीरसीः प्रजा हूव्यं वंहन्ति। वहंन्त्यस्मै प्रजा बिलम्। ऐन्मप्रतिख्यातं गच्छिति। य एवं वेदे। द्वादंश्य मासाः पञ्चर्तवंः। त्रयं इमे लोकाः। असावादित्य एंकिविश्शः। एतस्मिन्वा एष श्रितः। एतस्मिन्प्रतिष्ठितः। य एवमेतः श्रितं प्रतिष्ठितं वेदे। प्रत्येव तिष्ठति॥२०॥

स्यादितिं संवत्सरो जनयध्वमितीत्यंब्रवीत्पूर्व इत्यादित्यानृतवृष्यद्वं॥३॥————[३]

प्रजापंतिरकामयत् प्र जांयेयेति। स एतन्दर्शहोतारमपश्यत्। तेनं दश्धाऽऽत्मानं विधायं। दर्शहोत्राऽतप्यतः। तस्य चितिः सुगासीत्। चित्तमाज्यम्। तस्यैतावंत्येव वागासीत्। एतावानं यज्ञऋतुः। स चतुंरहोतारमसृजतः। सोऽनन्दत्॥२१॥ असृंक्षि वा इममितिं। तस्य सामों हिवरासीत्। स चतुंरहोत्राऽतप्यतः। सोऽताम्यत्। स भूरिति व्याहंरत्। स भूमिंमसृजतः। अग्निहोत्रन्दंर्शपूर्णमासौ यजूर्रेषः। स द्वितीयंमतप्यतः। सोऽताम्यत्। स भुव इति व्याहंरत्॥२२॥ सौऽन्तिरिक्षमसृजतः। चातुर्मास्यानि सामांनि। स

तृतीयंमतप्यत। सोंऽताम्यत्। स सुवृरिति व्याहंरत्। स दिवंमसृजतः। अग्निष्टोममुक्थ्यंमितरात्रमृचंः। एता वै व्याहंतय इमे लोकाः। इमान्खलु वे लोकानन् प्रजाः प्शवृश्छन्दा रेसि प्राजांयन्तः। य एवमेताः प्रजापंतेः प्रथमा व्याहंतीः प्रजांता वेदं॥२३॥

प्र प्रजयां प्शुभिर्मिथुनैर्जायते। स पश्चेहोतारमसृजतः। स हिवर्गविन्दतः। तस्मै सोमंस्तुनुवं प्रायंच्छत्। एततें हिवरितिं। स पश्चेहोत्राऽतप्यतः। सोऽताम्यत्। स प्रत्यङ्कंबाधतः। सोऽसुंरानसृजतः। तद्स्याप्रियमासीत्॥२४॥ तद्दुर्वर्ण् हिरंण्यमभवत्। तद्दुर्वर्णस्य हिरंण्यस्य जन्मं। स द्वितीयंमतप्यतः। सोऽताम्यत्। स प्राङंबाधतः। स देवानंसृजतः। तदंस्य प्रियमासीत्। तत्सुवर्ण् हिरंण्यमभवत्। तत्सुवर्ण्स्य हिरंण्यस्य जन्मं। य एव॰ सुवर्णस्य हिरंण्यस्य जन्मं। य एव॰ सुवर्णस्य हिरंण्यस्य जन्मं। य एव॰ सुवर्णस्य हिरंण्यस्य जन्म वदं॥२५॥

सुवर्णं आत्मनां भवति। दुर्वर्णों ऽस्य भ्रातृं व्यः। तस्मांत्सुवर्ण् १ हिरंण्यं भार्यम्। सुवर्णं एव भवति। ऐनं प्रियङ्गं च्छति नाप्रियम्। स सप्तहोतारमसृजत। स सप्तहोत्रैव सुंवर्णं लोकमैंत्। त्रिणवेन स्तोमेनैभ्यो लोकभ्योऽसुंरान्प्राणुंदत। त्र्यस्त्रिश्शेन प्रत्यंतिष्ठत्। एकविश्शेन रुचंमधत्त॥२६॥ सप्तद्शेन प्राजांयत। य एवं विद्वान्त्सोमेन यजंते।

सप्तहाँत्रैव सुंवर्गं लोकमेति। त्रिणवेन स्तोमेनैभ्यो लोकभ्यो भातृंव्यान्प्रणुंदते। त्रयस्त्रिष्टशेन प्रतिंतिष्ठति। एकविष्टशेन रुचंन्धत्ते। सप्तद्शेन प्र जांयते। तस्मात्सप्तद्शः स्तोमो न निर्हृत्यः। प्रजापंतिर्वे संप्तद्शः। प्रजापंतिमेव मध्यतो धंत्ते प्रजात्यै॥२७॥

अनुन्दद्भुव इति व्याहंरुद्वेदांसीद्वेदांधत्त प्रजांत्यै॥४॥

देवा वै वर्रुणमयाजयन्। स यस्यैयस्यै देवतांयै दक्षिणामनयत्। तामंब्रीनात्। तेंऽब्रुवन्। व्यावृत्य प्रति गृह्णाम। तथां नो दक्षिणा न ब्रेष्यतीतिं। ते व्यावृत्य प्रत्यं गृह्णम्। तथां नो दक्षिणा न ब्रेष्यतीतिं। ते व्यावृत्य प्रत्यंगृह्णन्। ततो वै तान्दक्षिणा नाष्ठींनात्। य पृवं विद्वान्व्यावृत्य दक्षिणां प्रतिगृह्णातिं। नैनं दक्षिणा ब्रीनाति॥२८॥

राजां त्वा वर्रणो नयतु देवि दक्षिणेऽग्नये हिरंण्यमित्यांह। आग्नेयं वे हिरंण्यम्। स्वयैवैनंद्देवतंया प्रति गृह्णाति। सोमाय वास् इत्याह। सौम्यं वे वासंः। स्वयैवैनंद्देवतंया प्रति गृह्णाति। रुद्राय गामित्यांह। रौद्री वे गौः। स्वयैवैनांन्देवतंया प्रतिंगृह्णाति। वर्रणायाश्वमित्यांह॥२९॥

वारुणो वा अश्वंः। स्वयैवैनं देवतंया प्रतिंगृह्णाति। प्रजापंतये पुरुषिमित्यांह। प्राजापत्यो वै पुरुषः। स्वयैवैनं देवतंया प्रतिं गृह्णाति। मनंवे तल्पमित्यांह। मान्वो वै तल्पंः। स्वयैवैनं देवतंया प्रतिं देवतंया प्रतिं गृह्णाति। उत्तानायां क्षीरसायान इत्यांह। इयं

वा उत्तान आँङ्गीरसः॥३०॥

अन्यवैन्त्प्रतिं गृह्णाति। वैश्वान्यर्चा रथं प्रतिं गृह्णाति। वैश्वान्रो वे देवत्या रथंः। स्वयैवैनं देवत्या प्रतिं गृह्णाति। तेनांमृत्त्वमंश्यामित्यांह। अमृतंमेवात्मन्धत्ते। वयो दात्र इत्यांह। वयं पृवैनं कृत्वा। सुवर्गं लोकं गंमयति। मयो मह्यमस्तु प्रतिग्रहीत्र इत्यांह॥३१॥

यद्वे शिवम्। तन्मयंः। आत्मनं एवेषा परीतिः। क इदङ्कस्मां अदादित्यांह। प्रजापंतिर्वे कः। स प्रजापंतये ददाति। कामः कामायेत्यांह। कामेन हि ददांति। कामेन प्रतिगृह्णातिं। कामो दाता कामंः प्रतिग्रहीतेत्यांह॥३२॥

कामो हि दाता। कामंः प्रतिग्रहीता। काम र समुद्रमाविशेत्यांह। समुद्र इंवृ हि कामंः। नेवृ हि कामस्यान्तोऽस्ति। न संमुद्रस्यं। कामेन त्वा प्रतिगृह्णामीत्यांह। येन कामेन प्रतिगृह्णाति। स एवेनममुष्मिल्लांके काम आगंच्छति। कामैतत्तं एषा ते काम दक्षिणेत्यांह। कामं एव तद्यजंमानोऽमुष्मिल्लांके दक्षिणामिच्छति। न प्रतिग्रहीतिरं। य एवं विद्वान्दक्षिणां प्रतिगृह्णातिं। अनृणामेवेनां प्रतिं गृह्णाति॥३३॥

क्रीनात्यश्विमत्यांहाङ्गीर्सः प्रंतिग्रहीत्र इत्यांह प्रतिग्रहीतत्यांह दक्षिणेत्यांह च्त्वारि चापा [५] अन्तो वा एष यज्ञस्यं। यद्दश्वममहंः। दश्मेऽहैंन्त्सर्पराज्ञियां ऋग्भिः स्तुवन्ति। यज्ञस्यैवान्तंङ्गत्वा। अन्नाद्यमवं रुन्धते।

तिसृभिः स्तुवन्ति। त्रयं इमे लोकाः। एभ्य एव लोकेभ्योऽन्नाद्यमवं रुन्धते। पृश्ञिवतीर्भवन्ति। अन्नं वै पृश्ञिषा३४॥

अन्नमेवार्वं रुन्धते। मनंसा प्रस्तौति। मन्सोद्गीयति। मनंसा प्रतिं हरति। मनं इव हि प्रजापंतिः। प्रजापंतेरास्यैं। देवा वे सूर्पाः। तेषांमिय राज्ञीं। यत्संपराज्ञियां ऋग्भिः स्तुवन्तिं। अस्यामेव प्रतिं तिष्ठन्ति॥३५॥

चतुंरहोतृन् होता व्याचंष्टे। स्तुतमनुंश १ सति शान्त्यै। अन्तो वा एष यज्ञस्यं। यद्दंशममहंः। एतत्खलु वै देवानां पर्मङ्गृह्यं ब्रह्मं। यचतुंहींतारः। दश्मेऽह् श्वतुंरहोतृन्व्याचंष्टे। यज्ञस्यैवान्तंङ्गत्वा। पर्मन्देवानाङ्गृह्यं ब्रह्मावं रुन्थे। तदेव प्रकाशं गंमयति॥३६॥

तदेनं प्रकाशङ्गतम्। प्रकाशं प्रजानांङ्गमयति। वाचं यच्छति। यज्ञस्य धृत्यैं। यज्ञमानदेवत्यं वा अहंः। भ्रातृव्यदेवत्यां रात्रिः। अह्य रात्रिन्थ्यायेत्। भ्रातृंव्यस्यैव तल्लोकं वृङ्के। यद्दिवा वाचं विसृजेत्। अहुर्भातृंव्यायोच्छि १षेत्। यन्नक्तं विसृजेत्। रात्रिं भ्रातृंव्यायोच्छि १षेत्। अधिवृक्षसूर्ये वाचं विसृजिति। एतावंन्तमेवास्में लोकमुच्छि १षित। यावंदादित्यौऽस्तमेतिं॥३७॥ प्रजापंतिः प्रजा अंसृजत। ताः सृष्टाः समंश्लिष्यन्। ता रूपेणानुप्राविंशत्। तस्मांदाहुः। रूपं वे प्रजापंतिरितिं। ता नाम्नाऽनु प्राविंशत्। तस्मांदाहुः। नाम् वे प्रजापंतिरितिं। तस्मादप्यांमित्रौ सङ्गत्यं। नाम्ना चेद्धयेते॥३८॥

मित्रमेव भेवतः। प्रजापंतिर्देवासुरानंसृजत। स इन्द्रमिष् नासृंजत। तन्देवा अंब्रुवन्। इन्द्रं नो जन्येतिं। स आत्मित्रिन्द्रंमपश्यत्। तमंसृजत। तित्रृष्टुग्वीर्यं भूत्वाऽनु प्राविंशत्। तस्य वर्ज्ञः पश्चद्शो हस्त आपंद्यत। तेनोदय्यासुंरानभ्यंभवत्॥३९॥

य एवं वेदं। अभि भ्रातृंव्यान्भवति। ते देवा असुंरैर्विजित्यं। सुवर्गं लोकमायन्। तेंऽमुष्मिंश्लोंके व्यक्षुध्यन्। तेंऽब्रुवन्। अमुतंः प्रदानं वा उपंजिजीविमेतिं। ते सप्तहोंतारं यज्ञं विधायायास्यम्। आङ्गीर्सं प्राहिण्वन्। एतेनामुत्रं कल्पयेतिं॥४०॥

तस्य वा इयङ्कृप्तिः। यदिदङ्किं चं। य एवं वेदं। कल्पंतेऽस्मै। स वा अयं मंनुष्येषु यज्ञः सप्तहोता। अमुत्रं सुद्धो देवेभ्यो हृव्यं वंहति। य एवं वेदं। उपैनं यज्ञो नमिति। सोऽमन्यत। अभि वा इमेंऽस्माल्लोकादमुं लोकङ्कंमिष्यन्त इतिं। स वाचंस्पते हृदिति व्याहंरत्। तस्मात्पुत्रो हृदंयम्। तस्मादस्माल्लोकादमुं लोकन्नाभि कांमयन्ते। पुत्रो हि हृदंयम्॥४१॥ देवा वै चतुंरहोतृभिर्य्ज्ञमंतन्वत। ते वि पाप्मना भातृंव्येणाजंयन्त। अभि सुंवर्गं लोकमंजयन्। य एवं विद्वाः श्चतुंहीतृभिर्य्ज्ञन्तंनुते। वि पाप्मना भातृंव्येण जयते। अभि सुंवर्गं लोकं जंयति। षड्ढोंत्रा प्रायणीयमा सांदयति। अमुष्मै वे लोकाय षड्ढोंता। घ्रन्ति खलु वा एतत्सोमम्। यदंभिषुण्वन्तिं॥४२॥

ऋजुधेवैनंममं लोकं गंमयति। चतुंर्होत्राऽऽतिथ्यम्। यशो वै चतुंर्होता। यशं पुवात्मन्धंत्ते। पश्चंहोत्रा पृशुमुपंसादयति। सुव्ग्यों वै पश्चंहोता। यजमानः पृशुः। यजमानमेव सुंव्गं लोकं गंमयति। ग्रहान्गृहीत्वा स्प्तहोतारं जुहोति। इन्द्रियं वै स्प्तहोता॥४३॥

इन्द्रियमेवात्मन्धंत्ते। यो वै चतुंर्होतॄननुसवनन्तुर्पयंति। तृप्यंति प्रजयां पृशुभिः। उपैनः सोमपीथो नमिति। बहिष्प्वमाने दशहोतारं व्याचंक्षीत। माध्यं दिने पर्वमाने चतुंर्होतारम्। आर्भवे पर्वमाने पश्चंहोतारम्। पितृयज्ञे षङ्कोतारम्। यज्ञायज्ञियंस्य स्तोत्रे सप्तहोतारम्। अनुसवनमेवनाः स्तर्पयति॥४४॥

तृप्यंति प्रजयां पृशुभिः। उपैंन सोमपीथो नंमति। देवा वै चतुंर्होतृभिः स्त्रमांसत। ऋद्धिंपरिमितं यशंस्कामाः। तेंऽब्रुवन्। यन्नः प्रथमं यशं ऋच्छात्। सर्वेषात्रस्तत्स्हास्दितिं। सोमश्चतुंर्होत्रा। अग्निः पश्चंहोत्रा। धाता पह्नौत्रा॥४५॥

इन्द्रेः स्प्तहौँत्रा। प्रजापंतिर्दर्शहोत्रा। तेषाक् सोम्क् राजानं यशं आर्च्छत्। तन्त्र्यंकामयत। तेनापाँकामत्। तेनं प्रलायमचरत्। तन्द्रेवाः प्रेषेः प्रेषंमेच्छन्। तत्प्रेषाणां प्रेष्त्वम्। निविद्धिन्यंवेदयन्। तन्निविदाँन्निवित्त्वम्॥४६॥

आप्रीभिराप्नुवन्। तदाप्रीणांमाप्रित्वम्। तमंघ्नन्। तस्य यशो व्यंगृह्णत्। ते ग्रहां अभवन्। तद्ग्रहांणाङ्ग्रह्त्वम्। यस्यैवं विदुषो ग्रहां गृह्यन्तें। तस्य त्वंव गृंहीताः। तेंऽब्रुवन्। यो वै नः श्रेष्ठोऽभूत्॥४७॥

तमंविधष्म। पुनंरिम र सुंवामहा इति। तञ्छन्दोंभिरसुवन्त। तच्छन्दंसाञ्छन्द्स्त्वम्। साम्ना समानंयन्। तत्साम्नेः सामृत्वम्। उक्थैरुदंस्थापयन्। तदुक्थानांमुक्थृत्वम्। य एवं वेदं। प्रत्येव तिष्ठति॥४८॥

सर्वमायुरिति। सोमो वै यशंः। य एवं विद्वान्त्सोमंमागच्छंति। यशं एवेनंमृच्छति। तस्मादाहुः। यश्चैवं वेद यश्च न। तावुभौ सोम्मागंच्छतः। सोमो हि यशंः। तन्त्वाऽव यशं ऋच्छ्तीत्यांहुः। यः सोमे सोमं प्राहेतिं। तस्मात्सोमे सोमः प्रोच्यंः। यशं एवेनंमृच्छति॥४९॥ इदं वा अग्रे नैव किं च नासींत्। न द्यौरांसीत्। न पृथिवी। नान्तिरंक्षम्। तदसंदेव सन्मनोंऽकुरुत् स्यामितिं। तदंतप्यत। तस्मांत्तेपानाद्धूमोंऽजायत। तद्भ्योंऽतप्यत। तस्मांत्तेपानाद्गिरंजायत। तद्भ्योंऽतप्यत॥५०॥

तस्मौत्तेपानाञ्चोतिरजायत। तद्भूयोऽतप्यत। तन्मौत्तेपानादर्चिरंजायत। तद्भूयोऽतप्यत। तस्मौत्तेपानान्मरीचयोऽजायन्त। तद्भूयोऽतप्यत। तस्मौत्तेपानादंदारा अंजायन्त। तद्भूयोऽतप्यत। तद्भूमिव समहन्यत। तद्दभूमिव समहन्यत। तद्दभूमिव

स संमुद्रोऽभवत्। तस्मौत्समुद्रस्य न पिंबन्ति। प्रजनंनिमवृ हि मन्यंन्ते। तस्मौत्पृशोर्जायमानादापंः पुरस्तौद्यन्ति। तद्दशहोताऽन्वंसृज्यत। प्रजापंतिर्वे दशहोता। य एवन्तपंसो वीर्यं विद्वा स्तप्यंते। भवंत्येव। तद्वा इदमापंः सिलुलमांसीत्। सोंऽरोदीत्प्रजापंतिः॥५२॥

स कस्मां अज्ञि। यद्यस्या अप्रंतिष्ठाया इतिं। यद्प्स्वंवापंद्यत। सा पृथिव्यंभवत्। यद्यमृष्ट। तद्न्तिरक्षिमभवत्। यदूर्वमुदमृष्ट। सा द्यौरंभवत्। यदरोदीत्। तद्नयो रोदस्त्वम्॥५३॥

य एवं वेदे। नास्यं गृहे रुंदिन्ति। एतद्वा एषां लोकानां जन्मं। य एवमेषां लोकानां जन्म वेदे। नैषु लोकेष्वार्तिमार्च्छति। स इमां प्रतिष्ठामंविन्दत। स इमां प्रतिष्ठां वित्वाऽकांमयत् प्रजांयेयेति। स तपोंऽतप्यत। सोंऽन्तर्वानभवत्। स ज्घनादसुंरानसृजत॥५४॥

तेभ्यों मृन्मये पात्रेऽन्नंमदुहत्। याऽस्य सा तुनूरासींत्। तामपाहत। सा तिमस्राऽभवत्। सोकामयत् प्रजायेयेति। स तपोऽतप्यत। सौन्तर्वानभवत्। स प्रजनंनादेव प्रजा असृजत। तस्मादिमा भूयिष्ठाः। प्रजनंनाद्धोना असृजत॥५५॥

ताभ्यों दारुमये पात्रे पयोंऽदुहत्। याऽस्य सा तनूरासींत्। तामपांहत। सा जोत्स्रांऽभवत्। सोंऽकामयत् प्रजांयेयेतिं। स तपोंऽतप्यत। सोंऽन्तर्वानभवत्। स उंपपक्षाभ्यांमेवर्तूनंसृजत। तेभ्यों रज्ते पात्रें घृतमंदुहत्। याऽस्य सा तुनूरासींत्॥५६॥

तामपाहत। सोऽहोरात्रयोः सन्धिरंभवत्। सोऽकामयत् प्रजायेयेति। स तपोऽतप्यत। सोऽन्तर्वानभवत्। स मुखाँद्वानंसृजत। तेभ्यो हरिते पात्रे सोमंमदुहत्। याऽस्य सा तुनूरासीत्। तामपाहत। तदहंरभवत्॥५७॥

पृते वै प्रजापंतेर्दोहाँ:। य पृवं वेदं। दुह पृव प्रजाः। दिवा वै नोंऽभूदितिं। तद्देवानाँन्देवत्वम्। य पृवन्देवानाँन्देवत्वं वेदं। देववांनेव भंवति। पृतद्वा अंहोरात्राणां जन्मं। य पृवमंहोरात्राणां जन्म वेदं। नाहोरात्रेष्वार्तिमार्च्छति॥५८॥ अस्तोऽधि मनोंऽसृज्यत। मनंः प्रजापंतिमसृजत। प्रजापंतिः प्रजा अंसृजत। तद्वा इदं मनंस्येव पंर्मं प्रतिष्ठितम्। यदिदङ्किं चं। तदेतच्छ्वोवस्यसन्नाम् ब्रह्मं। व्युच्छन्तीं व्युच्छन्त्यस्मै वस्यंसीवस्यसी व्युंच्छति। प्रजायते प्रजयां प्शुभिः। प्र पंरमेष्ठिनो मात्रांमाप्नोति। य एवं वेदं॥५९॥

तद्भूयोंऽतप्यताभिनदरोदीत्प्रजापंतीरोद्स्त्वमंसृजुतासृंजत घृतमंदुह्द्याऽस्य तुनूरासीदहंरभवदच्छिति वेदं (इदं धूमौंऽग्निज्योंतिंर्चिर्मरींचय उदारास्तद्श्रः स जुघनात्सा तिमस्रा स प्रजनंनात्सा जोत्स्रा स उपपक्षाभ्यार् सोऽहोरात्रयोः सुन्धिः स मुखात्तदहेर्देववानमृन्मये दारुमये रजुते हरिंते तेभ्युस्ताभ्यो द्वे तेऽत्रृं पर्यो घृत॰ सोमम् ॥)॥९॥————[\S] प्रजापंतिरिन्द्रंमसृजतानुजावरन्देवानांम्। तं प्राहिणोत्। परेहि। एतेषाँन्देवानामधिपतिरेधीतिं। तन्देवा अंब्रुवन्। कस्त्वमिं। वयं वै त्वच्छेया रेसः स्म इति। सौंऽब्रवीत्। कस्त्वमिसं वयं वै त्वच्छ्रेया ईसः स्म इतिं मा देवा अवोचं निर्ति। अथ वा इदन्तर्हिं प्रजापंतौ हरं आसीत्॥६०॥ यदस्मिन्नांदित्ये। तदेनमब्रवीत्। एतन्मे प्रयंच्छ। अथाहमेतेषाँन्देवानामधिंपतिर्भविष्यामीतिं। कोंऽहङ् स्यामित्यं ब्रवीत्। एतत्प्रदायेतिं। एतत्स्या इत्यं ब्रवीत्। यदेतद्ववीषीतिं। को ह वै नामं प्रजापंतिः। य एवं वेदं॥६१॥ विदुरेनन्नाम्नां। तदंस्मै रुकां कृत्वा प्रत्यंमुश्रत्। ततो वा इन्द्रों

देवानामधिपतिरभवत्। य एवं वेदं। अधिपतिरेव संमानानां

भवति। सोंऽमन्यत। किङ्किं वा अंकर्मितिं। स चुन्द्रं मु आहरेति प्रार्लपत्। तच्चन्द्रमसश्चन्द्रमस्त्वम्। य एवं वेद्॥६२॥ चन्द्रवानेव भवति। तन्देवा अंब्रुवन्। सुवीयों मर्या यथां गोपायत् इतिं। तत्सूर्यस्य सूर्यत्वम्। य एवं वेदं। नैनंन्द्रभोति। कश्च नास्मिन्वा इदिमिन्द्रियं प्रत्यंस्थादितिं। तदिन्द्रंस्येन्द्रत्वम्। य एवं वेदं। इन्द्रियाव्येव भवति॥६३॥ अयं वा इदं पंरमों ऽभूदितिं। तत्पंरमेष्ठिनंः परमेष्ठित्वम्। य एवं वेदं। परमामेव काष्ठां गच्छति। तन्देवाः संमुन्तं पर्यविशन्। वसंवः पुरस्तांत्। रुद्रा देक्षिणतः। आदित्याः पश्चात्। विश्वे देवा उत्तरतः। अङ्गिरसः प्रत्यश्चम्॥६४॥ साध्याः पराश्चम्। य एवं वेदं। उपैनः समानाः संविंशन्ति। स प्रजापंतिरेव भूत्वा प्रजा आवंयत्। ता अंस्मै नातिष्ठन्तान्नाद्यांय। ता मुखं पुरस्तात्पश्यंन्तीः। दक्षिणतः पर्यायन्। स दंक्षिणतः पर्यवर्तयत। ता मुखं पुरस्तात्पश्यंन्तीः। मुखंन्दक्षिणतः॥६५॥

पृश्चात्पर्यायन्। स पृश्चात्पर्यवर्तयत। ता मुखं पुरस्तात्पश्यंन्तीः।
मुखंन्दक्षिणतः। मुखं पृश्चात्। उत्तर्तः पर्यायन्। स उत्तर्तः
पर्यवर्तयत। ता मुखं पुरस्तात्पश्यंन्तीः। मुखंन्दिष्विणतः।
मुखं पृश्चात्॥६६॥

मुखंमुत्तर्तः। ऊर्ध्वा उदांयन्। स उपरिष्टान्त्र्यंवर्तयत। ताः स्वंतोमुखो भूत्वाऽऽवंयत्। ततो वै तस्मैं प्रजा अतिष्ठन्तान्नाद्यांय। य एवं विद्वान्परि च वर्तयंते नि चं। प्रजापंतिरेव भूत्वा प्रजा अति। तिष्ठंन्तेऽस्मै प्रजा अन्नाद्यांय। अन्नाद एव भवंति॥६७॥

आसी्द्वेदं चन्द्रमुस्त्वं य एवं वेदेंन्द्रियाव्येव भेवित प्रत्यश्चं मुर्खन्दक्षिणुतो मुर्खं पृश्चान्नवं च॥१०॥ [१०]

प्रजापितिरकामयत बहोर्भूयाँन्तस्यामिति। स एतन्दशंहोतारमपश्यत्। तं प्रायुंङ्कः। तस्य प्रयुंक्ति बहोर्भूयांनभवत्। यः कामयेंत बहोर्भूयाँन्त्स्यामिति। स दशंहोतारं प्रयुंश्चीत। बहोरेव भूयाँन्भवति। सोऽकामयत वीरो म् आजांयेतेति। स दशंहोतुश्चतुंरहोतारं निर्रमिमीत। तं प्रायुंङ्कः॥६८॥

तस्य प्रयुक्तीन्द्रोंऽजायत। यः कामयेत वीरो म् आजांयेतेतिं। स चतुरहोतारं प्रयुंश्चीत। आऽस्यं वीरो जांयते। सोंऽकामयत पशुमान्त्स्यामितिं। स चतुरहोतुः पश्चहोतारं निरमिमीत। तं प्रायुंङ्का। तस्य प्रयुंक्ति पशुमानंभवत्। यः कामयेत पशुमान्त्स्यामितिं। स पश्चहोतारं प्रयुंश्चीत॥६९॥

पृशुमानेव भंवति। सोंऽकामयत्त्वों मे कल्पेर्न्नितिं। स पश्चंहोतुः षह्वोतारं निरंमिमीत। तं प्रायुंङ्कः। तस्य प्रयुंत्त्व्यृतवौंऽस्मा अकल्पन्त। यः कामयेत्त्वों मे कल्पेरन्नितिं। स षह्वोतारं प्रयुंक्षीत। कल्पंन्तेऽस्मा ऋतवेः। सोंऽकामयत सोमुपः सोमयाजी स्याम्। आ में सोमुपः सोमयाजी जांयेतेतिं॥७०॥

स षड्ढोतुः स्प्तहोतार् निरंमिमीत। तं प्रायुंङ्कः। तस्य प्रयुंक्ति सोम्पः सोमयाज्यंभवत्। आऽस्यं सोम्पः सोमयाज्यंजायत। यः कामयंत सोम्पः सोमयाजी स्याम्। आ में सोम्पः सोमयाजी जांयेतेति। स स्प्तहोतार् प्रयुंश्चीत। सोम्प एव सोमयाजी भंवति। आऽस्यं सोम्पः सोमयाजी जांयते। स वा एष पृशुः पंश्चधा प्रतितिष्ठति॥७१॥

पद्भिर्मुखेन। ते देवाः पृशून् वित्वा। सुवृगं लोकमायन्। तेऽमुष्मिंश्लोंके व्यक्षुध्यन्। तेंऽब्रुवन्। अमुतः प्रदानं वा उपंजिजीविमेतिं। ते सप्तहोतारं यृज्ञं विधायायास्यम्। आङ्गीर्सं प्राहिण्वन्। एतेनामुत्रं कल्प्येतिं। तस्य वा इयङ्क्षितिः॥७२॥

यदिदङ्किं चं। य एवं वेदं। कल्पंतेऽस्मै। स वा अयं मंनुष्यंषु यज्ञः सप्तहोता। अमुत्रं सुद्धो देवेभ्यो हृव्यं वंहित। य एवं वेदं। उपैनं यज्ञो नंमित। यो वै चतुंरहोतृणान्निदानं वेदं। निदानंवान्भवित। अग्निहोत्रं वै दशहोतुर्निदानम्। दर्शपूर्णमासौ चतुंरहोतुः। चातुर्मास्यानि पश्चंहोतुः। पृशुबन्धष्यङ्कोतुः। सौम्योंऽध्वरः सप्तहोतुः। एतद्वै चतुंरहोतृणान्निदानम्। य एवं वेदं। निदानंवान्भवित॥७३॥

अमिमीत् तं प्रायुंङ्क पश्चंहोतार्ं प्र युंञ्जीत जायेतेतिं तिष्ठति क्रृप्तिर्दर्शहोतुर्निदानर् सप्त चं॥११॥

[\$ \$]

प्रजापंतिरकामयत प्रजाः सृंज्येति प्रजापंतिरकामयत दर्शपूर्णमासौ सृंज्येति प्रजापंतिरकामयत् प्रजायेयेति स तपः स त्रिवृत्तं प्रजापंतिरकामयत् दर्शहोतार् तेनं दश्धाऽऽत्मानं देवा वै वर्रणमन्तो वै प्रजापंतिरकामयत सृष्टाः समिश्चिष्यन्देवा वै चतुंर्होतृभिरिदं वा अग्रे प्रजापंतिरन्द्रं प्रजापंतिरकामयत बहोर्भूयानेकांदश॥११॥ प्रजापंतिस्तद्वहंस्य प्रजापंतिरकामयतानयैवैनृत्तस्य वा इयं क्रृतिस्तस्मात्तेपानाञ्चोतिर्यदस्मिन्नांदित्ये स षङ्कांतुः सप्तहोतार्त्रिसंप्ततिः॥७३॥ प्रजापंतिरकामयत निदानंवान्भवति॥

हरिंः ओम्॥ ॥इति श्रीकृष्णयजुर्वेदीयतैत्तिरीयब्राह्मणे द्वितीयाष्टके द्वितीयः प्रपाठकः समाप्तः॥

॥ तृतीयः प्रश्नः॥

॥ तैत्तिरीयब्राह्मणे द्वितीयाष्टके तृतीयः प्रपाठकः॥

ब्रह्मवादिनों वदन्ति। किश्चतुंर्होतृणाश्चतुर्होतृत्वमितिं। यदेवैषु चंतुर्धा होतांरः। तेन चतुंर्होतारः। तस्माचतुंर्होतार उच्यन्ते। तचतुर्रहोतृणाश्चतुर्होतृत्वम्। सोमो वै चतुंर्होता। अग्निः पश्चहोता। धाता षड्ढोता। इन्द्रंः सप्तहोता॥१॥

प्रजापंतिर्दर्शहोता। य एवश्चतुंरहोतृणामृद्धिं वेदे। ऋभ्नोत्येव। य एषामेवं बन्धुतां वेदे। बन्धुंमान्भवति। य एषामेवं ऋप्तिं वेदे। कल्पंतेऽस्मै। य एषामेवमायतेनं वेदे। आयतेनवान्भवति। य एषामेवं प्रतिष्ठां वेदे॥२॥

प्रत्येव तिष्ठति। ब्रह्मवादिनों वदन्ति। दर्शहोता चतुंर्होता।
पश्चहोता षड्ढांता सप्तहोता। अथ् कस्माचतुंर्होतार
उच्यन्त इति। इन्द्रो वै चतुंर्होता। इन्द्रः खलु
वै श्रेष्ठों देवतानामुपदेशनात्। य एविमन्द्रक्ष् श्रेष्ठं
देवतानामुपदेशनाद्धेदे। विसेष्ठः समानानां भवति।
तस्माच्छ्रेष्ठमायन्तं प्रथमेनैवानुं बुध्यन्ते। अयमागन्।
अयमवासादितिं। कीर्तिरस्य पूर्वाऽऽगंच्छिति जनतांमायतः।
अथों एनं प्रथमेनैवानुं बुध्यन्ते। अयमागन्। अयमवांसादितिं॥३॥

सप्तहोंता प्रतिष्ठां वेदं बुध्यन्ते षद्वं॥१॥------[१]

दक्षिणां प्रतिग्रहीष्यन्त्सप्तदंशकृत्वोऽपाँन्यात्। आत्मानंमेव

सिनिन्धे। तेजंसे वीर्याय। अथौं प्रजापंतिरेवैनौं भूत्वा प्रति गृह्णाति। आत्मनोऽनौत्यै। यद्येनमार्त्विज्याद्भृत १ सन्तित्रिर्हरेरन्। आग्नीधे जुहुयाद्दशंहोतारम्। चृतुर्गृहीतेनाज्येन। पुरस्तौत्प्रत्यिङ्ग्रष्टन्। प्रतिलोमं विग्राहम्॥४॥

प्राणानेवास्योपं दासयति। यद्येनं पुनंरुप् शिक्षेयः। आग्नींध्र एव जुंहुयाद्दशंहोतारम्। चृतुर्गृहीतेनाज्येन। पृश्चात्प्राङासीनः। अनुलोममविग्नाहम्। प्राणानेवास्मे कल्पयति। प्रायंश्चित्ती वाग्घोतेत्यृतुमुखऋंतुमुखे जुहोति। ऋतूनेवास्मे कल्पयति। कल्पंन्तेऽस्मा ऋतवंः॥५॥

क्रुप्ता अंस्मा ऋतव आयंन्ति। षड्ढांता वै भूत्वा प्रजापंतिरिदश् सर्वमसृजत। स मनोंऽसृजत। मन्सोऽधिं गायत्रीमंसृजत। तद्गायत्रीं यशं आर्च्छत्। तामाऽलंभत। गायत्रिया अधि छन्दाईस्यसृजत। छन्दोभ्योऽधि सामं। तत्साम् यशं आर्च्छत्। तदाऽलंभत॥६॥

साम्रोऽधि यजू रेष्यसृजत। यजुर्भ्योऽधि विष्णुम्। तिद्वेष्णुं यशं आर्च्छत्। तमाऽलंभत। विष्णोरध्योषंधीरसृजत। ओषंधीभ्योऽधि सोमम्। तत्सोमं यशं आर्च्छत्। तमाऽलंभत। सोमादिधं पृशूनंसृजत। पृशुभ्योऽधीन्द्रम्॥७॥

तदिन्द्रं यशं आर्च्छत्। तदेनुन्नाति प्राच्यंवत। इन्द्रं इव यशुस्वी भंवति। य एवं वेदं। नैनं यशोऽति प्रच्यंवते। यद्वा इदङ्किं चं। तत्सर्वमृत्तान पुवाङ्गीर्सः प्रत्यंगृह्णात्। तदेनं प्रतिगृहीत्न्नाहिनत्। यत्किं चं प्रतिगृह्णीयात्। तत्सर्वमृत्तानस्त्वाङ्गीर्सः प्रतिगृह्णात्वत्येव प्रतिगृह्णीयात्। इयं वा उत्तान आङ्गीर्सः। अनयेवैनत्प्रति गृह्णाति। नैनर् हिनस्ति। बर्हिषा प्रतीयाद्वां वाऽश्वं वा। पृतद्वे पंशूनां प्रियं धामं। प्रियेणैवैनं धाम्ना प्रत्येति॥८॥

यो वा अविद्वान्निवर्तयंते। विशीर्षा सपाँप्माऽमुष्मिं ह्याँके भंवति। अथ यो विद्वान्निवर्तयंते। सशीर्षा विपाँप्माऽमुष्मिं ह्याँके भंवति। देवता वै स्प्त पृष्टिकामा न्यंवर्तयन्त। अग्निश्चं पृथिवी चं। वायुश्चान्तरिक्षं च। आदित्यश्च द्यौश्चं चन्द्रमाः। अग्निर्यंवर्तयत। स सांहस्रमंपुष्यत्॥९॥

पृथिवी न्यंवर्तयत। सौषंधीभिर्वन्स्पतिंभिरपुष्यत्। वायुर्न्यंवर्तयत। स मरींचीभिरपुष्यत्। अन्तरिंक्षृन्न्यंवर्तयत। तद्वयोभिरपुष्यत्। आदित्यो न्यंवर्तयत। स रिष्टमिभिरपुष्यत्। द्यौर्न्यंवर्तयत। सा नक्षंत्रैरपुष्यत्। चन्द्रमा न्यंवर्तयत। सौंऽहोरात्रैर्र्धमासैर्मासैर्न्न्यत्भिः संवत्सरेणांपुष्यत्। तान्योषांन्पुष्यति। याइस्तेऽपुष्यन्। य पृवं विद्वान्नि चं वर्तयंते परिं च॥१०॥

तस्य वा अग्नेर्हिरंण्यं प्रतिजग्रहुषंः। अर्धिमिन्द्रियस्यापाँकामत्। तदेतेनैव प्रत्यंगृह्णात्। तेन वै सौंऽर्धिमिन्द्रियस्यात्मन्नुपार्धत्त। अर्धिमिन्द्रियस्यात्मन्नुपार्धत्ते। य एवं विद्वान् हिरंण्यं प्रतिगृह्णातिं। अथ् योऽविद्वान्प्रति गृह्णातिं। अर्धमंस्येन्द्रियस्यापं क्रामति। तस्य वै सोमंस्य वासंः प्रतिजग्रहुषंः। तृतींयमिन्द्रियस्यापाँकामत्॥११॥

तदेतेनैव प्रत्यंगृह्णात्। तेन् वै स तृतींयमिन्द्रियस्यात्मन्नुपाधंत्त। तृतीयमिन्द्रियस्यात्मन्नुपार्धत्ते। य एवं विद्वान् वासंः प्रतिगृह्णातिं। अथु योऽविंद्वान्प्रति गृह्णातिं। तृतींयमस्येन्द्रियस्यापं कामित। तस्य वै रुद्रस्य गां प्रतिजग्रहुषंः। चतुर्थमिन्द्रियस्यापौकामत्। तामेतेनैव प्रत्यंगृह्णात्। तेन् वै स चंतुर्थमिन्द्रियस्यात्मन्तुपाधंत्त॥१२॥ चतुर्थिमिन्द्रियस्यात्मन्नुपाधेत्ते। य एवं विद्वान्गां प्रीतिगृह्णातिं। अथ योऽविंद्वान्प्रतिगृह्णातिं। चतुर्थमंस्येन्द्रियस्यापं ऋामति। तस्य वै वर्रणस्यार्श्वं प्रतिजग्रहुषंः। पृश्चमिनिद्वयस्यापाँकामत्। तमेतेनैव प्रत्यंगृह्णात्। तेन् वै सं पंश्चमिनिद्रयस्यात्मन्नुपाधंत्त। पश्चमिन्द्रियस्यात्मनुपार्धत्ते। य पुवं विद्वानश्वं प्रतिगृह्णातिं॥१३॥ अथ योऽविंद्वान्प्रतिगृह्णातिं। पुश्चममंस्येन्द्रियस्यापं क्रामित। तस्य वै प्रजापंतेः पुरुषं प्रतिजग्रह्षंः। षष्ठमिन्द्रियस्यापाँकामत्। तमेतेनैव प्रत्यंगृह्णात्। तेन् वै स षष्ठमिन्द्रियस्यात्मन्नुपार्धत्त। षष्ठमिन्द्रियस्यात्मन्नुपार्धत्ते। य पुवं विद्वान्पुरुषं प्रतिगृह्णातिं। अथ् योऽविद्वान्प्रतिगृह्णातिं।

षष्ठमंस्येन्द्रियस्यापं क्रामति॥१४॥

तस्य वै मनोस्तर्ल्पं प्रतिजग्रहुषंः। सप्तमिनिद्वयस्यापाँकामत्। तमेतेनैव प्रत्यंगृह्णात्। तेन वै स संप्तमिनिद्वयस्यात्मत्रुपाधंत्त। सप्तमिनिद्वयस्यात्मत्रुपाधंत्ते। य एवं विद्वाइस्तर्ल्पं प्रति गृह्णातिं। अथ् योऽविद्वान्प्रति गृह्णातिं। सप्तममंस्येन्द्रियस्यापं क्रामित। तस्य वा उत्तानस्याङ्गीर्सस्याप्रांणत्प्रतिजग्रहुषंः। अष्टमिनिद्वयस्यापाँकामत्॥१५॥

तदेतेनैव प्रत्यंगृह्णात्। तेन् वै सौंऽष्ट्रमिनिद्भयस्यात्मत्रुपार्धत्त। अष्ट्रमिनिद्भयस्यात्मत्रुपार्धत्ते। य एवं विद्वानप्राणत्प्रतिगृह्णाति। अथ्य योऽविद्वान्प्रतिगृह्णाति। अष्ट्रममेस्येन्द्रियस्यापं क्रामित। यद्वा इदङ्किं चं। तत्सर्वमुत्तान एवाङ्गीर्सः प्रत्यंगृह्णात्। तदेनं प्रतिगृहीत्न्नाहिनत्। यत्किं चं प्रतिगृह्णीयात्। तत्सर्वमुत्तानस्त्वाङ्गीर्सः प्रतिगृह्णात्वत्येव प्रतिगृह्णीयात्। द्वयं वा उत्तान आङ्गीर्सः। अनयैवैन्त्प्रतिं गृह्णाति। नैन र् हिनस्ति॥१६॥

तृतीयमिन्द्रियस्यापाँकामचतुर्थिमिन्द्रियस्यात्मज्ञुपाधृतार्थं प्रतिगृह्णति पृष्ठमंस्येन्द्रियस्यापंकामत्यष्ट्मिमिन्द्रियस्यापाँकामत्यिति च (तस्य वा अग्नेर्हिरंण्युः सोमंस्य वास्तत्देतेनं रुद्रस्य गान्तामेतेन वरुणस्यार्थं प्रजापंतेः पुरुषं मनोस्तल्पन्तमेतेनौत्तानस्य तदेतेनाप्राण्यद्धे। अर्थं तृतीयमष्ट्रमं तचतुर्थं तां पश्चमः पृष्ठः संप्तमन्तम्। तदेतेन द्वे तामेतेनकं तमेतेन त्रीणि तदेतेनकम्॥॥॥॥॥
[४]
ब्रह्मवादिनो वदन्ति। यद्दर्शहोतारः सुत्रमास्त। केन् ते गृहपतिनाऽऽर्भुवन्। केनं प्रजा असृजन्तेति।

प्रजापंतिना वै ते गृहपंतिनाऽऽर्ध्रुवन्। तेनं प्रजा अंसृजन्त। यचतुंर्होतारः स्त्रमासंत। केन् ते गृहपंतिनाऽऽर्ध्रुवन्। केनौषंधीरसृजन्तेतिं। सोमेन् वै ते गृहपंतिनाऽऽर्ध्रुवन्॥१७॥

तेनौषंधीरसृजन्त। यत्पश्चंहोतारः सृत्रमासंत। केन् ते गृहपंतिनाऽऽर्ध्रुवन्। केनैभ्यो लोकभ्योऽसुंरान्प्राणुंदन्त। केनैषां पृशूनंवृञ्जतेतिं। अग्निना वै ते गृहपंतिनाऽऽर्ध्रुवन्। तेनैभ्यो लोकभ्योऽसुंरान्प्राणुंदन्त। तेनैषां पृशूनंवृञ्जत। यथ्यङ्कांतारः सृत्रमासंत। केन् ते गृहपंतिनाऽऽर्ध्रुवन्॥१८॥

केन्तूनंकल्पयन्तेतिं। धात्रा वै ते गृहपंतिनाऽऽर्ध्रुवन्। तेन्तूनंकल्पयन्त। यत्सप्तहोतारः सत्त्रमासंत। केन् ते गृहपंतिनाऽऽर्ध्रुवन्। केन् सुवंरायन्। केन्माल्लौंकान्त्समंतन्वन्नितिं। अर्यम्णा वै ते गृहपंतिनाऽऽर्ध्रुवन्। तेन् सुवंरायन्। तेन्माल्लौंकान्त्समंतन्वन्नितिं॥१९॥

पृते वै देवा गृहपंतयः। तान् य एवं विद्वान्। अप्यन्यस्यं गार्हपते दीक्षते। अवान्तरमेव स्त्रिणांमृभ्नोति। यो वा अर्यमणं वेदं। दानंकामा अस्मै प्रजा भवन्ति। युज्ञो वा अर्यमा। आर्यावस्तिरिति वै तमांहुर्यं प्रशिश्सन्ति। आर्यावस्तिर्भवति। य एवं वेदं॥२०॥

यद्वा इदङ्किं चं। तत्सर्वं चतुंर्होतारः। चतुंर्होतृभ्योऽधिं यज्ञो निर्मितः। स य एवं विद्वान् विवदेत। अहमेव भूयों वेद। यश्चतुंरहोतृन् वेदेतिं। स ह्यंव भूयो वेदं। यश्चतुंरहोतृन् वेदं। यो वै चतुंरहोतृणाु होतृन् वेदं। सर्वांसु प्रजास्वन्नंमित्त॥२१॥

सर्वा दिशोऽभि जंयित। प्रजापंतिर्वे दर्शहोतृणा् होतां। सोम्श्चतुंरहोतृणा् होतां। अग्निः पश्चंहोतृणा् होतां। धाता षड्ढोतृणा् होतां। अर्यमा सप्तहोतृणा् होतां। एते वै चतुंरहोतृणा् होतांरः। तान् य एवं वेदं। सर्वासु प्रजास्वन्नंमित्। सर्वा दिशोऽभि जंयित॥२२॥

आर्धुवृत्त्रार्धुवृत्त्रित्येवं वेदाँत्ति सर्वा दिशोऽभि जंयति (वै तेनं सुत्रङ्केनं ॥)॥५॥———[५]

प्रजापंतिः प्रजाः सृष्ट्वा व्यंस्रश्सत। स हृदंयं भूतोंऽशयत्। आत्मन् हा ३ इत्यह्वंयत्। आपः प्रत्यंशृण्वन्। ता अग्निहोत्रेणैव यंज्ञऋतुनोपं पूर्यावर्तन्त। ताः कुसिन्धमुपौहन्। तस्मादग्निहोत्रस्यं यज्ञऋतोः। एकं ऋत्विक्। चृतुष्कृत्वोऽह्वंयत्। अग्निर्वायुरादित्यश्चन्द्रमाः॥२३॥

ते प्रत्यंशृण्वन्। ते देर्शपूर्णमासाभ्यामेव यंज्ञऋतुनोपं पूर्यावंतन्त। त उपौह इश्चत्वार्यङ्गांनि। तस्माद्दशपूर्णमासयौर्यज्ञऋतं चत्वारं ऋत्विजाः। पृश्चकृत्वोऽह्वंयत्। पृशवः प्रत्यंशृण्वन्। ते चातुर्मास्यैरेव यंज्ञऋतुनोपं पूर्यावंतन्त। त उपौहं लोमं छुवीं मार्समस्थिं मुज्ञानम्। तस्माचातुर्मास्यानां यज्ञऋतोः॥२४॥

पश्चर्त्विजः। षद्भृत्वोऽह्वंयत्। ऋतवः प्रत्यंशृण्वन्। ते पंशुबन्धेनैव यंज्ञऋतुनोपंपूर्यावंर्तन्त। त उपौहुन्तस्तनांवाण्डौ

शिष्ठमवा श्रं प्राणम्। तस्मौत्पशुबन्धस्यं यज्ञकृतोः। षडुत्विजीः। स्प्तकृत्वोऽह्वंयत्। होत्राः प्रत्यंशृण्वन्। ताः सौम्येनैवाध्वरेणं यज्ञकृतुनोपंपूर्यावंतन्त॥२५॥

ता उपौहन्त्सप्त शीर्षण्यांन्प्राणान्। तस्मांत्सौम्यस्यांध्वरस्यं यज्ञकृतोः। सप्त होत्राः प्राचीर्वषंद्भुवन्ति। दशकृत्वोऽह्नयत्। तपः प्रत्यंश्रणोत्। तत्कर्मणैव संवत्सरेण सर्वैर्यज्ञकृतुभिरुपं पर्यावंतित। तत्सर्वमात्मानमपरिवर्गमुपौहत्। तस्मांत्संवत्सरे सर्वे यज्ञकृतवोऽवंरुध्यन्ते। तस्माद्दशंहोता चतुर्होता। पर्श्वहोता षङ्कोता सप्तहोता। एकहोत्रे बिलिश हर्रन्ति। हर्रन्त्यस्मे प्रजा बिलिम्। ऐन्मप्रतिख्यातं गच्छति। य एवं वेदं॥२६॥

च्द्रमां श्रातृम् प्यानं यज्ञक्तोरं प्रयानं यज्ञक्तानं प्रयावंतिन स्ववति च्वाति चादा [६]
प्रजापितिः पुरुषमसृजत। सौं ऽग्निरं ब्रवीत्। ममायमन्नम् स्त्विति।
सोऽबिभेत्। सर्वं वे माऽयं प्र धंक्ष्यतीति। स
प्ता अतुरहोतृनात्मस्परंणानपश्यत्। तानं जुहोत्। तैर्वे
स आत्मानं मस्पृणोत्। यदंग्निहोत्रं जुहोति। एकंहोतारमेव
तद्यं ज्ञकतुमां प्रोत्यग्निहोत्रम्॥२७॥

कुसिन्धश्चात्मनंः स्पृणोतिं। आदित्यस्यं च सांयुज्यं गच्छति। चतुरुन्नंयति। चतुंर्होतारमेव तद्यंज्ञऋतुमाँप्नोति दर्शपूर्णमासौ। चत्वारिं चात्मनोऽङ्गांनि स्पृणोतिं। आदित्यस्यं च सायुंज्यं गच्छति। चतुरुन्नंयति। समित्पंश्चमी। पश्चंहोतारमेव तद्यंज्ञऋतुमाँप्रोति चातुर्मास्यानि। लोमं छुवीं मार्समस्थिं मञ्जानम्॥२८॥

तानिं चात्मनंः स्पृणोतिं। आदित्यस्यं च सायुंज्यं गच्छति। चतुरुन्नंयति। द्विर्जुंहोति। षड्ढोतारमेव तद्यंज्ञऋतुमाँप्नोति पशुबन्धम्। स्तनांवाण्डौ शिश्ञमवांश्चं प्राणम्। तानिं चात्मनंः स्पृणोति। आदित्यस्यं च सायुंज्यं गच्छति। चतुरुन्नंयति। द्विर्जुहोति॥२९॥

स्मित्संप्तमी। स्प्तहोतारमेव तद्यंज्ञऋतुमाँप्रोति सौम्यमंध्वरम्।
स्प्त चात्मनंः शीर्षण्यांन्प्राणान्त्स्पृणोति। आदित्यस्यं च
सायुंज्यं गच्छति। चतुरुन्नयित। द्विर्जुहोति। द्विर्निमाँष्टि।
द्विः प्राश्ञांति। दशंहोतारमेव तद्यंज्ञऋतुमाँप्रोति संवत्स्रम्।
सर्वं चात्मान्मपंरिवर्गः स्पृणोति। आदित्यस्यं च सायुंज्यं
गच्छति॥३०॥

अग्निहोत्रं मुज्ञानुन्द्विर्जुहोत्यपंरिवर्गः स्पृणोत्येकं च॥७॥------[७]

प्रजापंतिरकामयत् प्र जांयेयेतिं। स तपांऽतप्यत। सांउन्तर्वानभवत्। सहिरंतः श्यावांऽभवत्। तस्मात्स्र्यंन्तर्वन्नी। हरिणी सती श्यावा भवति। स विजायंमानो गर्भेणाताम्यत्। स तान्तः कृष्णः श्यावांऽभवत्। तस्मांतान्तः कृष्णः श्यावो भवति। तस्यासुरेवाजींवत्॥३१॥

तेनासुनाऽसुंरानसृजत। तदसुंराणामसुर्त्वम्।

एवमस्राणामस्र्त्वं वेदं। अस्मान्व भंवति। नैन्मस्र्जिहाति। सोऽस्रान्त्सृष्ट्वा पितेवांमन्यत। तदन् पितृनंसृजत। तत्पितृणां पितृत्वम्। य एवं पितृणां पितृत्वं वेदं। पितेवैव स्वानां भवति॥३२॥

यन्त्यंस्य पितरो हवम्ं। स पितृन्त्सृष्ट्वाऽऽमंनस्यत्। तदनुं मनुष्यांनसृजतः। तन्मंनुष्यांणां मनुष्यत्वम्। य एवं मंनुष्यांणां मनुष्यत्वं वेदं। मनस्त्रेव भवितः। नैनं मनुंर्जहाति। तस्में मनुष्यांन्त्ससृजानायं। दिवां देवत्राऽभंवत्। तदनुं देवानंसृजतः। तद्देवानांन्देवत्वम्। य एवन्देवानांन्देवत्वं वेदं। दिवां हैवास्यं देवत्रा भंवति। तानि वा एतानिं चत्वार्यम्भारंसि। देवा मंनुष्याः पितरोऽसुंराः। तेषु सर्वेष्वम्भो नभं इव भवितः। य एवं वेदं॥३३॥

अजीवत्स्वानां भवति देवानंसृजत सप्त चं॥८॥______[८]

ब्रह्मवादिनों वदन्ति। यो वा इमं विद्यात्। यतोऽयं पर्वते। यदंभि पर्वते। यदंभि संपर्वते। सर्वमायुंरियात्। न पुराऽऽयुंषः प्र मीयेत। पृशुमान्तस्यौत्। विन्देतं प्रजाम्। यो वा इमं वेदं॥३४॥

यतोऽयं पर्वते। यदंभि पर्वते। यदंभि संपर्वते। सर्वमायंरेति। न पुराऽऽयुंषः प्र मीयते। पृशुमान्भवति। विन्दते प्रजाम्। अन्द्यः पंवते। अपोऽभि पंवते। अपोऽभि सम्पंवते॥३५॥ अस्याः पंवते। इमाम्भि पंवते। इमाम्भि सम्पंवते। अग्नेः पंवते। अग्निम्भि पंवते। अग्निम्भि सं पंवते। अन्तरिक्षात्पवते। अन्तरिक्षम्भि पंवते। अन्तरिक्षम्भि सं पंवते। आदित्यात्पंवते॥३६॥

आदित्यम्भि पंवते। आदित्यम्भि सं पंवते। द्योः पंवते। दिवंम्भि पंवते। दिवंम्भि सं पंवते। दिग्भ्यः पंवते। दिशोऽभि पंवते। दिशोऽभि सम्पंवते। स यत्पुरस्ताद्वाति। प्राण एव भूत्वा पुरस्तौद्वाति॥३७॥

तस्मौत्पुरस्ताद्वान्तम्। सर्वां प्रजाः प्रतिं नन्दन्ति। प्राणो हि प्रियः प्रजानांम्। प्राण इंव प्रियः प्रजानां भवति। य एवं वेदं। स वा एष प्राण एव। अथ् यद्देक्षिणतो वाति। मात्रिश्वेव भूत्वा देक्षिणतो वांति। तस्मौद्दक्षिणतो वान्तं विद्यात्। सर्वा दिश आ वांति॥३८॥

सर्वा दिशोऽनु वि वांति। सर्वा दिशोऽनु सं वातीति। स वा एष मांतिरश्वेव। अथ यत्पश्चाद्वाति। पर्वमान एव भूत्वा पृश्चाद्वांति। पूतमंस्मा आहंरन्ति। पूतमुपंहरन्ति। पूतमंश्ञाति। य एवं वेदं। स वा एष पर्वमान एव॥३९॥

अथ् यद्त्रेत्तर्तो वार्ति। स्वितेव भूत्त्वोत्तर्तो वार्ति। स्वितेव स्वानां भवति। य एवं वेदं। स वा एष संवितेव। ते य एनं पुरस्तांदायन्तंमुप्वदंन्ति। य एवास्यं पुरस्तांत्पाप्मानंः। ताइस्तेऽपं घ्रन्ति। पुरस्तादितंरान्पाप्मनंः सचन्ते। अथ् य एंनन्दक्षिणत आयन्तंमुपवदंन्ति॥४०॥

य एवास्यं दक्षिणतः पाप्मानंः। ता इस्ते ५ प्रन्ति। दक्षिणत इतरान्पाप्मनः सचन्ते। अथ य एनं पश्चादायन्तंमुप वदंन्ति। य एवास्यं पश्चात्पाप्मानंः। ताङ्स्तेऽपं घ्रन्ति। पश्चादितंरान्याप्मनः सचन्ते। अथ् य एनमुत्तर्त आयन्तंमुप् वदंन्ति। य एवास्यौत्तरतः पाप्मानः। ताङ्स्तेऽपं घ्रन्ति॥४१॥ उत्तरत इतरान्पाप्मनंः सचन्ते। तस्मदिवं विद्वान्। वीवं नृत्येत्। प्रेवं चलेत्। व्यस्यंवाक्ष्यौ भाषेत। मण्टयंदिव। क्राथयेदिव। शृङ्गायेतेव। उत मोपं वदेयुः। उत मे पाप्मानमपं हन्युरितिं। स यान्दिशर् सनिमेष्यन्तस्यात्। यदा तान्दिशं वातों वायात्। अथ प्रवेयात्। प्र वां धावयेत्। सातमेव रेदितं व्यूंढं गन्धमभि प्रच्यंवते। आऽस्य तं जनपदं पूर्वा कीर्तिर्गच्छति। दानंकामा अस्मै प्रजा भंवन्ति। य एवं वेदं॥४२॥

वेद सं पंवत आदित्यात्पंवते बात्या बाँत्येष पर्वमान एव दक्षिण्त आयन्तम्पृ वर्दन्त्युत्तर्तः पाण्मान्स्तार स्तेपं घ्रन्तीत्यृष्टौ चं॥१॥————[९] प्रजापंतिः सोम् १ राजांनमसृजत। तन्नयो वेदा अन्वंसृज्यन्त। तान् हस्तेंऽकुरुत। अथ् ह सीतां सावित्री। सोम् १ राजांनश्चकमे। श्रृद्धामु स चंकमे। साऽऽहं पितरं प्रजापंतिमुपंससार। त१ होवाच। नमंस्ते अस्तु भगवः। उपं त्वाऽयानि॥४३॥

प्रत्वां पद्ये। सोमं वै राजांनङ्कामये। श्रृद्धामु स कांमयत् इति। तस्यां उ ह स्थांग्रमंलङ्कारङ्कंल्पयित्वा। दशहोतारं पुरस्तांद्याख्यायं। चतुंरहोतारन्दक्षिणतः। पश्चंहोतारं पृश्चात्। षड्ढोतारमुत्तर्तः। सप्तहोतारमुपरिष्टात्। सम्भारेश्च पिनिभिश्च मुखेंऽलङ्कत्यं॥४४॥

आऽस्यार्धं वंब्राज। ता होदीक्ष्योंवाच। उप मा वंर्तस्वेतिं। त होवाच। भोगन्तु मृ आचंक्ष्व। पृतन्मृ आचंक्ष्व। यत्तें पाणावितिं। तस्यां उह त्रीन् वेदान्प्रदेदौ। तस्मादुहु स्त्रियो भोगमैव हारयन्ते। स यः कामयेत प्रियः स्यामितिं॥४५॥

यं वा कामयेत प्रियः स्यादिति। तस्मां एतः स्थाग्रमंलङ्कारङ्केल्पयित्वा। दशंहोतारं पुरस्ताँ द्याख्यायं। चतुर्होतारन्दक्षिणतः। पश्चंहोतारं पृश्चात्। षङ्कोतारमुत्तर्तः। सम्भारेश्च पिनिभिश्च मुखेंऽलङ्कृत्यं। आस्यार्धं व्रंजेत्। प्रियो हैव भवति॥४६॥

अयान्यलङ्कृत्यं स्यामितिं भवति॥१०॥————[१०]

ब्रह्मौत्मुन्वदंसृजत। तदंकामयत। समात्मनां पद्येयेतिं। आत्मुन्नात्मुन्नित्यामंत्रयत। तस्मैं दश्म १ हूतः प्रत्यंशृणोत्। स दशंहूतोऽभवत्। दशंहूतो हु वै नामैषः। तं वा पृतन्दशंहूत १ सन्तम्। दशंहोतेत्याचंक्षते प्रोक्षेण। प्रोक्षंप्रिया इव हि देवाः॥४७॥ आत्मन्नात्मन्नित्यामंत्रयत। तस्मैं सप्तम हूतः प्रत्यंशृणोत्। स स्प्तहूंतोऽभवत्। स्प्तहूंतो हु वै नामैषः। तं वा एत स्प्तहूंत स्तर्म्। स्प्तहोतेत्याचं क्षते प्रोक्षंण। प्रोक्षंप्रिया इव हि देवाः। आत्मन्नात्मन्नित्यामंत्रयत। तस्मै षष्ठ हूतः प्रत्यंशृणोत्। स षड्ढंतोऽभवत्॥४८॥

षड्ढूंतो हु वै नामैषः। तं वा एतः षड्ढूंतः सन्तम्। षड्ढ्योतेत्याचंक्षते परोक्षंण। परोक्षंप्रिया इव हि देवाः। आत्मन्नात्मन्नित्यामंत्रयत। तस्में पश्चमः हूतः प्रत्यंशृणोत्। स पश्चंहूतोऽभवत्। पश्चंहूतो हु वै नामैषः। तं वा एतं पश्चंहूतः सन्तम्। पश्चंहोतेत्याचंक्षते परोक्षंण॥४९॥

प्रोक्षंप्रिया इव हि देवाः। आत्मुन्नात्मृन्नित्यामंत्रयत। तस्मैं चतुर्थ १ हूतः प्रत्यंश्वणोत्। स चतुर्ह्तोऽभवत्। चतुर्ह्तो ह् वै नामेषः। तं वा एतश्चतुर्हृत् सन्तम्। चतुर्ह्तित्याचंक्षते प्रोक्षंण। प्रोक्षंप्रिया इव हि देवाः। तमंत्रवीत्। त्वं वै मे नेदिष्ठ १ हूतः प्रत्यंश्रौषीः। त्वयंनानाख्यातार् इति। तस्मान्नु हैना १ श्वतुर्होतार् इत्याचंक्षते। तस्मांच्छुश्रूषुः पुत्राणा १ हद्यंतमः। नेदिष्ठो हद्यंतमः। नेदिष्ठो ब्रह्मंणो भवति। य एवं वेदं॥५०॥

देवाष्यडॣं तो ऽभवृत्पर्ञ्चहोतेत्याचंक्षते पुरोक्षेणाश्रौषीष्यद्वं॥११॥————[१९]

ब्रह्मवादिनः किं दक्षिणां यो वा अविद्वान्तस्य वै ब्रह्मवादिनो यद्दर्शहोतारः प्रजापितुर्व्यसं

प्रजापंतिः पुरुषं प्रजापंतिरकामयत् स तपः सौंऽन्तर्वांन्ब्रह्मवादिनो् यो वा इमं विद्यात्प्रजापंतिः सोम् राजांनं ब्रह्मांत्मन्वदेकांदश॥११॥ ब्रह्मवादिन्स्तस्य वा अग्नेर्यद्वा इदिङ्कं चं प्रजापंतिरकामयत् य एवास्यं दक्षिणतः पंश्चाशत्॥५०॥ ब्रह्मवादिनो य एवं वेदं॥

हरिः ओम्॥ ॥इति श्रीकृष्णयजुर्वेदीयतैत्तिरीयब्राह्मणे द्वितीयाष्टके तृतीयः प्रपाठकः समाप्तः॥

॥चतुर्थः प्रश्नः॥

॥ तैत्तिरीयबाह्मणे द्वितीयाष्टके चतुर्थः प्रपाठकः॥

जुष्टो दर्मूना अतिथिर्दुरोणे। इमं नो यज्ञमुपं याहि विद्वान्। विश्वां अग्नेऽभियुजों विहत्यं। श्रृय्यतामा भंग् भोजंनानि। अग्ने शर्धं महते सौभंगाय। तवं द्युम्नान्यंत्तमानिं सन्तु। सञ्जांस्पत्य स्यम्मा कृण्ष्व। श्रृय्यताम्भि तिष्ठा महा सि। अग्ने यो नोऽभितो जनः। वृको वारो जिघा सिति॥१॥ ता स्त्वं वृत्रहं जिहि। वस्वस्मभ्यमा भंग्। अग्ने यो नोऽभिदासंति। स्मानो यश्च निष्ठाः। इध्मस्येव प्रक्षायंतः। मा तस्योच्छेषि किश्चन। त्विमेन्द्राभिभूरंसि। देवो विज्ञांतवीर्यः। वृत्रहा पुंरुचेतंनः। अप प्राचं इन्द्र विश्वारं अमित्रान्॥२॥

अपापांचो अभिभूते नुदस्व। अपोदींचो अपंशूराध्रा चं ऊरौ। यथा तव शर्मन्मदेम। तिमन्द्रं वाजयामिस। महे वृत्राय हन्तवे। स वृषां वृष्भो भुंवत्। युजे रथंङ्गवेषंण् हिर्रिभ्याम्। उप ब्रह्माणि जुजुषाणमंस्थुः। विबाधिष्टास्य रोदंसी महित्वा। इन्द्रों वृत्राण्यंप्रतीजंघन्वान्॥३॥

ह्व्यवाहंमिभमातिषाहम्ं। रक्षोहणं पृतंनासु जिष्णुम्। ज्योतिष्मन्तन्दीद्यंतं पुरंन्धिम्। अग्निः स्विष्टकृतमा हुवेम। स्विष्टमग्ने अभि तत्पृणाहि। विश्वां देव पृतंना अभि ष्य।

उरुन्नः पन्थां प्रदिशन्विभाहि। ज्योतिष्मद्धेह्यजरेन्न आयुः। त्वामंग्ने हविष्मंन्तः। देवं मर्तास ईडते॥४॥

मन्यैं त्वा जातवेदसम्। स ह्व्या वंक्ष्यानुषक्। विश्वांनि नो दुर्गहां जातवेदः। सिन्धुन्न नावा दुंरिताऽतिं पर्षि। अग्नें अत्रिवन्मनंसा गृणानः। अस्माकंं बोध्यविता तनूनांम्। पूषा गा अन्वेत नः। पूषा रेक्ष्त्वर्वतः। पूषा वाजरं सनोत नः। पूषेमा आशा अनुवेद सर्वाः॥५॥

सो अस्मा अभयतमेन नेषत्। स्वस्तिदा अघृंणिः सर्ववीरः। अप्रयुच्छन्पुर एंतु प्रजानन्। त्वमंग्ने सप्रथां असि। जुष्टो होता वरेंण्यः। त्वयां यज्ञं वितंन्वते। अग्नी रक्षा रेसि सेधति। शुक्रशोंचिरमंत्र्यः। शुचिः पावक ईड्यः। अग्ने रक्षां णो अर्हसः॥६॥

प्रति ष्म देव रीषंतः। तिपष्ठिर्जरो दह। अग्ने हश्स् न्यंत्रिणम्। दीद्यन्मर्त्येष्वा। स्वे क्षये शुचिव्रत। आ वांत वाहि भेषजम्। वि वांत वाहि यद्रपंः। त्वश् हि विश्वभेषजः। देवानांन्दूत ईयंसे। द्वाविमो वातौ वातः॥७॥

आ सिन्धोरा पंरावतः। दक्षं मे अन्य आवातुं। परान्यो वांतु यद्रपः। यद्दो वांत ते गृहे। अमृतंस्य निधिर्हितः। ततों नो देहि जीवसें। ततों नो धेहि भेषजम्। ततों नो महु आवंह। वात् आवांतु भेषुजम्। शुम्भूर्मयोभूर्नो हृदे॥८॥

प्र ण आयू रेषि तारिषत्। त्वमंग्ने अयासिं। अया सन्मनंसा हितः। अया सन् ह्व्यमूंहिषे। अया नो धेहि भेषजम्। इष्टो अग्निराहुंतः। स्वाहांकृतः पिपर्तु नः। स्वगा देवेभ्यं इदन्नमंः। कामो भूतस्य भव्यंस्य। सम्राडेको विराजिति॥९॥

स इदं प्रति पप्रथे। ऋतूनुत्सृंजते वृशी। काम्स्तदग्रे समंवर्त्ताधि। मनंसो रेतः प्रथमं यदासींत्। स्तो बन्धुमसंति निरंविन्दन्। हृदि प्रतीष्यां क्वयों मनीषा। त्वयां मन्यो स्रथंमारुजन्तः। हर्षमाणासो धृषता मंरुत्वः। तिग्मेषंव आयुंधा स्शिशांनाः। उप प्रयंन्ति नरों अग्निरूपाः॥१०॥

मृन्युर्भगों मृन्युरेवासं देवः। मृन्युर्होता वर्रुणो विश्ववेदाः। मृन्युं विशं ईडते देवयन्तीः। पाहि नों मन्यो तपंसा श्रमेण। त्वमंग्ने व्रतभृच्छुचिः। देवा असादया इह। अग्ने ह्व्याय् वोढंवे। व्रतानुबिश्नंद्वतपा अदाभ्यः। यजां नो देवा अजर्रः सुवीरः। दध्द्रत्नांनि सुविदानो अग्ने। गोपाय नों जीवसं जातवेदः॥११॥

जिघारं सत्यमित्रां अघुन्वानीं डते सर्वा अरहंसो वातो हृदे रांजत्यग्निरूपाः स्विदानो अंग्न एकं च॥१॥ [१]

चक्षुंषो हेते मनंसो हेते। वाचों हेते ब्रह्मंणो हेते। यो मांऽघायुरंभिदासंति। तमंग्ने मेन्या मेनिं कृणु। यो मा चक्षुंषा

यो मनसा। यो वाचा ब्रह्मणाऽघायुरंभिदासंति। तयाँऽग्रे त्वं मेन्या। अमुमंमेनिं कृण्। यत्किश्चासौ मनसा यचं वाचा। युज्ञैर्जुहोति यजुंषा हिविभिंः॥१२॥

तन्मृत्युर्निर्ऋंत्या संविदानः। पुरादिष्टादाहुंतीरस्य हन्तु। यातुधाना निर्ऋंतिरादुरक्षः। ते अस्य घ्रन्त्वनृंतेन सत्यम्। इन्द्रेषिता आज्यंमस्य मथ्नन्तु। मा तत्समृंद्धि यद्सौ क्रोतिं। हन्मिं तेऽहं कृत॰ ह्विः। यो में घोरमचींकृतः। अपाँश्रौ त उभौ बाहू। अपंनह्याम्यास्यम्॥१३॥

अपं नह्यामि ते बाहू। अपं नह्याम्यास्यम्। अग्नेर्देवस्य ब्रह्मणा। सर्वन्तेऽविधषं कृतम्। पुराऽमुष्यं वषद्भारात्। यज्ञन्देवेषुं नस्कृधि। स्विष्टम्स्मार्कं भूयात्। माऽस्मान्प्रापन्नरांतयः। अन्ति दूरे स्तो अंग्ने। भ्रातृंव्यस्याभिदासंतः॥१४॥

वृषद्भारेण वर्न्नेण। कृत्याः हंन्मि कृताम्हम्। यो मा नक्तन्दिवां सायम्। प्रातश्चाह्नां निपीयंति। अद्या तिमंन्द्र वर्न्नेण। भातृंव्यं पादयामिस। इन्द्रंस्य गृहोऽिस् तन्त्वां। प्रपंद्ये सगुः सार्श्वः। सह यन्मे अस्ति तेनं। ईडें अग्निं विपश्चितम्॥१५॥

गिरा यज्ञस्य साधनम्। श्रृष्टीवानन्धितावानम्। अग्ने श्र्केमं ते वयम्। यमं देवस्यं वाजिनः। अति द्वेषारंसि तरेम। अवंतं मा समनसौ समोकसौ। सचेतसौ सरेतसौ। उभौ मामंवतञ्जातवेदसौ। शिवौ भंवतम्द्य नः। स्वयं कृण्वानः सुगमप्रयावम्॥१६॥

तिग्मशृंङ्गो वृष्भः शोशुंचानः। प्रत्नः स्थस्थमनु पश्यंमानः। आ तन्तुंम्ग्रिर्दिव्यन्तंतान। त्वन्नस्तन्तुंकृत सेतुंरग्ने। त्वं पन्थां भवसि देव्यानः। त्वयांऽग्ने पृष्ठं व्यमारुहेम। अथां देवैः संधुमादं मदेम। उदुंत्तमं मुंमुग्धि नः। वि पाशं मध्यमश्रृंत। अवांधमानिं जीवसें॥१७॥

वय सोम व्रते तर्व। मनस्तन्षु बिभ्रंतः। प्रजावन्तो अशीमिह। इन्द्राणी देवी सुभगां सुपत्नीं। उद शेन पित्विद्ये जिगाय। त्रि श्यदंस्या ज्यनं योजनािन। उपस्थ इन्द्र स्थिवेरं बिभिति। सेनां हु नामं पृथिवी धंनञ्जया। विश्वव्यंचा अदितिः सूर्यत्वक्। इन्द्राणी देवी प्रासहा ददांना॥१८॥

सा नों देवी सुहवा शर्म यच्छत्। आत्वांऽहार्षम्नतरंभूः। ध्रुवस्तिष्ठाविंचाचितः। विशंस्त्वा सर्वा वाञ्छन्तु। मा त्वद्राष्ट्रमिधं भ्रशत्। ध्रुवा द्यौर्ध्रुवा पृंथिवी। ध्रुवं विश्वंमिदञ्जगंत्। ध्रुवा हु पर्वता इमे। ध्रुवो राजां विशामयम्। इहैवैधि मा व्यंथिष्ठाः॥१९॥

पर्वत इवाविचाचिलः। इन्द्रं इवेह ध्रुवस्तिष्ठ। इह राष्ट्रमुं धारय। अभितिष्ठ पृतन्यतः। अधेरे सन्तु शत्रंवः। इन्द्रं इव वृत्रहा तिष्ठ। अपः क्षेत्राणि स्ञयन्। इन्द्रं एणमदीधरत्। ध्रुवन्ध्रुवेणं ह्विषां। तस्में देवा अधिब्रवन्। अयं च्रब्रह्मणस्पतिः॥२०॥

ह्विर्भिरास्यमिभ् दासंतो विपश्चित्मप्रयावञ्चीवसे ददांना व्यथिष्ठा ब्रव्हेकं च॥२॥———[२]

जुष्टी नरो ब्रह्मणा वः पितृणाम्। अक्षंमव्ययन्न किलारिषाथ। यच्छक्वरीषु बृह्ता रवेण। इन्द्रे शुष्ममदेधाथा वसिष्ठाः। पावका नः सरंस्वती। वाजेभिर्वाजिनीवती। यृज्ञं वेष्टु धिया वेसुः। सरंस्वत्यभिनों नेषि वस्यः। मा पंस्फरीः पर्यसा मा न आधंक्। जुषस्वं नः सख्यां वेश्यां च॥२१॥

मा त्वक्षेत्राण्यरंणानि गन्म। वृञ्जे ह्विर्नमंसा ब्र्हिर्ग्रो। अयांमि स्रुग्धृतवंती सुवृक्तिः। अम्यंक्षि सद्म सदंने पृथिव्याः। अश्रांयि यृज्ञः सूर्ये न चक्षुंः। इहार्वाश्चमितं ह्वये। इन्द्रं जैत्रांय जेतंवे। अस्माकंमस्तु केवंलः। अर्वाश्चमिन्द्रंम्मुतों हवामहे। यो गोजिद्धंनुजिदंश्वजिद्यः॥२२॥

इमं नों यज्ञं विंहुवे जुंषस्व। अस्य कुंमीं हरिवो मेदिनंन्त्वा। असंम्मृष्टो जायसे मातृवोः शुचिः। मृन्द्रः क्विरुदंतिष्ठो विवंस्वतः। घृतेनं त्वा वर्धयन्नग्न आहुत। धूमस्ते केतुरंभवद्दिवि श्रितः। अग्निरग्रे प्रथमो देवतानाम्। संयातानामृत्तमो विष्णुंरासीत्। यजमानाय परिगृह्यं देवान्। दीक्षयेद १ हविरा गंच्छतन्नः॥२३॥

अग्निश्चं विष्णो तपं उत्तमं महः। दीक्षापालेभ्योऽवनंतुः हि

शंका। विश्वैर्देवैर्य्ज्ञियैः संविदानो। दीक्षाम्स्मे यजंमानाय धत्तम्। प्र तद्विष्णुंः स्तवते वीर्याय। मृगो न भीमः कुंच्रो गिरिष्ठाः। यस्योरुषुं त्रिषु विक्रमणेषु। अधि क्षियन्ति भुवनानि विश्वा। नूमर्तो दयते सनिष्यन् यः। विष्णंव उरुगायाय दाशंत्॥२४॥

प्र यः स्त्राचा मनंसा यजांतै। पृतावंन्त्न्नर्यंमा विवांसात्। विचंक्रमे पृथिवीमेष पृताम्। क्षेत्रांय विष्णुर्मनुषे दशस्यन्। ध्रुवासो अस्य कीरयो जनांसः। उरुक्षिति स् सुजिनंमा चकार। त्रिर्देवः पृथिवीमेष पृताम्। विचंक्रमे शृतर्चंसं महित्वा। प्र विष्णुंरस्तु त्वस्स्तवीयान्। त्वेष इह्यंस्य स्थविंरस्य नामं॥२५॥

होतांरिश्चित्ररंथमध्वरस्यं। यज्ञस्यंयज्ञस्य केतु र रुशंन्तम्। प्रत्यंधिन्देवस्यंदेवस्य मृहा। श्रिया त्वंग्निमितंथिं जनांनाम्। आ नो विश्वांभिरूतिभिः स्जोषाः। ब्रह्मं जुषाणो हंर्यश्व याहि। वरींवृज्तत्स्थविरेभिः सुशिप्र। अस्मे दधृहृषंणु रुशुष्मंमिन्द्र। इन्द्रः सुवर्षा जनयन्नहांनि। जिगायोशिग्भिः पृतंना अभि श्रीः॥२६॥

प्रारोचयन्मनंवे केतुमहाँम्। अविन्दुच्योतिर्बृह्ते रणांय। अश्विनाववंसे निह्वये वाम्। आ नूनं यातर सुकृतायं विप्रा। प्रातुर्युक्तेनं सुवृता रथेन। उपागंच्छतुमवसागंतन्नः। अविष्टन्धीष्विश्वीना न आसु। प्रजावद्रेतो अहंयं नो अस्तु। आवान्तोके तन्ये तूर्तुजानाः। सुरह्णांसो देववीतिङ्गमेम॥२७॥

त्व सोम् ऋतुंभिः सुऋतुंभूः। त्वदन्दक्षैः सुदक्षों विश्ववेदाः। त्वं वृषां वृष्त्वेभिर्मिह्त्वा। द्युम्नेभिर्द्युम्यंभवो नृचक्षाः। अषांढं युत्सु पृतंनासु पप्रिम्। सुवर्षाम्प्स्वां वृजनंस्य गोपाम्। भरेषुजा स्ं सिक्षिति स्मुश्रवंसम्। जयंन्तन्त्वामनुं मदेम सोम। भवां मित्रो न शेब्यों घृतासुंतिः। विभूतद्यम्न एव या उं सप्रथाः॥२८॥

अधां ते विष्णो विदुषां चिद्दध्यः। स्तोमो यज्ञस्य राध्यों ह्विष्मंतः। यः पूर्व्यायं वेधसे नवींयसे। सुमञ्जानये विष्णंवे ददांशति। यो जातमस्य मंहतो मृहि ब्रवांत्। सेदु श्रवोंभिर्युज्यं चिद्दभ्यंसत्। तमुं स्तोतारः पूर्व्यं यथां विद ऋतस्यं। गर्भ ह्विषां पिपर्तन। आऽस्यं जानन्तो नामं चिद्विवक्तन। बृहत्तं विष्णो सुमृतिं भंजामहे॥२९॥

इमा धाना घृंतस्रुवंः। हरीं इहोपंवक्षतः। इन्द्र रं सुखतंमे रथें। एष ब्रह्मा प्रतेमहे। विदथें शर्सिष्ट् हरीं। य ऋत्वियः प्रतें वन्वे। वनुषों हर्यतं मदम्ं। इन्द्रो नामं घृतन्नयः। हरिंभिश्चार् सेचंते। श्रुतो गण आ त्वां विशन्तु॥३०॥

हरिवर्पसङ्गिरेः। आचंर्षणिप्रा वृष्भो जनांनाम्। राजां कृष्टीनां पुंरुहूत इन्द्रेः। स्तुतश्रंवस्यन्नवसोपंमद्रिक्। युक्ता हरी वृष्णायाँ ह्यर्वाङ्। प्रयत्सिन्धंवः प्रस्वं यदायन्। आपः समुद्र रथ्यंव जग्मुः। अतिश्चिदिन्द्रः सदंसो वरीयान्। यदी सोर्मः पृणितं दुग्धो अर्शः। ह्वयांमिस् त्वेन्द्रं याह्यर्वाङ्॥३१॥

अरंन्ते सोमंस्तुन्वे भवाति। शतंत्रतो मादयंस्वा सुतेषुं। प्रास्मा अव पृतंनासु प्रयुत्सु। इन्द्रांय सोमाः प्रदिवो विदानाः। ऋभुर्येभिवृषंपर्वा विहायाः। प्रयम्यमाणान्प्रति षू गृंभाय। इन्द्र पिब वृषंधूतस्य वृष्णंः। अहेंडमान उपंयाहि यज्ञम्। तुभ्यं पवन्त इन्दंवः सुतासंः। गावो न वंज्ञिन्त्स्वमोको अच्छं॥३२॥

इन्द्रा गंहि प्रथमो यज्ञियांनाम्। या ते काकुत्सुकृता या विरेष्ठा। यया शश्वत्यिबंसि मध्वं ऊर्मिम्। तयां पाहि प्र ते अध्वर्युरंस्थात्। सन्ते वज्रो वर्ततामिन्द्र गुव्युः। प्रात्युंजा वि बोधय। अश्विनावेह गंच्छतम्। अस्य सोमंस्य पीतयें। प्रात्यांवांणा प्रथमा यंजध्वम्। पुरा गृध्रादरंरुषः पिबाथः। प्रातर्रह यज्ञमश्विना दधांते। प्रश्र सिन्त क्वयः पूर्वभाजः। प्रातर्यंजध्वमश्विनां हिनोत। न सायमंस्ति देवया अजुंष्टम्। युतान्यो अस्मद्यंजते विचायः। पूर्वः पूर्वा यजमानो वनीयान्॥३३॥

चाश्वजिद्यो गंच्छतं नो दाशृन्नामांभिश्रीर्गमेम सुप्रथां भजामहे विशन्तु याह्यविङच्छं पिबाथुष्यद्वं॥३॥ [३] नक्तं जाताऽस्योषधे। रामे कृष्णे असिक्रि च। इद॰ रंजिन रजय। किलासं पिलृतं च यत्। किलासंश्च पिलृतं चं। निरितो नांशया पृषत्। आ नः स्वो अंश्जृतां वर्णः। पर्गं श्वेतानिं पातय। असितन्ते निलयंनम्। आस्थानमसितन्तवं॥३४॥

असिंक्रियस्योषधे। निरितो नांशया पृषंत्। अस्थिजस्यं किलासंस्य। तुनूजस्यं च यत्त्वचि। कृत्ययां कृतस्य ब्रह्मंणा। लक्ष्मं श्वेतमंनीनशम्। सर्रूपा नामं ते माता। सर्रूपो नामं ते पिता। सर्रूपाऽस्योषधे सा। सर्रूपमिदं कृधि॥३५॥

शुन १ हुंवेम मघवांनिमन्द्रम्। अस्मिन्भरे नृतंमं वाजंसातौ। शृण्वन्तंमुग्रमूतये समत्सुं। घ्रन्तं वृत्राणि सञ्जितं धनांनाम्। धूनुथ द्यां पर्वतान्दाशुषे वसुं। नि वो वनां जिहते यामं नो भिया। कोपयंथ पृथिवीं पृंश्विमातरः। युधे यदुंग्राः पृषंतीरयुंग्ध्वम्। प्रवेपयन्ति पर्वतान्। विविश्वन्ति वनस्पतीन्॥३६॥

प्रोवारत मरुतो दुर्मदां इव। देवांसः सर्वया विशा। पुरुत्रा हि सद्दृङ्कासिं। विश्वो विश्वा अनुं प्रभु। समत्सुं त्वा हवामहे। समत्स्वग्निमवंसे। वाज्यन्तों हवामहे। वाजेषु चित्रराधसम्। सङ्गंच्छध्वर् संवंदध्वम्। सबौं मनार्श्स जानताम्॥३७॥

देवा भागं यथा पूर्वै। सुञ्जानाना उपासंत। सुमानो मन्नः

सिनितः समानी। समानं मनंः सह चित्तमेषाम्। समानङ्केतों अभि स॰ रंभध्वम्। संज्ञानेन वो हिवषां यजामः। समानी व आकूंतिः। समाना हृदंयानि वः। समानमंस्तु वो मनंः। यथां वः सुसहासंति॥३८॥

संज्ञानंत्रः स्वैः। संज्ञानमरंणैः। संज्ञानंमिश्वना युवम्। इहास्मासु नियंच्छतम्। संज्ञानं मे बृह्स्पतिः। संज्ञानरं सिवता करत्। संज्ञानंमिश्वना युवम्। इह मह्यं नि यंच्छतम्। उपं च्छायामिव घृणैः। अगन्म शर्म ते वयम्॥३९॥

अग्ने हिरंण्यसन्दशः। अदंब्येभिः सवितः पायुभिष्ट्वम्। शिवेभिर्द्य परिपाहि नो गयम्। हिरंण्यजिह्नः सुविताय् नव्यंसे। रक्षा मार्किर्नो अघशर्रस ईशत। मदेमदे हि नो दुदुः। यूथा गर्वामृजुक्रतुः। सङ्गृंभाय पुरूशता। उभया हस्त्या वसुं। शिशीहि राय आ भर॥४०॥

शिप्रिंन्वाजानां पते। शचींवस्तवं द्र्सनां। आ तू नं इन्द्र भाजय। गोष्वश्वेषु शुभुषुं। सहस्रेषु तुवीमघ। यद्देवा देवहेर्डनम्। देवांसश्चकृमा व्यम्। आदित्यास्तस्मांन्मा यूयम्। ऋतस्युर्तेनं मुश्चत। ऋतस्युर्तेनांदित्याः॥४१॥

यजंत्रा मुश्चतेह माँ। युज्ञैर्वो यज्ञवाहसः। आशिक्षंन्तो न शेकिम। मेदंस्वता यजंमानाः। स्रुचाऽऽज्येंन् जुह्वंतः। अकामा वो विश्वेदेवाः। शिक्षंन्तो नोपं शेकिम। यदि दिवा यदि नक्तम्। एनं एन्स्योकंरत्। भूतं मा तस्माद्भव्यं च॥४२॥

द्रुपदादिव मुश्रतु। द्रुपदादिवन्मुंमुचानः। स्विन्नः स्नात्वी मलादिव। पूतं पवित्रेणेवाज्यम्। विश्वं मुश्रन्तु मैनंसः। उद्वयन्तमंस्परि। पश्यन्तो ज्योतिरुत्तंरम्। देवन्देवत्रा सूर्यम्। अगन्म ज्योतिरुत्तमम्॥४३॥

तवं कृषि वनस्पतींश्चानतामसंति वयं भंरादित्याश्च नवं च॥४॥------[४]

वृषासो अर्शः पंवते ह्विष्मान्त्सोमः। इन्द्रंस्य भाग ऋंत्यः श्तायुः। स मा वृषाणं वृष्भं कृणोत्। प्रियं विशा सर्ववीर स्वीरम्ं। कस्य वृषां सुते सर्चा। नियुत्वान्वृष्भो रणत्। वृत्रहा सोमंपीतये। यस्ते शृङ्ग वृषोनपात्। प्रणंपात्कुण्डुपाय्यः। न्यंस्मिन्दध्र आ मनः॥४४॥

तः स्प्रीचींकृतयो वृष्णियानि। पौ इस्यांनि नियुतः सश्चिरिन्द्रम्। स्मुद्रन्न सिन्धंव उक्थशुंष्माः। उर्व्यचंस्ङ्गिर् आ विंशन्ति। इन्द्रांय गिरो अनिंशितसर्गाः। अपः प्रैरंयन्त्सगंरस्य बुध्नात्। यो अक्षेणेव चिक्रया शचींभिः। विष्वंक्त्रस्तम्मं पृथिवीमुत द्याम्। अक्षोदयच्छवंसा क्षामंबुध्नम्। वार्णवांत्स्तिविषीभिरिन्द्रः॥४५॥

दृढान्यौँघ्रादुशमांन ओजंः। अवांभिनत्कुकुभः पर्वतानाम्। आ नो अग्ने सुकेतुनाँ। रुयिं विश्वायुंपोषसम्। माुर्डीकन्धेहि जीवसें। त्वर सोम मृहे भगम्ं। त्वं यूनं ऋतायते। दक्षंन्दधासि जीवसें। रथं युअते मुरुतंः शुभे सुगम्। सूरो न मित्रावरुणा गविष्टिषु॥४६॥

रजारंसि चित्रा विचंरन्ति त्न्यवंः। दिवः संम्राजा पर्यसा न उक्षतम्। वाच् सुमित्रावरुणाविरावतीम्। पूर्जन्यंश्चित्रां वंदित् त्विषीमतीम्। अभ्रा वंसत मरुतः सुमाययां। द्यां वंर्षयतमरुणामेरेपसम्। अयुंक्त सप्त शुन्ध्युवंः। सूरो रथंस्य निष्ठियंः। ताभियाति स्वयुंक्तिभिः। विहिष्ठेभिर्विहरंन् यासि तन्तुम्॥४७॥

अवव्ययन्नसितन्देव वस्वः। दविध्वतो र्श्मयः सूर्यस्य। चर्मेवावाधुस्तमो अप्स्वन्तः। पूर्जन्याय प्र गायत। दिवस्पुत्रायं मीदुषें। स नो यवसंमिच्छत्। अच्छा वद त्वसंङ्गीर्भिराभिः। स्तुहि पूर्जन्यन्नम्साऽऽविवास। कनिन्नदद्वृष्भो जीरदानुः। रेतो दधात्वोषंधीषु गर्भम्॥४८॥

यो गर्भमोषंधीनाम्। गवाँ कृणोत्यर्वताम्। पूर्जन्यः पुरुषीणाँम्। तस्मा इदास्ये हुविः। जूहोता मधुमत्तमम्। इडाँन्नः स्यतंङ्करत्। तिस्रो यदंग्ने श्ररदस्त्वामित्। शुचिं घृतेन् शुचंयः सप्यन्। नामानि चिद्दधिरे यज्ञियांनि। असूदयन्त तुनुवः सुजांताः॥४९॥

इन्द्रेश्च नः शुनासीरौ। इमं युज्ञं मिंमिक्षतम्। गर्भन्धत्त इ

स्वस्तयें। ययोरिदं विश्वं भुवंनमा विवेशं। ययोरान्न्दो निहिंतो महंश्व। शुनांसीरावृतुभिः संविदानौ। इन्द्रंवन्तौ ह्विरिदं जुंषेथाम्। आघाये अग्निमिन्धते। स्तृणन्तिं बर्हिरांनुषक्। येषामिन्द्रो युवा सखाँ। अग्न इन्द्रंश्च मेदिनां। हथो वृत्राण्यंप्रति। युव हि वृत्रहन्तंमा। याभ्या सुवरजंयन्नग्रं एव। यावांतस्थतुर्भुवंनस्य मध्यें। प्रचंर्षणी वृषणा वर्ज्रंबाहू। अग्नी इन्द्रांवृत्रहणां हुवे वाम्॥५०॥

मन् इन्द्रो गविष्टिषु तन्तुङ्गर्भ् सुजांताः सखां सप्त चं॥५॥——————[५]

उत नंः प्रिया प्रियासुं। स्प्तस्वसा सुजुंष्टा। सरंस्वती स्तोम्यां अनूत्। इमा जुह्वां नायुष्मदा नमोंभिः। प्रति स्तोम रं सरस्वति जुषस्व। तव शर्मन्प्रियतंमे दर्धानाः। उपस्थेयाम शर्णन्न वृक्षम्। त्रिणि पदा विचंक्रमे। विष्णुंर्गोपा अदाँभ्यः। ततो धर्माणि धारयन्॥५१॥

तदंस्य प्रियम्भि पाथों अश्याम्। नरो यत्रं देवयवो मदंन्ति। उरुक्रमस्य स हि बन्धंरित्था। विष्णौः पदे पर्मे मध्य उत्संः। कृत्वादा अस्थु श्रेष्ठंः। अद्य त्वां वन्वन्त्सुरेक्णौः। मर्त आनाश सुवृक्तिम्। इमा ब्रह्म ब्रह्मवाह। प्रिया त आ ब्र्हिः सीद। वीहि सूर पुरोडाशम्॥५२॥

उपं नः सूनवो गिरेः। शृण्वन्त्वमृतंस्य ये। सुमृडीका भंवन्तु नः। अद्या नो देव सवितः। प्रजावंत्सावीः सौभंगम्। परां दुष्वप्नियः सुव। विश्वांनि देव सवितः। दुरितानि परां सुव। यद्भद्रन्तन्म् आ सुव। शुचिंमुर्कैर्बृहुस्पतिम्॥५३॥

अध्वरेषुं नमस्यत। अनाम्योज् आ चंके। या धारयंन्त देवा सुदक्षा दक्षंपितारा। असुर्याय प्रमंहसा। स इत् क्षेति सुधित ओकंसि स्वे। तस्मा इडां पिन्वते विश्वदानीं। तस्मै विशंः स्वयमेवानंमन्ति। यस्मिन्ब्रह्मा राजंनि पूर्व एति। सक्तिमिन्द्र सच्यंतिम्। सच्यंतिञ्ज्वचनंच्युतिम्॥५४॥

कुनात्काभात्र आ भंर। प्रयप्स्यित्रंव सक्थ्यौं। वि नं इन्द्र मृधों जिहि। कनींखुनिदव सापयन्। अभि नः सृष्टुंतिन्नय। प्रजापंतिः स्त्रियां यशः। मुष्कयोरदधात्सपम्। कामंस्य तृप्तिमानन्दम्। तस्यौग्ने भाजयेह मा। मोदः प्रमोद आंनन्दः॥५५॥

मुष्कयोर्निहितः सपंः। सृत्वेव कामंस्य तृप्याणि। दक्षिणानां प्रतिग्रहे। मनंसिश्चित्तमाकूंतिम्। वाचः सत्यमंशीमिह। पृश्नाः रूपमन्नंस्य। यशः श्रीः श्रंयतां मियं। यथाऽहम्स्या अतृपः स्त्रिये पुमान्ं। यथा स्त्री तृप्यंति पुर्से प्रिये प्रिया। एवं भगंस्य तृप्याणि॥५६॥

यज्ञस्य काम्यंः प्रियः। ददामीत्यग्निर्वदित। तथेति वायुरांह् तत्। हन्तेति स्त्यश्चन्द्रमाः। आदित्यः स्त्यमोमिति। आपस्तत्स्त्यमा भेरन्। यशो यज्ञस्य दक्षिणाम्। असौ मे कामः समृद्धताम्। न हि स्पश्मिविदन्नन्यम्स्मात्।

<u>वैश्वान</u>्रात्पुंरपुतारंम्ग्रेः॥५७॥

अर्थममन्थन्नमृत्ममूराः। वैश्वान्रङ्क्षेत्रजित्यांय देवाः। येषांमिमे पूर्वे अर्मास् आसन्। अयूपाः सद्म विभृता पुरूणि। वैश्वानर् त्वया ते नुत्ताः। पृथिवीमन्याम्भितंस्थुर्जनांसः। पृथिवीं मातरं महीम्। अन्तरिक्षमुपं ब्रवे। बृह्तीमृतये दिवम्। विश्वं बिभर्ति पृथिवी॥५८॥

अन्तिरिक्षं वि पंप्रथे। दुहे द्यौर्बृह्ती पर्यः। न ता नंशन्ति न दंभाति तस्करः। नैनां अमित्रो व्यथिरादंधर्षति। देवाङ्श्च याभिर्यजंते ददांति च। ज्योगित्ताभिः सचते गोपंतिः सह। न ता अर्वा रेणुकंकाटो अश्जुते। न सङ्स्कृत्त्रमुपं यन्ति ता अभि। उरुगायमभयन्तस्य ता अन्। गावो मर्त्यंस्य वि चंरन्ति यज्वनः॥५९॥

रात्री व्यंख्यदायती। पुरुत्रा देव्यंक्षिभिः। विश्वा अधि श्रियोऽधित। उपं ते गा इवाकंरम्। वृणीष्व दुंहितर्दिवः। रात्री स्तोमन्न जिग्युषीं। देवीं वाचंमजनयन्त देवाः। तां विश्वरूपाः पृशवों वदन्ति। सा नों मृन्द्रेष्मूर्ज्न्दुहांना। धेनुवांगुस्मानुष सुष्टुतैतुं॥६०॥

यद्वाग्वदंन्त्यविचेत्नानिं। राष्ट्रीं देवानांन्निष्सादं मृन्द्रा। चतंस्र ऊर्जन्दुदुहे पयार्श्सा क्षं स्विदस्याः पर्मं जंगाम। गौरी मिंमाय सलिलानि तक्षंती। एकंपदी द्विपदी सा चतुंष्पदी। अष्टापंदी नवंपदी बभूवुषीं। सहस्रांक्षरा पर्मे व्योमन्। तस्यार्थ समुद्रा अधि विक्षंरन्ति। तेनं जीवन्ति प्रदिश्श्वतंस्रः॥६१॥

ततः क्षरत्यक्षरम्। तद्विश्वमुपं जीवति। इन्द्रासूरां जनयंन्विश्वकर्मा। मुरुत्वा अस्तु गणवान्त्सजातवान्। अस्य स्रुषा श्वश्रंरस्य प्रशिष्टिम्। सपत्ना वाचं मनंसा उपांसताम्। इन्द्रः सूरों अतर्द्रजार्श्सा। स्रुषा सपत्ना श्वशंरोऽयमंस्तु। अय शत्रूं अयर्द्रजार्श्सा। स्रुषा सपत्ना श्वशंरोऽयमंस्तु। अय शत्रूं अयत्र जर्ह्हंषाणः। अयं वां जयतु वाजंसातौ। अग्निः क्षंत्रभृदिनंभृष्टमोजः। स्हिस्रयों दीप्यतामप्रयुच्छन्। विभ्राजंमानः समिधान उग्रः। आऽन्तरिक्षमरुहदगुन्द्याम्॥६२॥

धारयंन्युरोडाश्ं बृहुस्पतिं ज्ञधनंच्युतिमान्नदो भगंस्य तृप्याण्युग्नेः पृथिवी यज्वंन एत् प्रदिश्श्चतंस्रो वाजंसातौ चत्वारिं च॥६॥————[६]

वृषाँऽस्य १ शुर्वृष्मायं गृह्यसे। वृषाऽयमुग्रो नृचक्षंसे। दिव्यः कंर्मण्यो हितो बृहन्नामं। वृष्मस्य या ककुत्। विषूवान् विष्णो भवत्। अयं यो मांमको वृषाँ। अथो इन्द्रं इव देवेभ्यंः। वि ब्रंवीतु जनैभ्यः। आयुंष्मन्तं वर्चस्वन्तम्। अथो अधिपतिं विशाम्॥६३॥

अस्याः पृथिव्या अध्यक्षम्। इमिनन्द्र वृष्मं कृणु। यः सुशृङ्गः सुवृष्मः। कृत्याणो द्रोण आहितः। कार्षीवल प्रगाणेन। वृष्मेणं यजामहे। वृष्मेण यजमानाः। अर्कूरेणेव सर्पिषाः। मृधंश्च सर्वा इन्द्रेंण। पृतंनाश्च जयामसि॥६४॥

यस्यायमृष्भो ह्विः। इन्द्रांय परिणीयतें। जयांति शत्रुंमायन्तम्। अथो हन्ति पृतन्यतः। नृणामहं प्रणीरसंत्। अग्रं उद्भिन्दतामंसत्। इन्द्र शुष्मं तनुवा मेर्रयस्व। नीचा विश्वां अभितिंष्ठाभिमांतीः। नि शृंणीह्याबाधं यो नो अस्ति। उरुं नो लोकं कृणिह जीरदानो॥६५॥

प्रेह्मभि प्रेहि प्र भेरा सहंस्व। मा विवेनो वि शृंणुष्वा जनेषु। उदींडितो वृंषभ् तिष्ठ शुष्मैः। इन्द्र शत्रूंन्युरो अस्माकं युध्य। अग्ने जेता त्वं जंय। शत्रूंन्त्सहस् ओजंसा। वि शत्रून् विमृधों नुद। एतन्ते स्तोमंन्तुविजात विप्रः। रथन्न धीरः स्वपां अतक्षम्। यदीदंग्ने प्रतित्वन्दंव हर्याः॥६६॥

सुवंवतीर्प एंना जयेम। यो घृतेनाभिमांनितः। इन्द्र जैत्रांय जित्रेषे। स नः सङ्कांसु पारय। पृत्नासाह्येषु च। इन्द्रों जिगाय पृथिवीम्। अन्तिरंक्ष्य सुवंर्महत्। वृत्रहा पुंरुचेतंनः। इन्द्रों जिगाय सहंसा सहार्रसा इन्द्रों जिगाय पृतंनानि विश्वां॥६७॥

इन्द्रों जातो वि पुरों रुरोज। स नः पर्स्पा वरिवः कृणोतु। अयं कृत्ररगृंभीतः। विश्वजिदुद्धिदित्सोमः। ऋषिर्विप्रः कार्व्यन। वायुरंग्रेगा यंज्ञप्रीः। साकङ्गन्मनंसा यज्ञम्। शिवो नियुद्धिः शिवाभिः। वायो शुक्रो अंयामि ते। मध्वो

अग्रन्दिविष्टिषु॥६८॥

आ यांहि सोमं पीतये। स्वा्रुहो देव नियुत्वंता। इमिनंद्र वर्धय क्षित्रयांणाम्। अयं विशां विश्वपतिरस्तु राजां। अस्मा इंन्द्र मिह् वर्चा रंसि धेहि। अव्वर्चसंङ्कणुिह शत्रुं मस्य। इममा भंज ग्रामे अश्वेषु गोषुं। निर्मुं भंज योऽिमत्रों अस्य। वर्ष्मन् क्षत्रस्यं कुक्तिं श्रयस्व। ततों न उग्रो वि भंजा वसूनि॥६९॥ अस्मे द्यांवापृथिवी भूिरं वामम्। सन्दुंहाथाङ्कर्मदुघेंव धेनुः। अय राजां प्रिय इन्द्रंस्य भूयात्। प्रियो गवामोषंधीनामुतापाम्। युनिज्मं त उत्तरावंन्तमिन्द्रम्ं। येन् जयांसि न परा जयांसे। स त्वांऽकरेकवृष्भ स्वानांम्। अथो राजन्नुत्तमं मान्वानांम्। उत्तंरस्त्वमधेरे ते सप्रताः। एकंवृषा इन्द्रंसखा जिगीवान्॥७०॥

विश्वा आशाः पृतंनाः स्ञ्जयं जयन्। अभि तिष्ठ शत्रूयतः संहस्व। तुभ्यं भरन्ति क्षितयों यविष्ठ। बिलिमंग्ने अन्तित् ओत दूरात्। आ भन्दिष्ठस्य सुमृतिश्चिकिद्धि। बृहत्ते अग्ने मिह् शर्म भूद्रम्। यो देह्यो अनंमयद्वध्स्तैः। यो अर्यपत्नीरुषसंश्वकारं। स निरुध्या नहुंषो यह्वो अग्निः। विशंश्वके बलिहृतः सहोभिः॥७१॥

प्र सुद्यो अंग्रे अत्येष्यन्यान्। आविर्यस्मै चार्रुतरो बुभूथं। ईडेन्यो वपुष्यो विभावा। प्रियो विशामतिथिर्मानुंषीणाम्। ब्रह्मं ज्येष्ठा वीर्या सम्भृतानि। ब्रह्माग्रे ज्येष्ठन्दिवमा तंतान। ऋतस्य ब्रह्मं प्रथमोत जंज्ञे। तेनांर्हित ब्रह्मंणा स्पर्धितुङ्कः। ब्रह्मं सुचो घृतवंतीः। ब्रह्मंणा स्वरंवो मिताः॥७२॥

ब्रह्मं यज्ञस्य तन्तंवः। ऋत्विजो ये हंविष्कृतंः। शृङ्गंणीवेच्छुङ्गिणा् सन्दंदिश्रिरे। चषालंवन्तः स्वरंवः पृथिव्याम्। ते देवासः स्वरंवस्तस्थिवा संः। नमः सर्खिभ्यः सन्नान्माऽवंगात। अभिभूरिग्नरंतर्द्रजा स्मि। स्पृधों विहत्य पृतंना अभिश्रीः। जुषाणो म आहुंतिं मामिहष्ट। हृत्वा सपत्नान् वरिवस्करन्नः। ईशांनन्त्वा भुवंनानामिभिश्रियम्। स्तौम्यंग्न उरुकृत स् सुवीरम्। ह्विर्जुषाणः सपत्ना स् अभिभूरंसि। जहि शत्रू रप् मृधों नुदस्व॥७३॥

विशां जंयामिस जीरदानो हर्या विश्वा दिविंष्टिषु वसूंनि जिगीवान्त्सहोभिर्मिता नंश्चत्वारिं च॥७॥ $\left[oldsymbol{arphi}
ight]$

स प्रंत्वन्नवीयसा। अग्नै द्युम्नेनं स्यता। बृहत्तंतन्थ भानुना। नवृन्नु स्तोमंमग्नये। दिवः श्येनायं जीजनम्। वसौः कुविद्वनातिं नः। स्वारुहा यस्य श्रियों दृशे। र्यिर्वीरवंतो यथा। अग्ने यज्ञस्य चेतंतः। अदाँभ्यः पुरएता॥७४॥

अग्निर्विशां मानुंषीणाम्। तूर्णी रथः सदा नवंः। नव् सोमाय वाजिने। आज्यं पर्यसोऽजिन। जुष्ट् श्चितम् वस्। नवर् सोम जुषस्व नः। पीयूषंस्येह तृंण्णुहि। यस्ते भाग ऋता व्यम्। नवंस्य सोम ते व्यम्। आ सुमृतिं वृंणीमहे॥७५॥ स नो रास्व सह्स्रिणंः। नव हिवर्जुषस्व नः। ऋतुभिः सोम् भूतंमम्। तद्ङ्ग प्रतिहर्य नः। राजन्त्सोम स्वस्तयें। नव्हस्तोम् त्रव हिवः। इन्द्राग्निभ्यां नि वेदय। तञ्ज्षेता ह सचेतसा। शुचित्रु स्तोम् त्रवंजातम् द्य। इन्द्रांग्नी वृत्रहणा जुषेथांम्॥७६॥

उभा हि वार् सुहवा जोहंवीमि। ता वाजर स्छ उंश्ते धेष्ठां। अग्निरिन्द्रो नवंस्य नः। अस्य ह्व्यस्यं तृप्यताम्। इह देवौ संहुम्निणौं। यज्ञन्न आ हि गच्छंताम्। वसुंमन्तर सुवुर्विदम्। अस्य ह्व्यस्यं तृप्यताम्। अग्निरिन्द्रो नवंस्य नः। विश्वान्देवाइस्तंप्यत॥७७॥

ह्विषोऽस्य नवंस्य नः। सुवर्विदो हि जंजिरे। एदं बर्हिः सुष्टरीमा नवंन। अयं यज्ञो यजंमानस्य भागः। अयं बंभूव भुवंनस्य गर्भः। विश्वं देवा इदम्द्यागंमिष्ठाः। इमे न द्यावांपृथिवी समीचीं। तन्वाने यज्ञं पुरुपेशंसन्धिया। आऽस्मे पृणीतां भुवंनानि विश्वां। प्रजां पुष्टिंममृतन्नवंन॥७८॥

इमे धेनू अमृतं ये दुहातें। पर्यस्वत्युत्तरामेतु पृष्टिः। इमं यज्ञं जुषमाणे नवेन। समीची द्यावापृथिवी घृताचीं। यविष्ठो हव्यवाहेनः। चित्रभानुर्घुतास्तिः। नवंजातो वि रोचसे। अग्ने तत्ते महित्वनम्। त्वमंग्ने देवतांभ्यः। भागे देव न मीयसे॥७९॥

स एंना विद्वान् यंक्ष्यसि। नव्ड् स्तोमं जुषस्व नः। अग्निः प्रंथमः प्राश्ञांतु। स हि वेद यथां ह्विः। शिवा अस्मभ्यमोषंधीः। कृणोतुं विश्वचंर्षणिः। भृद्रान्नः श्रेयः समंनैष्ट देवाः। त्वयांऽवसेन् समंशीमहि त्वा। स नों मयोभूः पिंतो आ विंशस्व। शन्तोकायं तनुवे स्योनः। एतमु त्यं मधुंना संयुंतं यवम्। सरंस्वत्या अधिमनावंचर्कृषः। इन्द्रं आसीत्सीरंपतिः श्तन्तंतुः। कीनाशां आसन्म्रुतः सुदानंवः॥८०॥

पुरुपता वृंणीमहे जुषेथाँन्तर्पयतामृतुत्रवेन मीयसे स्योनश्चत्वारि च॥८॥_____[८]

जुष्टश्चक्षंषो जुष्टींनरो नक्तञ्चाता वृषास उत नो वृषांंऽस्य र्शः सप्रंत्ववद्ष्टौ॥८॥ जुष्टों मृन्युर्भगो जुष्टीं नरो हरिंवर्पसङ्गिरः शिप्रिंन्वाजानामुत नंः प्रिया यद्वाग्वदंन्ती विश्वा आशा अशींतिः॥८०॥

जुष्टंः सुदानंवः॥

हरिः ओम्॥ ॥इति श्रीकृष्णयजुर्वेदीयतैत्तिरीयब्राह्मणे द्वितीयाष्टके चतुर्थः प्रपाठकः समाप्तः॥

॥पञ्चमः प्रश्नः॥

॥ तैत्तिरीयब्राह्मणे द्वितीयाष्टके पश्चमः प्रपाठकः॥

प्राणो रंक्षिति विश्वमेजंत्। इर्यो भूत्वा बंहुधा बहूनिं। स इत्सर्वं व्यानशे। यो देवो देवेषुं विभूरन्तः। आवृंदूदात् क्षेत्रियंध्वगद्वृषां। तिमत्प्राणं मन्सोपं शिक्षत। अग्रं देवानांमिदमंत्तु नो ह्विः। मनंसृश्चित्तेदम्। भूतं भव्यं च गुप्यते। तिद्धे देवेष्वंग्रियम्॥१॥

आ नं एतु पुरश्चरम्। सह देवैरिमः हवम्ं। मनः श्रेयंसिश्रेयसि। कर्मन् यज्ञपंतिन्दधंत्। जुषतां मे वागिदः ह्विः। विराड्वेवी पुरोहिता। हृव्यवाडनंपायिनी। ययां रूपाणि बहुधा वदंन्ति। पेशाः सि देवाः पंरमे ज्नित्रें। सा नो विराडनंपस्फुरन्ती॥२॥

वाग्देवी जुंषतामिद १ ह्विः। चक्षुंर्देवानां ज्योतिंरमृते न्यंक्तम्। अस्य विज्ञानांय बहुधा निधीयते। तस्यं सुम्नमंशीमिह। मा नो हासीद्विचक्षणम्। आयुरिन्नः प्रतींर्यताम्। अनंन्याश्चक्षुंषा वयम्। जीवा ज्योतिंरशीमिह। सुवर्ज्योतिंरुतामृतम्। श्रोत्रेण भद्रमृत शृंण्वन्ति सत्यम्। श्रोत्रेण वाचं बहुधोद्यमानाम्। श्रोत्रेण मोदंश्च महंश्च श्रूयते। श्रोत्रेण सर्वा दिश् आ शृंणोिम। येन प्राच्यां उत दंक्षिणा। प्रतीच्ये दिशः शृण्वन्त्यंत्तरात्। तदिच्छोत्रं बहुधोद्यमानम्। अरान्न नेमिः परि सर्वं बभूव॥३॥

अग्रियमनंपस्फुरन्ती सृत्यः सप्त चं॥१॥

उदेहिं वाजिन्यो अस्यप्स्वन्तः। इद र राष्ट्रमा विंश सूनृतांवत्। यो रोहिंतो विश्वंमिदञ्जजानं। स नों राष्ट्रेषु सुधितान्दधातु। रोह रेरोह र रोहिंत आरुरोह। प्रजाभिवृद्धिं जनुषां मुपस्थम्। ताभिः सर्रब्धो अविद्थ्यडुर्वीः। गातुं प्रपश्यंत्रिह राष्ट्रमाऽहाः। आऽहां र्षीद्राष्ट्रमिह रोहिंतः। मृधो व्यांस्थदभंयं नो अस्तु ॥४॥

अस्मभ्यं द्यावापृथिवी शक्कंरीभिः। राष्ट्रन्दुंहाथामिह रेवतींभिः। विमंमर्श रोहिंतो विश्वरूपः। समाच्ऋाणः प्ररुहो रुहंश्च। दिवंङ्गत्वायं मह्ता मंहिम्ना। वि नो राष्ट्रमुंनत्तु पयंसा स्वेनं। यास्ते विश्वस्तपंसा सं बभूवुः। गायत्रं वृत्समनु तास्त आऽगुः। तास्त्वा विंशन्तु महंसा स्वेनं। सं मांता पुत्रो अभ्येतु रोहिंतः॥५॥

यूयम्ंग्रा मरुतः पृश्ञिमातरः। इन्द्रेण स्युजा प्रमृणीथ् शत्रून्। आ वो रोहिंतो अशृणोदभिद्यवः। त्रिसंप्तासो मरुतः स्वादुसम्मुदः। रोहिंतो द्यावांपृथिवी जंजान। तस्मिड्स्तन्तुं परमेष्ठी तंतान। तस्मिञ्छिश्रिये अज एकंपात्। अदर्ह्द्यावांपृथिवी बलेन। रोहिंतो द्यावांपृथिवी अंदर्हत्। तेन सुवंः स्तिभृतन्तेन नाकंः॥६॥

सो अन्तरिक्षे रजंसो विमानः। तेनं देवाः सुवरन्वंविन्दन्। सुशेवंन्त्वा भानवों दीदिवा सम्मा। समग्रासो जुह्वों जातवेदः। उक्षन्ति त्वा वाजिन्मा घृतेने। सर्समग्ने युवसे भोजेनानि। अग्ने शर्ध मह्ते सौभंगाय। तवं द्युम्नान्यंत्तमानिं सन्तु। सञ्जास्पत्यर सुयम्मा कृणुष्व। शृत्रूयताम्भि तिष्ठा महार्रसि॥७॥

अस्त्वेतु रोहिंतो नाको महा रंसि॥२॥∎

-[२]

पुनंर्न् इन्द्रों मुघवां ददातु। धनांनि श्वा धन्यः सुराधाः। अर्वाचीनं कृणुतां याचितो मनः। श्रुष्टी नो अस्य ह्विषों जुषाणः। यानि नोऽजिनन्धनांनि। जहर्थं शूर मृन्युनां। इन्द्रानुंविन्द नुस्तानि। अनेनं ह्विषा पुनः। इन्द्र आशांभ्यः परि। सर्वाभ्योऽभंयङ्करत्॥८॥

जेता शत्रून् विचंर्षणिः। आकूँत्यै त्वा कामांय त्वा समृधैं त्वा। पुरो देधे अमृत्त्वायं जीवसें। आकूंतिम्स्यावंसे। कामंमस्य समृंद्धौ। इन्द्रंस्य युअते धियः। आकूंतिन्देवीं मनंसः पुरो देधे। युज्ञस्यं माता सुहवां मे अस्तु। यदिच्छामि मनंसा सकांमः। विदेयंमेनद्धदंये निविष्टम्॥९॥

सेद्गिर्ग्नी १ रत्येंत्यन्यान्। यत्रं वाजी तनयो वीडुपांणिः। सहस्रंपाथा अक्षरां समेतिं। आशांनान्त्वाऽऽशापालेभ्यः। चतुर्भ्यो अमृतेंभ्यः। इदं भूतस्याध्यंक्षेभ्यः। विधेमं ह्विषां वयम्। विश्वा आशा मधुना स॰ सृंजामि। अनुमीवा आप ओषंधयो भवन्तु। अयं यर्जमानो मृधो व्यंस्यताम्॥१०॥ अगृंभीताः पृश्वंः सन्तु सर्वें। अग्निः सोमो वर्रणो मित्र इन्द्रंः। बृह्स्पतिः सिवता यः सहस्री। पूषा नो गोभि्रवंसा सरंस्वती। त्वष्टां रूपाणि समनत्तु युज्ञैः। त्वष्टां रूपाणि दर्धती सरंस्वती। पूषा भगर्ं सिवता नो ददातु। बृह्स्पतिद्दिदिन्द्रंः सहस्रम्ं। मित्रो दाता वर्रणः सोमो अग्निः॥११॥

क्रिविंष्टमस्यतात्रवं च॥३॥

[३]

आ नों भर् भगंमिन्द्र द्युमन्तम्। नि तें देष्णस्यं धीमहि प्ररेक। उर्व इंव पप्रथे कामों अस्मे। तमापृंणा वसुपते वसूनाम्। इमङ्कामं मन्दया गोभिरश्वैः। चन्द्रवंता राधंसा प्रथंश्व। सुवर्यवों मृतिभिस्तुभ्यं विप्राः। इन्द्रांय वाहंः कुशिकासों अक्रन्। इन्द्रंस्य नु वीर्याणि प्रवोचम्। यानिं चकारं प्रथमानिं वज्री॥१२॥

अहुन्नहिमन्वपस्तंतर्द। प्रवृक्षणां अभिनृत्पर्वतानाम्। अहुन्निहुं पर्वते शिश्रियाणम्। त्वष्टां उस्मै वज्र हं स्वर्यन्ततक्ष। वाश्रा हंव धेनवः स्यन्दंमानाः। अञ्जः समुद्रमवं जग्मुरापः। वृषायमाणोऽवृणीत् सोमम्। त्रिकंद्रुकेष्विपवत्सुतस्यं। आ सायंकं मुघवां दत्त् वज्रम्। अहंन्नेनं प्रथम्जा महीनाम्॥१३॥ यदिन्द्राहंन्प्रथम्जा महीनाम्। आन्मायिनामिनाः प्रोत मायाः। आत्सूर्यं जनयन्द्यामुषासम्। तादीक्रा शत्रून्न

किलांविवित्से। अहंन्वृत्रं वृत्रतरं व्यश्सम्। इन्द्रो वज्रेण महता वधेनं। स्कन्धारंसीव कुलिंशेनाविवृंक्णा। अहिंः शयत उपपृक्पृंथिव्याम्। अयोध्येव दुर्मद् आ हि जुह्ने। महावीरन्तुंविबाधमृंजीषम्॥१४॥

नातांरीरस्य समृंतिं वधानांम्। स॰ रुजानाः पिपिष् इन्द्रंशत्रुः। विश्वो विहाया अर्तिः। वसुंदंधे हस्ते दक्षिणे। तरणिर्न शिश्रथत्। श्रवस्यया न शिश्रथत्। विश्वंस्मा इदिंषुध्यसे। देवत्रा ह्व्यमूहिंषे। विश्वंस्मा इत्सुकृते वारंमृण्वति। अग्निर्द्वारा व्यृण्वति॥१५॥

उदुजिहांनो अभि कामंमीरयन्। प्रपृञ्चन्विश्वा भुवंनानि पूर्वथां। आ केतुना सुषंमिद्धो यजिष्ठः। कामं नो अग्ने अभिहंर्य दिग्भ्यः। जुषाणो ह्व्यम्मृतेषु दूढ्यः। आ नो र्यिं बंहुलाङ्गोमंतीमिषम्। नि धेहि यक्षंद्मृतेषु भूषन्। अश्विना यज्ञमागंतम्। दाशुषः पुरुंद सससा। पूषा रक्षतु नो रियम्॥१६॥

इमं यज्ञम्श्विनां वर्धयंन्ता। इमौ र्यिं यजंमानाय धत्तम्। इमौ पृश्न्त्रंक्षतां विश्वतों नः। पूषा नः पातु सद्मप्रंयच्छन्। प्रते महे संरस्वति। सुभंगे वार्जिनीवति। सृत्यवाचे भरे मृतिम्। इदं नों हृव्यं घृतवंत्सरस्वति। सृत्यवाचे प्रभरेमा ह्वी १षिं। इमानिं ते दुरिता सौभंगानि। तेभिव्य १ सुभगांसः स्याम॥१७॥ वुज्यहींनामृजी्षं व्यृण्वति रक्षतु नो र्यि॰ सौभंगान्येकं च॥४॥-----[४]

यज्ञो रायो यज्ञ ईशे वसूनाम्। यज्ञः सस्यानांमुत सुक्षितीनाम्। यज्ञ इष्टः पूर्विचित्तिन्दधातु। यज्ञो ब्रह्मण्वा अप्येतु देवान्। अयं यज्ञो वर्धताङ्गोभिरश्वैः। इयं वेदिः स्वपत्या सुवीरौ। इदं बर्हिरित बर्ही एप्यन्या। इमं यज्ञं विश्वे अवन्तु देवाः। भगं एव भगंवा अस्तु देवाः। तेनं वयं भगंवन्तः स्याम॥१८॥

तन्त्वां भग् सर्व् इञ्जोहवीमि। स नो भग पुरप्ता भंवेह। भग् प्रणेत्भंग् सत्यंराधः। भग्मान्धियमुदंव ददंन्नः। भग् प्र णो जनय गोभिरश्वैः। भग् प्र नृभिर्नृवन्तः स्याम। शश्वंतीः समा उपयन्ति लोकाः। शश्वंतीः समा उपयन्त्यापः। इष्टं पूर्तर शश्वंतीनार् समांनार शाश्वतेनं। ह्विषेष्वाऽनन्तं लोकं पर्मा रुरोह ॥१९॥

इयमेव सा या प्रथमा व्यौच्छंत्। सा रूपाणि कुरुते पश्च देवी। द्वे स्वसारौ वयत्स्तन्नमेतत्। सनातनं वितंत्र् षणमयूखम्। अवान्याः स्तन्त्रैन्किरतो धृत्तो अन्यान्। नावंपृज्याते न गमाते अन्तम्। आ वो यन्तूदवाहासो अद्य। वृष्टिं ये विश्वे मुरुतो जुनन्ति। अयं यो अग्निर्मरुतः सिमेद्धः। पृतं जुंषध्वङ्कवयो युवानः॥२०॥

धारावरा मुरुतो धृष्णुवोजसः। मृगा न भीमास्तिविषेभिंरूर्मिभिः। अग्नयो न शुंशुचाना ऋजीषिणः। भ्रुमिन्धमन्त उप गा अंवृण्वत। वि चंक्रमे त्रिर्देवः। आ वेधस्त्रीलंपृष्ठं बृहन्तम्। बृह्स्पति १ सदंने सादयध्वम्। सादद्योनिन्दम् आ दीदिवा १ सम्। हिरंण्यवर्णमरुष १ संपेम। स हि शुचिंः शृतपंत्रः स शुन्ध्यः ॥ २१॥

हिरंण्यवाशीरिष्ट्रिः सुंवर्षाः। बृह्स्पितः स स्वांवेश ऋष्वाः। पूरू सिखंभ्य आसुतिङ्कंरिष्ठः। पूष्ट् स्तवं व्रते व्यम्। निरंष्येम कृदाचन। स्तोतारंस्त इह स्मंसि। यास्ते पूषन्ना वो अन्तः संमुद्रे। हिर्ण्ययीर्न्तिरेक्षे चरंन्ति। याभिर्यासि दूत्याः सूर्यस्य। कामेन कृतश्रवं इच्छमानः॥२२॥

अरंण्यान्यरंण्यान्यसौ। या प्रेव नश्यंसि। कथा ग्रामुन्न पृच्छसि। न त्वाभीरिव विन्दती ३। वृषार्वाय वदंते। यदुपावंति चिच्चिकः। आघाटीभिरिव धावयन्। अर्ण्यानिर्महीयते। उत गावं इवादन्। उतो वेश्मेव दश्यते॥२३॥

उतो अंरण्यानिः सायम्। शुक्टीरिंव सर्जति। गामुङ्गेषु आ ह्वयति। दार्वुङ्गेषु उपावधीत्। वसंत्ररण्यान्याः सायम्। अर्त्रुक्षदिति मन्यते। न वा अंरण्यानिर्हिन्ति। अन्यश्चेत्राभिगच्छेति। स्वादोः फलस्य ज्ञथ्वा। यत्र कामं नि पंद्यते। आञ्जनगन्धीः सुर्भीम्। बह्बन्नामकृषीवलाम्। प्राहं मृगाणौं मातरम्। अर्ण्यानीमंशः सिषम्॥२४॥ स्याम् रुरोह् युवानः शु-्र्यरिच्छमानो दृश्यते निर्पद्यते चत्वारिं च॥५॥—————[५]

वार्त्रहत्याय शवंसे। पृत्नासाह्यांय च। इन्द्र त्वा वंर्तयामिस। सुब्रह्मांणं वीरवंन्तं बृहन्तम्। उरुं गंभीरं पृथुबंध्रमिन्द्र। श्रुतर्षिमुग्रमंभिमातिषाहम्। अस्मभ्यं चित्रं वृषंण र र्यिं दाः। क्षेत्रिये त्वा निर्ऋत्ये त्वा। द्रुहो मुंश्चामि वर्रणस्य पाशांत्। अनागसं ब्रह्मंणे त्वा करोमि॥२५॥

शिवं ते द्यावांपृथिवी उभे इमे। शं ते अग्निः सहाद्भिरंस्तु। शं द्यावांपृथिवी सहौषंधीभिः। शम्नतिरक्षि सह वातेन ते। शं ते चतंस्रः प्रदिशो भवन्तु। या दैवीश्चतंस्रः प्रदिशेः। वातंपत्नीर्भि सूर्यो विच्षे। तासान्त्वा जरस् आ दंधामि। प्र यक्ष्मं एतु निर्ऋतिं पराचैः। अमोचि यक्ष्मां दुरितादवंत्ये॥२६॥

द्रुहः पाशान्तिर्ऋत्यै चोर्दमोचि। अहा अवर्तिमविंदत्स्योनम्। अप्यंभूद्भद्रे सुंकृतस्यं लोके। सूर्यमृतं तमंसो ग्राह्या यत्। देवा अमुंश्चन्नसृंजन्व्यंनसः। एवम्हिम्मं क्षेत्रियाञ्जांमिश्र्सात्। द्रुहो मुंश्चािम् वर्रुणस्य पाशात्। बृहंस्पते युविमन्द्रेश्च वस्वंः। दिव्यस्यंशाथे उत पार्थिवस्य। धृत्तर र्यिङ् स्तुंवते कीरयंचित्॥२७॥

यूयं पांत स्वस्तिभिः सदां नः। देवायुधिमन्द्रमा जोहुंवानाः। विश्वावृधंमभि ये रक्षंमाणाः। येनं हुता दीर्घमध्वांनुमायन्। अनुन्तमर्थमनिवर्त्स्यमानाः। यत्तं सुजाते हिमवंत्सु भेषुजम्। मयोभूः शन्तंमा यद्धृदोसिं। ततों नो देहि सीबले। अदो गिरिभ्यो अधि यत्प्रधावंसि। स्र्शोभंमाना कन्येव शुभ्रे॥२८॥

तां त्वा मुद्गेला हुविषां वर्धयन्ति। सा नः सीबले र्यिमा भाजयेह। पूर्वं देवा अपरेणानुपश्यं जन्मंभिः। जन्मान्यवंरैः पराणि। वेदानि देवा अयम्स्मीति माम्। अह १ हित्वा शरीरं जर्मः प्रस्तात। प्राणापानौ चक्षुः श्रोत्रम्। वाचं मनसि सम्भृताम्। हित्वा शरीरं जर्मः प्रस्तात्। आभूतिम्भूतिं व्यमंश्वामहै। इमा एव ता उषसो याः प्रथमा व्यौच्छन्। ता देव्यः कुर्वते पश्चंरूपा। शश्वंतीर्नावंपृज्यन्ति। न गंमन्त्यन्तम्॥२९॥

वसूनां त्वाऽधीतेन। रुद्राणांमूर्म्या। आदित्यानां तेजसा। विश्वेषां देवानां ऋतुंना। मुरुतामेम्नां जुहोमि स्वाहाँ। अभिभूतिरहमागमम्। इन्द्रंसखा स्वायुधंः। आस्वाशांसु दुष्यहंः। इदं वर्चो अग्निनां दत्तमागांत्। यशो भर्गः सह ओजो बलं च॥३०॥

दीर्घायुत्वायं शतशांरदाय। प्रतिगृभ्णामि मह्ते वीर्याय। आयुंरिस विश्वायुंरिस। सर्वायुंरिस सर्वमायुंरिस। सर्वम्म आयुंर्भूयात्। सर्वमायुंर्गेषम्। भूर्भुवः सुवंः। अग्निर्धर्मेणान्नादः। मृत्युर्धर्मेणान्नंपतिः। ब्रह्मं क्षुत्र एवाहाँ॥३१॥

प्रजापंतिः प्रणेता। बृह्स्पतिः पुरप्ता। यमः पन्थाः। चन्द्रमाः पुनर्सुः स्वाहाँ। अग्निरंत्रादोऽत्रंपितः। अन्नाद्यंमस्मिन् यज्ञे यजंमानाय ददातु स्वाहाँ। सोमो राजा राजंपितः। राज्यमस्मिन् यज्ञे यजंमानाय ददातु स्वाहाँ। वर्रुणः सम्राद्वम्रादंतिः। साम्राज्यमस्मिन् यज्ञे यजंमानाय ददातु स्वाहाँ॥ ३२॥

मित्रः क्षत्रं क्षत्रपंतिः। क्षत्रमस्मिन् युज्ञे यर्जमानाय ददातु स्वाहाँ। इन्द्रो बलं बलंपतिः। बलंमस्मिन् युज्ञे यर्जमानाय ददातु स्वाहाँ। बृह्स्पतिर्ब्रह्म ब्रह्मंपतिः। ब्रह्मास्मिन् युज्ञे यर्जमानाय ददातु स्वाहाँ। स्विता राष्ट्रश् राष्ट्रपंतिः। राष्ट्रमस्मिन् युज्ञे यर्जमानाय ददातु स्वाहाँ। पूषा विशां विद्वंतिः। विश्नंमस्मिन् युज्ञे यर्जमानाय ददातु स्वाहाँ। सर्रस्वती पृष्टिः पृष्टिंपत्नी। पृष्टिंमस्मिन् युज्ञे यर्जमानाय ददातु स्वाहाँ। स्वष्टां पशूनां मिथुनानाः रूप्कृद्रपपंतिः। रूपेणास्मिन् युज्ञे यर्जमानाय पृशून्दंदातु स्वाहाँ॥३३॥

च स्वाह्य साम्रांज्यम्स्मिन् युज्ञे यजंमानाय ददातु स्वाह्य विशंमुस्मिन् युज्ञे यजंमानाय ददातु स्वाह्यं चृत्वारि च (अग्निः सोमो वर्रुणो मित्र इन्द्रो बृहुस्पतिः सिवृता पूषा सरंस्वती त्वष्टा दशं

स ईं पाहि य ऋजीषी तर्रत्रः। यः शिप्रवान्वृष्भो यो मंतीनाम्। यो गौत्रभिद्वंज्रभृद्यो हंरिष्ठाः। स इन्द्र चित्रा र

अभि तृंन्धि वाजान्। आ ते शुष्मों वृष्भ एंतु पृश्चात्। ओत्तरादंधरागा पुरस्तांत्। आ विश्वतों अभिसमेंत्ववाङ्। इन्द्रं द्युम्नः सुवविद्धेह्यस्मे। प्रोष्वंस्मै पुरोर्थम्। इन्द्रांय शूषमंर्चत॥३४॥

अभीके चिद् लोक्कृत्। सङ्गे समत्सुं वृत्रहा। अस्माकं बोधि चोदिता। नर्भन्तामन्यकेषाम्। ज्याका अधि धन्वंसु। इन्द्रं वय शुनासीरम्। अस्मिन् यज्ञे हेवामहे। आ वाजै्रू पं नो गमत्। इन्द्रांय शुनासीरांय। सुचा जुंहुत नो ह्विः॥३५॥

जुषतां प्रति मेधिरः। प्र ह्व्यानि घृतवंन्त्यस्मै। हर्यश्वाय भरता स्जोषाः। इन्द्रर्तुभिर्ब्रह्मणा वावृधानः। शुनासीरी ह्विरिदं जुंषस्व। वयः सुपूर्णा उपसेदुरिन्द्रम्। प्रियमेधा ऋषयो नाधमानाः। अपं ध्वान्तमूर्णुहि पूर्धि चक्षुः। मुमुग्ध्यस्मान्निधयेऽव बृद्धान्। बृहदिन्द्रांय गायत॥३६॥

मर्रतो वृत्रहन्तंमम्। येन् ज्योतिरजंनयन्नृतावृधंः। देवं देवाय जागृंवि। कामिहेकाः क इमे पंतुङ्गाः। मान्थालाः कुलिपरिमापतन्ति। अनांवृतैनान्प्रधंमन्तु देवाः। सौपंण्ं चक्षुंस्तुनुवां विदेय। एवा वन्दस्व वर्रुणं बृहन्तम्। नमस्याधीरंममृतंस्य गोपाम्। स नः शर्मं त्रिवरूथं वियर्ंसत्॥३७॥

यूयं पांत स्वस्तिभिः सदां नः। नाकें सुपूर्णमुप् यत्पतंन्तम्।

हृदा वेनंन्तो अभ्यचंक्षत त्वा। हिरंण्यपक्षं वर्रणस्य दूतम्। यमस्य योनौं शकुनं भुंरण्युम्। शं नों देवीर्भिष्टंये। आपों भवन्तु पीतयैं। शं योर्भि स्रंवन्तु नः। ईशांना वार्याणाम्। क्षयंन्तीश्चर्षणीनाम्॥३८॥

अपो यांचामि भेषजम्। अप्सु मे सोमों अब्रवीत्। अन्तर्विश्वांनि भेषजा। अग्निं चं विश्वशंम्भुवम्। आपश्च विश्वभेषजीः। यद्प्सु ते सरस्वति। गोष्वश्वेषु यन्मधुं। तेनं मे वाजिनीवति। मुखंमिङ्गि सरस्वति। या सरंस्वती वैशम्भल्या॥३९॥

तस्यां मे रास्व। तस्यांस्ते भक्षीय। तस्यांस्ते भूयिष्ठभाजां भूयास्म। अहं त्वदंस्मि मदंसि त्वमेतत्। ममांसि योनिस्तव योनिरस्मि। ममैव सन्वहं ह्व्यान्यंग्ने। पुत्रः पित्रे लोकुकुञ्जांतवेदः। इहैव सन्तत्र सन्तं त्वाऽग्ने। प्राणेनं वाचा मनंसा बिभर्मि। तिरो मा सन्तमायुर्मा प्रहांसीत्॥४०॥

ज्योतिषा त्वा वैश्वान्रेणोपंतिष्ठे। अयं ते योनिर्ऋत्वियः। यतो जातो अरोचथाः। तं जानन्नंग्र आरोह। अथां नो वर्धया र्यिम्। या ते अग्ने यज्ञियां तुनूस्तयेह्यारोहात्माऽऽत्मानम्। अच्छा वसूनि कृण्वन्नस्मे नर्या पुरूणि। यज्ञो भूत्वा यज्ञमा सींद स्वां योनिम्। जातंवेदो भुव आ जायंमानः सक्षय एहिं। उपावरोह जातवेदः पुनस्त्वम्॥४१॥ देवेभ्यों ह्व्यं वह नः प्रजानन्। आयुंः प्रजार र्यिम्स्मासुं धेहि। अजंस्रो दीदिहि नो दुरोणे। तिमन्द्रं जोहवीमि मघवानमुग्रम्। स्त्रा दर्धानमप्रतिष्कुत्र शवारेसि। मर्श्हिष्ठो गीर्भिरा चं यज्ञियोऽववर्तत्। राये नो विश्वां सुपर्थां कृणोतु वृज्ञी। त्रिकंद्रुकेषु महिषो यवांशिरं तुविशुष्मंस्तृपत्। सोमंमिपबृद्धिष्णुंना सुतं यथाऽवंशत्। स ईं ममाद महि कर्म कर्तवे महामुरुम्॥४२॥

सैन र सश्चद्वेवं देवः स्त्यिमिन्दु र स्त्य इन्द्रेः। विदद्यतीं स्रमां रुग्णमद्रैः। मिह् पार्थः पूर्व्य स्मिद्ध्येक्कः। अग्रं नयत्सुपद्यक्षंराणाम्। अच्छा रवं प्रथमा जांन्तीगात्। विदद्गव्य र स्रमां दृढमूर्वम्। येनानुकं मानुषी भोजते विद्रा आ ये विश्वाः स्वप्त्यानिं चुकुः। कृण्वानासो अमृत्त्वायं गातुम्। त्वं नृभिनृपते देवहूंतौ ॥४३॥

भूरीणि वृत्वा हंर्यश्व हर्सा। त्वन्निदंस्युश्चमुंरिम्। धुनिं चास्वांपयो दभीतंये सुहन्तुं। एवा पांहि प्रत्नथा मन्दंतु त्वा। श्रुधि ब्रह्मं वावृधस्वोत गीर्भिः। आविः सुर्यं कृणुहि पीपिहीषः। जहि शत्रूरं रिभे गा इंन्द्र तृन्धि। अग्रे बाधंस्व वि मृधों नुदस्व। अपामीवा अप रक्षारंसि सेध। अस्मात्संमुद्राद्वंहतो दिवो नंः॥४४॥

अपां भूमान्मुपं नः सृजेह। यज्ञ प्रतिंतिष्ठ सुमृतौ सुशेवा आ

त्वां। वसूंनि पुरुधा विंशन्तु। दीर्घमायुर्यजंमानाय कृण्वन्। अधामृतेन जिर्तारमङ्गि। इन्द्रंः शुनावृद्धितंनोति सीरम्। संवृत्सरस्यं प्रतिमाणमेतत्। अर्कस्य ज्योतिस्तिदिद्यंस ज्येष्ठम्। संवृत्सर्थः शुनवृत्सीरमेतत्। इन्द्रंस्य राधः प्रयंतं पुरु त्मनां। तदंर्करूपं विमिमानमेति। द्वादंशारे प्रतितिष्ठतीद्वृषां। अश्वायन्तों गृव्यन्तों वाज्यंन्तः। हवांमहे त्वोपंगन्तवा उं। आभूषंन्तस्त्वा सुमृतौ नवांयाम्। व्यमिन्द्र त्वा शुन् ह्वेम॥४५॥

अर्चृत् ह्विर्गायत यश्सचर्षणीनां वैशम्भुत्या हांसीत्वमुरुं देवहूंतौ नुस्त्मना षद्गार॥———[८]
प्राण उदेहि पुनरा नो भर युज्ञो रायो वार्त्रहत्याय वसूनाश स ई पाह्यष्टौ॥८॥
प्राणो रक्षित्यगृंभीता धारावरा मुरुतो दीर्घायुत्वाय ज्योतिषा त्वा पश्चंचत्वारिश्शत्॥४५॥
प्राणः शुनश् हुंवेम॥

हरिंः ओम्॥ ॥इति श्रीकृष्णयजुर्वेदीयतैत्तिरीयब्राह्मणे द्वितीयाष्टके पश्चमः प्रपाठकः समाप्तः॥

॥षष्ठमः प्रश्नः॥

॥ तैत्तिरीयब्राह्मणे द्वितीयाष्टके षष्टः प्रपाठकः॥

स्वाद्वीं त्वौ स्वादुनौ। तीव्रां तीव्रेणी। अमृतांममृतेन। मधुंमतीं मधुंमता। सृजामि स॰ सोमेन। सोमौऽस्यिश्विभ्यौं पच्यस्व। सरंस्वत्यै पच्यस्व। इन्द्रांय सुत्राम्णे पच्यस्व। परीतो षिश्चता सुतम्। सोमो य उत्तम॰ हिवः॥१॥

द्धन्वा यो नर्यो अप्स्वंन्तरा। सुषाव सोम्मिद्रंभिः। पुनातुं ते पिर्स्रुतम्। सोम् सूर्यस्य दुह्ति। वारेण् शर्श्वता तनां। वायुः पूतः पिवत्रंण। प्राङ्ख्सोमो अतिंद्रुतः। इन्द्रंस्य युज्यः सखां। वायुः पूतः पिवत्रंण। प्रत्यङ्ख्सोमो अतिंद्रुतः॥२॥ इन्द्रंस्य युज्यः सखां। ब्रह्मं क्षृत्रं पेवते तेजं इन्द्रियम्। सुरया सोमः सृत आसुंतो मदांय। शुक्रेणं देव देवताः पिपृग्धि। रसेनान्नं यजंमानाय धेहि। कुविदङ्ग यवंमन्तो यवंश्वित्। यथा दान्त्यंनुपूर्वं वियूयं। इहेहैंषां कृणुत् भोजंनानि। ये ब्रहिषो नमोवृत्तिं न जग्मः। उपयामगृंहीतोऽस्यश्विभ्यां त्वा जुष्टं गृह्णामि॥३॥

सरंस्वत्या इन्द्रांय सुत्राम्णैं। एष ते योनिस्ते जंसे त्वा। वीर्यांय त्वा बलांय त्वा। ते जों ऽिस् ते जो मियं धेहि। वीर्यंमिस वीर्यं मियं धेहि। बलंमिस बलं मियं धेहि। नाना हि वां देवहिंत र सदं: कृतम्। मा सर्मुक्षाथां पर्मे व्योमन्। सुरा त्वमिसं शुष्मिणी सोमं एषः। मा मां हिश्सीः स्वां योनिमाविशन्॥४॥ उपयामगृहीतोऽस्याश्विनं तेजः। सार्स्वतं वीर्यम्। ऐन्द्रं बलम्। एष ते योनिर्मोदांय त्वा। आन्नन्दायं त्वा महंसे त्वा। ओजोऽस्योजो मियं धेहि। मन्युरंसि मन्युं मियं धेहि। महोंऽसि महो मियं धेहि। सहोंऽसि सहो मियं धेहि। या व्याघ्रं विषूचिका। उभौ वृकं च रक्षंति। श्येनं पंत्तिण रेसि हम्। सेमं पात्वश्हंसः। संपृचंः स्थ सं मां भुद्रेणं पृङ्का विपृचंः स्थ वि मां पाप्मनां पृङ्का।५॥

हुविः प्रत्यङ्ख्सोमो अतिंद्रुतो गृह्णाम्यावि्शन्विषूंचिका पश्चं च॥१॥————[💡

सोमो राजाऽमृतर् स्तः। ऋजीषेणांजहान्मृत्युम्। ऋतेनं स्त्यिमिन्द्रियम्। विपानर् शुक्रमन्धंसः। इन्द्रंस्येन्द्रियम्। इदं पयोऽमृतं मधुं। सोमम्द्र्यो व्यंपिबत्। छन्दंसा हुर्सः शुंचिषत्। ऋतेनं स्त्यिमिन्द्रियम्। अद्भः क्षीरं व्यंपिबत्॥६॥ कुङ्गंिङग्सो धिया। ऋतेनं स्त्यिमिन्द्रियम्। अन्नौत्पिर्स्रुतो रसम्। ब्रह्मणा व्यंपिबत् क्षत्रम्। ऋतेनं सत्यिमिन्द्रियम्। रेतो मूत्रं विजंहाति। योनिं प्रविशिदिन्द्रियम्। गर्भो ज्रायुणाऽऽवृंतः। उल्बं जहाति जन्मना। ऋतेनं सत्यिमिन्द्रियम्॥७॥

वेदेन रूपे व्यंकरोत्। स्तास्ती प्रजापंतिः। ऋतेनं स्त्यमिन्द्रियम्। सोमेन् सोमो व्यंपिबत्। सुतासुतौ प्रजापंतिः। ऋतेनं स्त्यमिन्द्रियम्। दृष्ट्वा रूपे व्याकरोत्। सत्यानृते प्रजापितिः। अश्रेद्धामनृतेऽदेधात्। श्रद्धाः सत्ये प्रजापितिः। ऋतेनं सत्यमिन्द्रियम्। दृष्ट्वा पेरिस्रुतो रसम्। शुक्रेणं शुक्रं व्यपिबत्। पयः सोमं प्रजापितः। ऋतेनं सत्यमिन्द्रियम्। विपानः शुक्रमन्धंसः। इन्द्रंस्येन्द्रियम्। इदं पयोऽमृतं मधुं॥८॥

अन्द्यः क्षीरं व्यंपिबुज्जन्मनर्तेनं सुत्यमिन्द्रियः श्रुद्धाः सुत्ये प्रजापितरुष्टौ चं॥२॥———[२]

सुरांवन्तं बर्हिषद र्स् सुवीरम्। युज्ञ र हिन्वन्ति महिषा नमोभिः। दधानाः सोमन्दिवि देवतांसु। मदेमेन्द्रं यजमानाः स्वर्काः। यस्ते रसः सम्भृत ओषधीषु। सोमस्य शुष्मः सुरया सुतस्य। तेनं जिन्व यजमानं मदेन। सर्रस्वतीमश्विनाविन्द्रंमग्निम्। यमश्विना नमुंचेरासुरादधि। सर्रस्वत्यसंनोदिन्द्रियायं॥९॥

इमन्तर शुक्रं मधुमन्त्रिमन्दुम्। सोम्र् राजानिम्ह भक्षयामि। यदत्रं रिप्तर रिसनः सुतस्यं। यदिन्द्रो अपिंबच्छचीभिः। अहन्तदंस्य मनसा शिवेनं। सोम्र् राजानिम्ह भक्षयामि। पितृभ्यः स्वधाविभ्यः स्वधा नमः। पितामहेभ्यः स्वधाविभ्यः स्वधा नमः। प्रपितामहेभ्यः स्वधाविभ्यः स्वधा नमः। अक्षंन्यितरः॥१०॥

अमीमदन्त पितरंः। अतीतृपन्त पितरंः। अमीमृजन्त पितरंः। पितंरः शुन्धंध्वम्। पुनन्तुं मा पितरंः सोम्यासंः। पुनन्तुं मा पितामहाः। पुनन्तु प्रपितामहाः। पुवित्रेण शृतायुंषा। पुनन्तुं

मा पिताम्हाः। पुनन्तु प्रपितामहाः॥११॥

प्वित्रेण श्तायुंषा। विश्वमायुर्व्यश्यवै। अग्न आयू श्रिष् प्रवसेऽग्ने प्रवस्व। पर्वमानः सुवर्जनः पुनन्तुं मा देवज्ञनाः। जातंवेदः प्रवित्रंवद्यते प्रवित्रंम्चिषि। उभाभ्यान्देव सवितर्वेश्वदेवी पुनती। ये संमानाः समंनसः। पितरो यम्राज्ये। तेषां लोकः स्वधा नमः। यज्ञो देवेषुं कल्पताम्॥१२॥

ये संजाताः समंनसः। जीवा जीवेषुं मामकाः। तेषा् श्रीमीयं कल्पताम्। अस्मिल्लांके शतः समाः। द्वे स्रुती अशृणवं पितृणाम्। अहन्देवानांमृत मर्त्यानाम्। याभ्यांमिदं विश्वमेजत्समेति। यदंन्त्रा पितरं मातरं च। इदः हिवः प्रजनंनं मे अस्तु। दशंवीरः सर्वगंणः स्वस्तये। आत्मसिनं प्रजासिनं। पृशुसन्यंभयसिनं लोकसिनं। अग्निः प्रजां बंहुलां में करोत्। अन्नं पयो रेतों अस्मासुं धत्त। रायस्पोष्मिष्मूर्जम्समासुं दीधर्त्स्वाहां॥१३॥

डुन्द्रियायं पितरंः शतायुंषा पुनन्तुं मा पितामृहाः पुनन्तु प्रपितामहाः कल्पता॰ स्वस्तये पश्चं च॥३॥ [३]

सीसेन तत्रुं मनसा मनीषिणंः। ऊर्णासूत्रेणं क्वयों वयन्ति। अश्विनां युज्ञ र संविता सरस्वती। इन्द्रस्य रूपं वर्रणो भिष्ज्यन्। तदस्य रूपमुमृत्र शचींभिः। तिस्रोऽदंधुर्देवताः स॰रराणाः। लोमांनि शष्पैंबंहुधा न तोकांभिः। त्वगंस्य मा॰्समंभवन्न लाजाः। तदिश्विनां भिषजां रुद्रवंर्तनी। सरंस्वती वयति पेशो अन्तरः॥१४॥

अस्थिं मृज्ञानं मासंरैः। कारोत्रेण दर्धतो गवाँन्त्वचि। सरंस्वती मनंसा पेश्लं वसुं। नासंत्याभ्यां वयति दर्श्तं वपुंः। रसं परिस्रुता न रोहितम्। नृग्नहुर्धीर्स्तसंर्न्न वेमं। पर्यसा शुक्रम्मृतं जनित्रम्। सुरंया मूत्रांज्ञनयन्ति रेतः। अपामंतिन्दुर्मतिं बाधंमानाः। ऊवंध्यं वातर्थ सबुवन्तदारात्॥१५॥

इन्द्रंः सुत्रामा हृदयेन स्त्यम्। पुरोडाशेन सिवता जंजान। यकृत्क्रोमानं वरुणो भिष्ज्यन्। मतस्रे वायव्यैर्न मिनाति पित्तम्। आन्नाणि स्थाली मधु पिन्वमाना। गुदा पात्राणि सुद्धा न धेनुः। श्येनस्य पत्रन्न ष्लीहा शचीभिः। आसन्दी नाभिरुदर्न्न माता। कुम्भो वनिष्ठुर्जनिता शचीभिः। यस्मिन्नग्रे योन्यां गर्भो अन्तः ॥१६॥

प्राशीर्व्यक्तः शतधार् उत्संः। दुहे न कुम्भी र स्वधां पितृभ्यंः। मुख्र सदंस्य शिर् इत्सदेन। जिह्ना पिवित्रंमिश्वना सर् सर्रस्वती। चप्पन्न पायुर्भिषगंस्य वालंः। वस्तिर्न शेपो हर्रसा तर्स्वी। अश्विभ्यां चक्षुंरमृतं ग्रहाँभ्याम्। छागंन तेजो ह्विषां श्वतेनं। पक्ष्मांणि गोधूमैः क्वेलेरुतानिं। पेशो न शुक्कमितंतं

वसाते॥१७॥

अविर्न मेषो नृसि वीर्याय। प्राणस्य पन्थां अमृतो ग्रहाँभ्याम्। सरंस्वृत्युप्वाकैंर्व्यानम्। नस्यांनि ब्र्हिबंदंरैर्जजान। इन्द्रंस्य रूपमृष्भो बलाय। कर्णाभ्याः श्रोत्रंममृतङ्ग्रहाँभ्याम्। यवा न ब्र्हिश्रुंवि केसंराणि। कर्कन्धं जज्ञे मधुं सार्घं मुखाँत्। आत्मन्नुपस्थे न वृकंस्य लोमं। मुखे श्मश्रूंणि न व्यांघ्रलोमम्॥१८॥

केशा न शीर्षन् यशंसे श्रिये शिखाँ। सिश्हस्य लोम् त्विषिरिन्द्रियाणि। अङ्गाँन्यात्मिन्धिजा तद्धिनाँ। आत्मान्मङ्गैः समधात्सरंस्वती। इन्द्रंस्य रूपश् श्तमान्मायुंः। चन्द्रेण ज्योतिर्मृतन्दधांना। सरंस्वती योन्याङ्गर्भम्नतः। अधिभ्यां पत्नी सुकृतं बिभर्ति। अपाश् रसेन् वर्रुणो न साम्नां। इन्द्रः श्रिये जनयंत्रप्सु राजां। तेजः पश्नाश् ह्विरिन्द्रियावत्। परिस्रुता पर्यसा सार्घं मधुं। अधिभ्यांन्दुग्धं भिषजा सरंस्वत्या सुतासुताभ्यांम्। अमृतः सोम् इन्दुः॥१९॥

अन्तर आरादन्तर्वसाते व्याघ्रलोम॰ राजां चुत्वारिं च॥४॥______[४]

मित्रोंऽसि वर्रुणोऽसि। समहं विश्वैद्वैः। क्षुत्रस्य नाभिरसि। क्षुत्रस्य योनिरसि। स्योनामा सींद। सुषदामा सींद। मा त्वां हिश्सीत्। मा मां हिश्सीत्। निषंसाद धृतव्रंतो वर्रुणः। पस्त्यांस्वा॥२०॥ साम्राज्याय सुक्रतुंः। देवस्यं त्वा सिवृतुः प्रस्वे। अश्विनौर्बाहुभ्याम्। पूष्णो हस्ताभ्याम्। अश्विनोर्भेषंज्येन। तेजंसे ब्रह्मवर्चसायाभिषिश्चामि। देवस्यं त्वा सिवृतुः प्रस्वे। अश्विनौर्बाहुभ्याम्। पूष्णो हस्ताभ्याम्। सरंस्वत्यै भैषंज्येन॥२१॥

वीर्यायान्नाद्यांयाभिषिश्चामि। देवस्यं त्वा सिवृतुः प्रस्वे। अश्विनौर्बाहुभ्याम्। पूष्णो हस्ताभ्याम्। इन्द्रस्येन्द्रियेणं। श्रिये यशंसे बलांयाभिषिश्चामि। कोऽसि कत्मोऽसि। कस्मैं त्वा कार्य त्वा। सृश्लोकाँ (४) सुमंङ्गलाँ (४) सत्यंराजा (३) न्। शिरों मे श्रीः॥२२॥

यशो मुखम्ँ। त्विषिः केशाँश्च श्मश्रूंणि। राजां मे प्राणोऽमृतम्ँ। सम्राद्वक्षुः। विराद्धोत्रम्ँ। जिह्वा में भुद्रम्। वाङ्कहंः। मनों मृन्युः। स्वृराङ्कामंः। मोदाः प्रमोदा अङ्गुलीरङ्गांनि॥२३॥

चित्तं मे सहंः। बाहू मे बलंमिन्द्रियम्। हस्तौ मे कर्म वीर्यम्। आत्मा क्षत्रमुरो ममं। पृष्टीर्मे राष्ट्रमुदर्म रसौं। ग्रीवाश्च श्रोण्यौं। ऊरू अंरुब्री जानुंनी। विशो मेऽङ्गांनि सर्वतंः। नाभिर्मे चित्तं विज्ञानम्। पायुर्मेऽपंचितिर्भसत्॥२४॥ आनुन्दनुन्दावाण्डौ में। भगः सौभाँग्यं पसंः। जङ्घाँभ्यां पुद्धां धर्मोंऽस्मि। विशि राजा प्रतिष्ठितः। प्रति क्षुत्रे प्रतितिष्ठामि राष्ट्रे। प्रत्यश्चेषु प्रतितिष्ठामि गोषुं। प्रत्यङ्गेषु प्रतितिष्ठाम्यात्मन्। प्रति प्राणेषु प्रतितिष्ठामि पुष्टे। प्रति द्यावांपृथिव्योः। प्रतितिष्ठामि यज्ञे॥२५॥

त्रया देवा एकांदश। त्रयस्त्रिष्शाः सुराधंसः। बृह्स्पतिंपुरोहिताः। देवस्यं सिवृतुः स्वे। देवा देवैरंवन्तु मा। प्रथमा द्वितीयैः। द्वितीयौंस्तृतीयैः। तृतीयौः स्त्येनं। स्त्यं यज्ञेनं। यज्ञो यजुंभिः॥२६॥

यजूर्षेषि सामंभिः। सामाँन्यृग्भिः। ऋचों याुज्यांभिः। याज्यां वषद्गारेः। वृषद्गारा आहुंतिभिः। आहुंतयो मे कामान्त्समंधयन्तु। भूः स्वाहाँ। लोमांनि प्रयंतिममं। त्वङ्ग आनंतिरागंतिः। मार्षं म् उपनितः। वस्वस्थि। मुज्जा म् आनंतिः॥२७॥

पुस्त्यांस्वा सरंस्वत्ये भेषंज्येन श्रीरङ्गांनि भुसद्यज्ञे युज्ञो युज्ञां युज्

यद्देवा देव्हेर्डनम्। देवांसश्चकुमा व्यम्। अग्निर्मा तस्मादेनंसः। विश्वांन्मुश्चत्व १ हंसः। यदि दिवा यदि नक्तम्। एना १ सि चकुमा व्यम्। वायुर्मा तस्मादेनंसः। विश्वांन्मुश्चत्व १ हंसः। यदि जाग्रद्यदि स्वप्नैं। एना १ सि चकुमा व्यम्॥ व्यम्॥ २८॥

सूर्यो मा तस्मादेनेसः। विश्वान्मुश्चत्व १ हंसः। यद्ग्रामे यदर्ण्ये। यत्सुभायां यदिन्द्रिये। यच्छूद्रे यद्ये। एनश्चकुमा वयम्। यदेकस्याधि धर्मणि। तस्यांवयजंनमसि। यदापो अघ्निया वरुणेति शपांमहे। ततो वरुण नो मुश्र॥२९॥

अवंभृथ निचङ्कुण निचेरुरंसि निचङ्कुण। अवं देवैर्देवकृंत्मेनोऽयाट्। अव् मर्त्यैर्मर्त्यकृतम्। उरोरा नों देव रिषस्पांहि। सुमित्रा न् आप् ओषंधयः सन्तु। दुर्मित्रास्तस्मै भूयासुः। यौऽस्मान्द्वेष्टिं। यं चं व्यं द्विष्मः। द्रुपदादिवेन्मुंमुचानः। स्विन्नः स्नात्वी मलांदिव॥३०॥

पूतं प्वित्रेणेवाज्यम्। आपः शुन्धन्तु मैनंसः। उद्वयन्तमंस्स्परि। पश्यन्तो ज्योतिरुत्तंरम्। देवन्देवृत्रा सूर्यम्। अगन्म ज्योतिरुत्तमम्। प्रतियुतो वरुणस्य पाशः। प्रत्यंस्तो वरुणस्य पाशः। प्रत्यंस्तो वरुणस्य पाशः। एधौऽस्येधिषीमहिं। समिदंसि ॥३१॥

तेजोंऽसि तेजो मियं धेहि। अपो अन्वंचारिषम्। रसेन् समंसृक्ष्मिह। पयंस्वाः अग्न आगंमम्। तं मा सःसृंज् वर्चसा। प्रजयां च धनंन च। समावंवित पृथिवी। समुषाः। समु सूर्यः। समु विश्वंमिदञ्जगंत्। वृश्वान्रज्योंतिर्भूयासम्। विभुङ्कामं व्यंश्ववै। भूः स्वाहां॥३२॥

स्वप्न एना $^{\downarrow}$ सि चकुमा व्यं मुंश्च मलांदिव सुमिदंसि जगुत्रीणि च $^{\parallel}$ ६ $^{\parallel}$

होतां यक्षत्समिधेन्द्रंमिडस्पदे। नाभां पृथिव्या अधि। दिवो वर्ष्मन्त्समिध्यते। ओजिंष्ठश्चर्षणी सहान्। वेत्वाज्यस्य होत्यर्ज। होतां यक्षत्तनूनपांतम्। ऊतिभिर्जेतांर्मपंराजितम्। इन्ह्रं देव संविविदम्। पृथिभिर्मध्रमत्तमैः। नराश संन तेजंसा॥ ३३॥

वेत्वाज्यंस्य होत्र्यजं। होतां यक्ष्विद्धांभिरिन्द्रंमीडितम्। आजुह्वांनुममर्त्यम्। देवो देवैः सवींर्यः। वर्ज्रहस्तः पुरन्दरः। वेत्वाज्यंस्य होत्र्यजं। होतांयक्षद्धर्हिषीन्द्रंन्निषद्धरम्। वृष्भन्नर्यांपसम्। वसुंभीरुद्रैरांदित्यैः। स्युग्भिंर्बर्हिरासंदत्॥३४॥

वेत्वाज्यंस्य होत्रयंजं। होतां यक्षदोजो न वीर्यम्ं। सहो द्वार् इन्द्रंमवर्धयन्। सुप्रायणा विश्रंयन्तामृतावृधंः। द्वार् इन्द्रांय मीदुषें। वियन्त्वाज्यंस्य होत्रयंजं। होतां यक्षदुषे इन्द्रंस्य धेनू। सुदुषे मातरौ मही। सवातरौ न तेजंसी। वत्सिमन्द्रंमवर्धताम्॥३५॥

वीतामाज्यंस्य होत्यंजं। होतां यक्ष्देव्या होतांरा। भिषजा सखांया। ह्विषेन्द्रं भिषज्यतः। क्वी देवौ प्रचेतसौ। इन्द्रांय धत्त इन्द्रियम्। वीतामाज्यंस्य होत्यंजं। होतां यक्षत्तिस्रो देवीः। त्रयंस्त्रिधातंवोपसंः। इडा सरस्वती भारंती॥३६॥

महीन्द्रंपत्नीर्ह्विष्मंतीः। वियन्त्वाज्यंस्य होत्र्यजं। होतां यक्ष्त्त्वष्टांर्मिन्द्रं देवम्। भिषज्रं सुयजंङ्घृत्तिश्रयम्। पुरुरूपं सुरेतंसं मुघोनिम्। इन्द्रांय त्वष्टा दर्धदिन्द्रियाणि। वेत्वाज्यंस्य होत्र्यजं। होतां यक्षद्वन्स्पतिम्। श्रिमतारं श्रातक्रंतुम्। धियो जोष्टारंमिन्द्रियम्॥३७॥

मध्यां सम्अन्पथिभिः सुगेभिः। स्वदांति ह्व्यं मधुना घृतेनं। वेत्वाज्यंस्य होत्र्यजां। होतां यक्ष्विन्द्र स्वाहाऽऽज्यस्य। स्वाहां मेदसः। स्वाहां स्तोकानांम्। स्वाहा स्वाहांकृतीनाम्। स्वाहां ह्व्यसूँक्तीनाम्। स्वाहां देवा अंज्यपान्। स्वाहेन्द्र होत्राज्ञुंषाणाः। इन्द्र आज्यंस्य वियन्तु। होत्र्यजं॥३८॥

तेजंसाऽऽसददवर्धतां भारंतीन्द्रियं जुंषाणा द्वे चं (स्मिधेन्द्रन्तनूनपांतिमिडांभिर्ब्र्हिष्योजं उषे दैव्यां तिस्रस्त्वष्टांरुं वनस्पतिमिन्द्रम् ॥ स्मिधेन्द्रं चतुर्वेत्वेकों वियन्तु द्विर्वीतामेकों वियन्तु द्विर्वेत्वेकों वियन्तु होतर्यजं ॥)॥७॥———[७]

सिमंद्ध इन्द्रं उषसामनीके। पुरोरुचां पूर्वकृद्वांवृधानः। त्रिभिर्देवैस्त्रिष्शता वर्ज्ञंबाहुः। ज्ञ्यानं वृत्रं वि दुरों ववार। नराशक्षः प्रतिशूरो मिमानः। तनूनपात्प्रति यज्ञस्य धामं। गोभिर्वपावान्मध्ना सम्अन्। हिरंण्येश्चन्द्री यंजित प्रचेताः। ईडितो देवेर्हिरंवाक अभिष्टिः। आजुह्वांनो ह्विषा शर्धमानः॥३९॥

पुरन्दरो मघवान् वर्ज्ञबाहुः। आयांतु यज्ञमुपंनो जुषाणः। जुषाणो बर्हिर्हिरिवान्न इन्द्रेः। प्राचीनर् सीदत्प्रदिशां पृथिव्याः। उरुव्यचाः प्रथंमानः स्योनम्। आदित्यैर्क्तं वर्सुभिः स्जोषाः। इन्द्रन्दुरेः कव्ष्यो धावंमानाः। वृषाणं यन्तु जनयः सुपत्नीः। द्वारो देवीर्भितो विश्रंयन्ताम्। सुवीरां वीरं प्रथंमाना महोभिः॥४०॥

उषासानक्तां बृह्ती बृहन्तम्। पर्यस्वती सुदुघे शूरमिन्द्रम्।

पेशंस्वती तन्तुंना संव्ययंन्ती। दैवानां देवं यंजतः सुरुको। दैव्या मिमाना मनसा पुरुत्रा। होतांराविन्द्रं प्रथमा सुवाचां। मूर्धन् यज्ञस्य मधुंना दधांना। प्राचीनं ज्योतिरहिवषां वृधातः। तिस्रो देवीर् हृविषा वर्धमानाः। इन्द्रं जुषाणा वृषंणन्न पत्नीः॥४१॥

अच्छिन्नन्तनुं पर्यसा सरंस्वती। इडां देवी भारती विश्वतूँ र्तिः। त्वष्टा दधि दन्नाय शुष्मम्। अपाको चिष्ठुर्यशसे पुरूणि। वृषा यज्नवृषणं भूरिरेताः। मूर्धन् यज्ञस्य समनक्त देवान्। वनस्पतिरवंसृष्टो न पाशैः। त्मन्यां सम्अञ्छिमिता न देवः। इन्द्रंस्य ह्व्यैर्ज्ठरं पृणानः। स्वदांति ह्व्यं मधुना घृतेने। स्तोकानामिन्दुं प्रति शूर इन्द्रः। वृषायमाणो वृष्भस्तुंराषाट्। घृतप्रषा मधुना ह्व्यमुन्दन्। मूर्धन् यज्ञस्यं जुषता इ स्वाहाँ॥४२॥

शर्धमानो महोंभिः पत्नीर्धृतेनं चुत्वारिं च॥८॥------[८]

आचंर्षणिप्रा विवेष यन्मां। त॰ स्प्रीचींः। स्त्यिमत्तन्न त्वावा अन्यो अस्ति। इन्द्रं देवो न मर्त्यो ज्यायान्। अहुन्निहं पिर्शयांन्मणिः। अवांसृजोऽपो अच्छां समुद्रम्। प्रसंसाहिषे पुरुहूत शत्रून्। ज्येष्ठंस्ते शुष्मं इह रातिरस्तु। इन्द्रा भेर दक्षिणेना वसूनि। पितः सिन्धूनामिस रेवतींनाम्। स शेवृंधमिधं धाद्युम्नमुस्मे। मिहं क्षुत्रं जनाषाडिन्द्र तव्यम्। रक्षां च नो मुघोनः पाहि सूरीन्। राये चं नः स्वप्त्या डूषे धाः॥४३॥

रेवतींनाश्चत्वारि च॥९॥————[९]

देवं बर्हिरिन्द्र र् सुदेवन्देवैः। वीरवंतस्तीणं वेद्यांमवर्धयत्। वस्तौर्वृतं प्राक्तौर्भृतम्। राया बर्हिष्मृतोऽत्यंगात्। वसुवने वसुधेयंस्य वेतु यजं। देवीर्द्वार् इन्द्र सङ्घाते। विङ्वीर्यामंन्नवर्धयन्। आ वृत्सेन् तरुणेन कुमारेणं चमीविता अपार्वाणम्। रेणुकंकाटन्नुदन्ताम्। वसुवने वसुधेयंस्य वियन्तु यजं॥४४॥

देवी उषासानक्तां। इन्ह्रं युज्ञे प्रयत्यंह्वेताम्। दैवीर्विशः प्रायांसिष्टाम्। सुप्रीते सुधिते अभूताम्। वसुवने वसुधेयंस्य वीतां यजा। देवी जोष्ट्री वसुधिती। देविमन्द्रंमवर्धताम्। अयांव्यन्याघा द्वेषा सि। आन्यावांक्षीद्वसु वार्याणि। यजमानाय शिक्षिते॥४५॥

वसुवने वसुधेयंस्य वीतां यजं। देवी ऊर्जाहंती दुघें सुदुघैं। पयसेन्द्रंमवर्धताम्। इष्मूर्जम्न्याऽवाँक्षीत्। सिध् स्पितिम्न्या। नवेन पूर्वन्दयंमाने। पुराणेन नवम्। अधातामूर्जमूर्जाहंती वसु वार्याणि। यजंमानाय शिक्षिते। वसुवने वसुधेयंस्य वीतां यजं॥४६॥

देवा दैव्या होतांरा। देविमन्द्रंमवर्धताम्। हुताघंश रसावाभाँ हुाँ

वसुवार्याणि। यजंमानाय शिक्षितौ। वसुवनं वसुधेयंस्य वीतां यजं। देवीस्तिस्रस्तिस्रो देवीः। पितिमिन्द्रंमवर्धयन्। अस्पृक्षद्भारंती दिवम्। रुद्रैर्य्ज्ञ सरंस्वती। इडा वसुंमती गृहान्॥४७॥

वसुवने वसुधेयंस्य वियन्तु यजी। देव इन्द्रो नराशर्सः। त्रिवरूथस्त्रिवन्धुरः। देविमन्द्रमवर्धयत्। श्रातेनं शितिपृष्ठानामाहितः। सहस्रेण प्रवर्तते। मित्रावरुणेदंस्य होत्रमर्हतः। बृह्स्पितिः स्तोत्रम्। अश्विनाऽऽध्वर्यवम्। वसुवने वसुधेयंस्य वेतु यजी॥४८॥

देव इन्द्रो वन्स्पतिः। हिरंण्यवर्णो मधुंशाखः सुपिप्पृतः। देविमन्द्रंमवर्धयत्। दिव्मग्रेणाप्रात्। आऽन्तिरिक्षं पृथिवीमंद्दश्हीत्। वसुवनं वसुधेयंस्य वेतु यजं। देवं बर्हिर्वारितीनाम्। देविमन्द्रंमवर्धयत्। स्वासस्थिमन्द्रेणासंत्रम्। अन्या बर्हीश्ष्यम्यंभूत्। वसुवनं वसुधेयस्यं वेतु यजं। देवो अग्निः स्विष्टकृत्। देविमन्द्रंमवर्धयत्। स्विष्टं कुर्वन्तिस्वंष्टकृत्। देविमन्द्रंमवर्धयत्। स्विष्टं कुर्वन्तिस्वंष्टकृत्। स्विष्टम् करोतु नः। वसुवनं वसुधेयंस्य वेतु यजं॥४९॥ वियन्तु यजं शिक्षिते शिक्षिते वसुवनं वसुधेयंस्य वीताँय्यजं गृहान् वेतु यजांभृथ्यद्वं (देवं बर्हिद्वीद्वारीं देवी उपासानक्तां देवी जोष्ट्री देवी कुर्जाह्ती देवा देवा होतांरा शिक्षितो वेवीस्त्रिसस्त्रिक्षे वेवीदेव इन्द्रो नग्रश्रसो देव इन्द्रो वन्स्पितिदेवं बर्हिवीरितीनान्देवो अग्निः स्विष्टकृद्देवम्। वेतु वियन्तु चतुर्वीतामेको वियन्तु चतुर्वैत्ववर्धयदवर्धयन्निरेवर्धत्तमेकोऽ वर्धयःश्रृश्रुरंवर्धयत्। वस्तोग वत्सेन् देवीरयावीषश्रह्ताऽस्मृक्षच्छ्तेन् दिवश्च स्वासस्यः स्विष्टः शिक्षिते शिक्षिते शिक्षितो विक्तो वत्सेन् वत्सोग वत्सेन् देवीरयावीषश्रवावीषश्रवावीषश्रवावीषश्रवावीष शिक्षितो शिक्षितो विक्तो वत्सोग वत्सोन् देवीरयावीषश्वति शिक्षिते शिक्षिते शिक्षिते शिक्षिते शिक्षिते शिक्षिते शिक्षिते विवावीर वत्सेन्य वत्सोग् वत्सेन् रिवाविष्टं स्वास्त्र स्वर्हेष्ट्र शिक्षिते स्वर्यस्य स्वर्यस्यस्य स्वर्यस्य स्वर्यस्य स्वर्यस्य स्वर्यस्यस्य स्वर्यस्यस्य स्वर्यस्यस्य स्वर्यस्य स्वर्यस्य स्वर्यस्य स्वर्यस्य स्वर्यस्य स्वर्यस्यस्यस्य स्वर्यस्यस्य स्वर्यस्यस्यस्यस्

होतां यक्षत्समिधाऽग्निमिडस्पदे। अश्विनेन्द्र सरंस्वतीम्। अजो धूम्रो न गोधूमैः क्वंलैभेषजम्। मधु शष्पैर्न तेजं इन्द्रियम्। पयः सोमः परिस्नुतां घृतं मधुं। वियन्त्वाज्यंस्य होत्यंजं। होतां यक्ष्तन्नूनपात्सरंस्वती। अविंमेषो न भेषजम्। पथा मधुंमृताभंरन्। अश्विनेन्द्रांय वीर्यम्॥५०॥

बदंरैरुप्वाकांभिर्भेष्जन्तोकांभिः। पयः सोमः परिस्रुतां घृतं मधुं। वियन्त्वाज्यंस्य होत्र्यजं। होतां यक्षन्नराशरसं न नुग्नहुम्। पति स् सुराये भेषजम्। मेषः सरंस्वती भिषक्। रथो न चन्द्र्यंश्विनौर्वपा इन्द्रंस्य वीर्यम्। बदंरैरुप्वाकांभिर्भेष्जन्तोकांभिः। पयः सोमः परिस्रुतां घृतं मधुं। वियन्त्वाज्यंस्य होत्र्यजं॥५१॥

होतां यक्षदिडेडित आजुह्वांनः सरंस्वतीम्। इन्द्रं बलेन वर्धयन्। ऋष्भेण गर्वेन्द्रियम्। अश्विनेन्द्रांय वीर्यम्। यवैंः कर्कन्धंभिः। मधुं लाजैर्न मासंरम्। पयः सोमः परिस्रुतां घृतं मधुं। वियन्त्वाज्यंस्य होत्र्यजं। होतां यक्षद्वर्हिः सृष्टरीमोर्णमदाः। भिषङ्गासंत्या॥५२॥

भिषजाऽश्विनाऽश्वा शिशुंमती। भिषग्धेनुः सरंस्वती। भिषग्दुह इन्द्रांय भेषजम्। पयः सोमः परिस्रुतां घृतं मधुं। वियन्त्वाज्यंस्य होत्र्यजं। होतां यक्षद्दुरो दिशंः। कुव्यो न व्यचंस्वतीः। अश्विभ्यान्न दुरो दिशंः। इन्द्रो न रोदंसी दुधं। दुहे कामान्त्सरंस्वती॥५३॥

अश्विनेन्द्रांय भेष्जम्। शुक्रन्न ज्योतिंरिन्द्रियम्। पयः सोमः परिस्रुतां घृतं मधुं। वियन्त्वाज्यंस्य होत्र्यजं। होतां यक्षत्सुपेशंसोषे नक्तन्दिवां। अश्विनां सञ्जानाने। समं जाते सरंस्वत्या। त्विषिमिन्द्रे न भेष्जम्। श्येनो न रजंसा हृदा। पयः सोमः परिस्रुतां घृतं मधुं॥५४॥

वियन्त्वाज्यंस्य होत्रयंजं। होतां यक्षद्दैव्या होतांरा भिषजाऽश्विनां। इन्द्रन्न जागृंवी दिवा नक्तन्न भेषजेः। शूष्य सरंस्वती भिषक्। सीसेन दुह इन्द्रियम्। पयः सोमः परिस्रुतां घृतं मधुं। वियन्त्वाज्यंस्य होत्र्यंजं। होतां यक्षत्तिस्रो देवीर्न भेष्जम्। त्रयंस्त्रिधातंवोऽपसंः। रूपिनन्द्रें हिरण्ययम्॥५५॥

अश्विनेडा न भारती। वाचा सरंस्वती। मह् इन्द्रांय दध्रिन्द्रियम्। पयः सोमः परिस्रुतां घृतं मधुं। वियन्त्वाज्यंस्य होत्र्यजं। होतां यक्ष्त्त्वष्टांर्मिन्द्रंमश्विनां। भिषज्ञ सरंस्वतीम्। ओजो न जूतिरिन्द्रियम्। वृको न रंभसो भिषक्। यशः सुरंया भेषजम्॥५६॥

श्रिया न मासंरम्। पयः सोमः परिस्रुतां घृतं मध्ं। वियन्त्वाज्यंस्य होत्र्यजं। होतां यक्षद्वनस्पतिम्। श्रिमतार र श्तकंतुम्। भीमन्न मृन्यु राजांनळ्याँ घन्नमंसा ऽश्विना भामम्। सरंस्वती भिषक्। इन्दांय दुह इन्द्रियम्। पयः सोमः परिस्रुतां घृतं मधुं। वियन्त्वाज्यंस्य होत्र्यजं॥५७॥ होतां यक्षद्ग्निः स्वाहाऽऽज्यंस्य स्तोकानांम्। स्वाहा मेदंसां पृथंक्। स्वाहा छागंमिश्वभ्यांम्। स्वाहां मेषः सरस्वत्ये। स्वाहंर्षभिमन्द्रांय सिः हाय सहंसेन्द्रियम्। स्वाहाऽग्निन्न भेषजम्। स्वाहा सोमंमिन्द्रियम्। स्वाहेन्द्रः सुत्रामाणः सिवतारं वरुणं भिषजां पितम्। स्वाहा वनस्पतिं प्रियं पाथो न भेषजम्। स्वाहां देवाः आज्यपान्॥५८॥

स्वाहाऽग्नि १ होत्राञ्जुंषाणो अग्निर्भेषजम्। पयः सोमः परिस्रुतां घृतं मधुं। वियन्त्वाज्यंस्य होतर्यजं। होतां यक्षदिश्वना संरेस्वतीमिन्द्र र सुत्रामांणम्। इमे सोमाः सुरामांणः। छागैर्न मेषेर्ऋषभैः सुताः। शष्पैर्न तोकांभिः। लाजैर्महंस्वन्तः। मदा मासंरेण परिष्कृताः। शुक्राः पर्यस्वन्तोऽमृताः। प्रस्थिता वो मधुश्चर्तः। तानश्विना सरंस्वतीन्द्रः सुत्रामां वृत्रहा। जुषन्ता ५ सौम्यं मधुं। पिबंन्तु मदंन्तु वियन्तु सोमम्। होतुर्यजं॥५९॥ वीर्यं वियन्त्वाज्यंस्य होतुर्यज् नासंत्या सरंस्वती मधुं हिर्ण्ययं भेषुजं वियन्त्वाज्यंस्य होतुर्यजाँज्यपानुमृताः पश्चं च (सुमिधाऽग्निः षट्। तनूनपाँत्सुप्त। नराशःसमृषिः। इडेडि्तो यवैर्ष्टौ। बुर्हिः सप्ता दुरोऽश्विना नवं। सुपेशुसर्षिः। दैव्या होतांरा सीसेन रसंः। तिस्रस्त्वष्टांरमुष्टावंष्टौ। वनस्पतिमृषिः। अग्नित्रयोदश। अश्विना द्वादंश त्रयोदश। स्मिधाऽग्निं बदंरै्बदंरैर्यवैर्श्विना त्विषिम्श्विना न भेषुजर रूपमुश्विनां भीमं भामम् ॥)॥११॥ समिद्धो अग्निरंश्विना। तृप्तो घूर्मो विराद्भुतः। दुहे धेनुः

सामद्धा आग्नराश्वना। तुप्ता धुमा ।वराष्ट्रुतः। दुह धुनुः सरंस्वती। सोमर्थ शुक्रमिहेन्द्रियम्। तुनूपा भिषजां

सुते। अश्विनोभा सर्रस्वती। मध्वा रजार्रसीन्द्रियम्। इन्द्रांय पृथिभिर्वहान्। इन्द्रायेन्दुर् सर्रस्वती। नराशरसेन नुग्नहुं:॥६०॥

अधांतामिश्वना मधुं। भेषजं भिषजां सुते। आजुह्वांना सरंस्वती। इन्द्रांयेन्द्रियाणि वीर्यम्। इडांभिरिश्वनाविषम्। समूर्ज् सर रियन्दंधुः। अश्विंना नमुंचेः सुतम्। सोमर् शुक्रं परिस्नुतां। सरंस्वती तमाभंरत्। बर्हिषेन्द्राय पातंवे॥६१॥ क्वष्यों न व्यचंस्वतीः। अश्विभ्यां न दुरो दिशंः। इन्द्रो न रोदंसी दुधं। दुहे कामान्त्सरंस्वती। उषासा नक्तंमिश्वना। दिवेन्द्रर् सायमिन्द्रियेः। सञ्जानाने सुपेशंसा। समं जाते सरंस्वत्या। पातं नो अश्विना दिवां। पाहि नक्तरं सरस्वति॥६२॥

दैव्यां होतारा भिषजा। पातिमन्द्र सर्चां सुते। तिस्रस्नेधा सरंस्वती। अश्विना भारतीडाँ। तीव्रं पंरिस्रुता सोमम्ँ। इन्द्रांय सुषवुर्मदम्। अश्विना भेषजं मधुं। भेषजत्रः सरंस्वती। इन्द्रे त्वष्टा यशः श्रियम्ँ। रूप र रूपमधः सुते। ऋतुथेन्द्रो वनस्पतिः। शृशमानः पंरिस्रुताँ। कीलालंमश्विभ्यां मधुं। दुहे धेनः सरंस्वती। गोभिर्न सोममश्विना। मासंरेण परिष्कृताँ। समधाता र सरंस्वत्या। स्वाहेन्द्रे सुतं मधुं॥६३॥

नुग्नहुः पातंवे सरस्वत्यधुः सुतैंऽष्टो चं॥१२॥—————[

अश्विनां ह्विरिन्द्रियम्। नमुंचेर्धिया सरंस्वती। आ

शुक्रमांसुराद्वस्। मुघमिन्द्रांय जिभ्रेरे। यमुश्विना सरंस्वती। हृविषेन्द्रमवर्धयन्। स बिंभेद वुलं मुघम्। नमुंचावासुरे सर्चां। तिमन्द्रं पुशवः सर्चां। अश्विनोभा सरंस्वती॥६४॥

दधांना अभ्यंनूषत। हुविषां यज्ञिमंन्द्रियम्। य इन्द्रं इन्द्रियन्द्धुः। सृविता वरुणो भगः। स सुत्रामां हृविष्पंतिः। यजमानाय सश्चत। सृविता वरुणोऽदधंत्। यजमानाय दाशुषें। आदंत्त नमुंचेर्वसुं। सुत्रामा बलंमिन्द्रियम्॥६५॥

वर्रुणः क्षुत्रमिन्द्रियम्। भगेन सिवता श्रियम्। सुत्रामा यशंसा बलम्। दधांना यज्ञमांशत। अश्विंना गोभिरिन्द्रियम्। अश्विभिर्वीर्यं बलम्। हिविषेन्द्र सरंस्वती। यजंमानमवर्धयन्। ता नासंत्या सुपेशंसा। हिरंण्यवर्तनी नर्गं। सरंस्वती हिविष्मंती। इन्द्र कर्मसु नोऽवत। ता भिषजां सुकर्मणा। सा सुदुषा सरंस्वती। स वृंत्रहा श्रतंत्रतुः। इन्द्रांय दधुरिन्द्रियम्॥६६॥

उुभा सरंस्वती बलंमिन्द्रियन्नरा पद्वं॥१३॥

[83]

देवं ब्र्हिः संरस्वती। सुदेविमन्द्रं अश्विनां। तेजो न चक्षुंरक्ष्योः। ब्र्हिषां दधुरिन्द्रियम्। वसुवनं वसुधेयंस्य वियन्तु यजं। देवीर्द्वारों अश्विनां। भिषजेन्द्रे सरस्वती। प्राणन्न वीर्यन्नसि। द्वारों दधुरिन्द्रियम्। वसुवनं वसुधेयंस्य वियन्तु यजं॥६७॥ देवी उषासांविश्वनां। भिषजेन्द्रे सरंस्वती। बलन्न वार्चमास्यें। उषाभ्यांन्दध्रिन्द्रियम्। वसुवनं वसुधेयंस्य वियन्तु यजं। देवी जोष्ट्री अश्विनां। सुत्रामेन्द्रे सरंस्वती। श्रोत्रन्न कर्णयोर्यशंः। जोष्ट्रींभ्यान्दध्रिरिन्द्रियम्। वसुवनं वसुधेयंस्य वियन्तु यजं॥६८॥

देवी ऊर्जाहुंती दुघं सुदुघं। पयसेन्द्र सरंस्वत्यश्विनां भिषजांवत। शुक्रन्न ज्योतिः स्तनंयोराहुंती धत्त इन्द्रियम्। वसुवनं वसुधेयंस्य वियन्तु यजं। देवा देवानां भिषजां। होतांराविन्द्रंमश्विनां। वषद्भारेः सरंस्वती। त्विष्निन्न हृदंये मृतिम्। होतृंभ्यान्दध्रिन्द्रियम्। वसुवनं वसुधेयंस्य वियन्तु यजं॥६९॥

देवीस्तिस्रस्तिस्रो देवीः। सर्गस्वत्यश्विना भारतीडाँ। शूषन्न मध्ये नाभ्याम्। इन्द्रांय दध्रिन्द्रियम्। वसुवने वसुधेयंस्य वियन्तु यजं। देव इन्द्रो नराशश्मः। त्रिव्रूथः सर्गस्वत्याऽश्विभ्यांमीयते रथंः। रेतो न रूपममृतं जनित्रम्। इन्द्रांय त्वष्टा दधंदिन्द्रियाणि। वसुवने वसुधेयंस्य वियन्तु यजं॥७०॥

देव इन्द्रो वन्स्पतिः। हिरंण्यपर्णो अश्विभ्याम्। सरंस्वत्याः सुपिप्पृतः। इन्द्रांय पच्यते मधुं। ओजो न जूतिमृष्भो न भामम्। वन्स्पतिनी दर्धदिन्द्रियाणि। वसुवने वसुधेयंस्य वियन्तु यर्जं। देवं ब्र्हिर्वारितीनाम्। अध्वरे स्तीर्णमुश्विभ्याम्। ऊर्णमदाः सरंस्वत्याः॥७१॥

स्योनिमंन्द्र ते सदंः। ईशायै मृन्यु राजांनं बर्हिषां दध्रिन्द्रियम्। वसुवनं वसुधेयंस्य वियन्तु यजं। देवो अग्निः स्विष्टुकृत्। देवान् यंक्षद्यथायथम्। होतांराविन्द्रंमिश्वनां। वाचा वाच् सरंस्वतीम्। अग्नि सोम से स्विष्टुकृत्। स्विष्टु इन्द्रंः सुत्रामां सिवता वर्रुणो भिषक्। इष्टो देवो वनस्पतिः। स्विष्टा देवा आंज्यपाः। इष्टो अग्निरिग्निनां। होतां होत्रे स्विष्टुकृत्। यशो न दधिदिन्द्रियम्। ऊर्जुमपंचिति स्वधाम्। वसुवनं वसुधेर्यस्य वियन्तु यजं॥७२॥

द्वारों दध्रिन्द्रियं वंसुवनें वसुधेयंस्य वियन्तु यज् जोष्ट्रीभ्यान्दध्रिन्द्रियं वंसुवनें वसुधेयंस्य वियन्तु यज् यज् होतृंभ्यान्दध्रिन्द्रियं वंसुवनें वसुधेयंस्य वियन्तु यजैन्द्रियाणिं वसुवनें वसुधेयंस्य वियन्तु यज्ञ सरंस्वत्या वनस्पतिष्णद्वं (देवं ब्रुहिर्देवीद्वर्शरों देवी उषासांविश्वनां देवी जोष्ट्रीं देवी ऊर्जाहंती देवा देवानां भिषजां वषद्गरेदेवीस्तिम्रस्तिम्रो देवीर्देव इन्द्रो नराशश्सों देव इन्द्रो वनस्पतिर्देवं ब्रुहिर्वारितीनान्देवो अग्निः स्विष्टकृद्देवान्। समिधाऽग्निन्देवं ब्रुहिः सरंस्वत्यश्विना सर्वं वियन्तु। द्वारंस्तिम्नः सर्ववियन्तु। अज इन्द्रमोजोऽग्निं परः सरंस्वतीम्। नक्तं पूर्वः सरंस्वति। अन्यत्र सरंस्वती। भिषक्पूर्वन्दह इन्द्रियम्। अन्यत्रं दध्रिन्द्रियम्। सौत्रामण्याश् संतासुती। अञ्चन्त्ययं यजनानः ॥

अग्निम्द्य होतांरमवृणीत। अयर सुंतासुती यजंमानः। पर्चन्यक्तीः। पर्चन्पुरोडाशान्। गृह्णन्यहान्। बुध्नन्निभ्याञ्छागुर् सरंस्वत्या इन्द्रांय। बुधन्त्सरंस्वत्यै मेषिमन्द्रांयाश्विभ्यांम्। बुध्रनिन्द्रायर्षभम् श्विभ्या ५ सर्यस्वत्यै। सूप्स्था अद्य देवो वनस्पतिरभवत्। अश्विभ्याञ्छागेन सर्रस्वत्या इन्द्रांय॥७३॥

सरंस्वत्यै मेषेणेन्द्रांयाश्विभ्यांम्। इन्द्रांयर्षभेणाश्विभ्या ५ सरंस्वत्यै। अक्षु स्तान्मंदस्तः प्रतिपचताग्रंभीषुः। अवीवृधन्त ग्रहैंः। अपातामिश्वना सरंस्वतीन्द्रेः सुत्रामां वृत्रहा। सोमान्त्सुराम्णंः। उपो उक्थामदाः श्रौद्विमदां अदन्। अवींवृधन्ताङ्ग्षैः। त्वामुद्यर्षं आर्षेयर्षीणान्नपादवृणीत। अय सुंतासुती यर्जमानः। बहुभ्य आ सङ्गंतेभ्यः। एष में देवेषु वसु वार्या यंक्ष्यत इतिं। ता या देवा देवदानान्यदुः। तान्यस्मा आ च शास्वं। आ चं गुरस्व। इषितश्चं होतरसिं भद्रवाच्यांय प्रेषितो मानुषः। सूक्तवाकायं सूक्ता ब्रूहि॥७४॥

इन्द्रांय यजंमानः सप्त चं॥१५॥•

उशन्तंस्त्वा हवामह आ नों अग्ने सुकेतुनाँ। त्व र सोंम महे भगन्त्व सोम प्रचिंकितो मनीषा। त्वया हि नः पितरंः सोम पूर्वे त्व र सोम पितृभिंः संविदानः। बर्हिंषदः पितर् आऽहं पितृन्। उपंहृताः पितरोऽग्निष्वात्ताः पितरः। अग्निष्वात्तानृंतुमतो हवामहे। नराश १ से सोमपीथं य आशुः। ते नो अर्वन्तः सुहवां भवन्तु। शं नों भवन्तु द्विपदे शश्चतुंष्पदे। ये अंग्निष्वात्ता येऽनंग्निष्वात्ताः॥७५॥

अ॰होमुर्चः पितरंः सोम्यासंः। परेऽवंरेऽमृतांसो भवंन्तः।

अधि ब्रुवन्तु ते अंवन्त्वस्मान्। वान्यांयै दुग्धे जुषमांणाः कर्म्भम्। उदीरांणा अवंरे परं च। अग्निष्वात्ता ऋतुभिः संविदानाः। इन्द्रंवन्तो ह्विरिदं जुंषन्ताम्। यदंग्ने कव्यवाहन् त्वमंग्न ईडितो जांतवेदः। मातंली कव्यैः। ये तांतृपुर्देवत्रा जेहंमानाः। होत्रावृधः स्तोमंतष्टासो अर्कैः। आऽग्ने याहि सुविदत्रेभिर्वाङ्। सत्यैः कव्यैः पितृभिर्घर्मसिद्धः। ह्व्यवाहंमजरं पुरुप्रियम्। अग्निं घृतेनं ह्विषां सप्यन्। उपांसदङ्कव्यवाहं पितृणाम्। स नः प्रजां वीरवंतीः समृण्वतु॥७६॥

अनंग्निष्वात्ता जेहंमानाः सप्त चं॥१६॥

होतां यक्षदिडस्पदे। समिधानं महद्यशंः। सुषंमिद्धं वरेण्यम्। अग्निमिन्द्रं वयोधसम्। गायत्रीञ्छन्दं इन्द्रियम्। त्र्यविङ्गां वयो दर्धत्। वेत्वाज्यंस्य होत्र्यजं। होतां यक्ष्च्छुचिंव्रतम्। तनूनपातमुद्भिदम्। यङ्गर्भमदितिर्द्धे॥७७॥

शुचिमिन्द्रं वयोधसम्। उष्णिह्ञ्छन्दं इन्द्रियम्। दित्यवाह्ङ्गां वयो दर्धत्। वेत्वाज्यंस्य होत्र्यजं। होतां यक्षदीडेन्यम्। ईडितं वृत्रहन्तंमम्। इडांभिरीड्यू सहंः। सोम्मिन्द्रं वयोधसम्। अनुष्टुभ्ञ्छन्दं इन्द्रियम्। त्रिवृत्सङ्गां वयो दर्धत्॥७८॥

वेत्वाज्यंस्य होत्र्यजं। होतां यक्षत्सुबर्हिषदम्।

पूष्णवन्तममंर्त्यम्। सीदंन्तं ब्रहिषं प्रिये। अमृतेन्द्रं वयोधसम्। बृह्तीञ्छन्दं इन्द्रियम्। पञ्चाविङ्गां वयो दर्धत्। वेत्वाज्यंस्य होत्र्यजं। होतांयक्षुद्धचंस्वतीः। सुप्रायणा ऋतावृधंः॥७९॥

द्वारों देवीरहिंर्ण्ययीः। ब्रह्माण् इन्ह्रं वयोधसम्। पृङ्किञ्छन्दं इहेन्द्रियम्। तुर्यवाहृङ्गां वयो दर्धत्। वेत्वाज्यंस्य होत्र्यजे। होतां यक्षत्सुपेशंसे। सुशिल्पे बृंहृती उभे। नक्तोषासा न दंर्शते। विश्वमिन्ह्रं वयोधसम्। त्रिष्ठभञ्छन्दं इन्द्रियम्॥८०॥ पृष्ठवाहृङ्गां वयो दर्धत्। वेत्वाज्यंस्य होत्र्यजं। होतां यक्षत्प्रचेतसा। देवानांमृत्तमं यशंः। होतांरा देव्यां क्वी। स्युजेन्द्रं वयोधसम्। जगंतीञ्छन्दं इहेन्द्रियम्। अनुङ्वाहृङ्गां वयो दर्धत्। वेत्वाज्यंस्य होत्र्यजं। होतां यक्षत्पेशंस्वतीः॥८१॥

तिस्रो देवीरहिरण्ययीः। भारतीर्बृह्तीर्म्हीः। पित्मिन्द्रं वयोधसम्। विराज्ञञ्छन्दं इहेन्द्रियम्। धेनुङ्गान्न वयो दर्धत्। वेत्वाज्यंस्य होत्र्यंजं। होतां यक्षत्सुरेतंसम्। त्वष्टांरं पृष्टिवर्धनम्। रूपाणि बिभ्रंतं पृथंक्। पृष्टिमिन्द्रं वयोधसम्॥८२॥

द्विपदञ्छन्दं इहेन्द्रियम्। उक्षाणुङ्गान्न वयो दर्धत्। वेत्वाज्यंस्य होतुर्यजं। होतां यक्षच्छुतर्ऋतुम्। हिरंण्यपर्णमुक्थिनम्। र्शनां बिभ्रंतं वृशिम्। भगमिन्द्रं वयोधसम्। क्कुम्ञ्छन्दं इहेन्द्रियम्। वृशां वेहतृङ्गान्न वयो दर्धत्। वेत्वाज्यंस्य होत्र्यजं। होतां यक्षुत्स्वाहांकृतीः। अग्निङ्गृहपंतिं पृथंक्। वर्रुणं भेषजङ्काविम्। क्षुत्रमिन्द्रं वयोधसम्। अतिंच्छन्दस्ञ्छन्दं इन्द्रियम्। बृहद्ष्पभङ्गां वयो दर्धत्। वेत्वाज्यंस्य होतर्यजं॥८३॥

द्धे दर्धरतावृधं इन्द्रियं पेशंस्वतीर्वयोधसं वत्वाज्यंस्य होत्यंजं सप्त चं (इडस्प्देंऽग्निङ्गांयुत्रीत्र्यविम्ं। शुचिंव्रत्र् शुचिंमुण्णिहंन्दित्यवाहम्ं। ईडेन्य्र सोमंमनुष्टुभंत्रिवृत्सम्। सुब्रुहिषदंमुमृतेन्द्रं बृह्तीं पश्चांविम्। व्यचंस्वतीः सुप्रायणा द्वारौं ब्रह्माणंः पृङ्किमिह तुंर्युवाहम्ं। सुपेशंसे विश्वमिन्द्रंत्रिष्टुभं पष्टवाहम्ं। प्रचेतसा स्युजेन्द्रं जगंतीमिहानुङ्गाहम्। पेशंस्वतीस्तिस्रः पतिं विराजंमिह धेनुत्र। सुरेतंसन्त्वष्टांरं पृष्टिमिन्द्रं द्विपदंमिहोक्षाणृत्र। शृतकंतुं भगृमिन्द्रंङ्क्कुभंमिह वृशात्र। स्वाहांकृतीः क्षुत्रमतिच्छन्दसं बृहदंष्भङ्गां वयो दर्धदिन्द्रियमृषिं वसु नवं द्शेहंन्द्रियमष्टं नव दश् गात्र वयो दर्धदिङस्पदे सर्वं वेतु ॥)॥१७॥

सिमंद्धो अग्निः स्मिधां। सुषंमिद्धो वरेंण्यः। गायत्री छन्दं इन्द्रियम्। त्र्यविगीवयां दधुः। तनूनपाच्छुचित्रतः। तनूपाच् सरंस्वती। उष्णिक्छन्दं इन्द्रियम्। दित्यवाङ्गोवयां दधुः। इडांभिरुग्निरीड्यः। सोमो देवो अमर्त्यः॥८४॥

अनुष्टुप्छन्दं इन्द्रियम्। त्रिवृत्सो गौर्वयो दधुः। सुबर्हिर्गिः पूषण्वान्। स्तीर्णबंर्हिरमंत्र्यः। बृह्ती छन्दं इन्द्रियम्। पश्चांविर्गीर्वयो दधुः। दुरो देवीर्दिशो महीः। ब्रह्मा देवो बृह्स्पतिः। पुङ्किश्छन्दं इहेन्द्रियम्। तुर्युवाङ्गोर्वयो दधुः॥८५॥ उषे यह्वी सुपेशंसा। विश्वं देवा अमंर्त्याः। त्रिष्टुप्छन्दं इन्द्रियम्। पृष्ठवाद्गौर्वयां दधुः। दैव्यां होतारा भिषजा। इन्द्रंण स्युजां युजा। जगंती छन्दं इहेन्द्रियम्। अनुङ्वान्गौर्वयां दधुः। तिस्र इडा सरंस्वती। भारती मुरुतो विशः॥८६॥

विराद्धन्दं इहेन्द्रियम्। धेनुर्गौर्न वयो दधः। त्वष्टां तुरीपो अद्भंतः। इन्द्राग्नी पृष्टिवर्धना। द्विपाच्छन्दं इहेन्द्रियम्। उक्षा गौर्न वयो दधः। श्रामिता नो वनस्पतिः। स्विता प्रस्वन्भगम्। कुकुच्छन्दं इहेन्द्रियम्। वृशा वेहद्गौर्न वयो दधः। स्वाहां यृज्ञं वर्रुणः। सुक्षत्रो भेषुजङ्करत्। अतिच्छन्दाश्छन्दं इन्द्रियम्। बृहदंष्भो गौर्वयो दधः॥८७॥

अमर्त्यस्तुर्युवाङ्गोर्वयो दधुर्विशो वृशा वेहद्गौर्न वयो दधुश्चत्वारि च॥१८॥_____[१८]

वसन्तेन्त्र्नां देवाः। वसंविश्चिवृतां स्तुतम्। रथन्त्रेण् तेजसा। हिविरिन्द्रे वयो दधः। ग्रीष्मेणं देवा ऋतुनां। रुद्राः पश्चदशे स्तुतम्। बृह्ता यशंसा बलम्। हिविरिन्द्रे वयो दधः। वर्षाभिर्ऋतुनांऽऽदित्याः। स्तोमे सप्तदशे स्तुतम्॥८८॥

वैरूपेणं विशौजंसा। ह्विरिन्द्रे वयों दधुः। शार्देन्तुनां देवाः। एक्विश्श ऋभवंः स्तुतम्। वैराजेनं श्रिया श्रियम्। ह्विरिन्द्रे वयों दधुः। हेमन्तेन्तुनां देवाः। मरुतंस्त्रिण्वे स्तुतम्। बलेन् शक्वेरीः सहंः। ह्विरिन्द्रे वयों दधुः। शैशिरेण्तुनां देवाः। त्र्यस्त्रिश्शेऽमृत इविरिन्द्रे वयों दधुः। शैशिरेण्तुनां देवाः। त्र्यस्त्रिश्शेऽमृत इविरिन्द्रे

वयों दधुः॥८९॥

स्तोमं सप्तद्रशे स्तुतर सहां ह्विरिन्द्रे वयां दधुश्चत्वारिं च (वस्तन्तेनं ग्रीप्भेणं वर्षाभिः शार्देनं हेम्न्तेनं शैशिरेण पट ॥)॥१९॥————[१९]

देवं बर्हिरिन्द्रं वयोधसम्। देवन्देवमंवर्धयत्। गायत्रिया छन्दंसेन्द्रियम्। तेज् इन्द्रे वयो दर्धत्। वसुवने वसुधेयंस्य वेतु यजं। देवीर्द्वारों देविमन्द्रं वयोधसम्। देवीर्देवमंवर्धयन्। उण्णिहा छन्दंसेन्द्रियम्। प्राणिमन्द्रे वयो दर्धत्। वसुवने वसुधेर्यस्य वियन्तु यजं॥९०॥

देवी देवं वंयोधसम्। उषे इन्द्रंमवर्धताम्। अनुष्टुभा छन्दंसेन्द्रियम्। वाचमिन्द्रे वयो दर्धत्। वसुवने वसुधेयंस्य वीतां यजं। देवी जोष्ट्री देवमिन्द्रं वयोधसम्। देवी देवमवर्धताम्। बृह्त्या छन्दंसेन्द्रियम्। श्रोत्रमिन्द्रे वयो दर्धत्। वसुवने वसुधेयंस्य वीतां यजं॥९१॥

देवी ऊर्जाहुंती देविमन्द्रं वयोधसम्। देवी देवमंवर्धताम्। पङ्ग्या छन्दंसेन्द्रियम्। शुक्रिमन्द्रे वयो दर्धत्। वसुवनं वसुधेयंस्य वीतां यर्जा। देवा दैव्या होतांरा देविमन्द्रं वयोधसम्। देवा देवमंवर्धताम्। त्रिष्टुभा छन्दंसेन्द्रियम्। त्विषिमिन्द्रे वयो दर्धत्। वसुवनं वसुधेयंस्य वीतां यर्जा॥९२॥

देवीस्तिस्रस्तिस्रो देवीवंयोधसम्। पतिमिन्द्रंमवर्धयन्। जगत्या छन्दंसेन्द्रियम्। बलुमिन्द्रे वयो दर्धत्। वसुवने वसुधेयंस्य वियन्तु यजं। देवो नराशश्सों देविमन्द्रं वयोधसम्। देवो देवमंवर्धयत्। विराजा छन्दंसेन्द्रियम्। रेत इन्द्रे वयो दर्धत्। वसुवनं वसुधेयंस्य वेतु यजं॥९३॥

देवो वन्स्पतिर्देविमिन्द्रं वयोधसम्। देवो देवमंवर्धयत्। द्विपदा छन्दंसेन्द्रियम्। भगमिन्द्रे वयो दर्धत्। वसुवनं वसुधेयंस्य वेतु यजं। देवं ब्रिह्वीरितीनान्देविमन्द्रं वयोधसम्। देवन्देवमंवर्धयत्। क्कुभा छन्दंसेन्द्रियम्। यश् इन्द्रे वयो दर्धत्। वसुवनं वसुधेयंस्य वेतु यजं। देवो अग्निः स्विष्टकृद्देविमन्द्रं वयोधसम्। देवो देवमंवर्धयत्। अतिंच्छन्दसा छन्दंसेन्द्रियम्। क्षुत्रिमिन्द्रे वयो दर्धत्। वसुवनं वसुधेयंस्य वेतु यजं॥ वसुवनं वसुधेयंस्य वेतु यजं॥ वसुवनं वसुधेयंस्य वेतु यजं॥ १४॥

वियन्तु यर्ज वीतां यर्ज वीतां यर्ज वेतु यर्ज वेतु यर्ज पश्च च (देवं ब्र्हिर्गायत्रिया तेर्जः। देवीर्द्वारं उष्णिहाँ प्राणम्। देवी देवमुषे अनुष्टुभा वाचम्ँ। देवी जोष्ट्रीं बृह्त्या श्रोत्रम्ँ। देवी ऊर्जाहृंती पृङ्क्या श्रुक्रम्। देवा दैव्या होतांरा त्रिष्टुभा त्विषिम्ँ। देवीस्तिस्रस्तिस्रो देवीः पितं जगत्या बलम्ँ। देवो नराशश्सों विराजा रेतः। देवो वनस्पितिर्द्विपदा भगम्ँ। देवं ब्र्रहिर्वारितीनाङ्ककुभा यर्शः। देवो अग्निः स्विष्टकृदितिच्छन्दसा क्षुत्रम्। वेतु वियन्तु चृतुर्वीतामेको वियन्तु चृतुर्वैत्ववर्धयदवर्धयःश्चतुरंवर्धतामेकोऽवर्धयः श्चतुरंवर्धयत्॥)॥२०॥———[२०]

स्वाद्वीन्त्वा सोमः सुरांवन्तर् सीसेन मित्रोंऽसि यद्देवा होतां यक्षत्समिधेन्द्रर् सिमंद्ध इन्द्र आचंर्षणिप्रा देवं बर्हिर्होतां यक्षत्समिधाऽग्निर सिमंद्धो अग्निरंश्विनाऽश्विनां हिविरिन्द्रियन्देवं बर्हिः सर्रस्वत्यग्निम्छोशन्तो होतां यक्षदिडस्पदे सिमंद्धो अग्निः समिधां वसन्तेनुर्तुनां देवं बर्हिरिन्द्रं वयोधसं विरश्तिः॥२०॥

स्वाद्वीन्त्वाऽमीमदन्त पितरः साम्रांज्याय पूतं पवित्रेणोषासानक्ता बदंरैरधातान्देव इन्द्रो वनस्पतिः पष्टवाहृङ्गान्देवी देवं वयोधसं चतुर्नवितः॥९४॥ स्वाद्वीन्त्वां वेतु यजं॥

हरिः ओम्॥ ॥इति श्रीकृष्णयजुर्वेदीयतैत्तिरीयब्राह्मणे द्वितीयाष्टके षष्टः प्रपाठकः समाप्तः॥

॥सप्तमः प्रश्नः॥

॥ तैत्तिरीयब्राह्मणे द्वितीयाष्टके सप्तमः प्रपाठकः॥

त्रिवृत्स्तोमों भवति। ब्रह्मवर्चसं वै त्रिवृत्। ब्रह्मवर्चसमेवावं रुन्थे। अग्निष्टोमः सोमो भवति। ब्रह्मवर्चसं वा अग्निष्टोमः। ब्रह्मवर्चसमेवावं रुन्धे। रथन्तर साम भवति। ब्रह्मवर्चसं वै रथन्तरम्। ब्रह्मवर्चसमेवावं रुन्धे। परिस्रजी होतां भवति॥१॥ अरुणो मिंरिसिश्रंऋः। एतद्वे ब्रह्मवर्चसस्यं रूपम्। रूपेणैव ब्रह्मवर्चसमवं रुन्धे। बृहस्पतिरकामयत देवानां पुरोधाङ्गंच्छेयमितिं। स एतं बृहस्पतिसवमंपश्यत्। तमाऽहरत्। तेनायजत। ततो वै स देवानां पुरोधामंगच्छत्। यः पुरोधाकांमः स्यात्। स बृंहस्पतिसवेनं यजेत॥२॥ पुरोधामेव गंच्छति। तस्यं प्रातः सवने सन्नेषुं नाराश १ सेषुं। एकांदश दक्षिणा नीयन्ते। एकांदश मार्ध्यं दिने सर्वने सन्नेषुं नाराश १ सेषुं। एकांदश तृतीयसवने सन्नेषुं नाराश १ सेषुं। त्रयंस्त्रि रशत्सम्पंद्यन्ते। त्रयंस्त्रि रशद्वे देवताः। देवतां एवावंरुन्थे। अश्वंश्चतुस्त्रि १ शः। प्राजापत्यो वा अश्वं:॥३॥ प्रजापंतिश्चतुस्त्रि १ देवतांनाम्। यावंतीरेव देवताः। ता एवावंरुन्धे। कृष्णाजिनंऽभिषिश्चति। ब्रह्मणो वा एतद्रूपम्। यत्कृष्णाजिनम्। ब्रह्मवर्चसेनैवैन् समर्धयति। आज्येनाभिषिंश्चति। तेजो वा आज्यम्।

तेजं पुवास्मिन्दधाति॥४॥

होतां भवति यजेत् वा अश्वां दधाति॥१॥————[१]

यदाँग्नेयो भवंति। अग्निम्ंखा ह्यृद्धिः। अथ् यत्पौष्णः। पृष्टिर्वे पूषा। पृष्टिर्वेश्यंस्य। पृष्टिंमेवावं रुन्धे। प्रस्वायं सावित्रः। अथ् यत्त्वाष्ट्रः। त्वष्टा हि रूपाणिं विक्रोतिं। निर्वरुणत्वायं वारुणः॥५॥

अथो य एव कश्च सन्त्सूयतें। स हि वांरुणः। अथ् यद्वैश्वदेवः। वैश्वदेवो हि वैश्यः। अथ् यन्मांरुतः। मा्रुतो हि वैश्यः। स्प्तैतानिं ह्वी १ षि भवन्ति। स्प्तगंणा वै म्रुतः। पृश्जिः पष्टौही मांरुत्या लेभ्यते। विश्वे म्रुतः। विश्वं एवैतन्मध्यतोऽभिषिंच्यते। तस्माद्वा एष विशः प्रियः। विशो हि मध्यतोऽभिषिच्यते। ऋष्मचर्मेऽध्यभिषिश्चति। स हि प्रंजनियता। द्वाऽभिषिश्चति। ऊर्ग्वा अन्नाद्यं दिधे। ऊर्जैवनम्नाद्येन समर्धयति॥६॥

वाुरुणो विट्वै मुरुतोुऽष्टौ चं॥२॥

.[२]

यदाँग्नेयो भवंति। आग्नेयो वै ब्राँह्मणः। अथु यत्सौम्यः। सौम्यो हि ब्राँह्मणः। प्रस्वायेव सांवित्रः। अथु यद्वारहस्पृत्यः। एतद्वे ब्राँह्मणस्यं वाक्पृतीयम्। अथु यदंग्नीषोमीयः। आग्नेयो वै ब्राँह्मणः। तौ यदा सङ्गच्छेते ॥७॥

अर्थ वीर्यावत्तरो भवति। अथ् यत्सारस्वतः। एति प्रत्यक्षं ब्राह्मणस्यं वाक्पतीयम्। निर्वरुणत्वायैव वारुणः। अथो य

एव कश्च सन्त्सूयतें। स हि वांरुणः। अथ् यद्यांवापृथिव्यः। इन्द्रो वृत्राय वज्रमुदंयच्छत्। तं द्यावांपृथिवी नान्वंमन्येताम्। तमेतेनैव भांगधेयेनान्वंमन्येताम्॥८॥

वर्ज्रस्य वा एषोंऽनुमानायं। अनुंमतवज्रः सूयाता इतिं। अष्टावेतानिं ह्वी १ षिं भवन्ति। अष्टाक्षंरा गायत्री। गायत्री ब्रह्मवर्च् सम्। गायत्रियेव बंह्मवर्च् समवं रुन्थे। हिरंण्येन घृतमुत्पुंनाति। तेजंस एव रुचे। कृष्णाजिनेंऽभिषिंश्वति। ब्रह्मंणो वा एतदंख्सामयों रूपम्। यत्कृंष्णाजिनम्। ब्रह्मंत्रेवेनंमृख्सामयोरध्यभिषिंश्वति। घृतेनाभिषिंश्वति। तथां वीर्यावत्तरो भवति॥९॥

सङ्गच्छेते भागुधेयेनान्वंमन्येता र रूपश्चत्वारिं च॥३॥------[3]

न वै सोमंन् सोमंस्य स्वौंऽस्ति। ह्तो ह्येषः। अभिष्तो ह्येषः। न हि हृतः सूयतें। सौमी स्तृतवंशामा लेभते। सोमो वै रेतोधाः। रेतं पृव तद्दंधाति। सौम्यर्चाऽभिषिश्चित। रेतोधा ह्येषा। रेतः सोमः। रेतं पृवास्मिन्दधाति। यत्किं चं राजसूयंमृते सोमम्। तत्सर्वं भवति। अषांढं युत्सु पृतंनासु पप्रिम्। सुवर्षाम्प्यां वृजनंस्य गोपाम्। भरेषुजा स्सुंक्षिति सुश्रवंसम्। जयंन्तन्त्वामन् मदेम सोम॥१०॥

यो वै सोमेन सूयतें। स देवस्वः। यः पृशुनां सूयतें। स

देवस्वः। य इष्टां सूयतें। स मंनुष्यस्वः। एतं वै पृथंये देवाः प्रायंच्छन्। ततो वै सोऽप्यांरुण्यानां पशूनामंसूयत। यावंतीः कियंतीश्च प्रजा वाचं वदंन्ति। तासार् सर्वांसार सूयते॥११॥

य एतेन् यजंते। य उं चैनमेवं वेदं। नाराश्र्स्यर्चाऽभिषिश्चित। मनुष्यां वै नराश्रः संः। निह्नुत्य वावैतत्। अथाभिषिश्चिति। यत्किं चं राज्सूयंमनुत्तरवेदीकम्ं। तत्सर्वं भवति। ये में पश्चाशतंन्ददुः। अश्वांनाः स्थस्तुंतिः। चुमदंग्रे मिह् श्रवंः। बृहत्कृंधि मुघोनांम्। नृवदंमृत नृणाम्॥१२॥

सूयते सधस्तुंतिस्त्रीणिं च॥५॥

[لع]

पुष गोंस्वः। षुद्रिष्श उक्थ्यों बृहत्सांमा। पवंमाने कण्वरथन्तरं भंवति। यो वै वांजुपेर्यः। स सम्राद्भवः। यो रांजुसूर्यः। स वंरुणस्वः। प्रजापंतिः स्वारांज्यं परमेष्ठी। स्वारांज्यङ्गोरेव। गौरिंव भवति॥१३॥

य पृतेन यजंते। य उं चैनमेवं वेदं। उभे बृंहद्रथन्तरे भंवतः। ति स्वारांज्यम्। अयुतं दक्षिणाः। ति स्वारांज्यम्। प्रतिधुषाऽभिषिश्चिति। ति स्वारांज्यम्। अनुंद्धते वेद्ये दक्षिणत आंहवनीयंस्य बृह्तः स्तोत्रं प्रत्यभिषिश्चिति। इयं वाव रथन्तरम्॥१४॥

असौ बृहत्। अनयोंरेवैनमनंन्तर्हितम्भिषिंश्चति। पृशुस्तोमो

वा एषः। तेनं गोस्वः। षृद्विश्शः सर्वः। रेवज्ञातः सहंसा वृद्धः। क्षत्राणां क्षत्रभृत्तंमो वयोधाः। महान्मंहित्वे तंस्तभानः। क्षत्रे राष्ट्रे चं जागृहि। प्रजापंतेस्त्वा परमेष्ठिनः स्वाराज्येनाभिषिश्चामीत्यांह। स्वाराज्यमेवेनंङ्गमयति॥१५॥

इव भवति रथन्तरमाहैकं च॥६॥

[3]

सिर्हे व्याघ्र उत या पृदांकौ। त्विषिर्ग्नौ ब्राँह्मणे सूर्ये या। इन्द्रं या देवी सुभगां जजानं। सा न आगुन्वर्चसा संविदाना। या रांजन्ये दुन्दुभावायंतायाम्। अश्वंस्य ऋन्द्ये पुरुषस्य मायौ। इन्द्रं या देवी सुभगां जजानं। सा न आगुन्वर्चसा संविदाना। या ह्स्तिनिं द्वीपिनि या हिरंण्ये। त्विष्रश्वंषु पुरुषेषु गोषुं॥१६॥

इन्द्रं या देवी सुभगां ज्ञानं। सा न आग्न्वर्चसा संविदाना। रथे अक्षेषुं वृष्भस्य वाजें। वाते पूर्जन्ये वरुणस्य शुष्में। इन्द्रं या देवी सुभगां ज्ञानं। सा न आग्न्वर्चसा संविदाना। राडंसि विराडंसि। सुम्राडंसि स्वराडंसि। इन्द्रांय त्वा तेजंस्वते तेजंस्वन्तः श्रीणामि। इन्द्रांय त्वौजंस्वत ओजंस्वन्तः श्रीणामि॥१७॥

इन्द्रांय त्वा पर्यस्वते पर्यस्वन्तः श्रीणामि। इन्द्रांय त्वाऽऽयुंष्मत् आयुंष्मन्तः श्रीणामि। तेजोंऽसि। तत्ते प्र यंच्छामि। तेजंस्वदस्तु मे मुखम्ं। तेजंस्वच्छिरों अस्तु मे। तेजंस्वान् विश्वतंः प्रत्यङ्क्। तेजंसा सम्पिंपृग्धि मा। ओजोंऽसि। तत्ते प्र यंच्छामि॥१८॥

ओर्जस्वदस्तु मे मुखम्ं। ओर्जस्वच्छिरों अस्तु मे। ओर्जस्वान् विश्वतः प्रत्यङ्गः। ओर्जसा सं पिंपृग्धि मा। पयोऽसि। तत्ते प्र यंच्छामि। पयंस्वदस्तु मे मुखम्ं। पयंस्वच्छिरों अस्तु मे। पयंस्वान् विश्वतः प्रत्यङ्गः। पयंसा सं पिंपृग्धि मा॥१९॥

आयुंरिस। तत्ते प्र यंच्छामि। आयुंष्मदस्तु मे मुखम्ं। आयुंष्मच्छिरों अस्तु मे। आयुंष्मान् विश्वतः प्रत्यङ्कः। आयुंषा सं पिंपृग्धि मा। इममंग्र आयुंषे वर्चसे कृधि। प्रिय॰ रेतों वरुण सोम राजन्। मातेवांस्मा अदिते शर्म यच्छ। विश्वें देवा जरंदिष्टर्यथाऽसंत्॥२०॥

आयुंरिस विश्वायुंरिस। सूर्वायुंरिस सर्वमायुंरिस। यतो वातो मनोजवाः। यतः क्षरेन्ति सिन्धंवः। तासान्त्वा सर्वांसार रुचा। अभिषिश्चामि वर्चसा। समुद्र इंवासि गृह्मनां। सोमं इवास्यदांभ्यः। अग्निरिव विश्वतः प्रत्यङ्कः। सूर्य इव ज्योतिषा विभूः॥२१॥

अपां यो द्रवंणे रसंः। तम्हम्स्मा आमुष्यायणायं। तेजंसे ब्रह्मवर्चसायं गृह्णामि। अपां य ऊर्मी रसंः। तम्हम्स्मा आमुष्यायणायं। ओजंसे वीर्याय गृह्णामि। अपां यो मध्यतो रसंः। तम्हम्स्मा आंमुष्यायणायं। पृष्ठौ प्रजनंनाय गृह्णामि। अपां यो यज्ञियो रसंः। तम्हम्स्मा आंमुष्यायणायं। आयुंषे दीर्घायुत्वायं गृह्णामि॥२२॥

गोष्वोर्जस्वन्तः श्रीणाम्योजोऽसि तत्ते प्रयंच्छामि पर्यसा सिम्पिपृग्धि माऽसंद्विभूर्यिज्ञियो रसो द्वे चं॥७॥ [৩]

अभिप्रेहिं वीरयंस्व। उग्रश्चेत्तां सपत्न्हा। आतिष्ठ मित्रवर्धनः। तुभ्यं देवा अधिंब्रवन्। अङ्कौ न्यङ्काव्भित् आतिष्ठ वृत्रहृत्रथम्ं। आतिष्ठंन्तं परि विश्वं अभूषन्। श्रियं वसानश्चरति स्वरोचाः। महत्तद्स्यासुरस्य नामं। आ विश्वरूपो अमृतानि तस्थौ। अनु त्वेन्द्रों मद्त्वनु बृहस्पतिः॥२३॥

अनु सोमो अन्वग्निरांवीत्। अनुं त्वा विश्वं देवा अंवन्तु। अनुं सप्त राजांनो य उताभिषिक्ताः। अनुं त्वा मित्रावरुंणाविहावंतम्। अनु द्यावांपृथिवी विश्वशंम्भू। सूर्यो अहोंभिरनुं त्वाऽवतु। चन्द्रमा नक्षंत्रैरनुं त्वाऽवतु। द्यौश्चं त्वा पृथिवी च प्रचेतसा। शुक्रो बृहद्दक्षिणा त्वा पिपर्तु। अनुं स्वधा चिकिता सोमों अग्निः। आऽयं पृणक्तु रजंसी उपस्थम्॥२४॥

बृहस्पतिः सोमों अग्निरेकं च॥८॥

[2]_

प्रजापंतिः प्रजा अंसृजत। ता अंस्मात्सृष्टाः परांचीरायन्। स एतं प्रजापंतिरोद्नमंपश्यत्। सोऽन्नं भूतोंऽतिष्ठत्। ता अन्यत्रान्नाद्यमविंत्वा। प्रजापंतिं प्रजा उपावंर्तन्त। अन्नंमेवैनं भूतं पश्यंन्तीः प्रजा उपावंर्तन्ते। य एतेन् यजंते। य उं चैनमेवं वेदं। सर्वाण्यन्नांनि भवन्ति॥२५॥

सर्वे पुरुषाः। सर्वाण्येवान्नान्यवं रुन्धे। सर्वान्पुरुषान्। राडंसि विराड्सीत्यांह। स्वारांज्यमेवेनंङ्गमयति। यद्धिरंण्यन्ददांति। तेज्रस्तेनावंरुन्धे। यत्तिंसृधन्वम्। वीर्यन्तेनं। यदष्ट्रांम्॥२६॥ पृष्टिन्तेनं। यत्कंमण्डलुम्। आयुष्टेनं। यद्धिरंण्यमा ब्रध्नाति। ज्योतिर्वे हिरंण्यम्। ज्योतिरेवास्मिन्दधाति। अथो तेजो वे हिरंण्यम्। तेजं पुवात्मन्धंते। यदोदनं प्राश्वाति। पृतदेव सर्वमवरुध्यं॥२७॥

तदंस्मिन्नेक्धाऽधाँत्। रोहिण्याङ्कार्यः। यद्वाँह्मण एव रोहिणी। तस्मादेव। अथो वर्ष्मैवैन र् समानानां करोति। उद्यता सूर्यण कार्यः। उद्यन्तं वा एतर सर्वाः प्रजाः प्रतिनन्दन्ति। दिदृक्षेण्यो दर्शनीयो भवति। य एवं वेदं। ब्रह्मवादिनो वदन्ति॥२८॥ अवेत्योऽवभृथा ३ ना ३ इतिं। यद्दर्भपुश्चीलैः प्वयंति। तत्त्रवैदेवावैति। तन्नावैति। त्रिभिः पंवयति। त्रयं इमे लोकाः। एभिरेवैनं लोकैः पंवयति। अथो अपां वा एतत्तेजो वर्चः। यद्दर्भाः। यद्दर्भपुञ्जीलैः प्वयंति। अपामेवैनन्तेजंसा वर्चसाऽभिषिश्चति॥२९॥

भुवन्त्यष्ट्रांमवुरुध्यं वदन्ति दुर्भा यद्दर्भपुञ्जीलैः पुवयुत्येकं च॥९॥———[९] प्रजापतिरकामयत बहोर्भूयाँन्तस्यामिति। स एतं पंश्वशार्दीयंमपश्यत्। तमाऽहंरत्। तेनायजत। ततो वै स बहोर्भूयांनभवत्। यः कामयंत बहोर्भूयांन्त्स्यामिति। स पंश्वशार्दीयंन यजेत। बहोरेव भूयांन्भवति। मुरुत्स्तोमो वा एषः। मरुतो हि देवानां भूयिष्ठाः॥३०॥

बहुर्भविति। य एतेन् यजंते। य उंचैनमेवं वेदं। पृश्चशार्दीयों भविति। पश्च वा ऋतवंः संवत्सरः। ऋतुष्वेव संवत्सरे प्रतितिष्ठति। अथो पश्चौक्षरा पृङ्किः। पाङ्को युज्ञः। युज्ञमेवावं रुन्थे। स्प्तद्शः स्तोमा नार्ति यन्ति। स्प्तद्शः प्रजापंतिः। प्रजापंतरास्यै॥३१॥

भूयिष्ठा यन्ति द्वे चं॥१०॥———[१०]

अगस्त्यों मुरुद्धं उक्ष्णः प्रौक्षंत्। तानिन्द्र आदंत्त। त एंनं वज्रंमुद्यत्याभ्यायन्त। तानगस्त्यंश्चैवेन्द्रंश्च कयाशुभीयंनाशमयताम्। ताञ्छान्तानुपाँह्वयत। यत्कंयाशुभीयं भवंति शान्त्यैं। तस्मांदेत ऐँन्द्रामारुता उक्षाणंः सवनीयां भवन्ति। त्रयंः प्रथमेऽहुन्ना लेभ्यन्ते। एवं द्वितीयें। एवन्तृतीयें॥३२॥

एवं चंतुर्थे। पश्चौत्तमेऽहुन्ना लंभ्यन्ते। वर्षिष्ठमिव ह्यंतदहंः। वर्षिष्ठः समानानां भवति। य एतेन् यजंते। य उंचैनमेवं वेदं। स्वारौज्यं वा एष यज्ञः। एतेन् वा एक्या वां कान्द्रमः स्वारौज्यमगच्छत्। स्वरौज्यं गच्छति। य एतेन् यजंते॥३३॥ य उं चैनमेवं वेदं। मारुतो वा एष स्तोमंः। एतेन वै मुरुतों देवानां भूयिष्ठा अभवन्। भूयिष्ठः समानानां भवति। य एतेन यजंते। य उं चैनमेवं वेदं। पृश्वशारदीयो वा एष यज्ञः। आ पश्चमात्पुरुषादन्नमित्त। य एतेन यजंते। य उं चैनमेवं वेदं। सप्तदशः प्रजापंतिः। प्रजापंतरेव नैतिं॥३४॥

तृतीर्थे गच्छति य एतेन् यर्जतेऽत्ति य एतेन् यर्जते य उं चैनमेवं वेद त्रीणिं च (अगस्त्यः स्वारांज्यं मारुतः पश्चशार्दीयो वा एष युज्ञः संप्तदुशं प्रजापंतेरेव नैतिं ॥)॥११॥——[१९]

अस्या जरांसो दमा मिरत्राः। अर्चर्छूमासो अग्नयः पावकाः। श्विचीचयः श्वात्रासो भुरण्यवः। वनुर्षदो वायवो न सोमाः। यजां नो मित्रावरुणा। यजां देवा र ऋतं बृहत्। अग्ने यिक्षे स्वन्दमम्। अश्विना पिबंत र सुतम्। दीद्यंग्नी शुचिव्रता। ऋतुनां यज्ञवाहसा॥३५॥

द्वे विरूपे चरतः स्वर्थें। अन्याऽन्यां वृत्समुपं धापयेते। हिरंग्न्यस्यां भवंति स्वधावान्ं। शुक्रो अन्यस्यांन्ददृशे सुवर्चाः। पूर्वाप्रं चंरतो माययैतौ। शिशू कीडंन्तौ पिरं यातो अध्वरम्। विश्वांन्यन्यो भुवंनाऽभि चष्टें। ऋतून्न्यो विदधंज्ञायते पुनंः। त्रीणि शृता त्रीषृहस्रांण्यग्निम्। त्रिष्शचं देवा नवं चाऽसपर्यन्॥३६॥

औक्षंन्यृतैरास्तृंणन्बर्हिरंस्मै। आदिद्धोतांरन्त्रंषादयन्त।

अग्निनाऽग्निः समिध्यते। क्विर्गृहपंतिर्युवाँ। ह्व्यवाङ्कुह्वाँस्यः। अग्निर्देवानां ज्वरम्। पूतदंक्षः क्विक्रंतुः। देवो देवेभिरा गंमत्। अग्निश्रयो मुरुतो विश्वकृष्टयः। आ त्वेषमुग्रमवं ईमहे वयम्॥३७॥

ते स्वानिनों रुद्रियां वर्षिनिर्णिजः। सिर्हा न हेषक्रंतवः सुदानंवः। यद्त्तमे मंरुतो मध्यमे वाँ। यद्वांऽवमे सुंभगासो दिवि ष्ठ। ततों नो रुद्रा उत वाऽन्वस्यं। अग्ने वित्ताद्धविषो यद्यजांमः। ईडें अग्निर्इ स्ववंस्त्रमोंभिः। इह प्रंस्ताो वि चं यत्कृतन्नेः। रथैरिव प्रभेरे वाज्यद्भिः। प्रदक्षिणिन्म्रुतार्ड् स्तोमंमृद्धाम्॥३८॥

श्रुधि श्रुंत्कर्ण् वहिंभिः। देवैरंग्ने स्यावंभिः। आसींदन्तु बर्हिषिं। मित्रो वर्रुणो अर्यमा। प्रात्यावांणो अध्वरम्। विश्वेषामिदंतिर्यज्ञियांनाम्। विश्वेषामितंथिर्मानुंषाणाम्। अग्निर्देवानामवं आवृणानः। सुमृडीको भवतु विश्ववेदाः। त्वे अग्ने सुमृतिं भिक्षंमाणाः॥३९॥

दिवि श्रवों दिधरे यज्ञियांसः। नक्तां च चुत्रुरुषसा विरूपे। कृष्णं च वर्णमरुणं च सन्धुंः। त्वामंग्न आदित्यासं आस्यम्। त्वाञ्चिह्वा श्रचंयश्चित्रिरे कवे। त्वा र रांतिषाचों अध्वरेषुं सिश्चरे। त्वे देवा हिवरंदन्त्याहुंतम्। नि त्वां यज्ञस्य साधंनम्। अग्ने होतांरमृत्विज्ञम्। वनुष्वद्देव धीमिह

प्रचेतसम्। जीरन्दूतममंर्त्यम्॥४०॥

युज्ञवाहुसासपूर्य-वयमृद्धां भिक्षमाणाः प्रचेतसुमेकं च॥१२॥————[१२]

तिष्ठा हरी रथ आ युज्यमांना याहि। वायुर्न नियुतों नो अच्छं। पिबास्यन्थों अभिसृष्टो अस्मे। इन्द्रः स्वाहां रिमा ते मदांय। कस्य वृषां सुते सर्चां। नियुत्वांन्वृष्भो रंणत्। वृत्रहा सोमंपीतये। इन्द्रं व्यम्मंहाधने। इन्द्रमर्भे हवामहे। युजंं वृत्रेषुं विज्ञणम्॥४१॥

द्विता यो वृंत्रहन्तंमः। विद इन्द्रंः श्तक्रंतुः। उपं नो हरिभिः सुतम्। स सूर् आजनयं ज्योतिरिन्द्रम्ं। अया धिया त्रणिरद्रिंबर्हाः। ऋतेनं शुष्मी नवंमानो अर्कैः। व्यंस्रिधों अस्रो अद्रिंबिभेद। उत्तत्यदाश्वश्वियम्। यदिन्द्र नाहुंषी्ष्वा। अग्रे विक्षु प्रतीदंयत्॥४२॥

भरेष्वन्द्र स्मुहव स्हिवामहे। अस्होमुच स्सुकृत्नदेव्यं जनम्। अग्निम्मित्रं वर्रुण सातये भगम्। द्यावापृथिवी मुरुतः स्वस्तये। महि क्षेत्रं पुरुश्चन्द्रं वि विद्वान्। आदित्सर्खिभ्यश्चरथ समैरत्। इन्द्रो नृभिरजन्दीद्यानः साकम्। सूर्यमुषसंङ्गातुम्ग्निम्। उरुं नो लोकमन् नेषि विद्वान्। सुर्वर्वुङ्योतिरभय स्वस्ति॥४३॥

ऋष्वा तं इन्द्रं स्थविरस्य बाहू। उपंस्थेयाम शर्णा बृहन्तां। आ नो विश्वांभिरूतिभिः सुजोषाः। ब्रह्मं जुषाणो हंर्यश्व याहि। वरीवृज्तस्थिविरेभिः सुशिप्र। अस्मे दधृद्वृषंणु शुष्मंमिन्द्र। इन्द्राय गावं आशिरम्। दुदुह्रे वृज्जिणे मधुं। यत्सीमुपह्ब्रे विदत्। तास्ते विज्ञिन्धेनवों जोजयुर्नः॥४४॥

गर्भस्तयो नियतो विश्ववाराः। अहंरहुर्भूय इज्ञोगुंवानाः। पूर्णा इंन्द्र क्षुमतो भोजनस्य। इमान्ते धियं प्र भरे महो महीम्। अस्य स्तोत्रे धिषणा यत्तं आन्जे। तमृत्सवे चं प्रस्वे चं सास्हिम्। इन्द्रं देवासः शवंसा मदन्ननुं॥४५॥

वुज्रिणंमयत्स्वस्ति जोजयुर्नः सप्त चं॥१३॥🕳

[१३]

प्रजापंतिः पृशूनंसृजत। तेंंऽस्मात्सृष्टाः परांं च आयन्। तानंग्निष्टोमेन् नाप्नोंत्। तानुक्थ्येन् नाप्नोंत्। तान्थ्योंड्शिना् नाप्नोंत्। तान्नात्रिया नाप्नोंत्। तान्त्सन्धिना नाप्नोंत्। सोंऽग्निमंब्रवीत्। इमान्मं ईप्सेति। तान्ग्निस्त्रिवृता स्तोमेन् नाप्नोंत्॥४६॥

स इन्द्रंमब्रवीत्। इमान्मं ईप्सेतिं। तानिन्द्रंः पश्चद्रशेन् स्तोमेन् नाप्नौत्। स विश्वौन्देवानंब्रवीत्। इमान्मं ईप्स्तेतिं। तान् विश्वेदेवाः संप्तद्रशेन् स्तोमेन् नाप्नुंवन्। स विष्णुंमब्रवीत्। इमान्मं ईप्सेतिं। तान् विष्णुंरेकवि्श्शेन् स्तोमेनाप्नोत्। वारवन्तीयेनावारयत॥४७॥

इदं विष्णुर्वि चंक्रम् इति व्यंक्रमत। यस्मांत्पृशवः प्रप्रेव भ्रश्शेरन्। स एतेनं यजेत। यदाप्नोंत्। तद्प्तोर्यामंस्याप्तोर्यामृत्वम्। एतेन् वै देवा जैत्वांनि जित्वा। यङ्काम्मकांमयन्त् तमांप्रुवन्।

यङ्कामंङ्कामयंते। तमेतेनाँप्रोति॥४८॥

स्तोमेन नाप्नोदवारयत् नवं च॥१४॥•

___[१४]

व्याघ्रों ऽयम्ग्रौ चंरित प्रविष्टः। ऋषींणां पुत्रो अंभिशस्तिपा अयम्। नमस्कारेण नमंसा ते जुहोमि। मा देवानां मिथुयाकंर्म भागम्। सावीर्हि देव प्रस्वायं पित्रे। वर्ष्माणंमस्मै विर्माणंमस्मै। अथास्मभ्य सिवतः सर्वतांता। दिवेदिंव आ सुंवा भूरिं पृश्वः। भूतो भूतेषुं चरित प्रविष्टः। स भूतानामधिपतिर्बभूव॥४९॥

तस्यं मृत्यौ चंरित राज्ञसूयम्ं। स राजां राज्यमनुं मन्यतामिदम्। येभिः शिल्पैः पप्रथानामद्दर्हत्। येभिर्द्याम्भ्यपिर्श्वात्र्रजापंतिः। येभिर्वाचं विश्वरूपार्श्वस्ययत्। तेनेममंग्र इह वर्चसा समिङ्गि। येभिरादित्यस्तपंति प्र केतुभिः। येभिः सूर्यो दृद्दशे चित्रभानुः। येभिर्वाचं पुष्कुलेभिरव्यंयत्। तेनेममंग्र इह वर्चसा समिङ्गि॥५०॥

आऽयं भांतु शर्वसा पश्चं कृष्टीः। इन्द्रं इव ज्येष्ठो भंवतु प्रजावान्। अस्मा अस्तु पुष्कुलश्चित्रभांनु। आऽयं पृणक्तु रजंसी उपस्थम्। यत्ते शिल्पं कश्यप रोचनावंत्। इन्द्रियावंत्पुष्कुलश्चित्रभांनु। यस्मिन्त्सूर्या अर्पिताः सप्त साकम्। तस्मिन्नाजांनुमधि विश्रंयेमम्। द्यौरंसि पृथिव्यंसि। व्याघ्रो वैयाघ्रेऽधिं ॥५१॥

विश्रंयस्व दिशों महीः। विशंस्त्वा सर्वा वाञ्छन्तु। मा त्वद्राष्ट्रमधि भ्रशत्। या दिव्या आपः पर्यसा सम्बभूवुः। या अन्तरिक्ष उत पार्थिवीर्याः। तासान्त्वा सर्वासार रुचा। अभिषिश्चामि वर्चसा। अभि त्वा वर्चसाऽसिचन्दिव्येनं। पर्यसा सह। यथासां राष्ट्रवर्धनः॥५२॥

तथाँ त्वा सिवता करत्। इन्द्रं विश्वां अवीवृधन्।
समुद्रव्यंचसङ्गिरंः। र्थीतंमः रथीनाम्। वाजांनाः
सत्पंतिं पितम्। वसंवस्त्वा पुरस्तांदिभिषिश्चन्तु गायत्रेण्
छन्दंसा। रुद्रास्त्वां दक्षिण्तोंऽभिषिश्चन्तु त्रैष्टुंभेन् छन्दंसा।
आदित्यास्त्वां पृश्चादिभिषिश्चन्तु जागंतेन् छन्दंसा।
विश्वं त्वा देवा उत्तर्तोऽभिषिश्चन्त्वानुंष्टुभेन् छन्दंसा।
बृह्स्पतिंस्त्वोपरिष्टादिभिषिश्चतु पाङ्कंन् छन्दंसा॥५३॥

अरुणन्त्वा वृक्षेमुग्रङ्क्षेजङ्करम्। रोचेमानं मुरुतामग्रे अर्चिषः। सूर्यवन्तं मुघवानं विषास्हिम्। इन्द्रंमुक्थेषुं नामहूतंम १ हुवेम। प्र बाहवां सिसृतञ्जीवसं नः। आ नो गर्व्यूतिमुक्षतं घृतेनं। आ नो जने श्रवयतं युवाना। श्रुतं में मित्रावरुणा हवेमा। इन्द्रंस्य ते वीर्युकृतः। बाहू उपावं हरामि॥५४॥ ब्रुवाव्यंयत्तेन्ममंग्र इह वर्षस् समंद्वि वेयाप्रेऽपि राष्ट्रवर्षनः पाईन बन्दंसोपावंहरामि॥१५॥ अभि प्रेहिं वीरयंस्व। उग्रश्चेत्तां सपत्नहा। आतिष्ठ वृत्रहन्तंमः। तुभ्यं देवा अधिव्रवन्। अङ्कौ न्यङ्काव्भितो रथं यौ। ध्वान्तं

वांताग्रमन् स्थरंन्तौ। दूरेहेंतिरिन्द्रियावाँन्पत्त्री। ते नोऽग्नयः पप्रयः पारयन्तु। नमंस्त ऋषे गद। अव्यंथायै त्वा स्वधायैँ त्वा॥५५॥

मा नं इन्द्राभित्स्त्वदृष्वारिष्टासः। एवा ब्रंह्मन्तवेदंस्तु। तिष्ठा रथे अधि यद्वर्ज्ञहस्तः। आ र्श्मीन्देव युवसे स्वश्वः। आ तिष्ठ वृत्रहन्नातिष्ठंन्तं परि। अनु त्वेन्द्रों मद्त्वनुं त्वा मित्रावर्रुणौ। द्यौश्चं त्वा पृथिवी च प्रचेतसा। शुक्रो बृद्दक्षिणा त्वा पिपर्तु। अनुं स्वधा चिंकिता सोमों अग्निः। अनुं त्वाऽवतु सिवता सवेनं॥५६॥

इन्द्रं विश्वां अवीवृधन्। समुद्रव्यंचस्क्विरंः। र्थीतंमश् रथीनाम्। वाजांनाः सत्पंतिं पतिम्। परिमा सेन्या घोषाः। ज्यानां वृञ्जन्तु गृप्नवंः। मेथिष्ठाः पिन्वंमाना इह। माङ्गोपंतिम्भि संविंशन्तु। तन्मेऽनुंमित्रनुं मन्यताम्। तन्माता पृंथिवी तित्पता द्यौः॥५७॥

तद्गावांणः सोम्सुतों मयो्भुवंः। तदंश्विना शृणुतश् सौभगा युवम्। अवं ते हेड् उदुंत्तमम्। एना व्याघ्रं परिषस्वजानाः। सिश्हर हिन्वन्ति मह्ते सौभंगाय। समुद्रन्न सुहवंन्तस्थिवाश्सम्। मुर्मुज्यन्ते द्वीपिनंमुप्स्वंन्तः। उद्सावेतु सूर्यः। उदिदं मांमुकं वचंः। उदिहि देव सूर्य। सह वुग्रुना ममं। अहं वाचो विवाचनम्। मिय वागंस्तु धर्णसिः। यन्तुं नृदयो वर्षन्तु पुर्जन्याः। सुपिप्पुला ओषंधयो भवन्तु। अत्रंवतामोद्नवंतामामिक्षंवताम्। एषा १ राजां भूयसाम्॥५८॥

स्वुधायैँ त्वा सुवेन द्यौः सूँर्य सुप्त चं॥१६॥ $lue{f \xi}$

ये केशिनंः प्रथमाः स्त्रमासंत। येभिराभृंतं यदिदं विरोचंते। तेभ्यों जुहोमि बहुधा घृतेनं। रायस्पोषेणेमं वर्चसा सः सृंजाथ। नर्ते ब्रह्मण्स्तपंसो विमोकः। द्विनाम्नी दीक्षा वृशिनी ह्युंग्रा। प्र केशाः सुवतं काण्डिनो भवन्ति। तेषां ब्रह्मदीशे वपंनस्य नान्यः। आ रोह् प्रोष्ठं विषंहस्व शत्रून्ं। अवासाग्दीक्षा विश्वनी ह्युंग्रा॥५९॥

देहि दक्षिणां प्रतिरस्वायुः। अथांमुच्यस्व वर्रणस्य पाशांत्। येनावंपत्सिवृता क्षुरेणं। सोमंस्य राज्ञो वर्रणस्य विद्वान्। तेनं ब्रह्माणो वपतेदम्स्योर्जेमम्। रय्या वर्चसा स॰ सृंजाथ। मा ते केशानन् गाद्वर्च पृतत्। तथां धाता करोतु ते। तुभ्यमिन्द्रो बृहस्पतिः। स्विता वर्च आदंधात्॥६०॥

तेभ्यों निधानं बहुधा व्यैच्छन्। अन्तरा द्यावांपृथिवी अपः सुवंः। दुर्भस्तम्बे वीर्यकृते निधायं। पौइस्येनेमं वर्चसा सह सृंजाथ। बलंन्ते बाहुवोः संविता दंधातु। सोमंस्त्वाऽनकु पर्यसा घृतेनं। स्त्रीषु रूपमंश्विनैतन्नि धंत्तम्। पौइस्येनेमं वर्चसा सहसृंजाथ। यत्सीमन्तङ्कङ्कंतस्ते लिलेखं। यद्वां क्षुरः पंरिववर्ज् वपइंस्ते। स्त्रीषु रूपमंश्विनैतन्नि धंत्तम्।

पौ इस्यें ने म र सर सृंजा थो वीर्येण ॥ ६१॥

अवाँस्राग्दीक्षा वृशिनी ह्यंग्राऽदंधाद्ववर्ज् वपeq स्ते द्वे चं॥१७॥ $lue{}$

इन्द्रं वै स्वाविशों मुरुतो नापांचायन्। सोऽनंपचाय्यमान एतं विंघनमंपश्यत्। तमाऽहरत्। तेनांयजत। तेनैवासान्तर सई स्तम्भं व्यंहन्। यद्यहन्ं। तिर्ह्वंघनस्यं विघनत्वम्। वि पाप्मानं भ्रातृंव्यर् हते। य एतेन यजते। य उं चैनमेवं वेदं॥६२॥ यर राजांनं विशो नापचायेयुः। यो वां ब्राह्मणस्तमंसा पाप्मना प्रावृतः स्यात्। स एतेनं यजेत। विघनेनैवैनंद्विहत्यं। विशामाधिपत्यं गच्छति। तस्य द्वे द्वांदशे स्तोत्रे भवंतः। द्वे चंतुर्विर्शे। औद्भिंद्यमेव तत्। एतद्वे क्षुत्रस्योद्भिंद्यम्। यदंस्मै स्वाविशों बलिर हर्रन्ति॥६३॥

हर्गन्त्यस्मै विशों बिलम्। ऐन्मप्रंतिख्यातं गच्छिति। य एवं वेदं। प्रबाहुग्वा अग्रें क्षुत्राण्यातेपुः। तेषामिन्द्रः क्षुत्राण्यादेत्त। न वा इमानि क्षुत्राण्यंभूविन्नितिं। तन्नक्षंत्राणां नक्षत्रत्वम्। आ श्रेयंसो भ्रातृंव्यस्य तेजं इन्द्रियन्दंत्ते। य एतेन् यजंते। य उं चैनमेवं वेदं॥६४॥

तद्यथां हु वै संचिक्तिणों कप्लंकावुपावंहितों स्याताँम्। एवमेतो युग्मन्तौ स्तोमौं। अयुक्षु स्तोमेषु क्रियेते। पाप्मनोऽपंहत्यै। अपं पाप्मानं भ्रातृंव्य हते। य एतेन् यजंते। य उं चैनमेवं वेदं। तद्यथां हु वै सूंतग्रामण्यः। एवञ्छन्दा हिस। तेष्वसावांदित्यो बृंहतीर्भ्यूंढः॥६५॥

स्तोबृंहतीषु स्तुवते स्तो बृंहन्। प्रजयां पृशुभिंरसानीत्येव। व्यतिंषक्ताभिः स्तुवते। व्यतिंषक्तं वे क्षत्रं विशा। विशेवनं क्षत्रेण व्यतिंषज्ञति। व्यतिंषक्ताभिः स्तुवते। व्यतिंषक्तो वे ग्रांमणीः संजातैः। स्जातैरेवैनं व्यतिंषज्जति। व्यतिंषक्ताभिः स्तुवते। व्यतिंषक्तो वे पुरुषः पाप्मभिः। व्यतिंषक्ताभिरेवास्यं पाप्मनों नुदते॥६६॥

वेद हर्रन्त्येनमेवं वेदाभ्यूंढः पाप्मभिरेकं च॥१८॥———[१८]

त्रिवृद्यदाँग्रेयाँऽग्निम्ंखा ह्यब्ध्रियंदाँग्रेय आँग्रेयो न वै सोमेंन् यो वै सोमेंन्ष गोंसवः सिर्हेऽभि प्रेहिं मित्रवर्धनः प्रजापंतिस्ता ओंद्नं प्रजापंतिरकामयत बहोर्भूयांनगस्त्योस्या जरांस्स्तिष्ठा हरीं प्रजापंतिः पृश्चन्व्याघ्रोंऽयम्भिप्रेहिं वृत्रहन्तंमो ये केशिन् इन्द्रं वा अष्टादंश॥१८॥

त्रिवृद्यो वै सोमेनायुरिस बहुर्भवित् तिष्ठा हरीरथ आयं भांतु तेभ्यों निधान् षट्थ्यंष्टिः॥६६॥ त्रिवृत्पाप्मनों नुदते॥

हरिः ओम्॥ ॥इति श्रीकृष्णयजुर्वेदीयतैत्तिरीयब्राह्मणे द्वितीयाष्टके सप्तमः प्रपाठकः समाप्तः॥

॥अष्टमः प्रश्नः॥

॥ तैत्तिरीयब्राह्मणे द्वितीयाष्टके अष्टमः प्रपाठकः॥

पीवौन्ना रियृवधः सुम्धाः। श्वेतः सिषिक्ति नियुतांमभिश्रीः। ते वायवे समनसो वितंस्थः। विश्वेत्ररेः स्वपृत्यानि चकुः। रायेऽन् यञ्जजतू रोदंसी उभे। राये देवी धिषणां धाति देवम्। अधां वायुत्रियुतंः सश्चत् स्वाः। उत श्वेतं वसुंधितित्रिरेके। आ वायो प्र याभिः। प्र वायुमच्छां बृह्ती मनीषा॥१॥

बृहद्रंयिं विश्ववाराः रथप्राम्। द्युतद्यांमा नियुतः पत्यंमानः। किवः किविमियक्षिस प्रयज्यो। आ नों नियुद्धिः शितिनीभिरध्वरम्। सहस्रिणीभिरुपं याहि यज्ञम्। वायों अस्मिन् हिविषिं मादयस्व। यूयं पात स्वस्तिभिः सदां नः। प्रजांपते न त्वदेतान्यन्यः। विश्वां जातानि परि ता बंभूव। यत्कांमास्ते जुहुमस्तं नों अस्तु॥२॥

वय स्याम् पतियो रयीणाम्। रयीणां पतिं यज्ञतं बृहन्तम्। अस्मिन्भरे नृतमं वाजसातौ। प्रजापितं प्रथमजामृतस्य। यजांम देवमिधं नो ब्रवीतु। प्रजापते त्वित्रिधिपाः पुराणः। देवानां पिता जंनिता प्रजानाम्। पतिर्विश्वस्य जगंतः परस्पाः। ह्विर्नो देव विह्वे जुंषस्व। तवेमे लोकाः प्रदिशो दिश्रंश्च॥३॥

प्रावतों निवतं उद्वतंश्च। प्रजापते विश्वसृज्जीवधंन्य इदं

नो देव। प्रतिहर्य ह्व्यम्। प्रजापितिं प्रथमं यज्ञियानाम्। देवानामग्रे यज्ञतं यंजध्वम्। स नो ददातु द्रविण १ सुवीर्यम्। रायस्पोषं वि ष्यंतु नाभिमस्मे। यो राय ईशे शतदाय उक्थ्यः। यः पंशूना १ रिक्षेता विष्ठितानाम्। प्रजापितः प्रथमजा ऋतस्यं॥४॥

स्रहसंधामा जुषता हिवर्नः। सोमांपूषणेमौ देवौ। सोमांपूषणा रजंसो विमानम्। स्प्तचंऋ रथमविश्वमिन्वम्। विष्वृतं मनंसा युज्यमांनम्। तिञ्जंन्वथो वृषणा पर्श्वरिष्टमम्। दिव्यंन्यः सदंनश्चऋ उचा। पृथिव्यामन्यो अध्यन्तिरक्षे। तावस्मभ्यं पुरुवारं पुरुक्षुम्। रायस्पोषं विष्यंतान्नाभिमस्मे॥५॥

धियं पूषा जिन्वतु विश्वमिन्वः। र्यि सोमो रियपितिर्दधातु। अवंतु देव्यदितिरन्वा। बृहद्वंदेम विदर्थे सुवीराः। विश्वान्यन्यो भुवंना ज्ञानं। विश्वमन्यो अभिचक्षांण एति। सोमांपूषणाववंतन्धियं मे। युवभ्यां विश्वाः पृतंना जयेम। उद्त्रमं वंरुणास्तंभ्राद्याम्। यत्किश्चेदङ्कित्वासंः। अवं ते हेड्स्तत्त्वां यामि। आदित्यानामवंसा न दंक्षिणा। धारयंन्त आदित्यासंस्तिस्रो भूमीर्धारयन्। यज्ञो देवाना श्राचिरपः॥६॥

मुनीषाऽस्तुं चूर्तस्यास्मे किंतुवासंश्रुत्वारिं च॥१॥————[१]

ते शुक्रासः शुचंयो रश्मिवन्तंः। सीदंन्नादित्या अधिं

ब्र्हिषिं प्रिये। कामेन देवाः स्रथंन्दिवो नंः। आ याँन्तु यज्ञमुपं नो जुषाणाः। ते सूनवो अदितेः पीवसामिषम्ँ। घृतं पिन्वत्प्रतिहर्यन्नृतेजाः। प्र यज्ञिया यजमानाय येमुरे। आदित्याः कामं पितुमन्तंम्स्मे। आ नंः पुत्रा अदितेर्यान्तु यज्ञम्। आदित्यासंः पृथिभिर्देवयानैः ॥७॥

अस्मे कार्मन्दाशुषे सन्नर्मन्तः। पुरोडाशं घृतवंन्तं जुषन्ताम्। स्कुभायत् निर्ऋति सेधतार्मितम्। प्र रिश्मिभिर्यतंमाना अमृधाः। आदित्याः काम् प्रयंतां वर्षद्वृतिम्। जुषध्वं नो ह्व्यदांतिं यजन्नाः। आदित्यान्काम्मवंसे हुवेम। ये भूतानिं जन्यंन्तो विचिख्युः। सीदंन्तु पुत्रा अदितेरुपस्थम्ं। स्तीणं बर्हिर्हंविरद्यांय देवाः॥८॥

स्तीर्णं बर्हिः सींदता यज्ञे अस्मिन्। ध्राजाः सेधंन्तो अमंतिन्दुरेवांम्। अस्मभ्यं पुत्रा अदितेः प्र यर्सता आदित्याः कामं ह्विषो जुषाणाः। अग्रे नयं सुपर्था राये अस्मान्। विश्वांनि देव वयुनांनि विद्वान्। युयोध्यंस्मज्जंहुराणमेनंः। भूयिष्ठान्ते नमं उक्तिं विधेम। प्र वंः शुक्रायं भानवं भरध्वम्। हृव्यं मृतिश्चाग्रये सुपूतम्॥९॥

यो दैव्यांनि मानुंषा जनूर्षं। अन्तर्विश्वांनि विद्मना जिगांति। अच्छा गिरों मृतयों देवयन्तीः। अग्निं यंन्ति द्रविणं भिक्षंमाणाः। सुस्नन्दशर् सुप्रतीक्ष् स्वश्रम्॥ ह्व्यवाहंमर्तिं मानुंषाणाम्। अग्रे त्वम्समद्यंयोध्यमीवाः। अनंग्नित्रा अभ्यंमन्त कृष्टीः। पुनंर्स्मभ्यरं सुवितायं देव। क्षां विश्वंभिरजरंभिर्यजत्र॥१०॥

अग्ने त्वं पारया नव्यो अस्मान्। स्वस्तिभिरतिं दुर्गाणि विश्वां। पूश्चं पृथ्वी बंहुला नं उवीं। भवां तोकाय तनयाय शं योः। प्रकारवो मन्ना वच्यमानाः। देवद्रीचींन्नयथ देवयन्तः। दक्षिणावाङ्गाजिनी प्राच्येति। ह्विभरंन्त्यग्नये घृताचीं। इन्द्रन्नरो युजे रथम्ं। जुगृभ्णाते दक्षिणमिन्द्र हस्तम्॥११॥

वसूयवो वसुपते वसूनाम्। विद्या हि त्वा गोपंति शूर् गोनाम्। अस्मभ्यं चित्रं वृषंण श्रियन्दाः। तवेदं विश्वंम्भितः पश्व्यम्। यत्पश्यंसि चक्षंसा सूर्यस्य। गवांमसि गोपंतिरेकं इन्द्र। भक्षीमिहं ते प्रयंतस्य वस्वंः। सिमन्द्र णो मनसा नेषि गोभिः। सश्सूरिभिर्मघवन्त्स इस्वस्त्या। सं ब्रह्मंणा देवकृतं यदस्ति॥१२॥

सन्देवाना रे सुमृत्या यृज्ञियांनाम्। आराच्छत्रुमपं बाधस्व दूरम्। उग्रो यः शम्बंः पुरुहूत तेनं। अस्मे धेहि यवंमुद्गोमंदिन्द्र। कृधीधियं जरित्रे वाजंरत्नाम्। आ वेधस् स हि शुचिंः। बृह्स्पतिः प्रथमश्चायंमानः। मृहो ज्योतिषः पर्मे व्योमन्। सुप्तास्यंस्तुविजातो रवेण। वि

सप्तरंश्मिरधमृत्तमा ५सि॥१३॥

बृह्स्पतिः समंजयद्वसूंनि। महो व्रजान्गोमंतो देव एषः। अपः सिषांसन्त्सुव्रप्रंतीत्तः। बृह्स्पतिर्हन्त्यमित्रंमकैः। बृहंस्पते पर्येवा पित्रे। आ नों दिवः पावीरवी। इमा जुह्वांना यस्ते स्तनंः। सरंस्वत्यभि नों नेषि। इय॰ शुष्मंभिर्विस्खा इंवारुजत्। सानुं गिरीणान्तंविषेभिरूर्मिभिः। पारावद्ग्रीमवंसे सुवृक्तिभिः। सरंस्वतीमा विवासेम धीतिभिः॥१४॥

सोमों धेनु सोमो अर्वन्तमाशुम्। सोमों वीरङ्कंर्मण्यंन्ददातु। साद्रन्यं विद्थ्य समेयम्। पितुः श्रवंणं यो ददांशदस्मै। अषांढं युत्सु त्व सोम् ऋतुंभिः। या ते धामांनि ह्विषा यर्जन्त। त्विममा ओषंधीः सोम् विश्वाः। त्वमपो अंजनयस्त्वङ्गाः। त्वमातंतन्थो्वंन्तिरेक्षम्। त्वञ्चोतिषा वि तमो ववर्थ॥१५॥

या ते धामांनि दिवि या पृंथिव्याम्। या पर्वतेष्वोषंधीष्वप्स्। तेभिर्नो विश्वैः सुमना अहेडन्। राजैन्त्सोम् प्रतिं ह्व्या गृंभाय। विष्णोर्नुकन्तदंस्य प्रियम्। प्र तिद्वष्णुः। प्रो मात्रया तनुवां वृधान। न ते महित्वमन्वंश्ज्वन्ति। उभे ते विद्य रजंसी पृथिव्या विष्णों देव त्वम्। प्रमस्यं वित्से॥१६॥ विचंक्रमे त्रिर्देवः। आ ते महो यो जात एव। अभि गोत्राणि। अभिः स्पृधी मिथतीररिषण्यन्। अमित्रस्य व्यथया मृन्युमिन्द्र। आभिर्विश्वी अभियुजो विषूचीः। आर्याय विशोवंतारीर्दासीः। अय शृंण्वे अध् जयंत्रुत घ्रन्। अयमुत प्र कृंणुते युधा गाः। यदा सृत्यं कृंणुते मन्युमिन्द्रः॥१७॥

विश्वंन्द्रढं भंयत् एजंदस्मात्। अनुं स्वधामक्षर्त्नापो अस्य। अवर्धत् मध्य आ नाव्यांनाम्। स्प्रीचीनेन मनसा तिमेन्द्र ओजिष्ठेन। हन्मंनाहन्नभिद्यून्। मुरुत्वंन्तं वृष्भं वांवृधानम्। अकंवारिन्द्रिव्य शासिमन्द्रम्। विश्वासाह्मवंसे नूतंनाय। उग्र सहोदामिह त हंवेम। जिनेष्ठा उग्र सहंसे तुरायं॥१८॥

मन्द्र ओजिष्ठो बहुलाभिमानः। अवर्धिन्निन्द्रं म्रुतंश्चिदत्रं। माता यद्वीरन्द्धन्द्धनिष्ठा। क्वस्यावो मरुतः स्वधाऽऽसीत्। यन्मामेक र स्मर्धत्ताहिहत्यै। अह इ ह्युंग्रस्तंविषस्तुविष्मान्। विश्वस्य शत्रोरनमं वध्नेः। वृत्रस्यं त्वा श्वसथा दीषंमाणाः। विश्वं देवा अंजहुर्ये सर्खायः। म्रुद्धिरिन्द्र सुख्यन्तें अस्तु॥१९॥

अथेमा विश्वाः पृतंना जयासि। वधौं वृत्रं मंरुत इन्द्रियेणं। स्वेन भामेन तिवृषो बंभूवान्। अहमेता मनवे विश्वश्चन्द्राः। सुगा अपश्चंकर् वज्रंबाहुः। स यो वृषा वृष्णियेभिः समोंकाः। महो दिवः पृंथिव्याश्चं सम्राट्। स्तीनसंत्वा हव्यो भरेषु।
मरुत्वां नो भवत्विन्द्रं ऊती। इन्द्रां वृत्रमंतरद्वृत्रत्र्यं॥२०॥
अनाधृष्यो मघवा शूर इन्द्रंः। अन्वेनं विशो अमदन्त
पूर्वीः। अयर राजा जगंतश्चर्षणीनाम्। स एव वीरः
स उं वीर्यावान्। स एंकराजो जगंतः पर्स्पाः। यदा
वृत्रमतंरच्छूर इन्द्रंः। अथांभवद्दमिताभिक्तंतूनाम्। इन्द्रों युज्ञं
वर्धयंन्विश्ववेदाः। पुरोडाशंस्य जुषतार ह्विर्नः। वृत्रन्तीत्वां
दानवं वर्ष्रंबाहुः॥२१॥

दिशोऽह॰हहृ॰हिता ह॰हंणेन। इमं यज्ञं वर्धयंन्विश्ववेदाः। पुरोडाशं प्रति गृभ्णात्विन्द्रः। यदा वृत्रमतंरच्छूर इन्द्रः। अथैकराजो अभवज्ञनांनाम्। इन्द्रो देवाञ्छंम्बर्हत्यं आवत्। इन्द्रो देवानांमभवत्पुरोगाः। इन्द्रो यज्ञे हृविषां वावृधानः। वृत्रतूर्नो अभय शर्म य॰सत्। यः सप्त सिन्धू ॰ रदंधात्पृथिव्याम्। यः सप्त लोकानकृणोहिशंश्च। इन्द्रो ह्विष्मान्त्सगंणो मुरुद्धिः। वृत्रतूर्नो यज्ञमिहोपं यासत्॥२२॥ वृत्र्यं विष्या इन्द्रो वर्ष्यवाशीणे वाशा——[३]

इन्द्रस्तरंस्वानभिमातिहोग्रः। हिरंण्यवाशीरिष्वरः सुंवर्षाः। तस्यं वय सुंमृतौ यज्ञियंस्य। अपि भद्रे सौमन्से स्यांम। हिरंण्यवर्णो अभयं कृणोत्। अभिमातिहेन्द्रः पृतंनासु जिष्णुः। स नः शर्म त्रिवरूथं वि यश्सत्। यूयं पांत स्वस्तिभिः सदां नः। इन्द्रई स्तुहि वृज्जिण्ड् स्तोमंपृष्ठम्। पुरोडाशंस्य जुषता १ हविर्नः॥२३॥

ह्त्वाभिमांतीः पृतंनाः सहंस्वान्। अथाभंयं कृणुहि विश्वतो नः। स्तुहि शूरं वृज्जिणमप्रंतीत्तम्। अभिमातिहनं पुरुहूतमिन्द्रम्। य एक इच्छुतपंतिर्जनेषु। तस्मा इन्द्रांय ह्विरा जुंहोत। इन्द्रों देवानांमधिपाः पुरोहितः। दिशां पतिरभवद्वाजिनीवान्। अभिमातिहा तिव्षषस्तुविष्मान्। अस्मभ्यं चित्रं वृषंण रियन्दांत्॥२४॥

य इमे द्यावांपृथिवी मंहित्वा। बलेनाह रहिदिभमातिहेन्द्रंः। स नों हिवः प्रतिं गृभ्णातु रातयें। देवानांन्देवो निंधिपा नों अव्यात्। अनंवस्ते रथं वृष्णे यत्तें। इन्द्रंस्य नु वीर्याण्यहन्नहिम्। इन्द्रों यातोऽवंसितस्य राजां। शमंस्य च शृङ्गिणो वर्ज्ञंबाहुः। सेदु राजां क्षेति चर्षणीनाम्। अरान्न नेमिः परि ता बंभूव॥२५॥

अभि सिध्मो अंजिगादस्य शत्रून्। वितिग्मेनं वृष्भेणा पुरोभेत्। सं वर्ज्रेणासृजद्वृत्रमिन्द्रंः। प्र स्वां मृतिमंतिर्च्छाशंदानः। विष्णुं देवं वर्रुणमूतये भगम्। मेदंसा देवा वपयां यजध्वम्। ता नो यज्ञमागंतं विश्वधंना। प्रजावंदस्मे द्रविणेह धंत्तम्। मेदंसा देवा वपयां यजध्वम्। विष्णुं च देवं वर्रुणं च रातिम्॥२६॥ ता नो अमींवा अप बार्धमानौ। इमं यज्ञं जुषमांणावुपेतम्ं। विष्णूंवरुणा युवमंध्वरायं नः। विशे जनांय मिह् शर्मं यच्छतम्। दीर्घप्रंयञ्च्यू ह्विषां वृधाना। ज्योतिषाऽरांतीर्दहत्न्तमा रेसि। ययोरोजंसा स्कभिता रजारेसि। वीर्यंभिर्वीरतंमा शविष्ठा। याऽपत्यं ते अप्रंतीत्ता सहोंभिः। विष्णूं अगुन्वरुणा पूर्वहृंतौ॥२७॥

विष्णूंवरुणाविभशस्तिपावाँम्। देवा यंजन्त ह्विषां घृतेनं। अपामीवा स्पेधत र रक्षसंश्च। अथाधत्तं यजमानाय शं योः। अर्होमुचां वृष्मा सुप्रतूर्ती। देवानाँन्देवतंमा शचिष्ठा। विष्णूंवरुणा प्रतिहर्यतन्नः। इदन्नरा प्रयंतमूतये ह्विः। मही न द्यावांपृथिवी इह ज्येष्ठैं। रुचा भंवता स् शुचयंद्भिर्कैः॥२८॥

यत्सीं विरिष्ठे बृह्ती विमिन्वन्। नृवज्रोक्षा पंप्रथानेभिरेवैंः। प्रपूर्वजे पितरा नव्यंसीभिः। गीर्भिः कृंणुध्व सदेने ऋतस्यं। आ नौ द्यावापृथिवी दैव्येन। जनेन यातं मिहे वां वरूथम्। स इत्स्वपा भुवंनेष्वास। य इमे द्यावापृथिवी ज्जानं। उर्वी गंभीरे रजंसी सुमेकैं। अव शो धीरः शच्या समैरत्॥२९॥

भूरिन्द्वे अचंरन्ती चरंन्तम्। पृद्वन्तङ्गर्भम्पदींदधाते। नित्यन्न सूनुं पित्रोरुपस्थै। तं पिंपृत रोदसी सत्यवाचम्। इदं द्यावापृथिवी सृत्यमंस्तु। पित्मित्यिदिहोपं ब्रुवे वाम्। भूतन्देवानांमवमे अवोभिः। विद्यामेषं वृजनंं जीरदानुम्। उर्वी पृथ्वी बंहुले दूरे अंन्ते। उपं ब्रुवे नमंसा यज्ञे अस्मिन्। दर्धाते ये सुभगे सुप्रतूर्ती। द्यावा रक्षतं पृथिवी नो अभ्वात्। या जाता ओषंध्योऽति विश्वाः परिष्ठाः। या ओषंधयः सोमंराज्ञीरश्वावृती स्मोमवृतीम्। ओषंधीरितिं मातरोऽन्या वो अन्यामंवत्॥३०॥

हुविर्नो दाद्भभूव रातिं पूर्वहूंतावुर्केरैरदुस्मिन्पश्चं च॥४॥—————[$oldsymbol{\delta}$]

शुचिन्नु स्तोम् इञ्चर्यद्वृत्रम्। उभा वांमिन्द्राग्नी प्र चंर्षणिभ्यः। आ वृंत्रहणा गीर्भिर्विप्रः। ब्रह्मणस्पते त्वमस्य यन्ता। सूक्तस्यं बोधि तनयं च जिन्व। विश्वन्तद्भद्रं यद्वन्तिं देवाः। बृहद्वंदेम विदये सुवीराः। स ई र् स्त्येभिः सर्खिभिः शुचद्धिः। गोधायसं विधन्सैरंतर्दत्। ब्रह्मणस्पित्वृषिभिर्वराहैः॥३१॥

घर्मस्वेदेभिद्रिविणं व्यानट्। ब्रह्मण्स्पतेरभवद्यथाव्शम्। सत्यो मन्युर्मिह् कर्मा करिष्यतः। यो गा उदाजत्स दिवे वि चाभजत्। महीवं रीतिः शवंसा सर्त्पृथंक्। इन्धानो अग्निं वंनवद्वनुष्यतः। कृतब्रह्मा शूश्वद्रातहंच्य इत्। जातेनं जातमित्सृत्प्र सृर्सते। यं यं युजं कृणुते ब्रह्मण्स्पतिः। ब्रह्मणस्पते सुयमस्य विश्वहाँ॥३२॥

रायः स्याम रथ्यो विवंस्वतः। वीरेषुं वीरा र उपंपृिङ्क्ष नस्त्वम्। यदीशांनो ब्रह्मणा वेषिं मे हवम्। स इज्जनेन स विशा स जन्मना। स पुत्रैर्वाजं भरते धना नृभिः। देवानां यः पितरंमा

विवांसित। श्रुद्धामंना ह्विषा ब्रह्मणस्पितिम्। यास्ते पूषन्नावो अन्तः। शुक्रन्ते अन्यत्पूषेमा आशाः। प्रपंथे प्थामंजिनष्ट पूषा ॥३३॥

प्रपंथे दिवः प्रपंथे पृथिव्याः। उमे अभि प्रियतंमे स्थस्थैं। आ च परां च चरित प्रजानन्। पूषा सुबन्धंदिव आ पृथिव्याः। इडस्पितंम्घवां दस्मवंचाः। तन्देवासो अदंदः सूर्यायैं। कामेन कृतन्तवस् स्वश्चम्ं। अजाऽश्वः पशुपा वाजंबस्त्यः। धियं जिन्वो विश्वे भुवंने अपितः। अष्ट्रां पूषा शिथिरामुद्धरीवृजत्॥३४॥

स्श्रक्षाणो भुवंना देव ईयते। शुचीं वो ह्व्या मंरुतः शुचींनाम्। शुचिर्ं हिनोम्यध्वर शुचिंभ्यः। ऋतेनं सृत्यमृत्सापं आयन्। शुचिंजन्मानः शुचंयः पावकाः। प्र चित्रमकं गृंणते तुरायं। मारुताय स्वतंवसे भरध्वम्। ये सहार्रस् सहंसा सहंन्ते। रेजंते अग्ने पृथिवी मुखेभ्यः। अरसेष्वा मंरुतः खादयों वः॥३५॥

वक्षः सुरुका उपं शिश्रियाणाः। वि विद्युतो न वृष्टिभीं रुचानाः। अनुं स्वधामायुंधैर्यच्छंमानाः। या वः शर्मं शशमानाय सन्ति। त्रिधातूंनि दाशुषे यच्छुताधि। अस्मभ्यन्तानि मरुतो वियन्त। र्यिं नो धत्त वृषणः सुवीरम्ं। इमे तुरं मुरुतो रामयन्ति। इमे सहः सहंस आ

नंमन्ति। इमे शर्संवनुष्यतो नि पाँन्ति॥३६॥

गुरुद्वेषो अरंरुषे दधन्ति। अरा इवेदचंरमा अहेव। प्रप्रं जायन्ते अकंवा महोभिः। पृश्ञैः प्रुत्रा उपमासो रभिष्ठाः। स्वयां मृत्या मुरुतः सं मिमिक्षुः। अनुं ते दायि मृह इन्द्रियायं। स्त्रा ते विश्वमनुं वृत्रहत्यै। अनुं क्षृत्रमनु सहो यजत्र। इन्द्रं देवेभिरनुं ते नृषह्यै। य इन्द्र शुष्मो मघवन्ते अस्ति॥३७॥

शिक्षा सिखंभ्यः पुरुहूत नृभ्यः। त्व हे हृढा मंघवन्विचेताः। अपांवृधि परिवृतिन्न राधः। इन्द्रो राजा जगंतश्चर्षणीनाम्। अधिक्षमि विषुरूपं यदस्ति। ततो ददातु दाशुषे वसूनि। चोद्द्राध् उपंस्तुतिश्चिद्वांक्। तमुष्टुहि यो अभिभूत्योजाः। वन्वन्नवांतः पुरुहूत इन्द्रेः। अषांढमुग्र हमानमाभिः॥३८॥

गीर्भिर्वर्ध वृष्भं चंर्षणीनाम्। स्थूरस्यं रायो बृंह्तो य ईशैं। तम् ष्टवाम विदथेष्विन्द्रम्। यो वायुना जयंति गोमंतीष्। प्र धृंष्णुया नयिति वस्यो अच्छं। आ ते शुष्मो वृष्भ एंतु पृश्चात्। ओत्तरादंधरागा पुरस्तौत्। आ विश्वतो अभिसमैंत्वर्वाङ्। इन्द्रं द्युम्न सुवंविद्धेह्यस्मे॥३९॥

वुराहैंर्विश्वहांऽजिनष्ट पूषोद्वरींवृजत्खादयों वः पान्त्यस्त्याभिर्नवं च॥५॥------[५]

आ देवो यांतु सिवता सुरत्नः। अन्तिरिक्षप्रा वहंमानो अर्थैः। हस्ते दर्धानो नर्या पुरूणि। निवेशयं च प्रसुवं च भूमं। अभीवृंतं कृशंनैर्विश्वरूपम्। हिरंण्यशम्यं यज्ततो बृहन्तम्। आस्थाद्रथर् सिवृता चित्रभानुः। कृष्णा रजार्र सि तिवेषीन्दर्धानः। सर्घा नो देवः संविता स्वायं। आ साविषद्वस्पतिर्वसूनि॥४०॥

विश्रयंमाणो अमंतिमुरूचीम्। मूर्तभोजंनमधंरासतेन। विजनां ज्छावाः शिंतिपादों अख्यन्। रथु हरिण्यप्रउगं वहंन्तः। शश्वद्दिशः सवितुर्दैव्यंस्य। उपस्थे विश्वा भुवंनानि तस्थुः। वि सुंपूर्णो अन्तरिक्षाण्यख्यत्। गुभीरवेपा असुंरः सुनीथः। क्वेदानी सूर्यः कश्चिकत। कृतमान्द्या रशिमर्स्या तंतान॥४१॥

भगन्धियं वाजयंन्तः पुरंन्धिम्। नराशश्सो ग्नास्पतिनीं अव्यात्। आ ये वामस्यं सङ्ग्थे रयीणाम्। प्रिया देवस्यं सिवतुः स्यांम। आ नो विश्वे अस्क्रांगमन्तु देवाः। मित्रो अर्यमा वर्रणः सजोषाः। भुवन् यथां नो विश्वे वृधासः। कर्रन्त्सुषाहां विथुरन्न शवंः। शं नो देवा विश्वदेवा भवन्तु। शश् सरंस्वती सह धीभिरंस्तु॥४२॥

शर्मिभ्षाचः शर्मुं रातिषाचंः। शं नों दिव्याः पार्थिवाः शं नो अप्याः। ये संवितः सत्यसंवस्य विश्वः। मित्रस्यं व्रते वर्रुणस्य देवाः। ते सौभंगं वीरवृद्गोमृदप्रः। दर्धातन् द्रविणश्चित्रम्समे। अग्ने याहि दूत्यं वारिषेण्यः। देवाः अच्छा ब्रह्मकृतां गणेने। सर्रस्वतीं मुरुतों अश्विनापः। यक्षि देवान्नंब्रुधेयांय विश्वान्॥४३॥ द्यौः पिंतः पृथिवि मात्रभूंक्। अग्नै भ्रातर्वसवो मृडतां नः। विश्वं आदित्या अदिते स्जोषाः। अस्मभ्यक् शर्म बहुलं वि यंन्त। विश्वं देवाः शृणुतेमक् हवंं मे। ये अन्तरिक्षे य उप द्यवि ष्ठ। ये अग्निजिह्वा उत वा यजंत्राः। आसद्यास्मिन्बर्हिषं मादयध्वम्। आ वां मित्रावरुणा हृव्यजुंष्टिम्। नमंसा देवाववंसाववृत्याम्॥४४॥

अस्माकं ब्रह्म पृतंनासु सह्या अस्माकम्। वृष्टिर्दिव्या सुंपारा। युवं वस्त्राणि पीवसा वंसाथे। युवोरिच्छंद्रा मन्तंवो ह सर्गाः। अवांतिरतमनृंतानि विश्वाः। ऋतेनं मित्रावरुणा सचेथे। तत्सु वां मित्रावरुणा महित्वम्। ई्रमा त्स्थुषी्रहंभिर्दुदुह्ने। विश्वाः पिन्वथ स्वसंरस्य धेनाः। अनुं वामेकः पविरा वंवर्ति॥४५॥

यद्वर्श्हेष्ठन्नाति विदे सुदान्। अच्छिद्र्र शर्म भुवंनस्य गोपा। ततो नो मित्रावरुणाववीष्टम्। सिषांसन्तो जी(जि?)गिवारसं स्याम। आ नो मित्रावरुणा ह्व्यदांतिम्। घृतैर्गव्यूंतिमुक्षत्मिडांभिः। प्रति वामत्र वर्मा जनांय। पृणीतमुद्रो दिव्यस्य चारौः। प्र बाहवां सिसृतञ्जीवसे नः। आ नो गर्व्यूंतिमुक्षतं घृतेनं॥४६॥

आ नो जर्ने श्रवयतं युवाना। श्रुतं में मित्रावरुणा हवेमा। इमा रुद्रायं स्थिरधंन्वने गिरंः। क्षिप्रेषंवे देवायं स्वधाम्ने। अषांढाय सहंमानाय मीढुषे। तिग्मायुंधाय भरता शृणोतंन। त्वादंत्तेभी

रुद्र शन्तंमेभिः। शत १ हिमां अशीय भेषजेभिः। व्यंस्मद्वेषां वितरं व्य॰ हैं। व्यमीवा इश्चातयस्वा विषूचीः॥४७॥ अर्हंन्बिभर्षि मा नंस्तोके। आ तें पितर्मरुता र सुम्नमेंतु। मा नः सूर्यस्य सन्दशों युयोथाः। अभि नों वीरो अर्वति क्षमेत। प्र जांयेमहि रुद्र प्रजाभिः। एवा बंभ्रो वृषभ चेकितान। यथां देव न हंणीषे न हश्सें। हावनश्रूनों रुद्रेह बोंधि। बृहद्वंदेम विदर्थं सुवीराः। परिं णो रुद्रस्यं हेतिः स्तुहि श्रुतम्। मीढुंष्टमार्हन्बिभर्षि। त्वमंग्ने रुद्र आ वो राजानम्॥४८॥ वर्सूनि ततानास्तु विश्वान् ववृत्यां ववर्ति घृतेन् विपूंचीः श्रुतन्द्वे चं॥६॥ $lue{f \xi}$ सूर्यो देवीमुषस रोचंमानामर्यः। न योषांमभ्येति पश्चात्। यत्रा नरों देवयन्तों युगानिं। वितन्वते प्रतिं भुद्रायं भुद्रम्। भुद्रा अश्वां हरितः सूर्यस्य। चित्रा एदंग्वा अनुमाद्यांसः। नमस्यन्तों दिव आ पृष्ठमंस्थुः। परि द्यावांपृथिवी यंन्ति सद्यः। तत्सूर्यस्य देवत्वन्तन्मंहित्वम्। मध्या कर्तोर्वितंतः सञ्जंभार॥४९॥

यदेदयुंक्त ह्रितंः स्थस्थांत्। आद्रात्री वासंस्तन्ते सिमस्मैं। तिन्मत्रस्य वरुंणस्याभिचक्षें। सूर्यो रूपं कृंणुते द्योरुपस्थें। अनन्तमन्यद्रुशंदस्य पाजंः। कृष्णमन्यद्धरितः सं भेरन्ति। अद्या देवा उदिता सूर्यस्य। निर॰हंसः पिपृतान्निरंवद्यात्। तन्नो मित्रो वरुंणो मामहन्ताम्। अदितिः सिन्धुंः पृथिवी उत

द्यौः॥५०॥

दिवो रुका उरुचक्षा उदेति। दूरे अर्थस्त्रिण्भिजिमानः।
नूनञ्जनाः सूर्येण प्रसूताः। आयन्नर्थानि कृणवन्नपार्श्सि। शं
नो भव चक्षंसा शं नो अहाँ। शं भानुना शर हिमा शं घृणेनं।
यथा शमस्मै शमसंदुरोणे। तत्सूर्य द्रविणन्धेहि चित्रम्।
चित्रन्देवानामुदंगादनीकम्। चक्षुर्मित्रस्य वरुणस्याग्नेः॥५१॥
आप्रा द्यावापृथिवी अन्तरिक्षम्। सूर्य आत्मा जगंतस्तस्थुषश्च।
त्वष्टा दधत्तन्नंस्तुरीपम्। त्वष्टां वीरं पिशङ्गंरूपः।
दश्मन्त्वष्टुंर्जनयन्त् गर्भम्। अतन्द्रासो युवतयो बिर्भर्तम्।
तिग्मानीक्ष् स्वयंशसञ्जनेषु। विरोचमानं परिषीन्नयन्ति।
आविष्ट्यां वर्धते चारुरास्। जिह्नानामूर्धस्वयंशा
उपस्थै॥५२॥

उमे त्वष्टं विभ्यतुर्जायंमानात्। प्रतीची सि्र्हं प्रतिजोषयेते। मित्रो जनान्त्र स मित्र। अयं मित्रो नंमस्यः सुशेवः। राजां सुक्षत्रो अंजिनष्ट वेधाः। तस्यं वय र स्मृतौ यज्ञियंस्य। अपि भद्रे सौमन्से स्याम। अनुमीवास इडंया मदंन्तः। मित्रज्मंवो विरिम्न्ना पृथिव्याः। आदित्यस्यं व्रतमुंपृक्ष्यन्तः॥५३॥ व्यं मित्रस्यं सुमृतौ स्याम। मित्रन्न ईर शिम्या गोषुं गव्यवंत्। स्वाधियो विद्ये अप्स्वजीजनन्। अरंजयतार् रोदंसी पाजंसा गिरा। प्रति प्रियं यंज्तञ्चनुषामवंः। महार आदित्यो नमंसोपसद्यः। यातयञ्जनो गृणते सुशेवंः। तस्मां एतत्पन्यंतमाय जुष्टम्। अग्नौ मित्रायं ह्विरा जुंहोत। आ वार् रथो रोदंसी बद्धधानः॥५४॥

हिर्ण्ययो वृषंभिर्यात्वश्वैः। घृतवंतिनः प्विभीरुचानः। इषाबौँढा नृपतिर्वाजिनीवान्। स पंप्रथानो अभि पश्च भूमं। त्रिवन्धुरो मन्सायांतु युक्तः। विशो येन् गच्छंथो देवयन्तीः। कुत्रां चिद्यामंमिश्वना दर्धाना। स्वश्वां यशसाऽऽयांतम्वांक्। दस्रां निधिं मध्मन्तं पिबाथः। वि वार् रथों वध्वां यादंमानः॥५५॥

अन्तांन्दिवो बांधते वर्तिनिभ्यांम्। युवोः श्रियं परि योषांवृणीत। सूरो दुहिता परितिकायायाम्। यद्देवयन्तमवंथः शचींभिः। परिष्ठश्च सवां मनांवां वयोगाम्। यो ह्स्यवार्श्वरियावस्तं उस्राः। रथो युजानः परियाति वर्तिः। तेनं नः शं योरुषसो व्यंष्टो। न्यंश्विना वहतं युज्ञे अस्मिन्। युवं भुज्युमवंविद्धश्समुद्रे॥५६॥

उदूंहथुरणंसो अस्रिंधानैः। प्तित्रिभिरश्रमैरंव्यथिभिः। दुश्सनांभिरिश्वना पारयंन्ता। अग्नीषोमा यो अद्य वाँम्। इदं वर्चः सप्यितिं। तस्मैं धत्तश् सुवीर्यम्। गवां पोष्श् स्विश्वयम्। यो अग्नीषोमां ह्विषां सप्यात्। देवद्रीचा मनसा यो घृतेनं। तस्यं व्रतश्ररेक्षतं पातमश्हंसः॥५७॥

विशे जनांय महि शर्म यच्छतम्। अग्नीषोमा य

आहंतिम्। यो वान्दाशाँद्धविष्कृंतिम्। स प्रजयां सुवीर्यम्। विश्वमायुर्व्यश्चवत्। अग्नीषोमा चेति तद्वीर्यं वाम्। यदमुंष्णीतमवसं पणिङ्गोः। अवांतिरतं प्रथंयस्य शेषंः। अविंन्दतं ज्योतिरेकं बहुभ्यंः। अग्नीषोमाविम स् मेऽग्नीषोमा हविषः प्रस्थितस्य॥५८॥

जुनार बोर्ग्नेरूपस्थं उप्रथन्तों बद्वधाने वृथ्वां यादंमानः समुद्रेऽरहंसः प्रस्थितस्या। ॥——[७]
अहमस्मि प्रथम्जा ऋतस्यं। पूर्वं देवेभ्यों अमृतंस्य नाभिः।
यो मा ददांति स इदेवमावाः। अहमन्नमन्नेनदन्तंमिद्या।
पूर्वमृग्नेरिपं दहृत्यन्नम्। यत्तौ हांसाते अहमृत्तरेषुं। व्यात्तंमस्य
पृश्वंः सुजम्भम्। पश्यंन्ति धीराः प्रचरन्ति पाकाः।
जहाँम्यन्यन्न जंहाम्यन्यम्। अहमन्नं वश्मिचंरामि॥५९॥

समानमर्थं पर्यमि भुअत्। को मामन्नं मनुष्यो दयेत। पराके अन्ननिहितं लोक एतत्। विश्वैदिवैः पितृभिर्गृप्तमन्नम्। यद्द्यते लुप्यते यत्परोप्यते। शृतत्मी सा तन्मे बभूव। महान्तौ चरू संकृद्दुग्धेनं पप्रौ। दिवं च पृश्चिं पृथिवीं चं साकम्। तत्संपिबंन्तो न मिनन्ति वेधसंः। नैतद्भयो भवंति नो कनीयः॥६०॥

अन्नं प्राणमन्नंमपानमांहुः। अन्नं मृत्युन्तम्ं जीवातुंमाहुः। अन्नं ब्रह्माणों जरसं वदन्ति। अन्नमाहुः प्रजनंनं प्रजानाम्। मोघमन्नं विन्दते अप्रचेताः। सत्यं ब्रंवीमि व्ध इत्स तस्यं। नार्यमणुं पुर्ष्यति नो सर्खायम्। केवेलाघो भवति केवलादी। अहं मेघः स्तुनयुन्वः त्रेन्नस्मि। मामदन्त्यहमद्म्यन्यान्॥६१॥

अहर सद्मृतों भवामि। मदांदित्या अधि सर्वे तपन्ति। देवीं वाचंमजनयन्त यद्वाग्वदंन्ती। अनुन्तामन्तादिधे निर्मितां महीम्। यस्यान्देवा अंदधुर्भोजंनानि। एकाँक्षरां द्विपदा्र् षद्वंदां च। वाचं देवा उपं जीवन्ति विश्वं। वाचं देवा उपं जीवन्ति विश्वं। वाचंङ्गन्ध्वाः पृशवों मनुष्याः। वाचीमा विश्वा भुवंनान्यर्पिता॥६२॥

सा नो हवं जुषतामिन्द्रंपत्नी। वागुक्षरं प्रथमजा ऋतस्यं। वेदांनां माताऽमृतंस्य नाभिः। सा नो जुषाणोपं यज्ञमागात। अवन्ती देवी सुहवां मे अस्तु। यामृषंयो मञ्जकृतों मनीषिणः। अन्वैच्छं देवास्तपंसा श्रमेण। तान्देवीं वाच र् ह्विषां यजामहे। सा नो दधातु सुकृतस्यं लोके। चृत्वारि वाक्परिमिता पदानि॥६३॥

तानिं विदुर्बाह्मणा ये मंनीषिणंः। गुहा त्रीणि निहिंता नेङ्गंयन्ति। तुरीयंं वाचो मंनुष्यां वदन्ति। श्रृद्धयाऽग्निः समिंध्यते। श्रृद्धयां विन्दते हुविः। श्रृद्धां भगंस्य मूर्धनिं। वचसा वेदयामसि। प्रियक् श्रृंद्धे ददंतः। प्रियक् श्रृंद्धे दिदांसतः। प्रियं भोजेषु यज्वंसु॥६४॥

इदं मं उदितं कृधि। यथां देवा असुरेषु। श्रद्धामुग्रेषुं चिक्ररे।

एवं भोजेषु यज्वंसु। अस्माकंमुदितं कृधि। श्रद्धान्देवा यजमानाः। वायुगोपा उपासते। श्रद्धाः हृदय्यंयाऽऽकूत्या। श्रद्धयां हूयते हृविः। श्रद्धां प्रातर्ह्वामहे॥६५॥

श्रद्धां मध्यन्दिनं परि। श्रद्धाः सूर्यस्य निम्रुचि। श्रद्धे श्रद्धांपयेह मा। श्रद्धा देवानिधं वस्ते। श्रद्धा विश्वंमिदअगंत्। श्रद्धाङ्कामस्य मातरम्। ह्विषां वर्धयामिस। ब्रह्मं जज्ञानं प्रथमं पुरस्तात्। वि सीमृतः सुरुचों वेन आंवः। स बुिध्रयां उप मा अस्य विष्ठाः॥६६॥

सृतश्च योनिमसंतश्च विवंः। पिता विराजांमृष्भो रंयीणाम्। अन्तरिक्षं विश्वरूप् आविवेश। तमकैर्भ्यंचिन्ति वृत्सम्। ब्रह्म सन्तं ब्रह्मणा वर्धयंन्तः। ब्रह्मं देवानंजनयत्। ब्रह्म विश्वमिदञ्जगंत्। ब्रह्मणः क्षत्रित्तिर्मितम्। ब्रह्मं ब्राह्मण आत्मनाः। अन्तरंस्मित्तिमे लोकाः॥६७॥

अन्तर्विश्वंमिदञ्जगंत्। ब्रह्मैव भूतानां ज्येष्ठम्ँ। तेन कोंऽर्हित् स्पर्धितुम्। ब्रह्मन्देवास्त्रयंस्त्रि श्रात्। ब्रह्मनिन्द्रप्रजापती। ब्रह्मन् ह विश्वां भूतानिं। नावीवान्तः समाहिता। चतंस्र आशाः प्रचंरन्त्वग्नयः। इमं नों यज्ञन्नयतु प्रजानन्। घृतं पिन्वंन्रजर्श् सुवीरम्ं॥६८॥

ब्रह्मं स्मिद्भंवत्याहुंतीनाम्। आ गावों अग्मन्नुत भ्द्रमंक्रन्। सीदंन्तु गोष्ठे रुणयंन्त्वस्मे। प्रजावंतीः पुरुरूपां इह स्युः। इन्द्रांय पूर्वीरुषसो दुहांनाः। इन्द्रो यज्वंने पृण्ते चं शिक्षति। उपेद्दंदाति न स्वं मुंषायति। भूयोंभूयो र्यमिदंस्य वर्धयन्। अभिन्ने खिल्ले नि दंधाति देव्युम्। न ता नंशन्ति न ता अर्वां॥६९॥

गावो भगो गाव इन्द्रों मे अच्छात्। गावः सोमंस्य प्रथमस्यं भक्षः। इमा या गावः सर्जनास् इन्द्रेः। इच्छामीद्धृदा मनंसा चिदिन्द्रम्। यूयङ्गांवो मेदयथा कृशिश्चित्। अश्चीलिश्चित्कृणुथा सुप्रतीकम्। भद्रङ्गृहं कृणुथ भद्रवाचः। बृहद्वो वयं उच्यते सभासुं। प्रजावंतीः सूयवंस रिशन्तीः। शुद्धा अपः सुप्रपाणे पिबंन्तीः। मा वंः स्तेन ईशत् माऽघशर्रसः। पिरं वो हेती रुद्रस्यं वृञ्च्यात्। उपेदमुंपपर्चनम्। आसु गोषूपंपृच्यताम्। उपंर्ष्वभस्य रेतंसि। उपेन्द्र तवं वीर्ये॥७०॥

च्यामि कनीयोऽन्यानिष्ति प्रवानि यज्वंस हवामहे विश्व लोकाः स्वीर्मवां पिवंन्तीप्यद्वीयाः [८] ता सूर्याचन्द्रमसां विश्वभृत्तंमा महत्। तेजो वसुंमद्राजतो दिवि। सामात्माना चरतः सामचारिणां। ययोंर्व्वतन्न ममे जातुं देवयोः। उभावन्तौ परिं यात् अर्म्यां। दिवो न र्श्मी र स्तंनुतो व्यर्णवे। उभा भुंवन्ती भुवंना कृविक्रंत्। सूर्या न चन्द्रा चंरतो ह्तामंती। पतीं द्युमिद्वंश्वविदां उभा दिवः। सूर्या उभा चन्द्रमंसा विचक्षणा॥७१॥

विश्ववारा वरिवोभा वरेण्या। ता नों ऽवतं मितमन्ता मिहंव्रता।

विश्ववपंरी प्रतरंणा तर्न्ता। सुवर्विदां दृशये भूरिंरश्मी। सूर्या हि चन्द्रा वसुं त्वेषदंर्शता। मनस्विनोभानुंचर्तोनु सन्दिवम्। अस्य श्रवों नद्यः सप्त बिंभ्रति। द्यावा क्षामां पृथिवी दंर्शतं वपुः। अस्मे सूर्याचन्द्रमसांऽभिचक्षे। श्रुद्धेकिमेन्द्र चरतो विचर्तुरम्॥७२॥

पूर्वापुरं चंरतो माययैतौ। शिशू क्रीडंन्तौ परिं यातो अध्वरम्। विश्वान्यन्यो भुवंनाऽभि चष्टैं। ऋतून्न्यो विदधंज्ञायते पुनंः। हिरंण्यवर्णाः शुचंयः पावका यासा राजां। यासान्देवाः शिवनं मा चक्षुंषा पश्यत। आपो भुद्रा आदित्पंश्यामि। नासंदासीन्नो सदांसीन्तदानींम्। नासीद्रजो नो व्योमा पुरो यत्। किमावंरीवः कुह कस्य शर्मन्॥७३॥

अम्भः किमांसीद्गहंनङ्गभीरम्। न मृत्युर्मृत्न्तर्हि न। रात्रिया अहं आसीत्प्रकेतः। आनींदवातः स्वधया तदेकम्ँ। तस्माँद्धान्यन्न पुरः किश्चनासं। तमं आसीत्तमंसा गूढमग्रैं प्रकेतम्। स्लिलः सर्वमा इदम्। तुच्छेना्भ्विपिहितं यदासीत्। तमंस्रस्तन्महिना जांयतैकम्ं। काम्स्तदग्रे समंवर्तताधि॥७४॥

मनसो रेतः प्रथमं यदासीत्। स्तो बन्धुमसंति निरंविन्दन्। हृदि प्रतीष्यां क्वयों मनीषा। तिरश्चीनो वितंतो रिश्मरेषाम्। अधः स्विदासी ३ दुपरि स्विदासी ३ त्। रेतोधा आंसन्महिमानं आसन्। स्वधा अवस्तात्प्रयंतिः प्रस्तौत्।

को अद्धा वेंद् क इह प्र वोंचत्। कुत् आजांता कुर्त इयं विसृष्टिः। अविंग्देवा अस्य विसर्जनाय॥७५॥

अथा को वेंद्र यतं आब्भूवं। इयं विसृंष्टि्र्यतं आब्भूवं। यदि वा द्धे यदि वा न। यो अस्याध्यक्षः पर्मे व्योमन्। सो अङ्ग वेंद्र यदि वा न वेदं। किङ्स्विद्वनङ्क उ स वृक्ष आंसीत्। यतो द्यावांपृथिवी निष्टतृक्षुः। मनींषिणो मनसा पृच्छतेदुतत्। यद्ध्यतिष्टद्भुवंनानि धारयन्। ब्रह्म वनं ब्रह्म स वृक्ष आंसीत्॥ ७६॥

यतो द्यावांपृथिवी निष्टतृक्षुः। मनींषिणो मनंसा विब्नंवीमि वः। ब्रह्माध्यतिष्ठद्भुवंनानि धारयन्। प्रातर्ग्निं प्रातरिन्द्र हवामहे। प्रातर्मित्रावर्रुणा प्रातर्श्विनां। प्रातर्भगं पूषणं ब्रह्मणस्पतिम्। प्रातः सोमंमुत रुद्र हवेम। प्रातर्जितं भगंमुग्र हवेम। व्यं पुत्रमिदेतेयो विधर्ता। आधिश्वद्यं मन्यंमानस्तुरिश्वंत्॥७७॥

राजां चिद्यं भगं भृक्षीत्याहं। भगु प्रणेत्भंगु सत्यंराधः। भगेमान्धियमुदंव ददन्नः। भगु प्रणो जनय गोभिरश्वैः। भगु प्र नृभिर्नृवन्तः स्याम। उतेदानीं भगंवन्तः स्याम। उत प्रपित्व उत मध्ये अह्नाम। उतोदिता मघवन्त्सूर्यस्य। वयन्देवाना र सुमृतौ स्याम। भगं एव भगंवा अस्तु देवाः॥७८॥

तेनं वयं भगवन्तः स्याम। तन्त्वां भगु सर्व इञ्जोहवीमि। स नो भग पुरएता भवेह। समध्वरायोषसो नमन्त। दुधिकावेव शुचेये पदायं। अर्वाचीनं वंसुविदं भगन्नः। रथंमिवाश्वां वाजिन् आवंहन्तु। अश्वांवतीगोंमंतीनं उषासंः। वीरवंतीः सदंमुच्छन्तु भद्राः। घृतन्दुहांना विश्वतः प्रपीनाः। यूयं पात स्वस्तिभिः सदां नः॥७९॥

विचक्षणा विंचर्तुर॰ शर्मन्निधं विसर्जनाय ब्रह्म वनं ब्रह्म स वृक्ष आंसीत्तुरिश्चेंदेवाः प्रपीना एकं च॥९॥——[९] पीवौन्नान्ते शुक्रासः सोमों धेनुमिन्द्रस्तरंस्वाञ्छुचिमा देवो यांतु सूर्यो देवीमृहर्मस्मि ता सूर्याचन्द्रमसा नवं॥९॥

पीवौँत्रामग्रे त्वं पारयानाधृष्यः शुचित्रु विश्रयंमाणो दिवो रुक्मोऽत्रं प्राणमत्रन्ता सूँर्याचन्द्रमसा नवंसप्ततिः॥७९॥

पीवों नाय्यूँयं पांत स्वस्तिभः सदां नः॥

हरिः ओम्॥ ॥इति श्रीकृष्णयजुर्वेदीयतैत्तिरीयब्राह्मणे द्वितीयाष्टके अष्टमः प्रपाठकः समाप्तः॥

हविर्नः॥३॥

॥ अष्टकम् ३॥

॥प्रथमः प्रश्नः॥

॥ तैत्तिरीयब्राह्मणे तृतीयाष्टके प्रथमः प्रपाठकः॥

अग्निर्नः पातु कृत्तिकाः। नक्षित्रन्देविमिन्द्रियम्। इदमासां विचक्षणम्। ह्विरासं जुंहोतन। यस्य भान्ति रूश्मयो यस्य कृतवः। यस्येमा विश्वा भुवनानि सर्वां। स कृत्तिकाभिर्भि संवसानः। अग्निर्नो देवः सुविते दंधातु। प्रजापंते रोहिणी वेतु पत्नीं। विश्वरूपा बृह्ती चित्रभानुः॥१॥

सा नो यज्ञस्यं सुविते दंधातु। यथा जीवेंम श्ररदः सवींराः।
रोहिणी देव्युदंगात्पुरस्तांत्। विश्वां रूपाणि प्रतिमोदंमाना।
प्रजापंति हिवषां वर्धयंन्ती। प्रिया देवानामुपंयातु यज्ञम्।
सोमो राजां मृगशीर्षेण आगन्। शिवं नक्षंत्रं प्रियमंस्य धामं।
आप्यायंमानो बहुधा जनेषु। रेतः प्रजां यजंमाने दधातु॥२॥
यत्ते नंक्षत्रं मृगशीर्षमस्ति। प्रिय राजिम्प्रियतंमं प्रियाणांम्।
तस्मैं ते सोम ह्विषां विधेम। शत्त्रं एधि द्विपदे शञ्चतुंष्पदे।
आर्द्रयां रुद्रः प्रथंमान एति। श्रेष्ठों देवानां पतिरिष्ट्रियानांम्।
नक्षंत्रमस्य ह्विषां विधेम। मा नः प्रजा रीरिष्नमोत
वीरान्। हेती रुद्रस्य परिंणो वृणक्तु। आर्द्रां नक्षंत्रं जुषता र

प्रमुश्रमांनौ दुरितानि विश्वां। अपाघश रंसन्नुदतामरांतिम्। पुनंनों देव्यदिंतिः स्पृणोतु। पुनंवंसू नः पुन्रेतां यज्ञम्। पुनंनों देवा अभियंन्तु सर्वें। पुनंः पुनर्वो ह्विषां यजामः। पुवा न देव्यदिंतिरन्वां। विश्वंस्य भूत्री जगंतः प्रतिष्ठा। पुनंवंसू ह्विषां वर्धयंन्ती। प्रियन्देवानामप्यंतु पार्थः॥४॥

बृह्स्पतिः प्रथमं जायंमानः। तिष्यं नक्षंत्रम्भिसम्बंभूव। श्रेष्ठां देवानां पृतंनासु जिष्णुः। दिशोऽनु सर्वा अभयं नो अस्तु। तिष्यः पुरस्तांदुत मध्यतो नः। बृह्स्पतिर्नः परि पातु पृश्चात्। बाधेतान्द्वेषो अभयं कृणुताम्। सुवीर्यस्य पत्रंयः स्याम। इद श्स्पेभ्यो ह्विरंस्तु जुष्टम्। आश्रेषा येषांमनुयन्ति चेतः॥५॥ ये अन्तरिक्षं पृथिवीङ्कियन्ति। ते नः स्पासो ह्वमागंमिष्ठाः। ये रोचने सर्यस्यापि सर्पाः। ये दिवं देवीमनं सश्चरंन्ति।

ये रोचने सूर्यस्यापि सूर्पाः। ये दिवं देवीमनुं स्श्ररंन्ति। येषांमाश्रेषा अनुयन्ति कामम्। तेभ्यः सूर्पभ्यो मधुंमञ्जहोमि। उपहूताः पितरो ये मुघासुं। मनोजवसः सुकृतः सुकृत्याः। ते नो नक्षेत्रे हवमागंमिष्ठाः। स्वधाभिर्युज्ञं प्रयंतं जुषन्ताम्॥६॥

ये अंग्निद्ग्धा येऽनंग्निदग्धाः। येऽमुं लोकं पितरंः क्षियन्ति। या इश्चं विद्या या १ उं च न प्रंविद्या। मुघासुं यज्ञ १ सुकृतं जुषन्ताम्। गवां पितः फल्गुंनीनामिस् त्वम्। तदेर्यमन्वरुण मित्र चारुं। तन्त्वां वय १ संनितार १ सनीनाम्। जीवा जीवन्तमुप संविशेम। येनेमा विश्वा भुवनानि सञ्जिता। यस्यं देवा अनु सं यन्ति चेतः॥७॥

अर्यमा राजाऽजर्स्तुविष्मान्। फल्गुंनीनामृष्भो रोरवीति। श्रेष्ठो देवानां भगवो भगासि। तत्त्वां विदुः फल्गुंनी्स्तस्यं वित्तात्। अस्मभ्यं क्षुत्रम्जर्रं सुवींर्यम्। गोम्दर्श्वंवदुप् सन्नुदेह। भगो ह दाता भग इत्प्रंदाता। भगो देवीः फल्गुंनी्रा विवेश। भगस्येत्तं प्रंस्वं गंमेम। यत्रं देवैः संधमादं मदेम॥८॥

आयांतु देवः संवितोपंयातु। हिर्ण्ययंन सुवृता रथंन। वहन् हस्तं सुभगं विद्यनापंसम्। प्रयच्छंन्तं पपुंरिं पुण्यमच्छं। हस्तः प्रयच्छत्वमृतं वसीयः। दक्षिणेन प्रतिंगृभ्णीम एनत्। दातारमद्य संविता विदेय। यो नो हस्तांय प्रसुवातिं यज्ञम्। त्वष्टा नक्षंत्रम्भ्यंति चित्राम्। सुभ संसं युव्ति श्रेचंमानाम्॥९॥

निवेशयंत्रमृतान्मर्त्या १ श्रा रूपाणि पि १ शन्भुवंनानि विश्वां। तत्रस्त्वष्टा तदं चित्रा विचेष्टाम्। तत्रक्षंत्रं भूरिदा अंस्तु मह्मम्। तत्रः प्रजां वीरवंती १ सनोत्। गोभिनीं अश्वेः समनत्तु यज्ञम्। वायुर्नक्षंत्रम्भ्येति निष्ट्यांम्। तिग्मर्श्वं वृष्भो रोरुवाणः। समीरयन्भुवंना मात्रिश्वां। अप द्वेषा १ सिनुदत्तामरांतीः॥१०॥

तन्नों वायुस्तदु निष्ट्यां शृणोतु। तन्नक्षंत्रं भूरिदा अंस्तु

मह्मम्। तन्नो देवासो अनुंजानन्तु कामम्। यथा तरेम दुरितानि विश्वां। दूरम्स्मच्छत्रंवो यन्तु भीताः। तदिन्द्राग्नी कृणतान्तद्विशांखे। तन्नो देवा अनुंमदन्तु यज्ञम्। पश्चात्पुरस्तादभंयन्नो अस्तु। नक्षंत्राणामधिपत्नी विशांखे। श्रेष्ठांविन्द्राग्नी भुवंनस्य गोपौ॥११॥

विषूंचः शत्रूंनप् बाधंमानौ। अप् क्षुधंत्रुदतामरांतिम्। पूर्णा पृश्चाद्वत पूर्णा पुरस्तांत्। उन्मध्यतः पौर्णमासी जिंगाय। तस्यान्देवा अधि स्ंवसन्तः। उत्तमे नाकं इह मांदयन्ताम्। पृथ्वी सुवर्चा युव्तिः स्जोषाः। पौर्णमास्युदंगाच्छोभंमाना। आप्याययंन्ती दुरितानि विश्वाः। उरुन्दुहां यजंमानाय युज्ञम्॥१२॥

चित्रभांनुर्यजंमाने दथातु हुविर्नुः पाथुश्चेतों जुषन्ताश्चेतों मदेम् रोचंमानामरांतीर्गोपौ युज्ञम्॥१॥ \blacksquare [\S]

ऋद्धारमं हुव्यैर्नमंसोप्सद्यं। मित्रन्देवं मित्र्धेयं नो अस्तु। अनूराधान् ह्विषां वर्धयंन्तः। शृतश्चीवेम श्ररदः सवीराः। चित्रं नक्षेत्रमुदंगात्पुरस्तौत्। अनूराधास् इति यद्वदंन्ति। तन्मित्र एति प्थिभिर्देवयानैः। हिर्ण्ययैर्वितंतैर्न्तिरक्षे। इन्द्रौ ज्येष्ठामनु नक्षेत्रमेति। यस्मिन्वृत्रं वृत्रतूर्ये तृतारं॥१३॥

तस्मिन्वयम्मृत्नदुहांनाः। क्षुधंन्तरेम् दुरितिन्दुरिष्टिम्। पुर्न्दरायं वृष्भायं धृष्णवें। अषांढाय सहंमानाय मीढुषें। इन्द्राय ज्येष्ठा मधुमहुहांना। उरुं कृणोतु यजंमानाय

लोकम्। मूलं प्रजां वीरवंतीं विदेय। पराँच्येतु निर्ऋतिः पराचा। गोभिनिक्षंत्रं पृशुभिः समक्तम्। अहंभूयाद्यजमानाय मह्मम्॥१४॥

अहंनों अद्य सुंविते दंधातु। मूलं नक्षंत्रमिति यद्वदंन्ति। परांचीं वाचा निर्ऋतिन्नुदामि। शिवं प्रजायें शिवमंस्तु मह्मम्ं। या दिव्या आपः पयंसा सम्बभूवः। या अन्तरिक्ष उत पार्थिवीर्याः। यासांमषाढा अनुयन्ति कामम्ं। ता न आपः शङ् स्योना भंवन्तु। याश्च कूप्या याश्चं नाद्याः समुद्रियाः। याश्चं वैशन्तीरुत प्रांसचीर्याः॥१५॥

यासांमषाढा मधुं भृक्षयंन्ति। ता न आपः श इस्योना भंवन्तु। तन्नो विश्वे उपं शृण्वन्तु देवाः। तद्षेषाढा अभिसंयन्तु यज्ञम्। तन्नक्षत्रं प्रथतां पृशुभ्यः। कृषिर्वृष्टिर्यजमानाय कल्पताम्। शुभाः कन्यां युव्तयः सुपेशंसः। कर्मकृतः सुकृतों वीर्यावतीः। विश्वान्देवान् ह्विषां वर्धयंन्तीः। अषाढाः काम्मुपं यान्तु यज्ञम्॥१६॥

यस्मिन्ब्रह्माऽभ्यजंयत्सर्वमेतत्। अमुं चं लोकमिदमूं च सर्वम्। तन्नो नक्षंत्रमभिजिद्विजित्यं। श्रियंन्दधात्वहंणीयमानम्। उभौ लोकौ ब्रह्मणा सञ्जितेमौ। तन्नो नक्षंत्रमभिजिद्विचंष्टाम्। तस्मिन्वयं पृतंनाः सञ्जयम। तन्नो देवासो अनुंजानन्तु कामम्। शृण्वन्तिं श्रोणाममृतंस्य गोपाम्। पुण्यांमस्या उपंश्रणोमि वाचम्॥१७॥ महीं देवीं विष्णुंपत्नीमजूर्याम्। प्रतीचींमेना हिवषां यजामः। त्रेधा विष्णुं रुगायो विचंक्रमे। महीन्दिवं पृथिवीमन्तिरंक्षम्। तच्छ्रोणैति श्रवं इच्छमाना। पुण्य श्रे श्लोकं यजंमानाय कृण्वती। अष्टौ देवा वसंवः सोम्यासंः। चतंस्रो देवीर्जराः श्रविष्ठाः। ते यज्ञं पान्तु रजंसः प्रस्तात्। संवत्सरीणंममृत इस्वस्ति॥१८॥

यज्ञं नेः पान्तु वसंवः पुरस्तांत्। दक्षिणतोंऽभियंन्तु श्रविष्ठाः। पुण्यं नक्षंत्रमभि संविशाम। मा नो अरांतिर्घशृ स्साऽगन्। क्षृत्रस्य राजा वर्रुणोऽधिराजः। नक्षंत्राणा श्रातिभेष्ग्वसिष्ठः। तौ देवेभ्यः कृणतो दीर्घमायः। श्रात सहस्रां भेष्जानि धत्तः। यज्ञं नो राजा वर्रुण उपयातु। तन्नो विश्वं अभि संयन्तु देवाः॥१९॥

तन्नो नक्षेत्र श्वतिभेषग्जुषाणम्। दीर्घमायुः प्रतिरद्भेषजानि। अज एकंपादुदंगात्पुरस्तात्। विश्वां भूतानि प्रतिमोदंमानः। तस्यं देवाः प्रस्वं यंन्ति सर्वे। प्रोष्ठपदासो अमृतंस्य गोपाः। विभ्राजमानः समिधान उग्रः। आऽन्तरिक्षमरुहदगुन्द्याम्। त स्पूर्यं देवम्जमेकंपादम्। प्रोष्ठपदासो अनुयन्ति सर्वे॥२०॥

अहिं बुंध्रियः प्रथंमान एति। श्रेष्ठों देवानां मुत मानुंषाणाम्। तं ब्राह्मणाः सोम्पाः सोम्यासंः। प्रोष्ठपदासों अभि रंक्षन्ति सर्वें।

चत्वार् एकंम्भिकर्म देवाः। प्रोष्ठपदास् इति यान् वदंन्ति। ते बुध्नियं परिषद्य एक्षेम्त्रियः। अहि एक्षिन्ति नमंसोप्सद्यं। पूषा रेवत्यन्वेति पन्थांम्। पुष्टिपतीं पशुपा वाजंबस्त्यौ॥२१॥

इमानि ह्व्या प्रयंता जुषाणा। सुगैर्नो यानैरुपंयातां यज्ञम्। श्रुद्रान्पश्नंक्षतु रेवतीं नः। गावों नो अश्राष्ट्र अन्वेतु पूषा। अन्नष्ट्र रक्षंन्तौ बहुधा विरूपम्। वाजर्ष्ट्र सनुतां यजमानाय यज्ञम्। तद्श्विनांवश्वयुजोपंयाताम्। शुभुङ्गिष्ठौ सुयमेभिरश्वैः। स्वं नक्षंत्र ह्विषा यजन्तौ। मध्वा सम्पृंकौ यजुंषा समक्तौ॥२२॥

यौ देवानां भिषजौं हव्यवाहौ। विश्वंस्य दूताव्मृतंस्य गोपौ। तौ नक्षंत्रं जुजुषाणोपंयाताम्। नमोऽश्विभ्यां कृणुमोऽश्वयुग्भ्यांम्। अपं पाप्मानं भरंणीर्भरन्तु। तद्यमो राजा भगवान् विचंष्टाम्। लोकस्य राजां महतो महान् हि। सुगन्नः पन्थामभंयं कृणोतु। यस्मिन्नक्षंत्रे यम एति राजां। यस्मिन्नेनम्भ्यषिश्चन्त देवाः। तदंस्य चित्रः ह्विषां यजाम। अपं पाप्मानं भरंणीर्भरन्तु। निवेशंनी यत्ते देवा अदंधः॥२३॥

तृतारु मह्यं प्रास्चीर्या याँन्तु युज्ञं वाचई स्वस्ति देवा अनुयन्ति सर्वे वाजंबस्त्यौ समंक्तौ देवास्त्रीणिं

नवोनवो भवति जायंमानो यमांदित्या अश्शुमांप्याययंन्ति।

ये विरूपे समंनसा संव्ययंन्ती। समानन्तन्तुं परितात्ना तैं। विभू प्रभू अनुभू विश्वतों हुवे। ते नो नक्षेत्रे हवमागमेतम्। वयन्देवी ब्रह्मणा संविदानाः। सुरत्नांसो देववीतिन्दधांनाः। अहोरात्रे ह्विषां वर्धयंन्तः। अति पाप्मान्मिति मुक्त्या गमेम। प्रत्युंवदृश्यायती॥२४॥

व्युच्छन्तीं दुहिता दिवः। अपो मही वृंणुते चक्षुंषा। तमो ज्योतिंष्कृणोति सूनरीं। उदुस्नियाः सचते सूर्यः। सचा उद्यन्नक्षंत्रमर्चिमत्। तवेदुंषो व्युषि सूर्यस्य च। सं भक्तेनं गमेमहि। तन्नो नक्षंत्रमर्चिमत्। भानुमक्तेजं उचरंत्। उपयज्ञमिहागंमत्॥२५॥

प्र नक्षंत्राय देवायं। इन्द्रायेन्दु हवामहे। सनंः सिवता संवत्सिनम्। पृष्टिदां वीरवंत्तमम्। उदुत्यश्चित्रम्। अदितिर्न उरुष्यतु महीमू षु मातरम्। इदं विष्णुः प्रतिद्वष्णुः। अग्निर्मूर्धा भुवः। अनुनोऽद्यानुंमित्रिरिन्वदंनुमते त्वम्। हृव्यवाहु इस्वष्टम्॥२६॥

आयत्यंगमित्स्वंष्टम्॥३॥————[३]

अग्निर्वा अंकामयत। अन्नादो देवाना ईस्यामिति। स एतम् ग्रये कृत्तिंकाभ्यः पुरोडाशंम् ष्टाकंपालं निरंवपत्। ततो वै सौंऽन्नादो देवानांमभवत्। अग्निर्वे देवानांमन्नादः। यथां ह् वा अग्निर्देवानांमन्नादः। एव ह् वा एष मंनुष्यांणां भवति। य एतेनं ह्विषा यजंते। य उं चैनदेवं वेदं। सोऽत्रं जुहोति। अग्नये स्वाहा कृतिंकाभ्यः स्वाहां। अम्बाये स्वाहां दुलाये स्वाहां। नित्त्ये स्वाहाऽभ्रयंन्त्ये स्वाहां। मेघयंन्त्ये स्वाहां व्रूषयंन्त्ये स्वाहां। चुपुणीकांये स्वाहेतिं॥२७॥

प्रजापंतिः प्रजा अंसृजत। ता अंस्मात्सृष्टाः परांचीरायन्। तासा रे रोहिणीम्भ्यंध्यायत्। सोंऽकामयत। उप मा वंर्तेत। समेनया गच्छेयेतिं। स पृतं प्रजापंतये रोहिण्ये चरुन्निरंवपत्। ततो वै सा तमुपावंर्तत। समेनयागच्छत। उप हु वा एंनं प्रियमावंर्तते। सं प्रियेणं गच्छते। य पृतेनं ह्विषा यजंते। य उंचैनदेवं वेदं। सोऽत्रं जुहोति। प्रजापंतये स्वाहां रोहिण्ये स्वाहां। रोचंमानाये स्वाहां प्रजाभ्यः स्वाहेतिं॥२८॥

सोमो वा अंकामयत। ओषंधीना र राज्यम्भिजंयेयमितिं। स एतर सोमांय मृगशीर्षायं श्यामाकं चरुं पर्यसि निरंवपत्। ततो वै स ओषंधीना र राज्यम्भ्यंजयत्। समानाना र ह् वै राज्यम्भिजंयित। य एतेनं ह्विषा यजंते। य उं चैनदेवं वेदं। सोऽत्रं जुहोति। सोमांय स्वाहां मृगशीर्षाय स्वाहां। इन्वकाभ्यः स्वाहौषंधीभ्यः स्वाहां। राज्याय स्वाहाऽभिजित्यै स्वाहेतिं॥२९॥

रुद्रो वा अंकामयत। पृशुमान्तस्यामितिं। स एत र रुद्रायाद्रीयै प्रैय्यं इवं च्रुं पर्यसि निरंवपत्। ततो वे स पंशुमानंभवत्। पृशुमान् ह् वे भंवति। य एतेनं ह्विषा यजते। य उं चैनदेवं वेदं। सोऽत्रं जुहोति। रुद्राय स्वाहाऽद्रीयै स्वाहां।

पिन्वंमानायै स्वाहां पशुभ्यः स्वाहेतिं॥३०॥

ऋक्षा वा इयमेलोमकांऽऽसीत्। साऽकांमयत। ओषंधीभिवंनस्पतिंभिः प्रजांयेयेतिं। सैतमदित्यै पुनंवंसुभ्याश्चरुन्निः ततो वा इयमोषंधीभिवंनस्पतिंभिः प्राजांयत। प्रजांयते ह् वै प्रजयां पृश्मिः। य एतेनं ह्विषा यजंते। य उं चैनदेवं वेदं। सोऽत्रं जुहोति। अदित्ये स्वाहा पुनंवंसुभ्याम्। स्वाहा भूँत्ये स्वाहा प्रजांत्ये स्वाहेतिं॥३१॥

बृह्स्पतिर्वा अंकामयत। ब्रह्मवर्च्सी स्यामिति। स एतं बृह्स्पतिये तिष्यांय नैवारं चरुं पर्यसि निरंवपत्। ततो वै स ब्रह्मवर्च्स्यभवत्। ब्रह्मवर्च्सी हु वै भवति। य एतेन हिवषा यजंते। य उं चैनदेवं वेदं। सोऽत्रं जुहोति। बृह्स्पतंये स्वाहां तिष्यांय स्वाहां। ब्रह्मवर्च्साय स्वाहेतिं॥३२॥

देवासुराः संयंत्ता आसन्। ते देवाः सर्पेभ्यं आश्रेषाभ्य आज्यं कर्म्भन्निरंवपन्। तानेताभिरेवदेवतांभिरुपांनयन्। पृताभिर्ह् वै देवतांभिर्द्धिषन्तं भ्रातृंव्यमुपंनयित। य पृतेनं हृविषा यज्ञंते। य उं चैनदेवं वेदं। सोऽत्रं जुहोति। सर्पेभ्यः स्वाहांऽऽश्रेषाभ्यः स्वाहां। दुन्दुशूकेंभ्यः स्वाहेतिं॥३३॥

पितरो वा अंकामयन्त। पितृलोक ऋष्नुयामेति। त एतं पितृभ्यो मघाभ्यः पुरोडाशु षद्भंपालं निरंवपन्। ततो वै ते पितृलोक आधिवन्। पितृलोके हु वा ऋष्नोति। य एतेनं हुविषा यजते। य उं चैनदेवं वेदं। सोऽत्रं जुहोति। पितृभ्यः स्वाहां म्घाभ्यः। स्वाहांऽन्घाभ्यः स्वाहांगुदाभ्यः। स्वाहांऽरुन्धतीभ्यः स्वाहेतिं॥३४॥

अर्यमा वा अंकामयत। पृशुमान्तस्यामिति। स एतमंर्यम्णे फल्गुंनीभ्याश्चरुन्निरंवपत्। ततो वै स पंशुमानंभवत्। पृशुमान् ह् वै भंवति। य एतेनं ह्विषा यजंते। य उं चैनदेवं वेदं। सोऽत्रं जुहोति। अर्यम्णे स्वाहा फल्गुंनीभ्याङ् स्वाहाँ। पृशुभ्यः स्वाहेतिं॥३५॥

भगो वा अंकामयत। भगी श्रेष्ठी देवाना इस्यामिति। स एतं भगाय फल्गुंनीभ्याश्चरुन्निरंवपत्। ततो वै स भगी श्रेष्ठी देवानांमभवत्। भगी हु वै श्रेष्ठी संमानानां भवति। य एतेनं हिविषा यजंते। य उं चैनदेवं वेदं। सोऽत्रं जुहोति। भगाय स्वाहा फल्गुंनीभ्या इस्वाहां। श्रेष्ठांय स्वाहेतिं॥३६॥

स्विता वा अंकामयत। श्रन्में देवा दधीरन्। स्विता स्यामिति। स एत र संवित्रे हस्ताय पुरोडाशं द्वादंशकपालं निरंवपदाशूनां व्रीहीणाम्। ततो वै तस्मै श्रद्देवा अदंधत। स्विताऽभंवत्। श्रद्धवा अंस्मै मनुष्यां दधते। स्विता संमानानां भवति। य एतेनं ह्विषा यजंते। य उं चैनदेवं वेदं। सोऽत्रं जुहोति। स्वित्रे स्वाहा हस्ताय। स्वाहां ददते स्वाहां पृण्ते। स्वाहां प्रयच्छंते स्वाहां प्रतिगृभ्णते स्वाहतिं॥३७॥

त्वष्टा वा अंकामयत। चित्रं प्रजां विन्देयेति। स एतन्त्वष्ट्रं

चित्रायैं पुरोडाशंम्ष्टाकंपालं निरंवपत्। ततो वै स चित्रं प्रजामंविन्दत। चित्र ह वै प्रजां विन्दते। य एतेनं ह्विषा यजंते। य उं चैनदेवं वेदं। सोऽत्रं जुहोति। त्वष्ट्रे स्वाहां चित्रायै स्वाहां। चैत्रांय स्वाहां प्रजायै स्वाहेतिं॥३८॥

वायुर्वा अंकामयत। कामचारंमेषु लोकेष्वभिजंयेयमितिं। स एतद्वायवे निष्टांये गृष्ट्ये दुग्धं पयो निरंवपत्। ततो वै स कामचारंमेषु लोकेष्वभ्यंजयत्। कामचार ह वा एषु लोकेष्वभिजंयति। य एतेनं ह्विषा यजंते। य उं चैनदेवं वेदं। सोऽत्रं जुहोति। वायवे स्वाहा निष्टांये स्वाहां। कामचारांय स्वाहाऽभिजिंत्ये स्वाहेतिं॥३९॥

इन्द्राग्नी वा अंकामयेताम्। श्रेष्ठमं देवानांम्भिजंयेवेतिं। तावेतिमंन्द्राग्निभ्यां विशांखाभ्यां पुरोडाश्मेकांदशकपालं निरंवपताम्। ततो वे तौ श्रेष्ठमं देवानांम्भ्यंजयताम्। श्रेष्ठमं हु वे संमानानांम्भि जंयति। य पुतेनं हुविषा यजंते। य उं चैनदेवं वेदं। सोऽत्रं जुहोति। इन्द्राग्निभ्याङ् स्वाहा विशांखाभ्याङ् स्वाहां। श्रेष्ठमांय स्वाहाऽभिजित्यै स्वाहेतिं॥४०॥

अथैतत्पौर्णमास्या आज्यं निर्वपति। कामो वै पौर्णमासी। काम् आज्यम्। कामेंनैव काम् समर्थयति। क्षिप्रमेन् स् सकाम् उपनमति। येन् कामेन् यजंते। सोऽत्रं जुहोति। पौर्णमास्यै स्वाहा कामाय स्वाहाऽऽगंत्यै स्वाहेतिं॥४१॥ अग्निः पश्चंदश प्रजापंतिष्योर्डश् सोम् एकांदश रुद्रो दश्केंकांदश् बृह्स्पित्र्दिशं देवासुरा नवं पितर् एकांदशार्थमा भगो दशं दश सिवता चतुर्दश् त्वष्टां वायुरिंन्द्राग्नी दशं दशार्थेतत्पौंर्णमास्या अष्टौ पश्चंदशार॥

मित्रो वा अंकामयत। मित्रधेयंमेषु लोकेष्वभिजंयेयमिति।
स एतं मित्रायांनूराधेभ्यंश्चरुत्रिरंवपत्। ततो वे स
मित्रधेयंमेषुलोकेष्वभ्यंजयत्। मित्रधेयं ह् वा एषु
लोकेष्वभिजंयति। य एतेनं ह्विषा यजंते। य उं चैनदेवं
वेदं। सोऽत्रं जुहोति। मित्राय स्वाहांऽनूराधेभ्यः स्वाहां।
मित्रधेयांय स्वाहाऽभिजिंत्यै स्वाहेतिं॥४२॥

इन्द्रो वा अंकामयत। ज्येष्ठमं देवानांम्भिजंयेय्मितिं। स एतिमन्द्रांय ज्येष्ठाये पुरोडाश्मेकांदशकपालं निरंवपन्महाव्रींहीणाम्। ततो वै स ज्येष्ठमं देवानांम्भ्यंजयत्। ज्येष्ठमं हु वै संमानानांम्भिजंयति। य एतेनं हृविषा यजंते। य उं चैनदेवं वेदं। सोऽत्रं जुहोति। इन्द्रांय स्वाहां ज्येष्ठाये स्वाहां। ज्येष्ठमांय स्वाहाभिजिंत्ये स्वाहेतिं॥४३॥

प्रजापंतिर्वा अंकामयत। मूलं प्रजां विन्देयेतिं। स एतं प्रजापंतये मूलांय चरुन्निरंवपत्। ततो वे स मूलं प्रजामंविन्दत। मूलर्ं हु वे प्रजां विन्दते। य एतेनं हुविषा यजते। य उं चैनदेवं वेदं। सोऽत्रं जुहोति। प्रजापंतये स्वाहा मूलांय स्वाहां। प्रजाये स्वाहेतिं॥४४॥

आपो वा अंकामयन्त। सुमुद्रङ्कामंमुभिजंयेमेतिं।

ता एतम्झोऽषाढाभ्यंश्चरुत्रिरंवपन्। ततो वै ताः संमुद्रङ्कामंमभ्यंजयन्। समुद्र ह वै कामंमभिजंयति। य एतेनं ह्विषा यजंते। य उ चैनदेवं वेदं। सोऽत्रं जुहोति। अ्द्यः स्वाहांऽषाढाभ्यः स्वाहां। समुद्राय स्वाहा कामांय स्वाहां। अभिजिंत्ये स्वाहेतिं॥४५॥

विश्वे वै देवा अंकामयन्त। अनुपुज्ययं जंयेमेतिं। त पुतं विश्वेंभ्यो देवेभ्योंऽषाढाभ्यंश्चरुन्निरंवपन्। ततो वै तेऽनपज्य्यमंजयन्। अनुपुज्य्य ह वै जंयित। य पुतेनं ह्विषा यजंते। य उं चैनदेवं वेदं। सोऽत्रं जुहोति। विश्वेंभ्यो देवेभ्यः स्वाहांऽषाढाभ्यः स्वाहां। अनुपुज्य्याय स्वाहा जित्ये स्वाहेतिं॥४६॥

ब्रह्म वा अंकामयत। ब्रह्मलोकम्भिजंयेय्मितिं। तदेतं ब्रह्मणेऽभिजितें च्रुन्निरंवपत्। ततो वै तद्वंह्मलोकम्भ्यंजयत्। ब्रह्मलोक १ ह् वा अभिजंयति। य एतेनं ह्विषा यजंते। य उं चैनदेवं वेदं। सोऽत्रं जुहोति। ब्रह्मणे स्वाहांऽभिजिते स्वाहां। ब्रह्मलोकाय स्वाहाऽभिजित्यै स्वाहेतिं॥४७॥

विष्णुर्वा अंकामयत। पुण्यः श्लोकः शृण्वीय। न मां पापी कीर्तिरागंच्छेदितिं। स एतं विष्णंवे श्रोणायें पुरोडाशंत्रिकपालित्ररंवपत्। ततो वे स पुण्यः श्लोकंमशृणुत। नैनंं पापी कीर्तिरागंच्छत्। पुण्यः हृ वै श्लोकः शृणुते। नैनं पापी कीर्तिरागंच्छति। य एतेनं ह्विषा यजंते। य उं चैनदेवं वेदं। सोऽत्रं जुहोति। विष्णंवे स्वाहाँ श्रोणायै स्वाहाँ। श्लोकाय स्वाहाँ श्रुताय स्वाहेतिं॥४८॥

वसंवो वा अंकामयन्त। अग्रं देवतांनां परीयामेतिं। त एतं वसुभ्यः श्रविष्ठाभ्यः पुरोडाशंमृष्टाकंपालं निरंवपन्। ततो वै तेऽग्रं देवतांनां पर्यायन्। अग्रं हु वै संमानानां पर्येति। य एतेनं हुविषा यज्ञंते। य उं चैनदेवं वेदं। सोऽत्रं जुहोति। वसुभ्यः स्वाहा श्रविष्ठाभ्यः स्वाहाँ। अग्रांय स्वाहा परींत्यै स्वाहेतिं॥४९॥

इन्द्रो वा अंकामयत। दृढोऽशिंथिलः स्यामिति। स एतं वर्रुणाय श्तिभिषजे भेषुजेभ्यः पुरोडाशं दशंकपालं निर्वपत्कृष्णानां व्रीहीणाम्। ततो वै स दृढोऽशिंथिलोऽभवत्। दृढो हु वा अशिंथिलो भवति। य एतेनं हृविषा यजंते। य उं चैनदेवं वेदं। सोऽत्रं जुहोति। वर्रुणाय स्वाहां श्तिभिषजे स्वाहां। भेषुजेभ्यः स्वाहेतिं॥५०॥

अजो वा एकंपादकामयत। तेज्ञस्वी ब्रंह्मवर्च्सी स्यामिति। स एतम्जायैकंपदे प्रोष्ठपदेभ्यंश्चरुन्निरंवपत्। ततो वै स तेज्ञस्वी ब्रंह्मवर्च्स्यंभवत्। तेज्ञस्वी ह् वै ब्रंह्मवर्च्सी भंवति। य एतेनं ह्विषा यजते। य उं चैनदेवं वेदं। सोऽत्रं जुहोति। अजायैकंपदे स्वाहां प्रोष्ठपदेभ्यः स्वाहां। तेजंसे स्वाहां ब्रह्मवर्चसाय स्वाहेति॥५१॥

अहिर्वे बुध्नियोंऽकामयत। इमां प्रंतिष्ठां विन्देयेति। स एतमहंये बुध्नियांय प्रोष्ठपदेभ्यः पुरोडाशं भूमिंकपालं निरंवत्। ततो वे स इमां प्रंतिष्ठामंविन्दत। इमा ह वे प्रंतिष्ठां विन्दते। य एतेन ह्विषा यजिते। य उं चैनदेवं वेदे। सोऽत्रं जुहोति। अहंये बुध्नियांय स्वाहाँ प्रोष्ठपदेभ्यः स्वाहाँ। प्रतिष्ठाये स्वाहेतिं॥५२॥

पूषा वा अंकामयत। पृशुमान्त्स्यामितिं। स एतं पूष्णे रेवत्यें च्रुक्तिरंवपत्। ततो वे स पंशुमानंभवत्। पृशुमान् ह वे भंवति। य एतेनं हृविषा यजंते। य उं चैनदेवं वेदं। सोऽत्रं जुहोति। पूष्णे स्वाहां रेवत्ये स्वाहां। पृशुभ्यः स्वाहेतिं॥५३॥ अश्विनौ वा अंकामयेताम्। श्रोत्रस्विनावबंधिरौ स्यावेतिं। तावेतमश्विभ्यांमश्वयुग्भ्यां पुरोडाशंन्द्विकपालित्रिरंवपताम्। ततो वे तौ श्रोत्रस्विनावबंधिरावभवताम्। श्रोत्रस्वी ह वा अबंधिरो भवति। य एतेनं हृविषा यजंते। य उं चैनदेवं वेदं। सोऽत्रं जुहोति। अश्विभ्याः स्वाहांऽश्वयुग्भ्याः स्वाहां। श्रोत्रांय स्वाहा श्रुत्ये स्वाहेतिं॥५४॥

यमो वा अंकामयत। पितृणाः राज्यम्भिजंयेयमितिं। स एतं यमायांप्भरंणीभ्यश्चरुन्निरंपवत्। ततो वै स पितृणाः राज्यम्भ्यंजयत्। समानानाः ह वै राज्यम्भि जंयति। य एतेनं ह्विषा यजंते। य उं चैनदेवं वेदं। सोऽत्रं जुहोति। यमाय स्वाहांऽप्भरंणीभ्यः स्वाहां। राज्याय स्वाहाभिजिंत्यै स्वाहेतिं॥५५॥

अथैतदमावास्यांया आज्यं निर्वपति। कामो वा अमावास्यां। काम आज्यम्। कामेनेव काम समर्धयति। क्षिप्रमेन १ सकाम उपनमति। येन कामेन यजंते। सोऽत्रं जुहोति। अमावास्यांये स्वाहा कामांय स्वाहाऽऽगंत्ये स्वाहेतिं॥५६॥ मित्र इन्द्रंः प्रजापंतिर्दर्शं दशाप एकांदश् विश्वे ब्रह्म दर्शदश् विष्णुस्त्रयोंदश् वसंव इन्द्रोऽजोऽहिर्वे बुभ्नियंः पूषाऽश्विनौं युमो दशं दुशाथैतदंमावास्यांया अष्टौ पश्चंदश॥५॥—————[५] चन्द्रमा वा अंकामयत। अहोरात्रानेर्धमासान्मासानृतून्त्संवत्स्रमा्वा। चन्द्रमंसः सायुंज्य सलोकतांमाप्रुयामितिं। स एतश्चन्द्रमंसे प्रतीदृश्यांये पुरोडाशं पश्चंदशकपालं निरंवपत्। ततो सोऽहोरात्रानंर्धमासान्मासानृतून्त्संवत्सरमास्वा। चन्द्रमंसः सार्युज्यः सलोकतामाप्रोत्। अहोरात्रान् हु वा अर्धमासान्मासानृतून्त्संवत्सरमास्वा। चन्द्रमंसः चैनदेवं वेदं। सोऽत्रं जुहोति। चन्द्रमंसे स्वाहाँ प्रतीदश्यांये स्वाहाँ। अहोरात्रेभ्यः स्वाहाँऽर्धमासेभ्यः स्वाहाँ। मासेँभ्यः स्वाहर्तुभ्यः स्वाहाँ। संवत्सराय स्वाहेतिं॥५७॥ अहोरात्रे वा अंकामयेताम्। अत्यंहोरात्रे मुंच्येवहि। न नांवहोरात्रे आप्रुयातामितिं। ते एतमहोरात्राभ्यां

चरुन्निरंवपताम्। द्वयानां व्रीहीणाम्। शुक्लानां च कृष्णानां

च। स्वात्योर्दुग्धे। श्वेतायैं च कृष्णायैं च। ततो वै ते अत्यंहोरात्रे अमुच्येते। नैनें अहोरात्रे आप्नुताम्। अतिं ह् वा अहोरात्रे मृच्यते। नैनंमहोरात्रे आप्नुतः। य एतेनं ह्विषा यजंते। य उं चैनदेवं वेदं। सोऽत्रं जुहोति। अह्रे स्वाहा रात्रिये स्वाहां। अतिंमुक्त्ये स्वाहेतिं॥५८॥

उषा वा अंकामयत। प्रियाऽऽदित्यस्यं सुभगां स्यामितिं। सैतमुषसं च्रुन्निरंवपत्। ततो वै सा प्रियाऽऽदित्यस्यं सुभगांऽभवत्। प्रियो हु वै संमानाना र् सुभगों भवति। य एतेनं हुविषा यजते। य उं चैनदेवं वेदं। सोऽत्रं जुहोति। उषसे स्वाहा व्युंष्ट्रो स्वाहां। व्यूषुष्ये स्वाहां व्युच्छन्त्ये स्वाहां। व्युष्टाये स्वाहेतिं॥५९॥

अथैतस्मै नक्षंत्राय च्रुनिवंपित। यथा त्वन्देवानामिसं। एवम्हं मंनुष्याणां भूयासमिति। यथां हु वा एतद्देवानाम्। एव॰ हु वा एष मंनुष्याणां भवित। य एतेनं हृविषा यजंते। य उं चैनदेवं वेदं। सोऽत्रं जुहोति। नक्षंत्राय स्वाहोदेष्यते स्वाहां। उद्यते स्वाहोदिताय स्वाहां। हरंसे स्वाहा भरंसे स्वाहां। भ्राजंसे स्वाहा तेजंसे स्वाहां। तपंसे स्वाहां ब्रह्मवर्चसाय स्वाहेति॥६०॥

सूर्यो वा अंकामयत। नक्षंत्राणां प्रतिष्ठा स्यामितिं। स एत॰ सूर्याय नक्षंत्रेभ्यश्चरुन्निरंवपत्। ततो वै स नक्षंत्राणां प्रतिष्ठाऽभंवत्। प्रतिष्ठा ह वै संमानानां भवति। य एतेनं ह्विषा यजंते। य उं चैनदेवं वेदं। सोऽत्रं जुहोति। सूर्याय स्वाहा नक्षंत्रेभ्यः स्वाहाँ। प्रतिष्ठायै स्वाहेतिं॥६१॥

अथैतमिदित्यै च्रुन्निर्वपिति। इयं वा अदितिः। अस्यामेव प्रतितिष्ठति। सोऽत्रं जुहोति। अदित्यै स्वाहां प्रतिष्ठायै स्वाहेति॥६२॥

अथैतं विष्णंवे च्रुन्तिर्वपति। यज्ञो वै विष्णुंः। यज्ञ एवान्तृतः प्रतितिष्ठति। सोऽत्रं जुहोति। विष्णंवे स्वाहां यज्ञाय स्वाहां। प्रतिष्ठायै स्वाहेतिं॥६३॥

चुन्द्रमाः पश्चंदशाहोरात्रे सुप्तदंशोषा एकांद्रशाधेतस्मै नक्षंत्राय त्रयोदश् सूर्यो दशाधेतमदित्यै पश्चाधेतं विष्णंव पद्भम (स्विताऽऽशूनां व्रीहीणामिन्द्रों महाव्रीहीणामिन्द्रः कृष्णानां व्रीहीणामहोरात्रे द्वयानां व्रीहीणाम्। पितर्ष्णद्वंपालः सविता द्वादंशकपालमिन्द्राग्नी एकांदशकपालमिन्द्र एकांदशकपालमिन्द्रो दशंकपालं विष्णुंश्चिकपालमिहिर्भूमिकपालमृश्चिनौं द्विकपालश्चन्द्रमाः पश्चंदशकपालमृग्निस्त्वष्टा वसंवोऽष्टाकंपालमृन्यत्रं चरुम्। रुद्रौंऽर्यमा पूषा पंशुमान्तस्याः सोमों रुद्रो बृह्स्पितः पर्यसि वायः पयः सोमों वायुरिन्द्राग्नी मित्र इन्द्र आपो ब्रह्मं युमोंऽभिजिंत्ये त्वष्टां प्रजापंतिः प्रजाये पौर्णमास्या अमावास्यांया अगंत्ये विश्वे जित्यां अश्विनौ श्रुत्ये। ब्रह्म तदेतं विष्णुः स एतं वायः स एतदापुस्ताः। पितरो विश्वे वसंवोऽकामयन्त् मेति त एतन्निरंवपन्। आपोंऽकामयन्त् मेति ता एतन्निरंवपन्। इन्द्राग्नी अश्विनांवकामयेतां वेति तावेतन्निरंवपताम्। अहोरात्रे वा अंकामयेतामिति ते एतन्निरंवपताम्। अन्यत्रांकामयतेति स एतन्निरंवपत्। इन्द्राग्नी श्रैष्ठमिनद्रो इद्धः। अहिः सूर्योऽदित्ये विष्णंव प्रतिष्ठायें। सोमों युमः संमानानाम्। अग्निनौ रीरिषद्न्यत्रं रीरिषः ॥)॥६॥——[६]

अग्निर्न ऋध्यास्म नवोनवोऽग्निर्मित्रश्चन्द्रमाष्यद्॥६॥

अग्निर्नस्तन्नों वायुरिहंर्बुध्नियं ऋक्षा वा इयमथैतत्पौर्णमास्या अजो वा

एकंपात्सूर्यस्त्रिषंष्टिः॥६३॥ अग्निर्नः पातु प्रतिष्ठायै स्वाहेतिं॥

हरिः ओम्॥ ॥इति श्रीकृष्णयजुर्वेदीयतैत्तिरीयब्राह्मणे तृतीयाष्टके प्रथमः प्रपाठकः समाप्तः॥

॥द्वितीयः प्रश्नः॥

॥ तैत्तिरीयब्राह्मणे तृतीयाष्टके द्वितीयः प्रपाठकः॥

तृतीयंस्यामितो दिवि सोमं आसीत्। तङ्गांयत्र्याऽहंरत्। तस्यं पर्णमंच्छिद्यत। तत्पर्णोऽभवत्। तत्पर्णस्यं पर्णत्वम्। पर्णः। यत्पेर्णशाखयां वत्सानंपाकरोतिं। ब्रह्मणैवैनानपार्करोति। गायत्रो वै पर्णः। गायत्राः पशवंः॥१॥ तस्मात्रीणित्रीणि पर्णस्यं पलाशानि। त्रिपदां गायत्री। यत्पंर्णशाखया गाः प्राप्यंति। स्वयैवैनां देवतंया प्राप्यति। यङ्कामयेतापुशुः स्यादितिं। अपूर्णान्तस्मै शुष्कांग्रामाहंरेत्। अपशुरेव भंवति। यङ्कामयंत पशुमान्त्स्यादितिं। बहुपूर्णान्तस्मै बहुशाखामाहंरेत्। पृशुमन्तंमेवैनं करोति॥२॥ यत्प्राचीमा हरेंत्। देवलोकमिभ जीयेत्। यदुदीचीं मनुष्यलोकम्। प्राचीमुदीचीमा हरित। उभयौर्लोकयोरिभिजित्यै। इषे त्वोर्जे त्वेत्याह। इषमेवोर्जं यर्जमाने दधाति। वायवः स्थेत्यांह। वायुर्वा अन्तरिक्षस्याध्यंक्षाः। अन्तरिक्षदेवत्याः खलु वै पृशवः॥३॥ वायवं एवैनान्परिं ददाति। प्र वा एंनानेतदा कंरोति। यदाहं। वायवः स्थेत्युंपायवः स्थेत्यांह। यजंमानायैव पश्नुपं ह्वयते। देवो वंः सविता प्रापंयत्वित्यांह प्रसूँत्यै। श्रेष्ठंतमाय कर्मण इत्याह। यज्ञो हि श्रेष्ठंतमङ्कर्म। तस्मादेवमाह।

आप्यांयध्वमघ्रिया देवभागमित्यांह॥४॥

वृत्सेभ्यंश्च वा एताः पुरा मंनुष्येभ्यश्चाप्यांयन्त। देवेभ्यं एवैना इन्द्रायाप्यांययित। ऊर्जस्वतीः पर्यस्वतीरित्यांह। ऊर्जु हि पर्यः सम्भरंन्ति। प्रजावंतीरनमीवा अयक्ष्मा इत्यांह प्रजात्ये। मा वंः स्तेन ईशत् माऽघश्र स् इत्यांह गुप्त्यै। रुद्रस्यं हेतिः परि वो वृण्कित्यांह। रुद्रादेवैनांस्रायते। ध्रुवा अस्मिन्गोपंतौ स्यात बह्वीरित्यांह। ध्रुवा पुवास्मिन्बह्वीः करोति॥५॥

यजंमानस्य पृशून्पाहीत्यांह। पृशूनाङ्गोपीथायं। तन्मौत्सायं पृशव उपसमावंतन्ते। अनेधः सादयति। गर्भाणान्धृत्या अप्रंपादाय। तस्माद्गर्भाः प्रजानामप्रंपादुकाः। उपरीव निदंधाति। उपरीव हि सुवर्गो लोकः। सुवर्गस्यं लोकस्य समेष्ट्री॥६॥

पुशवंः करोति पुशवों देवभागमित्यांह करोति नवं च॥१॥ \blacksquare

देवस्यं त्वा सिवृतुः प्रस्व इत्यंश्वपुर्शुमादंते प्रसूत्यै। अश्विनौर्बाहुभ्यामित्यांह। अश्विनौ हि देवानांमध्वर्यू आस्तौम्। पूष्णो हस्तौभ्यामित्यांह यत्यै। यो वा ओषंधीः पर्वशो वेदं। नैनाः स हिनस्ति। प्रजापंतिवा ओषंधीः पर्वशो वेद। स एना न हिनस्ति। अश्वपृश्वा बर्हरच्छैति। प्राजापत्यो वा अश्वंः सयोनित्वायं॥७॥

ओषंधीनामहिर्सायै। यज्ञस्यं घोषद्सीत्यांह। यजंमान

एव र्यिन्दंधाति। प्रत्युंष्ट्र रक्षः प्रत्युंष्टा अरांतय इत्यांह। रक्षंसामपंहत्ये। प्रेयमंगाद्धिषणां बर्हिरच्छेत्यांह। विद्या वै धिषणां। विद्ययैवैनदच्छैंति। मनुंना कृता स्वधया वितष्टेत्यांह। मानवी हि पर्शुं स्वधाकृता॥८॥

त आवंहन्ति क्वयंः पुरस्तादित्यांह। शुश्रुवाश्सो वै क्वयंः। यज्ञः पुरस्तांत्। मुख्त एव यज्ञमा रेभते। अथो यदेतदुक्ता यतः कुतंश्चा हरंति। तत्प्राच्यां एव दिशो भंवति। देवेभ्यो जुष्टंमिह ब्र्हिरासद इत्यांह। ब्रहिषः समृद्धै। कर्मणोऽनंपराधाय। देवानां परिषूतम्सीत्यांह॥९॥

यद्वा इदिङ्कं चं। तद्देवानां परिषूतम्। अथो यथा वस्यंसे प्रतिप्रोच्याहेदङ्कंरिष्यामीति। एवमेव तदेष्वर्युर्देवेभ्यः प्रतिप्रोच्यं बर्हिर्दाति। आत्मनोऽहिर्स्सायै। यावंतः स्तम्बान्यंरिदिशेत्। यत्तेषांमुच्छिर्ष्यात्। अति तद्यज्ञस्यं रेचयेत्। एक स्तम्बं परिदिशेत्। तर्स्सर्वन्दायात्॥१०॥ यज्ञस्यानंतिरेकाय। वर्षवृद्धम्सीत्यांह। वर्षवृद्धा वा ओषंधयः। देवंबर्हिरित्यांह। देवेभ्यं एवैनंत्करोति। मा त्वाऽन्वङ्गा तिर्यगित्याहाहिर्स्सायै। पर्व ते राध्यास्मित्याहर्ध्ये। आच्छेत्ता ते मा रिष्मित्यांह। नास्यात्मनों मीयते। य एवं वेदं॥११॥

देवंबर्हिः शृतवंल्शुं विरोहेत्यांह। प्रजा वै ब्रहिः।

प्रजानां प्रजनंनाय। सहस्रंवल्शा वि वय रहेमेत्यांह। आशिषंमेवेतामा शास्ते। पृथिव्याः संपृचः पाहीत्यांह प्रतिष्ठित्ये। अयुंङ्गायुङ्गान्मुष्टीहुँनोति। मिथुन्त्वाय प्रजात्ये। सुसम्भृतां त्वा सम्भंरामीत्यांह। ब्रह्मणैवेन्त्सम्भंरति॥१२॥ अदित्ये रास्नाऽसीत्यांह। इयं वा अदितिः। अस्या

प्रवेन्द्रास्रां करोति। इन्द्राण्ये सन्नहंन्मित्यांह। इन्द्राणी वा अग्रे देवतांना समनहात। साऽऽभ्रांत्। ऋख्ये सन्नहाति। प्रजा वे बर्हिः। प्रजानामपंरावापाय। तस्मात्स्नावंसन्तताः प्रजा जांयन्ते॥१३॥

पूषा तें ग्रन्थिङ्गंश्रात्वित्यांह। पृष्टिमेव यजंमाने दधाति। स ते मास्थादित्याहाहि रंसायै। पृश्चात्प्राश्चमुपंगूहित। पृश्चाद्वै प्राचीन् रेतों धीयते। पृश्चादेवास्में प्राचीन् रेतों दधाति। इन्द्रंस्य त्वा बाहुभ्यामुद्यंच्छ् इत्याह। इन्द्रियमेव यजंमाने दधाति। बृह्स्पतेंर्मूर्भा हंग्मीत्यांह। ब्रह्म वे देवानां बृहस्पतिं:॥१४॥

ब्रह्मंणैवैनंद्धरित। उर्वन्तिरिक्षमिन्विहीत्यांह गत्यैं। देवङ्गमम्सीत्यांह। देवानेवैनंद्रमयित। अनंधः सादयित। गर्भाणान्धृत्या अप्रपादाय। तस्माद्गर्भाः प्रजानामप्रपादुकाः। उपरीव नि दंधाति। उपरीव हि सुंवर्गो लोकः। सुवर्गस्यं लोकस्य सम्ष्रि॥१५॥ स्योनित्वायं स्वधाकृताऽसीत्यांह दायाद्वेदं भरति जायन्ते बृहस्पतिः समध्ये॥२॥———[२]

पूर्वेद्युरिध्माब्र्हिः करोति। यज्ञमेवारभ्यं गृहीत्वोपंवसति। प्रजापंतिर्य्ज्ञमंसृजत। तस्योखे अंस्रश्सेताम्। यज्ञो वै प्रजापंतिः। यत्सांन्नाय्योखे भवंतः। यज्ञस्यैव तदुखे उपंदधात्यप्रस्रश्साय। शुन्धंध्वन्देव्यांय कर्मणे देवयुज्याया इत्यांह। देवयुज्यायां एवैनांनि शुन्धति। मात्रिश्वंनो घुर्मोऽसीत्यांह॥१६॥

अन्तरिक्षं वै मांतरिश्वंनो घर्मः। एषां लोकानां विधृत्यै। द्यौरंसि पृथिव्यंसीत्यांह। दिवश्च ह्येषा पृंथिव्याश्च सम्भृंता। यदुखा। तस्मादेवमांह। विश्वधाया असि पर्मेण धाम्नेत्यांह। वृष्टिवै विश्वधायाः। वृष्टिमेवावंरुन्धे। दःहंस्व मा ह्वारित्यांह धृत्यै॥१७॥

वसूनां प्वित्रंम्सीत्याह। प्राणा वै वस्वः। तेषां वा एतद्भागधेयम्। यत्पवित्रम्। तेभ्यं एवैनंत्करोति। शृतधार सहस्रंधार्मित्याह। प्राणेष्वेवायुर्दधाति सर्वृत्वायं। त्रिवृत्पंलाशशाखायाँन्दर्भमयं भवति। त्रिवृद्वे प्राणः। त्रिवृतंमेव प्राणं मध्यतो यजंमाने दधाति॥१८॥

सौम्यः पूर्णः संयोनित्वायं। साक्षात्प्वित्रंन्द्रभाः। प्राख्सायमधिनि दंधाति। तत्प्राणापानयां रूपम्। तिर्यक्प्रातः। तद्दर्शस्य रूपम्। दार्श्यक्ष ह्यंतदहंः। अत्रुं वै चन्द्रमाः। अत्रं प्राणाः। उभयंमेवोपैत्यजांमित्वाय॥१९॥

तस्माद्य स्वर्तः पवते। हुतः स्तोको हुतो द्रप्स इत्यांह् प्रतिष्ठित्यै। हुविषोऽस्कंन्दाय। न हि हुत इ स्वाहांकृत इस्कन्दिति। दिवि नाको नामाग्निः। तस्ये विप्रुषो भाग्धेयम्। अग्नये बृह्ते नाकायेत्यांह। नाकंमेवाग्निं भाग्धेयेन समर्धयति। स्वाहा द्यावांपृथिवीभ्यामित्यांह। द्यावांपृथिव्योरेवैनत्प्रतिष्ठापयति॥२०॥

प्वित्रंवत्यानंयित। अपाश्चैवौषंधीनां च रस् संस्ंजित। अथो ओषंधीष्वेव प्शून्प्रतिष्ठापयित। अन्वारभ्य वाचं यच्छिति। यज्ञस्य धृत्यै। धारयंन्नास्ते। धारयंन्त इव हि दुहन्ति। कामंधुक्ष इत्याहातृतीयंस्यै। त्रयं इमे लोकाः। इमानेव लोकान्यजंमानो दुहे॥२१॥

अमूमिति नामं गृह्णाति। भुद्रमेवासाङ्कर्मा विष्केरोति। सा विश्वायुः सा विश्वव्यंचाः सा विश्वकर्मेत्यांह। इयं वे विश्वायुः। अन्तरिक्षं विश्वव्यंचाः। असौ विश्वकर्मा। इमानेवैताभिर्लोकान् यंथापूर्वन्दुंहे। अथो यथां प्रदात्रे पुण्यंमाशास्ते। एवमेवैनां एतदुपंस्तौति। तस्मात्प्रादादित्युन्नीय वन्दंमाना उपस्तुवन्तंः पृशून्दुंहन्ति॥२२॥

बहु दुग्धीन्द्रांय देवेभ्यों ह्विरिति वाचं विसृंजते। यथादेवतमेव प्रसौति। दैव्यंस्य च मानुषस्यं च व्यावृंत्यै। त्रिराह। त्रिषंत्या हि देवाः। अवांचं यमोऽनंन्वार्भ्योत्तराः। अपरिमितमेवावं रुन्धे। न दारुपात्रेणं दुह्यात्। अग्निवद्वे दारुपात्रम्। यद्दारुपात्रेणं दुह्यात्॥२३॥

यातयाँम्ना ह्विषां यजेत। अथो खल्बांहुः। पुरोडाशंमुखानि वै ह्वी १षि। नेत इंतः पुरोडाश १ ह्विषो यामोऽस्तीति। काममेव दांरुपात्रेणं दुह्यात्। शूद्र एव न दुंह्यात्। असंतो वा एष सम्भूतः। यच्छूद्रः। अहंविरेव तदित्यांहुः। यच्छूद्रो दोग्धीतिं॥२४॥

अग्निहोत्रमेव न दुंह्याच्छूद्रः। तिष्क नोत्पुनिन्ति। यदा खलु वै पिवित्रमृत्येति। अथ तिष्कृतिरिति। सम्पृच्यध्वमृतावरीरित्याह। अपाश्चैवौषंधीनां च रस् स् सः सृंजिति। तस्माद्पाश्चौषंधीनां च रस्मुपंजीवामः। मन्द्रा धनंस्य सात्य इत्याह। पृष्टिमेव यजंमाने दधाति। सोमेन त्वातंनच्मीन्द्रांय दधीत्यांह॥२५॥

सोमंमेवेनंत्करोति। यो वे सोमं भक्षयित्वा। संवृत्सरश् सोमृत्र पिबंति। पुनुर्भक्ष्यौऽस्य सोमपीथो भंवति। सोमः खलु वे सान्नाय्यम्। य एवं विद्वान्त्सान्नाय्यं पिबंति। अपुनुर्भक्ष्यौऽस्य सामपीथो भंवति। न मृन्मयेनापि दध्यात्। यन्मृन्मयोनापिद्ध्यात्। पितृदेवत्यई स्यात्॥२६॥

अयुस्पात्रेणं वा दारुपात्रेण वाऽपिं दधाति। तिष्कि सदेवम्। उदन्वद्भवति। आपो वै रक्षोघ्नीः। रक्षंसामपंहत्यै। अदंस्तमसि विष्णंवे त्वेत्यांह। यज्ञो वै विष्णुंः। यज्ञायैवैनददंस्तं करोति। विष्णों ह्व्यः रेक्ष्रस्वेत्यांह् गृष्ट्यैं। अनंधः सादयति। गर्भाणान्धृत्या अप्रंपादाय। तस्माद्गर्भाः प्रजानामप्रंपादुकाः। उपरीव निदंधाति। उपरीव हि सुवर्गो लोकः। सुवर्गस्यं लोकस्य समष्ट्री॥२७॥

असीत्यांह धृत्ये यजंमाने दधात्यजांमित्वाय स्थापयति दुहे दुहन्ति दुह्याद्दोग्धीति दधीत्यांह स्यात्सादयति पश्चं च॥३॥————[3]

कर्मणे वान्देवेभ्यः शकेयमित्यांह् शत्त्यौ। यज्ञस्य वै सन्तंतिमनुं प्रजाः पृशवो यजंमानस्य सन्तांयन्ते। यज्ञस्य विच्छित्तमनुं प्रजाः पृशवो यजंमानस्य विच्छिद्यन्ते। यज्ञस्य सन्तंतिरसि यज्ञस्यं त्वा सन्तंत्ये स्तृणामि सन्तंत्ये त्वा यज्ञस्येत्याहंवनीयात्सन्तंनोति। यजंमानस्य प्रजायै पश्नाः सन्तंत्ये। अपः प्रणंयति। श्रद्धा वा आपः। श्रद्धामेवारभ्यं प्रणीय प्रचरति। अपः प्रणंयति। यज्ञो वा आपः॥२८॥ यज्ञमेवारभ्यं प्रणीय प्रचरति। अपः प्रणंयति। यज्ञो वा आपः॥२८॥ यज्ञमेवारभ्यं प्रणीय प्रचरति। अपः प्रणंयति। अपः प्रणंयति। वज्रो वा आपः। वज्रमेव भ्रातृंव्येभ्यः प्रहृत्यं प्रणीय प्रचरति। अपः प्रणंयति। आपो वै रेक्षोघीः। रक्षंसामपहत्ये। अपः प्रणंयति। आपो वै देवानां प्रियन्थामं। देवानांमेव प्रियन्थामं प्रणीय प्रचरति॥२९॥

अपः प्रणंयति। आपो वै सर्वा देवताः। देवतां प्रवारभ्यं प्रणीय प्रचंरति। वेषांय त्वेत्यांह। वेषाय ह्येनदादत्ते। प्रत्युष्ट् रक्षः प्रत्युष्टा अरातय इत्यांह। रक्षंसामपंहत्यै। धूरसीत्यांह। एष वै धुर्योऽग्निः। तं यदनुंपस्पृश्यातीयात्॥३०॥

अध्वर्यं च यजंमानं च प्रदंहत्। उपस्पृश्यात्येति। अध्वर्याश्च यजंमानस्य चाप्रंदाहाय। धूर्व तं यौस्मान्धूर्वति तं धूर्व यं व्यं धूर्वाम् इत्यांह। द्वौ वाव पुरुषो। यश्चैव धूर्वति। यश्चैनन्धूर्वति। तावुभौ शुचाऽपंयति। त्वन्देवानांमसि सिन्नेतमं पप्रिंतमं जुष्टंतमं विह्नेतमन्देवहूर्तम्मित्यांह। यथायजुरेवैतत्॥३१॥

अहुंतमिस हिव्धानिमित्याहानाँत्यै। द १ हंस्व मा ह्यारित्यांह् धृत्यैं। मित्रस्यं त्वा चक्षुंषा प्रेक्ष इत्यांह मित्रत्वायं। मा भेमां संविक्था मा त्वां हि १ सिष्मित्याहाहि १ सायै। यद्वे किं च वातो नाभि वाति। तत्सर्वं वरुणदेवत्यम्। उरु वातायेत्यांह। अवारुणमेवनेत्करोति। देवस्यं त्वा सिवृतुः प्रस्व इत्यांह् प्रसूत्यै। अश्विनौर्बाहुभ्यामित्यांह॥३२॥

अश्विनौ हि देवानांमध्वर्यू आस्तौम्। पूष्णो हस्तौभ्यामित्यांह् यत्यै। अग्नये जुष्टं निर्वपामीत्यांह। अग्नयं एवैनां जुष्टं निर्वपति। त्रिर्यज्ञंषा। त्रयं इमे लोकाः। एषां लोकानामास्यै। तूष्णीं चंतुर्थम्। अपेरिमितमेवावंरुन्थे। स एवमेवानंपूर्वश् हवीश्षि निर्वपति॥३३॥

इदन्देवानांमिदमुं नः सहेत्यांह् व्यावृंत्यै। स्फात्यै त्वा नारांत्या इत्यांह गुप्त्यै। तमंसीव वा एषोंऽन्तश्चंरति। यः परीणिहिं। सुवरिभ वि ख्येषं वैश्वान्रश्योतिरित्यांह। सुवरेवाभि वि पंश्यित वैश्वान्रश्योतिः। द्यावांपृथिवी ह्विषि गृहीत उदंवेपेताम्। द १ हंन्तान्दुर्या द्यावांपृथिव्योरित्यांह। गृहाणां द्यावांपृथिव्योर्धृत्यै। उवंन्तिरिक्षमन्विहीत्यांह गत्यै। अदित्यास्त्वोपस्थे सादयामीत्यांह। इयं वा अदितिः। अस्या एवेनंदुपस्थे सादयित। अग्ने ह्व्य १ रिक्षम्वत्यांह गृह्यै॥३४॥ यक्षो वा आपे प्रामं प्राणीय प्रवंत्त्यतीयादेतद्वाहुन्यामित्यांह ह्वीरिष् निवंपित गत्ये च्त्वारि चा४॥ [४]

इन्द्रों वृत्रमंहन्। सोंऽपः। अभ्यंम्रियत। तासां यन्मेध्यं यिज्ञय सदेवमासीत्। तदपोदंक्रामत्। ते दुर्भा अभवन्। यद्दर्भेर्प उंत्पुनाति। या एव मेध्यां यिज्ञयाः सदेवा आपः। ताभिरेवैना उत्पुनाति। द्वाभ्यामृत्पुनाति॥३५॥

द्विपाद्यजंमानः प्रतिष्ठित्यै। देवो वंः सवितोत्पुनात्वित्यांह। सवितृप्रंसूत एवेना उत्पुनाति। अच्छिंद्रेण प्वित्रेणेत्यांह। असौ वा आंदित्योऽच्छिंद्रं प्वित्रम्। तेनैवेना उत्पुनाति। वसोः सूर्यस्य र्शिमभिरित्यांह। प्राणा वा आपंः। प्राणा वसंवः। प्राणा रश्मयंः॥३६॥

प्राणैरेव प्राणान्त्सं पृंणिक्ति। सावित्रियर्चा। सवितृप्रंस्तं मे कर्मासदिति। सवितृप्रंस्तमेवास्य कर्म भवति। पच्छो गायित्रिया त्रिष्णमृद्धत्वायं। आपो देवीरग्रेपुवो अग्रेगुव् इत्याह। रूपमेवासामेतन्मंहिमानं व्याचेष्टे। अग्रं इमं यज्ञं नंयताग्रे यज्ञपंतिमित्याह। अग्रं एव यज्ञं नंयन्ति। अग्रे यज्ञपंतिम्॥३७॥

युष्मानिन्द्रोऽवृणीत वृत्रतूर्ये यूयमिन्द्रमवृणीध्वं वृत्रतूर्य इत्यांह। वृत्र १ हिन्ष्यिन्निन्द्र आपो वव्रे। आपो हेन्द्रं विव्रेर। संज्ञामेवासांमेतत्सामानं व्याचेष्टे। प्रोक्षिताः स्थेत्यांह। तेनापः प्रोक्षिताः। अग्नये वो जुष्टं प्रोक्षांम्युग्नीषोमांभ्यामित्यांह। यथादेवतमेवनान्प्रोक्षंति। त्रिः प्रोक्षंति। त्र्यांवृद्धि युज्ञः॥३८॥

अथो रक्षंसामपंहत्यै। शुन्धंध्वं दैव्यांय कर्मणे देवयुज्याया इत्यांह। देवयुज्यायां एवैनांनि शुन्धति। त्रिः प्रोक्षंति। त्र्यांवृद्धि युज्ञः। अथो मेध्यत्वायं। अवंधूत्र रक्षोऽवंधूता आरातय इत्यांह। रक्षंसामपंहत्यै। अदित्यास्त्वगुसीत्यांह। इयं वा अदितिः॥३९॥

अस्या पृवैनृत्त्वचं करोति। प्रतिं त्वा पृथिवी वेत्त्वित्यांह् प्रतिष्ठित्ये। पुरस्तांत्प्रतीचीनंग्रीवृमुत्तंरलोमोपंस्तृणाति मेध्यत्वायं। तस्मांत्पुरस्तांत्प्रत्यश्चः पृशवो मेध्मुपंतिष्ठन्ते। तस्मांत्पुजा मृगं ग्राहुंकाः। यज्ञो देवेभ्यो निलायत। कृष्णो रूपं कृत्वा। यत्कृष्णाजिने ह्विरंध्यवहन्तिं। यज्ञादेव तद्यज्ञं प्रयुंङ्के। ह्विषोऽस्कंन्दाय॥४०॥

अधिषवंणमसि वानस्पत्यमित्यांह। अधिषवंणमेवैनंत्करोति। प्रति त्वाऽदित्यास्त्वग्वेत्त्वित्यांह सयत्वायं। अग्नेस्तनूरसीत्यांह। अग्नेर्वा एषा तुन्। यदोषंधयः। वाचो विसर्जन्मित्यांह। यदा हि प्रजा ओषंधीनामुश्जन्ति। अथ वाचं विसृंजन्ते। देववीतये त्वा गृह्णामीत्यांह॥४१॥

देवतांभिरेवैनृत्समंध्यति। अद्रिरिस वानस्पृत्य इत्यांह। ग्रावांणमेवैनंत्करोति। स इदं देवेभ्यों हृव्य स्पृशमिं शिमुष्वेत्यांह् शान्त्यैं। हिवेष्कृदेहीत्यांह। य एव देवाना हे हिव्ष्कृतंः। तान् ह्वंयति। त्रिह्वंयति। त्रिषंत्या हि देवाः। इषुमावदोर्जुमावदेत्यांह॥४२॥

इषंमेवोर्जं यजंमाने दधाति। द्युमद्वंदत व्य संङ्घातं जेष्मेत्यांह् भ्रातृंव्याभिभूत्यै। मनोः श्रृद्धादंवस्य यजंमानस्यासुर्घ्नी वाक्। यज्ञायुधेषु प्रविष्टाऽऽसीत्। तेऽसुरा यावंन्तो यज्ञायुधानांमुद्धदंतामुपाशृंण्वन्। ते परांभवन्। तस्मात्स्वानां मध्येंऽवृसायं यजेत। यावंन्तोऽस्य भ्रातृंव्या यज्ञायुधानांमुद्धदंतामुप ते परां भवन्ति। उचैः समाहंन्त् वा आंह् विजित्यै॥४३॥

वृङ्क एषामिन्द्रियं वीर्यम्। श्रेष्ठं एषां भवति। वर््षवृद्धमिस् प्रति त्वा वर््षवृद्धं वेत्त्वित्याह। वर््षवृद्धा वा ओषंधयः। वर््षवृद्धा इषीकाः समृद्धे। यज्ञ र रक्षार्स्यनु प्राविंशन्। तान्यस्रा पशुभ्यो निरवांदयन्त। तुषैरोषंधीभ्यः। परांपूतर् रक्षः परांपूता अरांतय इत्यांह। रक्षंसामपंहत्यै॥४४॥

रक्षंसां भागोंऽसीत्यांह। तुषैंरेव रक्षा रसि निरवंदयते। अप

उपस्पृशित मेध्यत्वायं। वायुर्वो विविन्कित्यांह। प्वित्रं वै वायुः। पुनात्येवैनान्। अन्तिरेक्षादिव वा एते प्रस्कन्दन्ति। ये शूर्णात्। देवो वंः सिवता हिरंण्यपाणिः प्रतिंगृह्णात्वित्यांह् प्रतिष्ठित्ये। ह्विषोऽस्कन्दाय। त्रिष्फलीकर्त्वा आह। त्र्यावृद्धि यज्ञः। अथो मेध्यत्वायं॥४५॥

अवंधूत् रक्षोऽवंधूत् अरांतय इत्यांह। रक्षंसामपंहत्यै। अदित्यास्त्वग्सीत्यांह। इयं वा अदितिः। अस्या एवैन्त्वचं करोति। प्रतिं त्वा पृथिवी वेत्त्वत्यांह प्रतिंष्ठित्यै। पुरस्तांत्प्रतीचीनंग्रीवृमुत्तंरलोमोपंस्तृणाति मेध्यत्वायं। तस्मांत्पुरस्तांत्प्रत्यश्चः पृशवो मेध्मुपंतिष्ठन्ते। तस्मांत्प्रजा मृगं ग्राहुंकाः। युज्ञो देवेभ्यो निलायत॥४६॥

कृष्णों रूपं कृत्वा। यत्कृष्णाजिने ह्विरंधिपिनष्टिं। यज्ञादेव तद्यज्ञं प्रयुंक्के। ह्विषोऽस्केन्दाय। द्यावांपृथिवी सहास्तांम्। ते शंम्यामात्रमेकमहुर्वेता श्रम्यामात्रमेकमहंः। दिवः स्कंम्भिनरंसि प्रति त्वाऽदित्यास्त्वग्वेत्त्वत्यांह। द्यावांपृथिव्योवीत्यैं। धिषणांऽसि पर्वत्या प्रतिं त्वा दिवः स्कंम्भिनवेत्त्वत्यांह। द्यावांपृथिव्योर्विधृत्यै॥४७॥

धिषणांऽसि पार्वतेयी प्रतिं त्वा पर्वतिर्वेत्त्वत्यांह। द्यावांपृथिव्योर्धृत्यैं। देवस्यं त्वा सिवतुः प्रंसुव इत्यांह प्रसूँत्यै। अश्विनौर्बाहुभ्यामित्यांह। अश्विनौ हि देवानांमध्वर्यू आस्तौम्। पूष्णो हस्तौभ्यामित्यांहु यत्त्यै। अधिवपामीत्यांह। यथादेवतमेवेनानधि वपति। धान्यमिस धिनुहि देवानित्यांह। एतस्य यजुंषो वीर्येण॥४८॥

याव्देकां देवतां कामयंते याव्देकां। ताव्दाहुंतिः प्रथते। न हि तदस्ति। यत्तावंदेव स्यात्। यावंज्जुहोतिं। प्राणायं त्वाऽपानाय् त्वेत्यांह। प्राणानेव यजंमाने दधाति। दीर्घामनु प्रसितिमायुंषे धामित्यांह। आयुंरेवास्मिन्दधाति। अन्तरिक्षादिव वा एतानि प्रस्केन्दिन्ति। यानि दृषदंः। देवो वंः सिवता हिरंण्यपाणिः प्रतिंगृह्णात्वित्यांह प्रतिष्ठित्यै। ह्विषोऽस्केन्दाय। असंवपन्ती पिश्षाणूनिं कुरुतादित्यांह मेध्यत्वायं॥४९॥

धृष्टिंरसि ब्रह्मं युच्छेत्यांह् धृत्यैं। अपाँग्नेऽग्निमामादं जिह् निष्क्रव्यादर्श् सेधा देवयजं वहेत्यांह। य एवामात्क्रव्यात्। तमंपहत्यं। मेध्येऽग्नौ कृपालुमुपंदधाति। निर्दंग्धर् रक्षो निर्दंग्धा अरांतय इत्यांह। रक्षार्श्रस्येव निर्दंहित। अग्निवत्युपंदधाति। अस्मिन्नेव लोके ज्योतिंधत्ते। अङ्गांरमिधं वर्तयति॥५०॥

अन्तरिक्ष एव ज्योतिर्धत्ते। आदित्यमेवामुर्ष्मिल्रौंके ज्योतिर्धत्ते। ज्योतिष्मन्तोऽस्मा इमे लोका भवन्ति। य एवं वेदं। ध्रुवमंसि पृथिवीं हुर्हेत्यांह। पृथिवीमेवैतेनं हुरहित। धर्त्रमंस्युन्तिरक्षं हुर्हेत्यांह। अन्तिरिक्षमेवैतेनं हरहित। धुरुणमसि दिवं हुर्हेत्यांह। दिवंमेवैतेनं हरहित॥५१॥

धर्मासि दिशों हुर्हेत्यांह। दिशं एवैतेनं हर्हति। इमानेवैतैर्लोकान्हर्हति। हर्हन्तेऽस्मा इमे लोकाः प्रजयां पश्मिः। य एवं वेदं। त्रीण्यग्नें कृपालान्युपंदधाति। त्रयं इमे लोकाः। एषां लोकानामास्यै। एक्मग्नें कृपालमुपं दधाति। एकं वा अग्नें कपालं पुरुषस्य सम्भवंति॥५२॥

अथ् द्वे। अथ् त्रीणिं। अथं चृत्वारिं। अथाष्ट्री। तस्माद्ष्टाकंपालं पुरुषस्य शिरंः। यदेवं कृपालांन्युप्दधाति। यज्ञो वै प्रजापितः। यज्ञमेव प्रजापितः सङ्स्करोति। आत्मानंमेव तत्सङ्स्करोति। त॰ सङ्स्कृतमात्मानम्॥५३॥ अमुष्मिल्लांकऽनु परैति। यद्ष्टावृपदधाति। गायत्रिया तत्सिम्मितम्। यन्नवं। त्रिवृता तत्। यद्दशं। विराजा तत्। यदेकांदश। त्रिष्टुभा तत्। यद्वादंश॥५४॥

जगंत्या तत्। छन्देः सम्मितानि स उपदर्धत्कपालांनि। इमाल्राँकानंनुपूर्वन्दिशो विधृत्ये दृश्हित। अथार्युः प्राणान्यजां पृशून् यजंमाने दधाति। सृजातानंस्मा अभितो बहुलान्कंरोति। चितः स्थेत्यांह। यथायजुरेवैतत्। भृगूंणामङ्गिरसान्तपंसा तप्यध्वमित्यांह। देवतांनामेवैनांनि तपंसा तपति। तानि ततः सङ्स्थिते। यानि घुर्मे कृपालांन्युपचिन्वन्तिं वेधस् इति चतुंष्पदयुर्चा वि मुंश्चति। चतुंष्पादः पृशवः। पृशुष्वेवोपरिष्टात्प्रतिं तिष्ठति॥५५॥

वृर्त्यृति दिवंमेवेतेनं दृ रहित सुम्भवंति तर सङ्स्कृतमात्मानं द्वादंश सङ्स्थिते त्रीणि च॥७॥ $[\mathcal{G}]$

देवस्यं त्वा सिवतुः प्रम्व इत्यां प्रम्ति। अश्विनौंर्बाहुभ्यामित्यां ह। अश्विनौ हि देवानां मध्वर्यू आस्ताम। पूष्णो हस्ताभ्यामित्यां हु यत्यै। सं वंपामीत्यां ह। यथादेवतमे वैनां नि संवंपति। समापो अद्भिरंग्मत् समोषंधयो रसेनेत्यां ह। आपो वा ओषंधीर्जिन्वन्ति। ओषंधयोऽपो जिन्वन्ति। अन्या वा एतासां मन्या जिन्वन्ति॥ ५६॥

तस्मदिवमाह। स॰ रेवतीर्जगंतीभिर्मध्रंमतीर्मध्रंमतीभिः सृज्यध्वमित्याह। आपो वै रेवतीः। पृशवो जगंतीः। ओषंधयो मध्रंमतीः। आप ओषंधीः पृशून्। तानेवास्मां एक्धा स्॰सृज्यं। मध्रंमतः करोति। अद्भः परि प्रजांताः स्थ समद्भः पृंच्यध्वमितिं पूर्याप्लांवयति। यथा सुवृष्ट इमामंनुविसृत्यं॥५७॥

आप् ओषंधीर्म्हयंन्ति। ताहगेव तत्। जनंयत्यै त्वा संयौमीत्याह। प्रजा एवेतेनं दाधार। अग्नयं त्वाऽग्नीषोमांभ्यामित्यांह् व्यावृत्त्यै। मुखस्य शिरोऽसीत्यांह। यज्ञो वै मुखः। तस्यैतच्छिरंः। यत्पुंरोडाशंः। तस्मादेवमांह॥५८॥

घुर्मोऽसि विश्वायुरित्यांह। विश्वमेवायुर्यजंमाने दधाति। उरु प्रथस्वोरु ते युज्ञपंतिः प्रथतामित्यांह। यजंमानमेव प्रजयां पृश्निः प्रथयति। त्वचं गृह्णीष्वेत्यांह। सर्वमेवैन् सतंनुं करोति। अथाप आनीय परिमार्ष्टि। मा स्म एव तत्त्वचं दधाति। तस्मात्त्वचा मा सं छन्नम्। घुर्मो वा एषोऽशान्तः॥५९॥

अर्धमासें ऽर्धमासे प्रवृंज्यते। यत्पुंरोडाशंः। स ईंश्वरो यजंमान श्रुचा प्रदहंः। पर्यग्नि करोति। पृशुमेवैनंमकः। शान्त्या अप्रंदाहाय। त्रिः पर्यग्नि करोति। त्र्यांवृद्धि युज्ञः। अथो रक्षंसामपंहत्यै। अन्तरित् रक्षोऽन्तरिता अरातय इत्यांह॥६०॥

रक्षंसाम्नतर्हित्यै। पुरोडाशं वा अधिश्रित्र रक्षा इस्यजिघा स्म। दिवि नाको नामाश्री रक्षोहा। स एवास्माद्रक्षा स्यपंहन्। देवस्त्वं सिवता श्रंपयत्वित्यंह। सिवतृप्रंसूत एवैन इस्यपंति। वर्षिष्ठे अधि नाक इत्यंह। रक्षंसामपहत्यै। अग्निस्तं तुवं माऽतिंधागित्याहाऽनंतिदाहाय। अग्ने ह्व्य रक्षंस्वत्यंह गृत्यै॥६१॥

अविंदहन्तः श्रपयतेति वाचं विसृंजते। यज्ञमेव ह्वी १ ष्यंभिव्याहृत्य प्रतंनुते। पुरोरुचमविंदाहाय शृत्यें करोति। मुस्तिष्को वै पुरोडाशंः। तं यन्नाभिं वासर्येत्। आविर्मस्तिष्केः स्यात्। अभिवांसयति। तस्माद्गुहां मुस्तिष्केः। भस्मंनाऽभिवांसयति। तस्मान्मा १ सेनास्थिं

छन्नम्॥६२॥

वेदेनाभिवांसयित। तस्मात्केशैः शिरंश्छुन्नम्। अखंलितभावुको भवित। य एवं वेदं। पृशोर्वे प्रतिमा पुरोडाशंः। स नायुजुष्कंमिभवास्यंः। वृथेव स्यात्। ईश्वरा यजंमानस्य पृशवः प्रमेतोः। सं ब्रह्मणा पृच्युस्वेत्यांह। प्राणा वै ब्रह्मं॥६३॥

प्राणाः प्रावंः। प्राणेरेव प्रान्त्सम्पृणिक्ति। न प्रमायंका भवन्ति। यजंमानो वै पुरोडाशंः। प्रजा प्रावः पुरीषम्। यदेवमंभिघारयंति। यजंमानमेव प्रजयां प्राभिः समर्धयति। देवा वै ह्विर्भृत्वाऽब्रुंवन्। कस्मिन्निदं म्रेक्ष्यामह् इतिं। सौंऽग्निरंब्रवीत्॥६४॥

मियं तुनः सं निधंध्वम्। अहं वृस्तं जंनियष्यामि। यस्मिन्मृक्ष्यध्व इति। ते देवा अग्नौ तुनः सन्त्र्यंदधत। तस्मांदाहः। अग्निः सर्वा देवता इति। सोऽङ्गारेणापः। अभ्यंपातयत्। ततं एकतोंऽजायत। स द्वितीयंमभ्यंपातयत्॥६५॥ ततौं द्वितोंऽजायत। स तृतीयंमभ्यंपातयत्। ततिस्त्रितोंऽजायत। यद्न्योऽजांयन्त। तदाप्यानांमाप्यत्वम्। यदात्मभ्योऽजांयन्त। तदात्यानांमात्म्यत्वम्। ते देवा आप्येष्वंमृजत। आप्या अमृजत् सूर्याभ्यदिते। सूर्याभ्यदितः सूर्याभिनिम्रुक्ते॥६६॥ सूर्याभिनिम्रुक्तः कुन्खिनि। कुन्खी श्यावदंति। श्यावदंत्रग्रदिधिषौ। अग्रदिधिषः परिवित्ते। परिवित्तो

वीर्हणि। वीर्हा ब्रह्महणि। तद्वेह्महणुं नात्येच्यवत। अन्तर्वेदि निनयत्यवंरुद्धै। उल्मुकेनाभि गृह्णाति शृतत्वायं। शृतकामा इव हि देवाः॥६७॥

अन्या जिंन्वन्त्यन् विसृत्येवमाहाशाँन्त आह् गुत्यें छुन्नं ब्रह्माँब्रवीद्वितीयंमुभ्यंपातयृत्सूर्यांभिनिम्रुक्ते देवाः॥८॥

देवस्यं त्वा सिवृतुः प्रस्व इति स्प्यमादंते प्रसूँत्यै। अश्विनौर्बाहुभ्यामित्यांह। अश्विनौ हि देवानांमध्वर्यू आस्तौम्। पूष्णो हस्तौभ्यामित्यांहु यत्यै। आदंद इन्द्रंस्य बाहुरंसि दक्षिण इत्यांह। इन्द्रियमेव यजंमाने दधाति। सहस्रंभृष्टिः शततेजा इत्यांह। रूपमेवास्यैतन्मंहिमानं व्याचंष्टे। वायुरंसि तिग्मतेजा इत्यांह। तेजो व वायुः॥६८॥ तेजं प्वास्मिन्दधाति। विषाद्वै नामांसुर आसीत्। सोऽिबभेत्। यज्ञेनं मा देवा अभिभविष्यन्तीति। स पृथिवीम्भ्यंवमीत्। सा मेध्याऽभंवत्। अथो यदिन्द्रों वृत्रमहन्ं। तस्य लोहितं पृथिवीमनु व्यंधावत्। सा मेध्याऽभंवत्। पृथिवि देवयजनीत्यांह॥६९॥

मेध्यांमेवैनां देवयर्जनीं करोति। ओषंध्यास्ते मूलं मा हिर्श्सिष्मित्यांह। ओषंधीनामहिर्श्सायै। वृज्ञं गंच्छ गोस्थानमित्यांह। छन्दार्श्से वै वृज्ञो गोस्थानंः। छन्दार्श्स्येवास्में वृज्ञं गोस्थानं करोति। वर्षंतु ते द्यौरित्यांह। वृष्टिर्वे द्यौः। वृष्टिंमेवावं रुन्धे। बुधान देव सवितः परमस्यां परावतीत्यांह॥७०॥

द्वौ वाव पुरुषो। यं चैव द्वेष्टिं। यश्चैनं द्वेष्टिं। तावुमौ बंध्नाति पर्मस्यां परावितं शतेन पाशैंः। योंऽस्मान्द्वेष्टि यं चं व्यं द्विष्मस्तमतो मा मौगित्याहानिं मुक्त्ये। अररुर्वे नामां सुर आंसीत्। स पृंथिव्यामुपं मुप्तोऽशयत्। तं देवा अपंहतोऽररुः पृथिव्या इतिं पृथिव्या अपाँ प्रन्। भ्रातृं व्यो वा अरर्रुः। अपंहतोऽरुरुः पृथिव्या इति यदाहं॥७१॥

भ्रातृंव्यमेव पृथिव्या अपंहन्ति। तेंऽमन्यन्त। दिवं वा अयमितः पंतिष्यतीतिं। तम्ररुंस्ते दिवं माऽस्कानितिं दिवः पर्यंबाधन्त। भ्रातृंव्यो वा अरुरुंः। अरुरुंस्ते दिवं मा स्कानिति यदाहं। भ्रातृंव्यमेव दिवः परिंबाधते। स्तम्बयुजुर्हंरति। पृथिव्या एव भ्रातृंव्यमपहन्ति। द्वितीय हरति॥७२॥

अन्तरिक्षादेवेन्मपंहन्ति। तृतीयर् हरति। दिव एवेन्मपंहन्ति। तूष्णीं चंतुर्थर हंरति। अपंरिमितादेवेन्मपंहन्ति। असुराणां वा इयमग्रं आसीत्। यावदासीनः परापश्यंति। तावंद्देवानाम्। ते देवा अंब्रुवन्। अस्त्वेव नोऽस्यामपीति॥७३॥

क्यंन्नो दास्यथेतिं। यावंत्स्वयं पंरिगृह्णीथेतिं। ते वसंवस्त्वेतिं दक्षिणतः पर्यगृह्णन्। रुद्रास्त्वेतिं पृश्चात्। आदित्यास्त्वेत्यंत्तर्तः। तेंऽग्निना प्राञ्चोंऽजयन्। वसुंभिदिक्षिणा। रुद्रैः प्रत्यर्ञ्चः। आदित्यैरुदंश्चः। यस्यैवं विदुषो वेदिं

परिगृह्णन्तिं॥ ७४॥

भवंत्यात्मनां। परांऽस्य भ्रातृंव्यो भवति। देवस्यं सिवृतुः स्व इत्यांह् प्रसूत्ये। कर्म कृण्वन्ति वेधस् इत्यांह। इषितः हि कर्म क्रियतें। पृथिव्ये मेध्यं चामेध्यं च व्युदंक्रामताम्। प्राचीनंमुदीचीनं मेध्यम्। प्रतीचीनं दक्षिणाऽमेध्यम्। प्राचीमुदीचीं प्रवृणां करोति। मेध्यांमेवैनां देव्यजनीं करोति॥७५॥

प्राश्चौ वेद्य सावुन्नयित। आह्वनीयंस्य परिगृहीत्यै। प्रतीची श्रोणीं। गार्हपत्यस्य परिगृहीत्यै। अथो मिथुन्त्वायं। उद्धंन्ति। यदेवास्यां अमेध्यम्। तदपंहन्ति। उद्धंन्ति। तस्मादोषंधयः पराभवन्ति॥७६॥

मूलं छिनत्ति। भ्रातृंव्यस्यैव मूलं छिनत्ति। मूलं वा अतितिष्ठद्रक्षार्स्यनृत्यिपते। यद्धस्तेन छिन्द्यात्। कुन्खिनीः प्रजाः स्युः। स्प्येनं छिनत्ति। वज्रो वै स्प्यः। वज्रेणैव यज्ञाद्रक्षार्स्यपंहन्ति। पितृदेवत्याऽतिंखाता। इयंतीं खनति॥७७॥

प्रजापंतिना यज्ञमुखेन सम्मिताम्। वेदिर्देवेभ्यो निलायत। तां चतुरङ्गुलेऽन्वंविन्दन्। तस्माँचतुरङ्गुलं खेयाँ। चतुरङ्गुलं खंनति। चतुरङ्गुले ह्योषंधयः प्रतितिष्ठंन्ति। आ प्रंतिष्ठायैं खनति। यज्ञंमानमेव प्रंतिष्ठां गंमयति। दक्षिणतो वर्षीयसीं करोति। देवयर्जनस्यैव रूपमंकः॥७८॥

पुरीषवतीं करोति। प्रजा वै प्शवः पुरीषम्। प्रजयैवैनं प्शिभः पुरीषवन्तं करोति। उत्तरं परिग्राहं परिगृह्णाति। एतावती वै पृथिवी। यावती वेदिः। तस्यां एतावतं एव भ्रातृंव्यं निर्भज्यं। आत्मन् उत्तरं परिग्राहं परिगृह्णाति। ऋतमंस्यृत्सदंनमस्यृत्श्रीर्सीत्यांह। यथायजुरेवैतत्॥७९॥

कूरिमंव वा एतत्कंरोति। यद्वेदिं करोतिं। धा अंसि स्वधा असीतिं योयुप्यते शान्त्यैं। उर्वी चासि वस्वीं चासीत्यांह। उर्वीमेवैनां वस्वीं करोति। पुरा क्रूरस्यं विसृपों विरिष्शिन्नित्यांह मेध्यत्वायं। उदादायं पृथिवीं जीरदांनुर्यामेरंयश्चन्द्रमंसि स्वधाभिरित्यांह। यदेवास्यां अमेध्यम्। तदंपहत्यं। मेध्यां देव्यजंनीं कृत्वा॥८०॥

यद्दश्चन्द्रमंसि मेध्यम्। तद्स्यामेर्यति। तां धीरांसो अनुदृश्यं यजन्त इत्याहानुंख्यात्यै। प्रोक्षंणीरा सांदय। इध्माब्रहिरुपंसादय। स्रुवं च स्रुचंश्च सम्मृंड्डि। पत्नी क् सन्नंह्य। आज्येनोदेहीत्यांहानुपूर्वतांयै। प्रोक्षंणीरा सांदयति। आपो वै रंक्षोघ्नीः॥८१॥

रक्षंसामपंहत्यै। स्प्यस्य वर्त्मंन्त्सादयति। यज्ञस्य सन्तंत्यै। युवाच् हासितो दैवलः। एतावंतीवां अमुष्मिल्लांक आपं आसन्। यावंतीः प्रोक्षंणीरिति। तस्मांद्वह्वीरासाद्याः।

स्प्यमुदस्यन्। यं द्विष्यात्तं ध्यायेत्। शुचैवैनंमर्पयति॥८२॥

वै वायुराह परावतीत्याहाहं द्वितीयर् हर्तीतिं परिगृह्णन्तिं देवयर्जनीं करोति भवन्ति खनत्यकरेतत्कृत्वा

रंक्षोच्चीरंप्यति॥९॥------

वज्रो वै स्प्यः। यद्नवश्चं धारयंत्। वज्जेंऽध्वर्युः क्षंण्वीत। पुरस्तांत्तिर्यश्चं धारयति। वज्रो वै स्प्यः। वज्रेंणैव यज्ञस्यं दक्षिणतो रक्षार्स्यपंहन्ति। अग्निभ्यां प्राचंश्च प्रतीचंश्च। स्प्येनोदींचश्चाधराचंश्च। स्प्येन वा एष वज्रेंणास्य पाप्मानं भ्रातृंव्यमपहत्यं। उत्करेऽधि प्रवृंश्चति॥८३॥

यथोपधायं वृश्चन्त्येवम्। हस्ताववं नेनिक्ते। आत्मानंमेव पंवयते। स्प्यं प्रक्षांलयित मेध्यत्वायं। अथो पाप्मनं एव भ्रातृंव्यस्य न्युङ्गं छिनित्ति। इध्माब्रहिरुपंसादयित युक्त्यै। यज्ञस्यं मिथुन्त्वायं। अथो पुरोरुचंमेवेतां दंधाति। उत्तरस्य कर्मणोऽनुंख्यात्ये। न पुरस्तांत्प्रत्यगुपंसादयेत्॥८४॥

यत्पुरस्तौत्प्रत्यगुपसादयैत्। अन्यत्रौहृतिपृथादि्ध्मं प्रतिपादयत्। प्रजा वै ब्र्हिः। अपराध्रयाद्वर्हिषौ प्रजानां प्रजनंनम्। पृश्चात्प्रागुपंसादयति। आहुतिपृथेने्ध्मं प्रतिपादयति। संप्रत्येव ब्र्हिषौ प्रजानां प्रजनंनम्पृपैति। दक्षिणमि्ध्मम्। उत्तरं ब्र्हिः। आत्मा वा इध्मः। प्रजा ब्र्हिः। प्रजा ह्यौत्मन् उत्तरतरा ती्र्थे। ततो मेधंमुप्नीयं। यथादेवतमेवैन्त्प्रतिष्ठापयति। प्रतितिष्ठति प्रजयां पृशुभिर्यजमानः॥८५॥

वृश्चित् साद्येदिधः पश्चं च॥१०॥ [१०]
तृतीयंस्यां देवस्यांश्वपृर्शुं यो वै पूर्वेद्युः कर्मणे वामिन्द्रों वृत्तमंहन्त्सोंऽपोऽवंधृतन्धृष्टिंदेवस्येत्यांह्
सं वंपामि देवस्य स्प्यमा दंदे वज्रो वै स्प्यो दर्श॥१०॥
तृतीयंस्यां यज्ञस्यानंतिरेकाय प्वित्रंवत्यध्वर्युं चांधिषवंणमस्यन्तरिक्ष एव रक्षंसामन्तर्हित्यै
द्वौ वाव पुरुषौ यददश्चन्द्रमंसि मेध्यं पञ्चाशीतिः॥८५॥
तृतीयंस्यां यज्ञमानः॥

हरिः ओम्॥ ॥इति श्रीकृष्णयजुर्वेदीयतैत्तिरीयब्राह्मणे तृतीयाष्टके द्वितीयः प्रपाठकः समाप्तः॥

॥ तृतीयः प्रश्नः॥

॥ तैत्तिरीयब्राह्मणे तृतीयाष्टके तृतीयः प्रपाठकः॥

प्रत्युष्ट्र रक्षः प्रत्युष्टा अरातय इत्याह। रक्षंसामपहत्यै। अग्नेर्वस्तेजिष्ठेन तेजसा निष्टपामीत्यांह मेध्यत्वायं। सुचः सम्मार्ष्टि। स्रुवमग्रें। पुमार्समेवाभ्यः सङ्श्यंति मिथुन्त्वाये। अर्थ जुहूम्। अर्थोपुभृतम्। अर्थ ध्रुवाम्। असौ वै जुहूः॥१॥ अन्तरिक्षमुप्भृत्। पृथिवी ध्रुवा। इमे वै लोकाः स्रुचंः। वृष्टिः सम्मार्जनानि। वृष्टिर्वा इमाल्लौंकानंनुपूर्वं केल्पयति। ते ततः क्रप्ताः समेधन्ते। समेधन्तेऽस्मा इमे लोकाः प्रजयां पृशुभिः। य एवं वेदं। यदि कामयेत वर्षुंकः पर्जन्यः स्यादिति। अग्रतः सम्मृंज्यात्॥२॥ वृष्टिंमेव नि यंच्छति। अवाचीनांग्रा हि वृष्टिं। यदिं कामयेतावर्षुकः स्यादिति। मूल्तः सम्मृज्यात्। वृष्टिम्वोद्यंच्छति। तदु वा आंहुः। अ्ग्रुत एवोपरिष्टात्सम्मृज्यात्। मूलतोऽधस्तात्। तदंनुपूर्वं कंल्पते। वर्षुंको भवतीतिं॥३॥ प्राचीमभ्याकारम्। अग्रैरन्तरतः। एविमव ह्यन्नमद्यते। अथो अग्राद्वा ओषंधीनामूर्जं प्रजा उपंजीवन्ति। ऊर्ज एवान्नाद्यस्यावंरुद्धै। अधस्तांत्प्रतीचींम्। दण्डमुंत्तमृतः। मूलेन मूलं प्रतिष्ठित्यै। तस्मादर्बौ प्राञ्चपरिष्टाङ्गोमानि। प्रत्यश्च्यधस्तांत्॥४॥

स्रुग्ध्येषा। प्राणो वै स्रुवः। जुहूर्दक्षिणो हस्तः। उपभृत्स्व्यः। आत्मा ध्रुवा। अन्नर्ं संमार्जनानि। मुख्तो वै प्राणोऽपानो भूत्वा। आत्मानमन्नं प्रविश्ये। बाह्यतस्तन्वर्ं शुभयित। तस्मौत्स्रुवमेवाग्रे सम्मौष्टि। मुख्तो हि प्राणोऽपानो भूत्वा। आत्मानमन्नमाविश्विति। तो प्राणापानौ। अव्यर्धकः प्राणापानाभ्यां भवित। य एवं वेदं॥५॥

जुहूर्मृंज्याद्भवतीति प्रत्यश्च्यथस्तांन्मार्ष्ट् पश्चं च॥१॥••••••••[१]

दिवः शिल्पमवंततम्। पृथिव्याः क्कुभिं श्रितम्। तेनं वयः सहस्रंवल्शेन। सपत्रं नाशयामसि स्वाहेतिं सुख्संमार्जनान्यग्नौ प्र हंरति। आपो वै दर्भाः। रूपमेवैषांमेतन्मंहिमानं व्याचंष्टे। अनुष्टुभूर्चा। आनुष्टुभः प्रजापंतिः। प्राजापत्यो वेदः। वेदस्याग्रः सुख्संमार्जनानि॥६॥

स्वेनैवैनांनि छन्दंसा। स्वयां देवतंया समंध्यति। अथो ऋग्वाव योषां। दुर्भो वृषां। तन्मिथुनम्। मिथुनम्वास्य तद्यज्ञे कंरोति प्रजनंनाय। प्रजायते प्रजयां पृशुभिर्यजमानः। तान्येके वृथेवापांस्यन्ति। तत्तथा न कार्यम्। आरंब्यस्य य्ज्ञियंस्य कर्मणः सविंदोहः॥७॥

यद्यंनानि पृशवोंऽभि तिष्ठेयः। न तत्पृशुभ्यः कम्। अद्भिर्मार्जियित्वोत्करे न्यंस्येत्। यद्वै युज्ञियंस्य कर्मणोऽन्यत्राहुंतीभ्य सन्तिष्ठंते। उत्करो वाव तस्यं प्रतिष्ठा। एता हि तस्मैं प्रतिष्ठां देवाः समभंरन्। यदद्भिर्मार्जयंति। तेनं शान्तम्। यदुंत्करे न्यस्यति। प्रतिष्ठामेवैनांनि तद्गंमयति॥८॥

प्रतितिष्ठति प्रजयां पृशुभिर्यजंमानः। अथौं स्तम्बस्य वा पृतद्रूपम्। यत्स्रुंख्संमार्जनानि। स्तम्बशो वा ओषंधयः। तासां जरत्कक्षे पृशवो न रंमन्ते। अप्रियो ह्येषां जरत्कक्षः। यावंदप्रियो हु वै जंरत्कक्षः पंशूनाम्। तावंदप्रियः पशूनां भंवति। यस्यैतान्यन्यत्राग्नेर्दधंति। नुवदाव्यांसु वा ओषंधीषु पशवों रमन्ते॥९॥

न्वदावो ह्यंषां प्रियः। यावंत्प्रियो ह् वै नंवदावः पंशूनाम्। तावंत्प्रियः पशूनां भंवति। यस्यैतान्युग्नौ प्रहरेन्ति। तस्मादेतान्युग्नावेव प्रहरेत्। युत्रस्मिन्त्सम्मृज्यात्। पृशूनां धृत्यैं। यो भूतानामधिपतिः। रुद्रस्तंन्तिचरो वृषां। पृशूनस्माकं मा हि सीः। पृतदंस्तु हुतं तव स्वाहेत्यंग्निसंमार्जन्युग्नौ प्रहरित। पृषा वा पृतेषां योनिः। पृषा प्रतिष्ठा। स्वामेवैनांनि योनिम्ं। स्वां प्रतिष्ठां गंमयति। प्रतितिष्ठति प्रजयां पशुभिर्यजंमानः॥१०॥

वेदस्याग्रई सुरुसुंमार्जनानि विदोहो गंमयति पृशवीं रमन्ते हिस्सीष्यद् चं॥२॥———[२]

अयंज्ञो वा एषः। योऽपृत्तीकः। न प्रजाः प्रजायेरन्। पत्यन्वास्ते। यज्ञमेवाकः। प्रजानां प्रजननाय। यत्तिष्ठन्ती सुन्नह्येत। प्रियं ज्ञाति र रुन्ध्यात्। आसीना सन्नह्यते। आसीना ह्येषा वीर्यं कुरोति॥११॥

यत्पश्चात्प्राच्यन्वासीत। अनयां समदेन्दधीत। देवानां पिल्लेया समदेन्दधीत। देशाँदक्षिणत उदीच्यन्वाँस्ते। आत्मनों गोपीथायं। आशासांना सौमन्सिमत्यांह। मेध्यांमेवैनाङ्केवंलीं कृत्वा। आशिषा समर्धयिति। अग्नेरनुंव्रता भूत्वा सन्नंहो सुकृताय किमत्यांह। पृतद्वै पिल्लेये व्रतोपनयंनम्॥१२॥

तेनैवैनां व्रतमुपंनयति। तस्मांदाहुः। यश्चैवं वेद् यश्च न। योक्रमेव युते। यम्नवास्ते। तस्यामुष्मिल्लांके भंवतीति योक्रेण। यद्योक्रम्। स योगः। यदास्ते। स क्षेमः॥१३॥

योगक्षेमस्य क्रुप्त्यै। युक्तिङ्कियाता आशीः कामें युज्याता इति। आशिषः समृद्धे। ग्रन्थिङ्केशाति। आशिषं एवास्यां परि गृह्णाति। पुमान् वे ग्रन्थिः। स्त्री पत्नीं। तन्मिथुनम्। मिथुनमेवास्य तद्यज्ञे केरोति प्रजनंनाय। प्र जांयते प्रजयां पशुभिर्यजमानः॥१४॥

अथों अर्धो वा एष आत्मनंः। यत्पत्नीं। यज्ञस्य धृत्या अशिंथिलम्भावाय। सुप्रजसंस्त्वा वय सप्पत्नीरुपं सेदिमेत्यांह। यज्ञमेव तन्मिथुनीकरोति। ऊनेऽतिरिक्तन्धीयाता इति प्रजांत्ये। महीनां पयोऽस्योषंधीना रस् इत्यांह। रूपमेवास्यैतन्मंहिमानं व्याचंष्टे। तस्य तेऽक्षीयमाणस्य

निर्वपामि देवयुज्याया इत्याह। आशिषमेवैतामा शौस्ते॥१५॥

कुरोतिं व्रतोपनर्यनुं क्षेमो यर्जमानः शास्ते॥३॥-----[३]

घृतं च वै मध्रं च प्रजापंतिरासीत्। यतो मध्यांसीत्। ततः प्रजा अंसृजत। तस्मान्मध्रंषि प्रजनंनिमवास्ति। तस्मान्मध्रंषा न प्रचंरन्ति। यातयांम् हि। आज्येन् प्रचंरन्ति। यज्ञो वा आज्यम्। यज्ञेनैव यज्ञं प्रचंरन्त्ययांतयामत्वाय। पत्न्यवेक्षते॥१६॥

मिथुनत्वाय प्रजांत्यै। यद्वै पत्नी यज्ञस्यं क्रोतिं। मिथुनं तत्। अथो पत्निया एवेष यज्ञस्यांन्वारम्भोऽनंवच्छित्त्यै। अमेध्यं वा एतत्कंरोति। यत्पत्यवेक्षंते। गार्हंपत्येऽधिं श्रयति मेध्यत्वायं। आहुवनीयंम्भ्युद्रंवति। यज्ञस्य सन्तंत्यै। तेजोऽस् तेजोऽन् प्रेहीत्यांह॥१७॥

तेजो वा अग्निः। तेज आज्यम्। तेजंसैव तेजः समर्धयति। अग्निस्ते तेजो मा विनैदित्याहाहि स्सायै। स्प्यस्य वर्त्मन्त्सादयति। यज्ञस्य सन्तंत्यै। अग्नेर्जिह्वाऽसिं सुभूर्देवानामित्यांह। यथायजुरेवैतत्। धाम्नेधाम्ने देवेभ्यो यजुंषेयजुषे भ्वेत्यांह। आशिषंभेवैतामा शांस्ते॥१८॥

तद्वा अतः प्वित्रांभ्यामेवोत्पुंनाति। यजंमानो वा आज्यम्। प्राणापानौ प्वित्रें। यजंमान एव प्रांणापानौ दंधाति। पुन्राहारम्। एविमेव हि प्रांणापानौ संचरतः। शुक्रमंसि ज्योतिंरसि तेजोऽसीत्यांह। रूपमेवास्यैतन्मंहिमानं व्याचेष्टे। त्रिर्यजुंषा। त्रयं इमे लोकाः॥१९॥

पृषां लोकानामात्यै। त्रिः। त्र्यांवृद्धि युज्ञः। अथों मेध्यत्वाये। अथाज्यंवतीभ्याम्पः। रूपमेवासांमेतद्वर्णं दधाति। अपि वा उताहुंः। यथां हु वै योषां सुवर्ण् हिरंण्यं पेश्लं बिभ्रंती रूपाण्यास्ते। पुवमेता पुतर्हीतिं। आपो वै सर्वा देवताः॥२०॥

पुषा हि विश्वेषां देवानां तुन्। यदाज्यम्। तत्रोभयोमीमा स्सा। जामि स्यात्। यद्यजुषाऽऽज्यं यजुषाऽप उत्पृनीयात्। छन्दंसाऽप उत्पृनात्यजांमित्वाय। अथो मिथुन्त्वायं। सावित्रियर्चा। सवितृप्रंसूतं मे कर्मासदिति। सवितृप्रंसूतमेवास्य कर्म भवति। पच्छो गांयत्रिया त्रिष्षमृद्धत्वायं। अद्भिरेवौषंधीः सं नंयति। ओषंधीभिः पृशून्। पृशुभिर्यजमानम्। शुकं त्वां शुक्रायां ज्योतिंस्त्वा ज्योतिंष्यचिंस्त्वाऽर्चिषीत्यांह सर्वत्वायं। पर्यांत्र्या अनंन्तरायाय॥२१॥

र्डुक्षुत् आहु शाुस्ते लोका देवतां भवित षद् चं॥४॥————[४]

देवासुराः संयंत्ता आसन्। स एतिमन्द्र आज्यंस्यावकाशमंपश्यत्। तेनावैक्षत। ततो देवा अभवन्। पराऽसुराः। य एवं विद्वानाज्यंम्वेक्षते। भवंत्यात्मनाः। परांऽस्य भ्रातृंव्यो भवति। ब्रह्मवादिनों वदन्ति। यदाज्यंनान्यानि

हवी श्रष्यंभिघारयंति॥२२॥

अथ् केनाज्यमितिं। स्त्येनेतिं ब्रूयात्। चक्षुर्वे स्त्यम्। स्त्येनैवैनंद्भि घारयति। ईश्वरो वा एषाँऽन्धो भविंतोः। यश्चक्षुषाऽऽज्यंम्वेक्षंते। निमील्यावेक्षेत। दाधारात्मश्चक्षुंः। अभ्याज्यंङ्वारयति। आज्यंङ्गह्णाति॥२३॥

छन्दा रेस् वा आज्यम्। छन्दा रेस्येव प्रीणाति। चृतुर्जुह्वां गृंह्णाति। चतुंष्पादः पृशवंः। पृश्न्वेवावं रुन्धे। अष्टावुंपुभृति। अष्टाक्षंरा गायत्री। गायत्रः प्राणः। प्राणमेव पृश्रुषुं दधाति। चृतुर्भुवायाम्॥२४॥

चतुंष्पादः पृशवंः। पृशुष्वेवोपरिष्टात्प्रतिं तिष्ठति। यजमानदेवत्यां वै जुहूः। भ्रातृव्यदेवत्योपभृत्। चतुर्जुह्वाङ्गृह्णन्भूयो गृह्णीयात्। अष्टावंपभृतिं गृह्णन्कनीयः। यजमानायैव भ्रातृंव्यमुपंस्तिं करोति। गौर्वे स्रुचंः। चतुर्जुह्वां गृह्णाति। तस्माचतुंष्पदी॥२५॥

अष्टावंपभृतिं। तस्मांदृष्टाशंफा। चृतुर्धुवायांम्। तस्माचतुंः स्तना। गामेव तत्सङ्स्करोति। सास्मे सङ्स्कृतेषमूर्जन्दुहे। यञ्जुह्वाङ्गृह्वातिं। प्रयाजेभ्यस्तत्। यदुंपभृतिं। प्रयाजानूयाजेभ्यस्तत्। सर्वस्मे वा एतद्यज्ञायं गृह्यते। यद्भुवायामाज्यम्॥२६॥ अभिष्यस्ति गृह्यति ध्रुवायाञ्चतंष्यवे प्रयाजानूयाजेभ्यस्तद्दे चं॥॥—————[५] आपो देवीरग्रेपुवो अग्रेगुव इत्याह। रूपमेवासांमेतन्मंहिमानं

व्याचेष्टे। अग्रं इमं यज्ञन्नयताग्रं यज्ञपंतिमित्यांह। अग्रं एव यज्ञन्नयन्ति। अग्रं यज्ञपंतिम्। युष्मानिन्द्रोऽवृणीत वृत्रतूर्ये यूयमिन्द्रमवृणीध्वं वृत्रतूर्य इत्यांह। वृत्र हं हिन्ष्यन्निन्द्र आपों वव्रे। आपो हेन्द्रं विवरे। संज्ञामेवासांमेतत्सामानं व्याचेष्टे। प्रोक्षिताः स्थेत्यांह॥२७॥

तेनापः प्रोक्षिंताः। अग्निर्देवेभ्यो निलायत। कृष्णों रूपं कृत्वा। स वनस्पतीन्प्राविशत्। कृष्णों ऽस्याखरेष्ठों ऽग्नयें त्वा स्वाहेत्यांह। अग्नयं एवैनं जुष्टं करोति। अथों अग्नेरेव मेधमवं रुन्धे। वेदिरसि ब्रहिषें त्वा स्वाहेत्यांह। प्रजा वै ब्रहिः। पृथिवी वेदिः॥२८॥

प्रजा एव पृथिव्यां प्रतिष्ठापयति। बर्हिरंसि स्रुग्भ्यस्त्वा स्वाहेत्यांह। प्रजा वै बर्हिः। यजमानः स्रुचंः। यजमानमेव प्रजासु प्रतिष्ठापयति। दिवे त्वाऽन्तरिक्षाय त्वा पृथिव्ये त्वेतिं बर्हिरासाद्य प्रोक्षंति। प्रभ्य पृवैनं ह्योकेभ्यः प्रोक्षंति। अथ ततः सह स्रुचा पुरस्तांत्प्रत्यश्चं ग्रन्थिं प्रत्युक्षति। प्रजा वै बर्हिः। यथा स्त्ये काल आपंः पुरस्ताद्यन्ति॥२९॥

ताहगेव तत्। स्वधा पितृभ्य इत्यांह। स्वधाकारो हि पितृणाम्। ऊर्ग्भव बर्हिषद्भ इति दक्षिणाये श्रोणेरोत्तरस्ये निनंयति सन्तंत्ये। मासा वै पितरों बर्हिषदंः। मासांनेव प्रीणाति। मासा वा ओषंधीर्वधयंन्ति। मासाः पचन्ति समृंद्धै।

अनंतिस्कन्दन् ह पूर्जन्यो वर्षित। यत्रैतदेवङ्कियते॥३०॥ ऊर्जा पृथिवीङ्गंच्छुतेत्यांह। पृथिव्यामेवोर्जन्दधाति। तस्मांत्पृथिव्या ऊर्जा भुंअते। ग्रन्थिं वि स्रर्स्सयित। प्रजनयत्येव तत्। ऊर्ध्वं प्राश्चमुद्गृढं प्रत्यश्चमा यंच्छिति। तस्मांत्प्राचीन् रेतो धीयते। प्रतीचीः प्रजा जायन्ते। विष्णोः स्तूपोऽसीत्यांह। यज्ञो वै विष्णुं:॥३१॥

यज्ञस्य धृत्यैं। पुरस्तांत्प्रस्त्रं गृंह्णाति। मुख्यंमेवेनं करोति। इयंन्तङ्गृह्णाति। प्रजापंतिना यज्ञमुखेन सम्मितम्। इयंन्तङ्गृह्णाति। यज्ञप्रुषा सम्मितम्। इयंन्तङ्गृह्णाति। युज्ञप्रुषा सम्मितम्। इयंन्तङ्गृह्णाति। युत्रावृद्वे पुरुषे वीर्यम्। वीर्यसम्मितम्॥३२॥

अपंरिमितङ्गृह्णाति। अपंरिमित्स्यावंरुद्धौ। तस्मिन्प्वित्रे अपि सृजति। यजंमानो वै प्रस्तरः। प्राणापानौ प्वित्रे॥ यजंमान एव प्राणापानौ दंधाति। ऊर्णामदसन्त्वा स्तृणामीत्यांह। यथायजुरेवेतत्। स्वासस्थन्देवेभ्य इत्यांह। देवेभ्यं एवैनंत्स्वासस्थं करोति॥३३॥

ब्र्हिः स्तृंणाति। प्रजा वै ब्र्हिः। पृथिवी वेदिः। प्रजा एव पृथिव्यां प्रतिष्ठापयति। अनंतिदृश्ज्ञः स्तृणाति। प्रजयैवैनं पृश्मिरनंतिदृश्जं करोति। धारयंन्प्रस्तरं परिधीन्परि दधाति। यजमानो वै प्रस्तरः। यजमान एव तत्स्वयं परिधीन्परि दधाति। गृन्ध्वोऽसि विश्वावंसुरित्यांह॥३४॥ विश्वंमेवायुर्यजंमाने दधाति। इन्द्रंस्य बाहुरंसि दक्षिण् इत्यांह। इन्द्रियमेव यजंमाने दधाति। मित्रावरुणो त्वोत्तर्तः परिधत्तामित्यांह। प्राणापानौ मित्रावरुणो। प्राणापानावेवास्मिन्दधाति। सूर्यस्त्वा पुरस्तांत् पात्वित्यांह। रक्षंसामपंहत्यै। कस्यांश्चिद्भिशंस्त्या इत्यांह। अपंरिमितादेवैनंं पाति॥३५॥

वीतिहों त्रन्त्वा कव इत्यांह। अग्निमेव होत्रेण समर्धयित। चुमन्त्र समिधीमहीत्यांह समिद्धौ। अग्ने बृहन्तंमध्वर इत्यांह वृद्धौ। विशो यन्ने स्थ इत्यांह। विशां यत्यौ। उदीचीनांग्ने नि दंधाति प्रतिष्ठित्यै। वसूंनार रुद्राणांमादित्यानार सदंसि सीदेत्यांह। देवतांनामेव सदंने प्रस्तर सांदयित। जुहूरंसि घृताची नाम्नेत्यांह॥३६॥

असौ वै जुहूः। अन्तिरक्षिमुप्भृत्। पृथिवी ध्रुवा। तासांमेतदेव प्रियन्नामं। यद्धृताचीतिं। यद्धृताचीत्याहं। प्रियेणैवेना नाम्नां सादयति। एता अंसदन्त्सुकृतस्यं लोक इत्यांह। सत्यं वै सुंकृतस्यं लोकः। सत्य एवेनाः सुकृतस्यं लोके सादयति। ता विष्णो पाहीत्यांह। युज्ञो वै विष्णुः। युज्ञस्य धृत्यः। पाहि युज्ञं पाहि युज्ञपंतिं पाहि मां यंज्ञनियमित्यांह। युज्ञाय यजमानायात्मनेः। तेभ्यं एवाशिषमाशास्तेऽनांत्ये॥३७॥

स्थेत्यांह पृथिवी वेदिर्यन्ति क्रियते वीणुंर्वीर्यंसम्मितं करोत्याह पाति नाम्नेत्यांह लोके सांदयति पट्

||E||_____[&]

अग्निना वै होत्राँ। देवा असुंरान्भ्यंभवन्। अग्नयं सिम्ध्यमानायानुंबूहीत्यांह् भ्रातृंव्याभिभूत्ये। एकंवि श्रातिमिध्मदा्रूणं भवन्ति। एकवि श्राते व पुरुषः। पुरुषस्यात्ये। पश्चंदशेध्मदा्रूण्यभ्या दंधाति। पश्चंदश् वा अर्धमासस्य रात्रंयः। अर्धमास्यः संवत्सर औप्यते। त्रीन्यंरिधीन्यरि दधाति॥३८॥

ऊर्ध्वे स्मिधावा दंधाति। अन्याजेभ्यः स्मिध्मितं शिनष्टि। षद्धम्पंद्यन्ते। षड्वा ऋतवः। ऋतूनेव प्रीणाति। वेदेनोपं वाजयित। प्राजापृत्यो वै वेदः। प्राजापृत्यः प्राणः। यजंमान आहवनीयः। यजंमान एव प्राणन्दंधाति॥३९॥

त्रिरुपं वाजयित। त्रयो वै प्राणाः। प्राणानेवास्मिन्दधाति। वेदेनोप्यत्यं स्रुवेणं प्राजापत्यमाघारमा घारयित। यज्ञो वै प्रजापितः। यज्ञमेव प्रजापितं मुख्त आरंभते। अथौं प्रजापितः सर्वा देवताः। सर्वा एव देवताः प्रीणाति। अग्निमंग्नीतिस्तः सं मृड्ढीत्यांह। त्र्यावृद्धि युज्ञः॥४०॥

अथो रक्षंसामपंहत्यै। परिधीन्त्सं माँष्टिं। पुनात्येवैनान्। त्रिस्त्रिः सं माँष्टिं। त्र्यांवृद्धि यज्ञः। अथों मेध्यत्वाये। अथों एते वै देवाश्वाः। देवाश्वानेव तत्सं माँष्टिं। सुवर्गस्यं लोकस्य समष्ट्री। आसीनोऽन्यमांघारमा घारयति॥४१॥

तिष्ठंन्नन्यम्। यथाऽनों वा रथं वा युआत्। एवमेव तदंध्वर्युर्यज्ञं युनिक्ति। सुवर्गस्यं लोकस्याभ्यूँढ्यै। वहंन्त्येनङ्गाम्याः पृशवंः। य एवं वेदं। भुवंनमसि वि प्रथस्वेत्याह। युज्ञो वै भुवंनम्। युज्ञ एव यजंमानं प्रजयां पृशुभिः प्रथयति। अग्ने यष्टंरिदन्नम् इत्यांह॥४२॥

अग्निर्वे देवानां यष्टां। य एव देवानां यष्टां। तस्मां एव नमंस्करोति। जुह्वेह्यग्निस्त्वां ह्वयति देवयुज्याया उपंभृदेहिं देवस्त्वां सिवृता ह्वयति देवयुज्याया इत्यांह। आग्नेयी वै जुहूः। सावित्र्युप्भृत्। ताभ्यांमेवेने प्रसूत् आदेत्ते। अग्नांविष्णू मा वामवं ऋमिष्मित्यांह। अग्निः पुरस्तांत्। विष्णुर्यज्ञः पश्चात्॥४३॥

ताभ्यांमेव प्रंतिप्रोच्यात्या ऋांमित। विजिंहाथां मा मा सन्तांप्तमित्याहाहि एसायै। लोकं में लोककृतौ कृणुत्मित्यांह। आशिषंमेवैतामा शांस्ते। विष्णोः स्थानम्सीत्यांह। युज्ञो वै विष्णुः। पृतत्खलु वै देवानामपंराजितमायतंनम्। यद्यज्ञः। देवानांमेवापंराजित आयतंने तिष्ठति। इत इन्द्रों अकृणोद्वीर्याणीत्यांह॥४४॥

इन्द्रियमेव यजंमाने दधाति। समारभ्योध्वीं अध्वरो दिविस्पृश्मित्यांह वृद्धौं। आघारमांघार्यमांणमनुं समारभ्यं। एतस्मिन्काले देवाः सुंवर्गं लोकमायन्। साक्षादेव यजंमानः सुवर्गं लोकमेति। अथो समृद्धेनैव यज्ञेन यजंमानः सुवर्गं लोकमेति। अहुंतो यज्ञो यज्ञपंतिरित्याहानांत्यै। इन्द्रांवान्त्स्वाहेत्यांह। इन्द्रियमेव यजंमाने दधाति। बृहद्भा

इत्यांह॥४५॥

सुवर्गो वै लोको बृहद्भाः। सुवर्गस्यं लोकस्य समेष्ट्री। यजमानदेवत्यां वै जुहूः। भ्रातृव्यदेवत्योपभृत्। प्राण आंघारः। यत्स इंस्पर्शयात्। भ्रातृंव्येऽस्य प्राणन्दंध्यात्। अस इंस्पर्शयन्नत्या क्रांमिति। यजमान एव प्राणन्दंधाित। पाहि माँऽग्ने दुश्चंरितादा मा सुचंरिते भुजेत्यांह॥४६॥

अग्निर्वाव प्वित्रम्। वृजिनमनृतन्दुश्चरितम्। ऋजुक्रमं स्त्य स्चरितम्। अग्निरेवैनं वृजिनादनृतादुश्चरितात्पाति। ऋजुक्रमें सत्ये स्चरिते भजति। तस्मादेवमा शास्ते। आत्मनों गोपीथायं। शिरो वा एतद्यज्ञस्यं। यदांघारः। आत्मा ध्रुवा॥४७॥

आघारमाघार्य ध्रुवा समंनक्ति। आत्मन्नेव यज्ञस्य शिरः प्रति दधाति। द्विः समंनक्ति। द्वौ हि प्राणापानौ। तदांहुः। त्रिरेव समंभ्यात्। त्रिधांतु हि शिर् इतिं। शिरं इवैतद्यज्ञस्यं। अथो त्रयो वै प्राणाः। प्राणानेवास्मिन्दधाति। मुखस्य शिरोऽसि सभ्योतिषा ज्योतिरङ्कामित्यांह। ज्योतिरेवास्मां उपिरेष्टाद्दधाति। सुवर्गस्यं लोकस्यानुंख्यात्यै॥४८॥

परिंदधाति प्राणन्दंधाति हि युज्ञो घांरयित नम् इत्यांह पृश्चाद्वीर्याणीत्यांह् भा इत्यांह भुजेत्यांह ध्रुवैवास्मिन्दधाति त्रीणिं च॥७॥——————[७]

धिष्णिया वा एते न्युंप्यन्ते। यद्ब्रह्मा। यद्धोतां। यदंध्वर्युः।

यद्ग्रीत्। यद्यजंमानः। तान् यदंन्तरेयात्। यजंमानस्य प्राणान्त्सङ्कर्षेत्। प्रमायुंकः स्यात्। पुरोडाशंमप्गृह्य सश्चरत्यध्वर्युः॥४९॥

यजंमानायैव तल्लोक श्रिश्वित। नास्यं प्राणान्त्सङ्कंर्षित। न प्रमायंको भवित। पुरस्तांत प्रत्यङ्कासीनः। इडांया इडामा दंधाति। हस्त्या होत्रें। पृशवो वा इडां। पृशवः पुरुषः। पृशुष्वेव पृशून्प्रतिष्ठापयित। इडांये वा एषा प्रजांतिः॥५०॥ तां प्रजांतिं यजंमानोऽनु प्र जांयते। द्विरङ्गुलांवनिक्त पर्वणोः। द्विपाद्यजंमानः प्रतिष्ठित्ये। स्कृद्पं स्तृणाित। द्विरा दंधाित। स्कृद्भे घारयित। चृतः सम्पंद्यते। चृत्वारि वै पृशोः प्रतिष्ठानांनि। यावांनेव पृशुः। तमुपंह्वयते॥५१॥

मुखंमिव प्रत्युपंह्वयेत। संमुखानेव पृश्नुपं ह्वयते। पृशवो वा इडाँ। तस्मात्साऽन्वारभ्याँ। अध्वर्युणां च यजंमानेन च। उपंहूतः पशुमानंसानीत्यांह। उप ह्येनो ह्वयंते होताँ। इडांयै देवतांनामुपहुवे। उपंहूतः पशुमान्भंवति। य एवं वेदं॥५२॥

यां वै हस्त्यामिडांमादधांति। वाचः सा भागधेयम्। यामुंपह्रयंते। प्राणाना स् सा। वाचं चैव प्राणा इश्चावं रुन्थे। अथ वा एतर्ह्युपंहूतायामिडांयाम्। पुरोडाशंस्यैव बंर्हिषदों मीमा स्सा। यर्जमानन्देवा अंब्रुवन्। ह्विर्नो निर्वृपेति। नाहमंभागो निर्वृप्स्यामीत्यंब्रवीत्॥ ५३॥ न मयांऽभागयाऽनुंबक्ष्यथेति वागंब्रवीत्। नाहमंभागा पुरोनुवाक्यां भविष्यामीतिं पुरोनुवाक्यां। नाहमंभागा याज्यां भविष्यामीतिं याज्यां। न मयांऽभागेन वर्षद्वरिष्यथेतिं वषद्वारः। यद्यंजमानभागन्निधायं पुरोडाशंं बर्हिषदं करोतिं। तानेव तद्वागिनंः करोति। चतुर्धा करोति। चतंस्रो दिशंः। दिक्ष्वंव प्रतितिष्ठति। बर्हिषदं करोति॥५४॥

यजंमानो वै पुंरोडाशंः। प्रजा बर्हिः। यजंमानमेव प्रजासु प्रतिष्ठापयति। तस्मांदस्थ्राऽन्याः प्रजाः प्रतितिष्ठंन्ति। मार्सेनान्याः। अथो खल्वांहः। दक्षिणा वा एता हंविर्यज्ञस्यौन्तर्वेद्यवं रुध्यन्ते। यत्पुंरोडाशं बर्हिषदं करोतीति। चतुर्धा करोति। चत्वारो ह्यंते हंविर्यज्ञस्यर्त्विजंः॥५५॥

ब्रह्मा होताँ ऽध्वर्युर्ग्नीत्। तम्भि मृंशेत्। इदं ब्रह्मणंः। इदः होतुंः। इदमध्वर्योः। इदम्ग्रीध् इतिं। यथैवादः सौम्यैंऽध्वरे। आदेशंमृत्विग्भ्यो दक्षिणा नीयन्तैं। ताद्दगेव तत्। अग्नीधैं प्रथमाया देधाति॥५६॥

अग्निमुंखा ह्यद्धिः। अग्निमुंखामेवर्द्धिं यजंमान ऋभ्नोति। सकृदुंपस्तीर्य द्विरादधंत्। उपस्तीर्य द्विर्भि घांरयति। षद्धम्पंद्यन्ते। षड्वा ऋतवंः। ऋतूनेव प्रीणाति। वेदेनं ब्रह्मणें ब्रह्मभागं परिहरति। प्राजापत्यो वै वेदः। प्राजापत्यो ब्रह्मा॥५७॥ स्विता यज्ञस्य प्रसूँत्यै। अथ कामंम्नयेनं। ततो होत्रें। मध्यं वा एतद्यज्ञस्यं। यद्धोतां। मध्यत एव यज्ञं प्रीणाति। अथाध्वर्यवें। प्रतिष्ठा वा एषा यज्ञस्यं। यदंध्वर्युः। तस्माद्धविर्यज्ञस्यैतामेवावृतमनुं॥५८॥

अन्या दक्षिणा नीयन्ते। यज्ञस्य प्रतिष्ठित्ये। अग्निमंग्नीत्सकृत्संकृत्सं मृड्ढीत्यांह। परांडिक् ह्यंतर्हि यज्ञः। इषिता दैव्या होतांर् इत्यांह। इषित हि कर्म क्रियतें। भृद्रवाच्यांय प्रेषितो मानुंषः सूक्तवाकायं सूक्ता ब्रूहीत्यांह। आशिषमेवैतामा शांस्ते। स्वृगा दैव्या होतृंभ्य इत्यांह। यज्ञमेव तत्स्वृगा करोति। स्वस्तिर्मानुंषेभ्य इत्यांह। आशिषमेवैतामा शांस्ते। शं योर्बूहीत्यांह। शंयुमेव बार्हस्पत्यं भाग्धेयेन समर्धयति॥५९॥

च्रुत्यृष्वर्षः प्रजातिर्ह्यते वेदाँवविद्वरहिषदं करोत्यृत्वजां द्याति ब्रह्माऽनंकरोति च्त्वारं चाटा [८] अथ सुचावनुष्टुग्भ्यां वाजंवतीभ्यां व्यूहिति। प्रतिष्ठा वा अनुष्टुक्। अत्रं वाजः प्रतिष्ठित्यै। अन्नाद्यस्यावंश्च्यै। प्राचीं जुहूमूहिति। जातानेव भ्रातृंव्यान्प्रणुंदते। प्रतीचीमुप्भृतम्। जिन्ष्यमाणानेव प्रतिनुदते। सविषूंच एवापोद्यं सपत्नान् यजमानः। अस्मिल्लांके प्रतितिष्ठति॥६०॥

द्वाभ्यांम्। द्विप्रंतिष्ठो हि। वस्नेभ्यस्त्वा रुद्रेभ्यंस्त्वाऽऽदित्येभ्यस्त्वेत्यां यथायजुरेवैतत्। स्रुक्षु प्रंस्त्रमंनक्ति। इमे वै लोकाः स्रुचः। यजमानः प्रस्तुरः। यजमानमेव तेजसाऽनक्ति। त्रेधाऽनंकि। त्रयं इमे लोकाः॥६१॥

एभ्य एवैनं लोकेभ्योऽनिक्तः। अभिपूर्वमंनिक्तः। अभिपूर्वमेव यजमानन्तेजंसाऽनिक्तः। अक्तरः रिहाणा इत्याहः। तेजो वा आज्यम्। यजमानः प्रस्तरः। यजमानमेव तेजंसाऽनिक्तः। वियन्तु वय इत्याहः। वयं एवैनं कृत्वाः। सुवर्गं लोकं गमयति॥६२॥

प्रजां योनिं मा निर्मृक्षमित्यांह। प्रजायैं गोपीथायं। आप्यायन्तामाप ओषंधय इत्यांह। आपं एवौषंधीरा प्याययित। मुरुतां पृषंतयः स्थेत्यांह। मुरुतो वै वृष्ट्यां ईशते। वृष्टिंमेवावं रुन्धे। दिवं गच्छ ततों नो वृष्टिमेर्येत्यांह। वृष्टिंवें द्यौः। वृष्टिंमेवावं रुन्धे॥६३॥

यावद्वा अध्वर्युः प्रस्तरं प्रहरंति। तावंदस्यायुंर्मीयते। आयुष्पा अंग्रेऽस्यायुंर्मे पाहीत्यांह। आयुरेवात्मन्धंते। यावद्वा अध्वर्युः प्रस्तरं प्रहरंति। तावंदस्य चक्षुंर्मीयते। चक्षुष्पा अंग्रेऽसि चक्षुंर्मे पाहीत्यांह। चक्षुंर्वात्मन्धंते। ध्रुवाऽसीत्यांह प्रतिष्ठित्ये। यं परिष्ठिं प्रयधंत्था इत्यांह॥६४॥ यथायजुरेवैतत्। अग्ने देव पणिभिवीयमांण इत्यांह। अग्नयं एवैनं जुष्टं करोति। तन्तं एतमनु जोषं भरामीत्यांह। स्जातानेवास्मा अनुंकान्करोति। नेदेष त्वदंपचेतयांता इत्याहानुंख्यात्ये। यज्ञस्य पाथ उप समित्यांह। भूमानंमेवोपैति। परिधीन्त्र हंरति। यज्ञस्य समिष्ट्री॥६५॥ भूमानंमेवोपैति। परिधीन्त्र हंरति। यज्ञस्य समिष्ट्री॥६५॥

सुचौ सं प्रस्नांवयित। यदेव तत्रं ऋूरम्। तत्तेनं शमयित। जुह्वामुंपभृतम्। यजमानदेवत्यां वै जुहूः। भ्रातृव्यदेवत्योपभृत्। यजमानायैव भ्रातृंव्यमुपंस्तिं करोति। सङ्स्रावभागाः स्थेत्यांह। वसंवो वै रुद्रा आंदित्याः सङ्स्रावभागाः। तेषान्तद्भाग्धेयम्॥६६॥

तानेव तेनं प्रीणाति। वैश्वदेव्यर्चा। एते हि विश्वं देवाः। त्रिष्टुग्भंवति। इन्द्रियं वै त्रिष्टुक्। इन्द्रियमेव यजमाने दधाति। अग्नेर्वामपंत्रगृहस्य सदिस सादयामीत्यांह। इयं वा अग्निरपंत्रगृहः। अस्या एवैने सदेने सादयति। सुम्नायं सुम्निनी सुम्ने मां धत्तमित्यांह॥६७॥

प्रजा वै प्शवंः सुम्नम्। प्रजामेव पृश्नात्मन्थंत्ते। धुरि धुर्यौ पात्मित्यांह। जायापत्योर्गोपीथायं। अग्नेऽदब्धायोऽशीततनो इत्यांह। यथायजुरेवैतत्। पाहि माऽद्य दिवः पाहि प्रसित्यै पाहि दुरिष्ट्रौ पाहि दुर्रद्मन्यै पाहि दुर्श्वरितादित्यांह। आशिषंमेवैतामा शास्ते। अविषन्नः पितुं कृण सुषदा योनिङ् स्वाहेतींध्मस्ंवृश्चनान्यन्वाहार्यपचनेऽभ्याधायं फलीकरणहोमं जुंहोति। अतिरिक्तानि वा इंध्मसं वृश्चनानि॥६८॥

अतिरिक्ताः फलीकरणाः। अतिरिक्तमाज्योच्छेषणम्। अतिरिक्त पुवातिरिक्तन्दधाति। अथो अतिरिक्तेनैवातिरिक्तमास्वाऽर रुन्धे। वेदिर्देवेभ्यो निलायत। तां वेदेनान्वंविन्दन्। वेदेन वेदिं विविद्ः पृथिवीम्। सा पंप्रथे पृथिवी पार्थिवानि। गर्भं विभर्ति भुवंनेष्वन्तः। ततो यज्ञो जायते विश्वदानिरितिं पुरस्तांत्स्तम्बयज्ञ्षों वेदेन वेदि सम्मार्ष्टानुंवित्त्ये॥६९॥ अथो यद्वेदश्च वेदिश्च भवंतः। मिथुनत्वाय प्रजांत्ये। प्रजापतेर्वा एतानि श्मश्रूणि। यद्वेदः। पित्रया उपस्थ आस्यंति। मिथुनमेव करोति। विन्दते प्रजाम्। वेद शहोताऽऽहंवनीयांत्स्तृणन्नेति। यज्ञमेव तत्सन्तंनोत्योत्तंरस्मादर्धमासात्। तश्सन्तंतमुत्तंरेऽर्धमास आलंभते॥७०॥

तङ्कालेकांल आगंते यजते। ब्रह्मवादिनों वदन्ति। स त्वा अध्वर्युः स्यात्। यो यतों यज्ञं प्रयुङ्के। तदेनं प्रतिष्ठापयतीति। वाताद्वा अध्वर्युर्यज्ञं प्रयुङ्के। देवां गातुविदो गातुं वित्वा गातुमितेत्याह। यतं एव यज्ञं प्रयुङ्के। तदेनं प्रतिष्ठापयति। प्रति तिष्ठति प्रजयां पशुभिर्यजमानः॥७१॥

तिष्ठतीमे लोका गंमयति द्यौर्वृष्टिमेवावंकन्थे पूर्यधंत्था इत्यांहु सिमष्टि भागुधेयंन्यत्तमित्यांहु वा इंध्मस्ं वृक्षंनान्यन्वित्त्यै लभते यजंमानः॥९॥••••••

यो वा अयंथादेवतं युज्ञम्ंपूचरंति। आ देवतांभ्यो वृश्च्यते। पापीयान्भवति। यो यंथादेवतम्। न देवतांभ्य आवृंश्च्यते। वसीयान्भवति। वारुणो वे पाशंः। इमं विष्यांमि वरुणस्य पाश्मित्यांह। वरुणपाशादेवेनां मुश्चति। स्वितृप्रंसूतो यथादेवतम्॥७२॥

न देवतांभ्य आवृंश्यते। वसीयान्भवति। धातुश्च योनौं

सुकृतस्यं लोक इत्यांह। अग्निर्वे धाता। पुण्यङ्कर्मं सुकृतस्यं लोकः। अग्निरेवैनाँन्धाता। पुण्ये कर्मणि सुकृतस्यं लोके दंधाति। स्योनं में सह पत्यां करोमीत्यांह। आत्मनश्च यर्जमानस्य चानांत्ये सन्त्वायं। समायुषा सं प्रजयेत्यांह॥७३॥

आशिषंमेवेतामा शाँस्ते पूर्णपात्रे। अन्ततों उनुष्टुभाँ। चतुंष्पद्वा एतच्छन्दः प्रतिष्ठितं पित्रिये पूर्णपात्रे भवित। अस्मिल्लाँके प्रतितिष्ठानीति। अस्मिन्नेव लोके प्रतितिष्ठति। अथो वाग्वा अनुष्टुक्। वाङ्गिंथुनम्। आपो रेतः प्रजननम्। एतस्माद्वे मिथुनाद्विद्योतंमानः स्तुनयंन्वर्षित। रेतः सिञ्चन्॥७४॥

प्रजाः प्रजनयन्। यहै यज्ञस्य ब्रह्मणा युज्यते। ब्रह्मणा वै तस्ये विमोकः। अद्भिः शान्तिः। विमुक्तं वा एतर्हि योक्रं ब्रह्मणा। आदायेन्त्पत्नी सहाप उपंगृह्णीते शान्त्यै। अञ्चलौ पूर्णपात्रमा नयति। रतं एवास्यां प्रजान्दंधाति। प्रजया हि मनुष्यः पूर्णः। मुखं वि मृष्टे। अवभृथस्यैव रूपं कृत्वोत्तिष्ठति॥७५॥ स्विव्ह्रप्रम्ते यथदेवतं प्रजयेत्वांह सिञ्चन्तृष्ट एकं चाहरणा——[१०]

परिवेषो वा एष वनस्पतीनाम्। यदुंपवेषः। य एवं वेदं। विन्दतें परिवेष्टारम्। तमुंत्करे। यन्देवा मंनुष्येषु। उपवेषमधारयन्। ये अस्मदपं चेतसः। तानस्मभ्यमिहा कुरु। उपवेषोपं विष्टि नः॥७६॥ प्रजां पृष्टिमथो धनम्। द्विपदो नश्चतुंष्पदः। ध्रुवाननंपगान्कुर्वितिं पुरस्तांत्प्रत्यश्चम्पं गृहति। तस्मांत्पुरस्तांत्प्रत्यश्चंः शूद्रा अवंस्यन्ति। स्थृविमृत उपंगूहति। अप्रतिवादिन एवैनांन्कुरुते। धृष्टि्र्वा उपवेषः। शुचर्तो वज्रो ब्रह्मणा संश्रीतः। योपंवेषे शुक्। साऽमुमृंच्छतु यं द्विष्म इतिं॥७७॥

अथाँस्मै नाम् गृह्य प्रहंरित। निर्मुन्नुंद ओकंसः। सपत्नो यः पृत्न्यितं। निर्बाध्येन हिविषां। इन्द्रं एणं परांशरीत्। इहि तिस्रः पंरावतंः। इहि पश्च जना अति। इहि तिस्रोऽति रोचनायावत्। सूर्यो असंद्विव। प्रमान्त्वां परावतम्॥७८॥ इन्द्रों नयत् वृत्रहा। यतो न पुन्रायंसि। शृश्वतीभ्यः समाभ्य इति। त्रिवृद्वा एष वज्रो ब्रह्मणा सर्शितः। श्चैवैनं विध्वा। एभ्यो लोकेभ्यों निर्णुद्यं। वज्रेण ब्रह्मणा स्तृणुते। हृतोऽसाववंधिष्मामुमित्यांह स्तृत्यैं। यं द्विष्यात्तभ्यांयेत्। श्चैवैनंमर्पयति॥७९॥

प्रत्युष्टिन्दिवः शिल्पमयंज्ञो घृतं चं देवासुराः स एतिमन्द्र आपों देवीर्ग्निना धिष्णिया अथ स्रुचौ यो वा अयंथादेवतं परिवेषो वा एकांदश॥११॥

प्रत्युष्टमर्यज्ञ एषा हि विश्वेषान्देवानांमूर्जा पृथिवीमथो रक्षंसान्तां प्रजातिं द्वाभ्यां तं कालेकाले नवंसप्ततिः॥७९॥

प्रत्युंष्टमर्पयति॥

हरिः ओम्॥

॥इति श्रीकृष्णयजुर्वेदीयतैत्तिरीयब्राह्मणे तृतीयाष्टके तृतीयः प्रपाठकः समाप्तः॥

॥चतुर्थः प्रश्नः॥

॥ तैत्तिरीयब्राह्मणे तृतीयाष्टके चतुर्थः प्रपाठकः॥

ब्रह्मणे ब्राह्मणमालंभते। क्ष्त्रायं राज्नन्यम्। मुरुद्धो वैश्यम्। तपंसे शूद्रम्। तमंसे तस्करम्। नारंकाय वीर्हणम्। पाप्मनें क्रीबम्। आक्रयायायोगूम्। कामाय पुश्र्श्वलूम्। अतिंकुष्टाय मागधम्॥१॥

गीतायं सूतम्। नृत्तायं शैलूषम्। धर्माय सभाचरम्। नृर्मायं रेभम्। निरेष्ठाये भीमलम्। हसाय कारिम्। आनन्दायं स्त्रीष्खम्। प्रमुदे कुमारीपुत्रम्। मेधाये रथकारम्। धैर्याय तक्षाणम्॥२॥

श्रमांय कौलालम्। मायायै कार्मारम्। रूपायं मणिकारम्। शुभे वपम्। शर्व्याया इषुकारम्। हेत्यै धंन्वकारम्। कर्मणे ज्याकारम्। दिष्टायं रञ्जसर्गम्। मृत्यवे मृग्युम्। अन्तंकाय श्वनितम्॥३॥

सन्धर्ये जारम्। गृहायोपपृतिम्। निर्ऋंत्ये परिवित्तम्। आर्त्ये परिविविदानम्। अराध्ये दिधिषूपितम्। पृवित्राय भिषजम्। प्रज्ञानाय नक्षत्रदर्शम्। निष्कृत्ये पेशस्कारीम्। बलायोपदाम्। वर्णायानूरुधम्॥४॥

न्दीभ्यंः पौञ्जिष्टम्। ऋक्षीकाँभ्यो नैषांदम्। पुरुष्व्याघ्रायं दुर्मदम्। प्रयुद्ध उन्मंत्तम्। गुन्धुर्वाप्सराभ्यो ब्रात्यम्। स्पर्देवजनेभ्योऽप्रंतिपदम्। अवेभ्यः कित्वम्। इर्यतांया अकितवम्। पिशाचेभ्यों बिदलकारम्। यातुधानेभ्यः कण्टककारम्॥५॥

उत्सादेभ्यः कुज्जम्। प्रमुदे वामनम्। द्वाभ्यः स्रामम्। स्वप्नायान्थम्। अधमीय बिधरम्। संज्ञानाय स्मरकारीम्। प्रकामोद्यायोपसदम्। आशिक्षायै प्रश्जिनम्। उपिशिक्षायां अभिप्रश्जिनम्। मर्यादाये प्रश्जिववाकम्॥६॥

ऋत्यै स्तेनहृंदयम्। वैरंहत्याय् पिशुंनम्। विवित्त्ये क्षृत्तारम्। औपंद्रष्टाय सङ्गृहीतारम्। बलायानुचरम्। भूम्ने पंरिष्कृन्दम्। प्रियायं प्रियवादिनम्। अरिष्ट्या अश्वसादम्। मेधांय वासः पल्पूलीम्। प्रकामायं रजयित्रीम्॥७॥

भायै दार्वाह् । प्रभायां आग्नेन्थम्। नार्कस्य पृष्ठायांभिषेकारम्। ब्रुध्नस्यं विष्ठपाय पात्रनिर्णेगम्। देवलोकायं पेशितारम्। मनुष्यलोकायं प्रकरितारम्। सर्वेभ्यो लोकेभ्यं उपसेक्तारम्। अवंत्ये वधायोपमन्थितारम्। सुवर्गायं लोकायं भागद्धम्। वर्षिष्ठाय नार्काय परिवेष्टारम्॥८॥

अर्मेभ्यो हस्तिपम्। ज्वायांश्वपम्। पुष्टौ गोपालम्। तेजंसेऽजपालम्। वीर्यायाविपालम्। इरायै कीनाशम्। कीलालांय सुराकारम्। भुद्रायं गृहुपम्। श्रेयंसे वित्तुधम्।

अध्यंक्षायानुक्षत्तारम्ं॥९॥

मन्यवेऽयस्तापम्। क्रोधांय निस्रम्। शोकांयाभिस्रम्। उत्कूलुविकूलाभ्यांत्रिस्थिनम्। योगांय योक्तारम्। क्षेमांय विमोक्तारम्। वपुषे मानस्कृतम्। शीलांयाञ्जनीकारम्। निर्ऋत्ये कोशकारीम्। यमायासूम्॥१०॥

यम्ये यम्सूम्। अर्थर्वभ्योऽवंतोकाम्। संवृत्स्रायं पर्यारिणींम्। परिवृत्सरायाविजाताम्। इदावृत्सरायापस्कद्वंरीम्। इद्वृत्सरायातीत्वंवरीम्। वृत्सराय विजंर्जराम्। सुर्वृन्त्सराय पर्तिक्रीम्। वनाय वनुपम्। अन्यतोरण्याय दावुपम्॥११॥

सरोंभ्यो धैवरम्। वेशंन्ताभ्यो दाशम्ँ। उपस्थावंरीभ्यो बैन्दम्ँ। नुङ्गुलाभ्यः शौष्कलम्। पार्याय कैवर्तम्। अवार्याय मार्गारम्। तीर्थेभ्यं आन्दम्। विषंमभ्यो मैनालम्। स्वनेंभ्यः पर्णकम्। गुहाँभ्यः किरातम्। सार्नुभ्यो जम्भंकम्। पर्वतेभ्यः किम्पूरुषम्॥१२॥

प्रतिश्रुत्कांया ऋतुलम्। घोषांय भृषम्। अन्तांय बहुवादिनम्। अनुन्ताय मूकम्। महंसे वीणावादम्। क्रोशांय तूणव्ध्मम्। आक्रन्दायं दुन्दुभ्याघातम्। अवरुस्पुरायं शङ्ख्ध्मम्। ऋभुभ्योजिनसन्धायम्। साध्येभ्यंश्चर्म्मणम्॥१३॥

बीभृत्सायै पौल्कुसम्। भूत्यै जागरणम्। अभूत्यै स्वपनम्। तुलायै वाणिजम्। वर्णाय हिरण्यकारम्। विश्वैभ्यो देवेभ्यः सिध्मलम्। पृश्चाद्दोषायं ग्लावम्। ऋत्यै जनवादिनम्। व्यृंद्धा अपगल्भम्। स॰शरायं प्रच्छिदम्॥१४॥

हसाय पुङ्श्चलूमा लंभते। वीणावादङ्गणंकङ्गीतायं। यादंसे शाबुल्याम्। नुर्मायं भद्रवृतीम्। तूण्वध्मङ्गांमृण्यं पाणिसङ्घातन्नृत्तायं। मोदांयानुक्रोशंकम्। आन्नदायं तलवम्॥१५॥

अक्षराजायं कित्वम्। कृतायं सभाविनम्। त्रेतांया आदिनवदुर्शम्। द्वापरायं बिहुः सदम्। कलंये सभास्थाणुम्। दुष्कृतायं चरकांचार्यम्। अध्वंने ब्रह्मचारिणम्। पिशाचेभ्यंः सैलगम्। पिपासायें गोव्यच्छम्। निर्ऋत्ये गोघातम्। क्षुधे गोविकर्तम्। क्षुत्तृष्णाभ्यान्तम्। यो गां विकृन्तंन्तं मार्सं भिक्षंमाण उपतिष्ठते॥१६॥

भूम्यै पीठस्पिणमा लंभते। अग्नयेऽर्रस्लम्। वायवे चाण्डालम्। अन्तरिक्षाय वर्शन्तिनम्। दिवे खेलतिम्। सूर्याय हर्यक्षम्। चन्द्रमंसे मिर्मिरम्। नक्षेत्रेभ्यः किलासम्। अहे शुक्रं पिङ्गलम्। रात्रिये कृष्णं पिङ्गाक्षम्॥१७॥

वाचे पुरुषमा लेभते। प्राणमंपानळ्याँनमुंदानः संमानन्तान् वायवें। सूर्याय चक्षुरा लेभते। मनश्चन्द्रमंसे। दिग्भ्यः श्रोत्रम्। प्रजापंतये पुरुषम्॥१८॥

अथैतानरूपेभ्य आलंभते। अतिंहस्वमितंदीर्घम्।

अतिकृशमत्य ५ सलम्। अतिशुक्कमतिकृष्णम्। अतिश्रक्ष्णमितिलोमशम्। अतिकिरिट्मतिदन्तुरम्। अतिमिर्मिर्मतिमेमिषम्। आशायै जामिम्। प्रतीक्षायै कुमारीम्॥१९॥

ब्रह्मणे गीताय श्रमांय स्न्थयें न्दीभ्यं उत्सादेभ्य ऋत्यै भाया अर्मेभ्यो मृन्यवे युम्यें दशंदश् सरोंभ्यो द्वादंश प्रतिश्रुत्कांये बीभृत्सायै दशंदश् हसांय स्प्ताक्षंराजाय त्रयोदश् भूम्यै दशं वाचे षडथ् नवैकान्नविर्शितिः॥१९॥ ब्रह्मणे युम्यें नवंदश॥१९॥ ब्रह्मणे कुमारीम्॥

हरिः ओम्॥ ॥इति श्रीकृष्णयजुर्वेदीयतैत्तिरीयब्राह्मणे तृतीयाष्टके चतुर्थः प्रपाठकः समाप्तः॥

॥पञ्चमः प्रश्नः॥

॥ तैत्तिरीयब्राह्मणे तृतीयाष्टके पश्चमः प्रपाठकः॥

स्तयं प्रपेद्ये। ऋतं प्रपेद्ये। अमृतं प्रपेद्ये। प्रजापेतेः प्रियां त्नुवमनातां प्रपेद्ये। इदम्हं पेश्चद्येन वर्ज्रेण। द्विषन्तं भ्रातृंव्यमवं क्रामामि। यौऽस्मान्द्वेष्टि। यं चं व्यं द्विष्मः। भूर्भुवः सुवंः। हिम्॥१॥

सत्यं दर्श॥१॥🕳

-[१∫

प्र वो वाजां अभिद्यंवः। हविष्मंन्तो घृताच्यां। देवाञ्जिंगाति सुमृयुः। अमृ आयांहि वीतयें। गृणानो हव्यदांतये। नि होतां सत्सि ब्रहिषिं। तन्त्वां समिद्भिरङ्गिरः। घृतेनं वर्धयामिस। बृहच्छोचा यविष्ठा। स नः पृथुः श्रवाय्यम्॥२॥ अच्छां देव विवाससि। बृहदंग्ने सुवीर्यम्। ईडेन्यों नमुस्यंस्तिरः। तमा ५सि दर्शतः। समग्निरिध्यते वृषां। वृषां अग्निः समिध्यते। अश्वो न देववाह्नेनः। तर हविष्मन्त ईडते। वृषंणन्त्वा वयं वृषन्। वृषाणः समिधीमहि॥३॥ अग्ने दीर्घतं बृहत्। अग्निं दूतं वृंणीमहे। होतांरं विश्ववेदसम्। अस्य यज्ञस्यं सुऋतुम्। समिध्यमानो अध्वरे। अग्निः पांवक ईड्यंः। शोचिष्केशस्तमींमहे। समिद्धो अग्न आहुत। देवान् यंक्षि स्वध्वर। त्वर हि हंव्यवाडसिं। आ जुंहोत दुवस्यतं। अग्निं प्रयत्यंध्वरे। वृणीध्व हं ह्यावाहंनम्। त्वं वर्रुण उत मित्रो अंग्ने। त्वां वंर्धन्ति मतिभिर्वसिष्ठाः। त्वे वसुं सुषणनानि

| सन्तु। यूयं पात स्वस्तिभिः सदां नः ॥४॥ |
|--|
| श्रुवार्य्यमिधीमृह्यसिं सप्त चं॥२॥[२] |
| अग्नें महा असि ब्राह्मण भारत। असावसौं। देवेद्धो |
| मन्विंद्धः। ऋषिंष्ठुतो विप्रांनुमदितः। कुविश्वस्तो ब्रह्मंस शितो |
| घृताहंवनः। प्रणीर्यज्ञानांम्। र्थीरंध्वराणांम्। अतूर्तो होतां। |
| तूर्णिर्हव्यवाट्। आस्पात्रं जुहूर्देवानांम्॥५॥ |
| चमुसो देवपानः। अरा इंवाग्ने नेमिर्देवा इस्त्वं परिभूरसि। |
| आ वंह देवान् यजंमानाय। अग्निमंग्न आवंह। सोम्मावंह। |
| अग्निमावंह। प्रजापंतिमावंह। अग्नीषोमावावंह। इन्द्राग्नी |
| आवंह। इन्द्रमावंह। मृहेन्द्रमावंह। देवार आज्यपार |
| आवंह। अग्नि रहोत्रायावंह। स्वं मंहिमान्मा वंह। आ चाँग्ने |
| देवान् वहं। सुयजां च यज जातवेदः॥६॥ |
| देवानामिन्द्रमा वंह् षट् चं॥३॥[३] |
| अग्निर्होता वेत्वग्निः। होत्रं वैत्तु प्रावित्रम्। स्मो वयम्। साधु |
| तें यजमान देवतां। घृतवंतीमध्वर्यो सुचमास्यंस्व। देवायुवं |
| विश्ववाराम्। ईडांमहै देवा १ ईडेन्यान्। नुमस्यामं नमस्यान्। |
| यजांम युज्ञियान्॥७॥ |
| अग्निर्होता नवं॥४॥———[४] |
| स्मिधों अग्र आज्यंस्य वियन्तु। तनूनपांदग्न आज्यंस्य |
| वेतु। इडो अंग्न आज्यंस्य वियन्तु। ब्रहिरंग्न आज्यंस्य |
| वेतु। स्वाहाऽग्निम्। स्वाहा सोमम्। स्वाहाऽग्निम्। स्वाहाँ |
| |

प्रजापंतिम्। स्वाहाऽग्नीषोमौँ। स्वाहेंन्द्राग्नी। स्वाहेन्द्रम्ँ। स्वाहां महेन्द्रम्। स्वाहां देवा॰ औज्यपान्। स्वाहाऽग्नि॰ होत्राञ्जंषाणाः। अग्न आज्यंस्य वियन्तु॥८॥

हुन्द्राग्नी पर्श्व च॥५॥————[५]

अग्निर्वृत्राणि जङ्घनत्। द्रविण्स्युर्विप्न्ययां। सिमंद्धः शुक्र आहुंतः। जुषाणो अग्निराज्यंस्य वेतु। त्वश् सोमासि सत्पंतिः। त्वश् राजोत वृंत्रहा। त्वं भुद्रो अंसि कर्तुः। जुषाणः सोम् आज्यंस्य ह्विषो वेतु। अग्निः प्रह्नेन जन्मंना। शुम्भांनस्त्नुवृश् स्वाम्। क्विविंप्रेण वावृधे। जुषाणो अग्निराज्यंस्य वेतु। सोमं गीर्भिष्ट्वां व्यम्। वर्धयांमो वचोविदंः। सुमृडीको न आविंश। जुषाणः सोम् आज्यंस्य हिवषों वेतु॥९॥

स्वार षट् चं॥६॥-----[६]

अग्निर्मूर्धा दिवः कुकुत्। पितः पृथिव्या अयम्। अपारं रेतारंसि जिन्वति। भुवां यज्ञस्य रजंसश्च नेता। यत्रां नियुद्धिः सचंसे शिवाभिः। दिवि मूर्धानंन्दिधषे सुवर्षाम्। जिह्वामंग्ने चकृषे हव्यवाहम्। प्रजांपते न त्वदेतान्यन्यः। विश्वां जातानि परि ता बंभूव। यत्कांमास्ते जहुमस्तं नो अस्तु॥१०॥

व्यः स्यांम् पतंयो रयीणाम्। स वेद पुत्रः पितर् सम्वत्रम्। स सूनुर्भुवत्स भुवत्पुनंभिषः। स द्यामौर्णोदन्तरिक्षर्

स सुवंः। स विश्वा भुवं अभवत्स आभंवत्। अग्नीषोमा सर्वेदसा। सहूंती वनतृङ्गिरंः। सन्देवृत्रा बंभूवथुः। युवमेतानि दिवि रोचनानिं। अग्निश्चं सोम् सर्त्रत् अधत्तम्॥११॥ युव सिन्धू रं रिभशंस्तेरवृद्यात्। अग्नीषोमावमं अतङ्गृभीतान्। इन्द्रांग्नी रोचना दिवः। परि वाजेषु भूषथः। तद्वांश्चेति प्रवीर्यम्। श्वथंद्वृत्रमुत संनोति वाजम्। इन्द्रा यो अग्नी सहंरी सपूर्यात्। इर्ज्यन्तां वसूव्यंस्य भूरैः। सहंस्तमा सहंसा वाज्यन्तां। एन्द्रं सान्सि र्यिम्॥१२॥

स्जित्वांन सदासहम्। वर्षिष्ठमूतयं भर। प्रसंसाहिषे पुरुहूत शत्रूनं। ज्येष्ठंस्ते शुष्मं इह रातिरंस्तु। इन्द्रा भंर दक्षिणेना वसूनि। पितः सिन्धूनामिस रेवतीनाम्। महा इन्द्रो य ओजंसा। पूर्जन्यो वृष्टिमा इव। स्तोमैंवृत्सस्यं वावृधे। महा इन्द्रो नृवदाचंर्षिणुप्राः॥१३॥

उत द्विबर्हां अमिनः सहोंभिः। अस्मद्रियंग्वावृधे वीर्याय। उरुः पृथः सुकृतः कर्तृभिर्भूत्। पिप्रीहि देवा उश्वतो यंविष्ठ। विद्वा ऋतू रुर्ऋतुपते यजेह। ये दैव्यां ऋत्विज् स्तेभिरग्ने। त्व होतृंणाम्स्यायंजिष्ठः। अग्नि इ स्विष्टकृतम्। अयांड्गिरग्नेः प्रिया धामांनि। अयाद्वोमंस्य प्रिया धामांनि॥१४॥

अयांडुग्नेः प्रिया धामांनि। अयांद्रुजापंतेः प्रिया धामांनि। अयांडुग्नीषोमयोः प्रिया धामांनि। अयांडिन्द्राग्नियोः प्रिया धामांनि। अयाडिन्द्रंस्य प्रिया धामांनि। अयाँण्महेन्द्रस्यं प्रिया धामांनि। अयाँहेवानांमाज्यपानां प्रिया धामांनि। यक्षंद्ग्नेर्होतुंः प्रिया धामांनि। यक्ष्तत्स्वं मंहिमानम्। आयंजतामेज्या इषंः। कृणोतु सो अध्वरा जातवेदाः। जुषता हिवः। अग्ने यदद्य विशो अध्वरस्य होतः। पावंक शोचे वेष्व हि यज्वां। ऋता यंजासि महिना वियद्भः। हव्या वह यविष्ठ या ते अद्या१५॥

अस्त्वृधृत्तु र्यिं चंर्षिणुप्राः सोमंस्य प्रिया धामानीषुष्यद्वं॥७॥—————[७]

उपंहूत रथन्तर सह पृथिव्या। उपं मा रथन्तर सह पृथिव्या ह्रंयताम्। उपंहूतं वामदेव्य सहान्तरिक्षेण। उपं मा वामदेव्य सहान्तरिक्षेण ह्रयताम्। उपंहूतं बृहत्सह दिवा। उपं मा बृहत्सह दिवा ह्रंयताम्। उपंहूताः सप्त होत्राः। उपं मा सप्त होत्रां ह्रयन्ताम्। उपंहूता धेनुः सहर्षंभा। उपं मा धेनुः सहर्षंभा ह्रयताम्॥१६॥

उपंहूतो भृक्षः सखाँ। उपं मा भृक्षः सखाँ ह्वयताम्। उपंहूताँ(४)हो। इडोपंहूता। उपंहूतेडाँ। उपों अस्मा॰ इडाँ ह्वयताम्। इडोपंहूता। उपंहूतेडाँ। मानुवी घृतपंदी मैत्रावरुणी। ब्रह्मं देवकृत्मुपंहूतम्॥१७॥

दैव्यां अध्वर्यव् उपंहूताः। उपंहूता मनुष्याः। य इमं यज्ञमवान्। ये यज्ञपंतिं वर्धान्। उपंहूते द्यावापृथिवी। पूर्वजे ऋतावंरी। देवी देवपुत्रे। उपंहूतोऽयं यजमानः। उत्तरस्यान्देवयुज्यायामुपंहूतः। भूयंसि हिव्ष्करंण उपंहूतः। दिव्ये धामन्नुपंहूतः। इदं में देवा ह्विर्जुषन्तामिति तस्मिन्नुपंहूतः। विश्वंमस्य प्रियमुपंहूतम्। विश्वंस्य प्रियस्योपंहूतस्योपंहूतः॥१८॥

सहर्षंभा ह्वयतामुपंहूत हिवेष्करंण उपंहूतश्चत्वारि च॥८॥______[८]

देवं ब्रहिः। वसुवनं वसुधेयंस्य वेतु। देवो नराशक्संः। वसुवनं वसुधेयंस्य वेतु। देवो अग्निः स्विष्टकृत्। सुद्रविणा मन्द्रः कृविः। सृत्यमंन्मायजी होतां। होतुंर्होतुरायंजीयान्। अग्ने यान् देवानयांट्। याक् अपिंप्रेः। ये ते होत्रे अमंत्सत। ताक्ष् संसुनुषीक्ष् होत्रांन्देवङ्गमाम्। दिवि देवेषुं यज्ञमेरंयेमम्। स्विष्टकृचाग्ने होताऽभूः। वसुवनं वसुधेयंस्य नमोवाके वीहि॥१९॥

अपिंप्रेः पर्श्व च॥९॥————[९]

इदं द्यांवापृथिवी भुद्रमंभूत्। आर्ध्मं सूक्तवाकम्। उत नेमोवाकम्। ऋध्यास्मं सूक्तोच्यंमग्ने। त्वश् सूक्तवागंसि। उपंश्रितो दिवः पृथिव्योः। ओमंन्वती तेऽस्मिन् युज्ञे यंजमान् द्यावांपृथिवी स्ताम्। शङ्गये जीरदान्। अत्रंस्रू अप्रवेदे। उरुगंव्यूती अभयं कृतौं॥२०॥

वृष्टिद्यांवा रीत्यांपा। शम्भवौ मयोभवौँ। ऊर्जस्वती च पर्यस्वती च। सूप्चर्णा चं स्वधिचर्णा चं। तयोराविदि। अग्निरिद॰ हविरंजुषत। अवीवृधत् महो ज्यायोऽकृत। सोमं इद १ ह्विरंजुषत। अवींवृधत् महो ज्यायों ऽकृत। अग्निरिद १ ह्विरंजुषत॥ २१॥

अवींवृधत् महो ज्यायोंऽकृत। प्रजापंतिरिदः ह्विरंजुषत। अवींवृधत् महो ज्यायोंऽकृत। अग्नीषोमांविदः ह्विरंजुषेताम्। अवींवृधेतां महो ज्यायोंऽक्राताम्। इन्द्राग्नी इदः ह्विरंजुषेताम्। अवींवृधेतां महो ज्यायोंऽक्राताम्। इन्द्रं इदः ह्विरंजुषता अवींवृधत् महो ज्यायोंऽकृत। महेन्द्र इदः ह्विरंजुषत॥२२॥

अवीवृधत् महो ज्यायोऽकृत। देवा आँज्यपा आज्यंमजुषन्त। अवीवृधन्त महो ज्यायोऽक्रत। अग्निरहोत्रेणेद १ ह्विरंजुषत। अवीवृधत् महो ज्यायोऽकृत। अस्यामृधद्धोत्रांयान्देवङ्गमायांम्। आशांस्तेऽयं यर्जमानोऽसौ। आयुरा शांस्ते। सुप्रजास्त्वमा शांस्ते। सजातवनस्यामा शांस्ते॥२३॥

उत्तरान्देवयुज्यामा शाँस्ते। भूयों हिव्ष्करंणमा शाँस्ते। दिव्यन्धामा शाँस्ते। विश्वं प्रियमा शाँस्ते। यदनेनं हिवषाऽऽशाँस्ते। तदंश्यात्तदंध्यात्। तदंस्मै देवा रांसन्ताम्। तद्ग्निर्देवो देवेभ्यो वनंते। व्यम्ग्नेर्मानुंषाः। इष्टं चं वीतं चं। उभे चं नो द्यावांपृथिवी अर्हंसस्पाताम्। इह गतिंर्वामस्येदं चं। नमों देवेभ्यंः॥२४॥

अभ्यं कृतांवकृताग्निरिद॰ ह्विरंजुषत महेन्द्र इद॰ ह्विरंजुषत सजातवन्स्यामा शाँस्ते वीतं च

त्रीणिं च॥१०॥—————[१९

तच्छं योरावृंणीमहे। गातुं यज्ञायं। गातुं यज्ञपंतये। दैवीं स्वस्तिरंस्तु नः। स्वस्तिर्मानुंषेभ्यः। ऊर्ध्वक्षिंगातु भेषजम्। शं नो अस्तु द्विपदें। शश्चतुंष्पदे॥२५॥

तच्छं योर्ष्टौ॥११॥

११

आप्यांयस्व सन्तैं। इह त्वष्टांरमग्रियन्तन्नंस्तुरीपम्ं। देवानां पत्नीरुशतीरंवन्तु नः। प्रावंन्तु नस्तुजये वाजंसातये। याः पार्थिवासो या अपामिपं व्रते। ता नों देवीः सहवाः शर्मयच्छत। उत ग्रा वियन्तु देवपंत्नीः। इन्द्राण्यंग्राय्यश्विनी राट्। आ रोदंसी वरुणानी शृंणोतु। वियन्तुं देवीर्य ऋतुर्जनीनाम्॥२६॥

अग्निर्होतां गृहपंतिः स राजां। विश्वां वेद् जिनेमा जातवंदाः। देवानांमुत यो मर्त्यांनाम्। यिजेष्ठः स प्र यंजतामृतावां। व्यम् त्वा गृहपते जनांनाम्। अग्ने अकंम समिधां बृहन्तम्। अस्थूिर णो गार्हंपत्यानि सन्तु। तिग्मेनं नस्तेजंसा सर्शिशाधि॥२७॥

जनीनामष्टौ चं॥१२॥=

[१२]

उपंहूत रथन्तर सह पृथिव्या। उपं मा रथन्तर सह पृथिव्या ह्वंयताम्। उपंहूतं वामदेव्य सहान्तिरक्षेण। उपं मा वामदेव्य सहान्तिरिक्षेण ह्वयताम्। उपंहूतं बृहत्सह दिवा। उपं मा बृहत्सह दिवा ह्वंयताम्। उपंहूताः सप्त होत्रौंः। उपं मा सप्त होत्रौं ह्वयन्ताम्। उपंहूता धेनुः सहर्षभा। उपं मा धेनुः सृहर्षंभा ह्वयताम्॥२८॥

उपंहूतो भृक्षः सर्खां। उपं मा भृक्षः सर्खां ह्रयताम्। उपंहूताँ(४)हो। इडोपंहूता। उपंहूतेडां। उपो अस्मार इडां ह्रयताम्। इडोपंहूता। उपंहूतेडां। मानुवी घृतपंदी मैत्रावरुणी। ब्रह्मं देवकृतुमुपंहूतम्॥२९॥

दैव्यां अध्वर्यव उपंहूताः। उपंहूता मनुष्याः। य इमं यज्ञमवान्। ये यज्ञपंत्रीं वर्धान्। उपंहूते द्यावांपृथिवी। पूर्वजे ऋतावंरी। देवी देवपुंत्रे। उपंहूतेयं यज्ञमाना। इन्द्राणीवांऽविध्वा। अदिंतिरिव सुपुत्रा। उत्तरस्यान्देवयुज्यायामुपं भूयंसि हिव्ष्करण उपंहूता। दिव्ये धामृत्रुपंहूता। इदं में देवा हिवर्जुषन्तामिति तस्मिन्नुपंहूता। विश्वंमस्याः प्रियमुपंहूतम्। विश्वंस्य प्रियस्योपंहृतस्योपंहृता॥३०॥

सहर्षंभा ह्वयतामुपंहृत सपुत्रा षद्वं॥१३॥------[१३]

सत्यं प्रबोऽग्नें महानृग्निर्होतां समिधोऽग्निर्वृत्राण्यग्निर्मूर्धोपंहूतन्देवं ब्र्हिर्दिं द्यांवापृथिवी तच्छुं योरा प्यांयुस्वोपंहूत्त्रयोदश॥१३॥

स्त्यं वयः स्याम वृष्टिद्यांवा त्रिर्शत्॥३०॥

स्त्यमुपंहूता॥

हरिंः ओम्॥

॥इति श्रीकृष्णयजुर्वेदीयतैत्तिरीयब्राह्मणे तृतीयाष्टके पश्चमः प्रपाठकः समाप्तः॥

॥षष्ठमः प्रश्नः॥

॥ तैत्तिरीयब्राह्मणे तृतीयाष्टके षष्टः प्रपाठकः॥

अञ्जन्ति त्वामंध्वरे देवयन्तः। वनंस्पते मधुना दैव्येन। यदूर्ध्वस्तिष्ठाद्वविणेह धंत्तात्। यद्वा क्षयो मातुर्स्या उपस्थै। उच्छ्रंयस्व वनस्पते। वर्ष्मन्पृथिव्या अधि। सुमिती मीयमानः। वर्चोधा यज्ञवाहसे। समिद्धस्य श्रयंमाणः पुरस्तात्। ब्रह्मं वन्वानो अजर्र सुवीरम्॥१॥

आरे अस्मदमंतिं बाधंमानः। उच्छ्रंयस्व मह्ते सौभंगाय। ऊर्ध्व ऊषुणं ऊतयें। तिष्ठां देवो न संविता। ऊर्ध्वो वाजंस्य सनिता यदिक्षिभिः। वाघिद्विविह्वयांमहे। ऊर्ध्वो नः पाह्य १ हंसो नि केतुनां। विश्व १ सम्त्रिणन्दह। कुधी नं ऊर्ध्वां च रथांय जीवसें। विदा देवेषुं नो दुवंः॥२॥

जातो जांयते सुदिन्त्वे अहाँम्। सम्यं आ विद्ये वर्धमानः। पुनित् धीरां अपसो मनीषा। देवया विप्र उदियर्ति वाचम्ं। युवां सुवासाः परिवीत् आगात्। स उ श्रेयांन्भवित् जायंमानः। तन्धीरांसः क्वय् उन्नयन्ति। स्वाधियो मनसा देवयन्तः। पृथुपाजा अमर्त्यः। घृतिनिर्णिख्स्वाहुतः। अग्निर्युज्ञस्यं हव्यवाद। त॰ स्वाधों यतः स्नुचः। इत्था धिया यज्ञवंन्तः। आचंकुर्ग्निमूतयें। त्वं वर्रुण उत मित्रो अग्ने। त्वां वर्धन्ति मृतिभिर्वसिष्ठाः। त्वे वस्ं सुषण्नानि

सन्तु। यूयं पांत स्वस्तिभिः सदां नः॥३॥

सुवीर्-दुवः स्वांहुतोऽष्टौ चं॥१॥

-[१]

होतां यक्षद्ग्नि स्मिधां सुष्मिधा समिद्धं नाभां पृथिव्याः संङ्ग्थे वामस्यं। वर्ष्मन्दिव इडस्पदे वेत्वाज्यंस्य होत्र्यजं। होतां यक्ष्मतनूनपांत्मिदितेर्गर्भं भुवंनस्य गोपाम्। मध्वाद्य देवो देवेभ्यों देवयानांन्प्यो अनक्तु वेत्वाज्यंस्य होत्र्यजं। होतां यक्षन्नराशर्भं नृश्स्त्रं नृश्ः प्रणेत्रम्। गोभिर्वपावान्त्स्याद्वीरेः शक्तीवान्नथैः प्रथम्या वा हिरंण्येश्चन्द्री वेत्वाज्यंस्य होत्र्यजं। होतां यक्षद्गिमिड ईडितो देवो देवार आवंक्षद्द्तो हंव्यवाडमूरः। उपेमं यज्ञमुपेमां देवो देवहूंतिमवतु वेत्वाज्यंस्य होत्र्यजं। होतां यक्षद्वर्रहिः सुष्टरीमोर्णमदा अस्मिन् यज्ञे वि च प्र चं प्रथतार स्वास्स्थं देवेभ्यः। एमेनदद्य वस्त्वो रुद्रा आंदित्याः संदन्तु प्रियमिन्द्रंस्यास्तु वेत्याज्यंस्य होत्र्यंजं॥४॥

होतां यक्ष्रद्दुरं ऋष्वाः कंवष्यो कोषधावनीरुदातांभीर्जिहंतां विपक्षोंभिः श्रयन्ताम्। सुप्रायणा अस्मिन् यज्ञे विश्रयन्तामृतावृधों वियन्त्वाज्यंस्य होत्र्यजं। होतां यक्षदुषासानक्तां बृह्ती सुपेशंसा नृश्ः पितंभ्यो योनिं कृण्वाने। स्र्स्मयंमाने इन्द्रंण देवैरेदं ब्र्हिः सींदतां वीतामाज्यंस्य होत्र्यजं। होतां यक्ष्देव्या होतांरा

मन्द्रा पोतारा कवी प्रचेतसा। स्विष्टमद्यान्यः करदिषा स्वंभिगूर्तमन्य ऊर्जा सतंवसेमं यज्ञं दिवि देवेषुं धत्तां वीतामाज्यंस्य होतर्यजं। होतां यक्षत्तिस्रो देवीरपसांमपस्तंमा अच्छिंद्रमद्येदमपंस्तन्वताम्। देवेभ्यों देवीर्देवमपो वियन्त्वाज्यंस्य होतर्यजं। होतां यक्षत्त्वष्टांरमचिंष्टुमपांक ५ रेतोधां विश्रवसं यशोधाम्। पुरुरूपुमकांमकर्शन १ सुपोषः पोषैः स्यात्सुवीरों वीरैर्वेत्वाज्यंस्य होत्यर्ज। होतां यक्षद्वनस्पतिंमुपावंस्रक्षद्धियो जोष्टार ५ शशमन्नरंः। स्वदात्स्विधितिर्ऋतुथाद्य देवो देवेभ्यो हव्यावाङ्वेत्वाज्यंस्य होतर्यजं। होतां यक्षदग्निः स्वाहाऽऽज्यंस्य स्वाहा मेदंसः स्वाहां स्तोकाना् स्वाहा स्वाहांकृतीना् स्वाहां हव्यसूँक्तीनाम्। स्वाहां देवा र आंज्यपान्त्स्वाहाऽग्नि र होत्राञ्जुंषाणा अग्न आज्यंस्य वियन्तु होतुर्यजं॥५॥

प्रियमिन्द्रंस्यास्तु वेत्वाज्यंस्य होत्र्यंजं सुवीरों वी्रैवेंत्वाज्यंस्य होत्र्यंजं चृत्वारिं च (अग्निन्तनूनपांतृत्रराशश्संमृग्निमृड ईंडितो ब्र्हिर्द्रं उपासानक्ता दैव्यां तिस्रस्त्वष्टांर् वनस्पितंमृग्निम्। पश्च वेत्वेकों वियन्तु द्विर्वीतामेकों वियन्तु द्विर्वेत्वेकों वियन्तु होत्र्यंजं ॥)॥२॥————[२]

सिमंद्धो अद्य मनुषो दुरोणे। देवो देवान् यंजिस जातवेदः। आ च वहं मित्रमहिश्चिकित्वान्। त्वन्दूतः कविरंसि प्रचेताः। तनूनपात्पथ ऋतस्य यानान्। मध्वां सम्अन्त्स्वंदया सुजिह्व। मन्मांनि धीभिरुत यज्ञमृन्धन्। देवत्रा चं कृणुह्यध्वरन्नंः। नराशः संस्य महिमानंमेषाम्। उपं स्तोषाम यज्ततस्यं

यज्ञैः॥६॥

ते सुक्रतंवः शुचंयो धियन्धाः। स्वदंन्तु देवा उभयांनि ह्व्या। आजुह्वांन ईड्यो वन्द्यंश्व। आयाँह्यग्ने वसुंभिः सजोषाः। त्वं देवानांमिस यह्व होतां। स एंनान् यक्षीषितो यजीयान्। प्राचीनं बर्हः प्रदिशां पृथिव्याः। वस्तोर्स्या वृंज्यते अग्रे अहाँम्। व्यं प्रथते वित्रं वरीयः। देवेभ्यो अदितये स्योनम्॥७॥

व्यचंस्वतीरुर्विया विश्रंयन्ताम्। पतिभ्यो न जनंयः शुम्भंमानाः। देवींर्द्वारो बृहतीर्विश्वमिन्वाः। देवेभ्यो भवथ सुप्रायणाः। आसुष्वयंन्ती यज्ते उपांके। उषासानक्तां सदतां नि योनौं। दिव्ये योषंणे बृह्ती सुंरुक्ये। अधि श्रियर् शुक्रपिशन्दधांने। देव्या होतांरा प्रथमा सुवाचौ। मिमांना युज्ञं मनुषो यज्ञंध्यै॥८॥

प्रचोदयंन्ता विदर्थेषु का्रू। प्राचीनं ज्योतिः प्रदिशां दिशन्तां। आ नो यज्ञं भारती तूर्यमेतु। इडां मनुष्वदिह चेतर्यन्ती। तिस्रो देवीर्बर्हरेद स्योनम्। सरंस्वती स्वपंसः सदन्तु। य इमे द्यावापृथिवी जनित्री। रूपैरिप श्रुद्धवंनानि विश्वां। तम्द्य होतिरिषितो यजीयान्। देवन्त्वष्टांरिम्ह यंक्षि विद्वान्॥९॥

उपावंसृज्त्मन्यां सम्अन्। देवानां पार्थं ऋतुथा ह्वी १ षि। वन्स्पतिः शमिता देवो अग्निः। स्वदंन्तु ह्व्यं मधुना घृतेन। सद्यो जातो व्यंमिमीत युज्ञम्। अग्निर्देवानांमभवत्पुरोगाः।

अस्य होतुंः प्रदिश्यृतस्यं वाचि। स्वाहांकृतः ह्विरंदन्तु देवाः॥१०॥

युज्ञैः स्योनं यर्जध्यै विद्वानृष्टौ चं॥३॥-----[३]

अग्निर्होतां नो अध्वरे। वाजी सन्परिणीयते। देवो देवेषुं यज्ञियः। परित्रिविष्ट्यंध्वरम्। यात्यग्नी र्थीरिव। आ देवेषु प्रयो दर्धत्। परि वाजंपतिः कविः। अग्निर्ह्व्यान्यंक्रमीत्। दधद्रत्नांनि दाशुषे॥११॥

अग्निर्होतां नो नवं॥४॥————[४]

अजैंद्गिः। असंनुद्वाज्ञि। देवो देवेभ्यों ह्व्यावाँट्। प्राञ्जोभिर्हिन्वानः। धेनांभिः कर्ल्पमानः। यज्ञस्यार्यः प्रतिरन्। उप प्रेष्यं होतः। हव्या देवेभ्यः॥१२॥

दैव्याः शमितार उत मंनुष्या आरंभध्वम्। उपंनयत् मेध्या दुरंः। आशासांना मेधंपतिभ्यां मेधम्। प्रास्मां अग्निं भंरत। स्तृणीत बुर्हिः। अन्वेनं माता मंन्यताम्। अनुं पिता। अनु भ्राता सर्गर्भ्यः। अनु सखा सयूँथ्यः। उदीचीनार् अस्य पदो निधंत्तात्॥१३॥

सूर्यश्रक्षुंर्गमयतात्। वातं प्राणम्नववंसृजतात्। दिशः श्रोत्रम्। अन्तरिक्षमसुम्। पृथिवी शरीरम्। एक्धाऽस्य त्वचमाच्छातात्। पुरा नाभ्यां अपिशसों वपामुत्खिंदतात्। अन्तरेवोष्माणं वारयतात्। श्येनमंस्य वक्षः कृणुतात्।

प्रशसां बाहू॥१४॥

श्ला दोषणीं। कृश्यपेवा रसाँ। अच्छिंद्रे श्रोणीं। कृवषोरू स्रोकपंणिष्ठीवन्ताँ। षिट्व रशितरस्य वङ्क्ष्यः। ता अनुष्ठोच्यांवयतात्। गात्रंङ्गात्रमस्यानूंनं कृणुतात्। ऊवध्यगोहं पार्थिवङ्कनतात्। अस्रा रक्षः सरसृंजतात्। वनिष्ठमंस्य मा रांविष्ट॥१५॥

उर्रूकं मन्यंमानाः। नेद्वंस्तोके तनये। रवितारवेच्छमितारः। अभ्रिंगो शमीष्वम्। सुशमिं शमीष्वम्। शुमीष्वमंभ्रिगो। अभ्रिंगुश्चापांपश्च। उभौ देवानार् शमितारौँ। ताविमं पृशु ॥ श्रंपयतां प्रविद्वारसौँ। यथांयथाऽस्य श्रपंणन्तथांतथा॥१६॥

पुत्ताद्वाहू मा रांविष्ट् तथांतथा॥६॥——————[$oldsymbol{\xi}$]

जुषस्वं स्प्रथंस्तमम्। वचों देवप्संरस्तमम्। ह्व्या जुह्वांन आसिनं। इमं नों यज्ञम्मृतेषु धेहि। इमा ह्व्या जांतवेदो जुषस्व। स्तोकानांमग्ने मेदंसो घृतस्यं। होतः प्राशांन प्रथमो निषद्यं। घृतवंन्तः पावक ते। स्तोकाः श्लोतन्ति मेदंसः। स्वधंमन्देववींतये॥१७॥

श्रेष्ठं नो धेहि वार्यम्। तुभ्य ६ स्तोका घृतश्चर्तः। अग्रे विप्राय सन्त्य। ऋषिः श्रेष्ठः समिध्यसे। यज्ञस्यं प्राविता भंव। तुभ्य ६ श्चोतन्त्यिप्रगो शचीवः। स्तोकासो अग्रे मेदंसो घृतस्यं। कृविशस्तो बृहता भानुनागाः। हव्या जुंषस्व मेधिर। ओजिंष्ठन्ते मध्यतो मेद् उद्गृतम्। प्र तें वयन्दंदामहे। श्लोतंन्ति ते वसो स्तोका अधित्वचि। प्रति तान्दंवशोविंहि॥१८॥

आवृंत्रहणा वृत्रहिमः शुष्मैः। इन्द्रं यातन्नमोंभिरग्ने अर्वाक्। युव र राधोभिरकंवेभिरिन्द्र। अग्ने अस्मे भंवतमुत्तमेभिः। होतां यक्षदिन्द्राग्नी। छागंस्य वृपाया मेदंसः। जुषेता हित्रां होत्र्यजं। विह्यख्यन्मनंसा वस्यं इच्छन्। इन्द्रौग्नी ज्ञास उत वां सजातान्॥१९॥

नान्या युवत्प्रमंतिरस्ति मह्यम्। स वान्धियं वाज्यन्तीमतक्षम्। होतां यक्षदिन्द्राग्नी। पुरोडाशंस्य जुषेता रे ह्विः। होत्र्यजं। त्वामींडते अजिरन्दूत्यांय। ह्विष्मेन्तः सद्मिन्मानुंषासः। यस्यं देवैरासंदो ब्रहिरंग्ने। अहान्यस्मे सुदिनां भवन्तु। होतां यक्षदिग्निम्। पुरोडाशंस्य जुषता रे ह्विः। होत्र्यजं॥२०॥

सजातानग्निन्द्रे चं॥८॥••••••

गीर्भिर्विप्रः प्रमंतिमिच्छमानः। ईट्टे र्यिं यशसं पूर्वभाजम्। इन्द्रांग्री वृत्रहणा सुवज्रा। प्र णो नव्येभिस्तिरतन्देष्णैः। माच्छेंद्म र्श्मी श्रिति नार्थमानाः। पितृणा शक्तीरन्यच्छंमानाः। इन्द्राग्निभ्याङ्कं वृषंणो मदन्ति। ताह्यद्री धिषणांया उपस्थैं। अग्निश् सुंदीतिश् सुंदर्शं गृणन्तः। नमस्यामस्त्वेड्यं जातवेदः। त्वान्दूतमंर्तिश् हंव्यवाहम्ं। देवा अंकृण्वन्नमृतंस्य

नाभिम्॥ २१॥

जातुबेदो हे चं॥९॥lacksquare

त्व इ ह्यंग्ने प्रथमो मनोतां। अस्या धियो अभंवो दस्महोतां। त्व सीं वृषन्नकृणोर्दृष्टरीत्। सहो विश्वंस्मै सहंसे सहंध्ये। अधा होता न्यंसीदो यजीयान्। इडस्पद इषयन्नीड्यः सन्। तन्त्वा नरंः प्रथमन्दंवयन्तंः। महो राये चितयंन्तो अनुंग्मन्। वृतेव यन्तं बहुभिर्वस्वयैः। त्वे र्यिञ्जांगृवा सो अनुंग्मन्॥२२॥

रुशंन्तम् भिन्दंर्शतम्बृहन्तम्। वपावंन्तं विश्वहां दीदिवा स्म्। पदन्देवस्य नमंसा वियन्तः। श्रृवस्यवः श्रवं आपृत्रमृंक्तम्। नामानि चिद्दिधिरे युज्ञियांनि। भृद्रायांन्ते रणयन्त सन्दंष्टौ। त्वां वंधन्ति क्षित्रयः पृथिव्याम्। त्व रायं उभयांसो जनांनाम्। त्वन्राता तंरणे चेत्योंभूः। पिता माता सदिमन्मानुंषाणाम्॥२३॥

सप्र्येण्यः स प्रियो विक्ष्वंग्निः। होतां मृन्द्रो निषंसादा यजीयान्। तन्त्वां वयन्दम् आ दीदिवा स्मम्। उपंज्ञुबाधो नर्मसा सदेम। तन्त्वां वय स्पृधियो नव्यंमग्ने। सुम्नायवं ईमहे देवयन्तंः। त्वं विशों अनयो दीद्यांनः। दिवो अंग्ने बृह्ता रोचनेनं। विशां कृविं विश्पति शर्श्वतीनाम्। नितोशंनं वृष्भं चंर्षणीनाम्॥२४॥

प्रेतीषणि मिषयेन्तं पावकम्। राजन्तमुग्निं यंज्ञत र रयीणाम्।

सो अंग्न ईजे शश्मे च मर्तः। यस्त आनंद्विमिधां ह्व्यदांतिम्। य आहुंतिं परि वेदा नमोंभिः। विश्वेत्सवामा दंधते त्वोतंः। अस्मा उं ते मिहं महे विंधेम। नमोंभिरग्ने समिधोत ह्व्यैः। वेदींसूनो सहसो गीर्भिरुक्थैः। आ ते भुद्राया समृतौ यंतेम॥२५॥

आ यस्तृतन्थ रोदंसी विभासा। श्रवोभिश्च श्रवस्यंस्तरुत्रः। बृहद्भिवांजैः स्थविरेभिर्स्मे। रेवद्भिरग्ने वितृरं वि भांहि। नृवद्धंसो सद्मिद्धंह्यस्मे। भूरितोकाय तनयाय पृश्वः। पूर्वीरिषो बृह्तीरारे अंघाः। अस्मे भुद्रा सौंश्रवसानि सन्तु। पुरूण्यंग्ने पुरुधा त्वाया। वसूनि राजन्वसुतांते अश्याम्। पुरूणि हि त्वे पुरुवार सन्ति। अग्ने वसुं विधृते राजनित्वे॥२६॥

जागृवा १ सो अर्नुग्मन्मानुंषाणा श्रर्षणीनां यंतेमाश्यान्द्वे चं॥१०॥—————[१०]

आभंरतर शिक्षतं वज्रबाहू। अस्मार इंन्द्राग्नी अवत्र् शचींभिः। इमे न ते र्श्मयः सूर्यस्य। येभिः सिपृत्वं पितरों न आयन्। होतां यक्षदिन्द्राग्नी। छार्गस्य ह्विष् आत्तांमुद्य। मध्यतो मेद उद्गृतम्। पुरा द्वेषौभ्यः। पुरा पौरुषेय्या गृभः। घस्तौन्नूनम्॥२७॥

घासे अंज्राणां यवंसप्रथमानाम्। सुमत्क्षंराणाः शृतरुद्रियाणाम्। अग्निष्वात्तानां पीवोपवसनानाम्। पार्श्वतः श्रोणितः शितामृत उत्साद्तः। अङ्गादङ्गादवंत्तानाम्। करंत एवेन्द्राग्नी। जुषेता १ ह्विः। होत्यर्ज। देवेभ्यों वनस्पते ह्वी १ षिं। हिरण्यपर्ण प्रदिवंस्ते अर्थम्॥ २८॥

प्रदक्षिणिद्रंशनयां निययं। ऋतस्यं वक्षि पृथिभी रिजंष्ठेः। होतां यक्षद्वनस्पितंमभिहि। पिष्टतंमया रिभंष्ठया रश्नयाधित। यत्रेन्द्राग्नियोश्छागंस्य ह्विषंः प्रिया धामांनि। यत्र वनस्पतेः प्रिया पाथार्स्स। यत्रं देवानांमाज्यपानां प्रिया धामांनि। यत्राग्नेरहोतुः प्रिया धामांनि। तत्रैतं प्रस्तुत्येवोप्स्तुत्ये वोपावंस्रक्षत्। रभीयारसमिव कृत्वी॥२९॥

करंदेवन्देवो वनस्पतिः। जुषता १ ह्विः। होत्र्यंजं। पिप्रीहि देवा १ उश्तो यविष्ठ। विद्वा १ ऋतू १ र्ऋतुपते यजेह। ये दैव्यां ऋत्विज् स्तेभिरग्ने। त्व १ होतृंणामस्यायंजिष्ठः। होतां यक्षद्ग्नि १ स्विष्टकृतम्। अयांड्ग्निरिन्द्राग्नियोश्छागंस्य ह्विषंः प्रिया धामांनि। अयाङ्गनस्पतेः प्रिया पाथा १ सि। अयाङ्गवानांमाज्यपानां प्रिया धामांनि। यक्षंद्ग्नेर्होतुः प्रिया धामांनि। यक्षंद्ग्नेर्होतुः प्रिया धामांनि। यक्षंद्ग्नेर्होतुः प्रिया धामांनि। यक्षंद्ग्नेर्होतुः प्रिया धामांनि। यक्ष्तत्स्वं महिमानम्। आयंजतामेज्या इषः। कृणोतु सो अध्वरा जातवेदाः। जुषता १ ह्विः। होत्र्यंजं॥३०॥

नूनमर्थं कृत्वी पाथा^५सि सप्त चं॥११॥**————[१९**]

उपों हु यद्विदर्थं वाजिनो गूः। गीर्भिर्विप्राः प्रमंतिमिच्छमानाः। अर्वन्तो न काष्ठान्नक्षंमाणाः। इन्द्राग्नी जोहुंवतो नर्स्ते। वनंस्पते रश्नयांऽभिधायं। पिष्टतंमया वयुनांनि विद्वान्। वहं देवत्रा दिधिषो ह्वी १ षिं। प्र चंदातारंम्मृतेषु वोचः। अग्नि १ स्विष्टकृतम्। अयांड्ग्निरिन्द्राग्नियोश्छगंस्य ह्विषेः प्रिया धामांनि॥ ३१॥

अयाङ्गनस्पतैः प्रिया पाथा १सि। अयाँ हुवानां माज्यपानां प्रिया धामांनि। यक्षंद्रग्नेर्होतुः प्रिया धामांनि। यक्ष्तत्स्वं महिमानम्। आयं जतामे ज्या इषः। कृणोतु सो अध्वरा जातवेदाः। जुषता १ हिवः। अग्ने यद्द्य विशो अध्वरस्य होतः। पावंक शोचे वेष्व १ हि यज्वां। ऋता यं जासि महिना वियद्भः। हव्या वंह यविष्ठ या ते अद्या ३२॥

धार्मानि भूरेकं च॥१२॥———[१२]

देवं ब्र्हिः सुंदेवन्देवैः स्यात्सुवीरं वीरैर्वस्तौंर्वृज्येताकाः प्रिभ्रेयेतात्यन्यात्राया ब्र्हिष्मंतो मदेम वसुवने वसुधेयंस्य वेतु यर्जा। देवीर्द्वारं सङ्घाते विङ्वीर्यामञ्छिथिरा ध्रुवा देवहूंतौ वत्स ईमनास्तरुण आमिमीयात्कुमारो वा नवंजातो मेना अर्वा रेणुकंकाटः पृणंग्वसुवने वसुधेयंस्य वियन्तु यर्जा। देवी उषासानक्ताऽद्यास्मिन्यज्ञे प्रयत्यंह्वतामपि नूनन्दैवीर्विशः प्रायासिष्टा सप्रीते सुधिते वसुवने वसुधेयंस्य वीतां यर्जा। देवी जोष्ट्री वसुधिती ययोर्न्याऽघाद्वेषा सि यूयवदान्यावंक्षद्वसु

वार्याणि यर्जमानाय वसुवने वसुधेर्यस्य वीतां यर्ज। देवी ऊर्जाहुंती इषुमूर्जम्नयावंक्षुत्सिण्डि सपीतिम्न्या नवेन पूर्वन्दयंमानाः स्यामं पुराणेन नवन्तामूर्जमूर्जाह्ंती ऊर्जयमाने अधातां वसुवने वसुधेयस्य वीतां यर्ज। देवा दैव्या होतांरा नेष्टांरा पोतांरा हताघंश सावाभ्रद्धंसू वसुवने वसुधेयंस्य वीतां यजं। देवीस्तिस्रस्तिस्रो देवीरिडा सरस्वती भारती द्यां भारत्यादित्यैरंस्पृक्षत्सरंस्वतीम र रुद्रैर्य्ज्ञमांवीदिहैवेडंया वसुंमत्या सधुमादं मदेम वसुवनं वसुधेयंस्य वियन्तु यजं। देवो नराश १ संस्निशीर्षा षंडक्षः शतमिदेन १शितिपृष्ठा आदंधित सहस्रंमीं प्रवंहन्ति मित्रावरुणेदंस्य होत्रमर्हतो बृहस्पतिंः स्तोत्रमृश्विनाऽऽध्वंर्यवं वसुवनंवसुधेयस्यं वेतु यर्जा। देवो वनस्पतिवर्षप्रांवा घृतनिणिग्द्यामग्रेणास्पृक्षदान्तरिक्षं मध्यंनाप्राः पृथिवीमुपंरेणाद १ हिस्सुवनं वसुधेयंस्य वेतु यर्ज। देवं बर्हिवारितीनान्निधेधां ऽसि प्रच्युतीनामप्रच्युतन्निकाम्धरंणं पुरुस्पार्हं यशंस्वदेना बुर्हिषाऽन्या बुर्ही श्ष्यभि ष्यांम वसुवने वसुधेयंस्य वेतु यर्जा देवो अग्निः स्विष्टकृत्सुद्रविणा मुन्द्रः क्विः सत्यमंन्माऽऽयुजी होता होतुंर्होतुरायंजीयानभ्रे यान्देवानयाुड्या ५ अपिंप्रेर्ये तें होत्रे अमंत्सत ता ५ संसनुषी ५ होत्रान्देवङ्गमान्दिवि देवेषु यज्ञमेरयेम स्वष्टकृचाग्रे होता ऽभूर्वसुवने वसुधेयस्य नमोवाके वीहि यजं ॥३३॥

यजैकं च॥१३॥———[१३]

देवं ब्र्हिः। वसुवनं वसुधेयंस्य वेतु। देवीर्द्वारंः। वसुवनं वसुधेयंस्य वियन्तु। देवी उषासानक्तां। वसुवनं वसुधेयंस्य वीताम्। देवी जोष्ट्रीं। वसुवनं वसुधेयंस्य वीताम्। देवी ऊर्जाहुंती। वसुवनं वसुधेयस्य वीताम्॥३४॥

देवा दैव्या होतांरा। वसुवनं वसुधेयंस्य वीताम्। देवीस्तिस्रस्तिस्रो देवीः। वसुवनं वसुधेयंस्य वियन्तु। देवो नराश्र संः। वसुवनं वसुधेयंस्य वेतु। देवो वनस्पतिः। वसुवनं वसुधेयंस्य वेतु। देवो वनस्पतिः। वसुवनं वसुधेयंस्य वेतु। देवं बर्हिवीरितीनाम्। वसुवनं वसुधेयंस्य वेतु॥३५॥

देवो अग्निः स्विष्टकृत्। सुद्रविणा मृन्द्रः कृविः। स्त्यमंन्मायजी होताँ। होतुर्होतुरायंजीयान्। अग्ने यान्देवानयाँट्। या अपिप्रेः। ये ते होत्रे अमंत्सत। ता श् संस्नुषी होतां होताऽभूः। दिवि देवेषुं यज्ञमेरंयेमम्। स्विष्टकृचाग्ने होताऽभूः। वसुवने वसुधेयंस्य नमोवाके वीहि॥३६॥

वीतां वेत्वभूरेकं च॥१४॥-----[१४]

अग्निम्द्य होतांरमवृणीतायं यजंमानः पर्चन्यक्तीः पर्चन्युरोडाशंं बृध्नन्निन्द्राग्निभ्याञ्छागर्ं सूपस्था अद्य देवो वन्स्पतिरभवदिन्द्राग्निभ्यां छागेनाघंस्तान्तं मेदस्तः प्रतिपचताग्रंभीष्टामवीवृधेतां पुरोडाशंन त्वामुद्यर्षं आर्षेय ऋषीणात्रपादवृणीतायं यजंमानो बहुभ्य आ सङ्गंतेभ्य पृष में देवेषु वसु वार्या यंक्ष्यत इति ता या देवा देवदानान्यदुस्तान्यंस्मा आ च शास्वा चं गुरस्वेषितश्चं होत्रसिं भद्रवाच्यांय प्रेषितो मानुषः सूक्तवाकायं सूक्ता ब्रूंहि ॥३७॥

अग्निम्दौकम् ॥१५॥ ————[१५]

अञ्जन्ति होतां यक्षत्सिमिद्धो अद्याग्निरजैद्दैव्यां जुषस्वा वृंत्रहणा गीर्मिस्त्वः ह्याभंरतमुपोंह यद्देवं बर्हिः सुंदेवन्देवं बर्हिरिग्निमद्य पश्चंदश॥१५॥ अञ्जन्त्यग्निर्होतां नो गीर्मिरुपों हु यद्विदर्थं वाजिनः सप्तित्रिर्श्यत्॥३७॥ अञ्जन्तिं सूक्ताब्रूंहि॥

हरिः ओम्॥ ॥इति श्रीकृष्णयजुर्वेदीयतैत्तिरीयब्राह्मणे तृतीयाष्टके षष्टः प्रपाठकः समाप्तः॥

॥सप्तमः प्रश्नः॥

॥ तैत्तिरीयब्राह्मणे तृतीयाष्टके सप्तमः प्रपाठकः॥

सर्वान् वा एषों ऽग्नौ कामान्प्रवेशयति। यों ऽग्नीनंन्वाधायं व्रतमुपैतिं। सयदिनेष्ट्वा प्रयायात्। अकांमप्रीता एनङ्कामा नानुप्रयायुः। अतेजा अवीर्यः स्यात्। स जुंहुयात्। तुभ्यन्ता अङ्गिरस्तम। विश्वाः सुक्षितयः पृथंक्। अग्ने कामांय येमिर् इतिं। कामांनेवास्मिन्दधाति॥१॥

कामंप्रीता एनङ्कामा अनु प्रयान्ति। तेज्ञस्वी वीर्यावान्भवति। सन्तंतिर्वा एषा यज्ञस्यं। योंऽग्नीनंन्वाधायं व्रतमुपैतिं। स यदुद्वायंति। विच्छिंतिरेवास्य सा। तं प्राश्चंमुद्धृत्यं। मन्सोपतिष्ठेत। मनो वै प्रजापंतिः। प्राजापत्यो यज्ञः॥२॥ मनंसैव यज्ञ स् सन्तंनोति। भूरित्यांह। भूतो वै प्रजापंतिः। भूतिमेवोपैति। वि वा एष इंन्द्रियेणं वीर्येणर्ध्यते। यस्याहिताग्नेरिग्निरंपक्षायंति। याव्च्छम्यंया प्रविध्येत्। यदि तावंदपक्षायेत्। त स् सम्भरेत्। इदन्त एकं प्र उत् एकम्॥३॥

तृतीयेन ज्योतिषा संविशस्व। संवेशनस्तनुवै चारुरेधि। प्रिये देवानां पर्मे जनित्र इति। ब्रह्मणैवैन् सम्भरित। सैव ततः प्रायिश्वित्तः। यदि परस्तरामपक्षायेत्। अनुप्रयायावंस्येत्। सो एव ततः प्रायिश्वित्तः। ओषंधीर्वा एतस्यं पशून्पयः प्रविशति।

यस्यं हिवषे वृत्सा अपार्कृता धर्यन्ति॥४॥

तान् यदुह्यात्। यातयांम्ना ह्विषां यजेत। यन्न दुह्यात्। यज्ञपुरुरुन्तरियात्। वायव्यां यवागून्निर्वपेत्। वायुर्वे पर्यसः प्रदापयिता। स एवास्मै पयः प्रदापयित। पयो वा ओषंधयः। पयः पर्यः। पर्यसैवास्मै पयोऽवंरुन्धे॥५॥

अथोत्तंरस्मै ह्विषं वृत्सान्पार्कुर्यात्। सैव ततः प्रायंश्चित्तिः। अन्यत्रान् वा एष देवान्भाग्धेयेन् व्यर्धयति। ये यजंमानस्य सायङ्गृहमा गच्छंन्ति। यस्यं सायन्दुग्धः ह्विरार्तिमार्च्छतिं। इन्द्रांय ब्रीहीन्निरुप्योपं वसेत्। पयो वा ओषंधयः। पयं प्वारभ्यं गृहीत्वोपं वसति। यत्प्रातः स्यात्। तच्छृतं कुर्यात्॥६॥

अथेतंर ऐन्द्रः पुंरोडाशंः स्यात्। इन्द्रिये एवास्मै स्मीचीं दधाति। पयो वा ओषंधयः। पयः पयः। पयंसैवास्मै पयोऽवंरुन्थे। अथोत्तंरस्मै ह्विषे वृत्सान्पाकुर्यात्। सैव ततः प्रायंश्चित्तः। उभयान् वा एष देवान्भांगुधेयेन् व्यर्धयति। ये यजंमानस्य सायं चं प्रातश्चे गृहमा गच्छंन्ति। यस्योभयर् ह्विरार्तिमार्च्छति॥७॥

ऐन्द्रं पश्चेशरावमोदनित्रर्वपेत्। अग्निं देवतानां प्रथमं यंजेत्। अग्निम्ंखा एव देवताः प्रीणाति। अग्निं वा अन्वन्या देवताः। इन्द्रमन्वन्याः। ता एवोभयीः प्रीणाति। पयो वा ओषंधयः। पयः पर्यः। पर्यसैवास्मै पयोऽवंरुन्धे। अथोत्तरंस्मै ह्विषं वत्सानुपार्कुर्यात्॥८॥

सैव ततः प्रायंश्चित्तिः। अर्धो वा एतस्यं यज्ञस्यं मीयते। यस्य व्रत्येऽह्न्यल्यंनालम्भुका भवंति। तामंप्रुध्यं यजेत। सर्वेणेव यज्ञेनं यजते। तामिष्ट्वोपं ह्वयेत। अमूहमंस्मि। सा त्वम्। द्यौर्हम्। पृथिवी त्वम्। सामाहम्। ऋक्तम्। तावेहि सम्भवाव। सह रेतों दधावहै। पुर्से पुत्राय वेत्तंवै। रायस्पोषांय सुप्रजास्त्वायं सुवीर्यायिति। अर्ध एवैनामुपं ह्वयते। सैव ततः प्रायंश्चित्तिः॥९॥

व्धाति यज्ञ उत् एकन्थयंन्ति रुन्थे कुर्यादार्च्छत्यपार्कुर्यात्पृथिवी त्वमृष्टौ चं (सर्वान् वि वै यदिं परस्तुरामोषंधीरन्यत्रानुभयांनुर्धो वै ॥)॥१॥———[१]

यद्विष्यंण्णेन जुहुयात्। अप्रंजा अपृशुर्यजंमानः स्यात्। यदनांयतने निनयंत्। अनायतनः स्यात्। प्राजापत्ययूर्चा वंल्मीकवपायामवं नयेत्। प्राजापत्यो वै वल्मीकः। युज्ञः प्रजापंतिः। प्रजापंतावेव युज्ञं प्रतिष्ठापयति। भूरित्याह। भूतो वै प्रजापंतिः॥१०॥

भूतिंमेवोपैति। तत्कृत्वा। अन्यां दुग्धा पुनेर्होत्व्यम्। सैव ततः प्रायंश्चित्तः। यत्कीटावंपन्नेन जुहुयात्। अप्रजा अपृशुर्यजंमानः स्यात्। यदनांयतने निनयेत्। अनायतनः स्यात्। मध्यमेनं पूर्णेनं द्यावापृथिव्यंयूर्चाऽन्तः परिधि निनयेत्। द्यावापृथिव्योर्वे नत्प्रतिष्ठापयति॥११॥

तत्कृत्वा। अन्यां दुग्ध्वा पुनेर्होत्व्यम्। सैव ततः प्रायंश्चित्तिः। यदवंवृष्टेन जुहुयात्। अपंरूपमस्यात्मञ्जायेत। किलासों वास्यादंर्श्वसो वा। यत्प्रत्येयात्। यज्ञं विच्छिंन्द्यात्। स जुहुयात्। मित्रो जनौन्कल्पयति प्रजानन्॥१२॥

मित्रो दांधार पृथिवीमुत द्याम्। मित्रः कृष्टीरिनंमिषाऽभि चष्टे। सत्यायं हृव्यं घृतवंज्जहोतेतिं। मित्रेणैवैनंत्कल्पयति। तत्कृत्वा। अन्यां दुग्ध्वा पुनंरहोत्व्यम्। सैव ततः प्रायंश्चित्तिः। यत्पूर्वस्यामाहृत्या १ हृतायामुत्तराऽऽहृतिः स्कन्देत्। द्विपाद्भिः पशुभिर्यजंमानो व्यृध्येत। यद्त्तंरयाऽभि जुंहुयात्॥१३॥

चतुंष्पाद्भिः पृशुभिर्यजंमानो व्यृध्येत। यत्र वेर्त्थं वनस्पते देवानाङ्गुद्धा नामानि। तत्रं ह्व्यानि गाम्येति वानस्पत्ययुर्चा समिधमाधायं। तूष्णीमेव पुनर्जुहुयात्। वनस्पतिनैव यज्ञस्यार्ताश्चानाँर्ताश्चाहुंती वि दांधार। तत्कृत्वा। अन्यां दुग्ध्वा पुनर्होत्व्यम्। सैव ततः प्रायंश्चित्तिः। यत्पुरा प्रयाजेभ्यः प्राङङ्गारः स्कन्दैत्। अध्वर्यवे च यजंमानाय चाक है स्यात्॥१४॥

यदंक्षिणा। ब्रह्मणे च यजंमानाय चाक ई स्यात्। यत्प्रत्यक्। होत्रे च पित्रेये च यजंमानाय चाक ई स्यात्। यदुद ईं। अग्नीधे च पृशुभ्यंश्च यजंमानाय चाक ई स्यात्। यदंभिजुहुयात्। रुद्रोस्य पृशून्यातुंकः स्यात्। यन्नाभिजुहुयात्। अशान्तः

प्रह्नियेत॥१५॥

स्रुवस्य बुध्नेनाभिनिदंध्यात्। मा तंमो मा यज्ञस्तंमन्मा यजंमानस्तमत्। नमंस्ते अस्त्वायते। नमो रुद्र परायते। नमो यत्रं निषीदंसि। अमुं मा हि सीर्मुं मा हि सीरिति येन स्कन्देंत्। तं प्रहेरेत्। सहस्रंश्वङ्गो वृष्मो जातवेदाः। स्तोमंपृष्ठो घृतवान्त्सुप्रतींकः। मा नो हासीन्मेत्थितो नेत्त्वा जहांम। गोपोषं नो वीरपोषं चं यच्छेति। ब्रह्मंणैवैनं प्रहंरति। सैव ततः प्रायंश्वित्तिः॥१६॥

वै प्रजापंतिः स्थापयति प्रजानन्नभि जुंहुयात्स्याँद्धियेत् जहांम् त्रीणि च (यद्विष्यंण्णेन प्राजापृत्यया यत्कीटा मध्यमेन् यदवंबृष्टेन् यत्पूर्वंस्यां यत्पुरा प्रयाजेभ्यः प्राङङ्गारो यद्देक्षिणा यत्प्रत्यग्यदुदह्शं ॥

वि वा एष इंन्द्रियेणं वीर्येणध्यते। यस्याहिताग्नेर्ग्निर्म्थ्यमानी न जायते। यत्रान्यं पश्येत्। ततं आहृत्यं होत्व्यम्। अग्नावेवास्यांग्निहोत्रः हुतं भेवति। यद्यन्यन्न विन्देत्। अजायाः होत्व्यम्। आग्नेयी वा एषा। यद्जा। अग्नावेवास्यांग्निहोत्रः हुतं भेवति॥१७॥

अजस्य तु नाश्नीयात्। यद्जस्याँश्नीयात्। यामेवाग्नावाहुंतिं जुहुयात्। तामंद्यात्। तस्मांद्जस्य नाश्यम्। यद्यजान्न विन्देत्। ब्राह्मणस्य दक्षिणे हस्ते होत्व्यम्। एष वा अग्निर्वैश्वान्रः। यद्वाँह्मणः। अग्नावेवास्याँग्निहोत्रः हुतं भवति॥१८॥

ब्राह्मणन्तु वंस्त्यै नापं रुन्ध्यात्। यद्ग्राह्मणं वंस्त्या अपरुन्ध्यात्। यस्मिन्नेवाग्नावाहंतिं जुहुयात्। तम्भांगधेयेन् व्यर्धयेत्। तस्मांद्वाह्मणो वंस्त्यै नाप्रध्यः। यदिं ब्राह्मणन्न विन्देत्। दुर्भस्तम्बे होत्व्यम्। अग्निवान््वे दंर्भस्तम्बः। अग्नावेवास्यांग्निहोत्र हुतं भवति। दुर्भास्तु नाध्यांसीत॥१९॥

यद्दर्भान्ध्यासीत। यामेवाग्नावाहुंतिं जुहुयात्। तामध्यांसीत। तस्माँद्दर्भा नाध्यांसित्व्याः। यदिं दुर्भान्न विन्देत्। अप्सु होत्व्यम्। आपो वै सर्वा देवताः। देवतांस्वेवास्यांग्निहोत्रश् हुतं भेवति। आपुस्तु न परिचक्षीत। यदापः परिचक्षीत॥२०॥

यामेवाप्स्वाहुंतिं जुहुयात्। तां परिंचक्षीत। तस्मादापो न परि्चक्ष्याः। मेध्यां च वा एतस्यांमेध्या चं तुनुवौ स॰ सृंज्येते। यस्याहिताग्नेर्न्यैर्ग्निभिर्ग्नयः स॰सृज्यन्ते। अग्नये विविंचये प्रोडाशंम्ष्टाकंपालं निर्वपेत्। मेध्यांश्चेवास्यांमेध्यां चं तुनुवौ व्यावंतियति। अग्नयें वृतपंतये पुरोडाशंम्ष्टाकंपालं निर्वपेत्। अग्निमेव वृतपंतिङ् स्वेनं भाग्धेयेनोपं धावति। स एवैनं वृतमा लंम्भयति॥२१॥

गर्भ् स्रवंन्तमग्दमंकः। अग्निरिन्द्रस्त्वष्टा बृह्स्पतिः। पृथिव्यामवं चुश्चोतैतत्। नाभिप्राप्नोति निर्ऋतिं पराचैः। रेतो वा एतद्वाजिनमाहिताग्नेः। यदंग्निहोत्रम्। तद्यत्स्रवैत्।

रेतों ऽस्य वाजिंन इसवेत्। गर्भ इसवंन्तमग्दमंक्रित्यांह। रेतं एवास्मिन्वाजिंनन्दधाति॥२२॥

अग्निरित्यांह। अग्निर्वे रेतोधाः। रेतं एव तद्दंधाति। इन्द्र इत्यांह। इन्द्रियमेवास्मिन्दधाति। त्वष्टेत्यांह। त्वष्टा वै पंशूनां मिथुनानार रूपकृत्। रूपमेव पृशुषुं दधाति। बृह्स्पतिरित्यांह। ब्रह्म वै देवानां बृह्स्पतिः। ब्रह्मणैवास्मैं प्रजाः प्र जनयति। पृथिव्यामवं चुश्चोतैतदित्यांह। अस्यामेवैन्त्प्रतिष्ठापयति। नाभिप्राप्नोति निर्ऋतिं पराचैरित्यांह। रक्षंसामपंहत्यै॥२३॥

अजाऽप्रावेवास्यांप्रिहोत्रः हुतं भंवति भवत्यासीत पर्चिक्षीत लम्भयित द्याति देवानां बृह्स्पितः पर्यं च (वि वै यद्यस्वायां ब्राह्णस्यं दर्भस्तम्बेंऽप्स् होत्व्यम्॥)॥३॥————[3] याः पुरस्तात्प्रस्रवंन्ति। उपरिष्टात्स्वतंश्च याः। ताभी रिष्टिमपंवित्राभिः। श्रुद्धां यज्ञमा रंभे। देवां गातुविदः। गातुं यज्ञायं विन्दत। मनंसस्पितिना देवेनं। वातांद्यज्ञः प्रयंज्यताम्। तृतीयंस्यै दिवः। गायुत्रिया सोम् आभृंतः॥२४॥ सोम्पीथाय सन्नयितुम्। वकंलमन्तरमा देदे। आपो देवीः शुद्धाः स्थं। इमा पात्राणि शुन्धत। उपातङ्क्यांय देवानांम्। पूर्णवल्कमुत शुन्धत। पयो गृहेषु पयो अघ्नियास्। पयो वत्सेषु पय इन्द्रांय हिवधे प्रियस्व। गायुत्री पंणवल्कनं। पयः सोमं करोत्विमम्॥२५॥

अग्निं गृह्णामि सुरथं यो मयोभूः। य उद्यन्तमारोहिति

सूर्यमहैं। आदित्यअयोतिषां ज्योतिरुत्तमम्। श्वो यज्ञायं रमतान्देवतांभ्यः। वसूत्रुद्रानांदित्यान्। इन्द्रेण सह देवताः। ताः पूर्वः पिरं गृह्णामि। स्व आयतंने मनीषयां। इमामूर्जं पश्चदशीं ये प्रविष्टाः। तान्देवान्परिं गृह्णामि पूर्वः॥२६॥

अग्निर्हं व्यवाडिह ताना वंहतु। पौर्णमास हिविरेदमें षां मिये। आमावास्य हिविरेदमें षां मिये। अन्तराऽग्नी पृशवंः। देवस सदमा गंमन्। तान्पूर्वः पिरं गृह्णामि। स्व आयतंने मनीषयां। इह प्रजा विश्वरूपा रमन्ताम्। अग्निङ्गृहपंतिम्भि संवसानाः। ताः पूर्वः पिरं गृह्णामि॥२७॥

स्व आयतंने मनीषयां। इह पृशवों विश्वरूपा रमन्ताम्। अग्निङ्गृहपंतिम्भि संवसानाः। तान्पूर्वः परि गृह्णामि। स्व आयतंने मनीषयां। अयं पितृणाम्गिः। अवाङ्ख्या पितृभ्य आ। तं पूर्वः परि गृह्णामे। अविषन्नः पितुङ्करत्। अजंस्रन्त्वा ९ संभापालाः॥२८॥

विज्यभांगुर् सिमंन्धताम्। अग्ने दीदांय मे सभ्य। विजित्यै श्रदः श्तम्। अन्नमावस्थीयम्। अभि हंराणि श्रदः श्तम्। आवस्थे श्रियं मन्नम्। अहिंर्बुध्नियो नि यंच्छत्। इदमहम्ग्निज्येष्ठभ्यः। वस्भयो य्ज्ञं प्रब्रंवीमि। इदमहमिन्द्रंज्येष्ठभ्यः॥२९॥

रुद्रेभ्यों युज्ञं प्र ब्रंवीमि। इदमृहं वर्रुणज्येष्ठेभ्यः। आदित्येभ्यों

युज्ञं प्र ब्रंबीमि। पर्यस्वतीरोषंधयः। पर्यस्वद्वीरुधां पर्यः। अपां पर्यसो यत्पर्यः। तेन् मामिन्द्र स॰ सृंज। अग्नै व्रतपते वृतं चरिष्यामि। तच्छंकेयुन्तन्में राध्यताम्। वायौ व्रतपत् आदित्य व्रतपते॥३०॥

व्रतानां व्रतपते व्रतं चंरिष्यामि। तच्छंकेयन्तन्में राध्यताम्। इमां प्राचीमुदीचीम्। इष्मूर्जमिभ सङ्स्कृताम्। बहुपूर्णामशृष्काग्राम्। हरामि पशुपामहम्। यत्कृष्णों रूपं कृत्वा। प्राविश्वस्त्वं वनस्पतीन्। तत्स्त्वामेकविश्शित्धा। सम्भेरामि सुसम्भृतां॥३१॥

त्रीन्पंरिधी १ स्तिस्रः समिधंः। यज्ञायुंरनुसश्चरान्। उपवेषं मेक्षणं धृष्टिम्। सं भेरामि सुसम्भृतां। या जाता ओषंधयः। देवेभ्यंस्त्रियुगं पुरा। तासां पर्व राध्यासम्। परिस्तरमाहरन्ं। अपां मेध्यं यज्ञियम्। सदेव १ शिवमंस्तु मे॥ ३२॥

आच्छेत्ता वो मा रिषम्। जीवांनि श्ररदेः श्तम्। अपंरिमितानां परिमिताः। सन्नेह्ये सुकृताय कम्। एनो मा निगांङ्कृतमच्चनाहम्। पुनंकृत्थायं बहुला भंवन्तु। सकुदाच्छिन्नं बर्हिरूणांमृदु। स्योनं पितृभ्यंस्त्वा भराम्यहम्। अस्मिन्त्सीदन्तु मे पितरंः सोम्याः। पितामहाः प्रपितामहाश्चानुगैः सह॥३३॥

त्रिवृत्पंलाशे दर्भः। इयाँन्प्रादेशसंम्मितः। युज्ञे प्वित्रं

पोर्तृतमम्। पयो ह्व्यं करोतु मे। इमौ प्राणापानौ। यज्ञस्याङ्गांनि सर्वृशः। आप्याययंन्तौ सश्चरताम्। प्वित्रें हव्यशोधंने। प्वित्रे स्थो वैष्ण्वी। वायुर्वा मनंसा पुनातु॥३४॥ अयं प्राणश्चापानश्चं। यज्ञंमान्मिपं गच्छताम्। यज्ञे ह्यभूंतां पोतांरौ। प्वित्रे हव्यशोधंने। त्वया वेदिं विविदुः पृथिवीम्। त्वयां यज्ञो जांयते विश्वदानिः। अच्छिंद्रं यज्ञमन्वेषि विद्वान्। त्वया होता सन्तंनोत्यर्धमासान्। त्र्यस्त्रिप्शोऽसि तन्तूनाम्। पवित्रेण सहागंहि॥३५॥

शिवय र ज्ञुंरिभधानीं। अग्नियामुपं सेवताम्। अग्नंस्र साय यज्ञस्यं। उखे उपंदधाम्यहम्। पृशुभिः सन्नीतं बिभृताम्। इन्द्रांय शृतं दिधं। उपवेषोऽसि यज्ञायं। त्वां पंरिवेषमधारयन्। इन्द्रांय ह्विः कृण्वन्तंः। शिवः श्रग्मो भंवासि नः॥३६॥

अमृंन्मयन्देवपात्रम्। यज्ञस्यायुंषि प्र युंज्यताम्। तिरः पिवत्रमितनिताः। आपो धारय मातिगुः। देवेनं सिवत्रोत्पूंताः। वसोः सूर्यस्य रिश्मिभिः। गान्दोहपिवते रज्जुम्। सर्वा पात्राणि शुन्धत। एता आ चंरिन्ति मधुंमृद्दुहानाः। प्रजावतीर्यशसो विश्वरूपाः॥३७॥

बह्वीर्भवंन्तीरुपजायंमानाः। इह व इन्द्रों रमयतु गावः। पूषा स्थं। अयुक्ष्मा वंः प्रजया स॰ सृंजामि। रायस्पोषंण बहुलाभवंन्तीः। ऊर्जं पयः पिन्वंमाना घृतं चं। जीवो जीवंन्तीरुपंवः सदेयम्। द्यौश्चेमं यज्ञं पृंथिवी च सन्दुंहाताम्। धाता सोमेन सह वातेन वायुः। यज्ञंमानाय द्रविणन्दधातु॥३८॥

उत्संन्दुहन्ति कुलश्श्रतुंर्बिलम्। इडाँन्देवीम्मधुंमती १ सुवर्विदम्। तिदेन्द्राग्नी जिंन्वत १ सूनृतांवत्। तद्यजंमानममृत्त्वे दंधातु। कामधुक्षः प्र णौं ब्रूहि। इन्द्रांय ह्विरिन्द्रियम्। अमूं यस्यां देवानांम्। मनुष्यांणां पयों हितम्। बहु दुग्धीन्द्रांय देवेभ्यः। हव्यमा प्यांयतां पुनः॥३९॥

वृत्सेभ्यों मनुष्येंभ्यः। पुनर्दोहायं कल्पताम्। यज्ञस्य सन्तंतिरसि। यज्ञस्यं त्वा सन्तंतिमनु सन्तंनोमि। अदंस्तमसि विष्णंवे त्वा। यज्ञायापि दधाम्यहम्। अद्भिरिक्तेन पात्रेण। याः पूताः परिशेरते। अयं पयः सोमं कृत्वा। स्वां योनिमपि गच्छतु॥४०॥

पूर्णवृत्कः प्वित्रम्। सौम्यः सोमाद्धि निर्मितः। इमौ पूर्णं चं दर्भं चं। देवाना रं हव्यशोधंनौ। प्रात्वेषायं गोपाय। विष्णो ह्व्य र हि रक्षंसि। उभावग्नी उपस्तृण्ते। देवता उपवसन्तु मे। अहङ्गाम्यानुपं वसामि। मह्यङ्गोपंतये पृशून्॥४१॥ अत्रंत इमं गृंहामि पूर्वस्ताः पूर्वः परिंगृहामि सभापाला इन्द्रंज्येष्ठेभ्य आदित्य व्रतपते सुसम्भृतां मे सह पुंनातु गहि नो विश्वरूपा दधातु पुनंगच्छतु पृशून (याः पुरस्तांदिमामूर्जमिह प्रजा इह

[8]

देवां देवेषु पराँकमध्वम्। प्रथंमा द्वितीयेषु। द्वितीयास्तृतीयेषु। त्रिरंकादशा इह मांऽवत। इद शंकेयं यदिदं क्रोमिं। आत्मा करोत्वात्मनें। इदङ्करिष्ये भेषजम्। इदम्में विश्वभेषजा। अश्विना प्रावंतं युवम्। इदम्हर सेनांया अभीत्वंर्ये॥४२॥

मुख्नपोंहािम। सूर्यं ज्योतिर्वि भांहि। मृह्त इंन्द्रियायं। आ प्यांयतां घृतयोंिनः। अग्निर्ह्व्याऽनुं मन्यताम्। खमंङ्क्ष त्वचंमङ्क्षा सुरूपन्त्वां वसुविदम्। पृश्नूनान्तेजंसा। अग्नये जुष्टंमिभ घांरयािम। स्योनन्ते सदेनं करोिम॥४३॥

घृतस्य धारंया सुशेवं कल्पयामि। तस्मिन्सीदामृते प्रतितिष्ठ। व्रीहीणाम्मेध सुमन्स्यमानः। आर्द्रः प्रथस्नुर्भवंनस्य गोपाः। शृत उत्स्नांति जनिता मंतीनाम्। यस्तं आत्मा पृशुषु प्रविष्टः। देवानां विष्ठामनु यो वित्रस्थे। आत्मन्वान्त्सोम घृतवान् हि भूत्वा। देवानांच्छु सुवंविन्द यजंमानाय मह्मम्। इरा भूतिः पृथिव्ये रसो मोत्क्रंमीत्॥४४॥

देवाः पितरः पितंरो देवाः। योऽहमंस्मि स सन् यंजे। यस्यांस्मि न तमन्तरेमि। स्वं मं इष्टश् स्वन्दत्तम्। स्वं पूर्तश् स्वश् श्रान्तम्। स्वश् हुतम्। तस्यं मेऽग्निरुंपद्रष्टा। वायुरुंपश्रोता। आदित्योऽनुख्याता। द्यौः पिता॥४५॥

पृथिवी माता। प्रजापंतिर्बन्धुः। य एवास्मि स सन् यंजे। मा

भेर्मा संविक्था मा त्वां हि॰सिषम्। मा ते तेजोऽपं क्रमीत्। भरतमुद्धरेमन् षिञ्च। अवदानांनि ते प्रत्यवंदास्यामि। नर्मस्ते अस्तु मा मां हि॰सीः। यदंवदानांनि तेऽवद्यन्। विलोमाकांर्षमात्मनंः॥४६॥

आज्येन प्रत्यंनज्म्येनत्। तत्त् आ प्यांयतां पुनेः। अज्यांयो यवमात्रात्। आव्याधात्कृत्यतामिदम्। मा रूपाम यज्ञस्यं। शुद्ध स्वष्टिमिद हिविः। मनुना दृष्टाङ्गृतपंदीम्। मित्रावरुणसमीरिताम्। दृक्षिणार्धादसंम्भिन्दन्। अवद्याम्येकृतोमुंखाम्॥

इडें भागं जुंषस्व नः। जिन्व गा जिन्वार्वतः। तस्याँस्ते भिक्षवाणः स्याम। सर्वात्मांनः सर्वगंणाः। ब्रध्न पिन्वंस्व। ददंतो मे मा क्षांयि। कुर्वतो मे मोपंदसत्। दिशाङ्कृप्तिंरसि। दिशों मे कल्पन्ताम्। कल्पंन्ताम्मे दिशः॥४८॥

दैवींश्च मानुंषिश्च। अहोरात्रे में कल्पेताम्। अर्धमासा में कल्पन्ताम्। मासां मे कल्पन्ताम्। ऋतवों मे कल्पन्ताम्। संवृत्सरो में कल्पताम्। क्रुप्तिरिस् कल्पंतां मे। आशांनां त्वाऽऽशापालेभ्यः। चृतुभ्यों अमृतेंभ्यः। इदं भूतस्याध्यंक्षेभ्यः॥४९॥

विधेमं ह्विषां व्यम्। भजंतां भागी भागम्। मा भागोऽभंक्त। निरंभागं भंजामः। अपस्पिन्व। ओषंधीर्जिन्व। द्विपात्पांहि। चतुंष्पादव। दिवो वृष्टिमेरंय। ब्राह्मणानांमिद॰ ह्विः॥५०॥ सोम्याना सोमपीथिनांम्। निर्भक्तो ब्रांह्मणः। नेहा ब्रांह्मणस्यास्ति। समंङ्कां बर्हिर्ह्विषां घृतेनं। समांदित्यैर्वसृंभिः सम्मुरुद्धिः। समिन्द्रेण् विश्वेभिर्देविभिरङ्काम्। दिव्यं नभी गच्छतु यत्स्वाहाँ। इन्द्राणीवांऽविध्वा भूयासम्। अदितिरिव सुपुत्रा। अस्थूरि त्वां गार्हपत्य॥५१॥

उपनिषंदे सुप्रजास्त्वायं। सं पत्नी पत्यां सुकृतेनं गच्छताम्। यज्ञस्यं युक्तौ धुर्यांवभूताम्। संजानानौ विजंहतामरांतीः। दिवि ज्योतिंरजरमा रंभेताम्। दशंते तन्वों यज्ञ यज्ञियाः। ताः प्रीणातु यजंमानो घृतेनं। नारिष्ठयोः प्रशिषमीडंमानः। देवानां दैव्येऽपि यजंमानोऽमृतोंऽभूत्। यं वान्देवा अंकल्पयन्॥५२॥

ऊर्जो भाग शंतऋत्। पृतद्वां तेनं प्रीणानि। तेनं तृप्यतम १ हहै। अहन्देवाना श्रे सुकृतांमस्मि लोके। ममेदिम् ष्ट्रत्न मिथुं भवाति। अहन्नां रिष्ठावनं यजामि विद्वान्। यदाँ भ्यामिन्द्रो अदंधाद्वाग्धेयंम्। अदारसृद्भवत देवसोम। अस्मिन् यूज्ञे मंरुतो मृडता नः। मा नों विदद्भिभामो अशंस्तिः॥ ५३॥

मा नो विदद्वृजना द्वेष्या या। ऋष्भं वाजिनं वयम्। पूर्णमांसं यजामहे। स नो दोहता स्चुवीर्यम्। रायस्पोष सहस्रिणम्। प्राणायं सुराधंसे। पूर्णमांसाय स्वाहां। अमावास्यां सुभगां सुशेवां। धेनुरिव भूयं आप्यायंमाना। सा नो दोहता स सुवीर्यम्। रायस्पोष सहस्रिणम्। अपानायं सुराधंसे। अमावास्याये स्वाहाँ। अभि स्तृंणीहि परि धेहि वेदिम्। जामिम्मा हि सीरमुया शयांना। होतृषदंना हरिताः सुवर्णाः। निष्का इमे यजंमानस्य ब्रुध्ने॥५४॥

अभीत्वंर्ये करोमि क्रमीत्पिताऽऽत्मनं एकतो मुंखां में दिशोऽध्यंक्षेभ्यो हुविर्गार्हपत्या कल्पयन्नशंस्तिः सा नौ दोहतार सुवीर्यर सप्त चं॥५॥—————[५]

परिस्तृणीत् परिधत्ताग्निम्। परिहितोऽग्निर्यजंमानं भुनक्तु। अपा रस् ओषंधीना र सुवर्णः। निष्का इमे यजंमानस्य सन्तु कामदुर्घाः। अमुत्रामुष्मिं ह्याँके। भूपंते भुवंनपते। मह्तो भूतस्यं पते। ब्रह्माणंन्त्वा वृणीमहे। अहं भूपंतिरहं भुवनपतिः। अहं मंहतो भूतस्य पतिः॥५५॥

देवनं सिवता प्रसूत् आर्त्विज्यङ्करिष्यामि। देवं सिवतर्तन्त्वां वृणते। बृह्स्पतिं दैव्यं ब्रह्माणम्। तद्हं मनसे प्र ब्रंवीमि। मनों गायत्रियै। गायत्री त्रिष्टुभैं। त्रिष्टुज्जगंत्ये। जगंत्यनुष्टुभैं। अनुष्टुक्पङ्कौ। पङ्किः प्रजापंतये॥५६॥

प्रजापंतिर्विश्वेंभ्यो देवेभ्यः। विश्वें देवा बृह्स्पतंये। बृह्स्पतिर्ब्रह्मणे। ब्रह्म भूर्भवः सुवंः। बृह्स्पतिर्देवानां ब्रह्मा। अहं मनुष्याणाम्। बृहंस्पते यज्ञङ्गोपाय। इदं तस्मैं हुम्यं करोमि। यो वो देवाश्चरंति ब्रह्मचर्यम्। मेथावी दिक्षु मनसा तपस्वी॥५७॥ अन्तर्दूतश्चरित मानुंषीषु। चतुंः शिखण्डा युवृतिः सुपेशाँः। घृतप्रंतीका भुवंनस्य मध्यैं। मुर्मृज्यमाना महृते सौभंगाय। मह्यंन्धुक्ष्व यजंमानाय कामान्। भूमिंभूत्वा महिमानं पुपोष। ततो देवी वर्धयते पया सि। यज्ञियां यज्ञं वि च यन्ति शं चं। ओषंधीरापं इह शक्वरिश्च। यो मां हृदा मनंसा यश्चं वाचा॥५८॥

यो ब्रह्मणा कर्मणा द्वेष्टिं देवाः। यः श्रुतेन् हृदयेनेष्णता चे। तस्यैन्द्र वर्न्नेण शिरंश्छिनद्मि। ऊर्णामृदु प्रथमानः स्योनम्। देवेभ्यो जुष्ट्र सदनाय बर्हिः। सुवर्गे लोके यर्जमान्र हि धेहि। मां नाकस्य पृष्ठे पर्मे व्योमन्। चतुः शिखण्डा युवृतिः सुपेशाः। घृतप्रतीका वयुनानि वस्ते। साऽऽस्तीर्यमाणा महते सौभंगाय ॥५९॥

सा में धुक्ष्व यर्जमानाय कामान्। शिवा चं मे श्रग्मा चैधि। स्योना चं मे सुषदां चैधि। ऊर्जस्वती च मे पर्यस्वती चैधि। इष्मूर्जं मे पिन्वस्व। ब्रह्म तेजों मे पिन्वस्व। क्ष्त्रमोजों मे पिन्वस्व। विश्ं पुष्टिं मे पिन्वस्व। आयुंर्न्नाद्यंम्मे पिन्वस्व। प्रजां पश्नमें पिन्वस्व॥६०॥

अस्मिन् यज्ञ उप भूय इन्नु मैं। अविंक्षोभाय परिधीन्दंधामि। धर्ता धरुणो धरीयान्। अग्निर्देषा स्स् निरितो नुंदातै। विच्छिनद्मि विधृंतीभ्या स्पन्नान्। जातान्म्रातृंव्यान् ये चं जिन्ष्यमाणाः। विशो युत्राभ्यां विधंमाम्येनान्। अहङ् स्वानामुत्तमोऽसानि देवाः। विशो युत्रे नुदमाने अरातिम्। विश्वं पाप्मानममंतिन्दुर्मरायुम्॥६१॥

सीदंन्ती देवी संकृतस्यं लोके। धृतीं स्थो विधृंती स्वधृंती। प्राणान्मयि धारयतम्। प्रजाम्मयि धारयतम्। पश्नमयि धारयतम्। अयं प्रंस्त्र उभयंस्य धृता। धृता प्रयाजानांमुतानूंयाजानांम्। स दांधार समिधो विश्वरूपाः। तस्मिन्त्स्रुचो अध्या सांदयामि। आ रोह पृथो जुंहु देवयानान्॥६२॥

यत्रर्षयः प्रथम्जा ये पुराणाः। हिरंण्यपक्षाऽजिरा सम्भृताङ्गा। वहांसि मा सुकृतां यत्रं लोकाः। अवाहं बांध उपभृतां सपत्नान्। जातान्त्रातृंच्यान् ये चं जिन्घ्यमाणाः। दोहैं यज्ञ सुद्धांमिव धेनुम्। अहमुत्तंरो भूयासम्। अधेरे मत्सपत्नाः। यो मां वाचा मनसा दुर्मरायः। हृदाऽरातीयादंभिदासंदग्ने॥६३॥

इदमंस्य चित्तमधंरन्ध्रुवायाः। अहमुत्तंरो भूयासम्। अधंरे मत्सपत्नाः। ऋषभोऽसि शाक्ररः। घृताचीनाः सूनुः। प्रियेण नाम्नां प्रिये सदंसि सीद। स्योनो में सीद सुषदः पृथिव्याम्। प्रथंयि प्रजयां पृश्भिः सुवर्गे लोके। दिवि सीद पृथिव्याम्नतरिक्षे। अहमुत्तंरो भूयासम्॥६४॥

अर्धरे मत्सपर्नाः। इयः स्थाली घृतस्यं पूर्णा। अच्छिन्नपयाः

श्वतधार उत्संः। मारुतेन शर्मणा दैव्यंन। युज्ञोऽसि सुर्वतः श्वितः। सुर्वतो मां भूतं भविष्यच्छ्रयताम्। श्वतम्में सन्त्वाशिषः। सहस्रममे सन्तु सूनृताः। इरावतीः पशुमतीः। प्रजापतिरसि सर्वतः श्वितः॥६५॥

स्वतो मां भूतं भविष्यच्छ्रंयताम्। शृतं में सन्त्वाशिषः। सहस्रं मे सन्तु सूनृताः। इरावतीः पशुमतीः। इदिमिन्द्रियम्मृतं वीर्यम्। अनेनेन्द्रांय पृशवोऽचिकित्सन्। तेनं देवा अवतोप् माम्। इहेष्मूर्जं यशः सह ओजः सनेयम्। शृतं मियं श्रयताम्। यत्पृंथिवीमचंर्त्तत्प्रविष्टम्॥६६॥

येनासिश्चद्वलिमन्द्रै प्रजापितिः। इदन्तच्छुकं मधुं वाजिनीवत्। येनोपिरेष्टादिधेनोन्महेन्द्रम्। दिध् मान्धिनोतु। अयं वेदः पृथिवीमन्वविन्दत्। गृहां सतीङ्गहंने गह्वरेषु। स विन्दतु यर्जमानाय लोकम्। अच्छिदं यज्ञं भूरिकर्मा करोतु। अयं यज्ञः समसदद्धविष्मान्। ऋचा साम्ना यर्जुषा देवतांभिः॥६७॥

तेनं लोकान्त्सूर्यंवतो जयेम। इन्द्रंस्य सुख्यमंमृत्त्वमंश्याम्। यो नः कनीय इह कामयांतै। अस्मिन् युज्ञे यजंमानाय् मह्मम्। अप तिमेन्द्राग्नी भुवंनान्नुदेताम्। अहं प्रजां वीरवंतीं विदेय। अग्ने वाजजित्। वाजन्त्वा सिर्ष्यन्तम्। वाजं जेष्यन्तम्। वाजिनं वाजजितम्॥६८॥ वाज्जित्यायै सं माँजिर्म। अग्निमंत्रादमृत्राद्यांय। उपंहूतो द्यौः पिता। उप मान्द्यौः पिता ह्वंयताम्। अग्निराग्नींधात्। आयुंषे वर्चसे। जीवात्वे पुण्यांय। उपंहूता पृथिवी माता। उप मां माता पृथिवी ह्वंयताम्। अग्निराग्नींधात्॥६९॥

आयुंषे वर्चसे। जीवात्वै पुण्यांय। मनो ज्योतिंर्जुषतामाज्यम्। विच्छिन्नं युज्ञः सिम्मिन्दिधातु। बृह्स्पितिंस्तनुतािम्मन्नः। विश्वे देवा इह मादयन्ताम्। यन्ते अग्न आवृश्वािमे। अहं वा क्षिपितश्चरन्। प्रजां च तस्य मूलं च। नीचैर्देवा नि वृश्चत॥७०॥

अग्ने यो नोंऽभिदासंति। समानो यश्च निष्टाः। इध्मस्येव प्रक्षायंतः। मा तस्योच्छेषि किश्चन। यो मान्द्वेष्टिं जातवेदः। यश्चाहन्द्वेष्मि यश्च माम्। सर्वा्ड् स्तानंग्ने सन्देह। या॰ श्चाहन्द्वेष्मि ये च माम्। अग्ने वाजजित्। वाजन्त्वा सस्वा॰सम्॥७१॥

वाजं जिगिवाश्सम्। वाजिनं वाजितम्। वाजित्यायै सम्मांजिमं। अग्निमंन्नादमन्नाद्यांय। वेदिंर्बृर्हिः शृतश् हृविः। इध्मः पंरिधयः सुचंः। आज्यं यज्ञ ऋचो यजुः। याज्यांश्च वषद्वाराः। सम्मे सन्नंतयो नमन्ताम्। इध्मसन्नहंने हुते॥७२॥ दिवः खीलोऽवंततः। पृथिव्या अध्युत्थितः। तेनां सहस्रंकाण्डेन। द्विषन्तश्रं शोचयामसि। द्विषन्मं बहु शोंचतु। ओषंधे मो अह॰ शुंचम्। यज्ञ नमंस्ते यज्ञ। नमो नमंश्च ते यज्ञ। शिवेनं मे सन्तिष्ठस्व। स्योनेनं मे सन्तिष्ठस्व॥७३॥

सुभूतेनं मे सन्तिष्ठस्व। ब्रह्मवर्चसेनं मे सन्तिष्ठस्व। यज्ञस्यर्धिमनु सन्तिष्ठस्व। उपं ते यज्ञ नमः। उपं ते नमः। उपं ते नमः। त्रिष्फ्रलीकियमाणानाम्। यो न्यङ्गो अवशिष्यंते। रक्षंसां भाग्धेयम्। आपस्तत्प्र वहतादितः॥७४॥

उलूखंले मुसंले यच् शूपें। आशिश्लेषं दृषदि यत्कपालैं। अवप्रुषों विप्रुषः संयंजामि। विश्वें देवा ह्विरिदं जुंषन्ताम्। यज्ञे या विप्रुषः सन्तिं बह्बीः। अग्नौ ताः सर्वाः स्विष्टाः सुहुंता जुहोमि। उद्यन्नद्यमित्र महः। सपत्नांन्मे अनीनशः। दिवैनान् विद्युतां जिहा निम्नोचन्नधंरान्कृधि॥७५॥

उद्यन्नद्य वि नो भज। पिता पुत्रेभ्यो यथाँ। दीर्घायुत्वस्यं हेशिषे। तस्यं नो देहि सूर्य। उद्यन्नद्य मित्रमहः। आरोह्नन्नुत्तंरान्दिवम्ं। हृद्रोगम्ममं सूर्य। हृरिमाणं च नाशय। शुकेषु मे हरिमाणम्ं। रोपणाकांसु दध्मसि ॥७६॥

अथों हारिद्रवेषुं मे। हृरिमाणुं नि दंध्मिस। उदंगाद्यमांदित्यः। विश्वेन सहंसा सह। द्विषन्तं ममं रन्थयन्। मो अहन्द्विंषतो रंधम्। यो नः शपादशंपतः। यश्चे नः शपंतः शपात्। उषाश्च तस्मैं निमुक्कं। सर्वं पाप॰ समूहताम्॥७७॥ यो नंः स्पत्नो यो रणंः। मर्तोऽभिदासंति देवाः। इध्मस्येव प्रक्षायतः। मा तस्योच्छेषि किश्चन। अवसृष्टः परापत। शरो ब्रह्मंस॰शितः। गच्छाऽमित्रान्प्र विश। मैषाङ्कश्चनोच्छिषः॥७८॥

पतिः प्रजापंतये तप्स्वी वाचा सौभंगाय पृश्नमं पिन्वस्व दुर्मरायुं देवयानांनग्रेऽन्तरिक्षेऽहमुत्तरो भूयासं प्रजापंतिरिस सुर्वतः श्रितः प्रविष्टन्देवतांभिर्वाजुजितं पृथिवी ह्वंयतामग्निराग्नींध्रादृश्चत ससुवारसरं हुते स्योनेनं मे सन्तिष्ठस्वेतः कृषि दथ्मस्यूहतामृष्टौ चं॥६॥———[६] सक्षेदं पृश्य। विधितिरिदं पृश्य। नाकेदं पृश्य। रमितः

सक्षेदं पंश्य। विधंतिरिदं पंश्य। नाकेदं पंश्य। र्मितः पिनेष्ठा। ऋतं वर्षिष्ठम्। अमृतायान्याहुः। सूर्यो विरेष्ठो अक्षिभिविभाति। अनु द्यावापृथिवी देवपुत्रे। दीक्षाऽसि तपंसो योनिः। तपोऽसि ब्रह्मणो योनिः॥७९॥

ब्रह्मांसि क्षत्रस्य योनिः। क्षत्रमंस्यृतस्य योनिः। ऋतमंसि भूरा रंभे। श्रृद्धां मनंसा। दीक्षान्तपंसा। विश्वंस्य भुवंनस्याधिपत्नीम्। सर्वे कामा यजमानस्य सन्तु। वातं प्राणं मनंसाऽन्वा रंभामहे। प्रजापंतिं यो भुवंनस्य गोपाः। स नो मृत्योस्नांयतां पात्व १ हंसः॥८०॥

ज्योग्जीवा ज्रामंशीमिह। इन्द्रं शाक्कर गायत्रीं प्र पंद्ये। तान्तें युनज्मि। इन्द्रं शाक्कर त्रिष्टुमं प्र पंद्ये। तान्तें युनज्मि। इन्द्रं शाकर् जर्गतीं प्र पंद्ये। तान्तें युनज्मि। इन्द्रं शाकरानुष्टुमं प्र पंद्ये। तान्तें युनज्मि। इन्द्रं शाकर पृङ्किं प्रपंद्ये॥८१॥ तान्तें युनज्मि। आऽहन्दीक्षामंरुहमृतस्य पत्नीम्ं। गायत्रेण छन्दंसा ब्रह्मणा च। ऋतः सत्यंऽधायि। सत्यमृतंऽधायि। ऋतं चं मे सत्यश्चांभूताम्। ज्योतिरभूवः सुवंरगमम्। सुवर्गं लोकं नाकंस्य पृष्ठम्। ब्र्ध्नस्यं विष्टपंमगमम्। पृथिवी दीक्षा॥८२॥

तयाऽग्निर्दीक्षयां दीक्षितः। ययाऽग्निर्दीक्षयां दीक्षितः। तयां त्वा दीक्षयां दीक्षयामि। अन्तिरिक्षन्दीक्षा। तयां वायुर्दीक्षयां दीक्षितः। ययां वायुर्दीक्षयां दीक्षितः। तयां त्वा दीक्षयां दीक्षयामि। द्यौर्दीक्षा। तयांऽऽदित्यो दीक्षयां दीक्षितः। ययांऽऽदित्यो दीक्षयां दीक्षितः। ययांऽऽदित्यो दीक्षयां दीक्षितः॥८३॥

तयाँ त्वा दीक्षयां दीक्षयामि। दिशों दीक्षा। तयां चुन्द्रमां दीक्षयां दीक्षितः। ययां चुन्द्रमां दीक्षयां दीक्षितः। तयां त्वा दीक्षयां दीक्षयामि। आपों दीक्षा। तया वर्रुणो राजां दीक्षयां दीक्षितः। यया वर्रुणो राजां दीक्षयां दीक्षितः। तयां त्वा दीक्षयां दीक्षयामि। ओषंधयो दीक्षा॥८४॥

तया सोमो राजां दीक्षयां दीक्षितः। यया सोमो राजां दीक्षयां दीक्षितः। तयां त्वा दीक्षयां दीक्षयामि। वाग्दीक्षा। तयां प्राणो दीक्षयां दीक्षितः। ययां प्राणो दीक्षयां दीक्षितः। तयां त्वा दीक्षयां दीक्षयामि। पृथिवी त्वा दीक्षंमाणमनुं दीक्षताम्। अन्तरिक्षन्त्वा दीक्षंमाणमनुं दीक्षताम्। द्योस्त्वा दीक्षंमाणमनुं दीक्षताम्॥८५॥

दिशंस्त्वा दीक्षंमाणुमनुं दीक्षन्ताम्। आपंस्त्वा दीक्षंमाणुमनुं

दीक्षन्ताम्। ओषंधयस्त्वा दीक्षंमाण्मनुं दीक्षन्ताम्। वाक्ता दीक्षंमाण्मनुं दीक्षताम्। ऋचंस्त्वा दीक्षंमाण्मनुं दीक्षन्ताम्। सामांनि त्वा दीक्षंमाण्मनुं दीक्षन्ताम्। यजूरंषि त्वा दीक्षंमाण्मनुं दीक्षन्ताम्। अहंश्च रात्रिंश्च। कृषिश्च वृष्टिंश्च। त्विषिश्चापंचितिश्च॥८६॥

अपृश्लोषंधयश्च। ऊर्क्व सूनृतां च। तास्त्वा दीक्षंमाणमनुं दीक्षन्ताम्। स्वे दक्षे दक्षंपितेह सींद। देवाना स्युम्नो महते रणांय। स्वासस्थस्तनुवा संविंशस्व। पितेवैंधि सूनव आ सुशेवंः। शिवो मां शिवमा विंश। सृत्यम्मं आत्मा। श्रृद्धा मेऽक्षिंतिः॥८७॥

तपों मे प्रतिष्ठा। स्वितृप्रंस्ता मा दिशों दीक्षयन्तु। स्त्यमंस्मि। अहन्त्वदंस्मि मदंसि त्वमेतत्। ममंसि योनिस्तव योनिरस्मि। ममेव सन्वहं ह्व्यान्यंग्ने। पुत्रः पित्रे लोक्कृज्ञांतवेदः। आजुह्वांनः सुप्रतीकः पुरस्तांत्। अग्ने स्वां योनिमा सींद साध्या। अस्मिन्त्स्थस्थे अध्युत्तंरस्मिन्॥८८॥ विश्वं देवा यजंमानश्च सीदत। एकंमिषे विष्णुस्त्वाऽन्वंतु। द्वे ऊर्जे विष्णुस्त्वाऽन्वंतु। त्रीणि व्रताय विष्णुस्त्वाऽन्वंतु। चत्वारि मायोभवाय विष्णुस्त्वाऽन्वंतु। पञ्चं पृशुभ्यो विष्णुस्त्वाऽन्वंतु। षड्रायस्पोषांय विष्णुस्त्वाऽन्वंतु। सप्त स्प्तभ्यो होत्रांभ्यो विष्णुस्त्वाऽन्वंतु। स्पत्त स्पत्त स्ति स्त्रभ्यो होत्रांभ्यो विष्णुस्त्वाऽन्वंतु। सर्वायः सप्तपंदा अभूम। सख्यन्तं गमेयम् ॥८९॥

स्ख्यात्ते मा योषम्। स्ख्यान्मे मा योष्ठाः। साऽसि सुब्रह्मण्ये। तस्याँस्ते पृथिवी पादः। साऽसि सुब्रह्मण्ये। तस्याँस्तेऽन्तिरिक्षं पादः। साऽसि सुब्रह्मण्ये। तस्याँस्ते द्यौः पादः। साऽसि सुब्रह्मण्ये। तस्याँस्ते द्यौः पादः। साऽसि सुब्रह्मण्ये। तस्याँस्ते दिशः पादः॥९०॥

प्रोरंजास्ते पश्चमः पादंः। सा न इष्मूर्जन्युक्ष्व। तेर्जं इन्द्रियम्। ब्रह्मवर्चसम्न्नाद्यम्। वि मिमे त्वा पर्यस्वतीम्। देवानान्धेनु सुद्धामनंपस्फुरन्तीम्। इन्द्रः सोमं पिबत्। क्षेमो अस्तु नः। इमान्नराः कृणुत् वेदिमेत्यं। वसुंमती र रुद्रवंतीमादित्यवंतीम्॥९१॥

वर्ष्मन्दिवः। नाभां पृथिव्याः। यथाऽयं यजंमानो न रिष्यैत्। देवस्यं सिवतुः स्वे। चतुः शिखण्डा युवतिः सुपेशाः। घृतप्रंतीका भुवंनस्य मध्यै। तस्यारं सुप्णांविष् यौ निविष्टौ। तयौर्देवानामिषं भाग्धेयम्। अप जन्यंम्भयन्नंद। अपं चुकाणि वर्तय। गृहर सोमंस्य गच्छतम्। न वा उं वेतन्त्रियसे न रिष्यसि। देवार इदेषि पृथिभिः सुगेभिः। यत्र यन्ति सुकृतो नापि दुष्कृतः। तत्रं त्वा देवः संविता देधातु॥९२॥

ब्रह्मणो योनिर १ हंसः पृङ्किं प्रपंद्ये दीक्षा ययांऽऽदित्यो दीक्षयां दीक्षितस्तयां त्वा दीक्षयां दीक्षयाम्योषधयो दीक्षा द्यौस्त्वा दीक्षंमाणमनुं दीक्षतामपंचितिश्चाक्षिंतिरुत्तंरस्मिन्गमेयं दिशः पादं आदित्यवंतीं वर्तय पश्चं

यदस्य पारे रजंसः। शुऋअयोतिरजांयत। तन्नंः पर्षदित

द्विषंः। अग्ने वैश्वानर् स्वाहाँ। यस्माँद्भीषाऽवांशिष्ठाः। ततों नो अभंयं कृधि। प्रजाभ्यः सर्वांभ्यो मृड। नमों रुद्रायं मीदुषें। यस्माँद्भीषा न्यषंदः। ततों नो अभंयं कृधि॥९३॥

प्रजाभ्यः सर्वाभ्यो मृड। नमो रुद्रायं मीढुषें। उद्ग्रंस्न तिष्ठ् प्रतितिष्ठ् मारिषः। मेमं यज्ञं यज्ञंमानं च रीरिषः। सुव्गे लोके यज्ञंमान् हि धेहि। शन्नं एधि द्विपदे शश्चतुंष्पदे। यस्मौद्भीषाऽवेपिष्ठाः पुलायिष्ठाः समज्ञौस्थाः। ततो नो अभयं कृधि। प्रजाभ्यः सर्वाभ्यो मृड। नमो रुद्रायं मीढुषे॥९४॥

य इदमकंः। तस्मै नमंः। तस्मै स्वाहाँ। न वा उवेतिन्प्रंयसे। आशांनान्त्वा विश्वा आशाः। यज्ञस्य हि स्थ ऋत्वियौं। इन्द्रांग्री चेतनस्य च। हुताहुतस्यं तृप्यतम्। अहंतस्य हुतस्यं च। हुतस्यं च। इन्द्रांग्री अस्य सोमंस्य। वीतं पिंबतं जुषेथांम्। मा यजंमानन्तमों विदत्। मर्त्विजो मो इमाः प्रजाः। मा यः सोमंमिमं पिबांत्। स॰सृष्टमुभयंं कृतम्॥९५॥

कृधि मीदुषेऽहुंतस्य च सप्त चं॥८॥------[८

अनागसंस्त्वा व्यम्। इन्द्रंण प्रेषिता उपं। वायुष्टं अस्त्वश्यभूः। मित्रस्तं अस्त्वश्यभूः। वर्रणस्ते अस्त्वश्यभूः। अपांक्षया ऋतंस्य गर्भाः। भुवंनस्य गोपाः श्येनां अतिथयः। पर्वतानाङ्ककुभः प्रयुतो नपातारः। वुगुनेन्द्र ई ह्वयत। घोषेणामीवा १ श्वातयत॥ १६॥

युक्ताः स्थ वहंत। देवा ग्रावांण इन्दुरिन्द्र इत्यंवादिषुः। एन्द्रंमचुच्यवुः पर्मस्याः पर्वतः। आऽस्मात्स्थस्थांत्। ओरोर्न्तरिक्षात्। आ सुंभूतमंसुषवुः। ब्रह्मवर्च्सम्म आसुंषवुः। सम्रे रक्षा इंस्यविषषुः। अपंहतं ब्रह्मज्यस्यं। वाक्रं त्वा मनेश्च श्रीणीताम्॥९७॥

प्राणश्चं त्वाऽपानश्चं श्रीणीताम्। चक्षुंश्च त्वा श्रोत्रं च श्रीणीताम्। दक्षंश्चत्वा बलं च श्रीणीताम्। ओजंश्च त्वा सहंश्च श्रीणीताम्। आयुंश्च त्वाऽज्जरा चं श्रीणीताम्। आत्मा चं त्वा तुनूश्चं श्रीणीताम्। शृतोऽिस शृतं कृतः। शृतायं त्वा शृतेभ्यंस्त्वा। यमिन्द्रंमाहुर्वरुंणं यमाहुः। यम्मित्रमाहुर्यमुं सत्यमाहुः॥९८॥

यो देवानांन्देवतंमस्तपोजाः। तस्मैं त्वा तेभ्यंस्त्वा। मिय त्यदिन्द्रियम्महृत्। मिय दक्षो मिय ऋतुंः। मियं धायि सुवीर्यम्। त्रिशुंग्धमी वि भांतु मे। आकूँत्या मनंसा सह। विराजा ज्योतिषा सह। युज्ञेन पर्यंसा सह। तस्य दोहंमशीमहि॥९९॥

तस्यं सुम्नमंशीमिह। तस्यं भृक्षमंशीमिह। वाग्जुंषाणा सोमंस्य तृप्यतु। मित्रो जनान्त्र स मित्र। यस्मान्न जातः परो अन्यो अस्ति। य आंविवेश भुवनानि विश्वां। प्रजापंतिः प्रजयां संविदानः। त्रीणि ज्योती १षि सचते स षोंड्शी। एष ब्रह्मा य ऋत्वियंः। इन्द्रो नामं श्रुतो गुणे॥१००॥

प्र ते महे विदथे शश्सिष्य हरीं। य ऋत्वियः प्र ते वन्वे। वनुषों हर्यतम्मदम्। इन्द्रो नामं घृतन्नयः। हरिभिक्षारु सेचंते। श्रुतो गण आ त्वां विशन्तु। हरिवर्पसङ्गिरंः। इन्द्राधिपतेऽधिपतिस्त्वन्देवानांमिस। अधिपतिम्माम्। आयुंष्मन्तं वर्चस्वन्तम्मनुष्येषु कुरु॥१०१॥

इन्द्रेश्च सम्राङ्घर्रणश्च राजाँ। तौ ते भृक्षं चंक्रतुरग्नं एतम्। तयोरन् भृक्षं भृक्षयामि। वाग्जुंषाणा सोमस्य तृप्यतु। प्रजापितिर्विश्वकर्मा। तस्य मनो देवं युज्ञेनं राध्यासम्। अर्थेगा अस्य जहितः। अवसानंपतेऽवसानंम्मे विन्द। नमो रुद्रायं वास्तोष्पतंये। आयंने विद्रवंणे॥१०२॥

उद्याने यत्परायंणे। आवर्तने विवर्तने। यो गोपायित् त॰ हुवे। यान्यंपामित्यान्यप्रतीत्तान्यस्मि। यमस्यं बिलिना चर्रामि। इहैव सन्तः प्रति तद्यांतयामः। जीवा जीवेभ्यो नि हंराम एनत्। अनृणा अस्मिन्नंनृणाः पर्रस्मिन्। तृतीयें लोके अनृणाः स्यांम। ये देवयानां उत पितृयाणाः॥१०३॥

सर्वांन्यथो अंनृणा आक्षीयेम। इदमून श्रेयोऽवसान्मा गंन्म। शिवे नो द्यावांपृथिवी उभे इमे। गोम्द्धनंवदश्वंवदूर्जस्वत्। सुवीरां वीरेरनु सश्चरेम। अर्कः पृवित्र रजंसो विमानः। पुनातिं देवानाम्भुवंनानि विश्वां। द्यावांपृथिवी पर्यसा

संविदाने। घृतन्दुंहाते अमृतं प्रपीने। प्वित्रंमको रजसो विमानः। पुनाति देवानाम्भुवनानि विश्वाः। सुवर्ज्योतिर्यशो महत्। अशोमहि गाधमुत प्रतिष्ठाम्॥१०४॥

चात्यत् श्रीणीतार् सत्यमाहुरंशीमहि गुणे कुंरु विद्रवंणे पितृयाणां अर्को रजंसो विमानुस्नीणिं च॥९॥ [९]

उदंस्ताम्प्सीत्सिविता मित्रो अंर्यमा। सर्वानिमत्रांनवधीद्युगेनं। बृहन्तम्मामंकरद्वीरवंन्तम्। रथन्तरे श्रंयस्व स्वाहां पृथिव्याम्। वामदेव्ये श्रंयस्व स्वाहाऽन्तरिक्षे। बृहिति श्रंयस्व स्वाहां दिवि। बृहता त्वोपंस्तभ्रोमि। आ त्वां ददे यशंसे वीर्याय च। अस्मास्वंिष्ठया यूयन्दंधाथेन्द्रियं पर्यः। यस्ते द्रप्सो यस्तं उद्रुषः ॥१०५॥

दैव्यः केतुर्विश्वम्भुवंनमाविवेशं। स नंः पाह्यरिष्ट्रो स्वाहाँ। अनुं मा सर्वो यज्ञोऽयमेतु। विश्वे देवा मुरुतः सामार्कः। आप्रियश्छन्दार्श्स निविदो यज्र्र्श्ष। अस्य पृथिव्ये यद्यज्ञियम्। प्रजापंतेर्वर्तनिमनुं वर्तस्व। अनुंवीरेरनुं राध्याम् गोभिः। अन्वश्वेरनु सर्वेरु पुष्टेः। अनुं प्रजयाऽन्विन्द्रियेणं॥१०६॥

देवा नों यज्ञमृंजुधा नंयन्तु। प्रतिंक्षत्रे प्रतिंतिष्ठामि राष्ट्रे। प्रत्यश्वेषु प्रतिंतिष्ठामि गोषुं। प्रतिं प्रजायां प्रतिंतिष्ठामि भव्यै। विश्वंमन्याऽभिं वावृधे। तद्न्यस्यामधिश्रितम्। दिवे चं विश्वकंर्मणे। पृथिव्यै चांकर्न्नमंः। अस्कान्द्यौः पृथिवीम्। अस्कानृष्भो युवागाः॥१०७॥

स्कन्नेमा विश्वा भुवना। स्कन्नो युज्ञः प्र जनयतु। अस्कानजनि प्राजनि। आ स्कन्नाञ्जायते वृषाँ। स्कन्नात्प्र जनिषीमिह। ये देवा येषांमिदम्भाग्धेयम्बभूवं। येषां प्रयाजा उतानूंयाजाः। इन्द्रंज्येष्ठेभ्यो वर्रुणराजभ्यः। अग्निहोतृभ्यो देवेभ्यः स्वाहाँ। उत त्या नो दिवां मृतिः॥१०८॥

अदितिरूत्या गंमत्। सा शन्तांची मयंस्करत्। अप् स्निधंः। उत त्या दैव्यां भिषजां। शन्नंस्करतो अश्विनां। यूयातांम्स्मद्रपंः। अप् स्निधंः। शम्भिर्म्निर्मस्करत्। शन्नंस्तपतु सूर्यः। शं वातों वात्वरुपाः॥१०९॥

अप स्रिधंः। तदित्पदन्न विचिकेत विद्वान्। यन्मृतः पुनंरप्येतिं जीवान्। त्रिवृद्यद्भुवंनस्य रथ्वृत्। जीवो गर्भो न मृतः स जीवात्। प्रत्यंस्मै पिपीषते। विश्वांनि विदुषे भर। अर्ङ्गमाय जग्मेवे। अपश्चाद्द्यवने नरें। इन्दुरिन्दुमवांगात्। इन्दोरिन्द्रोऽपात्। तस्यं त इन्द्विन्द्रंपीतस्य मधुंमतः। उपहृत्स्योपंहृतो भक्षयामि ॥११०॥

उदर्ष इंन्द्रियेण गा मृतिरंर्पा अंगात्रीणि च॥१०॥------[१०]

ब्रह्मं प्रतिष्ठा मनंसो ब्रह्मं वाचः। ब्रह्मं यज्ञाना १ हविषामाज्यंस्य। अतिरिक्तङ्कर्मणो यचं हीनम्। यज्ञः पर्वाणि प्रतिरन्नेति कुल्पयन्। स्वाहांकृताऽऽहुंतिरेतु देवान्। आश्रांवितम्त्याश्रांवितम्। वर्षद्वृतमृत्यनूँक्तं च यज्ञे। अतिरिक्तङ्कर्मणो यच्चं हीनम्। यज्ञः पर्वाणि प्रतिरन्नेति कुल्पयन्। स्वाहांकृताऽऽहुंतिरेतु देवान्॥१११॥

यद्वो देवा अतिपादयांनि। वाचा चित्प्रयंतन्देवहेर्डनम्। अरायो अस्मा १ अभिदुंच्छुनायते। अन्यत्रास्मन्मं रुत्स्तिन्निधेतन। त्तम्म आप्स्तदुं तायते पुनः। स्वादिष्ठा धीतिरुचथाय शस्यते। अय १ संमुद्र उत विश्वभेषजः। स्वाहांकृतस्य समृतृण्णुतर्भुवः। उद्वयन्तमं सस्परि। उदुत्यश्चित्रम्॥११२॥

ड्मम्में वरुण तत्त्वां यामि। त्वन्नों अग्ने स त्वन्नों अग्ने। त्वमंग्ने अयासि प्रजांपते। इमञ्जीवेभ्यः परिधिन्दंधामि। मैषान्नुंगादपंरो अर्धमेतम्। शतञ्जीवन्तु श्ररदः पुरूचीः। तिरो मृत्युन्दंधतां पर्वतेन। इष्टेभ्यः स्वाहा वष्डिनष्टेभ्यः स्वाहाँ। भेषजन्दुरिष्टमे स्वाहा निष्कृंत्ये स्वाहाँ। दौराँध्ये स्वाहा देवींभ्यस्तन्भ्यः स्वाहाँ॥११३॥

ऋख्यै स्वाह्य समृंख्यै स्वाहाँ। यतं इन्द्र भयांमहे। ततों नो अभयं कृषि। मघंवञ्छ्गि तव तन्नं ऊतयें। वि द्विषो वि मृधों जिहि। स्वस्तिदा विशस्पतिंः। वृत्रहा वि मृधों वृशी। वृषेन्द्रंः पुर एंतु नः। स्वस्तिदा अभयङ्करः। आभिर्गीर्भियंदतों न ऊनम्॥११४॥

आप्यांयय हरिवो वर्धमानः। यदा स्तोतृभ्यो महिं गोत्रा रुजासिं। भूयिष्टभाजो अधं ते स्याम। अनाजातं यदाज्ञातम्। यज्ञस्यं क्रियते मिथुं। अग्ने तदंस्य कल्पय। त्व हि वेर्त्थं यथात्थम्। पुरुषसम्मितो युज्ञः। युज्ञः पुरुषसम्मितः। अग्ने तदंस्य कल्पय। त्वः हि वेर्त्थं यथातथम्। यत्पांकत्रा मनसा दीनदेक्षा न। यज्ञस्यं मन्वते मर्तासः। अग्निष्टद्धोतां ऋतुविद्विजानन्। यजिष्ठो देवार ऋतुशो यंजाति॥११५॥ देवा १ श्चित्रं तुनूभ्यः स्वाहोनं पुरुषसम्मितोऽग्ने तर्दस्य कल्पय पर्श्वं च॥११॥———[१९] यद्वेवा देवहेर्डनम्। देवांसश्चकृमा वयम्। आदित्यास्तस्मांन्मा मुश्रत। ऋतस्युर्तेन मामुत्। देवां जीवनकाम्या यत्। वाचा ऽनृंतमूदिम। अग्निर्मा तस्मादेनंसः। गार्हंपत्यः प्रमुंश्चतु। दुरिता यानिं चकुम। कुरोतु मामंनेनसम्॥११६॥ ऋतेनं द्यावापृथिवी। ऋतेन त्व संरस्वति। ऋतान्मां मुञ्जता १ हंसः। यदन्यकृतमारिम। सजातश १ सादुत वां जामिश्र्सात्। ज्यायंसः श्र्सांदुत वा कनीयसः। अनौज्ञातन्देवकृतं यदेनः। तस्मात्त्वम्स्माञ्जातवेदो मुमुग्धि। यद्वाचा यन्मनंसा। बाहुभ्यांमूरुभ्यांमष्ठीवन्द्यांम्॥११७॥ शिश्ञैर्यदनृतश्चकुमा वयम्। अग्निर्मा तस्मादेनंसः। यद्धस्तांभ्याश्चकर किल्बिंषाणि। अक्षाणां वग्नुमुंपजिघ्नंमानः। दूरेपश्या चं राष्ट्रभृचं। तान्यंप्सरसावनुंदत्तामृणानिं। अदींव्यन्नृणं यद्हश्चकारं। यद्वादांस्यन्त्सञ्जगारा जनेंभ्यः।

अग्निर्मा तस्मादेनंसः। यन्मयिं माता गर्भे स्ति॥११८॥ एनंश्वकार् यत्प्ता। अग्निर्मा तस्मादेनंसः। यदां पिपेषं मातरं पितरम्। पुत्रः प्रमुंदितो धयन्। अहिर्श्सितौ पितरौ मया तत्। तदंग्ने अनृणो भंवामि। यदन्तरिक्षं पृथिवीमुत द्याम्। यन्मातरं पितरं वा जिहिश्सिम। अग्निर्मा तस्मादेनंसः। यदाशसां निशसा यत्पंराशसां॥११९॥

यदेनश्चकृमा नूर्तनं यत्पुंराणम्। अग्निर्मा तस्मादेनसः। अतिं क्रामामि दुरितं यदेनः। जहांमि रिप्रं पंरमे स्थस्थैं। यत्र यन्तिं सुकृतो नापिं दुष्कृतः। तमा रोहामि सुकृतान्नु लोकम्। त्रिते देवा अमृजतैतदेनः। त्रित एतन्मनुष्येषु मामृजे। ततों मा यदि किश्चिदानशे। अग्निर्मा तस्मादेनसः॥१२०॥

गार्हंपत्यः प्र मुंश्रत्। दुरिता यानि चकृम। क्रोतु मामनेनसम्। दिवि जाता अप्सु जाताः। या जाता ओषंधीभ्यः। अथो या अंग्रिजा आपंः। ता नेः शुन्धन्तु शुन्धंनीः। यदापो नक्तंन्दुरितश्चरांम। यद्वा दिवा नूतंनं यत्पुंराणम्। हिरंण्यवर्णास्तत् उत्पुंनीत नः। इमम्में वरुण् तत्त्वां यामि। त्वन्नों अग्रे स त्वन्नों अग्रे। त्वमंग्रे अयासिं॥१२१॥

अनेनसंमधीवज्ञारं स्ति पंराशसांऽऽनशेंऽग्निर्मा तस्मादेनंसः पुनीत नुस्नीणिं च (यहेवा देवां ऋतेनं सजातश्र्रेसाद्यद्वाचा यद्धस्तांभ्यामदींच्यं यन्मियं माता यदां पिपेष यद्नतिरंक्षं यदाशसाऽतिं कामामि त्रिते देवा दिवि जाता अप्सु जाता यदापं हुमम्में वरुण तत्त्वां यामि त्वत्रों अग्ने स त्वन्नों अग्ने

त्वमंग्ने अ्यासिं।)॥१२॥———[१२]

यत्ते ग्राव्णां चिच्छिद्ः सोम राजन्। प्रियाण्यङ्गांनि स्विधिता परूर्षे। तत्सन्धत्स्वाज्येनोत वर्धयस्व। अनागसो अधिमत्सङ्क्षयेम। यत्ते ग्रावां बाहुच्युंतो अचुंच्यवः। नरो यत्ते दुदुहुर्दक्षिणेन। तत्त् आप्यांयतान्तत्ते। निष्ट्यांयतान्देव सोम। यत्ते त्वचंम्बिभिदुर्यच् योनिम्। यदास्थानात्प्रच्युंतो वेनंसि त्मनां ॥१२२॥

त्वया तत्सोम गुप्तमंस्तु नः। सा नः सम्धासंत्पर्मे व्योमन्। अहाच्छरीरं पर्यसा समेत्यं। अन्यौन्यो भवति वर्णो अस्य। तस्मिन्वयमुपंहूतास्तवं स्मः। आ नो भज्ञ सदिसे विश्वरूपे। नृचक्षाः सोमं उत शुश्रुगंस्तु। मा नो वि हांसीदिरं आवृणानः। अनांगास्तन्वो वावृधानः। आ नो रूपं वहतु जायंमानः॥१२३॥

उपं क्षरन्ति जुह्वां घृतेनं। प्रियाण्यङ्गांनि तवं वर्धयंन्तीः। तस्मैं ते सोम् नम् इद्वषंद्व। उपं मा राजन्त्सुकृते ह्वंयस्व। सं प्राणापानाभ्या सम् चक्षुंषा त्वम्। सः श्रोत्रेण गच्छस्व सोम राजन्। यत्त् आस्थित शम् तत्ते अस्तु। जानीतान्नः सङ्गमेने पथीनाम्। एतञ्जांनीतात्पर्मे व्योमन्। वृकाः सधस्था विद रूपमंस्य ॥१२४॥

यदागच्छौत्पथिभिर्देवयानैः। इष्टापूर्ते कृणुतादाविरंस्मै। अरिष्टो राजन्नगुदः परेहि। नमस्ते अस्तु चक्षंसे रघूयते। नाकुमारोह सह यर्जमानेन। सूर्यं गच्छतात्पर्मे व्योमन्। अभूँद्देवः संविता वन्द्योनु नंः। इदानीमह्रं उपवाच्यो नृभिः। वि यो रत्ना भर्जति मान्वेभ्यः। श्रेष्ठं नो अत्र द्रविणं यथा दर्धत्। उपं नो मित्रावरुणाविहावंतम्। अन्वादीध्याथामिह नंः सखाया। आदित्यानां प्रसितिरहेतिः। उग्रा शतापाष्ठा घविषा परिं णो वृणक्तु। आप्यांयस्व सन्ते॥१२५॥

त्मना जार्यमानोऽस्य दधत्पश्चं च॥१३॥

१३

यिद्देविक्षे मनंसा यर्च वाचा। यद्वाँ प्राणेश्वक्षंषा यच् श्रोत्रेण। यद्रेतंसा मिथुनेनाप्यात्मनाँ। अद्भा लोका देधिरे तेजं इन्द्रियम्। शुक्रा दीक्षायै तपंसो विमोचंनीः। आपो विमोक्रीर्मिये तेजं इन्द्रियम्। यद्चा साम्ना यर्जुषा। पश्नाश्चर्मन् ह्विषां दिदीक्षे। यच्छन्दोभिरोषंधीभिर्वन्स्पतौँ। अद्भा लोका दंधिरे तेजं इन्द्रियम् ॥१२६॥

शुक्रा दीक्षायै तपंसो विमोर्चनीः। आपो विमोक्रीमीय तेजं इन्द्रियम्। येन् ब्रह्म येनं क्षुत्रम्। येनेंन्द्राग्नी प्रजापंतिः सोमो वर्रुणो येन राजां। विश्वं देवा ऋषंयो येनं प्राणाः। अञ्चो लोका दंधिरे तेजं इन्द्रियम्। शुक्रा दीक्षायै तपंसो विमोर्चनीः। आपो विमोक्रीमीय तेजं इन्द्रियम्। अपां पुष्पंमस्योषंधीनाः रसंः। सोमंस्य प्रियन्धामं॥१२७॥

अग्नेः प्रियतमर हिवः स्वाहाँ। अपां पुष्पंमस्योषंधीनार् रसंः।

सोमंस्य प्रियन्धामं। इन्द्रंस्य प्रियतंम हिवः स्वाहाँ। अपां पुष्पंमुस्योषंधीना रसंः। सोमंस्य प्रियन्धामं। विश्वंषान्देवानां प्रियतंम हिवः स्वाहाँ। वय सोम व्रते तवं। मनंस्तृनूषु पिप्रंतः। प्रजावंन्तो अशीमहि॥१२८॥

देवेभ्यः पितृभ्यः स्वाहाँ। सोम्यभ्यः पितृभ्यः स्वाहाँ। क्रव्यभ्यः पितृभ्यः स्वाहाँ। देवांस इह मादयध्वम्। सोम्यांस इह मादयध्वम्। कव्यांस इह मादयध्वम्। अनंन्तरिताः पितरः सोम्याः सोमपीथात्। अपैतु मृत्युर्मृतंत्र आगन्। वैवस्वतो नो अभयं कृणोतु। पर्णं वनस्पतेरिव॥१२९॥

अभि नंः शीयता र्यिः। सर्चतात्रः शचीपितः। परंम्मृत्यो अनु परंहि पन्थाम्। यस्ते स्व इतरो देवयानात्। चक्षुष्मते शृण्वते ते ब्रवीमि। मा नंः प्रजा र्रीरिषो मोत वीरान्। इदमूनु श्रेयोवसानमार्गन्म। यद्गोजिद्धन्जिदंश्वजिद्यत्। पृणं वनस्पतेरिव। अभि नंः शीयता र्यिः। सर्चतात्रः शचीपितः॥१३०॥

वनस्पतांव्ज्यो लोका दंधिरे तेजं इन्द्रियन्थामांशीमहीवाभिनंः शीयताः र्यिरेकं च॥१४॥—[१४]
सर्वान् यद्विष्यंण्णेन् वि वै याः पुरस्ताद्देवां देवेषु परिस्तृणीत् सक्षेदं यदस्य पारेऽनागस्
उदंस्ताम्प्सीद्वह्मं प्रतिष्ठा यद्देवा यत्ते ग्राव्ण्णा यद्दिदीक्षे चतुर्दश॥१४॥
सर्वान्भूतिमेव यामेवाप्स्वाहुंतिं व्रतानां पर्णवल्कः सोम्यानांमस्मिन्यज्ञेऽग्रे यो नो ज्योग्जीवाः
प्रोरंजाः प्रतेमहे ब्रह्मं प्रतिष्ठा गार्हंपत्यस्त्रिष्शादंत्तरश्तम्॥१३०॥
सर्वाञ्छचीपतिः॥

हरिंः ओम्॥ ॥इति श्रीकृष्णयजुर्वेदीयतैत्तिरीयब्राह्मणे तृतीयाष्टके सप्तमः प्रपाठकः समाप्तः॥

॥अष्टमः प्रश्नः॥

॥ तैत्तिरीयब्राह्मणे तृतीयाष्टके अष्टमः प्रपाठकः॥

साङ्गृहण्येष्ट्रमां यजते। इमाञ्चनता स् सङ्गृह्णानीति। द्वादेशारत्नी रशना भेवति। द्वादेश मासाः संवत्स्रः। संवत्स्रमेवावं रुन्थे। मौञ्जी भेवति। ऊर्ग्वे मुञ्जाः। ऊर्जमेवावं रुन्थे। चित्रा नक्षेत्रम्भवति। चित्रं वा एतत्कर्म॥१॥

यदंश्वमेधः समृद्धौ। पुण्यंनाम देवयजंनम्ध्यवंस्यति। पुण्यामेव तेनं कीर्तिम्भि जंयति। अपंदातीनृत्विजंः समावंहन्त्या सुंब्रह्मण्यायाः। सुवर्गस्यं लोकस्य सम्ष्ठौ। केश्रश्मश्रु वंपते। नखानि नि कृन्तते। द्तो धांवते। स्नाति। अहंतं वासः परिंधत्ते। पाप्मनोऽपंहत्यै। वाचं यत्वोपं वसति। सुवर्गस्यं लोकस्य गुप्त्यै। रात्रिं जाग्रयंन्त आसते। सुवर्गस्यं लोकस्य समष्ट्रौ॥२॥

कर्म धत्ते पश्चं च॥१॥------[१]

चतुंष्टय्य आपों भवन्ति। चतुंः शफो वा अश्वंः प्राजापृत्यः समृद्धौ। ता दिग्भ्यः समाभृता भवन्ति। दिक्षु वा आपंः। अत्रं वा आपंः। अन्नो वा अत्रं जायते। यदेवान्नोऽत्रं जायते। तदवं रुन्थे। तासुं ब्रह्मौद्नं पंचिति। रेतं एव तद्दंधाति॥३॥ चतुंः शरावो भवति। दिक्ष्वंव प्रतितिष्ठति। उभ्यतांरुक्मौ भंवतः। उभ्यतं एवास्मिन्नुचंन्दधाति। उद्धंरित शृत्तवायं। सूर्पिष्वांन्भवति मेध्यत्वायं। चत्वारं आर्षेयाः प्राश्नंन्ति। दिशामेव ज्योतिंषि जुहोति। चत्वारि हिरण्यानि ददाति। दिशामेव ज्योती १ष्यवं रुन्धे॥४॥

यदाज्यंमुच्छिष्यंते। तस्मिन्नश्नान्युंनित्तः। प्रजापंतिर्वा ओदनः। रेत् आज्यम्। यदाज्यं रश्नान्युनित्तं। प्रजापंतिमेव रेतंसा समर्धयिति। दर्भमयीं रश्ना भंवति। बहु वा एष कुंचरों मेध्यमुपंगच्छिति। यदश्वंः। पिवित्रं वे दर्भाः॥५॥ यद्दंर्भमयीं रश्ना भवंति। पुनात्येवैनम्। पूतमेंनुम्मध्यमा लंभते। अश्वंस्य वा आलंब्धस्य महिमोदंन्नामत्। स महर्त्विजः प्राविंशत्। तन्महर्त्विजाम्महर्त्विक्तम्। यन्महर्त्विजः प्राश्विति। महिमानंमेवास्मिन्तद्दंधित। अश्वंस्य वा आलंब्धस्य रेत् उदंन्नामत्। तत्सुवर्ण्श् हिरंण्यमभवत्। यत्सुवर्ण्श् हिरंण्यन्ददांति। रेतं एव तद्दंधाति। ओदने दंदाति। रेतो वा ओदनः। रेतो हिरंण्यम्। रेतंसैवास्मिन्नेतो दधाति॥६॥

दुधाति रुन्धे दुर्भा अभवुष्यद चं॥२॥-----[२]

यो वै ब्रह्मणे देवेभ्यः प्रजापंत्येऽप्रंतिप्रोच्याश्वं मेध्यं बृध्नातिं। आ देवतांभ्यो वृश्च्यते। पापीयान्भवति। यः प्रंतिप्रोच्यं। न देवतांभ्य आवृश्च्यते। वसीयान्भवति। यदाहं। ब्रह्मन्नश्वम्मेध्यंम्भन्त्स्यामि देवेभ्यः प्रजापंतये तेनं राध्यास्मितिं। ब्रह्म वै ब्रह्मा। ब्रह्मण एव देवेभ्यः प्रजापंतये

प्रतिप्रोच्याश्वम्मेध्यंम्बध्नाति॥७॥

न देवतांभ्य आ वृंश्च्यते। वसींयान्भवति। देवस्यं त्वा सिवृतुः प्रम्य इति रश्नामादेते प्रसूत्ये। अश्विनोंर्बाहुभ्यामित्याह। अश्विनो हि देवानांमध्वर्य आस्तांम्। पूष्णो हस्तांभ्यामित्यांहु यत्यै। व्यृंद्धं वा एतद्यज्ञस्यं। यदंयजुष्कंण क्रियते। इमामंगृभ्णत्रश्नामृतस्येत्यिधं वदित यजुंष्कृत्यै। यज्ञस्य समृंद्धे॥८॥

तदांहुः। द्वादंशारती रश्ना कंर्त्व्या ३ त्रयोदशार्ती ३ रितिं। ऋष्मो वा एष ऋंतूनाम्। यत्संवत्सरः। तस्यं त्रयोदशो मासों विष्टपम्। ऋष्म एष यज्ञानाम्। यदंश्वमेधः। यथा वा ऋष्मस्यं विष्टपम्। एवमेतस्यं विष्टपम्। त्रयोदशमंरति १ रंश्नायांमुपा दंधाति॥९॥

यथंर्षभस्यं विष्टपर्ं सङ्स्करोतिं। ताहगेव तत्। पूर्व आयुंषि विद्येषु कृव्येत्यांह। आयुंरेवास्मिन्दधाति। तयां देवाः सुतमा बंभूवुरित्यांह। भूतिंमेवोपावंति। ऋतस्य सामैन्त्स्रमारपन्तीत्यांह। सृत्यं वा ऋतम्। स्त्येनैवनंमृतेनारंभते। अभिधा असीत्यांह॥१०॥

तस्मांदश्वमेधयाजी सर्वाणि भूतान्यभि भंवति। भुवनम्सीत्यांह। भूमानंमेवोपैति। यन्ताऽसीत्यांह। यन्तारंमेवैनं करोति। धुर्तासीत्यांह। धुर्तारंमेवैनं करोति। सौंऽग्निं वैश्वान्रमित्यांह। अग्नावेवैनें वेश्वान्रे जुंहोति। सप्रथसमित्यांह॥११॥

प्रजयैवेनं पृश्भिः प्रथयित। स्वाहांकृत् इत्यांह। होमं एवास्यैषः। पृथिव्यामित्यांह। अस्यामेवेनं प्रतिष्ठापयित। यन्ता राड्यन्ताऽसि यमंनो धर्तासि धरुण इत्यांह। रूपमेवास्यैतन्मंहिमानं व्याचंष्टे। कृष्यै त्वा क्षेमांय त्वा रय्यै त्वा पोषांय त्वेत्यांह। आशिषमेवेतामाशांस्ते। स्वगा त्वां देवेभ्य इत्यांह। देवेभ्यं एवेनई स्वगा करोति। स्वाहां त्वा प्रजापंतय इत्यांह। प्राजापत्यो वा अर्थः। यस्यां एव देवतांया आलुभ्यतें। तयैवेन् समंध्यति॥१२॥

बुभ्राति समृद्धा उपादंधात्यसीत्यांह सप्रथसमित्यांह देवेभ्य इत्यांह पश्चं च॥३॥———[३]

यः पितुरंनुजायाः पुत्रः। स पुरस्तांन्नयति। यो मातुरंनुजायाः पुत्रः। स पृश्चान्नयति। विष्वंश्चमेवास्मांत्पाप्मानं विवृहतः। यो अर्वन्तं जिघारंसित् तम्भ्यंमीति वर्रुण् इति श्वानं चतुरक्षं प्रसौति। परो मर्तः पुरः श्वेति शुनंश्चतुरक्षस्य प्रहंन्ति। श्वेव व पाप्मा भ्रातृंव्यः। पाप्मानंमेवास्य भ्रातृंव्यः हन्ति। सेथुकम्मुसंलम्भवति॥१३॥

कर्मकर्मेवास्में साधयति। पौर्श्चलेयो हंन्ति। पुर्श्चलवां वै देवाः शुच्न्त्र्यंदधुः। शुचैवास्य शुचर् हन्ति। पाप्मा वा एतमीप्सतीत्यांहुः। योंऽश्वमेधेन यजंत इतिं। अश्वंस्याधस्पदमुपाँस्यति। वृज्ञी वा अश्वंः प्राजापृत्यः। वज्रंणैव पाप्मानुम्भातृंव्यमवं क्रामति। दक्षिणाऽपं प्रावयति॥१४॥

पाप्मानंमेवास्माच्छमंलमपं प्रावयति। ऐषीक उंदूहो भवति। आयुर्व इषीकाः। आयुरेवास्मिन्दधित। अमृतं वा इषीकाः। अमृतंमेवास्मिन्दधित। वेतस्शाखोपसम्बंद्धा भवति। अप्सुयोनिर्वा अश्वंः। अप्सुजो वेतसः। स्वादेवैनं योनेर्निर्मिमीते। पुरस्तांत्प्रत्यश्चंमभ्युदूंहिति। पुरस्तांदेवास्मिन्प्रतीच्यमृतंन्दधाति। अहं च त्वं चं वृत्रहिन्नितं ब्रह्मा यजमानस्य हस्तंङ्गृह्णाति। ब्रह्मक्षत्रे एव सन्दंधाति। अभिक्रत्वेन्द्र भूरध्जमन्नित्यंध्वर्युर्यजमानं वाचयत्यभिजित्यै॥१५॥

भुवति प्रावयति मिमीते पश्चं च॥४॥

[8]

च्त्वारं ऋत्विजः समुक्षन्ति। आभ्य एवैनं चत्सभ्यों दिग्भ्योंऽभि समीरयन्ति। श्तेनं राजपुत्रैः सहाध्वर्यः। पुरस्तांत्प्रत्यिङ्गष्टम्प्रोक्षंति। अनेनाश्वंन मेध्येनेष्ट्वा। अयश्र राजां वृत्रं वध्यादिति। राज्यं वा अध्वर्यः। क्षत्रश्र राजपुत्रः। राज्येनैवास्मिन्क्षत्रन्दंधाति। श्तेनां राजभिंरुग्रैः सह ब्रह्मा॥१६॥

द्क्षिणत उद्ङ्विष्ठन्प्रोक्षंति। अनेनाश्वंन मेध्येनेष्ट्वा। अय॰ राजाँप्रतिधृष्योँऽस्त्वितिं। बलुं वै ब्रह्मा। बलंमराजोग्रः। बलेनेवास्मिन्बलेन्दधाति। श्तेनं सूतग्राम्णिभिः सह होतां। पृश्चात्प्राङ्गिष्टुन्प्रोक्षंति। अनेनाश्वंन मेध्यंनेष्ट्वा। अय॰ राजाऽस्यै विशः॥१७॥

बहुग्वे बंहुश्वायें बहुजाविकायें। बहुवीहियवायें बहुमाषितलायें। बहुहिर्ण्यायें बहुहिस्तकांये। बहुदासपूरुषायें रियमत्ये पृष्टिंमत्ये। बहुरायस्पोषाये राजास्त्विति। भूमा वे होतां। भूमा सूतग्रामण्यंः। भूम्नेवास्मिन्भूमानंन्दधाति। श्रतेनं क्षत्तसङ्ग्रहीतृभिः सहोद्गाता। उत्तर्तो देक्षिणा तिष्ठन्त्रोक्षंति॥१८॥

अनेनाश्वेन मेध्येनेष्ट्वा। अय र राजा सर्वमायुरेत्विति। आयुर्वा उद्गाता। आयुंः क्षत्तसङ्ग्रहीतारंः। आयुंषैवास्मिन्नायुंदिधाति। श्रतर्शतम्भवन्ति। श्रतायुः पुरुषः श्रतेन्द्रियः। आयुंष्येवेन्द्रिये प्रतितिष्ठति। चतुः श्रता भवन्ति। चतंस्रो दिशंः। दिक्ष्वेव प्रति तिष्ठति॥१९॥

ब्रह्मा विश उंक्षति दिश एकं च॥५॥------[५]

यथा वै ह्विषों गृहीतस्य स्कन्दंति। एवं वा एतदश्वंस्य स्कन्दित। यन्निक्तमनालब्धमृत्सृजन्ति। यत्स्तोक्यां अन्वाहं। सर्वहुतंमेवैनं करोत्यस्कन्दाय। अस्कन्नु हि तत्। यद्धुतस्य स्कन्दिति। सहस्रमन्वांह। सहस्रंसिम्मतः सुवर्गो लोकः। सुवर्गस्यं लोकस्याभिजित्यै॥२०॥

यत्परिमिता अनुब्रूयात्। परिमित्मवं रुन्धीतः। अपिरिमिता अन्वाहः। अपिरिमितः सुवर्गो लोकः। सुवर्गस्यं लोकस्य सम्प्रेष्टो। स्तोक्यां जुहोति। या एव वर्ष्या आपः। ता अव रुन्धे। अस्यां जुंहोति। इयं वा अग्निवैश्वानुरः॥२१॥

अस्यामेवेनाः प्रतिष्ठापयति। उवाचं ह प्रजापंतिः। स्तोक्यांसु वा अहमंश्वमेधः सङ्स्थांपयामि। तेन ततः सङ्स्थितेन चरामीति। अग्नये स्वाहेत्यांह। अग्नयं एवेनं जुहोति। सोमांय स्वाहेत्यांह। सोमांयैवेनं जुहोति। स्वित्रे स्वाहेत्यांह। स्वित्र एवेनं जुहोति॥२२॥

सरंस्वत्ये स्वाहेत्यांह। सरंस्वत्या एवैनं जुहोति। पूष्णे स्वाहेत्यांह। पूष्ण एवैनं जुहोति। बृह्स्पतंये स्वाहेत्यांह। बृह्स्पतंय एवैनं जुहोति। अपाम्मोदांय स्वाहेत्यांह। अद्म्य एवैनं जुहोति। वायवे स्वाहेत्यांह। वायवं एवैनं जुहोति॥२३॥

मित्राय स्वाहेत्यांह। मित्रायैवैनं जुहोति। वर्रणाय् स्वाहेत्यांह। वर्रणायैवैनं जुहोति। एताभ्यं एवैनं देवताभ्यो जुहोति। दशंदश संपादं जुहोति। दशाक्षरा विराट। अत्रं विराट। विराजैवान्नाद्यमवं रुन्धे। प्र वा एषों उस्माल्लोकाच्यंवते। यः परांचीराहुंतीर्जुहोति। पुनंः पुनरभ्यावर्तं जुहोति। अस्मिन्नेव लोके प्रतिंतिष्ठति। एता श ह वाव सो ऽश्वमेधस्य सङ्स्थितिमुवाचास्केन्दाय। अस्केन्नु १ हि तत्। यद्यज्ञस्य सङ्स्थितस्य स्कन्दिति॥२४॥

अभिजिंत्यै वैश्वान्रः संवित्र एवैनं जुहोति वायवं एवैनं जुहोति च्यवते पद चं॥६॥ $lue{f L}$

प्रजापंतये त्वा जुष्टं प्रोक्षामीतिं पुरस्तांत्प्रत्यिङ्गष्टन्प्रोक्षंति।
प्रजापंतिर्वे देवानांमन्नादो वीर्यावान्। अन्नाद्यंमेवास्मिन्वीर्यं
दधाति। तस्मादर्श्वः पश्नामंन्नादो वीर्यावत्तमः।
इन्द्राग्निभ्यान्त्वेतिं दक्षिणतः। इन्द्राग्नी व देवानामोजिष्ठौ
बिर्लेष्ठौ। ओजं एवास्मिन्बर्लन्दधाति। तस्मादर्श्वः
पश्नामोजिष्ठो बिर्लेष्ठः। वायवे त्वेतिं पृश्चात्। वायुर्वे
देवानांमाशुः सारसारितंमः॥२५॥

ज्वमेवास्मिन्दधाति। तस्मादश्वः पशूनामाशः सांरसारितंमः। विश्वेभ्यस्त्वा देवेभ्य इत्यंत्तरतः। विश्वे वै देवा देवानां यशस्वितंमाः। यशं पुवास्मिन्दधाति। तस्मादश्वः पशूनां यशस्वितंमः। देवेभ्यस्त्वेत्यधस्तात। देवा वै देवानामपंचिततमाः। अपंचितिमेवास्मिन्दधाति। तस्मादश्वः पशूनामपंचिततमः॥२६॥

सर्वेंभ्यस्त्वा देवेभ्य इत्युपिरेष्टात्। सर्वे वै देवास्त्विषेमन्तो हर्स्वनंः। त्विषिमेवास्मिन् हरों दधाति। तस्मादश्वंः पशूनान्त्विषमान्हर्स्वितंमः। दिवे त्वाऽन्तिरक्षाय त्वा पृथिव्यै त्वेत्यांह। एभ्य एवैनं लोकेभ्यः प्रोक्षंति।

स्ते त्वाऽसंते त्वाऽद्धस्त्वौषंधीभ्यस्त्वा विश्वभ्यस्त्वा भूतेभ्य इत्यांह। तस्मांदश्वमेधयाजिन् सर्वाणि भूतान्युपंजीवन्ति। ब्रह्मवादिनों वदन्ति। यत्प्रांजापृत्योऽश्वंः। अथ् कस्मांदेनम्न्याभ्यों देवताभ्योऽपि प्रोक्षतीतिं। अश्वे वै सर्वा देवतां अन्वायंत्ताः। तं यद्विश्वभ्यस्त्वा भूतेभ्य इतिं प्रोक्षतिं। देवतां प्वास्मिन्नन्वा यांतयित। तस्मादश्वे सर्वा देवतां अन्वायंत्ताः॥२७॥

सार्सारितमोऽपंचिततमः प्राजापुत्योऽश्वः पश्चं च॥७॥------[७]

यथा वै ह्विषों गृहीतस्य स्कन्दंति। एवं वा एतदश्वंस्य स्कन्दति। यत्प्रोक्षित्मनांलब्धमृत्सृजन्ति। यदंश्वचिर्तानिं जुहोतिं। सर्वहृतंमेवैनं करोत्यस्कन्दाय। अस्कंन्नर् हि तत्। यद्धुतस्य स्कन्दंति। ईङ्काराय स्वाहें कृताय स्वाहेत्यांह। एतानि वा अंश्वचिर्तानिं। चरितैरेवैन्र समर्धयति॥२८॥

तदांहुः। अनांहुतयो वा अश्वचिर्तानिं। नैता होत्व्यां इतिं। अथो खल्वांहुः। होत्व्यां एव। अत्र वावैवं विद्वानेश्वमेधः सङ्स्थांपयति। यदंश्वचिर्तानिं जुहोतिं। तस्माँद्धोत्व्यां इतिं। बहि्र्धां वा एनमेतदायतनाद्दधाति। भ्रातृंव्यमस्मै जनयति॥२९॥

यस्यांनायत्नें ऽन्यत्राग्नेराहुंतीर्जुहोतिं। सावित्रिया इष्ट्राः पुरस्तांत्स्वष्टकृतंः। आहुवनीयें ऽश्वचिर्तानिं जुहोति।

आयर्तन एवास्याहुंतीर्जुहोति। नास्मै भ्रातृंव्यञ्जनयति। तदांहुः। यज्ञमुखेयंज्ञमुखे होत्व्याः। यज्ञस्य क्रुस्यैः। सुवर्गस्यं लोकस्यानुंख्यात्या इति। अथो खल्वांहुः॥३०॥

यद्यंज्ञमुखेयंज्ञमुखे जुहुयात्। पृशुभिर्यजंमानं व्यर्धयेत्। अवं सुवृगिक्षोकात्पंद्येत। पापीयान्त्स्यादिति। सुकृदेव होत्व्याः। न यजंमानं पृशुभिर्व्यर्धयति। अभि सुंवृगै लोकं जंयति। न पापीयान्भवति। अष्टाचंत्वारिश्शतमश्वरूपाणि जुहोति। अष्टाचंत्वारिश्शदक्षरा जगंती। जागृतोऽश्वंः प्राजापृत्यः समृद्धे। एकमितिरक्तं जुहोति। तस्मादेकंः प्रजास्वर्धुकः॥३१॥

विभूर्मात्रा प्रभूः पित्रेत्याह। इयं वै माता। असौ पिता। आभ्यामेवेनं परिददाति। अश्वीऽसि हयोऽसीत्याह। शास्त्येवेनमेतत्। तस्माँच्छिष्टाः प्रजा जांयन्ते। अत्योऽसीत्यांह। तस्मादश्वः सर्वांन्पशूनत्येति। तस्मादश्वः सर्वेषां पशूनाः श्रेष्ठ्यं गच्छति॥३२॥

प्र यशः श्रेष्ठमंमाप्नोति। य एवं वेदं। नरोऽस्यवांऽसि सप्तिरिस वाज्यंसीत्यांह। रूपमेवास्यैतन्मंहिमानं व्याचंष्टे। ययुर्नामाऽसीत्यांह। एतद्वा अश्वंस्य प्रियन्नांमधेयम्। प्रियेणैवैनंन्नामधेयेनाभि वंदति। तस्मादप्यांमित्रौ सङ्गत्यं। नाम्ना चेद्धयेते। मित्रमेव भंवतः॥३३॥

आदित्यानां पत्वाऽन्विहीत्यांह। आदित्यानेवैनंङ्गमयित। अग्नये स्वाहा स्वाहेंन्द्राग्निभ्यामितिं पूर्वहोमां जुंहोति। पूर्व एव द्विषन्तम्भ्रातृंव्यमितं क्रामित। भूरंसि भुवे त्वा भव्याय त्वा भविष्यते त्वेत्युत्सृंजित सर्वत्वायं। देवां आशापाला एतन्देवभ्योऽश्वम्मेधांय प्रोक्षिंतङ्गोपायतेत्यांह। शतं वै तत्प्यां राजपुत्रा देवा आंशापालाः। तेभ्यं एवैनं परिं ददाति। ईश्वरो वा अश्वः प्रमुंक्तः परां परावतङ्गन्तौः। इह धृतिः स्वाहेह विधृतिः स्वाहेह रन्तिः स्वाहेह रमितः स्वाहेह रातिः स्वाहेह रातिः स्वाहेह रातिः स्वाहेह रातिः स्वाहेह रातिः स्वाहेति चतृषु पत्सु जुंहोति॥३४॥

पुता वा अश्वंस्य बन्धंनम्। ताभिरेवैनंम्बध्नाति। तस्मादश्वः प्रमुंक्तो बन्धंनमा गंच्छति। तस्मादश्वः प्रमुंक्तो बन्धंनन्न जंहाति। राष्ट्रं वा अश्वमेधः। राष्ट्रे खलु वा एते व्यायंच्छन्ते। येऽश्वम्मध्य रक्षंन्ति। तेषां य उद्दं गच्छंन्ति। राष्ट्रादेव ते राष्ट्रक्षंच्छन्ति। अथु य उद्दं गच्छंन्ति॥३५॥

राष्ट्रादेव ते व्यवंच्छिद्यन्ते। परा वा एष सिंच्यते। योऽबुलौंऽश्वमेधेन यजेते। यदमित्रा अर्श्वं विन्देरन्। हुन्येतांस्य युज्ञः। चृतुः शृता रक्षिन्ति। युज्ञस्याघांताय। अथान्यमानीय प्रोक्षेयुः। सैव ततः प्रायंश्वित्तिः॥३६॥

गुच्छुति भुवतः पुत्स जुंहोति न गच्छंन्ति नवं च॥१॥————[९] प्रजापतिरकामयताश्वमेधेनं यजे्येतिं। स तपोऽतप्यत। तस्यं तेपानस्यं। स्प्तात्मनों देवता उदंक्रामन्। सा दीक्षाऽभंवत्। स एतानिं वैश्वदेवान्यंपश्यत्। तान्यंजुहोत्। तैर्वे स दीक्षामवांरुन्थ। यद्वैश्वदेवानिं जुहोतिं। दीक्षामेव तैर्यजंमानोऽवं रुन्थे॥३७॥

सप्त जुंहोति। सप्त हि ता देवतां उदक्रांमन्। अन्वहं जुंहोति। अन्वहमेव दीक्षामवं रुन्धे। त्रीणि वैश्वदेवानि जुहोति। चत्वार्यौद्धहुणानिं। सप्त सम्पंद्यन्ते। सप्त वै शीर्षण्याः प्राणाः। प्राणा दीक्षा। प्राणैरेव प्राणान्दीक्षामवं रुन्धे॥३८॥

एकंविश्शतिं वैश्वदेवानिं जुहोति। एकंविश्शतिर्वे देवलोकाः। द्वादंश् मासाः पश्चर्तवंः। त्रयं इमे लोकाः। असावादित्य एकविश्शः। एष सुंवर्गो लोकः। तद्दैव्यं क्षूत्रम्। सा श्रीः। तद्वध्नस्यं विष्टपम्। तत्स्वाराज्यमुच्यते॥३९॥

त्रिष्शतंमौद्रह्णानिं जुहोति। त्रिष्शदंक्षरा विराट्। अन्नं विराट्। विराजैवान्नाद्यमवं रुन्थे। त्रेधा विभज्यं देवतां जुहोति। त्र्यांवृतो वै देवाः। त्र्यांवृत इमे लोकाः। एषां लोकानामास्ये। एषां लोकानां क्रुस्ये। अप वा एतस्मात्प्राणाः क्रांमन्ति॥४०॥

यो दीक्षामंतिरेचयंति। स्प्ताहं प्रचंरन्ति। स्प्त वै शीर्षण्याः प्राणाः। प्राणा दीक्षा। प्राणैरेव प्राणान्दीक्षामवं रुन्थे। पूर्णाहुतिमुत्तमां जुंहोति। सर्वं वै पूर्णाहुतिः। सर्वमेवाप्नोति। अथों इयं वै पूँर्णाहुतिः। अस्यामेव प्रतिं तिष्ठति॥४१॥

कुन्धे प्राणान्दीक्षामवं रुन्ध उच्यते क्रामन्ति तिष्ठति॥१०॥————[१०]

प्रजापंतिरश्वम्धमंसृजत। त॰ सृष्टं न किश्चनोदंयच्छत्। तं वैश्वदेवान्येवोदंयच्छन्। यद्वैश्वदेवानिं जुहोतिं। यज्ञस्योद्यंत्यै। स्वाहाऽऽधिमाधींताय स्वाहाँ। स्वाहाऽधीतं मनंसे स्वाहाँ। स्वाहा मनंः प्रजापंतये स्वाहाँ। काय स्वाहा कस्मै स्वाहां कत्मस्मै स्वाहेतिं प्राजाप्तये मुख्ये भवतः। प्रजापंतिमुखाभिरेवैनं देवतांभिरुद्यंच्छते॥४२॥

अदित्ये स्वाहाऽदित्ये मृह्ये स्वाहाऽदित्ये सुमृडीकाये स्वाहेत्यांह। इयं वा अदितिः। अस्या एवेनं प्रतिष्ठायोद्यंच्छते। सरंस्वत्ये स्वाहा सरंस्वत्ये वृहत्ये स्वाहा सरंस्वत्ये पावकाये स्वाहेत्यांह। वाग्वे सरंस्वती। वाचेवेनमुद्यंच्छते। पूष्णे स्वाहां पूष्णे मरन्धिषाय स्वाहेत्यांह। पृष्णे वे पूषा। पृष्णिरेवेनमुद्यंच्छते। त्वष्टे स्वाहा त्वष्टे तुरीपांय स्वाहा त्वष्टे पुरुरूपांय स्वाहेत्यांह। त्वष्टा वे पंशूनां मिथुनाना रूपकृत्। रूपमेव पृष्णुं दधाति। अथीं रूपरेवेनमुद्यंच्छते। विष्णंवे स्वाहा विष्णंवे निभूयपाय स्वाहेत्यांह। यज्ञो वे विष्णंः। यज्ञायेवेनमुद्यंच्छते। पूर्णाहुतिमंत्तमां जुंहोति। प्रत्युत्तं ध्ये सयत्वायं॥४३॥

सावित्रमृष्टाकंपालं प्रातिर्निवंपति। अष्टाक्षंरा गायत्री। गायत्रं प्रातः सवनम्। प्रातः सवनादेवैनं गायित्रयाश्छन्दसोऽधि निर्मिनीते। अथौ प्रातः सवनमेव तेनौप्रोति। गायत्रीं छन्दंः। सवित्रे प्रंसवित्र एकांदशकपालं मुध्यन्दिने। एकांदशाक्षरा त्रिष्टुप्। त्रेष्टुंभं माध्यं दिन् सवनम्। माध्यं दिनादेवैन् सवनात्रिष्टुभश्छन्दसोऽधि निर्मिनीते॥४४॥

अथो माध्यं दिनमेव सर्वनं तेनाँप्रोति। त्रिष्टुमं छन्दं। स्वित्र आंसिवृत्रे द्वादंशकपालमपराह्णे। द्वादंशाक्षरा जगंती। जागंतं तृतीयसवनम्। तृतीयसवनमेव तेनाँप्रोति। जगंतीं छन्दं। निर्मिनीते। अथो तृतीयसवनमेव तेनाँप्रोति। जगंतीं छन्दं। ईश्वरो वा अश्वः प्रमुंक्तः पर्गं परावतं गन्तौं। इह धृतिः स्वाहेह विधृंतिः स्वाहेह रन्तिः स्वाहेह रमंतिः स्वाहेति चतंस्र आहुंतीर्जुहोति॥४५॥

चर्तस्रो दिशः। दिग्भिरेवैनं परिगृह्णाति। आश्वंत्थो वृजो भंवति। प्रजापतिर्देवेभ्यो निलायत। अश्वो रूपं कृत्वा। सौंऽश्वत्थे संवत्स्रमंतिष्ठत्। तदंश्वत्थस्यांश्वत्थत्वम्। यदाश्वंत्थो वृजो भवंति। स्व पृवैनं योनौ प्रतिष्ठापयति॥४६॥ वृष्ठभुष्ठ नुसोऽष् निर्मिगीते जुहोति नवं चाहरण——[१२]

आ ब्रह्मंन्ब्राह्मणो ब्रंह्मवर्च्सी जांयतामित्यांह। ब्राह्मण एव ब्रंह्मवर्च्सं दंधाति। तस्मौत्पुरा ब्राह्मणो ब्रंह्मवर्च्स्यंजायत। आऽस्मित्राष्ट्रे रांज्न्यं इष्व्यंः शूरों महार्थो जांयतामित्यांह। राज्न्यं एव शौर्यं मंहिमानं दधाति। तस्मांत्पुरा रांज्न्यं इष्व्यंः शूरों महार्थोऽजायत। दोग्ध्री धेनुरित्यांह। धेन्वामेव पयों दधाति। तस्मांत्पुरा दोग्ध्री धेनुरंजायत। वोढांऽनङ्वानित्यांह॥४७॥

अनुडुह्येव वीर्यं दधाति। तस्मौत्पुरा वोढांऽनुङ्वानंजायत। आशुः सिप्तिरत्यांह। अश्वं एव ज्वं दंधाति। तस्मौत्पुराऽऽशुरश्वोंऽजायत पुरेन्धिर्योषेत्यांह। योषित्येव रूपं दंधाति। तस्मात्स्नी युंवतिः प्रिया भावुंका। जिष्णू रंथेष्ठा इत्यांह। आ हु वै तत्रं जिष्णू रंथेष्ठा जांयते॥४८॥

यत्रैतनं यज्ञेन् यजंन्ते। स्मेयो युवेत्यांह। यो वै पूँववयसी। स स्मेयो युवाँ। तस्माद्युवा पुमाँन्प्रियो भावुंकः। आऽस्य यजंमानस्य वीरो जांयतामित्यांह। आ हु वै तत्र यजंमानस्य वीरो जांयते। यत्रैतेनं यज्ञेन् यजंन्ते। निकामेनिंकामे नः पर्जन्यों वर्षित्वत्यांह। निकामेनिंकामे हु वै तत्रं पर्जन्यों वर्षित। यत्रैतेनं यज्ञेन् यजंन्ते। फिलन्यों न् ओषंधयः पच्यन्तामित्यांह। फिलन्यों हु वै तत्रौषंधयः पच्यन्ते। यत्रैतेनं यज्ञेन् यजंन्ते। योगक्षेमो नंः कल्पतामित्यांह। कल्पंते हु वै तत्रं प्रजाभ्यों योगक्षेमः। यत्रैतेनं यज्ञेन् यजंन्ते ॥४९॥

अनुङ्गानित्यांह जायते वर्षित सप्त चं॥१३॥-----[१३]

प्रजापंतिर्देवेभ्यों यज्ञान्व्यादिंशत्। स आत्मन्नंश्वमेधमंधत्त।

तं देवा अंब्रुवन्। एष वाव यज्ञः। यदंश्वमेधः। अप्येव नोत्रास्त्विति। तेभ्यं एतानंत्रहोमान्प्रायंच्छत्। तानंजुहोत्। तैर्वे स देवानंप्रीणात्। यदंत्रहोमां जुहोति॥५०॥

देवानेव तैर्यजंमानः प्रीणाति। आज्यंन जुहोति। अग्नेर्वा एतद्रूपम्। यदाज्यम्। यदाज्यंन जुहोति। अग्निमेव तत्प्रीणाति। मधुंना जुहोति। महत्यै वा एतद्देवतांयै रूपम्। यन्मधुं। यन्मधुंना जुहोति॥५१॥

मह्तीमेव तद्देवतां प्रीणाति। तृण्डुलैर्जुहोति। वसूनां वा एतद्रूपम्। यत्तंण्डुलाः। यत्तंण्डुलैर्जुहोतिं। वसूनेव तत्प्रीणाति। पृथुंकैर्जुहोति। रुद्राणां वा एतद्रूपम्। यत्पृथुंकाः। यत्पृथुंकैर्जुहोति॥५२॥

रुद्रानेव तत्प्रींणाति। लाजैर्जुहोति। आदित्यानां वा एतद्रूपम्। यल्लाजाः। यल्लाजैर्जुहोतिं। आदित्यानेव तत्प्रीणाति। क्रम्बैर्जुहोति। विश्वेषां वा एतद्देवानार्थं रूपम्। यत्क्रम्बौः। यत्क्रम्बैर्जुहोतिं॥५३॥

विश्वांनेव तद्देवान्प्रींणाति। धानाभिर्जुहोति। नक्षंत्राणां वा एतद्रूपम्। यद्धानाः। यद्धानाभिर्जुहोतिं। नक्षंत्राण्येव तत्प्रींणाति। सक्तंभिर्जुहोति। प्रजापंतेर्वा एतद्रूपम्। यत्सक्तंवः। यत्सक्तंभिर्जुहोतिं॥५४॥

प्रजांपतिमेव तत्प्रींणाति। मुसूस्यैंर्जुहोति। सर्वांसां वा

पृतद्देवतांनाः रूपम्। यन्मसूस्यांनि। यन्मसूस्यैंर्जुहोतिं। सर्वा एव तद्देवताः प्रीणाति। प्रियङ्गुतण्डुलैर्जुहोति। प्रियाङ्गां हु वै नामैते। एतैर्वे देवा अश्वस्याङ्गांनि समंदधः। यत्प्रियङ्गृतण्डुलैर्जुहोतिं। अश्वंस्यैवाङ्गांनि सन्दंधाति। दशान्नांनि जुहोति। दशांक्षरा वि्राट्। विराद्गृत्स्वस्यान्नाद्यस्यावंरुद्धे॥५५॥

जुहोति मधुंना जुहोति पृथुंकैर्जुहोतिं क्रम्बैंर्जुहोति सक्तुंभिर्जुहोतिं प्रियङ्गुतण्डुलैर्जुहोतिं चृत्वारिं च
(अन्नहोमानाज्येनाग्नेर्मधुंना तण्डुलैः पृथुंकैर्लाजैः क्रम्बैंर्ण्नाभिः सक्तुंभिर्मसूस्यैः प्रियङ्गुतण्डुलैर्द्शान्नानि

हादंश।)॥१४॥————[१४]

प्रजापंतिरश्वमेधमंसृजत। त स् सृष्ट स् रक्षा ईस्यजिघा स् सन्। स एतान्प्रजापंतिर्नृक्त होमानंपश्यत्। तानंजुहोत्। तैर्वे स युज्ञाद्रक्षा हस्यपाहन्। यन्नंक होमां जुहोति। युज्ञादेव तैर्यजमानो रक्षा हस्यपं हन्ति। आज्येन जुहोति। वज्रो वा आज्यम्। वज्रेणैव युज्ञाद्रक्षा हस्ता हित्ता ५६॥

आज्यंस्य प्रतिपदं करोति। प्राणो वा आज्यम्। मुख्त एवास्यं प्राणं दंधाति। अन्नहोमाञ्जहोति। शरीरवदेवावं रुन्थे। व्यत्यासं जुहोति। उभयस्यावंरुद्धै। नक्तं जुहोति। रक्षंसामपहत्यै। आज्येनान्ततो जुहोति॥५७॥

प्राणो वा आज्यम्। उभयतं एवास्यं प्राणं दंधाति। पुरस्तां चोपरिष्टा च। एकंस्मै स्वाहेत्यांह। अस्मिन्नेव लोके प्रतितिष्ठति। द्वाभ्याः स्वाहेत्यांह। अमुष्मिन्नेव लोके प्रति तिष्ठति। उभयोरेव लोकयोः प्रति तिष्ठति। अस्मिःश्चामुष्मिःश्चा श्वाय स्वाहेत्यांह। श्वायुर्वे पुरुषः श्वावीर्यः। आयुरेव वीर्यमवं रुन्धे। सहस्राय स्वाहेत्यांह। आयुर्वे सहस्रम्। आयुरेवावं रुन्धे। सर्वस्मै स्वाहेत्यांह। अपरिमितमेवावं रुन्धे॥५८॥

एव युज्ञाद्रक्षार्स्स्यपंहन्त्यन्तुतो जुंहोति शुताय स्वाहेत्यांह सुप्त चं॥१५॥-----[१५]

प्रजापंतिं वा एष ईंप्सतीत्यांहुः। योंऽश्वमेधेन यजंत इतिं। अथों आहुः। सर्वाणि भूतानीतिं। एकंस्मै स्वाहेत्यांह। प्रजापंतिर्वा एकंः। तमेवाप्नोति। एकंस्मै स्वाहा द्वाभ्याः स्वाहेत्यंभिपूर्वमाहुंतीर्जुहोति। अभिपूर्वमेव सुंवर्गं लोकमेति। एकोत्तरं जुंहोति॥५९॥

एकवदेव सुंवर्गं लोकमेति। सन्तंतं जुहोति। सुवर्गस्यं लोकस्य सन्तंत्यै। श्ताय स्वाहेत्यांह। श्तायुर्वे पुरुषः श्तवीर्यः। आयुरेव वीर्यमवंरुन्थे। सहस्राय स्वाहेत्यांह। आयुर्वे सहस्रम्। आयुरेवावं रुन्थे। अयुतांय स्वाहां नियुतांय स्वाहां प्रयुतांय स्वाहेत्यांह॥६०॥

त्रयं इमे लोकाः। इमानेव लोकानवं रुन्थे। अर्बुदाय स्वाहेत्यांह। वाग्वा अर्बुदम्। वाचंमेवावं रुन्थे। न्यंर्बुदाय स्वाहेत्यांह। यो वै वाचो भूमा। तन्न्यंर्बुदम्। वाच एव भूमानुमवं रुन्धे। सुमुद्रायु स्वाहेत्यांह ॥६१॥

स्मुद्रमेवाप्नोति। मध्याय स्वाहेत्यांह। मध्यमेवाप्नोति। अन्ताय स्वाहेत्यांह। अन्तमेवाप्नोति। प्रार्धाय स्वाहेत्यांह। प्रार्धमेवाप्नोति। उषसे स्वाहा व्युष्ट्रमे स्वाहेत्यांह। रात्रिर्वा उषाः। अह्र्ब्युष्टिः। अहोरात्रे एवावंरुन्थे। अथों अहोरात्रयोरेव प्रतितिष्ठति। ता यदुभयीर्दिवां वा नक्तं वा जुहुयात्। अहोरात्रे मोहयेत्। उषसे स्वाहा व्युष्ट्रमे स्वाहोदेष्यते स्वाहोद्यते स्वाहेत्यनुंदिते जुहोति। उदिताय स्वाहां सुवर्गाय स्वाहां लोकाय स्वाहेत्युदिते जुहोति। अहोरात्रयोरव्यंतिमोहाय॥६२॥

पूर्कोत्तरं ज्रंहोति प्रयुतांय स्वाहेत्यांह समुद्राय स्वाहेत्या्हाह्व्यंष्टिः स्प्त चंगा्हा [१६] विभूर्मात्रा प्रभूः पित्रेत्यंश्वनामानि जुहोति। उभयोरेवैनं लोकयोनिम्धेयं गमयति। आयंनाय स्वाहा प्रायंणाय स्वाहेत्यंद्वावाञ्चंहोति। सर्वमेवैनमस्कंत्र स्वृव्णं लोकं गंमयति। अग्रये स्वाहा सोमाय स्वाहेति पूर्वहोमाञ्चंहोति। पूर्वं एव द्विषन्तं भ्रातृंव्यमितं कामित। पृथिव्ये स्वाहाऽन्तिरंक्षाय स्वाहेति पूर्वदीक्षा जुंहोति। पूर्वं एव द्विषन्तं भ्रातृंव्यमितं ज्ञामित। यथायजुरेवैतत्। अग्रये स्वाहा सोमाय स्वाहेति पूर्वदीक्षा जुंहोति। पूर्वं एव द्विषन्तं भ्रातृंव्यमितं कामित ॥६३॥

पृथिव्यै स्वाहाऽन्तरिक्षाय स्वाहेत्येकिवि १ शिनीं दीक्षां

जुंहोति। एकंविश्शित्वे देवलोकाः। द्वादेश मासाः पश्चर्तवंः। त्रयं इमे लोकाः। असावादित्य एकविश्शः। एष सुवर्गो लोकः। सुवर्गस्यं लोकस्य समध्ये। भवो देवानां कर्मणेत्यृंतुदीक्षा जुंहोति। ऋतूनेवास्मै कल्पयति। अग्नये स्वाहां वायवे स्वाहेतिं जुहोत्यनंन्तिरत्यै॥६४॥

अर्वाङ्यज्ञः सङ्गांमृत्वित्याप्तींर्जुहोति। सुवर्गस्यं लोकस्यास्यै।
भूतं भव्यं भिवष्यदिति पर्याप्तीर्जुहोति। सुवर्गस्यं लोकस्य
पर्याप्त्ये। आ में गृहा भवन्त्वत्याभूर्जुहोति। सुवर्गस्यं
लोकस्याभूत्ये। अग्निना तपोऽन्वंभवदित्यंनुभूर्जुहोति।
सुवर्गस्यं लोकस्यानुभूत्ये। स्वाहाऽऽधिमाधीताय स्वाहेति
समस्तानि वैश्वदेवानि जुहोति। समस्तमेव द्विषन्तं
भ्रातृंव्यमितं क्रामित॥६५॥

द्द्धः स्वाह् हर्नूभ्या् स्वाहेत्यंङ्गहोमाञ्जंहोति। अङ्गंअङ्गे वै पुरुषस्य पाप्मोपंश्लिष्टः। अङ्गांदङ्गादेवैनं पाप्मन्स्तेनं मुश्रति। अञ्चेताय स्वाहां कृष्णाय स्वाहां श्वेताय स्वाहेत्यंश्वरूपाणि जुहोति। रूपेरेवैन् समंध्यति। ओषंधीभ्यः स्वाह्य मूलेभ्यः स्वाहेत्यांषिधहोमाञ्जंहोति। द्वय्यो वा ओषंधयः। पुष्पेभ्योऽन्याः फलं गृह्णन्ति। मूलेभ्योऽन्याः। ता एवोभयी्रवं रुन्थे॥६६॥

वन्स्पतिंभ्यः स्वाहेतिं वनस्पतिहोमाञ्जंहोति। आर्ण्यस्यान्नाद्यस्याव

मेषस्त्वां पचतैरंवृत्वित्यपाँच्यानि जुहोति। प्राणा वै देवा अपाँच्याः। प्राणानेवावं रुन्धे। कूप्याँभ्यः स्वाहाद्धः स्वाहेत्यपा होमाँ अहोति। अप्सु वा आपंः। अन्नं वा आपंः। अन्नं वा आपंः। अन्नं जायते। यदेवान्धोऽन्नं जायते। तदवं रुन्धे॥६७॥

पूर्वदीक्षा जुंहोति पूर्व पुव द्विषन्तुं भ्रातृंब्यमितं कामृत्यनंन्तिरित्यै कामित रुन्धे जार्यत् एकं च॥१७॥ [१७]

अम्भार्श्स जुहोति। अयं वै लोकोऽम्भार्श्स। तस्य वस्वोऽधिपतयः। अग्निज्योतिः। यदम्भार्श्स जुहोति। इममेव लोकमवं रुन्थे। वसूनार्श्व सार्युज्यं गच्छति। अग्निं ज्योतिरवं रुन्थे। नभार्श्स जुहोति। अन्तरिक्षं वै नभार्श्स॥६८॥

तस्यं रुद्रा अधिपतयः। वायुर्ज्योतिः। यन्नभारंसि जुहोतिं। अन्तरिक्षमेवावं रुन्धे। रुद्राणार् सायुंज्यं गच्छति। वायुं ज्योतिरवं रुन्धे। महारंसि जुहोति। असौ वै लोको महारंसि। तस्यांदित्या अधिपतयः। सूर्यो ज्योतिः॥६९॥

यन्महा १सि जुहोतिं। अमुमेव लोकमवं रुन्थे। आदित्याना १ सायुंज्यं गच्छति। सूर्यं ज्योतिरवं रुन्थे। नमो राज्ञे नमो वर्रुणायेतिं यव्यानिं जुहोति। अन्नाद्यस्यावं रुद्धे। मृयोभूर्वातों अभि वांतूस्रा इतिं गृव्यानिं जुहोति। पृशूनामवं रुद्धे। प्राणाय स्वाहां व्यानाय स्वाहेतिं सन्ततिहोमाञ्जंहोति। सुवर्गस्यं लोकस्य सन्तंत्यै ॥७०॥

सिताय स्वाहाऽसिताय स्वाहेति प्रमुंक्तीर्जुहोति। सुवर्गस्यं लोकस्य प्रमुंक्त्ये। पृथिव्ये स्वाहाऽन्तिरक्षाय स्वाहेत्यांह। यथायजुरेवैतत्। दत्वते स्वाहांऽदन्तकांय स्वाहेतिं शरीरहोमाञ्जंहोति। पितृलोकमेव तैर्यजंमानोऽवं रुन्थे। कस्त्वां युनक्ति स त्वां युनक्तितिं परिधीन् युनक्ति। इमे वै लोकाः परिधयः। इमानेवास्में लोकान् युनक्ति। सुवर्गस्यं लोकस्य समंष्ट्री॥७१॥

यः प्रांणतो य आंत्मदा इति महिमानौ जुहोति। सुवर्गो वै लोको महंः। सुवर्गमेव ताभ्यां लोकं यजमानोऽवं रुन्थे। आ ब्रह्मंन्ब्राह्मणो ब्रह्मवर्चसी जांयतामिति समस्तानि ब्रह्मवर्चसानि जुहोति। ब्रह्मवर्चसमेव तैर्यजमानोऽवं रुन्थे। जित्र बीजमिति जुहोत्यनंन्तिरत्यै। अग्नये समनमत्पृथिव्ये समनमदिति सन्नतिहोमाञ्जहोति। सुवर्गस्यं लोकस्य सन्नत्यै। भूताय स्वाहां भिवष्यते स्वाहेति भूताभव्यौ होमौ जुहोति। अयं वै लोको भूतम्॥७२॥

असौ भंविष्यत्। अनयोरेव लोकयोः प्रतितिष्ठति। सर्वस्याप्त्रैं। सर्वस्यावरुद्धे। यदऋन्दः प्रथमं जायमान् इत्यंश्वस्तोमीयं जुहोति। सर्वस्याप्त्रैं। सर्वस्य जित्यैं। सर्वमेव तेनौप्रोति। सर्वं जयति। यौऽश्वमेधेन यजंते॥७३॥ य उं चैनमेवं वेदं। युज्ञ रक्षा ईस्यजिघा रसन्। स एतान्प्रजापंतिर्नक्त रहोमानंपश्यत्। तानंजुहोत्। तैर्वे स यज्ञाद्रक्षा रस्यपंहन्। यन्नंक रहोमां जुहोति। युज्ञादेव तैर्यजंमानो रक्षा रस्यपंहन्ति। उषसे स्वाहा व्युष्टे स्वाहेत्यंन्त्रतो जुहोति। सुवर्गस्यं लोकस्य समध्ये॥७४॥ व नमार्थम् पूर्णे ज्योतिः सन्तेत्रे समध्ये भूतं यज्ञेत् नवं चारणा————[१८] एक्यूपो वैकाद्शिनीं वा। अन्येषां युज्ञानां यूपां भवन्ति। एक्वि रशिन्यंश्वमेधस्यं। सुवर्गस्यं लोकस्याभिजित्ये। बैल्वो वां खादिरो वां पालाशो वां। अन्येषां यज्ञकत्नां यूपां भवन्ति। राज्ञंदाल एकंवि रशत्यरिवरश्वमेधस्यं।

पाप्मा वै तेंज्नी। पाप्मनोऽपंहत्यै। प्रक्षशाखायांमृन्येषां पशूनामंवद्यन्ति। वेत्सशाखायामश्वंस्य। अप्सुयोनिर्वा अश्वंः। अप्सुजो वेत्सः। स्व एवास्य योनाववं द्यति। यूपेषु ग्राम्यान्पशून्नियुञ्जन्ति। आरोकेष्वांरण्यान्धांरयन्ति। पशूनां व्यावृत्त्यै। आ ग्राम्यान्पशूह्रंभंन्ते। प्रार्ण्यान्त्सृंजन्ति। पाप्मनोऽपंहत्यै॥७६॥

सुवर्गस्यं लोकस्य समेष्ट्यै। नान्येषां पशूनां तेजन्या

अवद्यन्ति। अवद्यन्त्यश्वंस्य॥७५॥

अश्वंस्य व्यावृंत्ये शीर्ण चारशा——[१९] राज्जुंदालमग्निष्ठं मिनोति। भ्रूणहृत्याया अपहत्यै। पौतुंद्रवावभितों भवतः। पुण्यंस्य गन्धस्यावंरुद्धै। भ्रूणहृत्यामेवास्मांदपहत्यं। पुण्यंन गुन्धेनोंभ्यतः परि गृह्णाति। षड्डेल्वा भंवन्ति। ब्रह्मवर्चसस्यावंरुख्ये। षद्धांदिराः। तेजसोऽवंरुख्ये॥७७॥

षद्वांलाशाः। सोम्पीथस्यावंरुद्धौ। एकंविश्शितः सम्पंद्यन्ते। एकंविश्शितवें देवलोकाः। द्वादंश् मासाः पश्चर्तवंः। त्रयं इमे लोकाः। असावादित्य एकंविश्शः। एष सुवर्गो लोकः। सुवर्गस्यं लोकस्य समष्टौ। शृतं पृशवों भवन्ति॥७८॥

श्तायुः पुरुषः श्तेन्द्रियः। आयुंष्येवेन्द्रिये प्रतिं तिष्ठति। सर्वं वा अश्वमेध्याप्नोति। अपंरिमिता भवन्ति। अपंरिमित्स्यावंरुद्धे। ब्रह्मवादिनों वदन्ति। कस्मात्स्त्यात्। दक्षिणतौं उन्येषां पश्नामंवद्यन्ति। उत्तर्तोऽश्वस्येति। वारुणो वा अश्वंः॥७९॥

पुषा वै वर्रुणस्य दिक्। स्वायांमेवास्यं दिश्यवंद्यति। यदितंरेषां पशूनामंवद्यतिं। शृतदेवत्यं तेनावं रुन्थे। चितेंऽग्नाविधं वैत्से कटेऽश्वं चिनोति। अप्सुयोनिर्वा अश्वः। अप्सुजो वेंत्सः। स्व पुवैनं योनौ प्रतिष्ठापयति। पुरस्तांत्प्रत्यश्चं तूप्रं चिनोति। पृश्चात्प्राचीनं गोमृगम्॥८०॥

प्राणापानावेवास्मिन्त्सम्यश्चौ दधाति। अश्वं तूप्रं गोमृगमिति सर्वहुतं एताञ्चंहोति। एषां लोकानांमभिजित्यै। आत्मनाऽभि जुंहोति। सात्मानमेवेन् सतंनुं करोति। सात्माऽमुष्मिल्लाँके भेवति। य एवं वेदे। अथो वसीरेव धारां तेनावं रुन्धे। इलुवर्दाय स्वाहां बलिवर्दाय स्वाहेत्यांह। संवृत्सरो वा इंलुवर्दः। परिवृत्सरो बंलिवर्दः। संवृत्सरादेव परिवृत्सरादायुर्व रुन्धे। आयुरेवास्मिन्दधाति। तस्मादश्वमधयाजी जरसां विस्नसामुं लोकमेति॥८१॥

तेजुसोऽवंरुद्धै भवुन्त्यश्वौ गोमृगमिंलुवर्दश्चत्वारि च॥२०॥_____[२०]

पृक् विश्शौं ऽग्निर्भवित। पृक् विश्वाः स्तोमः। एकं विश्वातिर्यूपाः। यथा वा अश्वां वर्षमा वा वृषांणः सङ्स्फुरेरन्ं। पृवमेव तत्स्तोमाः सङ्स्फुरन्ते। यदेंक विश्वाः। ते यत्संमृच्छेरन्ं। हुन्येतांस्य यज्ञः। द्वाद्वा पृवाग्निः स्यादित्यांहुः। द्वाद्वाः स्तोमः॥८२॥

एकांदश् यूपाः। यद्वांदशौंऽग्निर्भवंति। द्वादंश् मासाः संवत्सरः। संवत्सरेणैवास्मा अन्नमवं रुन्धे। यद्दश् यूपा भवंन्ति। दशौक्षरा विराट्। अन्नं विराट्। विराजैवान्नाद्यमवं रुन्धे। य एकाद्शः। स्तनं एवास्यै सः॥८३॥

दुह एवैनां तेनं। तदांहुः। यद्वांदशौंऽग्निः स्यांद्वादशः स्तोम् एकांदश् यूपौः। यथा स्थूरिणा यायात्। तादक्तत्। एकविश्श एवाग्निः स्यादित्यांहुः। एकविश्शः स्तोमेः। एकविश्शित्यूपौः। यथा प्रष्टिभियातिं। तादगेव तत्॥८४॥

यो वा अश्वमेधे तिस्रः कुकुभो वेदं। कुकुद्ध राज्ञां

भवति। एकविष्शौंऽग्निर्भवति। एकविष्शः स्तोमंः। एकविष्शित्रिर्यूपाः। एता वा अश्वमेधे तिस्रः कुकुभंः। य एवं वेदं। कुकुद्ध राज्ञां भवति। यो वा अश्वमेधे त्रीणिं शीर्षाण् वेदं। शिरों हु राज्ञां भवति। एकविष्शांऽग्निर्भवति। एकविष्शाः स्तोमंः। एकविष्शित्रिर्यूपाः। एतानि वा अश्वमेधे त्रीणिं शीर्षाणिं। य एवं वेदं। शिरों हु राज्ञां भवति॥८५॥ ह्युद्धः स्तोमः स एव तिब्ब्रिरं ह राज्ञां भवति षद चं॥२१॥———[२१]

देवा वा अश्वमेधे पर्वमाने। सुवृगं लोकं न प्राजानन्। तमश्वः प्राजानात्। यदंश्वमेधेऽश्वेन मेध्येनोदंश्चो बहिष्पवमानः सर्पन्ति। सुवृगंस्यं लोकस्य प्रज्ञांत्ये। न व मंनुष्यः सुवृगं लोकमञ्जसा वेद। अश्वो व सुवृगं लोकमञ्जसा वेद। यदुंद्गातोद्गायेत्। यथा क्षेत्रज्ञोऽन्येनं पृथा प्रतिपादयेत्। तादक्तत्॥८६॥

उद्गातारंमप्रध्यं। अश्वंमुद्गीथायं वृणीते। यथां क्षेत्रज्ञोऽञ्जंसा नयंति। एवमेवेन्मश्वंः सुवर्गं लोकमञ्जंसा नयति। पुच्छंम्नवा रंभन्ते। सुवर्गस्यं लोकस्य सम्प्रे। हिं करोति। सामैवाकंः। हिं करोति। उद्गीथ एवास्य सः॥८७॥

वर्डबा उपं रुन्धन्ति। मिथुन्त्वाय प्रजांत्यै। अथो यथोपगातारं उपगायंन्ति। ताहगेव तत्। उदंगासीदश्वो मेध्य इत्याह। प्राजापत्यो वा अश्वः। प्रजापंतिरुद्गीथः। उद्गीथमेवार्व रुन्थे। अथों ऋक्सामयोरेव प्रतिं तिष्ठति। हिरंण्येनोपाकंरोति। ज्योतिर्वे हिरंण्यम्। ज्योतिरेव मुंखतो दंधाति। यजमाने च प्रजासुं च। अथो हिरंण्यज्योतिरेव यजमानः सुव्रां लोकमेति॥८८॥

तत्स उपाकंरोति चत्वारिं च॥२२॥-----[२२]

पुरुषो वै यज्ञः। यज्ञः प्रजापंतिः। यदश्वे पृश्नियुअन्ति। यज्ञादेव तद्यज्ञं प्रयुङ्के। अर्श्वं तूप्रं गोमृगम्। तानिग्निष्ठ आलेभते। सेनामुखमेव तत्सङ्श्यंति। तस्मौद्राजमुखं भीष्मं भावुंकम्। आग्नेयं कृष्णग्रींवं पुरस्तौक्षलाटैं। पूर्वाग्निमेव तं कुरुते॥८९॥

तस्मौत्पूर्वाभिं पुरस्तौत्स्थापयन्ति। पौष्णम्नवश्चम्। अत्रं वे पूषा। तस्मौत्पूर्वाभावांहार्यमा हंरन्ति। ऐन्द्रापौष्णमुपरिष्टात्। ऐन्द्रो वे रांजन्योऽत्रं पूषा। अन्नाद्येनैवेनंमुभ्यतः परि गृह्णाति। तस्मौद्राजन्यौऽन्नादो भावुंकः। आ्रभ्रेयौ कृष्णग्रींवौ बाहुवोः। बाहुवोरेव वीर्यं धत्ते॥९०॥

तस्मौद्राज्नन्यों बाहुब्लीभावुंकः। त्वाष्ट्रौ लोमशस्क्यौ स्कथ्योः। स्कथ्योरेव वीर्यं धत्ते। तस्मौद्राज्ञन्यं ऊरुब्लीभावुंकः। शितिपृष्ठौ बांर्हस्पृत्यौ पृष्ठे। ब्रह्मवर्चसमेवोपरिष्टाद्धत्ते। अथौ क्वचे एवैते अभितः पर्यूहते। तस्मौद्राज्नन्यः सन्नद्धो वीर्यं करोति। धात्रे पृंषोद्रम्धस्तांत्। प्रतिष्ठामेवैतां कुंरुते। अथों इयं वै धाता। अस्यामेव प्रति तिष्ठति। सौर्यं बलक्षं पुच्छैं। उत्सेधमेव तं कुंरुते। तम्मांदुत्सेधम्भये प्रजा अभिसङ्श्रंयन्ति॥९१॥

कुरुते धुत्ते कुरुते पर्श्व च॥२३॥-----[२३]

साङ्गृहण्या चतुंष्टय्यो यो वै यः पितुश्चत्वारो यथां निक्तं प्रजापंतये त्वा यथा प्रोक्षितं विभूरांह प्रजापंतिरकामयताश्वमेधेनं प्रजापंतिर्न किश्चन सांवित्रमा ब्रह्मंन्य्रजापंतिर्देवेभ्यः प्रजापंती रक्षारंसि प्रजापंतिमीप्सित विभूरंश्वनामान्यम्भाः स्थेकयूपो राज्ञुंदालमेकविर्शो देवाः पुरुष्मुस्रयोविरशितः॥२३॥

साङ्ग्रहुण्या तस्मांदश्वमेधयाजी यत्परिंमिता यद्यंज्ञमुखे यो दीक्षान्देवानेव त्रयं इमे सितायं प्राणापानावेवास्मिन्तस्मांद्राजन्यं एकंनवतिः॥९१॥

साङ्ग्रहण्या सङ्श्रंयन्ति॥

हरिः ओम्॥ ॥इति श्रीकृष्णयजुर्वेदीयतैत्तिरीयब्राह्मणे तृतीयाष्टके अष्टमः प्रपाठकः समाप्तः॥

॥नवमः प्रश्नः॥

॥ तैत्तिरीयब्राह्मणे तृतीयाष्टके नवमः प्रपाठकः॥

प्रजापंतिरश्वम्धमंसृजत। सौंऽस्मात्सृष्टोऽपाँकामत्। तमंष्टाद्शिभिरनु प्रायुंङ्कः। तमाँप्रोत्। तमास्वाऽष्टांद्शिभिरवांरुन्थ। यदंष्टाद्शिनं आलुभ्यन्तें। यज्ञम्व तैरास्वा यजंमानोऽवंरुन्थे। संवृत्स्रस्य वा एषा प्रंतिमा। यदंष्टाद्शिनंः। द्वादंश् मासाः पश्चर्तवंः॥१॥

संवत्सरों ऽष्टादशः। यदेष्टादशिनं आलभ्यन्तें। संवत्सरमेव तैरास्वा यजमानोऽवंरुन्थे। अग्निष्ठेंऽन्यान्पश्न्ंपाकरोतिं। इतरेषु यूपेष्वष्टादशिनोऽजांमित्वाय। नवनवालभ्यन्ते सवीर्यत्वायं। यदांरुण्यैः सर्इस्थापर्यंत्। व्यवंस्येतां पितापुत्रौ। व्यथ्वानः क्रामेयुः। विदूरङ्गामयोग्रीमान्तौ स्याताम्॥२॥ ऋक्षीकाः पुरुषव्याघ्राः पंरिमोषिणं आव्याधिनीस्तस्करा अरेण्येष्वाजायरन्। तदांहुः। अपेशवो वा पुते। यदांरुण्याः। यदांरुण्यैः सर्रस्थापर्यंत्। क्षिप्रे यजमानुमर्ण्यं मृत १ हरेयुः। अरंण्यायतना ह्यांरण्याः पशव इतिं। यत्पशूत्रालभेत। अनेवरुद्धा अस्य पशर्वः स्युः। यत्पर्यग्निकृतानुत्सृजेत्॥३॥ यज्ञवेशसं कुर्यात्। यत्पशूनालभंते। तेनैव पशूनवंरुन्धे। यत्पर्यम्निकृतानुत्सृजत्ययंज्ञवेशसाय। अवंरुद्धा अस्य पशवो भवंन्ति। न यंज्ञवेशसम्भंवति। न यजंमानमरंण्यम्मृतः

हंरन्ति। ग्राम्यैः सङ् स्थांपयति। एते वै पृशवः क्षेमो नामं। सं पितापुत्राववंस्यतः। समध्वांनः क्रामन्ति। सम्नित्कङ्गामंयोर्ग्रामान्तौ भंवतः। नक्षीकाः पुरुषव्याघ्राः परिमोषिणं आव्याधिनीस्तस्करा अरंण्येष्वाजांयन्ते॥४॥

ऋतवंः स्यातामुत्सृजेत्स्यंतस्त्रीणि च॥१॥------[१]

प्रजापंतिरकामयतोभौ लोकाववं रुन्धीयेतिं। स एतानुभयान्पशूनंपश्यत्। ग्राम्याङ्श्चांरुण्याङ्श्चं। तानालंभता तैर्वे स उभौ लोकाववांरुन्धा ग्राम्येरेव पृशुभिरिमं लोकमवांरुन्धा आरुण्येरुमुम्। यद्ग्राम्यान्पशूनालभंते। इममेव तैर्लोकमवं रुन्धे। यदांरण्यान्॥५॥

अमुन्तैः। अनंवरुद्धो वा एतस्यं संवत्स्र इत्यांहुः। य इतइंतश्चातुर्मास्यानि संवत्स्रं प्रयुङ्क इतिं। एतावान् वै संवत्स्रः। यचांतुर्मास्यानिं। यदेते चांतुर्मास्याः पृशवं आलुभ्यन्तें। प्रत्यक्षंमेव तैः संवत्स्रं यजमानोऽवंरुन्थे। वि वा एष प्रजयां पृशुभिर्ऋध्यते। यः संवत्स्रं प्रयुङ्के। संवत्स्रः सुंवर्गो लोकः॥६॥

सुवर्गन्तु लोकन्नापंराध्नोति। प्रजा वै प्शवं एकाद्शिनीं। यदेत ऐकादिशनाः पृशवं आल्भ्यन्तें। साक्षादेव प्रजां पृश्न् यजंमानोऽवंरुन्थे। प्रजापंतिर्विराजंमसृजत। सा सृष्टाऽश्वंमेधं प्राविंशत्। तान्दृशिभिरनु प्रायुंङ्कः। तामाप्रोत्। तामाप्ता दृशिभिरवांरुन्थ। यद्दृशिनं आल्भ्यन्ते॥७॥

विराजंमेव तैरास्वा यजंमानोऽवंरुन्थे। एकांदश दुशत् आलंभ्यन्ते। एकांदशाक्षरा त्रिष्टुप्। त्रेष्टुंभाः पृशवंः। पृश्नेवावंरुन्थे। वैश्वदेवो वा अश्वंः। नानादेवत्याः पृशवों भवन्ति। अश्वंस्य सर्वृत्वायं। नानांरूपा भवन्ति। तस्मान्नानांरूपाः पृशवंः। बहुरूपा भवन्ति। तस्माद्धहरूपाः पृशवः समृद्धे॥८॥

आरुण्याल्लोंको दृशिनं आलुभ्यन्तु नानांरूपाः पुशवो ह्रे चं॥२॥————[२]

अस्मै वै लोकार्य ग्राम्याः पृशव् आर्लभ्यन्ते। अमुष्मां आरुण्याः। यद्ग्राम्यान्पृशूनालभेते। इममेव तैर्लोकमवरुन्थे। यदारुण्यान्। अमुन्तैः। उभयान्पृशूनालभेते। गाम्याङ्श्चारुण्याङ्श्चं। उभयोर्लोकयोरवंरुद्धे। उभयान्पृशूनालभेते॥९॥

ग्राम्या इश्चार्ण्या इश्ची उभयंस्यान्ना द्यस्यावं रुद्धै। उभयाँन्पृशूनालंभते। ग्राम्या इश्चार्ण्या इश्ची। उभयेषां पशूनामवं रुद्धै। त्रयंस्रयो भवन्ति। त्रयं इमे लोकाः। एषां लोकानामाध्यै। ब्रह्मवादिनों वदन्ति। कस्मौत्सत्यात्॥१०॥

अस्मिल्लोंके बहुवः कामा इति। यत्संमानीभ्यों देवताभ्योऽन्येऽन्ये पृशवं आलुभ्यन्ते। अस्मिन्नेव तल्लोके कामान्दधाति। तस्मादस्मिल्लोंके बहुवः कामाः। त्रयाणात्र्रयाणात्रं सह वपा जुहोति। त्र्यावृतो वै देवाः। त्र्यावृत इमे लोकाः। एषां लोकानामास्यै। एषां लोकानां कृस्यै। पर्यग्निकृतानारण्यानुत्सृंजन्त्यहिर्स्माये॥११॥ अवरुद्धा उभयाँन्पुशूनालंभते सुत्यादहि १सायै॥३॥------[३]

युअन्तिं ब्रध्नमित्यांह। असौ वा आंदित्यो ब्रध्नः। आदित्यमेवास्मै युनक्ति। अरुषमित्यांह। अग्निर्वा अरुषः। अग्निमेवास्मै युनक्ति। चर्रन्तमित्यांह। वायुर्वे चरन्ं। वायुमेवास्मै युनक्ति। परितस्थुष इत्यांह॥१२॥

ड्मे वै लोकाः परितस्थुषंः। इमानेवास्मैं लोकान् यंनक्ति। रोचंन्ते रोचना दिवीत्यांह। नक्षत्राणि वै रोचना दिवि। नक्षत्राण्येवास्मैं रोचयति। युअन्त्यंस्य काम्येत्यांह। कामानेवास्मैं युनक्ति। हरी विपंक्षसेत्यांह। इमे वै हरी विपंक्षसा। इमे एवास्मैं युनक्ति॥१३॥

शोणां धृष्णू नृवाह्सेत्यांह। अहोरात्रे वै नृवाहंसा। अहोरात्रे एवास्में युनिक्त। एता एवास्में देवतां युनिक्त। सुवर्गस्यं लोकस्य सम्प्रिं। केतुं कृण्वन्नंकेतव इति ध्वजं प्रतिमुश्चति। यशं एवेन् राज्ञांङ्गमयित। जीमूतंस्येव भवित् प्रतींक्मित्यांह। यथायजुरेवेतत्। ये ते पन्थांनः सवितः पूर्व्यास् इत्यंध्वर्युर्यजमानं वाचयत्यभिजिंत्ये॥१४॥

परा वा एतस्यं यज्ञ एंति। यस्यं प्रशुरुपार्कृतोऽन्यत्र् वेद्या एति। एत इस्तोतरेतेनं पथा पुन्रश्वमार्वर्तयासि न् इत्याह। वायुर्वे स्तोतां। वायुमेवास्यं प्रस्तां इधात्यार्वृत्त्ये। यथा वे ह्विषों गृहीतस्य स्कन्दंति। एवं वा एतदश्वंस्य स्कन्दित। यदंस्योपार्कृतस्य लोमांनि शीयंन्ते। यद्वालेषु काचानावयंन्ति। लोमान्येवास्य तत्सम्भरन्ति॥१५॥

भूर्भुवः सुव्रितिं प्राजापत्याभिरावंयन्ति। प्राजापत्यो वा अर्श्वः। स्वयैवैनं देवतंया समर्धयन्ति। भूरिति महिषी। भुव इति वावातां। सुव्रितिं परिवृक्ती। एषां लोकानांमभिजिंत्ये। हिर्ण्ययांः काचा भवन्ति। ज्योतिर्वे हिरंण्यम्। राष्ट्रमंश्वमेधः॥१६॥

ज्योतिंश्चैवास्मै राष्ट्रं चं समीचीं दधाति। सहस्रंम्भवन्ति। सहस्रंसम्मितः सुवर्गो लोकः। सुवर्गस्यं लोकस्याभिजित्यै। अप वा एतस्मात्तेजं इन्द्रियं पृशवः श्रीः क्रांमन्ति। यौंऽश्वमेधेन यजंते। वसंवस्त्वाऽअन्तु गायत्रेण छन्दसेति महिष्यभ्यंनक्ति। तेजो वा आज्यम्। तेजो गायत्री। तेजंसैवास्मै तेजोऽवंरुन्धे॥१७॥

रुद्रास्त्वां अन्तु त्रैष्टुंभेन् छन्द्रसेतिं वावातां। तेजो वा आज्यम्। इन्द्रियत्रिष्टुप्। तेजंसैवास्मां इन्द्रियमवंरुन्धे। आदित्यास्त्वां ऽअन्तु जागंतेन् छन्द्रसेतिं परिवृक्ती। तेजो वा आज्यम्। पृशवो जगंती। तेजंसैवास्में पृशूनवंरुन्धे। पत्नयो ऽभ्यं अन्ति। श्रिया वा पृतद्रूपम्॥१८॥

यत्पत्नयः। श्रियंमेवास्मिन्तद्दंधित। नास्मात्तेजं इन्द्रियं पृशवः श्रीरपं क्रामन्ति। लाजी (३) ञ्छाची (३) न् यशोममाँ(४) इत्यतिरिक्तमन्नमश्वायोपाहरन्ति। प्रजामेवान्नादीं कुर्वते। एतद्देवा अन्नमत्तैतदन्नमिद्ध प्रजापत् इत्यांह। प्रजायांमेवान्नाद्यंन्दधते। यदि नाव्जिघ्रेंत्। अग्निः पृशुरांसीदित्यवंघ्रापयेत्। अवं हैव जिंघ्रति। आक्रान्ं वाजी क्रमैरत्यंक्रमीद्वाजी द्यौस्ते पृष्ठं पृंथिवी स्थस्थमित्यश्वमनुंमन्नयते। एषां लोकानांम्भिजित्यै। समिद्धो अञ्जन्कृदंरं मतीनामित्यश्वंस्याप्रियों भवन्ति सरूपत्यायं॥१९॥

परितृस्थुण इत्योहुमे एवास्मै युनक्त्यभिजित्ये भरन्यश्वमेथो रूथे रूपिक्षेत्रति श्रीण चारा [४] ते जंसा वा एष ब्रह्मवर्चसेन व्यृद्धते। यो ऽश्वमेथेन यजंते। होतां च ब्रह्मा चं ब्रह्मोद्यं वदतः। ते जंसा चैवैनं ब्रह्मवर्चसेनं च समर्थयतः। दक्षिणतो ब्रह्मा भविति। दक्षिणतआयतनो वे ब्रह्मा। बार्ह्स्यत्यो वे ब्रह्मा। ब्रह्मवर्चसमेवास्यं दक्षिणतो देधाति। तस्मादक्षिणोऽधौ ब्रह्मवर्चसितंरः। उत्तर्तो होतां भविति॥२०॥

उत्तर्तआंयतनो वै होतां। आग्नेयो वै होतां। तेजो वा अग्निः। तेजं पुवास्योंत्तर्तो दंधाति। तस्मादुत्तरोऽर्धस्तेज्स्वितंरः। यूपंम्भितों वदतः। यज्मानदेवत्यों वै यूपंः। यजंमानमेव तेजंसा च ब्रह्मवर्चसेनं च समर्धयतः। किङ् स्विंदासीत्पूर्विचित्तिरित्र द्यौर्वे वृष्टिः पूर्विचित्तिः॥२१॥

दिवंमेव वृष्टिमवंरुन्थे। किङ्स्विंदासीद्बृहद्वय् इत्यांह। अश्वो वै बृहद्वयः। अश्वंमेवावंरुन्थे। किङ्स्विंदासीत्पिशङ्गिलेत्यांह। रात्रिवै पिशङ्गिला। रात्रिमेवावंरुन्थे। किङ्स्विंदासीत्पिलिप्पिलेत्य श्रीर्वै पिलिप्पिला। अन्नाद्यमेवावंरुन्धे॥२२॥

कः स्विदेकाकी चंर्तीत्यांह। असौ वा आंदित्य एंकाकी चंरति। तेजं एवावंरुन्थे। क उंस्विज्ञायते पुनिरत्यांह। चन्द्रमा वै जायते पुनः। आयुरेवावंरुन्थे। किः स्विद्धिमस्यं भेषजमित्यांह। अग्निर्वे हिमस्यं भेषजम्। ब्रह्मवर्च्समेवावंरुन्थे। किः स्विदावपंनं महदित्यांह॥२३॥

अयं वै लोक आवर्पनम्महत्। अस्मिन्नेव लोके प्रतितिष्ठति। पृच्छामि त्वा पर्मन्तं पृथिव्या इत्याह। वेदिवे परोऽन्तः पृथिव्याः। वेदिमेवावंरुन्थे। पृच्छामि त्वा भुवंनस्य नाभिमित्याह। यज्ञो वै भुवंनस्य नाभिः। यज्ञमेवावंरुन्थे। पृच्छामि त्वा वृष्णो अश्वंस्य रेत इत्याह। सोमो वै वृष्णो अश्वंस्य रेतंः। सोमपीथमेवावंरुन्थे। पृच्छामि वाचः पर्मं व्योमत्याह। ब्रह्म वै वाचः पर्मं व्योम। ब्रह्मवर्चसमेवावंरुन्थे॥२४॥

होतां भवति वै वृष्टिंः पूर्वचित्तिरुन्नाद्यंमेवावंरुन्थे मुहदित्यांहु सोमो वै वृष्णो अश्वंस्य रेतंश्चत्वारिं

अप् वा एतस्मौत्राणाः ऋोमन्ति। यौंऽश्वमेधेन् यजंते। प्राणाय स्वाहाँ व्यानाय स्वाहेतिं संज्ञप्यमान् आहुंतीर्जुहोति। प्राणानेवास्मिन्दधाति। नास्मौत्राणा अपंक्रामन्ति। अवन्तीः स्थावन्तीस्त्वाऽवन्तु। प्रियन्त्वाँ प्रियाणाम्। वर्षिष्ठमाप्यांनाम्। निधीनान्त्वां निधिपति हवामहे वसो मुमेत्याह। अपैवास्मै तद्भुवते॥२५॥

अथों धुवन्त्येवैनम्। अथो न्यंवास्मैं ह्रुवते। त्रिः परियन्ति। त्रयं इमे लोकाः। एभ्य एवैनं लोकेभ्यों धुवते। त्रिः पुनः परियन्ति। षद्धम्पंद्यन्ते। षड्वा ऋतवंः। ऋतुभिरेवैनंभ्धुवते। अप वा एतेभ्यः प्राणाः क्रांमन्ति॥२६॥

ये यज्ञे ध्वंनन्त्न्वतें। न्वकृत्वः परियन्ति। नव् वै पुरुषे प्राणाः। प्राणान्वात्मन्दंधते। नैभ्यः प्राणा अपंक्रामन्ति। अम्बे अम्बाल्यम्बिक इति पत्नीमुदानयित। अह्वंतैवैनाम्। सुभंगे काम्पीलवासिनीत्यांह। तपं पृवैनामुपंनयित। सुवर्गे लोके सम्प्रोर्ण्वांथामित्यांह॥२७॥

सुवर्गमेवैनां लोकं गंमयति। आऽहमंजानि गर्भधमा त्वमंजाऽसि गर्भधमित्यांह। प्रजा वै पृशवो गर्भः। प्रजामेव पृश्नात्मन्धंत्ते। देवा वा अश्वमेधे पर्वमाने। सुवर्गं लोकं न प्राजानन्। तमश्वः प्राजानात्। यत्सूचीभिरसिप्थान्कल्पयंन्ति। सुवर्गस्यं लोकस्य प्रज्ञांत्ये। गायत्री त्रिष्टुङ्गगतीत्यांह॥२८॥

यथायजुरेवैतत्। त्रय्यः सूच्यों भवन्ति। अयस्मय्यों रज्जता हरिण्यः। अस्य वै लोकस्यं रूपमयस्मय्यः। अन्तरिक्षस्य रज्जताः। दिवो हरिण्यः। दिशो वा अयस्मय्यः। अवान्त्रदिशा रज्जताः। ऊर्ध्वा हरिण्यः। दिशं एवास्मै कल्पयति। कस्त्वौ

छाति कस्त्वा विशास्तीत्याहाहि ५ सायै॥ २९॥

ह्रुवृते ऋामुन्त्यूण्वा्थामित्यांह जगुतीत्यांह कल्पयुत्येकं च॥६॥————[६]

अप् वा एतस्माच्छ्री राष्ट्रङ्कांमिति। योंऽश्वमेधेन् यजंते। ऊर्ध्वामेनामुच्छ्रंयतादित्यांह। श्रीर्वे राष्ट्रमंश्वमेधः। श्रियंमेवास्मे राष्ट्रमूर्ध्वमुच्छ्रंयित। वेणुभारिङ्गराविवेत्यांह। राष्ट्रं वै भारः। राष्ट्रमेवास्मे पर्यूहिति। अथास्या मध्यंमेधतामित्यांह। श्रीर्वे राष्ट्रस्य मध्यम्॥३०॥

श्रियंमेवावंरुन्थे। शीते वाते पुनन्निवेत्यांह। क्षेमो वै राष्ट्रस्यं शीतो वातः। क्षेमंमेवावंरुन्थे। यद्धंरिणी यव्मत्तीत्यांह। विड्वे हंरिणी। राष्ट्रं यवः। विशं चैवास्मै राष्ट्रं चं स्मीची दधाति। न पुष्टं पृशु मन्यत् इत्यांह। तस्माद्राजां पृशून्न पुष्यंति॥३१॥

शूद्रा यदर्यजारा न पोषांय धनायतीत्यांह। तस्माँद्वेशीपुत्रन्नाभिषिश्चन्ते। इयं यका शंकुन्तिकेत्यांह। विड्वे शंकुन्तिका। राष्ट्रमश्वमेधः। विशं चैवास्में राष्ट्रं चं समीचीं दधाति। आहलमिति सर्पतीत्यांह। तस्माँद्राष्ट्राय विशं सर्पन्ति। आहंतङ्गभे पस् इत्यांह। विड्वे गभंः॥३२॥

राष्ट्रं पसंः। राष्ट्रमेव विश्याहंन्ति। तस्मौद्राष्ट्रं विश्ं घातुंकम्। माता चं ते पिता चं त इत्यांह। इयं वै माता। असौ पिता। आभ्यामेवेनं परिंददाति। अग्रं वृक्षस्यं रोहत् इत्यांह। श्रीवैं वृक्षस्याग्रम्। श्रियमेवावं रुन्धे॥३३॥ प्रसुंलामीति ते पिता गुभे मुष्टिमंत श्सयदित्यांह। विश्वे गर्भः। राष्ट्रम्मुष्टिः। राष्ट्रमेव विश्याहंन्ति। तस्माद्राष्ट्रं विश्वं घातुंकम्। अप् वा एतेभ्यः प्राणाः क्रांमन्ति। ये युज्ञेऽपूंतं वदंन्ति। दिधिकाळणों अकारिष्मिति सुरिभमतीमृचं वदन्ति। प्राणा वै सुर्भयः। प्राणानेवात्मन्दंधते। नैभ्यः प्राणा अपंक्रामन्ति। आपो हि ष्ठा मंयोभुव इत्यद्भिर्मार्ज्यन्ते। आपो वै सर्वा देवताः। देवतांभिरेवात्मानं पवयन्ते॥३४॥

राष्ट्रस्य मध्यं पुष्यंति गभौ रुन्धे दधते चत्वारि च॥७॥————[७]

प्रजापंतिः प्रजाः सृष्ट्वा प्रेणाऽनु प्राविंशत्। ताभ्यः पुनः सम्भवितुन्नाशंक्रोत्। सौंऽब्रवीत्। ऋध्रवदित्सः। यो मेतः पुनः सम्भरदितिं। तन्देवा अश्वमेधेनैव सम्भरन्। ततो वै त आध्रवन्। योंऽश्वमेधेन् यजंते। प्रजापंतिमेव सम्भरत्युध्रोतिं। पुरुष्मालंभते॥३५॥

वैराजो वै पुर्रुषः। विराजमेवार्लभते। अथो अत्रं वै विराट्। अन्नमेवार्वरुभे। अश्वमार्लभते। प्राजापत्यो वा अर्थः। प्रजापतिमेवार्लभते। अथो श्रीर्वा एकंशफम्। श्रियंमेवार्वरुभे। गामार्लभते॥३६॥

युज्ञो वै गौः। युज्ञमेवार्लभते। अथो अन्नं वै गौः। अन्नमेवार्वरुन्धे। अजावी आर्लभते भूम्ने। अथो पृष्टिर्वे भूमा। पृष्टिमेवार्वरुन्धे। पर्यमिकृतं पुरुषश्चारुण्याङ्श्चोत्सृजन्त्यहिर्स्सायै। उभौ वा एतौ पृशू आर्लभ्येते। यश्चांवमो यश्चं पर्मः। तें उस्योभये यज्ञे बृद्धाः। अभीष्टां अभिप्रीताः। अभिजिता अभिहुंता भवन्ति। नैनंन्द्रङ्कावंः पृशवो यज्ञे बृद्धाः। अभीष्टां अभिप्रीताः। अभिजिता अभिहुंता हिश्सन्ति। यों ऽश्वमेधेन् यजेते। य उं चैनमेवं वेदं॥३७॥

प्रथमेन वा एष स्तोमेन राध्वा। चतुष्टोमेन कृतेनायांनामुत्तरेहन्ं। एकविश्शे प्रतिष्ठायां प्रति तिष्ठति। एकविश्शात्प्रतिष्ठायां ऋतून्न्वारोहित। ऋतवो वै पृष्ठानिं। ऋतवेः संवत्सरः। ऋतुष्वेव संवत्सरे प्रतिष्ठायं। देवतां अभ्यारोहित। शक्करयः पृष्ठम्भवन्त्यन्यदंन्यच्छन्दंः। अन्यैंऽन्ये वा एते पृशव आलेभ्यन्ते॥३८॥

उतेवं ग्राम्याः। उतेवांरण्याः। अहंरेव रूपेण समर्धयति। अथो अहं एवैष बृलिर्ह्वियते। तदांहुः। अपंशवो वा एते। यदंजावयंश्चार्ण्याश्चं। एते वै सर्वे पृशवंः। यद्गव्या इतिं। गृव्यान्पृशूनुंत्तमेऽहन्नालंभते॥३९॥

तेनैवोभयाँन्पशूनवंरुन्धे। प्राजापत्या भंवन्ति। अनंभिजितस्याभिजिंत्यै।
सौरीर्नवं श्वेता वृशा अनूबन्ध्यां भवन्ति। अन्तृत एव
ब्रह्मवर्चुसमवंरुन्धे। सोमांय स्वराज्ञेंऽनोवाहावंनुङ्गाहावितिं
द्वन्द्विनः पृशूनालंभते। अहोरात्राणांमभिजिंत्यै। पृशुभिवां
एष व्यृध्यते। यौंऽश्वमेधेन यजंते। छुगुलङ्कल्माषंङ्किकिदीविं
विदीगयमितिं त्वाष्ट्रान्पशूना लंभते। पृशुभिरेवात्मानु

समर्धयित। ऋतुभिवां एष व्यृध्यते। योंऽश्वम्धेन् यजंते। पिशङ्गास्त्रयों वास्-ता इत्यृंतुप्शूनालंभते। ऋतुभिरेवात्मान् र समर्धयित। आ वा एष पृशुभ्यों वृश्यते। योंऽश्वम्धेन् यजंते। पर्यग्निकृता उत्सृंजन्त्यनांव्रस्काय॥४०॥

लुभ्युन्ते लुभुते त्वाष्ट्रान्युशूनालंभतेऽष्टौ चं॥९॥—————[९]

प्रजापंतिरकामयत महानंत्रादः स्यामिति। स एतावंश्वमेधे मंहिमानांवपश्यत्। तावंगृह्णीत। ततो वै स महानंत्रादोऽभवत्। यः कामयेत महानंत्रादः स्यामिति। स एतावंश्वमेधे मंहिमानौं गृह्णीत। महानेवात्रादो भंवति। यज्ञमानदेवत्यां वै वपा। राजां महिमा। यद्यपाम्मंहिम्नोभ्यतः परियजंति। यजंमानमेव राज्येनोभ्यतः परिगृह्णाति। पुरस्तांत्स्वाहाकारा वा अन्ये देवाः। उपरिष्टात्स्वाहाकारा अन्ये। ते वा एतेऽश्वं एव मेध्यं उभयेऽवंरुध्यन्ते। यद्यपाम्मंहिम्नोभ्यतः परियजंति। तानेवोभयांन्त्रीणाति॥४१॥

पुरियजंति पद्गं॥१०॥-----[१०]

वैश्वदेवो वा अश्वः। तं यत्प्रांजापृत्यं कुर्यात्। या देवता अपिभागाः। ता भागधेयेन व्यर्धयेत्। देवताभ्यः समदेन्दध्यात्। स्तेगान्दङ्ष्ट्रांभ्याम्मण्डूकां जम्भ्यंभिरिति। आज्यंमवदानं कृत्वा प्रतिस्ङ्ख्यायमाहुतीर्ज्ञहोति। या एव देवता अपिभागाः। ता भागधेयेन समर्धयति। न देवतांभ्यः समदेन्दधाति॥४२॥

चतुंर्दशैतानंनुवाकाञ्चंहोत्यनंन्तिरत्यै। प्रयासाय स्वाहेतिं पश्चदशम्। पश्चंदश् वा अर्धमासस्य रात्रयः। अर्धमासशः संवत्सर आप्यते। देवासुराः संयंत्ता आसन्। तेंंऽब्रुवन्नग्नयः स्विष्टकृतः। अर्श्वस्य मेध्यंस्य वयमुंद्धारमुद्धंरामहै। अथैतान्भि भंवामेतिं। ते लोहिंतमुदंहरन्त। ततों देवा अभंवन्॥४३॥

पराऽसुंराः। यत्स्विष्टकृद्धो लोहितं जुहोति भ्रातृंव्याभिभूत्यै। भवंत्यात्मनां। परांऽस्य भ्रातृंव्यो भवति। गोमृग्कुण्ठेनं प्रथमामाहुंतिं जुहोति। पृशवो वै गोमृगः। रुद्रोंऽग्निः स्विष्टकृत्। रुद्रादेव पृशून्नर्तदेधाति। अथो यत्रैषाऽऽहुंतिर्हूयतें। न तत्रं रुद्रः पृशून्भिमंन्यते॥४४॥

अश्वश्रफेनं द्वितीयामाहंतिं जुहोति। पृशवो वा एकंशफम्। रुद्रौंऽग्निः स्विष्टकृत्। रुद्रादेव पृश्नन्तर्दधाति। अथो यत्रैषाऽऽहंतिरहृयतें। न तत्रं रुद्रः पृश्ननिमंन्यते। अयस्मयेन कमण्डलंना तृतीयांम्। आहंतिं जुहोत्यायास्यों वे प्रजाः। रुद्रौंऽग्निः स्विष्टकृत्। रुद्रादेव प्रजा अन्तर्दधाति। अथो यत्रैषाऽऽहंतिरहृयतें। न तत्रं रुद्रः प्रजा अभिमंन्यते॥४५॥ व्यात्यमंवम्मयते प्रजा अन्तर्दधाति हे वं ॥११॥———[११]

अश्वंस्य वा आलंब्यस्य मेध् उदंक्रामत्। तदंश्वस्तोमीयंमभवत्। यदंश्वस्तोमीयं जुहोतिं। समेधमेवैनुमालंभते। आज्येंन जुहोति। मेधो वा आज्यम्। मेधौंऽश्वस्तोमीयम्। मेधेनैवास्मिन्मेधन्दधाति। षद्भिर्श्शतं जुहोति। षद्भिर्श्शदक्षरा बृहती॥४६॥

बार्ह्ताः पृशवंः। सा पंशूनाम्मात्रां। पृशूनेव मात्रंया समर्धयति। तायद्भूयंसीर्वा कनीयसीर्वा जुहुयात्। पृशून्मात्रंया व्यर्धयेत्। षद्भिर्शतं जुहोति। षद्भिर्श्शदक्षरा बृह्ती। बार्ह्ताः पृशवंः। सा पंशूनाम्मात्रां। पृशूनेव मात्रंया समर्धयति॥४७॥

अश्वस्तोमीय हुत्वा द्विपदां जुहोति। द्विपाद्वै पुर्रुषो द्विप्रतिष्ठः। तदेनं प्रतिष्ठया समर्धयित। तदांहुः। अश्वस्तोमीयं पूर्व होत्व्याँ (३) न्द्विपदाँ (३) इतिं। अश्वो वा अश्वस्तोमीयम्। पुरुषो द्विपदाः। अश्वस्तोमीय हुत्वा द्विपदां जुहोति। तस्मांद्विपाचतुंष्पादमत्ति। अथौं द्विपद्येव चतुंष्पदः प्रतिष्ठायपति। द्विपदां हुत्वा। नान्यामुत्तंरामाहंतिं जुहुयात्। यदन्यामुत्तंरामाहंतिं जुहुयात्। प्रप्रतिष्ठायां जुहोति प्रतिष्ठित्यै॥४८॥

बृहत्यंर्धयति स्थापयति पश्चं च॥१२॥=

.| १२

प्रजापंतिरश्वम्धमंसृजत। सौंऽस्मात्सृष्टोऽपांकामत्। तं यंज्ञकृतुभिरन्वैंच्छत्। तं यंज्ञकृतुभिर्नान्वंविन्दत्। तमिष्टिंभिरन्वैंच्छत्। तमिष्टिंभिरन्वंविन्दत्। तदिष्टींनामिष्टित्वम्। यत्संवत्स्रमिष्टिंभिर्यजंते। अश्वंमेव तदन्विंच्छति। सावित्रियों

भवन्ति॥४९॥

इयं वै संविता। यो वा अस्यान्नश्यंति यो निलयंते। अस्यां वाव तं विन्दन्ति। न वा इमाङ्कश्चनेत्यांहुः। तिर्यङ्गोध्वित्यंतुमर्ह्तीति। यत्सांवित्रियो भवंन्ति। स्वितृप्रंसूत एवैनंमिच्छति। ईश्वरो वा अश्वः प्रमुंक्तः पर्गं परावतङ्गन्तौः। यत्सायन्धृतींर्जुहोति। अश्वंस्यैव यत्ये धृत्यै॥५०॥ यत्प्रातिरिष्टेंभियंजंते। अश्वंमेव तदन्विंच्छति। यत्सायन्धृतींर्जुहोतिं। अश्वंस्यैव यत्ये धृत्यैं। तस्मांत्सायं प्रजाः क्षेम्यां भवन्ति। यत्प्रातिरिष्टेंभियंजंते। अश्वंमेव तदन्विंच्छति। तस्मादिवां नष्टेष एति। यत्प्रातिरिष्टेंभियंजंते सायन्धृतींर्जुहोतिं। अहोरात्राभ्यांमेवैन्मन्विंच्छति। अथों अहोरात्राभ्यांमेवासमैं योगक्षेमङ्कंल्पयति॥५१॥

भवन्ति धृत्यां एनमन्विंच्छ्त्येकं च॥१३॥-----[१३]

अप वा एतस्माच्छी राष्ट्रङ्गांमिति। यों ऽश्वमेधेन यजंते। ब्राह्मणो वीणागाथिनौ गायतः। श्रिया वा एतद्रूपम्। यद्वीणां। श्रियमेवास्मिन्तद्धंत्तः। यदा खलु वै पुरुषः श्रियंमश्जुते। वीणां उस्मै वाद्यते। तदांहुः। यदुमौ ब्राह्मणो गायंताम्॥५२॥ प्रभ्रश्रुंकास्माच्छीः स्यात्। न वै ब्राह्मणे श्री रंमत् इति। ब्राह्मणो उन्यो गायंत्। राजन्यों उन्यः। ब्रह्म वै ब्राह्मणः। क्षत्रश्र राजन्यः। तथां हास्य ब्रह्मणा च क्षत्रेणं चोभयतः श्रीः परिगृहीता भवति। तदांहुः। यदुमौ दिवा गायंताम्।

अपौस्माद्राष्ट्रङ्कामित्॥५३॥

न वै ब्रांह्मणे राष्ट्र रंमत् इति। यदा खलु वै राजां कामयंते। अथं ब्राह्मणञ्जिनाति। दिवाँ ब्राह्मणो गांयेत्। नक्त रं राजन्यः। ब्रह्मणो वै रूपमहंः। क्ष्रत्रस्य रात्रिः। तथां हास्य ब्रह्मणा च क्ष्रत्रेणं चोभ्यतो राष्ट्रं परिगृहीतम्भवति। इत्यंददा इत्यंयजथा इत्यंपच इति ब्राह्मणो गायैत्। इष्टापूर्तं वै ब्राह्मणस्यं॥५४॥

इष्टापूर्तेनैवेन् स् समर्धयित। इत्यंजिना इत्यंयुध्यथा इत्यम् सङ्गाममंहिन्निति राजन्यः। युद्धं वे राजन्यंस्य। युद्धेनैवेन् स् समर्धयित। अक्नुप्ता वा एतस्यत्व इत्याहुः। योऽश्वमेधेन् यजंत इति। तिस्रोऽन्यो गायंति तिस्रोऽन्यः। षद्धम्पंद्यन्ते। षड्वा ऋतवः। ऋतूनेवास्मे कल्पयतः। ताभ्याः स् स्थ्स्थायाम्। अनोयुक्ते चं शते चं ददाति। शतायुः पुरुषः शतेन्द्रियः। आयुष्येवेन्द्रिये प्रतितिष्ठति॥५५॥

गार्येताङ्कामेद्राह्मणस्यं कल्पयतश्रुत्वारिं च॥१४॥______[१४]

सर्वेषु वा एषु लोकेषुं मृत्यवोऽन्वायंत्ताः। तेभ्यो यदाहुंतीर्न जुंहुयात्। लोकेलोक एनं मृत्युर्विन्देत्। मृत्यवे स्वाहां मृत्यवे स्वाहेत्यंभिपूर्वमाहुंतीर्जुहोति। लोकाश्लोकादेव मृत्युमवयजते। नैनं लोकेलोक मृत्युर्विन्दित। यदमुष्मे स्वाहाऽमुष्मे स्वाहेति जुह्वंत्सश्रक्षीत। बहुं मृत्युम्मित्रं कुर्वीत। मृत्यवे स्वाहेत्येकंस्मा एवैकां जुहुयात्। एको वा

अमुष्मिं ह्याँके मृत्युः॥५६॥

अशन्या मृत्युरेव। तमेवामुष्मिं ह्यों के ऽवंयजते। भ्रूणहृत्याये स्वाहेत्यं वभृथ आहुं तिं जुहोति। भ्रूणहृत्यामेवावं यजते। तदांहुः। यद्भूणहृत्या पात्र्याऽथं। कस्मां द्यज्ञेऽपिं क्रियत् इतिं। अमृत्युर्वा अन्यो भ्रूणहृत्याया इत्यांहुः। भ्रूणहृत्या वाव मृत्युरितिं। यद्भूणहृत्याये स्वाहेत्यं वभृथ आहुं तिं जुहोतिं॥५७॥

मृत्युमेवाहुंत्या तर्पयित्वा पंरिपाणं कृत्वा। भ्रूण्घ्ने भेषजं करोति। एता ह व मृण्डिभ औदन्यवः। भ्रूण्हृत्याये प्रायंश्चित्तिं विदां चंकार। यो हास्यापिं प्रजायां ब्राह्मण हिन्ते। सर्वस्मै तस्मै भेषजं करोति। जुम्बकाय स्वाहेत्यंवभृथ उत्तमामाहुंतिं जुहोति। वर्रुणो व जुम्बकः। अन्तत एव वर्रुणमवंयजते। खुलुतेर्विक्तिधस्यं शुक्तस्यं पिङ्गाक्षस्यं मूर्धं जुहोति। एतद्वै वर्रुणस्य रूपम्। रूपेणैव वर्रुणमवंयजते॥५८॥

लोके मृत्युर्जुहोतिं मूर्धं जुंहोति ह्रे चं॥१५॥-----[१५]

वारुणो वा अर्थः। तन्देवतंया व्यर्धयति। यत्प्रांजापृत्यं करोति। नमो राज्ञे नमो वर्रुणायेत्याह। वारुणो वा अर्थः। स्वयैवैनं देवतंया समर्धयति। नमोऽश्वांय नमः प्रजापंतय इत्याह। प्राजापत्यो वा अर्थः। स्वयैवैनं देवतंया समर्धयति।

नमोऽधिंपतय इत्यांह॥५९॥

धर्मो वा अधिपतिः। धर्ममेवावंरुन्थे। अधिपतिर्स्यधिपतिम्मा कुर्वधिपतिर्हं प्रजानां भूयासमित्यांह। अधिपतिमेवेन रे समानानां करोति। मान्धेंहि मियं धेहीत्यांह। आशिषंमेवेतामाशांस्त उपाकृताय स्वाहेत्युपाकृते जुहोति। आलेब्याय स्वाहेति नियुंक्ते जुहोति। हुताय स्वाहेतिं हुते जुंहोति। एषां लोकानांमभिजिंत्ये॥६०॥

प्र वा एष एभ्यो लोकेभ्यंश्च्यवते। यौंऽश्वमेधेन् यजंते। आग्नेयमैंन्द्राग्नमाश्चिनम्। तान्पशूलंभते प्रतिष्ठित्यै। यदांग्नेयो भवंति। अग्निः सर्वा देवताः। देवतां एवावंरुन्थे। ब्रह्म वा अग्निः। क्षुत्रमिन्द्रंः। यदैन्द्राग्नो भवंति॥६१॥

ब्रह्मक्षत्रे प्वावंरुन्थे। यदाँश्विनो भवंति। आशिषामवंरुद्धै। त्रयो भवन्ति। त्रयं इमे लोकाः। पृष्वंव लोकेषु प्रतितिष्ठति। अग्नयेऽ रहोमुचेऽष्टाकंपाल इति दशंहविष्मिष्टिं निर्वंपति। दशाँक्षरा विराट्। अत्रं विराट्। विराजैवान्नाद्यमवंरुन्थे। अग्नेर्मन्वे प्रथमस्य प्रचेतस् इतिं याज्यानुवाक्यां भवन्ति सर्वत्वायं॥६२॥

अधिपतय इत्यांहाभिजित्या ऐन्द्राको भवंति रुन्यु एकं चार्यद्याः [१६] यद्यश्वंमुप्तपंद्विन्देत्। आुभ्रेयमृष्टाकंपालुं निर्वपेत्। सौम्यश्चरुम्। सावित्रमृष्टाकंपालम्। यदांभ्रेयो भवंति। अग्निः सर्वा देवताः। देवतांभिरेवैनंम्भिषज्यति। यत्सौम्यो भवंति। सोमो वा ओषंधीनाः राजाः। याभ्यं एवैनं विन्दति॥६३॥

ताभिरेवैनंम्भिषज्यति। यत्सांवित्रो भवंति। स्वितृप्रंसूत पृवैनंम्भिषज्यति। पृताभिरेवैनं देवतांभिर्भिषज्यति। अगदो हैव भंवति। पौष्णश्चरुत्रिवंपेत्। यदिं श्लोणः स्यात्। पूषा वै श्लौण्यंस्य भिषक्। स पृवैनंम्भिषज्यति। अश्लोणो हैव भंवति॥६४॥

रौद्रश्चरुन्निर्विपत्। यदि मह्ती देवतांऽभिमन्येत। एत्द्देवत्यों वा अर्थः। स्वयैवैनं देवतंया भिषज्यति। अगदो हैव भंवति। वैश्वान्रं द्वादंशकपालं निर्विपन्मृगाख्रे यदि नागच्छैत्। इयं वा अग्निर्वैश्वान्रः। इयमेवैनंमुर्चिभ्यां परिरोधमानंयति। आहेव सुत्यमहंर्गच्छति। यद्यधीयात्॥६५॥

अग्नयेऽ रहोम्चेऽष्टाकंपालः। सौर्यं पर्यः। वायव्यं आज्यंभागः। यजंमानो वा अर्थः। अरहंसा वा एष गृंहीतः। यस्याश्वो मेधांय प्रोक्षितोऽध्येति। यद रहोम्चे निर्वपंति। अरहंस एव तेनं मुच्यते। यजंमानो वा अर्थः। रतंसा वा एष व्यृध्यते॥ ६६॥

यस्याश्वो मेधांय प्रोक्षितोऽध्येति। सौर्य रतः। यत्सौर्यं पयो भवंति। रतंसैवैन रसं समंध्यति। यजंमानो वा अश्वः।

गर्भैर्वा एष व्यृध्यते। यस्याश्वो मेधाय प्रोक्षितोऽध्येति। वायव्यां गर्भाः। यद्वांयव्यं आज्यंभागो भवंति। गर्भेरेवैन्॰ स समर्धयति। अथो यस्यैषाऽश्वंमेधे प्रायंश्चित्तिः क्रियतें। इष्ट्वा वसीयान्भवति॥६७॥

विन्दत्यश्लोणो हैव भंवत्यधीयादंध्यते गर्भेरेवैन् स समर्धयति द्वे चं॥१७॥———[१७]

तदांहुः। द्वादंश ब्रह्मौद्नान्त्स इस्थिते निर्वपत्। द्वाद्शिभविष्टिभियंजे यदिष्टिभियंजेत। उपनामुंक एनं यज्ञः स्यात्। पापीया रस्तु स्यात्। आप्तानि वा एतस्य छन्दा रसि। य ईजानः। तानि क एतावंदाशु पुनः प्रयंं जीतेति। सर्वा वै स इस्थिते यज्ञे वागांप्यते॥६८॥

साप्ता भेवति यातयाँम्नी। क्रूरीकृतेव हि भवत्यरुष्कृता। सा न पुनंः प्रयुज्येत्यांहुः। द्वादंशैव ब्रंह्मौद्नान्त्सङ्स्थिते निर्वपत्। प्रजापंतिर्वा ओद्नः। यज्ञः प्रजापंतिः। उपनामुंक एनं यज्ञो भेवति। न पापीयान्भवति। द्वादंश भवन्ति। द्वादंशमासाँः संवत्सरः। सुंवत्सर एव प्रतितिष्ठति॥६९॥

आप्यते संवत्सर एकं च॥१८॥———[१८]

एष वै विभूनीमं युज्ञः। सर्वर्ष हु वै तत्रं विभु भंवति। युत्रेतेनं युज्ञेन युज्ञेन्ते। एष वै प्रभूनीमं युज्ञः। सर्वर्ष हु वै तत्रं प्रभु भंवति। युत्रेतेनं युज्ञेन युज्ञेन्ते। एष वा ऊर्ज्ञस्वान्नामं युज्ञः। सर्वर्ष हु वै तत्रोर्ज्ञस्वद्भवति। युत्रेतेनं युज्ञेन युज्ञेन्ते। एष वै

पर्यस्वान्नामं युज्ञः॥७०॥

सर्वर्ष हु वै तत्र पर्यस्वद्भवति। यत्रैतेनं युज्ञेन् यर्जन्ते। एष वै विधृंतो नामं युज्ञः। सर्वर्ष हु वै तत्र विधृंतम्भवति। यत्रैतेनं युज्ञेन् यर्जन्ते। एष वै व्यावृंत्तो नामं युज्ञः। सर्वर्ष हु वै तत्र व्यावृंत्तम्भवति। यत्रैतेनं युज्ञेन् यर्जन्ते। एष वै प्रतिष्ठितो नामं युज्ञः। सर्वर्ष ह वै तत्र प्रतिष्ठितम्भवति॥७१॥

यत्रैतनं युज्ञेन यर्जन्ते। एष वै तेज्ञस्वी नामं युज्ञः। सर्वरं हु वै तत्रं तेज्ञस्वि भविति। यत्रैतनं युज्ञेन यर्जन्ते। एष वै ब्रंह्मवर्च्सी नामं युज्ञः। आ हु तत्रं ब्राह्मणो ब्रंह्मवर्च्सी जांयते। यत्रैतनं युज्ञेन यर्जन्ते। एष वा अतिब्याधी नामं युज्ञः। आ हु वै तत्रं राज्ञन्योंऽतिब्याधी जांयते। यत्रैतेनं युज्ञेन यर्जन्ते। एष वै दीर्घी नामं युज्ञः। दीर्घायुंषो हु वै तत्रं मनुष्यां भवन्ति। यत्रैतेनं युज्ञेन यर्जन्ते। एष वै क्रुप्तो नामं युज्ञः। कल्पंते हु वै तत्रं प्रजाभ्यों योगक्षेमः। यत्रैतेनं युज्ञेन यर्जन्ते॥७२॥

पर्यस्वान्नामं युज्ञः प्रतिष्ठितम्भवित् यत्रैतेनं युज्ञेन् यर्जन्ते षद्वं (एष वै विभूः प्रभूरूर्जस्वान्पर्यस्वान् विर्पृतो व्यावृत्तः प्रतिष्ठितस्तेजस्वी ब्रह्मवर्चस्यतिव्याधी दीर्घः क्रुप्तो द्वादंश ॥)॥१९॥——[१९]

तार्प्येणाश्वर् संज्ञंपयन्ति। युज्ञो वे तार्प्यम्। युज्ञेनेवैन्र् समर्प्ययन्ति। यामेन् साम्ना प्रस्तोताऽनूपंतिष्ठते। युम्लोकमेवेनंङ्गमयति। तार्प्ये चं कृत्यधीवासे चाश्वर् संज्ञंपयन्ति। पृतद्वै पंशूनार रूपम्। रूपेणैव पुशूनवंरुन्थे। हिर्ण्यक्शिपु भंवति। तेज्सोऽवंरुखै॥७३॥

रुक्मो भंवति। सुवर्गस्यं लोकस्यानुंख्यात्यै। अश्वो भवति। प्रजापंतेरास्यै। अस्य वै लोकस्यं रूपन्तार्प्यम्। अन्तरिक्षस्य कृत्यधीवासः। दिवो हिरण्यकशिपु। आदित्यस्यं रुक्मः। प्रजापंतेरश्वः। इममेव लोकन्तार्प्यणांत्रोति॥७४॥

अन्तरिक्षं कृत्यधीवासने। दिवर् हिरण्यकशिपुनां। आदित्यर रुक्मेणं। अश्वेनैव मेध्येन प्रजापंतेः सायुज्यर सलोकतांमाप्नोति। एतासामेव देवतांनार सायुज्यम्। सार्षितार् समानलोकतांमाप्नोति। योऽश्वमेधेन यजंते। य उं चैनमेवं वेदं॥७५॥

अवंरुध्या आप्नोत्यृष्टौ चं॥२०॥•

[२०]

आदित्याश्वाङ्गिरसश्च सुवर्गे लोकैंऽस्पर्धन्त। तेऽङ्गिरस आदित्येभ्यः। अमुमादित्यमश्वः श्वेतं भूतं दक्षिणामनयन्। तैंऽब्रुवन्। यन्नो नेष्ट। स वर्यो भूदितिं। तस्मादश्वः सवर्येत्याह्वंयन्ति। तस्माँ द्यञ्जे वरो दीयते। यत्प्रजापंतिरालुब्योऽश्वोः तस्मादश्वो नामं॥७६॥

यन्त्वयदरुरासींत्। तस्मादर्वा नामं। यत्मद्यो वाजांन्त्समजंयत्। तस्माद्वाजी नामं। यदसुराणां लोकानादत्त। तस्मादादित्यो नामं। अग्निर्वा अश्वमेधस्य योनिरायतंनम्। सूर्योऽग्नेर्योनिरायतंनम् यदंश्वमेधंऽग्नौ चित्यं उत्तरवेदिमुप्वपंति। योनिमन्तमेवेनंमायतंनव करोति॥७७॥ योनिमानायतेनवान्भवति। य एवं वेदे। प्राणापानौ वा एतौ देवानाम्। यदंर्काश्वमेधौ। प्राणापानावेवावंरुन्धे। ओजो बलं वा एतौ देवानाम्। यदंर्काश्वमेधौ। ओजो बलंमेवावंरुन्धे। अग्निर्वा अश्वमेधस्य योनिरायतेनम्। सूर्योग्नेर्योनिरायतेनम्। यदंश्वमेधैंऽग्नौ चित्यं उत्तरवेदिश्चिनोति। तावंर्काश्वमेधौ। अर्काश्वमेधावेवावंरुन्थे। अर्थो अर्काश्वमेधयोरेव प्रतितिष्ठति॥७८॥

नामं करोति सूर्योऽग्नेर्योनिरायतंनश्चत्वारिं च॥२१॥-----[२१]

प्रजापंतिं वै देवाः पितरम्। पृशुम्भूतम्मधायालंभन्त। तमालभ्योपांवसन्। प्रातर्यष्टांस्मह् इतिं। एकं वा एतद्देवानामहंः। यत्संवत्सरः। तस्मादश्वः पुरस्तांत्संवत्सर आलंभ्यते। यत्प्रजापंतिरालुब्धोऽश्वोऽभंवत्। तस्मादर्श्वः। यत्सद्यो मेधोऽभंवत्॥७९॥

तस्मदिश्वम्धः। वेदुकोऽश्वंमाशुम्भविति। य एवं वेदं। यद्वै तत्प्रजापंतिरालुब्योऽश्वोऽभवत्। तस्मादश्वः प्रजापंतेः पशूनामनुंरूपतमः। आऽस्यं पुत्रः प्रतिंरूपो जायते। य एवं वेदं। सर्वाणि भूतानिं सम्भृत्यालंभते। समेनन्देवास्तेजंसे ब्रह्मवर्चसायं भरन्ति। यौऽश्वमेधेन यजंते॥८०॥

य उं चैनमेवं वेदं। एतद्वै तद्देवा एतान्देवतांम्। पशुम्भूतम्मेधायालंभन्त। यज्ञमेव। यज्ञेनं यज्ञमंयजन्त देवाः। कामुप्रं यज्ञमंकुर्वत। तेऽमृतुत्वमंकामयन्त। तें ऽमृत्त्वमंगच्छन्। यों ऽश्वमे्धेन् यजंते। देवानांमेवायंनेनैति॥८१॥

प्राजापत्येनैव यज्ञेनं यजते काम्प्रेणं। अपुनर्मारमेव गच्छति। एतस्य वै रूपेणं पुरस्तांत्प्राजापत्यमृष्मं तूंपरं बंहुरूपमालंभते। सर्वेभ्यः कामेभ्यः। सर्वस्याप्त्यै। सर्वस्य जित्यै। सर्वमेव तेनाप्रोति। सर्वं जयति। योऽश्वमेधेन यजंते। य उं चैनमेवं वेदं॥८२॥

मेधोऽभंवद्यजंत एति वेदं॥२२॥।

[२२]

यो वा अर्श्वस्य मेध्यंस्य लोमंनी वेदे। अर्श्वस्यैव मेध्यंस्य लोमं लोमं जुहोति। अहोरात्रे वा अर्श्वस्य मेध्यंस्य लोमंनी। यत्सायं प्रांतर्जुहोतिं। अर्श्वस्यैव मेध्यंस्य लोमं लोमं जुहोति। एतदंनुकृति ह स्म वै पुरा। अर्श्वस्य मेध्यंस्य लोमं लोमं जुह्वति। यो वा अर्श्वस्य मेध्यंस्य पदे वेदे। अर्श्वस्यैव मेध्यंस्य पदेपंदे जुहोति। दुर्शपूर्णमासौ वा अर्श्वस्य मेध्यंस्य पदे॥८३॥

यद्दंशपूर्णमासौ यजंते। अश्वंस्यैव मेध्यंस्य प्देपंदे जुहोति। एतदंनुकृति ह स्म वै पुरा। अश्वंस्य मेध्यंस्य प्देपंदे जुह्नित। यो वा अश्वंस्य मेध्यंस्य विवर्तनं वेदं। अश्वंस्यैव मेध्यंस्य विवर्तनेविवर्तने जुहोति। असौ वा आंदित्योऽश्वंः। स आंहवनीयमागंच्छति। तद्विवर्तते। यदंग्निहोत्रं जुहोति। अश्वंस्यैव मेध्यंस्य विवर्तनेविवर्तने जुहोति। एतदंनुकृति ह

स्म वै पुरा। अश्वस्य मेध्यंस्य विवर्तनेविवर्तने जुह्नति॥८४॥
पदे अग्निहोत्रं जुहोति श्रीणं च॥२३॥———[२३]

प्रजापंतिस्तमंष्टादिशिभिः प्रजापंतिरकामयतोभावस्मै युअन्ति तेज्ञसाऽपंप्राणा अपुश्रीरूर्ध्वां प्रजापंतिः प्रेणाऽनुं प्रथमेनं प्रजापंतिरकामयत महान्वैश्वदेवो वा अश्वोऽश्वंस्य प्रजापंतिस्तं यंज्ञऋतुभिरपृश्रीब्रांह्मणौ सर्वेषु वारूणो यद्यश्वन्तदांहुरेष वै विभूस्तार्प्येणांदित्याः प्रजापंतिं पितरं यो वा अश्वंस्य मेध्यंस्य लोमंनी त्रयोविश्शितः॥२३॥ प्रजापंतिरस्माँ छोक उत्तरतः श्रियंमेव प्रजापंतिरकामयत महान्यत्प्रातः प्र वा एष एभ्यो लोकेभ्यः सर्वर्श हु वै तत्र पर्यः स्वद्य उं चैनमेवं वेदं चृत्वार्यशीतिः॥८४॥ प्रजापंतिरश्वमेधं जुंह्वति॥

1011 11/1/12 1 3/61/11

हरिः ओम्॥ ॥इति श्रीकृष्णयजुर्वेदीयतैत्तिरीयब्राह्मणे तृतीयाष्टके नवमः प्रपाठकः समाप्तः॥

॥तैत्तिरीय आरण्यकम्॥

॥प्रथमः प्रश्नः — अरुणप्रश्नः॥

ॐ भृद्रं कर्णिभिः शृणुयामं देवाः। भृद्रं पंश्येमाक्षिभिर्यजंत्राः। स्थिरेरङ्गैंस्तुष्टुवाः संस्तृनूभिः। व्यशेम देविहेतं यदायुः। स्वस्ति न इन्द्रों वृद्धश्रंवाः। स्वस्ति नंः पूषा विश्ववंदाः। स्वस्ति न्स्ताक्ष्यों अरिष्टनेमिः। स्वस्ति नो बृह्स्पतिर्दधातु॥ ॐ शान्तिः शान्तिः शान्तिः॥

भद्रं कर्णिभिः शृणुयामं देवाः। भद्रं पंश्येमाक्षभिर्यजंत्राः। स्थिरेरङ्गैं स्तुष्टुवा र संस्तृनूभिः। व्यशेम देविहेतं यदायुः। स्वस्ति न इन्द्रो वृद्धश्रंवाः। स्वस्ति नः पूषा विश्ववंदाः। स्वस्ति नस्ताक्ष्यों अरिष्टनेमिः। स्वस्ति नो बृह्स्पतिर्दधातु। आपंमापामुपः सर्वाः। अस्माद्स्मादितोऽमुतः॥१॥

अग्निर्वायुश्च सूर्यश्च। सह संश्चस्करिष्ट्या। वाय्वश्वां रिश्मिपतंयः। मरींच्यात्मानो अद्रुंहः। देवीर्भुवनसूर्वरीः। पुत्रवत्वायं मे सुत। महानाम्नीर्महामानाः। महुसो महसः स्वः। देवीः पंर्जन्यसूर्वरीः। पुत्रवत्वायं मे सुत॥२॥

अपार्श्यंष्णिम्पा रक्षंः। अपार्श्यंष्णिम्पारघम्। अपाँघ्रामपं चावर्तिम्। अपंदेवीरितो हित। वर्ज्यं देवीरजीता इश्च। भुवंनं देवसूवंरीः। आदित्यानदितिं देवीम्। योनिनोर्ध्वमुदीषंत। शिवा नः शन्तंमा भवन्तु। दिव्या आप ओर्षथयः। सुमृडीका सरंस्वति। मा ते व्योम सन्दर्शि॥३॥

[28]

स्मृतिः प्रत्यक्षंमैतिह्यम्। अनुमानश्चतुष्ट्यम्। एतैरादित्य-मण्डलम्। सर्वैरेव विधास्यते। सूर्यो मरीचिमादेत्ते। सर्वस्माद्भवनाद्धि। तस्याः पाकविशेषेण। स्मृतं कालविशेषंणम्। नदीव प्रभवात्काचित्। अक्षय्यातस्यन्दते यथा॥४॥

तां नद्योऽभि संमायन्ति। सो्रुः सतीं न निवंति। एवं नानासंमुत्थानाः। कालाः संवत्सर् श्रिताः। अणुशश्च महश्श्व। सर्वे समवयत्रितम्। सतैः सर्वेः संमाविष्टः। ऊरुः संत्र निवर्तते। अधिसंवत्सरं विद्यात्। तदेवं लक्षणे॥५॥

अणुभिश्च मंहद्भिश्च। समार्रूढः प्रदृश्यंते। संवत्सरः प्रत्यक्षेण। नाधिसंत्वः प्रदृश्यंते। पुटरों विक्लिधः पिङ्गः। पृतद्वंरुणलक्षंणम्। यत्रैतंदुपृदृश्यंते। सहस्रं तत्र नीयंते। एकः हि शिरो नाना मुखे। कृत्स्नं तंदतुलक्षंणम्॥६॥

उभयतः सप्तैन्द्रियाणि। जिल्पितं त्वेव दिह्यंते। शुक्लकृष्णे संवंत्सर्स्य। दक्षिणवामयोः पार्श्वयोः। तस्यैषा भवंति। शुक्रं ते अन्यद्यंज्तं ते अन्यत्। विषुंरूपे अहंनी द्यौरिवासि। विश्वा हि माया अवंसि स्वधावः। भुद्रा ते पूषित्रह रातिरस्तिवितं।

नात्र भुवंनम्। न पूषा। न पृशवंः। नऽऽदित्यः संवत्सर एव प्रत्यक्षेण प्रियतंमं विद्यात्। एतद्वै संवत्सरस्य प्रियतंम श्र रूपम्। योऽस्य महानर्थ उत्पत्स्यमांनो भ्वति। इदं पुण्यं कुरुष्वेति। तमाहरंणं दद्यात्॥७॥

[२५]

साकुआना रे सप्तथंमाहुरेक जम्। षडुं द्यमा ऋषंयो देवजा इति। तेषांमिष्टानि विहितानि धामुशः। स्थात्रे रेजन्ते विकृतानि रूपृशः। को नुं मर्या अमिथितः। सखा सखांयमब्रवीत्। जहांको अस्मदींषते। यस्तित्याजे सिख्विवद् सखांयम्। न तस्य वाच्यपि भागो अस्ति। यदी रे शृणोत्यलक रे शृणोति॥८॥

न हि प्रवेदं सुकृतस्य पन्थामिति। ऋतुर्ऋतुना नुद्यमानः। विनंनादाभिधावः। षष्टिश्च त्रिश्शंका वृत्गाः। शुक्लकृष्णौ च षाष्टिंकौ। साराग्वस्नेर्ज्ररदेक्षः। वस्नतो वसुंभिः सह। संवृत्सरस्यं सिवृतुः। प्रैष्कृत्प्रंथमः स्मृतः। अमूनादयंतेत्यन्यान्॥९॥

अमू इश्चे परिरक्षंतः। एता वाचः प्रयुज्यन्ते। यत्रैतंदुप्दश्यंते। एतदेव विजानीयात्। प्रमाणं काल्पंयये। विशेषणं तुं वक्ष्यामः। ऋतूनां तिन्नेबोधंत। शुक्लवासां रुद्रगणः। ग्रीष्मेणंऽऽवर्तते संह। निजहंन पृथिवी स्वाम्॥१०॥ ज्योतिषांऽप्रतिख्येनं सः। विश्वरूपाणि वासा स्सि। आदित्यानां निबोधंत। संवत्सरीणं कर्मफलम्। वर्षाभिदंदता सह। अदुःखो दुःखचंक्षुरिव। तद्मांऽऽपीत इव दश्यंते। शीतेनां व्यथंयन्त्रिव। रुरुदंक्ष इव दश्यंते। ह्रादयतें ज्वलंतश्चेव। शाम्यतंश्चास्य चक्षुंषी। या वै प्रजा भ्रंड्श्यन्ते। संवत्सरात्ता भ्रंड्श्यन्ते। याः प्रतितिष्ठन्ति। संवत्सरे ताः प्रतितिष्ठन्ति। वर्षाभ्यं इत्युर्थः॥११॥

___[२६]

अक्षिदुःखोत्थितस्यैव। विप्रसंत्रे क्नीनिके। आङ्के चार्नणं नास्ति। ऋभूणां तित्रबोधंत। कनकाभानि वासार्श्स। अहतांनि निबोधत। अन्नमश्रीतं मृज्मीत। अहं वो जीवनप्रंदः। एता वाचः प्रंयुज्यन्ते। श्राचंत्रोपदृश्यंते॥१२॥ अभिधून्वन्तोऽभिष्नंन्त इव। वातवंन्तो मुरुद्गंणाः। अमृतो जेतुमिषुमुंखिम्व। सन्नद्धाः सह दंदशे ह। अपध्वस्तैवस्तिवंणिरिव। विशिखासंः कप्रदिनः। अनुद्धस्य योत्स्यंमान्स्य। कुद्धस्येव लोहिनी। हेमतश्चक्षंषी विद्यात्। अक्ष्णयौः क्षिपणोरिव॥१३॥

दुर्भिक्षं देवंलोकेषु। मनूनांमुद्कं गृंहे। पृता वाचः प्रंवद्न्तीः। वैद्युतों यान्ति शैशिंरीः। ता अग्निः पर्वमना अन्वैक्षत। इह जीविकामपंरिपश्यन्। तस्यैषा भवंति। इहेहंवः स्वत्पसः। मर्रतः सूर्यत्वचः। शर्मं सप्रथा आवृंणे॥१४॥

_[20]

अतितामाणि वासार्सा। अष्टिवंजिशतिष्ठें च। विश्वे देवा विप्रहर्न्ति। अग्निजिह्वा असश्चेत। नैव देवों न मृर्त्यः। न राजा वंरुणो विभुः। नाग्निर्नेन्द्रो न पंवमानः। मातृक्कंचन् विद्यंते। दिव्यस्यैका धनुरार्तिः। पृथिव्यामपरा श्रिता॥१५॥

तस्येन्द्रो विम्नेरूपेण। धनुर्ज्यामिछ्नित्स्वयम्। तिदेन्द्र्धनुं-रित्युज्यम्। अभवणेषु चक्षेते। एतदेव शंयोर्बार्हंस्पत्यस्य। एतद्रुंद्रस्य धनुः। रुद्रस्यं त्वेव धनुंरार्हिः। शिर् उत्पिपेष। स प्रवृग्योऽभवत्। तस्माद्यः सप्रवृग्येणं युज्ञेन यजेते। रुद्रस्य स शिरः प्रतिद्धाति। नैन र् रुद्र आरुको भवति। य एवं वेदं॥१६॥

[२८]

अत्यूर्ध्वाक्षोऽतिंरश्चात्। शिशिंरः प्रदृश्यंते। नैव रूपं न वासार्सा। न चक्षुः प्रतिदृश्यंते। अन्योन्यं तु नं हिङ्स्रातः। सृतस्तंद्देवलक्षंणम्। लोहितोऽक्ष्णि शांरशीर्ष्णिः। सूर्यस्योदयनं प्रति। त्वं करोषि न्यञ्जलिकाम्। त्वं करोषि निजानुंकाम्॥१७॥

निजानुका में न्यञ्चलिका। अमी वाचमुपासंतामिति। तस्मै सर्व ऋतवों नम्न्ते। मर्यादाकरत्वात्प्रंपुरोधाम्। ब्राह्मणं आप्नोति। य एवं वेद। स खलु संवत्सर एतैः सेनानीभिः स्ह। इन्द्राय सर्वान्कामानिभेवहति। स द्रप्सः। तस्यैषा भवंति॥१८॥

अवंद्रप्सो अर्शुमतींमतिष्ठत्। इयानः कृष्णो दशिनिः सहस्रैः। आवृतिमिन्द्रः शच्या धर्मन्तम्। उप्स्रुहि तं नृमणामर्थद्रामिति। एतयैवेन्द्रः सलावृंक्या सह। असुरान् परिवृश्चति। पृथिंच्युर्शुमंती। तामन्ववंस्थितः संवत्सरो दिवं चं। नैवं विदुषाऽऽचार्यान्तेवासिनौ। अन्योन्यस्मै द्रुह्याताम्। यो द्रुह्यति। भ्रश्यते स्वर्गान्नोकात्। इत्यृतुमण्डलानि। सूर्यमण्डलान्याख्यायिकाः। अत ऊर्ध्वर सनिव्चनाः॥१९॥

आरोगो भ्राजः पटरंः पत्ङ्गः। स्वर्णरो ज्योतिषिमान् विभासः। ते अस्मै सर्वे दिवमांतपन्ति। ऊर्जं दुहाना अनपस्फुरंन्त इति। कश्यंपोऽष्ट्रमः। स महामेरुं नं जहाति। तस्यैषा भवंति। यत्ते शिल्पं कश्यप रोचनावंत्। इन्द्रियावंतपुष्कुलं चित्रभांनु। यस्मिन्त्सूर्या अर्पिताः सप्त साकम्॥२०॥

तस्मिन् राजानमधिविश्रयेमिमिति। ते अस्मै सर्वे कश्यपाद्योतिर्लभून्ते। तान्त्सोमः कश्यपादिधिनिर्द्धमिति। भ्रस्ताकर्मकृदिवैवम्। प्राणो जीवानीन्द्रियंजीवानि। सप्त शीर्षण्याः प्राणाः। सूर्या इंत्याचार्याः। अपश्यमहमेतान्त्सप्त सूर्यानिति। पञ्चकर्णो वात्स्यायनः। सप्तकर्णश्च प्राक्षिः॥२१॥ आनुश्रविक एव नौ कश्यंप इति। उभौ वेदियते। न

हि शेकुमिव महामेरं गुन्तुम्। अपश्यमहमेत्सूर्यमण्डलं परिवर्तमानम्। गाग्यः प्राणत्रातः। गच्छन्त महामेरुम्। एकं चाजहतम्। भ्राजपटरपतंङ्गा निहने। तिष्ठन्नांतपन्ति। तस्मांदिह तिष्ठितपाः॥२२॥

अमुत्रेतरे। तस्मांदिहातित्रिंतपाः। तेषांमेषा भवंति। सप्त सूर्या दिव्मनुप्रविष्टाः। तान्-वेतिं पृथिभिदिक्षिणावान्। ते अस्मै सर्वे घृतमांतप्नि। ऊर्जं दुहाना अनपस्फुरंन्त इति। सप्तर्त्विजः सूर्या इंत्याचार्याः। तेषांमेषा भवंति। सप्त दिशो नानांसूर्याः॥२३॥

स्प्त होतांर ऋत्विजंः। देवा आदित्यां ये स्प्ता तेभिः सोमाभी रक्षण इति। तदंप्याम्रायः। दिग्भाज ऋतूँन् करोति। एतंयैवावृता सहस्रसूर्यताया इति वैशम्पायनः। तस्यैषा भवंति। यद्यावं इन्द्र ते श्तर श्तं भूमीः। उतस्युः। नत्वां वज्रिन्त्सहस्र सूर्याः॥२४॥

अनु न जातमष्ट रोदंसी इति। नानालिङ्गत्वाहतूनां नानांसूर्यत्वम्। अष्टौ तु व्यवसिता इति। सूर्यमण्डलान्यष्टांत ऊर्ध्वम्। तेषांमेषा भवंति। चित्रं देवानामुदंगादनींकम्। चक्षुंर्मित्रस्य वर्रणस्याग्नेः। आऽप्रा द्यावांपृथिवी अन्तरिक्षम्। सूर्य आत्मा जगतस्तस्थुंषश्चेति॥२५॥

[३०]

केदमभ्रं निविशते। क्वाय ५ संवत्सरो मिथः। क्वाहः क्वेयं

देव रात्री। क्व मासा ऋंतवः श्रिताः। अर्द्धमासां मुहूर्ताः। निमेषास्तुंटिभिः सह। क्वेमा आपो निविश्वन्ते। यदीतों यान्ति सम्प्रंति। काला अप्सु निविश्वन्ते। आपः सूर्ये समाहिताः॥२६॥

अभ्राण्यपः प्रंपद्यन्ते। विद्युत्सूर्ये स्माहिता। अनवर्णे इंमे भूमी। इयं चांऽसौ च रोदंसी। किङ्स्विदत्रान्तंरा भूतम्। येनेमे विंधृते उमे। विष्णुनां विधृते भूमी। इति वंत्सस्य वेदंना। इरावती धेनुमती हि भूतम्। सूयवसिनी मनुषे दशस्यै॥२७॥

व्यंष्टभ्राद्रोदंसी विष्णंवते। दाधर्थं पृथिवीम्भितों म्यूखैंः। किं तिद्वष्णोर्बलमाहुः। का दीप्तिः किं प्रायंणम्। एको युद्धारंयद्देवः। रेजती रोद्सी उभे। वाताद्विष्णोर्बलमाहुः। अक्षराद्दीप्तिरुच्यंते। त्रिपदाद्धारंयद्देवः। यद्विष्णोरेकुमुत्तंमम्॥२८॥

अग्नयो वायंवश्चेव। एतदंस्य प्रायंणम्। पृच्छामि त्वा पंरं मृत्युम्। अवमं मध्यमश्चेतुम्। लोकं च पुण्यंपापानाम्। एतत्पृंच्छामि सम्प्रंति। अमुमांहुः पंरं मृत्युम्। प्वमानं तु मध्यंमम्। अग्निरेवावंमो मृत्युः। चन्द्रमांश्चतुरुच्यंते॥२९॥

अनाभोगाः परं मृत्युम्। पापाः संयन्ति सर्वदा। आभोगास्त्वेवं संयन्ति। यत्र पुंण्यकृतो जनाः। ततो मध्यममायन्ति।

विंधेमेति॥ ३३॥

चत्मंग्निं च सम्प्रति। पृच्छामि त्वां पापुकृतः। युत्र यांतयते यमः। त्वं नस्तद्वह्मंन् प्रब्रूहि। यदि वैत्थाऽस्तो गृहान्॥३०॥ कृश्यपांदुदिताः सूर्याः। पापान्निप्निन्ति सर्वदा। रोदस्योन्तंर्देशेषु। तत्र न्यस्यन्ते वासवैः। तेऽशरीराः प्रंपद्यन्ते। यथाऽपुंण्यस्य कर्मणः। अपाँण्यपादंकेशासः। तत्र तेंऽयोनिजा जनाः। मृत्वा पुनर्मृत्युमांपद्यन्ते। अद्यमांनाः स्वकर्मभिः॥३१॥ आशातिकाः क्रिमंय इव। ततः पूयन्ते वासवैः। अपैतं मृत्युं जंयति। य एवं वेदं। स खल्वैवं विद्वाह्मणः। दीर्घश्रुंत्तमो भवंति। कश्यंपस्यातिंथिः सिद्धगंमनः सिद्धागंमनः। तस्यैषा भवंति। आयस्मिन्त्सप्त वांसवाः। रोहंन्ति पूर्व्या रुहंः॥३२॥ ऋषिंर्ह दीर्घश्रुत्तंमः। इन्द्रस्य घर्मो अतिंथिरिति। कश्यपः पश्यंको भवति। यत्सर्वं परिपश्यतीति सौक्ष्म्यात्। अथाग्नेरष्टपुंरुषस्य। तस्यैषा भवंति। अग्ने नयं सुपर्थां राये अस्मान्। विश्वानि देव वयुनांनि विद्वान्। युयोध्यस्मञ्जुंहराणमेनः। भूयिष्ठां ते नम उक्तिं

[38]

अग्निश्च जातंवेदाश्च। सहोजा अंजिराप्रभुः। वैश्वानरो नंर्यापाश्च। पुङ्किराधाश्च सप्तमः। विसर्पेवाऽष्टंमोऽग्नीनाम्। एतेऽष्टौ वसवः, क्षिता इति। यथर्त्वेवाग्नेरर्चिवर्णविशेषाः। नीलार्चिश्च पीतकाँचिश्चेति। अथ वायोरेकादशपुरुषस्यैका-दशंस्रीकस्य। प्रभ्राजमाना व्यंवदाताः॥३४॥

याश्च वासुंकिवैद्युताः। रजताः परुंषाः श्यामाः। कपिला अंतिलोहिताः। ऊर्ध्वा अवपंतन्ताश्च। वैद्युत इंत्येकादश। नैनं वैद्युतों हिन्स्ति। य एवं वेद। स होवाच व्यासः पांराश्चरः। विद्युद्वधमेवाहं मृत्युमैंच्छिमिति। न त्वकांम १ हन्ति॥३५॥ य एवं वेद। अथ गन्धर्वगणाः। स्वानुभ्राट्। अङ्गारिर्वम्भारिः। हस्तः सुहंस्तः। कृशांनुर्विश्वावंसुः। मूर्धन्वान्त्सूर्यवर्चाः। कृतिरित्येकादश गन्धर्वगणाः। देवाश्च महादेवाः। रश्मयश्च देवां गरगिरः॥३६॥

नैनं गरों हिन्स्ति। य एवं वेद। गौरी मिंमाय सिल्लानि तक्षंती। एकंपदी द्विपदी सा चतुंष्पदी। अष्टापदी नवंपदी बभूवुषीं। सहस्राक्षरा परमे व्योमन्निति। वाचों विशेषणम्। अथ निगदंव्याख्याताः। ताननुर्क्रमिष्यामः। व्राहवंः स्वतपसः॥३७॥

विद्युन्मंहसो धूपंयः। श्वापयो गृहमेधाँश्चेत्येते। ये चेमेऽशिंमिविद्विषः। पर्जन्याः सप्त पृथिवीमभिवंर्षन्ति। वृष्टिंभिरिति। एतयैव विभक्तिविंपरीताः। सप्तिभिवीं तैरुदीरिताः। अमूँल्लोकानभिवंर्षन्ति। तेषांमेषा भवंति। स्मानमेतदुदंकम्॥३८॥

उचैत्यंवचाहंभिः। भूमिं पर्जन्या जिन्वंन्ति। दिवं

जिन्वन्त्यग्नंय इति। यदक्षंरं भूतकृतम्। विश्वं देवा उपासते। मृहर्षिमस्य गोप्तारम्। ज्मदंग्निमकुर्वत। ज्मदंग्निराप्यायते। छन्दोभिश्चतुरुत्त्ररैः। राज्ञः सोमंस्य तृप्तासंः॥३९॥

ब्रह्मणा वीर्यावता। शिवा नंः प्रदिशो दिशंः। तच्छुं योरावृंणीमहे। गातुं यज्ञायं। गातुं यज्ञपंतये। दैवीः स्वस्तिरंस्तु नः। स्वस्तिर्मानुंषेभ्यः। ऊर्ध्वं जिंगातु भेषजम्। शं नो अस्तु द्विपदें। शं चतुंष्पदे। सोमपा (३) असोमपा (३) इति निगदंव्याख्याताः॥४०॥

[32]

सहस्रवृदियं भूमिः। प्रं व्योम सहस्रंवृत्। अश्विनां भुज्यूंनास्त्या। विश्वस्यं जगृतस्पंती। जाया भूमिः पंतिर्व्योम। मिथुनंन्ता अतुर्यथुः। पुत्रो बृहस्पंती रुद्रः। स्रमां इतिं स्नीपुमम्। शुक्रं वांम्न्यद्यंज्तं वांम्न्यत्। विषुंरूपे अहंनी द्यौरिव स्थः॥४१॥

विश्वा हि माया अवंथः स्वधावन्तौ। भुद्रा वाँ पूषणाविह रातिरेस्तु। वासाँत्यौ चित्रौ जगंतो निधानौँ। द्यावांभूमी च्रथः सूर् सखायौ। ताविश्वनां रासभाश्वा हवंं मे। शुभस्पती आगतर् सूर्ययां सह। त्युग्रोंह भुज्युमंश्विनोदमेघे। रियं न कश्चिन्ममृवां (२) अवांहाः। तमूहथुर्नोभिराँत्मन्वतींभिः। अन्तरिक्षप्रिद्भिरपोंदकाभिः॥४२॥ तिस्रः, क्षपस्त्रिरहांतिव्रजिद्धिः। नासंत्या भुज्युमूंहथुः पत्ङ्गेः। समुद्रस्य धन्वन्नार्द्रस्य पारे। त्रिभीरथैः श्तपंद्धिः षडिश्वेः। सवितारं वितन्वन्तम्। अनुंबध्नाति शाम्बरः। आपपूर्षम्बरश्चेव। सवितारेप्सोऽभवत्। त्यः सुतृप्तं विदित्वेव। बहुसोम गिरं वंशी॥४३॥

अन्वेति तुग्रो वंक्रियान्तम्। आयसूयान्त्सोमंतृप्सुषु। स सङ्ग्रामस्तमों द्योऽत्योतः। वाचो गाः पिंपाति तत्। स तद्गोभिः स्तवां ऽत्येत्यन्ये। रक्षसांनन्विताश्चं ये। अन्वेति परिवृत्याऽस्तः। पुवमेतौ स्थों अश्विना। ते पुते द्युंः पृथिव्योः। अहंरहर्गर्भं दधाथे॥४४॥

तयोंरेतौ वृत्सावंहोरात्रे। पृथिव्या अहंः। दिवो रात्रिः। ता अविंसृष्टौ। दम्पंती एव भंवतः। तयोंरेतौ वृत्सौ। अग्निश्चांदित्यश्चं। रात्रेवंत्सः। श्वेत आंदित्यः। अह्रोऽग्निः॥४५॥ ताम्रो अरुणः। ता अविंसृष्टौ। दम्पंती एव भंवतः। तयोंरेतौ वृत्सौ। वृत्रश्चं वैद्युतश्चं। अग्नेर्वृत्रः। वैद्युतं आदित्यस्यं। ता अविंसृष्टौ। दम्पंती एव भंवतः। तयोंरेतौ वृत्सौ॥४६॥ उष्मा चं नीहारश्चं। वृत्रस्योष्मा। वैद्युतस्यं नीहारः। तौ तावेव प्रतिंपद्येते। सेय र रात्रीं गृभिणीं पुत्रेण संवंसित। तस्या वा एतदुल्बणम्ं। यद्रात्रौं रूश्मयंः। यथा गोर्गिभिण्यां उल्बणम्ं। एवमेतस्यां उल्बणम्ं। प्रजियष्णुः प्रजया च पशुभिश्च भ्वति। य एवं वेद। एतमुद्यन्तमिपयंन्तं चेति। आदित्यः पुण्यंस्य

वृत्सः। अथ पवित्राङ्गिरसः॥४७॥

.[३३]

प्वित्रंवन्तः परिवाज्ञमासंते। पितैषां प्रत्नो अभिरंक्षति व्रतम्।
महः संमुद्रं वर्रणस्तिरोदंधे। धीरां इच्छेकुर्धरुणेष्वारभम्।
प्वित्रं ते वितंतं ब्रह्मणस्पतें। प्रभुगात्राणि पर्येषिविश्वतः।
अतंप्ततनूर्न तदामो अंश्रुते। शृतास् इद्वहंन्तस्तत्समांशत।
ब्रह्मा देवानांम्। असंतः सुद्ये ततंक्षुः॥४८॥

ऋषंयः स्प्तात्रिश्च यत्। सर्वेऽत्रयो अंगस्त्यश्च। नक्षेत्रैः शङ्कृंतोऽवसन्। अथं सवितुः श्यावाश्वस्याऽवर्तिकामस्य। अमी य ऋक्षा निहिंतास उचा। नक्तं दर्दश्चे कुहंचिद्दिवेयुः। अदंब्यानि वर्रुणस्य वृतानि। विचाकशंचन्द्रमा नक्षंत्रमेति। तत्संवितुर्वरेण्यम्। भर्गो देवस्यं धीमहि॥४९॥

धियो यो नंः प्रचोदयाँत्। तत्संवितुर्वृणीमहे। वयं देवस्य भोजनम्। श्रेष्ठ सर्वधातमम्। तुरं भगस्य धीमहि। अपांगूहत सविता तृभीन्। सर्वान्दिवो अन्धंसः। नक्तं तान्यंभवन्दृशे। अस्थ्यस्थ्रा सम्भंविष्यामः। नाम् नामैव नाम मैं॥५०॥

नपुरसंकं पुमाङ्क्यंस्मि। स्थावंरोऽस्म्यथ् जङ्गंमः। यजेऽयिक्षे यष्टाहे चं। मयां भूतान्यंयक्षत। पृशवों ममं भूतानि। अनूबन्थ्योऽस्म्यंहं विभुः। स्त्रियंः सृतीः। ता उमे

तां विमुश्च॥५५॥

पुर्स आहुः। पश्यंदक्षण्वान्नविचेतद्न्यः। क्विर्यः पुत्रः स इमा चिकेत॥५१॥

यस्ता विजानात्संवितुः पितासंत्। अन्धो मणिमंविन्दत्। तमनङ्गुलिरावयत्। अग्रीवः प्रत्यमुश्चत्। तमजिह्वा असश्चंत। ऊर्ध्वमूलमेवाक्छाखम्। वृक्षं यो वेद सम्प्रंति। न स जातु जनः श्रद्धध्यात्। मृत्युर्मा मार्यादितिः। हसित॰ रुदितं गीतम्॥५२॥

वीणांपणवलासिंतम्। मृतं जीवं चं यत्किश्चित्। अङ्गानिं स्नेव विद्धिं तत्। अतृष्युङ्स्तृष्यंध्यायत्। अस्माञ्जाता में मिथू चरत्रं। पुत्रो निर्ऋत्यां वैदेहः। अचेतां यश्च चेतनः। स् तं मणिमंविन्दत्। सोऽनङ्गुलिरावंयत्। सोऽग्रीवः प्रत्यंमुश्चत्॥५३॥

सोऽजिह्नो असश्चंत। नैतमृषिं विदित्वा नगरं प्रविशेत्। यंदि प्रविशेत्। मिथौ चिरंत्वा प्रविशेत्। तत्सम्भवंस्य व्रतम्। आतमंग्ने रथं तिष्ठ। एकांश्वमेक्योजंनम्। एकचक्रंमेक्धुरम्। वातप्रांजिगतिं विभो। न रिष्यतिं न व्यथते॥५४॥ नास्याक्षों यातु सर्ज्ञति। यच्छ्वेतांन् रोहिंताङ्श्चाग्नेः। रथे युंक्काऽिधतिष्ठंति। एकया च दशिभश्चं स्वभूते। द्वाभ्यामिष्टये विर्शेत्या च। तिसृभिश्च वहसे त्रिर्शाता च। नियुद्धिर्वायविह

[38]

आतंनुष्व प्रतंनुष्व। उद्धमऽऽधंम् सन्धंम। आदित्ये चन्द्रंवर्णानाम्। गर्भमाधेहि यः पुमान्। इतः सिक्तः सूर्यगतम्। चन्द्रमंसे रसं कृधि। वारादं जनयाग्रेऽग्निम्। य एको रुद्र उच्यंते। असङ्ख्याताः संहस्राणि। स्मर्यते न च दृश्यंते॥५६॥

पुवमेतं निबोधता आम्न्द्रैरिन्द्र हरिभिः। याहि म्यूरंरोमभिः। मा त्वा केचिन्नियेमुरिन्न पाशिनः। दुधन्वेव ता इंहि। मा म्न्द्रैरिन्द्र हरिभिः। यामि म्यूरंरोमभिः। मा मा केचिन्नियेमुरिन्न पाशिनः। निधन्वेव तां (२) इंमि। अणुभिश्च महद्भिश्च॥५७॥

निघृष्वैरस्मायुंतैः। कालैर्हरित्वंमापृत्रैः। इन्द्रऽऽयांहि स्हस्रंयुक्। अग्निर्विभ्राष्टिंवसनः। वायुः श्वेतंसिकद्रुकः। संवृत्सरो विषूवर्णैः। नित्यास्तेऽनुचंरास्त्व। सुब्रह्मण्योश सुब्रह्मण्योश सुंब्रह्मण्योम्। इन्द्रऽऽगच्छ हरिव आगच्छ मेधातिथेः। मेष वृषणश्वंस्य मेने॥५८॥

गौरावस्कन्दिन्नहल्यांये जार। कौशिकब्राह्मण गौतमंब्रुवाण। अरुणाश्वां इहागंताः। वसंवः पृथिविक्षितंः। अष्टौदिग्वासंसो-ऽग्नयंः। अग्निश्च जातवेदांश्चेत्येते। ताम्नाश्वांस्ताम्ररथाः। ताम्रवर्णांस्तथाऽसिताः। दण्डहस्ताः खाद्ग्दतः। इतो रुद्राः पराङ्गताः॥५९॥ उक्त इस्थानं प्रमाणं चं पुर् इत। बृह्स्पतिश्च सिवता चं। विश्वरूपेरिहऽऽगंताम्। रथंनोदक्वर्त्मना। अप्सुषां इति तद्वंयोः। उक्तो वेषां वासार्श्स च। कालावयवानामितः प्रतीज्या। वासात्यां इत्यश्विनोः। कोऽन्तरिक्षे शब्दं करोतीति। वासिष्टो रौहिणो मीमार्स्सां चुक्रे। तस्येषा भवंति। वाश्रेवं विद्युदितिं। ब्रह्मण उदर्रणमिस। ब्रह्मण उदीरणंमिस। ब्रह्मण आस्तरंणमिस। ब्रह्मण उपस्तरंणमिस॥६०॥

[३५]

[अपंक्रामत गर्भिण्यः]

अष्टयोनीम्ष्टपुंत्राम्। अष्टपंत्नीम्मां महींम्। अहं वेद् न में मृत्युः। न चामृत्युर्घाऽऽहंरत्। अष्टयोन्यृष्टपुंत्रम्। अष्टपंदिदम्नतिरक्षम्। अहं वेद् न में मृत्युः। न चामृत्युर्घाऽऽहंरत्। अष्टयोनीम्ष्टपुंत्राम्। अष्टपंत्नीम्मूं दिवम्॥६१॥

अहं वेद न में मृत्युः। न चामृत्युर्घाऽऽहंरत्। सुत्रामाणं महीमू षु। अदितिर्द्यौरदितिर्न्तिरेक्षम्। अदितिर्माता स पिता स पुत्रः। विश्वे देवा अदितिः पश्चजनाः। अदितिर्जातमदितिर्जनित्वम्। अष्टौ पुत्रासो अदितेः। ये जातास्तन्वः परि। देवां (२) उपप्रैत्सप्तिमेः॥६२॥

पुरा मार्ताण्डमास्यंत्। सप्तिभेः पुत्रेरिदंतिः। उपप्रैत्पूर्वं युगम्। प्रजायै मृत्यवे तंत्। पुरा मार्ताण्डमाभरदिति। ताननुर्क्तमिष्यामः। मित्रश्च वर्रुणश्च। धाता चौर्यमा चै। अर्श्वश्च भगश्च। इन्द्रश्च विवस्वाईश्चेत्येते। हिर्ण्यगर्भो ह्रसः श्रुंचिषत्। ब्रह्मजज्ञानं तदित्पदमिति। गर्भः प्राजापत्यः। अथ् पुरुषः सप्त पुरुषः॥६३॥ [यथास्थानं गर्भिण्यः]

[३६]

योऽसौ तपत्रुदेति। स सर्वेषां भूतानाँ प्राणानादायोदेति। मा में प्रजाया मा पंशूनाम्। मा ममं प्राणानादायोदंगाः। असौ योंऽस्तमेति। स सर्वेषां भूतानाँ प्राणानादायाऽस्तमेति। मा में प्रजाया मा पंशूनाम्। मा ममं प्राणानादायाऽस्तंङ्गाः। असौ य आपूर्यति। स सर्वेषां भूतानाँ प्राणेरापूर्यति॥६४॥ मा में प्रजाया मा पंशूनाम्। मा ममं प्राणेरापूर्रष्ठाः। असौ योऽपक्षीयति। स सर्वेषां भूतानाँ प्राणेरपंक्षीयति। मा में प्रजाया मा पंशूनाम्। मा ममं प्राणेरपंक्षीयति। मा में प्रजाया मा पंशूनाम्। मा ममं प्राणेरपंक्षीयति। मा में प्रजाया मा पंशूनाम्। मा ममं प्राणेरपंक्षिष्ठाः। अमूनि नक्षंत्राणि। सर्वेषां भूतानाँ प्राणेरपंप्रसर्पन्ति चोत्संपन्ति च। मा में प्रजाया मा पंशूनाम्। मा ममं प्राणेरपंप्रस्पत्ते चोत्संपन्ति च। मा में प्रजाया मा पंशूनाम्। मा ममं प्राणेरपंप्रस्पत्ते मोत्सृंपत॥६५॥

ड्मे मासांश्वार्धमासाश्चं। सर्वेषां भूतानां प्राणैरपंप्रसर्पन्ति चोत्संपन्ति च। मा में प्रजाया मा पंशूनाम्। मा ममं प्राणैरपंप्रसृपत् मोत्सृंपत। ड्म ऋतवः। सर्वेषां भूतानां प्राणैरपंप्रसर्पन्ति चोर्त्संपन्ति च। मा में प्रजाया मा पंशूनाम्। मा ममं प्राणैरपंप्रसृपत् मोर्त्स्पत। अय संवत्सरः। सर्वेषां भूतानां प्राणैरपंप्रसर्पति चोर्त्संपति च॥६६॥

मा में प्रजाया मा पंशूनाम्। मा ममं प्राणैरपंप्रसृप् मोत्सृंप।
इदमहंः। सर्वेषां भूतानां प्राणैरपंप्रसर्पति चोत्संपित च। मा
में प्रजाया मा पंशूनाम्। मा ममं प्राणैरपंप्रसृप् मोत्सृंप।
इय॰ रात्रिः। सर्वेषां भूतानां प्राणैरपंप्रसर्पति चोत्संपिति च।
मा में प्रजाया मा पंशूनाम्। मा ममं प्राणैरपंप्रसृप् मोत्सृंप।
ॐ भूर्भुवः स्वंः। एतद्वो मिथुनं मा नो मिथुन॰ री्ब्वम्॥६७॥
[3७]

अथऽऽिदत्यस्याष्टपुंरुष्स्य। वसूनामादित्यानाः स्थाने स्वतेर्जना भानि। रुद्राणामादित्यानाः स्थाने स्वतेर्जना भानि। आदित्यानामादित्यानाः स्थाने स्वतेर्जना भानि। सताः सत्यानाम्। आदित्यानाः स्थाने स्वतेर्जना भानि। अभिधून्वतांमभिष्रताम्। वातवंतां मुरुताम्। आदित्यानाः स्थाने स्वतेर्जना भानि। ऋभूणामादित्यानाः स्थाने स्वतेर्जना भानि। विश्वेषां देवानाम्। आदित्यानाः स्थाने स्वतेर्जना भानि। संवत्सरंस्य स्वितुः। आदित्यस्य स्थाने स्वतेर्जना भानि। संवत्सरंस्य स्वितुः। आदित्यस्य स्थाने स्वतेर्जना भानि। ॐ भूर्भवः स्वः। रश्मयो वो मिथुनं मा नो मिथुनः रीढ्वम्॥६८॥

[36]

आरोगस्य स्थाने स्वतेर्जंसा भानि। भ्राजस्य स्थाने स्वतेर्जंसा भानि। पटरस्य स्थाने स्वतेर्जंसा भानि। पतङ्गस्य स्थाने स्वतेर्जंसा भानि। स्वर्णरस्य स्थाने स्वतेर्जंसा भानि। ज्योतिषीमतस्य स्थाने स्वतेर्जंसा भानि। विभासस्य स्थाने स्वतेर्जंसा भानि। कश्यपस्य स्थाने स्वतेर्जंसा भानि। ॐ भूर्भुवः स्वंः। आपो वो मिथुनं मा नो मिथुंन शिद्वम्॥६९॥

[33]

अथ वायोरेकादशपुरुषस्यैकादशंस्रीकृस्य। प्रभ्राजमानानाः रुद्राणाः स्थाने स्वतेजंसा भानि। व्यवदातानाः रुद्राणाः स्थाने स्वतेजंसा भानि। वासुिकवैद्युतानाः रुद्राणाः स्थाने स्वतेजंसा भानि। रजतानाः रुद्राणाः स्थाने स्वतेजंसा भानि। परुषाणाः रुद्राणाः स्थाने स्वतेजंसा भानि। परुषाणाः रुद्राणाः स्थाने स्वतेजंसा भानि। श्रितानाः रुद्राणाः स्थाने स्वतेजंसा भानि। अतिलोहितानाः रुद्राणाः स्थाने स्वतेजंसा भानि। अतिलोहितानाः रुद्राणाः स्थाने स्वतेजंसा भानि। अध्वानाः रुद्राणाः स्थाने स्वतेजंसा भानि।

अवपतन्ताना र रुद्राणा इस्थाने स्वते जंसा भानि। वैद्युताना र रुद्राणा इस्थाने स्वते जंसा भानि। प्रभ्राजमानीना र रुद्राणीना इस्थाने स्वते जंसा भानि। व्यवदातीनाः रुद्राणीनाः स्थाने स्वतेर्जंसा भानि। वासुिकवैद्युतीनाः रुद्राणीनाः स्थाने स्वतेर्जंसा भानि। रजतानाः रुद्राणीनाः स्थाने स्वतेर्जंसा भानि। परुषाणाः रुद्राणीनाः स्थाने स्वतेर्जंसा भानि। श्यामानाः रुद्राणीनाः स्थाने स्वतेर्जंसा भानि। किपलानाः रुद्राणीनाः स्थाने स्वतेर्जंसा भानि। अतिलोहितीनाः रुद्राणीनाः स्थाने स्वतेर्जंसा भानि। अध्वानाः रुद्राणीनाः स्थाने स्वतेर्जंसा भानि। अध्वानाः रुद्राणीनाः स्थाने स्वतेर्जंसा भानि। अध्यानाः स्थाने स्वतेर्जंसा भानि। अध्यानाः स्थाने स्वतेर्जंसा भानि। अध्याने स्थाने स्वतेर्जंसा भानि। अध्याने स्थाने स्थाने स्थाने स्थाने स्थाने स्थाने स्थाने। अध्यानाः स्थाने। स्थाने।

अथाग्नेंरष्टपुंरुष्स्य। अग्नेः पूर्विदिश्यस्य स्थाने स्वतेजंसा भानि। जातवेदस उपदिश्यस्य स्थाने स्वतेजंसा भानि। सहोजसो दक्षिणदिश्यस्य स्थाने स्वतेजंसा भानि। अजिराप्रभव उपदिश्यस्य स्थाने स्वतेजंसा भानि। वैश्वानरस्यापरदिश्यस्य स्थाने स्वतेजंसा भानि। नर्यापस उपदिश्यस्य स्थाने स्वतेजंसा भानि। पङ्किराधस उदग्दिश्यस्य स्थाने स्वतेजंसा भानि। विसर्पिण उपदिश्यस्य स्थाने स्वतेजंसा भानि। ॐ भूर्भुवः स्वंः। दिशो वो मिथुनं मा नो मिथुन रोढ्वम्॥७२॥ दक्षिणपूर्वस्यां दिशि विसंपीं न्रकः। तस्मान्नः पंरिपाहि। दक्षिणापरस्यां दिश्यविसंपीं न्रकः। तस्मान्नः पंरिपाहि। उत्तरपूर्वस्यां दिशि विषादी न्रकः। तस्मान्नः पंरिपाहि। उत्तरापरस्यां दिश्यविषादी न्रकः। तस्मान्नः पंरिपाहि। आ यस्मिन्त्सप्त वासवा इन्द्रियाणि शतक्रतंवित्येते॥७३॥

[88]

इन्द्रघोषा वो वसंभिः पुरस्तादुपंदधताम्। मनोजवसो वः पितृभिदिक्षिणत उपंदधताम्। प्रचेता वो रुद्रैः पश्चादुपंदधताम्। विश्वकंमां व आदित्यैरुंत्तर्त उपंदधताम्। त्वष्टां वो रूपैरुपरिष्टादुपंदधताम्। संज्ञानं वः पश्चादिति। आदित्यः सर्वोऽग्निः पृथिव्याम्। वायुरन्तरिक्षे। सूर्यो दिवि। चन्द्रमां दिक्षु। नक्षंत्राणि स्वलोके। पुवा ह्यंव। पुवा ह्यंग्ने। पुवा हि वायो। पुवा हीन्द्र। पुवा हि पूषन्। पुवा हि देवाः॥७४॥

[४३]

आपंमापाम्पः सर्वाः। अस्माद्स्माद्तितोऽमृतः। अग्निर्वायुश्च सूर्यश्च। सह संश्रस्क्ररिद्धंया। वाय्वश्वां रिष्म्पतंयः। मरींच्यात्मानो अद्रुंहः। देवीर्भुवन्सूवंरीः। पुत्रवृत्वायं मे सुत। महानाम्नीर्महामानाः। मृहुसो महसः स्वंः॥७५॥

देवीः पंर्जन्यसूवंरीः। पुत्रवत्वायं मे सुत। अपाश्यंष्णिम्पा

रक्षः। अपार्श्युष्णिम्पारघम्। अपाँघामपंचावर्तिम्। अपंदेवीरितो हित। वर्ज्रं देवीरजीता इश्च। भुवंनं देवसूवंरीः। आदित्यानदितिं देवीम्। योनिनोर्ध्वमुदीषंत॥ ७६॥

भद्रं कर्णिभिः शृणुयामं देवाः। भद्रं पंश्येमाक्षभिर्यजंत्राः। स्थिरेरङ्गैं स्तुष्टुवा र संस्तृन्भिः। व्यशंम देविहेतं यदायुः। स्वस्ति न इन्द्रो वृद्धश्रंवाः। स्वस्ति नः पूषा विश्ववंदाः। स्वस्ति नस्ताक्ष्यों अरिष्टनेमिः। स्वस्ति नो बृह्स्पतिंदिधातु। केतवो अरुणासश्च। ऋष्यो वातंरश्ननाः। प्रतिष्ठा श्रातधां हि। समाहितासो सहस्रधायंसम्। शिवा नः शन्तंमा भवन्तु। दिव्या आप ओषंधयः। सुमृडीका सरंस्वति। मा ते व्योम सन्दिशे॥७७॥

[88]

योऽपां पुष्पं वेदं। पुष्पंवान् प्रजावान् पशुमान् भंवति। चन्द्रमा वा अपां पुष्पम्। पुष्पंवान् प्रजावान् पशुमान् भंवति। य एवं वेदं। योऽपामायतंनं वेदं। आयतंनवान् भवति। अग्निर्वा अपामायतंनम्। आयतंनवान् भवति। योऽग्नेरायतंनं वेदं॥७८॥

आयतंनवान् भवति। आपो वा अग्नेरायतंनम्। आयतंनवान् भवति। य एवं वेदं। योऽपामायतंनं वेदं। आयतंनवान् भवति। वायुर्वा अपामायतंनम्। आयतंनवान् भवति। यो वायोरायतंनं वेदं। आयतंनवान् भवति॥७९॥ आपो वै वायोरायतंनम्। आयतंनवान् भवति। य एवं वेदं। योऽपामायतंनं वेदं। आयतंनवान् भवति। असौ वै तपंत्रपामायतंनम्। आयतंनवान् भवति। योऽमुष्य तपंत आयतंनं वेदं। आयतंनवान् भवति। आपो वा अमुष्य तपंत आयतंनम्॥८०॥

आयतंनवान् भवति। य एवं वेदं। योऽपामायतंनं वेदं। आयतंनवान् भवति। चन्द्रमा वा अपामायतंनम्। आयतंनवान् भवति। यश्चन्द्रमंस आयतंनं वेदं। आयतंनवान् भवति। अथन्द्रमंस आयतंनं वेदं। आयतंनवान् भवति। आपो वै चन्द्रमंस आयतंनम्। आयतंनवान् भवति॥८१॥

य एवं वेदं। योंऽपामायतंनं वेदं। आयतंनवान् भवति। यो नक्षंत्राणि वा अपामायतंनम्। आयतंनवान् भवति। यो नक्षंत्राणामायतंनं वेदं। आयतंनवान् भवति। आपो वै नक्षंत्राणामायतंनम्। आयतंनवान् भवति। य एवं वेदं॥८२॥ योंऽपामायतंनं वेदं। आयतंनवान् भवति। पर्जन्यो वा अपामायतंनम्। आयतंनवान् भवति। यः पर्जन्यंस्युऽऽयतंनं वेदं। आयतंनवान् भवति। यः पर्जन्यंस्युऽऽयतंनं वेदं। आयतंनवान् भवति। आपो वै पर्जन्यंस्युऽऽयतंनम्। आयतंनवान् भवति। य एवं वेदं। योंऽपामायतंनं वेदं॥८३॥ आयतंनवान् भवति। संवत्सरो वा अपामायतंनम्। आयतंनवान् भवति। संवत्सरो वा अपामायतंनम्। आयतंनवान् भवति। यः संवत्सरस्यऽऽयतंनं वेदं। आयतंनवान् भवति। यः संवत्सरस्यऽऽयतंनं वेदं। आयतंनवान् भवति। अपो वै संवत्सरस्यऽऽयतंनम्।

आयर्तनवान् भवति। य एवं वेदं। यो उप्सु नावं प्रतिष्ठितां वेदं। प्रत्येव तिष्ठति॥८४॥

इमे वै लोका अप्सु प्रतिष्ठिताः। तदेषाऽभ्यनूँक्ता। अपार रस्मुदंयरसत्र्। सूर्ये शुक्रर समार्भृतम्। अपार रसंस्य यो रसंः। तं वो गृह्णाम्युत्तममितिं। इमे वै लोका अपार रसंः। तेऽमुष्मिन्नादित्ये समार्भृताः। जानुद्व्रीम्तरवेदीं खात्वा। अपां पूरियत्वा गुल्फद्व्रम्॥८५॥

पुष्करपर्णैः पुष्करदण्डैः पुष्करैश्चं सङ्स्तीर्य। तस्मिन्विह् यसे। अग्निं प्रणीयोपसमाधायं। ब्रह्मवादिनो वदन्ति। कस्मौत्प्रणीते-ऽयम्प्रिश्चीयतें। साप्रणीतेऽयम्प्सु ह्ययंं चीयतें। असौ भुवंनेप्यनाहिताग्निरेताः। तम्भितं एता अबीष्टंका उपद्धाति। अग्निहोत्रे दंर्शपूर्णमासयोः। पृशुबन्धे चांतुर्मास्येषुं॥८६॥

अथों आहुः। सर्वेषु यज्ञऋतुष्वितिं। एतद्धं स्मृ वा आहुः शण्डिलाः। कमृग्निं चिनुते। सृत्रियमृग्निं चिन्वानः। स्वत्स्रं प्रत्यक्षेण। कमृग्निं चिनुते। सावित्रमृग्निं चिन्वानः। अमुमादित्यं प्रत्यक्षेण। कमृग्निं चिनुते॥८७॥

नाचिकेतम् ग्निं चिन्वानः। प्राणान्यत्यक्षेण। कम् ग्निं चिन्ते। चातुर्होत्रियम् ग्निं चिन्वानः। ब्रह्मं प्रत्यक्षेण। कम् ग्निं चिन्ते। वैश्वसृजम् ग्निं चिन्वानः। शरीरं प्रत्यक्षेण। कम् ग्निं चिन्ते। उपानुवाक्यमाशुम् ग्निं चिन्वानः॥८८॥ ड्माँ ह्यो कान्य्रत्यक्षेण। कम् ग्निं चिन्ते। ड्ममां रूणकेतुकम् ग्निं चिन्त्रा इति। य एवासौ। ड्तश्चाऽमृतंश्चाऽव्यतीपाती। तिमिति। यो उग्ने मिथूया वेदे। मिथुन्वान्ने वित। आपो वा अग्ने मिथुन्वान्ने वित। य एवं वेदे॥८९॥

[४५

आपो वा इदमांसन्त्सिल्लमेव। स प्रजापंतिरेकः पुष्करपणें समभवत्। तस्यान्तर्मनंसि कामः समवर्तत। इद॰ सृजेयमिति। तस्माद्यत्पुरुषो मनसाऽभिगच्छंति। तद्वाचा वंदति। तत्कर्मणा करोति। तदेषाऽभ्यनूँक्ता। कामस्तदग्रे समवर्तताधि। मनसो रेतः प्रथमं यदासीत्॥९०॥

स्तो बन्धुमसंति निरंविन्दन्न्। हृदि प्रतीष्यां क्वयों मनीषेतिं। उपैनन्तदुपंनमित। यत्कांमो भवंति। य एवं वेदं। स तपोंऽतप्यत। स तपंस्तुम्वा। शरींरमधूनुत। तस्य यन्मा १ समासींत्। ततोंऽरुणाः केतवो वातंरशना ऋषंय उदंतिष्ठन्न्॥९१॥

ये नखाः। ते वैखान्साः। ये वालाः। ते वांलखिल्याः। यो रसः। सोऽपाम्। अन्तर्तः कूर्मं भूतः सर्पन्तम्। तमंब्रवीत्। मम वैत्वङ्गाः समभूत्॥९२॥

नेत्यंब्रवीत्। पूर्वमेवाहमिहासमितिं। तत्पुरुंषस्य पुरुष्तवम्। स सहस्रंशीर्षा पुरुंषः। सहस्राक्षः सहस्रंपात्। भूत्वोदंतिष्ठत्। तमंब्रवीत्। त्वं वै पूर्वर्श्यमंभूः। त्विमदं पूर्वः कुरुष्वेतिं। स इत आदायापंः॥९३॥

अञ्चलिनां पुरस्तांदुपादंधात्। एवाह्येवेतिं। ततं आदित्य उदंतिष्ठत्। सा प्राची दिक्। अथांऽरुणः केतुर्दक्षिणत उपादंधात्। एवाह्यम् इतिं। ततो वा अग्निरुदंतिष्ठत्। सा दंक्षिणा दिक्। अथांरुणः केतुः पृश्चादुपादंधात्। एवा हि वायो इतिं॥९४॥

ततों वायुरुदंतिष्ठत्। सा प्रतीची दिक्। अथांरुणः केतुरुत्तर्त उपादंधात्। एवाहीन्द्रेतिं। ततो वा इन्द्र उदंतिष्ठत्। सोदींची दिक्। अथांरुणः केतुर्मध्यं उपादंधात्। एवा हि पूष्त्रितिं। ततो वै पूषोदंतिष्ठत्। सेयं दिक्॥९५॥

अथांरुणः केतुरुपरिष्टादुपादंधात्। एवा हि देवा इति। ततो देवमनुष्याः पितरंः। गृन्धर्वाप्सरस्श्रोदंतिष्ठत्र। सोध्वां दिक्। या विप्रुषों विपरांपतत्र्। ताभ्योऽसुंरा रक्षा १सि पिशाचाश्रोदंतिष्ठत्र्। तस्मात्ते परांभवत्र्। विप्रुङ्गो हि ते समंभवत्र्। तदेषाऽभ्यनूंक्ता॥९६॥

आपों हु यह्नंहतीर्गर्भमायत्रं। दक्ष्वं दर्धाना जनयंन्तीः स्वयम्भुम्। ततं इमेध्यसृंज्यन्त सर्गाः। अद्भो वा इदः समभूत्। तस्मादिदः सर्वं ब्रह्मं स्वयम्भिवति। तस्मादिदः सर्वः शिथिलम्वाऽध्रुवंमिवाभवत्। प्रजापंतिर्वाव तत्। आत्मनाऽऽत्मानंं विधायं। तदेवानुप्राविंशत्। तदेषाऽभ्यनूँक्ता॥९७॥

विधायं लोकान् विधायं भूतानि। विधाय सर्वाः प्रदिशो दिशंश्च। प्रजापंतिः प्रथम्जा ऋतस्यं। आत्मनाऽऽत्मानंमभि संविवेशेतिं। सर्वमेवेदमास्वा। सर्वमवरुद्धं। तदेवानुप्रविंशिति। य एवं वेदं॥९८॥

___[४६]

चतुंष्टय्य आपों गृह्णाति। चत्वारि वा अपाः रूपाणि। मेघों विद्युत्। स्तुन्यिलुर्वृष्टिः। तान्येवावंरुन्थे। आतपंति वर्ष्यां गृह्णाति। ताः पुरस्तादुपंदधाति। पृता व ब्रंह्मवर्चस्या आपः। मुख्त एव ब्रंह्मवर्चसमवंरुन्थे। तस्मान्मुख्तो ब्रंह्मवर्चसितरः॥९९॥

कूप्यां गृह्णाति। ता दंक्षिण्त उपंदधाति। पृता वै तेज्ञस्विनीरापंः। तेजं पृवास्यं दक्षिण्तो दंधाति। तस्माद्दक्षिणोऽर्धस्तेज्ञस्वितंरः। स्थावरा गृंह्णाति। ताः पृश्चादुपंदधाति। प्रतिष्ठिता वै स्थांवराः। पृश्चादेव प्रतितिष्ठति। वहंन्तीर्गृह्णाति॥१००॥

ता उत्तर्त उपंदधाति। ओजंसा वा एता वहंन्तीरिवोद्गंतीरिव आकूजंतीरिव धावंन्तीः। ओजं एवास्यौत्तर्तो दंधाति। तस्मादुत्तरोऽधं ओजस्वितंरः। सम्भार्या गृंह्णाति। ता मध्य उपंदधाति। इयं वै संम्भार्याः। अस्यामेव प्रतितिष्ठति। पुल्वल्या गृह्णाति। ता उपरिष्टादुपादंधाति॥१०१॥

असौ वै पंल्वयाः। अमुष्यांमेव प्रतितिष्ठति। दिक्षूपंदधाति। दिक्षु वा आपंः। अत्रुं वा आपंः। अद्भो वा अत्रं जायते। यदेवाद्मोऽत्रुं जायंते। तदवंरुन्धे। तं वा पुतमंरुणाः केतवो वातंरशुना ऋषंयोऽचिन्वन्। तस्मांदारुणकेतुकंः॥१०२॥

तदेषाऽभ्यनूँक्ता। केतवो अर्रुणासश्च। ऋष्यो वातंरश्नाः। प्रतिष्ठा श्रात्यां हि। समाहितासो सहस्र्धायंस्मिति। श्रातशिश्चेव सहस्रंशश्च प्रतितिष्ठति। य प्रतम्भिं चिनुते। य उंचैनमेवं वेद॥१०३॥

[ev]

जानुद्धीम्ंत्तरवेदीं खात्वा। अपां पूरयति। अपाः संवृत्वायं। पुष्करपूर्णः रुकां पुरुषमित्युपंदधाति। तपो वै पुष्करपूर्णम्। सत्यः रुकाः। अमृतं पुरुषः। पुतावद्वा वाऽस्ति। यावंदेतत्। यावंदेवास्ति॥१०४॥

तदवंरुन्थे। कूर्ममुपंदधाति। अपामेव मेध्मवंरुन्थे। अथौं स्वर्गस्यं लोकस्य समंष्ट्रो। आपंमापाम्पः सर्वाः। अस्माद्स्मादितोऽम्तः। अग्निर्वायुश्च सूर्यश्च। सह संश्चस्क्ररर्ष्ढिया इति। वाय्वश्वां रश्मिपतंयः। लोकं पृणच्छिद्रं पृण॥१०५॥

यास्तिस्रः पंरम्जाः। इन्द्रघोषा वो वसुंभिरेवाह्येवेति। पश्चितिय उपंदधाति। पाङ्कोऽग्निः। यावानेवाग्निः। तं चिन्ते। लोकं पृणया द्वितीयामुपंदधाति। पश्चं पदा वै विराट्। तस्या वा इयं पादंः। अन्तरिक्षं पादंः। द्यौः पादंः। दिशः पादंः। प्रारंजाः पादंः। विराज्येव प्रतितिष्ठति। य पृतमृग्निं चिन्ते। य उंचैनमेवं वेदं॥१०६॥

[88]

अग्निं प्रणीयोपसमाधायं। तम्भित एता अबीष्टका उपंदधाति। अग्निहोत्रे देर्शपूर्णमासयौः। पृशुबन्धे चांतुर्मास्येषुं। अथो आहुः। सर्वेषुं यज्ञकृतुष्विति। अर्थ ह स्माहारुणः स्वायम्भुवंः। सावित्रः सर्वोऽग्निरित्यनंनुषङ्गं मन्यामहे। नाना वा एतेषां वीर्याणि। कमृग्निं चिंनुते॥१०७॥

स्त्रियम्भिं चिंन्वानः। कम्भिं चिंनुते। सावित्रम्भिं चिंन्वानः। कम्भिं चिंनुते। नाचिकेतम्भिं चिंन्वानः। कम्भिं चिंनुते। चातुर्होत्रियम्भिं चिंन्वानः। कम्भिं चिंनुते। वैश्वसृजम्भिं चिंन्वानः। कमभिं चिंनुते॥१०८॥

उपानुवाक्यंमाशुम्गि चिन्वानः। कम्गि चिन्ते। इममारुणकेतुकम्गि चिन्वान इति। वृषा वा अग्निः। वृषाणौ सङ्स्फालयेत्। ह्न्येतास्य यज्ञः। तस्मान्नानुषज्यः। सोत्तंरवेदिषुं ऋतुषुं चिन्वीत। उत्तरवेद्याङ् ह्यंग्निश्चीयते। प्रजाकामश्चिन्वीत॥१०९॥ प्राजापत्यो वा एषों ऽग्निः। प्राजापत्याः प्रजाः। प्रजावांन् भवति। य एवं वेदं। पृशुकांमश्चिन्वीत। संज्ञानं वा एतत् पंशूनाम्। यदापंः। पृशूनामेव संज्ञाने ऽग्निं चिंनुते। पृशुमान् भंवति। य एवं वेदं॥११०॥

वृष्टिंकामश्चिन्वीत। आपो वै वृष्टिंः। पूर्जन्यो वर्षुंको भवति। य एवं वेदं। आमयावी चिन्वीत। आपो वै भेषजम्। भेषजमेवास्मैं करोति। सर्वमायुरिति। अभिचर ईश्चिन्वीत। वज्रो वा आपंः॥१११॥

वज्रंमेव भ्रातृंव्येभ्यः प्रहंरित। स्तृणुत एंनम्। तेजंस्कामो यशंस्कामः। ब्रह्मवर्चसकांमः स्वर्गकांमश्चिन्वीत। एतावृद्वा वांऽस्ति। यावंदेतत्। यावंदेवास्ति। तदवंरुन्थे। तस्यैतद्वृतम्। वर्षित् न धांवेत्॥११२॥

अमृतं वा आपंः। अमृत्स्यानंन्तिरत्यै। नाप्सु मूत्रंपुरीषं कुर्यात्। न निष्ठीवेत्। न विवसंनः स्नायात्। गृह्यो वा एषोंऽग्निः। एतस्याग्नेरनंतिदाहाय। न पुष्करपूर्णानि हिरंण्यं वाऽिधतिष्ठेंत्। एतस्याग्नेरनंभ्यारोहाय। न कूर्मस्याश्नीयात्। नोदकस्याघातुंकान्येनंमोदकानिं भवन्ति। अघातुंका आपंः। य एतम्ग्निं चिनुते। य उंचैनमेवं वेदं॥११३॥

-[88]

इमानुंकं भुंवना सीषधेम। इन्द्रेश्च विश्वे च देवाः। युज्ञं च नस्तुन्वं चे प्रजां चे। आदित्यैरिन्द्रेः सह सींषधातु। आदित्यैरिन्द्रः सर्गणो मुरुद्धिः। अस्माकं भूत्वविता तनूनाम्। आप्नेवस्व प्रप्नेवस्व। आण्डीभेवज् मा मुहुः। सुखादीन्दुंःखनिधनाम्। प्रतिमुश्चस्व स्वां पुरम्॥११४॥

मरींचयः स्वायम्भुवाः। ये शरीराण्यंकल्पयत्र्। ते ते देहं केल्पयन्तु। मा चं ते ख्यास्मं तीरिषत्। उत्तिष्ठत् मा स्वप्ता अग्निमिंच्छध्वं भारताः। राज्ञः सोमंस्य तृप्तासंः। सूर्येण स्युजोषसः। युवां सुवासाः। अष्टाचंक्रा नवंद्वारा॥११५॥

देवानां पूर्ययोध्या। तस्यार् हिरण्मयः कोशः। स्वर्गो लोको ज्योतिषाऽऽवृंतः। यो वै तां ब्रह्मणो वेद। अमृतेनऽऽवृतां पुरीम्। तस्मै ब्रह्म चं ब्रह्मा च। आयुः कीर्तिं प्रजां दंदुः। विभ्राजमाना् हिरण्मयीं ब्रह्मा॥११६॥

विवेशांऽप्राजिंता। पराङेत्यंज्याम्यी। पराङेत्यंनाश्की। इह चांमुत्रं चान्वेति। विद्वान्देवासुरानुंभ्यान्। यत्कुंमारी मन्द्रयंते। यद्योषिद्यत्पंतिव्रतां। अरिष्टं यत्किं चं क्रियतें। अग्निस्तदनुंवेधति। अशृतांसः शृंतासृश्च॥११७॥

यज्वानो येऽप्यंयज्वनंः। स्वंयंन्तो नापेंक्षन्ते। इन्द्रंमग्निं चं ये विदुः। सिकंता इव संयन्ति। रिष्मिभिः समुदीरिताः। अस्माल्लोकादंमुष्माच। ऋषिभिरदात्पृक्षिभिः। अपेत् वीत् वि चं सर्पतातः। येऽत्र स्थ पुराणा ये च नूतंनाः। अहोभिरद्भिरक्तु-

भिर्व्यक्तम्॥११८॥

यमो दंदात्ववसानंमस्मै। नृ मुंणन्तु नृपात्वर्यः। अकृष्टा ये च कृष्टंजाः। कुमारीषु क्नीनीषु। जारिणीषु च ये हिताः। रेतः पीता आण्डंपीताः। अङ्गिरेषु च ये हुताः। उभयान् पुत्रंपौत्रकान्। युवेऽहं यमराजंगान्। शतमित्रु श्ररदंः॥११९॥ अदो यद्वह्मं विल्वम्। पितृणां चं यमस्यं च। वर्रुणस्याश्विनोर्ग्नेः। मुरुतां च विहायंसाम्। काम्प्रयवंणं मे अस्तु। स ह्यंवास्मिं स्नातंनः। इति नाको ब्रह्मिश्रवो रायो धनम्। पुत्रानापो देवीरिहऽऽहिंत॥१२०॥

[40]

विशींर्णीं गृध्रंशीर्णीं च। अपेतों निर्ऋति हैथः। परिबाध श्रेंतकुक्षम्। निजङ्क श्रें शबलोदंरम्। सृ तान् वाच्यायंया सह। अग्रे नाशंय सन्दर्शः। ईर्ष्यासूये बुंभुक्षाम्। मृन्युं कृत्यां चं दीधिरे। रथेन किश्शुकावंता। अग्रे नाशंय सन्दर्शः॥१२१॥

[48]

पूर्जन्यांय प्रगांयत। दिवस्पुत्रायं मीदुषें। स नों यवसंमिच्छत्। इदं वर्चः पूर्जन्यांय स्वराजें। हृदो अस्त्वन्तंर्न्तद्यंयोत। मयोभूर्वातो विश्वकृष्टयः सन्त्वस्मे। सुपिप्पूला ओषंधीर्देवगोपाः। यो गर्भमोषंधीनाम्। गर्वां कृणोत्यर्वताम्। पूर्जन्यः पुरुषीणांम्॥१२२॥

[५२]

पुनंर्मामैत्विन्द्रियम्। पुन्रायुः पुन्र्भगः। पुन्र्र्वाह्मणमैतु
मा। पुन्र्र्विणमैतु मा। यन्मेऽद्य रेतः पृथिवीमस्कान्।
यदोषंधीर्प्यसंर्द्यदापः। इदं तत्पुन्रादंदे। दीर्घायुत्वाय्
वर्चसे। यन्मे रेतः प्रसिच्यते। यन्म् आजांयते पुनः। तेनं
माम्मृतंं कुरु। तेनं सुप्रजसंं कुरु॥१२३॥

[५३]

अद्मस्तिरोऽधाऽजांयत। तवं वैश्रवणः संदा। तिरोऽधेहि सप्त्नान्नः। ये अपोऽश्नन्तिं केच्ना त्वाष्ट्रीं मायां वैश्रवणः। रथर् सहस्रवन्धुंरम्। पुरुश्चऋर सहस्राश्वम्। आस्थायायाहि नो बिलिम्। यस्मैं भूतानिं बिलिमावंहन्ति। धनं गावो हिस्ति हिरंण्यमश्वान्॥१२४॥

असांम सुमृतौ युज्ञियंस्य। श्रियं बिश्रुतोऽन्नंमुखीं विराजम्। सुदर्शने चं ऋौश्रे चं। मैनागे चं महागिरौ। शृतद्वाट्टारंगम्न्ता। स्र्हार्यं नगरं तवं। इति मन्नाः। कल्पोऽत ऊर्ध्वम्। यदि बिलुर् हरैत्। हिर्ण्यनाभयें वितुदयें कौबेरायायं बंिलः॥१२५॥

सर्वभूताधिपतये नंम इति। अथ बलि॰ हृत्वोपंतिष्ठेत। क्षत्रं क्षत्रं वैश्ववणः। ब्राह्मणां वयु स्मः। नर्मस्ते अस्तु मा मां हि॰सीः। अस्मात्प्रविश्यान्नंमद्धीति। अथ तमग्निमांदधीत। यस्मिन्नेतत्कर्म प्रयुश्चीत। तिरोऽधा भूः। तिरोऽधा भुवं:॥१२६॥

तिरोऽधाः स्वंः। तिरोऽधा भूर्भृवः स्वंः। सर्वेषां लोकानामाधिपत्यं सीदेति। अथ तमग्निंमिन्धीत। यस्मिन्नेतत्कर्म प्रंयुश्चीत। तिरोऽधा भूः स्वाहाँ। तिरोऽधा भूवः स्वाहाँ। तिरोऽधाः स्वंः स्वाहाँ। तिरोऽधाः भूर्भृवः स्वंः स्वाहाँ। यस्मिन्नस्य काले सर्वा आहुतीर्हुतां भवेयुः॥१२७॥ अपि ब्राह्मणंमुखीनाः। तस्मिन्नहः काले प्रंयुश्चीत। परंः सुप्तजंनाद्वेपि। मास्म प्रमाद्यन्तंमाध्यापयेत्। सर्वार्थाः सिद्धान्ते। य एवं वेद। क्षुध्यन्निदंमजानताम्। सर्वार्थाः सिद्धान्ते। यस्तं विघातंको भ्राता। ममान्तर्हृंदये श्रितः॥१२८॥

तस्मां इममग्रपिण्डं जुहोमि। स मैंऽर्थान्मा विवंधीत्। मिय् स्वाहाँ। राजाधिराजायं प्रसह्यसाहिनें। नमों वयं वैंश्रवणायं कुर्महे। स मे कामान्कामकामांय मह्यम्ं। कामेश्वरो वैंश्रवणो दंदातु। कुबेरायं वैश्रवणायं। महाराजाय नमंः। केतवो अरुणासश्च। ऋष्यो वातंरश्नाः। प्रतिष्ठा शत्यां हि। समाहितासो सहस्रधायंसम्। शिवा नः शन्तंमा भवन्तु। दिव्या आप ओषंधयः। सुमृडीका सरंस्वति। मा ते व्योम सन्दर्शि॥१२९॥

[५૪]

संवत्सरमेतंद्वतं चरेत्। द्वौ वा मासौ। नियमः

संमासेन। तस्मिन्नियमंविशेषाः। त्रिषवणमुदकोपस्पर्शी। चतुर्थकालपानंभक्तः स्यात्। अहरहर्वा भैक्षंमश्रीयात्। औदुम्बरीभिः समिद्भिरिग्नं परिचरेत्। पुनर्मामैत्त्विन्द्रियमि-त्येतेनऽनुंवाकेन। उद्धृतपरिपूताभिरद्भिः कार्यं कुर्वीत॥१३०॥ अंसश्चयवान्। अग्नये वायवें सूर्याय। ब्रह्मणे प्रंजापतये। चन्द्रमसे नक्षत्रेभ्यः। ऋतुभ्यः संवेत्सराय। वरुणायारुणायेति व्रतहोमाः। प्रवर्ग्यवदादेशः। अरुणाः काँण्डऋषयः। अरण्येऽधीयीरत्र्। भद्रं कर्णेभिरिति द्वे जिपत्वा॥१३१॥ महानाम्रीभिरुदक र सं इस्पर्श्य। तमाचौर्यो दद्यात्। शिवा नः शन्तमेत्योषधीरालुभते। सुमृडीकेति भूमिम्। एवमंपवुर्गे। धेनुर्दक्षिणा। क॰सं वासंश्च क्षौमम्। अन्यंद्वा शुक्रम्। यंथाशक्ति वा। एवङ्स्वाध्यायंधर्मेण। अरण्येंऽधीयीत। तपस्वी पुण्यो भवति तपस्वी पुण्यो भवति॥१३२॥

-[44]

भ्द्रं कर्णेभिः शृणुयामं देवाः। भ्द्रं पंश्येमाक्षभिर्यजंत्राः। स्थिरेरङ्गैं स्तुष्टुवा र संस्तृनूभिः। व्यशेम देविहेतं यदायुः। स्वस्ति न इन्द्रों वृद्धश्रंवाः। स्वस्ति नः पूषा विश्ववंदाः। स्वस्ति नस्ताक्ष्यों अरिष्टनेमिः। स्वस्ति नो बृहस्पतिंदंधातु॥

॥ॐ शान्तिः शान्तिः शान्तिः॥

॥द्वितीयः प्रश्नः॥

ॐ नमो ब्रह्मणे नमों अस्त्वग्नये नमेः पृथिव्यै नम् ओषंधीभ्यः। नमों वाचे नमों वाचस्पतंये नमो विष्णंवे बृह्ते कंरोमि॥ ॐ शान्तिः शान्तिः शान्तिः॥

सह् वै देवानां चासुंराणां च युज्ञौ प्रतंतावास्तां वय स्वर्गं लोकमें ष्यामो वयमें ष्याम् इति तेऽसुंराः स्त्रह्य सहंसैवाचंरन् ब्रह्मचर्येण् तपंसैव देवास्तेऽसुंरा अमुह्य स्रंसैवाचंरन् ब्रह्मचर्येण् तपंसैव देवास्तेऽसुंरा अमुह्य स्रंसे न प्राजांन इस्ते परांऽभवन्ते न स्वर्गं लोकमायन् प्रसृतेना वै युज्ञेनं देवाः स्वर्गं लोकमायन्त्र प्रसृतेनासुंरान् परांभावयन् प्रसृतो ह् वै यंज्ञोपवीतिनों यज्ञोऽप्रंसृतोऽनुंपवीतिनो यत्किं चं ब्राह्मणो यंज्ञोपवीत्यधीते यज्ञंत एव तत्तस्मा द्यज्ञोपवीत्येवाधीयीत याज्येद्यज्ञंत वा यज्ञस्य प्रसृत्या अजिनं वासों वा दक्षिण्त उपवीय दक्षिणं बाहुमुद्धंरतेऽवं धत्ते स्व्यमितिं यज्ञोपवीतमेतदेव विपंरीतं प्राचीनावीत संवीतंं मानुषम्॥१॥

[8]

रक्षा १ सि ह वां पुरो ऽनुवाके तपोग्रंमतिष्ठन्त तान् प्रजापंतिर्वरेणोपामंत्रयत् तानि वरंमवृणीतऽऽदित्यो नो योद्धा इति तान् प्रजापंतिरब्रवीद्योधंयुध्वमिति तस्माद्तिष्ठन्त १ ह वा तानि रक्षा १ स्यादित्यं योधंयन्ति यावंदस्तमन्वंगात्तानिं हु वा पुतानि रक्षा १ सि गायित्रयाऽभिंमित्रितेनाम्भं शाम्यन्ति तदुं ह् वा एते ब्रंह्मवादिनः पूर्वाभिमुखाः स्य्यायां गायित्रयाऽभिमित्रिता आपं ऊर्ध्वं विक्षिपन्ति ता एता आपं वृज्ञीभूत्वा तानि रक्षा स्सि मृन्देहारुणे द्वीपे प्रक्षिपन्ति यत्प्रंदिक्षणं प्रक्रमन्ति तेनं पाप्मानम् अवधून्वन्त्युद्यन्तंमस्तं यन्तंम् आदित्यमंभिध्यायन् कुर्वन् ब्राह्मणो विद्वान्त्स्कलं भद्रमंश्रुतेऽसावादित्यो ब्रह्मीत् ब्रह्मैव सन् ब्रह्माप्येति य एवं वेदं॥२॥

[२]

यद्देवा देव्हेळंनं देवांसश्चकृमा व्यम्। आदित्यास्तस्मांन्मा मुश्चत्तिस्यतेन् मामित। देवां जीवनकाम्या यद्वाचाऽनृंत-मूदिम। तस्मांन्न इह मुंश्चत् विश्वं देवाः स्जोषंसः। ऋतेनं द्यावापृथिवी ऋतेन् त्व॰ संरस्वति। कृतान्नंः पाह्येनंसो यत्किं चानृंतमूदिम। इन्द्राग्नी मित्रावरुंणौ सोमों धाता बृह्स्पतिः। ते नों मुश्चन्त्वेनंसो यदन्यकृंतमारिम। स्जात्श्र॰सादुत जांमिश्र॰साज्यायंसः श॰सांदुत वा कनीयसः। अनांधृष्टं देवकृंतं यदेन्स्तस्मात् त्वम्स्माञ्जांतवेदो मुमुग्धि॥३॥

यद्वाचा यन्मनंसा बाहुभ्यांमूरुभ्यांमधीवद्धा शिश्वैर्यदर्नृतं चकुमा वयम्। अग्निर्मा तस्मादेनंसो गार्हंपत्यः प्रमुंश्चतु चकुम यानि दुष्कृता। येनं त्रितो अण्वान्निर्बभूव येन् सूर्यं तमंसो निर्मुमोर्च। येनेन्द्रो विश्वा अजहादरातीस्तेनाहं ज्योतिषा ज्योतिरानशान आक्षि। यत्कुसींद्मप्रंतीत्तं मयेह येनं यमस्यं निधिना चरांमि। एतत्तदंग्ने अनृणो भंवामि जीवंन्नेव प्रति तत्तं दधामि। यन्मियं माता यदां पिपेष् यद्न्तिरंक्षं यदाशसातिंकामामि त्रिते देवा दिवि जाता यदापं इमं में वरुण तत्त्वां यामि त्वं नो अग्ने स त्वं नो अग्ने त्वमंग्ने अयासिं॥४॥

[३]

यददीं व्यन्नुणमृहं बुभूवादित्सन्वा सञ्जगर् जने भ्यः। अग्निर्मा तस्मादिन्द्रेश्च संविदानौ प्रमुश्चताम्। यद्धस्तौभ्यां चकर किल्बिषाण्यक्षाणां वसुमुपजिघ्नमानः। उस्रं पश्या चं राष्ट्रभृच तान्यंप्सरसावनुंदत्तामृणानिं। उग्रं पश्ये राष्ट्रभृत्किल्बिषाणि यदक्षवृत्तमनुदत्तम्तत्। नेन्नं ऋणानृणव इत्समानो यमस्य लोके अधिरज्जुरायं। अवं ते हेळ उदुंत्तमिमं में वरुण तत्त्वां यामि त्वं नों अग्ने स त्वं नो अग्ने। सङ्कंसुको विकुंसुको निर्ऋथो यश्चं निस्वनः। तेऽ(१)स्मद्यक्ष्ममनांगसो दूरादूरमंचीचतम्। निर्यक्ष्ममचीचते कृत्यां निर्ऋतिं च। तेन योऽ(१)स्मत्समृंच्छातै तमंस्मै प्रसुंवामसि। दुःशुरुसानुशुरुसाभ्यां घणेनांनुघणेनं तेनान्योऽ(१)स्मत्समृच्छाते तमंस्मै प्रसुवामसि। सं वर्चसा पर्यसा सन्तनूभिरगंन्महि मनंसा सर शिवेनं। त्वष्टां नो अत्र विदंधातु रायोऽनुंमार्षु तन्वो(१) यद्विलिंष्टम्॥५॥

आयुंष्टे विश्वतों दधद्यम्ग्निर्वरंण्यः। पुनंस्ते प्राण आयांति परायक्ष्म र सुवामि ते। आयुर्दा अंग्ने ह्विषों जुषाणो घृतप्रंतीको घृतयोंनिरेधि। घृतं पीत्वा मधु चार् गर्व्यं पितेवं पुत्रम्भिरंक्षतादिमम्। इममंग्न आयुंषे वर्चसे कृधि तिग्ममोजों वरुण सर्शिशाधि। मातेवासमा अदिते शर्म यच्छ विश्वं देवा जरंदष्टिर्यथाऽसंत्। अग्न आयूर्ंषि पवस् आ सुवोर्ज्ञिमषं च नः। आरे बांधस्व दुच्छुनाम्। अग्ने पवंस्व स्वपां अस्मे वर्चः सुवीर्यम्। दधंद्रियं मिये पोषम्॥६॥

अग्निरऋषिः पर्वमानः पार्श्वजन्यः पुरोहितः। तमीमहे महाग्यम्। अग्ने जातान्प्रणुंदा नः सप्रतान्प्रत्यजाताञ्चातवेदो नुदस्व। अस्मे दीदिहि सुमना अहेळ्ञ्छर्मन्ते स्याम त्रिवरूथ उद्भौ। सहंसा जातान्प्रणुंदा नः सपत्रान्प्रत्यजाताञ्चातवेदो नुदस्व। अधि नो ब्रूहि सुमन्स्यमानो वयः स्याम प्रणुंदा नः सपत्रान्प्रत्यजाताञ्चातवेदो प्रणुंदा नः सपत्रान्। अग्ने यो नोऽभितो जनो वृको वारो जिघा सित। ताः सत्वं वृत्रहं जिह् वस्वस्मभ्यमाभर। अग्ने यो नोऽभिदासंति समानो यश्च निष्ट्यः। तं वयः समिधं कृत्वा तुभ्यम्ग्नेऽपि दथ्मसि॥७॥

यो नः शपादशंपतो यश्चं नः शपंतः शपात्। उषाश्च तस्मैं निमुक्त सर्वं पाप समूहताम्। यो नः सपत्नो यो रणो मर्तोऽभिदासंति देवाः। इध्मस्येव प्रक्षायंतो मा तस्योच्छेंषि किं चन। यो मां द्वेष्टिं जातवेदो यं चाहं द्वेष्मि यश्च माम्। सर्वाङ्स्तानंग्ने सन्दंह याङ्श्चाहं द्वेष्मि ये च माम्। यो अस्मभ्यंमरातीयाद्यश्चं नो द्वेषते जनः। निन्दाद्यो अस्मान्दिप्सांच् सर्वाङ्स्तान्मंष्म्षा कुंरु। सर्शितं मे ब्रह्म सर्शितं वीर्या(१)म्बलम्ं। सर्शितं क्षत्रं में जिष्णु यस्याहमस्मिं पुरोहितः। उदेषां बाहू अतिरमुद्धर्चो अथो बलम्। क्षिणोमि ब्रह्मणाऽमित्रानुन्नंयामि स्वा(१)म् अहम्। पुनर्मनः पुनरायुर्म् आगात्पुनश्चक्षः पुनः श्रोत्रं म् आगात्पुनः प्राणः पुनराकूतं म् आगात्पुनश्चित्तं पुनराधीतं म् आगात्प वैश्वानरो मेऽदंब्यस्तनूपा अवंबाधतां दुरितानि विश्वां॥८॥

वैश्वान्राय प्रतिवेदयामो यदीनृण संङ्गरो देवतांस्। स एतान्पाशांन प्रमुचन प्रवेद स नो मुश्चातु दुरितादवद्यात्। वैश्वान्रः पर्वयान्नः प्वित्रैर्यत्संङ्गरम्भिधावांम्याशाम्। अनोजान्नमनसा याचमानो यदत्रेनो अव तत्स्वामि। अमी ये सुभगे दिवि विचृतौ नाम तारंके। प्रेहामृतंस्य यच्छतामेतद्वेद्धक्मोचनम्। विजिहीष्वं लोकान्कृधि बन्धान्मुंश्चासि बद्धंकम्। योनेरिव प्रच्युंतो गर्भः सर्वान् पृथो अनुष्व। स प्रजानन्प्रतिगृभ्णीत विद्वान्प्रजापंतिः प्रथम्जा ऋतस्यं। अस्माभिर्द्तं ज्रारसः प्रस्तादिष्ठिंन्नं तन्तुंमनुसश्चरेम॥९॥

तृतं तन्तुमन्वेके अनु सश्चरिन्त् येषां दत्तं पित्र्यमायनवत्। अबुन्ध्वेके दर्दतः प्रयच्छादातुं चेच्छुक्रवार्सः स्वर्ग एषाम्। आरंभेथामनु सर्रंभेथार समानं पन्थांमवथो घृतेनं। यद्वां पूर्वं परिविष्टुं यदुग्नौ तस्मै गोत्रायेह जायांपती सं रंभेथाम्। यदन्तरिक्षं पृथिवीमुत द्यां यन्मातरं पितरं वा जिहिश्सिम। अग्निर्मा तस्मादेनंसो गार्हंपत्य उन्नों नेषद्द्रिता यानिं चकृम। भूमिर्माताऽदितिर्नो जनित्रं भ्राताऽन्तरिक्षमभिशंस्त एनः। द्यौर्नः पिता पितृयाच्छं भेवासि जामि मित्वा मा विवित्सि लोकात्। यत्रं सुहार्दः सुकृतो मदंन्ते विहाय रोगं तन्वा(१) इ स्वायाम्। अस्रोणाङ्गेरह्नंताः स्वर्गे तत्रं पश्येम पितरंं च पुत्रम्। यदन्नमद्यनृतेन देवा दास्यन्नदांस्यनुत वा करिष्यन्। यद्देवानां चक्षुष्यागो अस्ति यदेव किं चं प्रतिजग्राहम्भिर्मा तस्मादनृणं कृणोतु। यदन्नमिद्रा बहुधा विरूपं वासो हिरंण्यमुत गामुजामविम्। यद्देवानां चक्षुष्यागो अस्ति यदेव किं च प्रतिजग्राहमग्निर्मा तस्मीदनृणं कृणोतु। यन्मयां मनसा वाचा कृतमेनीः कदाचन। सर्वस्मात्तस्मान्मेळितो मोग्धि त्वर हि वेत्थं यथात्थम्॥१०॥

[٤]

वातंरशना ह वा ऋषंयः श्रम्णा ऊर्ध्वमंन्थिनो

बंभूवुस्तानृषंयोऽर्थमांय्इस्ते निलायंमचर्इस्तेऽनुंप्रविशः कूश्माण्डानि ताइस्तेष्वन्वंविन्दञ्छूद्धयां च तपंसा च तानृषंयोऽब्रुवन्कथा निलायं चर्थेति त ऋषींनब्रुवृत्तमां वोऽस्तु भगवन्तोऽस्मिन्धांमि केनं वः सपर्यामेति तानृषंयोऽब्रुवन्पवित्रं नो ब्रूत् येनारेपसं स्यामेति त एतानि सूक्तान्यंपश्यन् यद्देवा देवहळेनं यददीं व्यत्रृणमृहं बुभूवऽऽयुंष्टे विश्वतो दधदित्येतराज्यं जुहुत वश्वान्राय प्रतिवेदयाम् इत्युपंतिष्ठत् यदवींचीन्मेनो भ्रूणहृत्यायास्तस्मान्मोक्ष्यध्व इति त एतर्रजुहवुस्तेऽरेपसोऽभवन्कर्मादिष्वेतैर्जुहयात्पूतो देवलोकान्त्समंश्र्ते॥११॥

[0]

कूश्माण्डेर्जुहुयाद्योऽपूंत इव मन्यंत यथाँ स्तेनो यथाँ भूणहैवमेष भंवति योऽयोनौ रेतः सिश्चित यदंर्वाचीनमेनौ भूणहृत्यायास्तस्मान्मुच्यते यावदेनो दीक्षामुपैति दीक्षित एतैः संतित जुंहोति संवत्स्रं दीक्षितो भंवति संवत्स्रादेवऽऽत्मानं पुनीते मासं दीक्षितो भंवति यो मासः स संवत्स्रः संवत्स्रादेवऽऽत्मानं पुनीते चतुंर्विश्शिति रात्रीदीक्षितो भंवति चतुंर्विश्शिति रात्रीदीक्षितो भंवति चतुंर्विश्शिति द्वादंश्य रात्रीदीक्षितो भंवति द्वादंश्य मासाः संवत्स्रः संवत्स्यः संवत्स्रः संवत्स्रः संवत्स्यः संवत्स्यः संवत्स्यः संवत्स्यः संवत्स्यः संवत्यः संवत्स्यः संवत्यः स

भंवति षड्वा ऋतवंः संवत्सरः संवत्सरादेवऽऽत्मानं पुनीते तिस्रो रात्रींदीक्षितो भंवति त्रिपदां गायत्री गांयत्रिया एवऽऽत्मानं पुनीते न मार्समंश्रीयात्र स्त्रियमुपंयात्रोपर्यासीत् जुगुंप्सेतानृंतात्पयौ ब्राह्मणस्यं वृतं यंवागू रांजन्यंस्यामिक्षा वैश्यस्याथों सौम्येप्यंध्वर एतद्वतं ब्रूंयाद्यदि मन्यंतोपदस्यामीत्योदनं धानाः सक्तं घृतमित्यनुंव्रतयेदात्मनोऽनुंपदासाय॥१२॥

[2]

अजान् हु वै पृश्नी इंस्तप्स्यमांनान् ब्रह्मं स्वयम्भ्वंभ्यानंर्ष्त ऋषंयोऽभवन्तद्दर्षीणामृषित्वं तां देवतामुपितिष्ठन्त यज्ञकांमास्त एतं ब्रह्मय्ज्ञमंपश्यन्तमाहंर्न्तेनांयजन्त् यद्द्योऽध्यगीषत् ताः पर्यआहुतयो देवानांमभवन् यद्यजूईषि घृताहुंतयो यत्सामांनि सोमांहुतयो यद्यविक्षिरसो मध्यांहुतयो यद्ग्राह्मणानीतिहासान् पुराणानि कल्पान्गाथां नाराश्र सीर्मेदाहुतयो देवानांमभवन्ताभिः क्षुधं पाप्मान्मपांघन्नपह देवाः स्वर्गं लोकमांयन् ब्रह्मणः सायुंज्यमृषंयोऽगच्छन्॥१३॥

पश्च वा एते मंहायज्ञाः संतिति प्रतायन्ते सतिति सन्तिष्ठन्ते देवयज्ञः पितृयज्ञो भूतयज्ञो मंनुष्ययज्ञो ब्रह्मयज्ञ इति यदुग्नौ जुहोत्यपि समिधं तद्देवयज्ञः सन्तिष्ठते यत्पितृभ्यः स्वधा करोत्यप्यपस्तित्पंतृयुज्ञः सन्तिष्ठते यद्भूतेभ्यो बुलि ५ हरंति तद्भंतयज्ञः सन्तिष्ठते यद्गाँह्मणेभ्योऽत्रं ददांति तन्मनुष्ययुज्ञः सन्तिष्ठते यत्स्वाध्यायमधीयीतैकामप्यृचं यजुः सामं वा तद्वंह्मयुज्ञः सन्तिष्ठते यद्दचोऽधीते पर्यसः कूल्यां अस्य पितृन्त्स्वधा अभिवंहन्ति यद्यजूरंषि घृतस्यं कूल्या यत्सामानि सोमं एभ्यः पवते यदर्थवीङ्गिरसो मधौः कूल्या यद्ग्रौह्मणानीतिहासान् पुराणानि कल्पान्गाथां नाराश १ सीर्मे दंसः कूल्यां अस्य पितृन्त्स्वधा अभिवंहन्ति यद्योऽधींते पर्यआहुतिभिरेव तद्देवां इस्तंपयिति यद्यजू ईषि घृताहुंतिभियंत्सामानि सोमांहुतिभियंदथंवाङ्गिरसो मध्वां-हतिभिर्यद्वाँह्मणानीतिहासान् पुराणानि कल्पान्गार्था नाराशृ रसीर्में दाहुतिभिरेव तद्देवा इस्तर्पयित त एनं तृप्ता आयुंषा तेर्जसा वर्चसा श्रिया यशंसा ब्रह्मवर्चसेनान्नाद्येन च तर्पयन्ति॥१४॥

[१०]

ब्रह्मयज्ञेनं यक्ष्यमांणः प्राच्यां दिशि ग्रामादछंदिर्द्रश उदींच्यां प्रागुदीच्यां वोदितं आदित्ये दंक्षिणत उपवीयोपविश्य हस्तांवविनज्य त्रिराचांमेद्दिः पंरिमृज्यं सकृदुंपस्पृश्य शिर्श्वक्षंषी नासिंके श्रोत्रे हृदंयमालभ्य यत्रिराचामंति तेन ऋचः प्रीणाति यद्दिः पंरिमृजंति तेन यजू हिष् यत्सकृदुंपस्पृशंति तेन सामांनि यत्सव्यं पाणिं पादौ

प्रोक्षित् यच्छिर्श्वक्षुंषी नासिके श्रोत्रे हृदंयमालभंते तेनाथंवाङ्गिरसौ ब्राह्मणानीतिहासान् पुंराणानि कल्पान्गाथां नाराश १ सी: प्रींणाति दर्भाणां मृहदुंपुस्तीर्योपस्थं कृत्वा प्राङासीनः स्वाध्यायमधीयीतापां वा एष ओषंधीना रसो यदर्भाः सरंसमेव ब्रह्मं कुरुते दक्षिणोत्त्रौ पाणी पादौ कृत्वा सपवित्रावोमिति प्रतिपद्यत एतद्वै यर्जुस्त्रयीं विद्यां प्रत्येषा वागेतत्परममक्षरं तदेतदचा ऽभ्युंक्तमृचो अक्षरे परमे व्योमन् यस्मिन्देवा अधि विश्वे निषेदुर्यस्तन्न वेद किमृचा केरिष्यति य इत्तद्विदुस्त इमे समासत इति त्रीनेव प्रायुंङ्क भूर्भुवः स्वंरित्यांहैतद्वे वाचः सत्यं यदेव वाचः सत्यं तत्प्रायुङ्गार्थं सावित्रीं गांयत्रीं त्रिरन्वांह पच्छौं ऽर्धर्चशो ऽनवान १ संविता श्रियंः प्रसविता श्रियंमेवऽऽप्रोत्यथौं प्रज्ञातंयैव प्रंतिपदा छन्दा ५सि प्रतिपद्यते॥१५॥

—[११]

ग्रामे मनंसा स्वाध्यायमधीयीत दिवा नक्तं वेति हं स्माऽऽह शौच आँह्रेय उतारंण्येऽबलं उत वाचोत तिष्ठं तुत व्रजं तुताऽऽसींन उत शयां नोऽधीयीतैव स्वाध्यायं तपंस्वी पुण्यो भवति य पुवं विद्वान्त्स्वाध्यायमधीते नमो ब्रह्मणे नमो अस्त्वग्रये नमः पृथिव्यै नम् ओषंधीभ्यः। नमो वाचे नमो वाचस्पतं ये नमो विष्णं वे बृहते कंरोमि॥१६॥ मध्यन्दिने प्रबल्मधीयीतासौ खलु वावैष आंदित्यो यद्वाँह्मणस्तस्मात्तर्हि तेऽक्ष्णिष्ठं तपति तदेषाऽभ्युंक्ता। चित्रं देवानामुदंगादनींकं चक्षुंर्मित्रस्य वर्रुणस्याग्नेः। आऽप्रा द्यावांपृथिवी अन्तरिक्षः सूर्यं आत्मा जगंतस्तस्थुषश्चेति स वा एष यज्ञः सद्यः प्रतायते सद्यः सन्तिष्ठते तस्य प्राक् सायमंवभृथो नमो ब्रह्मण इति परिधानीयां त्रिरन्वांहाप उंपस्पृश्यं गृहानेति ततो यत्किं च ददांति सा दक्षिणा॥१७॥

तस्य वा पुतस्यं युज्ञस्य मेघों हिवधीनं विद्युदिग्निर्वर्ष १ हिवः स्तंनियत्नुर्वेषद्वारो यदंवस्फूर्जित सोऽनुंवषद्वारो वायुरात्माऽमावास्यां स्विष्टकृद्य एवं विद्वान्मेघे वर्षति विद्योतंमाने स्तनयंत्यवस्फूर्जिति पवंमाने वायावंमावास्यांया इ स्वाध्यायमधीते तपं एव तत्तंप्यते तपों हि स्वाध्याय इत्युंत्तमं नाक रे रोहत्युत्तमः संमानानां भवति यावन्तर ह वा इमां वित्तस्यं पूर्णां ददंत्स्वर्गं लोकं जयित तार्वन्तं लोकं जयित् भ्या र सं चाक्षय्यं चापं पुनर्मृत्युं जयित ब्रह्मणः सायुज्यं गच्छति॥१८॥

तस्य वा पुतस्यं युज्ञस्य द्वावंनध्यायौ यदात्माऽशुचियंद्देशः समृद्धिर्देवतानि य एवं विद्वान्मंहारात्र उषस्युदिते व्रजङ्स्तिष्ठन्नासीनः शयानोऽरण्ये ग्रामे वा यावंत्तरसङ्

स्वाध्यायमधीते सर्वां ह्याँका अयित सर्वां ह्याँका नेनृणोऽनु-सश्चरित तदेषाभ्यंक्ता। अनुणा अस्मिन्नेनुणाः परिस्मि -स्तृतीर्यं लोके अनुणाः स्याम। ये देवयानां उत पितृयाणाः सर्वांन्पथो अनृणा आक्षीयेमेत्यग्निं वै जातं पाप्मा जंग्राह तं देवा आहुंतीभिः पाप्मानमपाँघ्रत्राहुंतीनां युज्ञेनं युज्ञस्य दक्षिणाभिदिक्षिणानां ब्राह्मणेन ब्राह्मणस्य छन्दोभिश्छन्दसाइ स्वाध्यायेनापंहतपाप्मा स्वाध्यायो देवपंवित्रं वा एतत्तं योऽनूत्सृजत्यभागो वाचि भवत्यभागो नाके तदेषाऽभ्यंका। यस्तित्याजं सिख्विद्र सर्खायं न तस्यं वाच्यपि भागो अस्ति। यदी १ शृणोत्यलक १ शृणोति न हि प्रवेदं सुकृतस्य पन्थामिति तस्मौत्स्वाध्यायोऽध्येतव्यो यं यं ऋतुमधीते तेनं तेनास्येष्टं भंवत्यभ्रेवीयोरांदित्यस्य सायुंज्यं गच्छति तदेषाऽभ्यंक्ता। ये अविङ्गत वा पुराणे वेदं विद्वा रसंम्भिती वदन्त्यादित्यमेव ते परिंवदन्ति सर्वे अग्निं द्वितीयं तृतीयंं च हर्समिति यावंतीवें देवतास्ताः सर्वा वेदविदिं ब्राह्मणे वंसन्ति तस्माद्भाह्मणेभ्यों वेदविद्धों दिवे दिवे नमंस्कुर्यान्नाश्चीलं कींर्तयेदेता एव देवताः प्रीणाति॥१९॥

रिच्यंत इव वा एष प्रेव रिच्यते यो याजयंति प्रतिं वा गृह्णाति याजयित्वा प्रतिगृह्य वाऽनंश्वन्निः स्वाध्यायं वेदमधीयीत त्रिरात्रं वां सावित्रीं गांयत्रीम्नवातिरेचयित वरो

दक्षिणा वरेणैव वरई स्पृणोत्यात्मा हि वरः॥२०॥

१६

दुहे हु वा एष छन्दा रेसि यो याजयंति स येन यज्ञकृतुना याजयेत्सोऽरंण्यं प्रेत्यं शुचौ देशे स्वाध्यायमेवेन्मधीयन्नासीत तस्यानशंनं दीक्षा स्थानम्पसद आसंन स्तृत्या वाग्जुहूर्मनं उप्भृद्धृतिर्ध्रुवा प्राणो ह्विः सामाध्वर्यः स वा एष यज्ञः प्राणदंक्षिणोऽनन्तदक्षिणः समृद्धतरः॥२१॥

[69]

कृतिधावंकीणीं प्रविशितं चतुर्धेत्यांहुर्ब्रह्मवादिनों मुरुतंः प्राणेरिन्द्रं बलेन् बृह्स्पतिं ब्रह्मवर्चसेनाग्निमेवेतरेण सर्वेण तस्यैतां प्रायंश्चित्तिं विदां चंकार सुदेवः कांश्यपो यो ब्रह्मचार्यविकरेदमावास्यायाः रात्र्यांमिग्ने प्रणीयोपसमाधाय द्विराज्यंस्योपघातं जुहोति कामावंकीणीऽस्म् काम् कामाय स्वाहा कामाभिद्रुग्धोऽस्म्यभिद्रुग्धोऽस्मि काम् कामाय स्वाहेत्यमृतं वा आज्यंममृतंमेवऽऽत्मन्धंते हुत्वा प्रयंताञ्चलिः कवांतिर्यङ्काग्निमभिन्न्नयेत् सं माऽयम्ग्निः सिश्चत्वायंषा च बलेन् चऽऽयंष्मन्तं करोत् मित्र प्रति हास्मे मुरुतः प्राणान्दंधित् प्रतीन्द्रो बलं प्रति वृह्स्पतिं इह्मा मुरुतः प्राणान्दंधित् प्रतीन्द्रो बलं प्रति वृह्स्पतिं इह्मा मुरुतः स्राणान्दंधित् प्रतीन्द्रो बलं प्रति वृह्स्पतिं इह्मा मुरुतः प्राणान्दंधित् प्रतीन्द्रो बलं प्रति वृह्स्पतिं इह्मा मुरुतः प्राणान्दंधित् प्रतीन्द्रो बलं प्रति वृह्स्पतिं इह्मा मुरुतः प्रति वृह्स्पतिं इह्मा मुरुतः प्राणान्दंधित् प्रतीन्द्रो बलं प्रति वृह्स्पतिं इह्मा मुरुतः प्रत्यग्निरितर्त्सर्वः सर्वतनुर्भूत्वा

सर्वमायुरिति त्रिर्भिमंत्रयेत् त्रिषंत्या हि देवा योऽपूंत इव मन्येत् स इत्थं जुंहुयादित्थम्भिमंत्रयेत् पुनीत एवऽऽत्मान्मायुरेवऽऽत्मन्धंत्ते वरो दक्षिणा वरेणैव वरई स्पृणोत्यात्मा हि वरंः॥२२॥

[3 \]

भूः प्रपंद्ये भुवः प्रपंद्ये स्वंः प्रपंद्ये भूभुवः स्वंः प्रपंद्ये ब्रह्म प्रपंद्ये ब्रह्मकोशं प्रपंद्येऽमृतं प्रपंद्येऽमृतकोशं प्रपंद्ये चतुर्जालं ब्रह्मकोशं यं मृत्युर्नावपश्यति तं प्रपद्ये देवान् प्रपद्ये देवपुरं प्रपंद्ये परीवृतो वरीवृतो ब्रह्मणा वर्मणा ८ हं ते जंसा कश्यंपस्य यस्मै नमुस्तिच्छिरो धर्मो मूर्धानं ब्रह्मोत्तरा हर्नुर्युज्ञोऽधरा विष्णुर्हृदेय संवत्सरः प्रजननमिश्वनौ पूर्वपादांवित्रर्मध्यं मित्रावरुणावपरपादांवग्निः पुच्छंस्य प्रथमं काण्डं तत इन्द्रस्ततः प्रजापंतिरभयं चतुर्थः स वा एष दिव्यः शांकरः शिशुंमार्स्त ह य एवं वेदापं पुनर्मृत्युं जयित जयित स्वर्गं लोकं नाध्वनि प्रमीयते नाप्सु प्रमीयते नाग्नौ प्रमीयते नानपत्यः प्रमीयते लुघ्वान्नो भवति ध्रुवस्त्वमंसि ध्रुवस्य क्षितमसि त्वं भूतानामधिपतिरसि त्वं भूताना । श्रेष्ठोऽसि त्वां भूतान्युपं पूर्यावर्तन्ते नमस्ते नमः सर्वं ते नमो नमः शिशुकुमाराय नमं:॥२३॥

नमः प्राच्ये दिशे याश्चं देवतां एतस्यां प्रतिवसन्त्येताभ्यंश्च नमो नमो दक्षिणायै दिशे याश्चं देवतां एतस्यां प्रतिवसन्त्येताभ्यंश्च नमो नमः प्रतीच्ये दिशे याश्चं देवतां एतस्यां प्रतिवसन्त्येताभ्यंश्च नमो नम् उदींच्ये दिशे याश्चं देवतां एतस्यां प्रतिवसन्त्येताभ्यंश्च नमो नमं ऊर्ध्वाये दिशे याश्चं देवतां एतस्यां प्रतिवसन्त्येताभ्यंश्च नमो नमोऽधंराये दिशे याश्चं देवतां एतस्यां प्रतिवसन्त्येताभ्यंश्च नमो नमोऽवान्त्राये दिशे याश्चं देवतां एतस्यां प्रतिवसन्त्येताभ्यंश्च नमो नमो गङ्गायमुनयोर्मध्ये ये वसन्ति ते मे प्रसन्नात्मानश्चिरं जीवितं वर्धयन्ति नमो गङ्गायमुनयोर्मुनिभ्यश्च नमो नमो गङ्गायमुनयोर्मुनिभ्यश्च नमः॥२४॥

-[२०]

ॐ नमो ब्रह्मणे नमों अस्त्वग्नये नमंः पृथिव्यै नम् ओषंधीभ्यः। नमों वाचे नमों वाचस्पतंये नमो विष्णंवे बृह्ते कंरोमि॥

॥ॐ शान्तिः शान्तिः शान्तिः॥

॥ तृतीयः प्रश्नः॥

| स्वस्तिरंस्तु नः। स्वस्तिर्मानुषेभ्यः। ऊर्ध्वं जिगातु भेषजम्। शं नो अस्तु द्विपदें। शं चतुंष्पदे। ॐ शान्तिः शान्तिः शान्तिः। चित्तिः स्रुक्। चित्तमाज्यम्। वाग्वेदिः। आधीतं ब्र्हिः। केते अग्निः। विज्ञांतमृग्निः। वाक्पंतिर्होतां। मनं उपवृक्ता। प्राणे हृविः। सामाध्वर्युः। वाचंस्पते विधे नामन्। विधेमं ते नामं। विधेस्त्वमस्माकं नामं। वाचस्पतिः सोमं पिबतु। आऽस्मास् नृम्णन्धात्स्वाहां॥१॥ शृष्युवं पर्वं वाराः। [१] पृथिवी होतां। द्यौरंध्वर्युः। रुद्रौंऽग्नीत्। बृह्स्पतिंरुपवृक्ता। वाचंस्पते वाचो वीर्येण। सम्भृततमेनायंक्ष्यसे। यजमानाय् वार्यम्। आसुवस्करंस्मे। वाचस्पतिः सोमं पिबतु। जजन्दिन्द्रमिन्द्रियाय स्वाहां॥२॥ शृष्युवं होत् व्यंपरः। अश्विनांऽध्वर्यू। त्वष्टाऽग्नीत्। मित्र उपवृक्ता। सोमः सोमंस्य पुरोगाः। श्रुकः श्रुकस्यं पुरोगाः। श्रातास्त इन्द्र सोमाः। वातांपरहवन्श्रुतः स्वाहां॥३॥ शृष्णिहात्। श्राः। वातांपरहवन्श्रुतः स्वाहां॥३॥ शृष्णिहात्। श्राः। वातांपरहवन्श्रुतः स्वाहां॥३॥ | |
|---|--|
| शं नो अस्तु द्विपदें। शं चतुंष्पदे। ॐ शान्तिः शान्तिः शान्तिः ॥ चित्तिः सुक्। चित्तमाज्यम्। वाग्वेदिः। आधीतं बर्हिः। केतो अग्निः। विज्ञांतम्ग्निः। वाक्पंतिर्होतां। मनं उपवृक्ता। प्राणो हृविः। सामाध्वर्युः। वाचंस्पते विधे नामन्। विधेमं ते नामं। विधेस्त्वम्स्माकं नामं। वाचस्पतिः सोमं पिबत्। आऽस्मास् नृम्णन्धात्स्वाहां॥१॥ अ्ष्युः पर्वं चाः॥ [१] पृथिवी होतां। द्यौरंध्वर्युः। रुद्रौंऽग्नीत्। बृह्स्पतिंरुपवृक्ता। वाचंस्पते वाचो वीर्येण। सम्भृंततम्नायंक्ष्यसे। यजंमानाय् वार्यम्। आसुव्स्करंस्मे। वाचस्पतिः सोमं पिबत्। ज्ञानदिन्द्रंमिन्द्रियाय स्वाहां॥२॥ पृथ्वे होत् व्यंपर॥ [२] अग्निरहोतां। अश्विनांऽध्वर्यू। त्वष्टाऽग्नीत्। मित्र उपवृक्ता। सोमः सोमंस्य पुरोगाः। श्रुकः श्रुकस्यं पुरोगाः। श्रातास्त् इन्द्र सोमाः। वातांपरहवन्श्रुतः स्वाहां॥३॥ अ्वव्रहांवाऽष्टेणश्॥ [३] | ॐ तच्छुं योरावृणीमहे। गातुं युज्ञायं। गातुं युज्ञपंतये। दैवीः |
| चित्तः सुक्। चित्तमाज्यम्। वाग्वेदिः। आधीतं बर्हः। केती अग्निः। विज्ञांतमृग्निः। वाक्पंतिर्होतां। मनं उपवृक्ता। प्राणे हृविः। सामाध्वर्युः। वाचंस्पते विधे नामन्। विधेमं ते नामं। विधेसत्वम्समाकं नामं। वाचस्पतिः सोमं पिबत्। आऽस्मास् नृम्णन्धात्स्वाहां॥१॥ अ्ष्वृतः पत्रं वाशाः [१] पृथिवी होतां। द्यौरंध्वर्युः। रुद्रौंऽग्नीत्। बृह्स्पतिंरुपवृक्ता। वाचंस्पते वाचो वीर्येण। सम्भृततम्नायंक्ष्यसे। यजमानाय् वार्यम्। आसुवस्कर्रस्मे। वाचस्पतिः सोमं पिबत्। जजन्दिन्द्रंमिन्द्रियाय स्वाहां॥२॥ पृथ्वी होता वर्षाशाः [२] अग्निर्होतां। अश्विनांऽध्वर्यू। त्वष्टाऽग्नीत्। मित्र उपवृक्ता। सोमः सोमंस्य पुरोगाः। श्रुकः श्रुकस्यं पुरोगाः। श्रातास्त इन्द्र सोमाः। वातांपेर्हवन्श्रुतः स्वाहां॥३॥ अग्निर्होताःऽष्टे॥३॥ [३] | |
| अग्निः। विज्ञांतम्गिः। वाक्पंतिरहोतां। मनं उपवृक्ता। प्राणो हृविः। सामां प्वर्युः। वाचंस्पते विधे नामन्। विधेमं ते नामं। विधेस्त्वम्समाकं नामं। वाचस्पतिः सोमं पिबत्। आऽस्मास् नृम्णन्धात्स्वाहां॥१॥ अव्यः पर्व चाः॥ [१] पृथिवी होतां। द्यौरं प्वर्युः। रुद्रौं ऽग्नीत्। बृह्स्पतिं रुपवृक्ता। वाचंस्पते वाचो वीर्येण। सम्भृततमेनायंक्ष्यसे। यजंमानाय् वार्यम्। आसुवस्करंस्मे। वाचस्पतिः सोमं पिबत्। जजन्दिन्द्रंमिन्द्रियाय स्वाहां॥२॥ पृथ्वो होता वर्षाः॥ [२] अग्निर्होतां। अश्विनां ऽप्वर्यू। त्वष्टा ऽग्नीत्। मित्र उपवृक्ता। सोमः सोमंस्य पुरोगाः। शुकः शुक्रस्यं पुरोगाः। श्रातास्त इन्द्र सोमाः। वातांपेर्हवन्श्रुतः स्वाहां॥३॥ अग्निहांत् उष्टोण्याः॥ [३] | श नो अस्तु द्विपदे। श चतुष्पदे। ॐ शान्तिः शान्तिः शान्तिः॥ |
| ह्विः। सामाध्वर्युः। वाचंस्पते विधे नामन्। विधेमं ते नामं। विधेस्त्वम्समाकं नामं। वाचस्पतिः सोमं पिबत्। आऽस्मास् नृम्णन्थात्स्वाहाँ॥१॥ अव्यंः पर्वं चाः॥ [१] पृथिवी होताँ। द्यौरेध्वर्युः। रुद्रौंऽग्नीत्। बृह्स्पतिंरुपवृक्ताः। वाचंस्पते वाचो वीर्येण। सम्भृंततमेनायंक्ष्यसे। यजंमानाय् वार्यम्। आसुवस्करंस्मे। वाचस्पतिः सोमं पिबत्। ज्जन्दिन्द्रंमिन्द्रियाय स्वाहाँ॥२॥ पृथ्वी होता वर्याः। [२] अग्निर्होतां। अश्विनांऽध्वर्यू। त्वष्टाऽग्नीत्। मित्र उपवृक्ताः। सोमः सोमंस्य पुरोगाः। श्रुकः श्रुकस्यं पुरोगाः। श्रातास्त इन्द्र सोमाः। वातांपेर्हवन्श्रुतः स्वाहाँ॥३॥ अग्निर्होत्।ऽष्टो॥३॥ [३] | चित्तिः सुक्। चित्तमाज्यम्। वाग्वेदिः। आधीतं ब्र्हिः। केतो |
| विधेस्त्वम्समाकं नामं। वाचस्पतिः सोमं पिबत्। आऽस्मास् नृम्णन्धात्स्वाहाँ॥१॥ अ्ष्युः पर्व चारा॥ [१] पृथिवी होताँ। द्यौरेध्वर्युः। रुद्रौंऽग्नीत्। बृह्स्पतिरुपवक्ता। वाचंस्पते वाचो वीर्येण। सम्भृततमेनायंक्ष्यसे। यजमानाय् वार्यम्। आसुवस्करंस्मे। वाचस्पतिः सोमं पिबत्। ज्जनदिन्द्रमिन्द्रियाय स्वाहाँ॥२॥ पृथ्वी होत् वर्षारा॥ [२] अग्निरहोताँ। अश्विनाँऽध्वर्यू। त्वष्टाऽग्नीत्। मित्र उपवक्ता। सोमः सोमंस्य पुरोगाः। शुक्रः शुक्रस्यं पुरोगाः। श्रातास्त इन्द्र सोमाँः। वातांपेर्हवन्श्रुतः स्वाहाँ॥३॥ अग्निर्होत्।ऽष्टो॥३॥ [३] | |
| नृम्णन्धात्स्वाहाँ॥१॥ अव्युः पश्चं चाः॥ पृथिवी होताँ। द्यौरंध्वर्युः। रुद्रौंऽग्नीत्। बृह्स्पतिरुपवृक्ता। वार्चस्पते वाचो वीर्येण। सम्भृततमेनायंक्ष्यसे। यजमानाय् वार्यम्। आसुव्स्करंस्मे। वाचस्पतिः सोमं पिबतु। जजन्दिन्द्रंमिन्द्रियाय स्वाहाँ॥२॥ पृथ्वी होत् वर्षा।२॥ (२) अग्निर्होत्। अश्विनाँऽध्वर्यू। त्वष्टाऽग्नीत्। मित्र उपवृक्ता। सोमः सोमंस्य पुरोगाः। शुक्तः शुक्रस्यं पुरोगाः। श्रातास्त इन्द्र सोमाः। वातांपेर्हवन्श्रुतः स्वाहाँ॥३॥ अग्निर्होत्।ऽष्टो॥३॥ [३] | |
| पृथिवी होताँ। द्यौरेष्वर्युः। रुद्रौंऽग्नीत्। बृह्स्पतिरुपवृक्ता। वार्चस्पते वाचो वीर्येण। सम्मृततमेनायंक्ष्यसे। यजंमानाय वार्यम्। आसुवस्करंस्मे। वाचस्पतिः सोमं पिबतु। जजनदिन्द्रमिन्द्रियाय स्वाहाँ॥२॥ पृथिवी होता द्यांगर॥ [२] अग्निर्होताँ। अश्विनाँऽध्वर्यू। त्वष्टाऽग्नीत्। मित्र उपवृक्ता। सोमः सोमंस्य पुरोगाः। शुक्रः शुक्रस्यं पुरोगाः। श्रातास्त इन्द्र सोमाः। वातांपेर्हवनृश्रुतः स्वाहाँ॥३॥ अग्निहाँत्उष्टौ॥३॥ [३] | विधेस्त्वमुस्माकुं नामं। वाचस्पतिः सोमं पिबतु। आऽस्मास् |
| पृथिवी होताँ। द्यौरंध्वर्युः। रुद्रौंऽग्नीत्। बृह्स्पतिरुपवृक्ता। वार्चस्पते वाचो वीर्येण। सम्भृततमेनायंक्ष्यसे। यजंमानाय् वार्यम्। आसुव्स्करंस्मे। वाचस्पतिः सोमं पिबत्। जजनदिन्द्रंमिन्द्रियाय स्वाहाँ॥२॥ पृथिवी होता वर्षा।२॥ पृथिवी होता वर्षा।२॥ पृथिवी होता वर्षा।२॥ पृथिवी होता वर्षा।२॥ (२) अग्निर्होताँ। अश्विनाँऽध्वर्यू। त्वष्टाऽग्नीत्। मित्र उपवृक्ता। सोमः सोमस्य पुरोगाः। शुक्रः शुक्रस्य पुरोगाः। श्रातास्त इन्द्र सोमाँः। वातांपेर्हवन्श्रुतः स्वाहाँ॥३॥ अग्निहाँताऽष्टो॥३॥ [३] | नृम्णन्धात्स्वाहाँ॥१॥ |
| वार्चस्पते वाचो वीर्येण। सम्मृततम्नायंक्ष्यसे। यजंमानाय् वार्यम्। आसुवस्करंस्मे। वाचस्पतिः सोमं पिबत्। जजन्दिन्द्रंमिन्द्रियाय स्वाहाँ॥२॥ पृथ्वा होता वर्षायाः [२] अग्निरहोताँ। अश्विनाँऽध्वर्यू। त्वष्टाऽग्नीत्। मित्र उपवक्ता। सोमः सोमंस्य पुरोगाः। शुक्रः शुक्रस्यं पुरोगाः। श्रातास्त इन्द्र सोमाः। वातांपेर्हवनश्रुतः स्वाहाँ॥३॥ अग्निहाँताऽष्टो॥३॥ | अ्ष्वर्युः पश्चं च॥१॥———[१] |
| वार्यम्। आसुवस्करंस्मे। वाचस्पतिः सोमं पिबत्। जजन्दिन्द्रंमिन्द्रियाय स्वाहाँ॥२॥ पृथ्वी होता वर्गाराम [२] अग्निरहोताँ। अश्विनाँऽध्वर्यू। त्वष्टाऽग्नीत्। मित्र उपवक्ता। सोमः सोमस्य पुरोगाः। शुक्रः शुक्रस्यं पुरोगाः। श्रातास्त इन्द्र सोमाः। वातांपेर्हवनृश्रुतः स्वाहाँ॥३॥ अग्निहाँताऽष्टी॥३॥ [३] | पृथिवी होतां। द्यौरंध्वर्युः। रुद्रौंऽग्नीत्। बृह्स्पतिंरुपवृक्ता। |
| ज्जन्दिन्द्रंमिन्द्रियाय स्वाहाँ॥२॥ पृथ्वा होता दर्शा । [२] अग्निरहोताँ। अश्विनाँ ऽध्वर्यू। त्वष्टा ऽग्नीत्। मित्र उपवक्ता। सोमः सोमंस्य पुरोगाः। शुक्रः शुक्रस्यं पुरोगाः। श्रातास्त इन्द्र सोमाः। वातांपेर्हवन्श्रुतः स्वाहाँ॥३॥ अग्निहींता ऽष्टो॥३॥ [३] | वार्चस्पते वाचो वीर्येण। सम्भृततम्नायंक्ष्यसे। यजमानाय् |
| पृथिवी होता वर्ष।२॥———————————————————————————————————— | वार्यम्। आसुवस्करंस्मै। वाचस्पतिः सोमं पिबतु। |
| अग्निर्होतां। अश्विनांऽध्वर्यू। त्वष्टाऽग्नीत्। मित्र उंपवृक्ता। सोमः सोमंस्य पुरोगाः। शुक्तः शुक्तस्यं पुरोगाः। श्रातास्तं इन्द्र सोमाः। वातांपेर्हवनृश्रुतः स्वाहां॥३॥ अग्निहांताऽष्टो॥३॥ [३] | जुजन्दिन्द्रंमिन्द्रियाय स्वाहाँ॥२॥ |
| सोमः सोमस्य पुरोगाः। शुक्रः शुक्रस्य पुरोगाः। श्रातास्त इन्द्र सोमाः। वातांपेर्हवनृश्रुतः स्वाहां॥३॥ अमिहत्त्वाऽष्टो॥३॥ [3] | पृथिवी होता दशं॥२॥————[२] |
| इन्द्रं सोमाः। वातापर्हवन्श्रुतः स्वाहा॥३॥ अभिहत्त्ताऽष्टो॥३॥ [३] | अग्निर्होताँ। अश्विनाँऽध्वर्यू। त्वष्टाऽग्नीत्। मित्र उंपवृक्ता। |
| इन्द्रं सोमाः। वातापर्हवन्श्रुतः स्वाहा॥३॥ अभिहत्त्ताऽष्टो॥३॥ [३] | सोमः सोमंस्य पुरोगाः। शुक्रः शुक्रस्यं पुरोगाः। श्रातास्त |
| | |
| सूर्यं ते चक्षुंः। वातं प्राणः। द्यां पृष्ठम्। अन्तरिक्षमात्मा। | अभिर्होताऽष्टो॥३॥———[3] |
| • | सूर्यं ते चक्षुः। वातं प्राणः। द्यां पृष्ठम्। अन्तरिक्षमात्मा। |

स प्रंतिष्ठा॥७॥

अङ्गैर्यज्ञम्। पृथिवी १ शरीरैः। वाचंस्पृतेऽच्छिंद्रया वाचा। अच्छिंद्रया जुह्नां। दिवि देवावृध् होत्रा मेरंयस्व स्वाहां॥४॥

| सूर्यं ते नवं॥४॥ [४] |
|---|
| मुहाहंवि्रहोतां। सृत्यहंविरध्वर्युः। अच्युंतपाजा अग्नीत्। |
| अच्युंतमना उपवृक्ता। अना्धृष्यश्चौप्रतिधृष्यश्चं युज्ञस्यांभिग्रौ |
| अयास्यं उद्गाता। वाचंस्पते हृद्विधे नामन्। विधेमं ते नामं। |
| विधेस्त्वमुस्माकुं नामं। वाचस्पतिः सोमंमपात्। म |
| दैव्यस्तन्तुश्छेदि मा मंनुष्यंः। नमों दिवे। नमंः पृथिव्यै |
| स्वाहाँ॥ ५ ॥ |
| अपात्रीणिं च॥५॥————[५] |
| वाग्घोताँ। दीक्षा पत्नीं। वातौंऽध्वर्युः। आपोंऽभिगुरः। मने |
| हविः। तपंसि जुहोमि। भूर्भुवः सुवैः। ब्रह्मं स्वयम्भु। ब्रह्मंणे |
| - स्वयम्भुवे स्वाहाँ॥६॥ |
| वाग्घोता नवं॥६॥————[६] |
| ब्राह्मण एकंहोता। स युज्ञः। स में ददातु प्रजां पुशून्पुष्टि |
| यशंः। यज्ञश्चं मे भूयात्। अग्निर्द्धिहोता। स भूर्ता। स मे ददातु |
| प्रजां पश्र्न्युष्टिं यशंः। भर्ता चं मे भूयात्। पृथिवी त्रिहोता। |
| |

स में ददातु प्रजां प्रशून्पृष्टिं यशः। प्रतिष्ठा चं मे भूयात्। अन्तरिक्षं चतुरहोता। स विष्ठाः। स में ददातु प्रजां प्रशून्पृष्टिं यशंः। विष्ठाश्चं मे भूयात्। वायुः पश्चंहोता। स प्राणः। स में ददातु प्रजां पुशून्पुष्टुं यशंः। प्राणश्चं मे भूयात्॥८॥

चन्द्रमाः षड्ढांता। स ऋतून्कंल्पयाति। स में ददातु प्रजां पृशून्पृष्टिं यशः। ऋतवंश्च मे कल्पन्ताम्। अन्नर्रं स्प्तहोता। स प्राणस्यं प्राणः। स में ददातु प्रजां पृशून्पृष्टिं यशः। प्राणस्यं च मे प्राणो भूयात्। द्यौरष्टहोता। सोऽनाधृष्यः॥९॥

स में ददातु प्रजां प्शून्पृष्टिं यशंः। अनाधृष्यश्चं भूयासम्। आदित्यो नवहोता। स तेजस्वी। स में ददातु प्रजां पृशून्पृष्टिं यशंः। तेजस्वी चं भूयासम्। प्रजापंतिर्दशहोता। स इदश् सर्वम्। स में ददातु प्रजां पृशून्पृष्टिं यशंः। सर्वं च मे भूयात्॥१०॥

प्रतिष्ठा प्राणश्चं मे भूयादनाधृष्यः सर्वं च मे भूयात्॥७॥—————[$oldsymbol{9}$]

अग्निर्यर्जुर्भिः। स्विता स्तोमैः। इन्द्रं उक्थाम्दैः। मित्रावरुणावाशिषाः। अङ्गिरसो धिष्णियेरग्निभिः। म्रुतंः सदोहविर्धानाभ्याम्। आपः प्रोक्षणीभिः। ओषंधयो ब्र्हिषाः। अदितिर्वेद्याः। सोमो दीक्षयाः॥११॥

त्वष्टेध्मेनं। विष्णुंर्यज्ञेनं। वसंव आज्येंन। आदित्या दक्षिणाभिः। विश्वें देवा ऊर्जा। पूषा स्वंगाकारेणं। बृह्स्पतिः पुरोधयां। प्रजापंतिरुद्गीथेनं। अन्तरिक्षं प्वित्रेण। वायुः पात्रैः। अहङ् श्रद्धयां॥१२॥

<u>[</u>[८]

सेनेन्द्रंस्य। धेना बृह्स्पतेः। पृत्थ्यां पूष्णः। वाग्वायोः। दीक्षा सोमंस्य। पृथिव्यंग्नेः। वसूनां गायत्री। रुद्राणां त्रिष्टुक्। आदित्यानां जगती। विष्णोरनुष्टुक्॥१३॥

वर्रणस्य विराट्। यज्ञस्यं पृङ्किः। प्रजापंतरनुंमितिः। मित्रस्यं श्रुद्धा। स्वितुः प्रसूंतिः। सूर्यस्य मरीचिः। चन्द्रमंसो रोहिणी। ऋषीणामरुन्धती। पूर्जन्यस्य विद्युत्। चतंस्रो दिशः। चतंस्रोऽवान्तरिष्याः। अहंश्च रात्रिश्च। कृषिश्च वृष्टिश्च। त्विष्श्चापंचितिश्च। आपृश्चौषंधयश्च। ऊर्क सूनृतां च देवानां पत्नयः॥१४॥

अनुष्टुग्दिशः षद्वं॥९॥———[९]

देवस्यं त्वा सिवृतुः प्रंस्वे। अश्विनौंर्बाहुभ्यांम्। पूष्णो हस्तांभ्यां प्रतिगृह्णामि। राजां त्वा वरुणो नयतु देवि दक्षिणेऽग्नये हिरण्यम्। तेनांमृत्त्वमंश्याम्। वयो दात्रे। मयो मह्यंमस्तु प्रतिग्रहीत्रे। क इदं कस्मां अदात्। कामः कामांय। कामो दाता॥१५॥

कामंः प्रतिग्रहीता। कामं समुद्रमाविंश। कामंन त्वा प्रतिगृह्णामि। कामैतत्ते। एषा ते काम् दक्षिणा। उत्तानस्त्वाङ्गीर्सः प्रतिगृह्णातु। सोमाय वासंः। रुद्राय गाम्। वरुणायाश्वम्। प्रजापंतये पुरुषम्॥१६॥

मनंवे तल्पम्। त्वष्ट्रेऽजाम्। पूष्णेऽविम्। निर्ऋत्या

अश्वतरगर्दभौ। हिमवंतो हुस्तिनम्। गुन्धुर्वाप्सराभ्यः स्रगलं कर्णे। विश्वेभ्यो देवेभ्यो धान्यम्। वाचेऽन्नम्। ब्रह्मण ओदनम्। सुमुद्रायापः॥१७॥

उत्तानायाँङ्गीर्सायानंः। वैश्वान्राय रथम्ं। वैश्वान्रः प्रव्नथा नाकमारुहत्। दिवः पृष्ठं भन्दंमानः सुमन्मंभिः। स पूर्ववञ्चनयंञ्चन्तवे धनम्। समानमंज्मा परियाति जागृंविः। राजाँ त्वा वरुणो नयतु देवि दक्षिणे वैश्वान्राय रथम्। तेनांमृत्त्वमंश्याम्। वयो दात्रे। मयो मह्यंमस्तु प्रतिग्रहीत्रे॥१८॥

क इदं कस्मां अदात्। कामः कामांय। कामों दाता। कामः प्रतिग्रहीता। काम समुद्रमा विंश। कामेंन त्वा प्रतिगृह्णामि। कामैतत्तें। एषा तें काम् दक्षिणा। उत्तानस्त्वांङ्गीरसः प्रतिंगृह्णातु॥१९॥

दाता पुरुष्मपंः प्रतिग्रहीत्रे नवं च॥१०॥-----[१०]

सुवर्णं घर्मं परिवेद वेनम्। इन्द्रंस्यात्मानं दश्धा चरंन्तम्। अन्तः संमुद्रे मनंसा चरंन्तम्। ब्रह्मान्वंविन्द्द्दशंहोतार्मर्णं। अन्तः प्रविष्टः शास्ता जनानाम्। एकः सन्बंहुधा विचारः। शतः शुक्राणि यत्रैकं भवंन्ति। सर्वे वेदा यत्रैकं भवंन्ति। सर्वे होतांरो यत्रैकं भवंन्ति। समानंसीन आत्मा जनांनाम्॥२०॥

अन्तः प्रविष्टः शास्ता जनानाः सर्वांत्मा। सर्वाः प्रजा यत्रेकं

भवंन्ति। चतुंर्होतारो यत्रं सम्पदं गच्छंन्ति देवैः। समानंसीन आत्मा जनांनाम्। ब्रह्मेन्द्रंमुग्निं जगंतः प्रतिष्ठाम्। दिव आत्मान सिवतारं बृहुस्पतिम्। चतुंर्होतारं प्रदिशोऽनुं कृप्तम्। वाचो वीर्यं तपसाऽन्वंविन्दत्। अन्तः प्रविष्टं कृतारंमेतम्। त्वष्टांर र रूपाणि विकुर्वन्तं विपश्चिम्॥२१॥

अमृतंस्य प्राणं यज्ञमेतम्। चतुंर्होतृणामात्मानं क्वयो निर्चिक्युः। अन्तः प्रविष्टं कर्तारंमेतम्। देवानां बन्धु निहितं गृहांस्। अमृतेन क्रुप्तं यज्ञमेतम्। चतुंर्होतृणामात्मानं क्वयो निर्चिक्युः। शृतं नियुतः परिवेद विश्वां विश्ववारः। विश्वंमिदं वृंणाति। इन्द्रंस्यात्मा निहितः पश्चंहोता। अमृतं देवानामायुः प्रजानांम्॥२२॥

इन्द्रभ् राजांन सिवितारं मेतम्। वायो रात्मानं क्वयो निर्चिक्यः। रिश्मि रेश्मीनां मध्ये तपंन्तम्। ऋतस्य पदे क्वयो निर्पान्ति। य आण्डकोशे भुवंनं बिभर्ति। अनिर्मिण्णः सन्नर्थं लोकान् विचष्टें। यस्याण्डकोश शृष्मंमाहुः प्राणमुल्बम्। तेनं क्रुप्तो उमृतेनाहमंस्मि। सुवर्णं कोश्भ रजंसा परीवृतम्। देवानां वसुधानीं विराजम्॥२३॥ अमृतंस्य पूर्णान्तामं क्लां विचंक्षते। पाद्भ षड्ढोतुर्न किलां विवित्से। येन्तवंः पश्चधोत क्रुप्ताः। उत वां षड्डा मनसोत क्रुप्ताः। तर षड्ढोतारमृतुभिः कल्पंमानम्।

ऋतस्यं पदे क्वयो निपाँन्ति। अन्तः प्रविष्टं क्रतिरंमेतम्। अन्तश्चन्द्रमंसि मनसा चरन्तम्। सहैव सन्तं न विजानन्ति देवाः। इन्द्रंस्यात्मान शत्या चरन्तम्॥२४॥

इन्द्रो राजा जगंतो य ईशैं। सप्तहोता सप्तधा विक्रृप्तः। परेण तन्तुं परिष्च्यमानम्। अन्तरादित्ये मनसा चरन्तम्। देवाना हदेयं ब्रह्मान्वंविन्दत्। ब्रह्मैतद्वह्मण् उन्नेभार। अर्क इ श्रोतन्त सरिरस्य मध्यैं। आ यस्मिन्त्सप्त पेरवः। मेहन्ति बहुला इश्रियम्। बृह्वश्वामिन्द्र गोमंतीम्॥२५॥

अच्युंतां बहुलाङ् श्रियम्। स हरिर्वसुवित्तंमः। पे्रुरिन्द्रांय पिन्वते। बृह्ध्यामिन्द्रं गोमंतीम्। अच्युंतां बहुलाङ् श्रियम्। मह्यमिन्द्रो नियंच्छतु। शृत श्रृता अस्य युक्ता हरीणाम्। अर्वाङा यांतु वसुंभी रश्मिरिन्द्रः। प्रमश्हंमाणो बहुलाङ् श्रियम्। रश्मिरिन्द्रः सविता मे नियंच्छतु॥२६॥

घृतं तेजो मध्रमिदिन्द्रियम्। मय्ययम्ग्निर्दधातु। हरिः पत्ङ्गः पट्री स्पूर्णः। दिविक्षयो नभसा य एति। स न इन्द्रः कामव्रं देदातु। पश्चारं चक्रं परिवर्तते पृथु। हिरंण्यज्योतिः सिर्रस्य मध्ये। अजंस्रं ज्योतिर्नभंसा सर्पदेति। स न इन्द्रः कामव्रं देदातु। सप्त युंञ्जन्ति रथमेकंचक्रम्॥२७॥

एको अश्वो वहति सप्तनामा। त्रिनाभि च्क्रम्जर्मनंवम्। येनेमा विश्वा भुवनानि तस्थुः। भुद्रं पश्यन्त उपसेदुरग्रैं। तपो दीक्षामृषंयः सुवर्विदेः। ततः क्षत्रं बल्मोर्जश्च जातम्। तद्स्मै देवा अभि सन्नंमन्तु। श्वेत र रिश्मं बोभुज्यमानम्। अपां नेतारं भुवंनस्य गोपाम्। इन्द्रं निर्चिक्यः पर्मे व्योमन्॥२८॥ रोहिणीः पिङ्गला एकंरूपाः। क्षरंन्तीः पिङ्गला एकंरूपाः। श्वतः सहस्राणि प्रयुतांनि नाव्यांनाम्। अयं यः श्वेतो रिश्मः। परि सर्वमिदं जगत्। प्रजां प्रशून्धनांनि। अस्माकं ददातु। श्वेतो रिश्मः परि सर्वं बभूव। सुवन्मह्यं पृशून् विश्वरूपान्। पतङ्गमक्तमसुंरस्य माययां॥२९॥

हृदा पंश्यन्ति मनंसा मनीषिणंः। समुद्रे अन्तः क्वयो विचंक्षते। मरीचीनां पदिमंच्छन्ति वेधसंः। पृतङ्गो वाचं मनंसा बिभर्ति। तां गंन्ध्वोंऽवद्द्ग्भें अन्तः। तां द्योतंमानाः स्वर्यं मनीषाम्। ऋतस्यं पदे क्वयो निपान्ति। ये ग्राम्याः प्शवो विश्वरूपाः। विरूपाः सन्तो बहुधैकंरूपाः। अग्निस्ताः अग्रे प्रमुंमोक्त देवः॥३०॥

प्रजापंतिः प्रजयां संविदानः। वीतः स्तुंकेस्तुके। युवम्स्मासु नियंच्छतम्। प्र प्रं यज्ञपंतिन्तिर। ये ग्राम्याः प्रशवों विश्वरूपाः। विरूपाः सन्तों बहुधैकंरूपाः। तेषारं सप्तानामिह रन्तिरस्तु। रायस्पोषांय सुप्रजास्त्वायं सुवीर्याय। य आंरण्याः पृशवों विश्वरूपाः। विरूपाः सन्तों बहुधैकंरूपाः। वायुस्तार अग्रे प्रमुंमोक्त देवः। प्रजापंतिः

प्रजयां संविदानः। इडांये सृप्तं घृतवंचराचरम्। देवा अन्वंविन्द्न्गुहां हितम्। य आंर्ण्याः पृशवों विश्वरूपाः। विरूपाः सन्तों बहुधैकंरूपाः। तेषार् सप्तानामिह रन्तिरस्तु। ग्यस्पोषांय सुप्रजास्त्वायं सुवीर्याय॥३१॥

आत्मा जनांनां विकुर्वन्तं विपश्चिं प्रजानां वसुधानीं विराज् चरेन्त् गोर्मतीं मे नियंच्छुत्वेकंचकं व्योमन्माययां देव एकंरूपा अष्टौ चं॥११॥———[११]

सहस्रंशीर्षा पुरुषः। सहस्राक्षः सहस्रंपात्। स भूमिं विश्वतों वृत्वा। अत्यंतिष्ठद्दशाङ्गुलम्। पुरुष पुवेद सर्वम्। यद्भूतं यच् भव्यम्। उतामृत्त्वस्येशांनः। यदन्नेनातिरोहंति। पुतावांनस्य महिमा। अतो ज्याया १ श्रु पूरुषः॥३२॥

पादौँऽस्य विश्वां भूतानि। त्रिपादंस्यामृतं दिवि। त्रिपादूर्ध्व उदैत्पुरुषः। पादौँऽस्येहाभंवात्पुनः। ततो विष्वङ्कांकामत्। साशनान्शने अभि। तस्माद्विराडंजायत। विराजो अधि पूरुषः। स जातो अत्यंरिच्यत। पृश्लाद्भूमिमथो पुरः॥३३॥

यत्पुरुषेण ह्विषां। देवा यज्ञमतंन्वत। वस्नतो अस्यासीदाज्यम्। ग्रीष्म इध्मः श्ररद्धविः। सप्तास्यांसन्परि-धर्यः। त्रिः सप्त स्मिधंः कृताः। देवा यद्यज्ञं तंन्वानाः। अबंध्रन्पुरुषं पृशुम्। तं युज्ञं ब्रुहिष् प्रौक्षन्। पुरुषं जातमंग्रतः॥३४॥

तेनं देवा अयंजन्त। साध्या ऋषंयश्च ये। तस्माँ द्यज्ञात्सं वृहुतंः।

सम्भृतं पृषदाज्यम्। पृशू इस्ता इश्चेत्रे वायव्यान्। आरुण्यान्ग्राम्याश्च ये। तस्मा द्यज्ञात्सं वृहुतंः। ऋचः सामानि जज्ञिरे। छन्दा ईसि जज्ञिरे तस्मा त्। यजुस्तस्मादजायत॥३५॥

तस्मादश्वां अजायन्त। ये के चोंभ्यादंतः। गावों ह जिज्ञेर् तस्मात्। तस्मांजाता अंजावयः। यत्पुरुषं व्यंदधः। कृतिधा व्यंकल्पयन्। मुखं किमंस्य कौ बाहू। कावूरू पादांवुच्येते। ब्राह्मणौंऽस्य मुखंमासीत्। बाहू रांजन्यः कृतः॥३६॥

ऊरू तदंस्य यद्वैश्यंः। पुद्धाः शूद्रो अंजायत। चुन्द्रमा मनसो जातः। चक्षोः सूर्यो अजायत। मुखादिन्द्रेश्चाग्निश्चं। प्राणाद्वायुरंजायत। नाभ्यां आसीदन्तरिक्षम्। शीष्णो द्यौः समेवर्तत। पुद्धां भूमिर्दिशः श्रोत्रौत्। तथां लोकाः अंकल्पयन्॥३७॥

वेदाहमेतं पुरुषं महान्तम्। आदित्यवंर्णं तमंसस्तु पारे। सर्वाणि रूपाणि विचित्य धीरेः। नामांनि कृत्वाऽभिवद्न् यदास्तें। धाता पुरस्ताद्यमुंदाज्ञहारं। श्राक्तः प्रविद्वान्प्रदिश्रश्चतंस्रः। तमेवं विद्वान्मृतं इह भविति। नान्यः पन्था अयंनाय विद्यते। यज्ञेनं यज्ञमंयजन्त देवाः। तानि धर्माणि प्रथमान्यांसन्। ते हु नाकं महिमानः सचन्ते। यत्र पूर्वे साध्याः सन्ति देवाः॥३८॥

पूर्रेषः पुरौंऽग्रुतोंऽजायत कृतोंऽकल्पयन्नासुं द्वे चं (ज्यायानिध् पूर्रेषः। अन्यत्र पुर्रुषः॥)॥१२॥[१२]

अद्भः सम्भूतः पृथिव्यै रसाँच। विश्वकंर्मणः समंवर्तताधि। तस्य त्वष्टां विदधंद्रूपमेति। तत्पुरुषस्य विश्वमाजानमग्रें। वेदाहमेतं पुरुषं महान्तम्। आदित्यवंणं तमंसः परंस्तात्। तमेवं विद्वानमृतं इह भंवति। नान्यः पन्थां विद्यतेऽयंनाय। प्रजापंतिश्चरति गर्भे अन्तः। अजायंमानो बहुधा विजांयते॥३९॥

तस्य धीराः परिजानित् योनिम्। मरीचीनां प्दिमिच्छिन्ति वेधसंः। यो देवेभ्य आतंपित। यो देवानां पुरोहितः। पूर्वो यो देवेभ्यो जातः। नमो रुचाय ब्राह्मये। रुचं ब्राह्मं जनयंन्तः। देवा अग्रे तदंब्रवन्। यस्त्वैवं ब्राह्मणो विद्यात्। तस्यं देवा अस्नवशें। हीश्चं ते लक्ष्मीश्च पत्र्यौं। अहोरात्रे पार्श्वे। नक्षंत्राणि रूपम्। अश्विनौ व्यात्तम्ं। इष्टं मंनिषाण। अमुं मंनिषाण। सर्वं मनिषाण॥४०॥

जायते वशे सप्त चं॥१३॥------[१३]

भूतां सन्भ्रियमाणो बिभर्ति। एको देवो बंहुधा निर्विष्टः। यदा भारं तुन्द्रयंते स भर्तुम्। निधायं भारं पुन्रस्तंमेति। तमेव मृत्युममृतं तमाहः। तं भूतारं तम् गोप्तारमाहः। स भृतो भ्रियमाणो बिभर्ति। य एनं वेदं सृत्येन भर्तुम्। सुद्यो जातमुत जहात्येषः। उतो जर्रन्तं न जहात्येकम्॥४१॥ उतो बहूनेकमहंर्जहार। अतंन्द्रो देवः सदंमेव प्रार्थः। यस्तद्वेद् यतं आब्भूवं। सन्धां च याः संन्द्धे ब्रह्मंणैषः। रमंते तस्मिन्नुत जीणें शयांने। नैनं जहात्यहंः सु पूर्व्येषुं। त्वामापो अनु सर्वा श्वरन्त जान्तीः। वृत्सं पर्यसा पुनानाः। त्वमृग्निः हंव्यवाहुः समिन्त्से। त्वं भूर्ता मांत्रिश्वा प्रजानाम्॥४२॥

त्वं यज्ञस्त्वमुंवेवासि सोमः। तवं देवा हवमायंन्ति सर्वे। त्वमेकोऽसि बहूननुप्रविष्टः। नमस्ते अस्तु सुहवो म एिधा नमो वामस्तु शृणुत हवं मे। प्राणापानावजिर स्थार्थन्तौ। ह्यामि वां ब्रह्मणा तूर्तमेतम्। यो मां द्वेष्टि तं जहितं युवाना। प्राणापानौ संविदानौ जहितम्। अमुष्यासुनामा सङ्गंसाथाम्॥४३॥

तं में देवा ब्रह्मणा संविदानौ। वधार्य दत्तं तम्ह १ हंनामि। असंज्ञजान सृत आबंभूव। यं यं ज्जान स उं गोपो अस्य। यदा भारं तुन्द्रयंते स भर्तुम्। पुरास्यं भारं पुन्रस्तंमेति। तहै त्वं प्राणो अभवः। मृहान्भोगः प्रजापंतेः। भुजः करिष्यमाणः। यद्देवान्प्राणयो नवं॥४४॥

एकं प्रजानांङ्गसाथां नवं॥१४॥-----[१४]

हरि हर्नन्तमनुंयन्ति देवाः। विश्वस्येशानं वृष्मं मंतीनाम्। ब्रह्म सरूपमनुंमेदमागात्। अयनं मा विवधीर्विक्रमस्व। मा छिंदो मृत्यो मा वधीः। मा मे बलं विवृहो मा प्रमोषीः। प्रजां मा में रीरिष् आयुंरुग्र। नृचक्षंसं त्वा ह्विषां विधेम। सद्यश्चंकमानायं। प्रवेपानायं मृत्यवे॥४५॥

प्रास्मा आशां अशृण्वन्। कामेनाजनयन्युनंः। कामेन मे काम् आगाँत्। हृदंयाद्भृदंयं मृत्योः। यदमीषांमदः प्रियम्। तदैतूपमाम्भि। परं मृत्यो अनु परेहि पन्थाँम्। यस्ते स्व इतंरो देवयानाँत्। चक्षुंष्मते शृण्वते ते ब्रवीमि। मा नंः प्रजा॰ रीरिषो मोत वीरान्। प्र पूर्व्यं मनसा वन्दंमानः। नार्थमानो वृष्मं चंर्षणीनाम्। यः प्रजानांमेकराण्मानुंषीणाम्। मृत्युं यंजे प्रथमजामृतस्यं॥४६॥

मृत्यवे वीरारश्चत्वारि च॥१५॥-----[१५]

त्रणिर्विश्वदंर्शतो ज्योतिष्कृदंसि सूर्य। विश्वमा भांसि रोचनम्। उपयामगृहीतोऽसि सूर्याय त्वा भ्राजंस्वत एष ते योनिः सूर्याय त्वा भ्राजंस्वते॥४७॥

____[१६]

आ प्यांयस्व मदिन्तम् सोम् विश्वांभिरूतिर्भिः। भवां नः सुप्रथंस्तमः॥४८॥

_[१७]

ईयुष्टे ये पूर्वतरामपंश्यन् व्युच्छन्तीमुषस्ं मर्त्यांसः। अस्माभिंरू नु प्रतिचक्ष्यांऽभूदो ते यंन्ति ये अंपरीषु पश्यान्॥४९॥

[१८]

ज्योतिष्मतीं त्वा सादयामि ज्योतिष्कृतें त्वा सादयामि ज्योतिर्विदं त्वा सादयामि भास्वंतीं त्वा सादयामि ज्वलंन्तीं त्वा सादयामि मल्मलाभवंन्तीं त्वा सादयामि दीप्यंमानां त्वा सादयामि रोचंमानां त्वा सादयाम्यजंस्रां त्वा सादयामि बृहज्योतिषं त्वा सादयामि बोधयंन्तीं त्वा सादयामि जाग्रंतीं त्वा सादयामि॥५०॥

[१९]

प्रयासाय स्वाहां ऽऽयासाय स्वाहां वियासाय स्वाहां संयासाय स्वाहों द्यासाय स्वाहां ऽवयासाय स्वाहां शुचे स्वाहा शोकांय स्वाहां तप्यत्वे स्वाहा तपंते स्वाहां ब्रह्महत्याये स्वाहा सर्वस्मे स्वाहां॥५१॥

.[२०]

चित्तः संन्तानेनं भवं युक्ता रुद्रन्तनिम्ना पशुपति ई स्थूलहृद्येनाग्निः हृदयेन रुद्रं लोहितेन शुर्वं मतस्नाभ्यां महादेवमुन्तः पार्श्वेनौषिष्ठहनः शिङ्गीनिकोश्याभ्याम्॥५२॥

[२१]

तच्छुं योरावृंणीमहे। गातुं यज्ञायं। गातुं यज्ञपंतये। दैवीः स्वस्तिरंस्तु नः। स्वस्तिर्मानुंषेभ्यः। ऊर्ध्वं जिंगातु भेषजम्। शं नो अस्तु द्विपदें। शं चतुंष्पदे। ॐ शान्तिः शान्तिः॥



॥चतुर्थः प्रश्नः॥

नमों वाचे या चोंदिता या चानुंदिता तस्यैं वाचे नमों नमों वाचे नमों वाचस्पतये नम ऋषिंभ्यो मन्नकृद्धो मन्नपितभ्यो मा मामृषंयो मन्नकृतों मन्नपतंयः परांदुर्माहमृषींन्मन्नकृतों मत्रुपतीन्परादां वैश्वदेवीं वाचंमुद्यास शिवामदंस्तां जुष्टां देवेभ्यः शर्म मे द्यौः शर्म पृथिवी शर्म विश्वंमिदं जगंत्। शर्म चन्द्रश्च सूर्यश्च शर्म ब्रह्मप्रजापती। भूतं वंदिष्ये भुवंनं वदिष्ये तेजों वदिष्ये यशों वदिष्ये तपों वदिष्ये ब्रह्मं वदिष्ये सत्यं विदिष्ये तस्मां अहमिदमुंपस्तरंणमुपंस्तृण उपस्तरंणं में प्रजाये पश्नां भूयादुपस्तरणमहं प्रजाये पश्नां भूयासं प्राणांपानौ मृत्योर्मा पातं प्राणांपानौ मा मां हासिष्टं मधुं मनिष्ये मधुं जनिष्ये मधुं वक्ष्यामि मधुं वदिष्यामि मधुंमतीं देवेभ्यो वाचंमुद्यास र शुश्रूषेण्यां मनुष्येभ्यस्तं मां देवा अवन्त् शोभायै पितरोऽनुंमदन्तु। ॐ शान्तिः शान्तिः शान्तिः॥

नमों वाचे या चोंदिता या चानुंदिता तस्यैं वाचे नमो नमों वाचे नमों वाचस्पतेये नम् ऋषिंभ्यो मञ्जकुद्धो मञ्जपितभ्यो मा मामृषंयो मञ्जकृतों मञ्जपतंयः परांदुर्माहमृषींन्मञ्जकृतों मञ्जपतीन्परांदां वैश्वदेवीं वाचमुद्धास शिवामदंस्तां जुष्टां देवेभ्यः शर्म में द्यौः शर्म पृथिवी शर्म विश्वमिदं जगत्। शर्म चन्द्रश्च सूर्यश्च शर्म ब्रह्मप्रजापती। भूतं वंदिष्ये भुवंनं विद्ये तेजों विद्ये यशों विद्ये तपों विद्ये ब्रह्मं विद्ये सत्यं विद्ये तस्मां अहमिदमुंपस्तरंणमुपंस्तृण उपस्तरंणमे प्रजाये पशूनां भूयादुपस्तरंणमहं प्रजाये पशूनां भूयास् प्राणांपानौ मृत्योमां पातं प्राणांपानौ मा मां हासिष्टं मधुं मिन्छे मधुं जिन्छे मधुं विद्यामि मधुंमतीं देवेभ्यो वाचंमुद्यास शृश्रूषेण्यां मनुष्येभ्यस्तं मां देवा अवन्तु शोभाये पितरोऽनुंमदन्तु॥१॥

[8]

युअते मनं उत यंअते धियंः। विप्रा विप्रंस्य बृह्तो विपश्चितंः। वि होत्रां दधे वयुनाविदेक इत्। मही देवस्यं सिवतुः परिष्ठतिः। देवस्यं त्वा सिवतुः प्रंस्वे। अश्विनौर्बाहुभ्याम्। पूष्णो हस्ताभ्यामादंदे। अभिरिस् नारिरसि। अध्वर्कृद्देवभ्यः। उत्तिष्ठ ब्रह्मणस्पते॥२॥

देवयन्तंस्त्वेमहे। उप प्रयंन्तु म्रुतंः सुदानंवः। इन्द्रं प्राशूर्भवा सचाँ। प्रेतु ब्रह्मंण्स्पतिः। प्र देव्यंतु सूनृताँ। अच्छां वीरं नर्यं पङ्किराधसम्। देवा यज्ञं नयन्तु नः। देवीं द्यावापृथिवी अनुं मे मश्साथाम्। ऋद्यासंमद्य। मखस्य शिरंः॥३॥

म्खायं त्वा। म्खस्यं त्वा शीर्ष्णे। इयत्यग्रं आसीः। ऋद्यासंमुद्य। मुखस्य शिरंः। मुखायं त्वा। मुखस्यं त्वा शीर्ष्णे। देवीवभीरस्य भूतस्यं प्रथमजा ऋतावरीः।

ऋद्यासंमुद्य। मुखस्य शिरंः॥४॥

म्खायं त्वा। म्खस्यं त्वा शीर्ष्णे। इन्द्रस्यौजींऽसि। ऋद्यासंमुद्य। मुखस्य शिरंः। मुखायं त्वा। मुखस्यं त्वा शीर्ष्णे। अग्निजा अंसि प्रजापंते रेतंः। ऋद्यासंमुद्य। मुखस्य शिरंः॥५॥

मुखायं त्वा। मुखस्यं त्वा शीर्ष्णे। आयुंधेहि प्राणं धेहि। अपानं धेहि व्यानं धेहि। चक्षुंधेहि श्रोत्रं धेहि। मनों धेहि वाचं धेहि। आत्मानं धेहि प्रतिष्ठां धेहि। मां धेहि मियं धेहि। मधुं त्वा मधुला कंरोतु। मुखस्य शिरोंऽसि॥६॥

यज्ञस्यं पदे स्थंः। गायत्रेणं त्वा छन्दंसा करोमि। त्रैष्टुंभेन त्वा छन्दंसा करोमि। जागंतेन त्वा छन्दंसा करोमि। मखस्य रास्नांऽसि। अदिंतिस्ते बिलं गृह्णातु। पाङ्कंन छन्दंसा। सूर्यस्य हरंसा श्राय। मुखोंऽसि॥७॥

पुते शिरं ऋतावरीर्ऋद्धासंमुद्य मुखस्य शिरुः शिरुः शिरोऽसि नवं च॥२॥_____[२]

वृष्णो अश्वंस्य निष्पदंसि। वर्रणस्त्वा धृतव्रंत आधूंपयत्। मित्रावर्रणयोध्रुवेण धर्मणा। अर्चिषै त्वा। शोचिषै त्वा। ज्योतिषे त्वा। तपंसे त्वा। अभीमं मंहिना दिवम्। मित्रो बंभूव सुप्रथाः। उत श्रवंसा पृथिवीम्॥८॥

मित्रस्यं चर्षणी्धृतंः। श्रवों देवस्यं सान्सिम्। द्युम्नं चित्रश्रंवस्तमम्। सिध्यैं त्वा। देवस्त्वां सिव्तोद्वंपतु। सुपाणिः स्वंङ्गुरिः। सुबाहुरुत शक्त्याः। अपंद्यमानः पृथिव्याम्। आशा दिश् आ पृण। उत्तिष्ठ बृहन्भंव॥९॥

ऊर्ध्वस्तिष्ठद्भुवस्त्वम्। सूर्यस्य त्वा चक्षुषाऽन्वीक्षे। ऋजवे त्वा। साधवे त्वा। सुक्षित्ये त्वा भूत्यै त्वा। इदमहम्मुमाम्प्र्यायणं विशा पृश्भिष्ठं ह्मवर्चसेन् पर्यूहामि। गायत्रेणं त्वा छन्द्साऽऽच्छृंणिद्मा। त्रेष्ट्रंभेन त्वा छन्द्साऽऽच्छृंणिद्मा। जागतेन त्वा छन्द्साऽऽच्छृंणिद्मा। छृणत्तं त्वा वाक्। छृणत्तु त्वोक्। छृणत्तं त्वा ह्विः। छृन्धि वाचम्। छृन्ध्यूर्जम्। छृन्धि ह्विः। देवं पुरश्चर सम्प्र्यासं त्वा॥१०॥

पृथिवीं भेव वाख्यद्वं॥३॥-----[3]

ब्रह्मंन् प्रवर्ग्येण प्रचेरिष्यामः। होतंर्घ्मंम्भिष्टुंहि। अग्नीद्रौहिंणौ पुरोडाशाविधिश्रय। प्रतिप्रस्थात्रविहंर। प्रस्तोतः सामानि गाय। यजुंर्युक्त्र सामंभिराक्तंखन्त्वा। विश्वैर्देवैरनुंमतं म्रुद्धिः। दक्षिणाभिः प्रतंतं पारियष्णुम्। स्तुभौ वहन्तु सुमन्स्यमानम्। स नो रुचं धेह्यहंणीयमानः। भूर्भुवः सुवंः। ओमिन्द्रंवन्तः प्रचंरत॥११॥

अहंणीयमानो द्वे चं॥४॥------[४]

ब्रह्मन्प्रचेरिष्यामः। होतेर्घुर्मम्भिष्टुंहि। यमायं त्वा मुखायं त्वा। सूर्यस्य हरंसे त्वा। प्राणाय स्वाहां व्यानाय स्वाहांऽपानाय स्वाहाँ। चक्षुंषे स्वाहा श्रोत्रांय स्वाहाँ। मनसे स्वाहां वाचे सर्रस्वत्ये स्वाहाँ। दक्षांय स्वाहा ऋतंवे स्वाहाँ। ओजसे स्वाहा बलांय स्वाहाँ। देवस्त्वां सविता मध्वांऽनक्तु॥१२॥

पृथिवीं तपंसस्रायस्व। अर्चिरंसि शोचिरंसि ज्योतिरसि तपोऽसि। स॰सींदस्व महा॰ असि। शोचंस्व देववीतंमः। विधूममंग्ने अरुषं मियेध्य। सृज प्रंशस्तदर्शतम्। अञ्जन्ति यं प्रथयंन्तो न विप्राः। वपावंन्तं नाग्निना तपंन्तः। पितुर्न पृत्र उपंसि प्रेष्ठः। आ घुर्मो अग्निमृतयंत्रसादीत्॥१३॥

अनाधृष्या पुरस्तांत्। अग्नेराधिपत्ये। आयुंर्मे दाः। पुत्रवंती दक्षिणतः। इन्द्रस्याधिपत्ये। प्रजां में दाः। सुषदां पृश्चात्। देवस्यं सवितुराधिपत्ये। प्राणं में दाः। आश्रुंतिरुत्तरुतः॥१४॥

मित्रावर्रणयोराधिपत्ये। श्रोत्रं मे दाः। विधृतिरूपरिष्टात्। बृह्स्पतेराधिपत्ये। ब्रह्मं मे दाः क्षत्रं में दाः। तेजों मे धा वर्चों मे धाः। यशों मे धास्तपों मे धाः। मनों मे धाः। मनोरश्वांऽसि भूरिंपुत्रा। विश्वांभ्यो मा नाष्ट्राभ्यः पाहि॥१५॥

सूपसदां मे भूया मा मां हिश्सीः। तपोष्वंग्रे अन्तराश् अमित्रान्। तपाशश्संमर्रुषः परंस्य। तपांवसो चिकितानो अचित्तान्। वि तें तिष्ठन्ताम्जरां अयासः। चितः स्थ परिचितः। स्वाहां म्रुद्धिः परिश्रयस्व। मा असि। प्रमा असि। प्रतिमा असि॥१६॥ सम्मा असि। विमा असि। उन्मा असि। अन्तरिक्षस्यान्तर्धि-रिस। दिवं तपंसस्रायस्व। आभिर्गीर्भियदतों न ऊनम्। आप्यायय हरिवो वर्धमानः। यदा स्तोतृभ्यो मिहं गोत्रा रुजासि। भूयिष्टभाजो अधं ते स्याम। शुक्रं ते अन्यद्यंजतं ते अन्यत्॥१७॥

विषुंरूपे अहंनी द्यौरिवासि। विश्वा हि माया अवंसि स्वधावः। भुद्रा ते पूषित्रह रातिरेस्तु। अर्हन्बिभर्षि सायंकानि धन्वं। अर्हं निष्कं यंज्ञतं विश्वरूपम्। अर्हं निदन्दंयसे विश्वमञ्ज्ञंवम्। न वा ओजीयो रुद्र त्वदंस्ति। गायत्रमंसि। त्रेष्टुंभमिस। जागंतमिस। मधु मधु मधु॥१८॥ अनुक्तुसादीदुत्तरुतः पाहि प्रतिमा असि यज्ञतन्ते अन्यज्ञागंतमस्येकं च॥५॥———[५]

दश प्राचीर्दशं भासि दक्षिणा। दशं प्रतीचीर्दशं भास्युदीचीः। दशोध्वा भांसि सुमन्स्यमानः। स नो रुचं धेह्यहंणीयमानः। अग्निष्ट्वा वसंभिः पुरस्तांद्रोचयतु गायत्रेण छन्दंसा। स मां रुचितो रांचय। इन्द्रंस्त्वा रुद्रैदंक्षिणतो रांचयतु त्रेष्ट्रंभेन् छन्दंसा। स मां रुचितो रांचय। वर्रणस्त्वादित्यैः पृश्चाद्रोंचयतु जागंतेन छन्दंसा। स मां रुचितो रांचय। वर्रणस्त्वादित्यैः पृश्चाद्रोंचयतु जागंतेन छन्दंसा। स मां रुचितो रांचय॥१९॥

द्युतानस्त्वां मारुतो मुरुद्धिरुत्तरतो रोचयत्वानुंष्टुभेन् छन्दंसा। स मां रुचितो रोचय। बृह्स्पतिंस्त्वा विश्वैद्वैरुपरिष्टाद्रोचयतु पाङ्केन् छन्दंसा। स मां रुचितो रोचय। रोचितस्त्वं देव घर्म देवेष्वसिं। रोचिषीयाहं मंनुष्येषु। सम्राह्मर्म रुचितस्तवं देवेष्वायुष्मा इस्तेज्स्वी ब्रह्मवर्चस्यसि। रुचितोऽहं मंनुष्येष्वायुष्मा इस्तेज्स्वी ब्रह्मवर्चसी भूयासम्। रुगंसि। रुचं मियं धेहि॥२०॥

मिय रुक्। दशं पुरस्ताँद्रोचसे। दशं दिश्वणा। दशं प्रत्यङ्गः दशोदङ्गं। दशोध्वीं भांसि सुमन्स्यमानः। स नः सम्राडिष्मूर्जं धेहि। वाजी वाजिने पवस्व। रोचितो घर्मी रुचीय॥२१॥

रोच्य धेहि नवं च॥६॥=

[3]_

अपंश्यं गोपामनिपद्यमानम्। आ च परां च प्थिभिश्चरंन्तम्। स स्प्रीचीः स विषूचीर्वसानः। आ वंरीवर्ति भुवनेष्वन्तः। अत्रं प्रावीः। मधु माध्वींभ्यां मधु माधूचीभ्याम्। अनुं वां देववीतये। सम्ग्रिर्ग्निनां गत। सं देवनं सिव्ता। स॰ सूर्येण रोचते॥२२॥

स्वाह्य सम्ग्रिस्तपंसा गत। सं देवेनं सिवता। स॰ सूर्यणारोचिष्ट। धूर्ता दिवो विभासि रजंसः। पृथिव्या धूर्ता। उरोर्न्तिरक्षस्य धूर्ता। धूर्ता देवो देवानाम्। अमर्त्यस्तपोजाः। हृदे त्वा मनसे त्वा। दिवे त्वा सूर्याय त्वा॥२३॥

ऊर्ध्वमिममंध्वरं कृधि। दिवि देवेषु होत्रां यच्छ। विश्वांसां भुवां पते। विश्वंस्य भुवनस्पते। विश्वंस्य मनसस्पते। विश्वंस्य वचसस्पते। विश्वंस्य तपसस्पते। विश्वंस्य ब्रह्मणस्पते। देवश्रस्त्वं देव घर्म देवान्पांहि। तुपोजां वार्चम्स्मे नियंच्छ देवायुवम्॥२४॥

गर्भो देवानाम्। पिता मंतीनाम्। पितः प्रजानाम्। मितः कवीनाम्। सं देवो देवेनं सिवत्रा यंतिष्ट। सर सूर्येणारुक्त। आयुर्दास्त्वम्स्मभ्यं धर्म वर्चोदा असि। पिता नोऽसि पिता नो बोध। आयुर्द्धास्तंनूधाः पंयोधाः। वर्चोदा वंरिवोदा द्रंविणोदाः॥२५॥

अन्तिरक्षिप्र उरोर्वरीयान्। अशीमिह त्वा मा मां हि॰सीः। त्वमंग्ने गृहपितिर्विशामिस। विश्वासां मानुषीणाम्। शृतं पूर्भिर्यविष्ठ पाद्यश्हेसः। समेद्धार्थ शृत्र हिमाः। तुन्द्राविण्थ हार्दिवानम्। इहैव रात्यः सन्तु। त्वष्टीमती ते सपेय। सुरेता रेतो दर्धाना। वीरं विदेय तवं सुन्हिशी। माऽह्थ रायस्पोषेण वि योषम्॥२६॥

रोचते सूर्याय त्वा देवायुर्वं द्रविणोदा दर्धाना द्वे चं॥७॥_____[9]

देवस्यं त्वा सिवृतुः प्रंस्वे। अश्विनौर्बाहुभ्यांम्। पूष्णो हस्तांभ्यामादंदे। अदित्ये रास्नांसि। इड एहि। अदित एहि। सरंस्वत्येहिं। असावेहिं। असावेहिं। असावेहिं॥२७॥

अदित्या उष्णीषंमिस। वायुरंस्यैडः। पूषा त्वोपावंसृजतु। अश्विभ्यां प्रदांपय। यस्ते स्तनंः शश्यो यो मयोभूः। येन विश्वा पुष्यंसि वार्याणि। यो रंत्रुधा वंसुविद्यः सुदर्तः। सरंस्वित तिमृह धातंवेकः। उस्रं घुर्मः शिर्षेष। उस्रं घुर्मं पाहि॥२८॥

घर्मायं शिश्षा बृह्स्पतिस्त्वोपंसीदतु। दानंवः स्थ् पेरंवः। विष्वुग्वृतो लोहितेन। अश्विभ्यां पिन्वस्व। सरंस्वत्यै पिन्वस्व। पूष्णे पिन्वस्व। बृह्स्पतंये पिन्वस्व। इन्द्रांय पिन्वस्व। इन्द्रांय पिन्वस्व॥२९॥

गायत्रों ऽसि। त्रैष्टुंभो ऽसि। जागंतमिस। सहोर्जो भागेनोपमेहिं। इन्द्रौश्विना मधुंनः सार्घस्यं। घुमंं पात वसवो यजंता वट्। स्वाहौ त्वा सूर्यस्य र्ष्षमयें वृष्टिवनंये जुहोमि। मधुं ह्विरंसि। सूर्यस्य तपंस्तप। द्यावांपृथिवीभ्यां त्वा परिंगृह्णामि॥३०॥

अन्तरिक्षेण त्वोपंयच्छामि। देवानां त्वा पितृणामनुंमतो भर्तु रं शकेयम्। तेजोऽसि। तेजोऽनु प्रेहिं। दिविस्पृङ्गा मां हि रसीः। अन्तरिक्षस्पृङ्गा मां हि रसीः। पृथिविस्पृङ्गा मां हि रसीः। सुवंरसि सुवंर्मे यच्छ। दिवं यच्छ दिवो मां पाहि॥३१॥

एहिं पाहि पिन्वस्व गृह्णामि नवं च॥८॥-----[८]

समुद्रायं त्वा वातांय स्वाहाँ। सृष्टिलायं त्वा वातांय स्वाहाँ। अनाधृष्यायं त्वा वातांय स्वाहाँ। अप्रतिधृष्यायं त्वा वातांय स्वाहाँ। अवस्यवे त्वा वातांय स्वाहाँ। दुवंस्वते त्वा वातांय स्वाहाँ। शिमिंद्वते त्वा वातांय स्वाहाँ। अग्नये त्वा वसुंमते स्वाहाँ। सोमाय त्वा रुद्रवंते स्वाहाँ। वर्रुणाय त्वाऽऽदित्यवंते स्वाहाँ॥३२॥

बृह्स्पतंये त्वा विश्वदें व्यावते स्वाहां। स्वित्रे त्वंर्भुमतें विभुमतें प्रभुमते वाजंवते स्वाहां। यमाय त्वाऽङ्गिरस्वते पितृमते स्वाहां। विश्वा आशां दक्षिणसत्। विश्वां देवानंयाडिह। स्वाहांकृतस्य घूर्मस्यं। मधौः पिबतमिश्वना। स्वाहाऽग्नये युज्ञियांय। शं यजुंिभिः। अश्विना घूर्मं पांत शहार्दिवानम्॥३३॥

अहंर्दिवाभिंक्तिभिः। अनुं वां द्यावांपृथिवी मर्साताम्। स्वाहेन्द्रांय। स्वाहेन्द्रावट्। घर्ममंपातमिश्वना हार्दिवानम्। अहंर्दिवाभिंक्तिभिः। अनुं वां द्यावांपृथिवी अमर्साताम्। तं प्रार्व्यं यथा वट्। नमों दिवे। नमः पृथिव्यै॥३४॥

दिवि धां इमं यज्ञम्। यज्ञमिमं दिवि धाः। दिवं गच्छ। अन्तरिक्षं गच्छ। पृथिवीं गच्छ। पश्चं प्रदिशों गच्छ। देवान्धंर्मपान्गंच्छ। पितृन्धंर्मपान्गंच्छ॥३५॥

आुद्दित्यवंते स्वाहां हार्दिवानं पृंथिव्या अष्टौ चं॥९॥lacktriangle

ड्षे पीपिहि। ऊर्जे पीपिहि। ब्रह्मंणे पीपिहि। क्ष्रत्रायं पीपिहि। अन्धः पीपिहि। ओषंधीभ्यः पीपिहि। वनस्पितिभ्यः पीपिहि। द्यावांपृथिवीभ्यां पीपिहि। सुभूतायं पीपिहि। ब्रह्मवर्चसायं पीपिहि॥३६॥

यर्जमानाय पीपिहि। मह्यं ज्येष्ठ्यांय पीपिहि। त्विष्यैं त्वा। द्युमायं त्वा। इन्द्रियायं त्वा भूत्यैं त्वा। धर्माऽसि सुधर्मा में न्यस्मे। ब्रह्मांणि धारय। क्षुत्राणिं धारय। विशं धारय। नेत्वा वार्तः स्कन्दयांत्॥३७॥

अमुष्यं त्वा प्राणे सांदयामि। अमुनां सह निर्धं गंच्छ। यौऽस्मान्द्वेष्टिं। यं चं व्यं द्विष्मः। पूष्णे शरंसे स्वाहाँ। ग्रावंभ्यः स्वाहाँ। प्रतिरेभ्यः स्वाहाँ। द्यावांपृथिवीभ्याः स्वाहाँ। पितृभ्यों धर्मपेभ्यः स्वाहाँ। रुद्रायं रुद्रहोंत्रे स्वाहाँ॥३८॥

अह्रज्योंतिः केतुनां जुषताम्। सुज्योतिज्योतिषा् स्वाहाँ। रात्रिज्योतिः केतुनां जुषताम्। सुज्योतिज्योतिषा् स्वाहाँ। अपीपरो माऽह्यो रात्रियै मा पाहि। एषा ते अग्ने समित्। तया समिध्यस्व। आयुंर्मे दाः। वर्चसा माञ्जीः। अपीपरो मा रात्रिया अह्यों मा पाहि॥३९॥

पृषा ते अग्ने स्मित्। तया सिमध्यस्व। आयुंर्मे दाः। वर्चसा माञ्जीः। अग्निज्योतिज्योतिरग्निः स्वाहाँ। सूर्यो ज्योतिज्योतिः सूर्यः स्वाहाँ। भूः स्वाहाँ। हुत हिवः। मधुं हिवः। इन्द्रंतमेऽग्नौ॥४०॥

पिता नोंऽसि मा मां हिश्सीः। अश्यामं ते देवघर्म। मधुंमतो वाजंवतः पितुमतः। अङ्गिरस्वतः स्वधाविनः। अशीमहिं त्वा मा मां हिश्सीः। स्वाहां त्वा सूर्यस्य रश्मिभ्यः। स्वाहां त्वा

नक्षंत्रेभ्यः॥४१॥

बृह्मवुर्चुसायं पीपिहि स्कुन्दयाँदुद्रायं रुद्रहोँत्रे स्वाहाऽह्रों मा पाह्यग्नौ सप्त चं॥१०॥———[१०]

घर्म् या तें दिवि शुक्। या गांयत्रे छन्दंसि। या ब्राँह्मणे। या हंविर्द्धानें। तान्तं एतेनावं यजे स्वाहां। घर्म् या तेऽन्तिरिक्षे शुक्। या त्रैष्टुंभे छन्दंसि। या रांजन्यें। याऽऽग्रींधे। तान्तं एतेनावं यजे स्वाहां॥४२॥

घर्म् या ते पृथिव्या १ शुक्। या जागंते छन्दंसि। या वैश्यैं। या सदंसि। तान्तं पृतेनावं यजे स्वाहाँ। अनुंनोऽद्यानुंमितिः। अन्विदंनुमते त्वम्। दिवस्त्वां पर्स्पायाः। अन्तरिक्षस्य तनुवंः पाहि। पृथिव्यास्त्वा धर्मणा॥४३॥

व्यमनुंक्रामाम सुविताय नव्यंसे। ब्रह्मणस्त्वा पर्स्पायाः। क्षूत्रस्यं तुनुवंः पाहि। विशस्त्वा धर्मणा। व्यमनुंक्रामाम सुविताय नव्यंसे। प्राणस्यं त्वा पर्स्पायः। चक्षुंषस्तुनुवंः पाहि। श्रोत्रंस्य त्वा धर्मणा। व्यमनुंक्रामाम सुविताय नव्यंसे। वृत्रगुरंसि श्रं युधायाः॥४४॥

शिशुर्जनंधायाः। शं च विश्वायुः शर्मं सप्रथाः। अप द्वेषो स्रित्तर्नाभिर्ऋतस्यं। सदो विश्वायुः शर्मं सप्रथाः। अप द्वेषो अपृह्वरंः। अन्यद्वंतस्य सिश्चम। घर्मेतत्तेऽन्नंमेतत्पुरीषम्। तेन् वर्धस्व चाऽऽ चं प्यायस्व। विधिषीमिहिं च व्यम्। आ चं प्यासिषीमिहिं॥४५॥ रिन्तुर्नामांसि दिव्यो गेन्ध्र्वः। तस्यं ते पृद्वद्वंविद्वानम्। अग्निरध्यंक्षाः। रुद्रोऽधिपतिः। समृहमायुंषा। सं प्राणेनं। सं वर्चसा। सं पर्यसा। सं गौंपृत्येनं। स॰ रायस्पोषेण॥४६॥ व्यंसौ। यौंऽस्मान्द्वेष्टिं। यं चं व्यं द्विष्मः। अचिंऋदृदृषा

व्यंसौ। योंऽस्मान्द्वेष्टिं। यं चं वयं द्विष्मः। अचित्रदृहृषा हरिः। महान्मित्रो न दंरशतः। स॰ सूर्येण रोचते। चिदंसि समुद्रयोनिः। इन्दुर्दक्षः श्येन ऋतावा। हिरंण्यपक्षः शकुनो भुरण्यः। महान्त्स्थस्थे ध्रुव आनिषंत्तः॥४७॥

नमंस्ते अस्तु मा मां हिश्सीः। विश्वावंसुश् सोम गन्ध्वंम्। आपो दृहशुषीः। तृहतेनाव्यांयन्। तृदन्ववैत्। इन्द्रो रारहाण आंसाम्। परि सूर्यंस्य परिधीश रंपश्यत्। विश्वावंसुर्भि तन्नों गृणातु। दिव्यो गन्धवों रजंसो विमानः। यद्वां घा सृत्यमुत यन्न विद्या।४७॥

धियों हिन्वानो धिय इन्नों अव्यात्। सिम्नंमिवन्द् चरंणे नदीनाम्। अपांवृणोद्दुरो अश्मंत्रजानाम्। प्रासान्मन्थ्वों अमृतांनि वोचत्। इन्द्रो दक्षं परिजानाद् हीनम्। एतत्त्वं देव घर्म देवो देवानुपांगाः। इदमहं मंनुष्यों मनुष्यान्। सोमंपीथानुमेहिं। सह प्रजयां सह रायस्पोषंण। सुमित्रा न आप ओषंधयः सन्तु॥४९॥

दुर्मित्रास्तस्मै भूयासुः। यो उस्मान्द्वेष्टिं। यं चे व्यं द्विष्मः। उद्वयं तमंसुस्परिं। उदुत्यं चित्रम्। इममूषुत्यमुस्मभ्यः

| स्निम्। गायुत्रं नवीया १ सम्। अग्ने देवेषु प्रवीचः॥५०॥ |
|---|
| याऽऽग्नींप्रे तान्तं एतेनावं यजे स्वाहा धर्मणा शुं युधायाः प्यासिषीमहि पोषेण निषंत्तो विद्य |
| संन्त्वष्टौ॥११॥ |
| महीनां पयोऽसि विहितं देवत्रा। ज्योतिर्भा असि |
| वनस्पतींनामोषंधीना रसंः। वाजिनं त्वा वाजिनोऽवं |
| नयामः। ऊर्ध्वं मनः सुवर्गम्॥५१॥ |
| [85] |
| अस्कान्द्यौः पृंथिवीम्। अस्कानृषभो युवागाः। स्कन्नेमा विश्वा |
| भुवंना। स्कन्नो यज्ञः प्रजंनयतु। अस्कानजंनि प्राजंनि। आ |
| स्कन्नाञ्जायते वृषां। स्कन्नात् प्रजंनिषीमहि॥५२॥ |
| [83] |
| या पुरस्तांद्विद्युदापंतत्। तान्तं पुतेनावं यजे स्वाहां। या |
| दंक्षिणतः। या पश्चात्। योत्तंरतः। योपरिष्टाद्विद्युदापंतत्। |
| तान्तं एतेनावं यजे स्वाहां॥५३॥ |
| [88] |
| प्राणाय स्वाहाँ व्यानाय स्वाहांऽपानाय स्वाहाँ। चक्षुंषे स्वाहा |
| श्रोत्राय स्वाहाँ। मनसे स्वाहां वाचे सरस्वत्ये स्वाहाँ॥५४॥ |
| |
| [१५] |
| पूष्णे स्वाहां पूष्णे शरंसे स्वाहां। पूष्णे प्रंपृत्थ्यांय स्वाहां |
| पूष्णे नरिन्धंषाय स्वाहाँ। पूष्णेऽङ्गंणये स्वाहां पूष्णे नरुणांय |
| <u>e</u> |

स्वाहाँ। पूष्णे सांकेताय स्वाहाँ॥५५॥

[१६]

उदंस्य शुष्मौद्भानुर्नात् बिर्मिति। भारं पृथिवी न भूमं। प्र शुक्रैत् देवी मंनीषा। अस्मत्सुतृष्टो रथो न वाजी। अर्चन्त एके मिह् साममन्वत। तेन सूर्यमधारयन्। तेन सूर्यमरोचयन्। धर्मः शिर्स्तद्यम्गिः। पुरीषमिस सं प्रियं प्रजयां पृशिभेभ्वत्। प्रजापितंस्त्वा सादयत्। तयां देवतंयाऽङ्गिर्स्वद्भवा सीद॥५६॥

[68]

यास्ते अग्न आर्द्रा योनयो याः कुंलायिनीः। ये तें अग्न इन्देवो या उ नाभयः। यास्ते अग्ने तुनुव ऊर्जो नाम। ताभिस्त्वमुभयीभिः संविदानः। प्रजाभिरग्ने द्रविणेह सीद। प्रजापितस्त्वा सादयतु। तयां देवतंयाऽङ्गिर्स्वद्भुवा सीद॥५७॥

[१८]

अग्निरंसि वैश्वान्रोंऽसि। संवृत्स्रोंऽसि परिवर्त्स्रोंऽसि। इदावृत्स्रोंऽसीदुवत्स्रोंऽसि। इद्वृत्स्रोंऽसि वृत्स्रोंऽसि। तस्यं ते वस्नतः शिरंः। ग्रीष्मो दक्षिणः पृक्षः। वृर्षाः पुच्छम्। शरदुत्तरः पृक्षः। हेमन्तो मध्यम्। पूर्वपृक्षाश्चित्यः। अपरुपृक्षाः पृरीषम्। अहोरात्राणीष्टंकाः। तस्यं ते मासाश्चार्द्धमासाश्चं कल्पन्ताम्। ऋतवंस्ते कल्पन्ताम्। संवृत्स्रस्ते कल्पताम्। अहोरात्राणि ते कल्पन्ताम्। एति प्रेति वीति समित्युदितिं। प्रजापितस्त्वा सादयतु। तयां देवतंयाऽङ्गिर्स्वद्भुवः सीद॥५८॥

चितंयो नवं च॥१९॥-----[१९]

भूर्भुवः सुवंः। ऊर्ध्व ऊषुणं ऊतयें। ऊर्ध्वो नंः पाह्यश्हेसः। विधुन्दंद्राणश् समंने बहूनाम्। युवांनुश् सन्तं पिलृतो जंगार। देवस्यं पश्य कार्व्यं मिहृत्वाद्या मुमारं। सह्यः समान। यदृते चिंदिभृश्रिषंः। पुरा जुर्तृभ्यं आतृदंः। सन्धांता सुन्धिं मुघवां पुरोवसुः॥५९॥

निष्कंर्ता विह्नंतं पुनंः। पुनंरूर्जा सह रय्या। मा नों घर्म व्यथितो विव्यथो नः। मा नः पर्मधंरं मा रजोंऽनैः। मोष्वंस्माः स्तमंस्यन्त्रा धाः। मा रुद्रियांसो अभिगुंर्वृधानः। मा नः ऋतुंभिर्हीडितेभिर्स्मान्। द्विषांसुनीते मा परां दाः। मा नो रुद्रो निर्ऋतिर्मा नो अस्ताः। मा चावांपृथिवी हीडिषाताम्॥६०॥

उपं नो मित्रावरुणाविहावंतम्। अन्वादींध्याथामिह नेः सखाया। आदित्यानां प्रसिंतिरहेतिः। उग्रा शतापांष्ठा घविषा परि णो वृणक्तु। इमं में वरुण तत्त्वां यामि। त्वं नों अग्ने स त्वं नों अग्ने। त्वमंग्ने अयासिं। उद्वयं तमंस्स्परिं। उदुत्यं चित्रम्। वयः सुपूर्णाः॥६१॥ भूर्भुवः सुवंः। मिय् त्यदिन्द्रियं महत्। मिय् दक्षो मिय् ऋतुंः। मियं धायि सुवीर्यम्। त्रिशुंग्धर्मो विभातु मे। आकूँत्या मनसा सह। विराजा ज्योतिषा सह। यज्ञेन पर्यसा सह। ब्रह्मणा तेजसा सह। क्षत्रेण यशसा सह। सत्येन तपंसा सह। तस्य दोहंमशीमिह। तस्यं सुम्नमंशीमिह। तस्यं भूक्षमंशीमिह। तस्यं त इन्द्रेण पीतस्य मधुंमतः। उपहृतस्योपंहृतो भक्षयामि॥६२॥

यशंसा सह षद्वं॥२१॥-----[२१]

यास्ते अग्ने घोरास्त्नुवंः। क्षुच् तृष्णा चं। अस्नुक्वानांहुतिश्च। अश्नन्या चं पिपासा चं। सेदिश्चामंतिश्च। एतास्ते अग्ने घोरास्त्नुवंः। ताभिरमुं गंच्छ। यौऽस्मान्द्वेष्टिं। यं चं वयं द्विष्मः॥६३॥

_[२२]

स्निक्क स्नीहिंतिश्च स्निहिंतिश्च। उष्णा चं शीता चं। उग्रा चं भीमा चं। सदाम्नीं सेदिरिनंश। एतास्तें अग्ने घोरास्तुनुवंः। ताभिरमुं गंच्छ। यौऽस्मान्द्वेष्टिं। यं चं वयं द्विष्मः॥६४॥

-[२३]

धुनिश्च ध्वान्तश्चं ध्वनश्चं ध्वनयईश्च। निलिम्पश्चं विलिम्पश्चं विक्षिपः॥६५॥

[28]

उग्रश्च धुनिश्च ध्वान्तश्चं ध्वनश्चं ध्वनयईश्च। सहसह्वाइश्च

सहंमानश्च सहंस्वाङ्श्च सहीयाङ्श्च। एत्य प्रेत्यं विक्षिपः॥६६॥

[2 4]

अहोरात्रे त्वोदीरयताम्। अर्धमासास्त्वोदीं जयन्तु। मासौस्त्वा श्रपयन्तु। ऋतवस्त्वा पचन्तु। संवृतस्ररस्त्वां हन्त्वसौ॥६७॥

____[२६]

खट् फट् जिहि। छिन्धी भिन्धी हुन्धी कट्। इति वार्चः क्रूराणि॥६८॥

[29]

विगा इंन्द्र विचरंन्त्स्पाशयस्व। स्वपन्तंमिन्द्र पशुमन्तंमिच्छ। वर्ज्रेणामुं बोधय दुर्विदत्रम्। स्वपतौंऽस्य प्रहंर भोजंनेभ्यः। अग्ने अग्निना संवदस्व। मृत्यो मृत्युना संवदस्व। नमंस्ते अस्तु भगवः। स्कृत्ते अग्ने नमंः। द्विस्ते नमंः। त्रिस्ते नमंः। चतुस्ते नमंः। पृश्चकृत्वंस्ते नमंः। दृश्कृत्वंस्ते नमंः। दृश्कृत्वंस्ते नमंः। अगुसृह्मकृत्वंस्ते नमंः। अपरिमित्कृत्वंस्ते नमंः। नमंस्ते अस्तु मा मो हि॰सीः॥६९॥

त्रिस्ते नर्मः सप्त चं॥२८॥———[२८]

असृंन्मुखो रुधिरेणाव्यंक्तः। यमस्यं दूतः श्वपाद्विधांवसि। गृध्रंः सुपूर्णः कुणपुं निषेवसे। यमस्यं दूतः प्रहितो भुवस्यं

| चोभयोः॥७०॥[२९] |
|---|
| यदेतद्वृंकसो भूत्वा। वाग्दैंव्यभिरायंसि। द्विषन्तं मेऽभिरांय। तं मृत्यो मृत्यवे नय। स आत्यीर्तिमार्च्छतु॥७१॥ [३०] |
| यदींषितो यदि वा स्वकामी। भयेडंको वदिति वाचंमेताम्। तामिन्द्राग्नी ब्रह्मणा संविदानौ। शिवाम्स्मभ्यं कृणुतं गृहेषुं॥७२॥ |
| दीर्घमुखि दुर्हणु। मा स्मं दक्षिणुतो वंदः। यदि दक्षिणुतो वदाँद्विषन्तं मेऽवं बाधासै॥७३॥ [३२] |
| इत्थादुलूंक आपंत्रत्। हिर्ण्याक्षो अयोमुखः। रक्षंसां दूत आगंतः। तिमृतो नांशयाग्ने॥७४॥ [३३] |
| यदेतद्भूतान्यंन्वाविश्यं। दैवीं वाचं वदिसं। द्विषतों नः परावद। तान्मृत्यो मृत्यवे नय। त आर्त्याऽऽर्तिमार्च्छन्तु। अग्निनाऽग्निः संवेदताम्॥७५॥ |
| प्रसार्य सुक्थ्यौं पतंसि। सुव्यमिक्षं निपेपिं च। मेहकंस्य |

चुनामंमत्॥ ७६॥

[३५]

अत्रिणा त्वा क्रिमे हिन्म। कण्वेन ज्मदेग्निना। विश्वावंसोर्ब्रह्मणा हृतः। क्रिमीणा् राजाः। अप्येषाः स्थपितंर्हृतः। अथो माताऽथो पिता। अथो स्थूरा अथो क्षुद्राः। अथो कृष्णा अथौ श्वेताः। अथो आशाितंका हृताः। श्वेतािमेः सह सर्वे हताः॥७७॥

_[३६]

आह्रावंद्य। शृतस्यं ह्विषो यथां। तत्सत्यम्। यद्मुं यमस्य जम्भंयोः। आदंधामि तथा हि तत्। खण्फण्म्रसिं॥७८॥

[シょ]

ब्रह्मणा त्वा शपामि। ब्रह्मणस्त्वा शपथेन शपामि। घोरेणं त्वा भृगूणां चक्षुंषा प्रेक्षें। रौद्रेण त्वाङ्गिरसां मनसा ध्यायामि। अघस्यं त्वा धारंया विद्धामि। अधरो मत्पंद्यस्वाऽसौ॥७९॥

[36]

उत्तंद शिमिजावरि। तल्पेंजे तल्प उत्तंद। गिरी॰ रनु प्रवेशय। मरींची्रुप सन्नुंद। यावंदितः पुरस्तांदुदयांति सूर्यः। तावंदितोंऽमुं नांशय। योंऽस्मान्द्वेष्टिं। यं चं वृयं द्विष्मः॥८०॥ भूर्भुवः सुवो भूर्भुवः सुवो भूर्भुवः सुवंः। भुवौऽद्धायि भुवौऽद्धायि भुवौऽद्धायि। नृम्णायि नृम्णं नृम्णायि नृम्णं नृम्णायि नृम्णम्। निधाय्यो वायि निधाय्यो वायि निधाय्यो वायि। ए अस्मे अस्मे। सुवर्न ज्योतीः॥८१॥

[४०]

पृथिवी समित्। ताम्गिः सिनन्धे। साऽग्निः सिनन्धे। ताम्हः सिनन्धे। सा मा सिनिद्धा। आयुंषा तेजंसा। वर्चसा श्रिया। यशंसा ब्रह्मवर्चसेनं। अन्नाद्येन सिनन्ताः स्वाहाँ। अन्तरिक्षः समित्॥८२॥

तां वायुः सिनिन्धे। सा वायु सिनिन्धे। तामह सिनिन्धे। सा मा सिनिद्धा। आयुंषा तेर्जसा। वर्चसा श्रिया। यशंसा ब्रह्मवर्चसेनं। अन्नाद्येन सिनिन्ता स्वाहाँ। द्यौः सिनित्। तामांदित्यः सिनिन्धे॥८३॥

साऽऽदित्य सिन्धे। ताम्ह सिन्धे। सा मा सिन्धा। आयुंषा तेजंसा। वर्चसा श्रिया। यशंसा ब्रह्मवर्चसेनं। अन्नाद्यंन सिनंन्ता स्वाहाँ। प्राजापत्या में सिनदंसि सपत्रक्षयंणी। भ्रातृव्यहा में ऽसि स्वाहाँ। अग्नै व्रतपते व्रतं चंरिष्यामि॥८४॥

तच्छंकेयं तन्में राध्यताम्। वायौं व्रतपत् आदिंत्य व्रतपते।

व्रतानां व्रतपते व्रतं चेरिष्यामि। तच्छंकेयं तन्मे राध्यताम्। द्योः समित्। तामांदित्यः समिन्धे। साऽऽदित्य समिन्धे। तामृह समिन्धे। सा मा समिद्धा। आयुंषा तेर्जसा॥८५॥

वर्चसा श्रिया। यशंसा ब्रह्मवर्चसेनं। अन्नाद्यंन सिनंन्ता क्र् स्वाहाँ। अन्तरिक्ष समित्। तां वायुः सिनंन्धे। सा वायु स सिनंन्धे। तामह सिनंन्धे। सा मा सिनंद्धा। आयुषा तेर्जसा। वर्चसा श्रिया॥८६॥

यशंसा ब्रह्मवर्चसेनं। अन्नाद्येन् सिनंता क्र्याहाँ। पृथिवी सिमत्। ताम् ग्निः सिनंन्धे। साऽग्निः सिनंन्धे। ताम् हः सिनंन्धे। सा मा सिनंद्धा। आयुंषा तेजंसा। वर्चसा श्रिया। यशंसा ब्रह्मवर्चसेनं॥८७॥

अन्नाद्यंन् सिमंन्ता इं स्वाहाँ। प्राजापत्या में सिमदंसि सपत्नक्षयंणी। भ्रातृ व्यहा में ऽसि स्वाहाँ। आदित्य व्रतपते व्रतमंचारिषम्। तदंशकं तन्में ऽराधि। वायौं व्रतपते उग्ने व्रतपते। व्रतानां व्रतपते व्रतमंचारिषम्। तदंशकं तन्में ऽराधि॥८८॥

सुमित्सिमेंन्थे ब्रुतं चेरिष्याम्यायुंषा तेजंसा वर्चसा श्रिया यशंसा ब्रह्मवर्चसेनाष्टौ चं॥४१॥—[४९]

शं नो वार्तः पवतां मात्रिश्वा शं नंस्तपतु सूर्यः। अहांनिशं भंवन्तु नः श॰ रात्रिः प्रतिधीयताम्। शमुषा नो व्यंच्छतु शमांदित्य उदेतु नः। शिवा नः शन्तंमा भव सुमृडीका सरंस्वति। मा ते व्योम स्न्हिशं। इडांये वास्त्वंसि वास्तुमद्वांस्तुमन्तों भूयास्म मा वास्तोंश्छित्स्मह्यवास्तुः स भूयाद्योंऽस्मान्द्वेष्टि यं चं वयं द्विष्मः। प्रतिष्ठासिं प्रतिष्ठावंन्तो भूयास्म मा प्रतिष्ठायांश्छित्स्मह्यप्रतिष्ठः स भूयाद्योंऽस्मान्द्वेष्टि यं चं वयं द्विष्मः। आ वांत वाहि भेषजं वि वांत वाहि यद्रपः। त्व हि विश्वभेषजो देवानां दूत ईयंसे। द्वाविमो वातौ वातु आ सिन्थोरा पंरावतः॥८९॥

दक्षं मे अन्य आवातु परान्यो वातु यद्रपंः। यद्दो वांतते गृहें ऽमृतंस्य निधिर्हितः। ततों नो देहि जीवसे ततों नो धेहि भेषुजम्। ततों नो मह आवंह वात आवांतु भेषजम्। शम्भूर्मयोभूर्नो हृदे प्र णु आयू ५ षि तारिषत्। इन्द्रंस्य गृहोंऽसि तं त्वा प्रपंद्ये सगुः सार्थः। सह यन्मे अस्ति तेने। भूः प्रपंद्ये भुवः प्रपंद्ये सुवः प्रपंद्ये भूर्भ्वः सुवः प्रपंद्ये वायुं प्रपद्येऽनौर्तां देवतां प्रपद्येऽश्मानमाखणं प्रपंद्ये प्रजापंतेर्ब्रह्मकोशं ब्रह्म प्रपंद्य ओं प्रपंद्ये। अन्तरिक्षं म उर्वन्तरं बृहद्ग्रयः पर्वताश्च यया वातः स्वस्त्या स्वंस्तिमान्तयां स्वस्त्या स्वंस्तिमानंसानि। प्राणापानौ मृत्योर्मा पातुं प्राणापानौ मा मां हासिष्टुं मियं मेथां मियं प्रजां मय्यग्निस्तेजों दधातु मियं मेधां मियं प्रजां मयीन्द्रं इन्द्रियं दंधातु मियं मेधां मियं प्रजां मिय सूर्यो भ्राजों

दधातु॥९०॥

द्युभिर्क्तुभिः परिपातम्स्मानिरिष्टेभिरिश्वना सौभंगेभिः। तन्नीं मित्रो वर्रुणो मामहन्तामिदितिः सिन्धुः पृथिवी उत द्यौः। कयां निश्चित्र आ भ्वदूती सदावृधः सखाँ। कया शिवष्ठया वृता। कस्त्वां सत्यो मदानां मर्श्हेष्ठो मत्सदन्धंसः। दृढाचिंदारुजे वस्। अभी षु णः सखींनामिवता जंरितृणाम्। शृतं भंवास्यूतिभिः। वयः सुपूर्णा उपंसेदुरिन्द्रं प्रियमेधा ऋषयो नाधमानाः। अपं ध्वान्तमूण्हि पूर्धि चक्षुम् मुग्ध्यंस्मान्निधयेव बद्धान्॥९१॥

शं नों देवीरिभिष्टंय आपों भवन्तु पीतयैं। शं योरिभस्नंवन्तु नः। ईशांना वार्याणां क्षयंन्तीश्चर्षणीनाम्। अपो यांचामि भेषजम्। सुमित्रा न आप ओषंधयः सन्तु दुर्मित्रास्तस्में भूयासुर्यों उस्मान्द्वेष्टि यं चं वयं द्विष्मः। आपो हि ष्ठा मयोभ्वस्ता नं ऊर्जे दंधातन। महे रणांय चक्षंसे। यो वंः शिवतंमो रसस्तस्यं भाजयतेह नंः। उशतीरिंव मातरंः। तस्मा अरं गमाम वो यस्य क्षयांय जिन्वंथ॥९२॥ आपो जनयंथा च नः। पृथिवी शान्ता साऽग्निनां शान्ता सा में शान्ता शुच शमयतु। अन्तरिक्षश् शान्ता तद्वायुनां शान्ता तन्मे शान्तर शुच शमयतु। द्यौः शान्ता साऽऽदित्येनं शान्ता सा में शान्ता शुच शमयतु। पृथिवी शान्तिर्देशः

शान्तिरवान्तरदिशाः शान्तिरग्निः शान्तिर्वायुः शान्तिरादित्यः शान्तिंश्चन्द्रमाः शान्तिर्नक्षंत्राणि शान्तिरापः शान्तिरोषंधयः शान्तिर्वनस्पतंयः शान्तिर्गौः शान्तिरजा शान्तिरश्वः शान्तिः पुरुषः शान्तिर्ब्रह्म शान्तिं ब्राह्मणः शान्तिः शान्तिरेव शान्तिः शान्तिमें अस्तु शान्तिः। तयाहर शान्त्या सर्वशान्त्या मह्यं द्विपदे चतुंष्पदे च शान्तिं करोमि शान्तिंमें अस्तु शान्तिः। एह श्रीश्च हीश्च धृतिंश्च तपों मेधा प्रंतिष्ठा श्रद्धा सत्यं धर्मश्चेतानि मोत्तिष्ठन्तुमनूत्तिष्ठन्तु मा माङ् श्रीश्च हीश्च धृतिश्च तपो मेधा प्रंतिष्ठा श्रद्धा सत्यं धर्मश्चेतानि मा मा हांसिषुः। उदायुंषा स्वायुषोदोषंधीना ५ रसेनोत्पर्जन्यंस्य शुष्मेणोदंस्थाममृता ५ अनु। तचक्षुंर्देवहितं पुरस्तांच्छुऋमुचरत्। पश्येम श्ररदः श्तं जीवेम श्ररदेः श्तं नन्दोम श्ररदेः श्तं मोदोम शरदेः शतं भवीम शरदेः शत श्रुणवीम श्रुरदेः श्रुतं प्रब्रंवाम शुरदेः शुतमजीताः स्याम शरदेः शतं ज्योक्र सूर्यं दृशे। य उदंगान्महतोऽर्णवाहिभाजंमानः सरि्रस्य मध्यात्स मां वृष्भो लोहिताक्षः सूर्यो विपश्चिन्मनंसा पुनात्। ब्रह्मणश्चोतंन्यसि ब्रह्मण आणी स्थो ब्रह्मण आवर्पनमसि धारितेयं पृथिवी ब्रह्मणा मही धारितमेनेन महदन्तरिक्षं दिवं दाधार पृथिवी सदेवां यदहं वेद तदहं धारयाणि मा मद्वेदोऽधिविस्नंसत्। मेधामनीषे माविंशता समीचीं भूतस्य भव्यस्यावंरुध्ये सर्वमायंरयाणि सर्वमायंरयाणि। आभिर्गीर्भियंदतों न ऊनमाप्यांयय हरिवो वर्धमानः। यदा स्तोतृभ्यो महिं गोत्रा रुजासिं भूयिष्टभाजो अधं ते स्याम। ब्रह्म प्रावांदिष्म तन्नो मा हांसीत्। ॐ शान्तिः शान्तिः शान्तिः॥९३॥

पुरावतों दधातु बुद्धां जिन्वंथ दृशे सप्त चं॥४२॥🕳 नमों वाचे या चोंदिता या चानुंदिता तस्यैं वाचे नमो नमों वाचे नमों वाचस्पतेये नम ऋषिंभ्यो मन्नकुद्धो मन्नंपतिभ्यो मा मामृषंयो मन्नकृतो मन्नपतंयः परांदुर्माहमृषींन्मन्नकृतो मन्नपतीन्परादां वैश्वदेवीं वाचंमुद्यास शिवामदंस्तां जुष्टां देवेभ्यः शर्म मे द्यौः शर्म पृथिवी शर्म विश्वंमिदं जगंत्। शर्म चन्द्रश्च सूर्यश्च शर्म ब्रह्मप्रजापती। भूतं वंदिष्ये भुवंनं वदिष्ये तेजों वदिष्ये यशों वदिष्ये तपों वदिष्ये ब्रह्मं वदिष्ये सत्यं वंदिष्ये तस्मां अहमिदमुंपस्तरंणमुपंस्तृण उपस्तरंणं मे प्रजायै पश्नां भूयादुपस्तरणमहं प्रजायै पश्नां भूयासं प्राणांपानौ मृत्योमां पातं प्राणांपानौ मा मां हासिष्टं मधुं मनिष्ये मधुं जनिष्ये मधुं वक्ष्यामि मधुं विदष्यामि मधुंमतीं देवेभ्यो वाचंमुद्यास र शुश्रूषेण्यां मनुष्येभ्यस्तं मां देवा अंवन्तु शोभायै पितरोऽनुंमदन्तु। ॐ शान्तिः शान्तिः शान्तिः॥



॥पञ्चमः प्रश्नः॥

ॐ शं नस्तन्नो मा हांसीत्॥ ॐ शान्तिः शान्तिः॥ देवा व स्त्रमांसत। ऋद्धिंपरिमितं यशंस्कामाः। तेंंऽब्रुवन्। यन्नः प्रथमं यशं ऋच्छात्। सर्वेषां नस्तत्सहास्वितिं। तेषां कुरुक्षेत्रं वेदिरासीत्। तस्यैं खाण्ड्वो देक्षिणार्द्ध आंसीत्। तूर्प्यम्तरार्द्धः। परीणज्ञंघनार्द्धः। मरवं उत्करः॥१॥

तेषां मुखं वैष्णुवं यशे आर्च्छत्। तन्त्र्यंकामयत। तेनापांकामत्। तं देवा अन्वांयन्। यशोऽव्रुरुर्रुत्समानाः। तस्यान्वागंतस्य। सृव्याद्धनुरजांयत। दक्षिणादिषंवः। तस्मादिषुधन्वं पुण्यंजन्म। यज्ञजंन्मा हि॥२॥

तमेक्॰ सन्तम्। बहवो नाभ्यंधृष्णुवन्। तस्मादेकंमिषुधन्वि-नम्। बहवोऽनिषुधन्वा नाभिधृंष्णुवन्ति। सोंऽस्मयत। एकं मा सन्तं बहवो नाभ्यंधर्षिषुरितिं। तस्यं सिष्मियाणस्य तेजोऽपाँकामत्। तद्देवा ओषंधीषु न्यंमृजुः। ते श्यामाकां अभवन्। स्मुयाका वै नामैते॥३॥

तत्स्मयाकांना इस्मयाकृत्वम्। तस्माँ द्वीक्षितेनां पृगृह्यं स्मेत्व्यम्। तेजंसो धृत्यै। सधनुः प्रतिष्कभ्यां तिष्ठत्। ता उपदीकां अब्रुवन्वरं वृणामहै। अर्थं व इम इस्याम। यत्र के च खनांम। तद्पों ऽभितृंणदामेति। तस्मां दुपदीका यत्र के च खनंनित। तद्पों ऽभितृंनदन्ति॥४॥

वारेवृत् ह्यांसाम्। तस्य ज्यामप्यांदन्। तस्य धनुंर्विप्रवंमाण् शिर् उदंवर्तयत्। तद्यावांपृथिवी अनुप्रावंर्तत। यत् प्रावंर्तत। तत्प्रंवर्ग्यस्य प्रवर्ग्यत्वम्। यद्धाँ(४)इत्यपंतत्। तद्धमंस्यं धर्मत्वम्। मृह्तो वीर्यमपप्तदितिं। तन्मंहावीरस्यं महावीर्त्वम्॥५॥

यद्स्याः स्मभंरन्। तत्सम्राज्ञाः सम्राद्वम्। तङ् स्तृतं देवतां स्त्रोधा व्यंगृह्णत्। अग्निः प्रांतः सवनम्। इन्द्रो माध्यं दिन् सवनम्। विश्वेदेवास्तृतीयसवनम्। तेनापंशीर्ष्णा यज्ञेन् यजमानाः। नाशिषोऽवारुन्धतः। न सुवर्गं लोकम्भ्यंजयन्। ते देवा अश्विनांवब्रुवन्॥६॥

भिषजौ वै स्थंः। इदं यज्ञस्य शिरः प्रतिधत्तमिति। तावंब्रतां वरं वृणावहै। ग्रहं एव नावत्रापि गृह्यतामिति। ताभ्यांमेतमांश्विनमंगृह्णन्। तावेतद्यज्ञस्य शिरः प्रत्यंधत्ताम्। यत्प्रंवर्ग्यः। तेन सशींष्णां यज्ञेन यजंमानाः। अवाशिषो- ऽर्रुन्थत। अभि सुंवर्गं लोकमंजयन्। यत्प्रंवर्ग्यं प्रवृणिति। यज्ञस्यैव तिच्छरः प्रतिद्धाति। तेन सशींष्णां यज्ञेन यजंमानः। अवाशिषों रुन्थे। अभि सुंवर्गं लोकं जंयति। तस्मादेष आश्विनप्रंवया इव। यत्प्रंवर्ग्यः॥७॥

उत्करो ह्यंते तृन्दन्ति महावीरुत्वमंब्रुवन्नजयन्त्सुप्त चं॥१॥______[१]

सावित्रं जुंहोति प्रसूँत्यै। चतुर्गृहीतेनं जुहोति। चतुंष्पादः

प्शवंः। प्शूनेवावंरुन्थे। चतंस्रो दिशंः। दिक्ष्वंव प्रतितिष्ठति। छन्दा रंसि देवेभ्योऽपांकामन्। न वोऽभागानि ह्व्यं वंक्ष्याम् इति। तेभ्यं पृतचंतुर्गृहीतमंधारयन्। पुरोनुवाक्यांयै याज्यांयै॥८॥

देवतांये वषद्कारायं। यचंतुर्गृहीतं जुहोतिं। छन्दा ईस्येव तत् प्रीणाति। तान्यंस्य प्रीतानिं देवेभ्यों हृव्यं वहन्ति। ब्रह्मवादिनों वदन्ति। होत्व्यंं दीक्षितस्यं गृहा(३)इ न होत्व्या(३)मितिं। हृविर्वे दीक्षितः। यज्जंहुयात्। हृविष्कृतं यजमानमुग्नौ प्रदेध्यात्। यन्न जुंहुयात्॥९॥

यज्ञपुरुर्न्तिरियात्। यजुरेव वंदेत्। न ह्विष्कृतं यजंमानमुग्नौ प्रदर्धाति। न यंज्ञपुरुर्न्तरेति। गायुत्री छन्दाङ्स्यत्यंमन्यत। तस्यै वषद्वारों ऽभ्यय्य शिरों ऽच्छिनत्। तस्यै द्वेधा रसः परापतत्। पृथिवीमुर्द्धः प्राविंशत्। पृशूनुर्द्धः। यः पृथिवीं प्राविंशत्॥१०॥

स खंदिरों ऽभवत्। यः पृशून्। सों ऽजाम्। यत्खांदियंभिभंवंति। छन्दंसामेव रसेन युज्ञस्य शिरः सम्भंरति। यदौदुंम्बरी। ऊर्ग्वा उंदुम्बरंः। ऊर्जैव युज्ञस्य शिरः सम्भंरति। यद्वैण्वी। तेजो वै वेणुं:॥११॥

तेर्जसैव यज्ञस्य शिरः सम्भंरति। यद्वैकंङ्कती। भा एवावंरुन्थे। देवस्यं त्वा सवितुः प्रस्व इत्यभ्रिमादंत्ते प्रसूँत्यै। अश्विनौंर्बाहुभ्यामित्यांह। अश्विनौ हि देवानांमध्वर्यू आस्तौम्। पूष्णो हस्तौभ्यामित्यांहु यत्यै। वज्रं इव वा एषा। यदभ्रिः। अभ्रिरिस् नारिर्सीत्यांह शान्त्यै॥१२॥

अध्वर्कृद्देवेभ्य इत्याह। यज्ञो वा अध्वरः। यज्ञकृद्देवेभ्य इति वावैतदाह। उत्तिष्ठ ब्रह्मणस्पत् इत्याह। ब्रह्मणेव यज्ञस्य शिरोऽच्छैति। प्रेतु ब्रह्मणस्पतिरित्याह। प्रेत्यैव यज्ञस्य शिरोऽच्छैति। प्र देव्येतु सूनृतेत्याह। यज्ञो वे सूनृतां। अच्छां वीरं नयं पङ्किराधसमित्यांह॥१३॥

पाङ्गो हि यज्ञः। देवा यज्ञं नंयन्तु न इत्यांह। देवानेव यंज्ञिनयंः कुरुते। देवीं द्यावापृथिवी अनुं मे मश्साथामित्यांह। आभ्यामेवानुंमतो यज्ञस्य शिरः सम्भरित। ऋद्यासंमुद्य मुखस्य शिर् इत्यांह। यज्ञो वै मुखः। ऋद्यासंमुद्य यज्ञस्य शिर् इति वावैतदांह। मुखायं त्वा मुखस्यं त्वा शीष्णं इत्यांह। निर्दिश्यैवैनंद्धरित॥१४॥

त्रिर्हरित। त्रयं इमे लोकाः। एभ्य एव लोकेभ्यों यज्ञस्य शिरः सम्भरित। तूष्णीं चंतुर्थं हरित। अपिरिमितादेव यज्ञस्य शिरः सम्भरित। मृत्खनादग्रे हरित। तस्मान्मृत्खनः कंरुण्यंतरः। इयत्यग्रं आसीरित्यांह। अस्यामेवाछंम्बद्धारं यज्ञस्य शिरः सम्भरित। ऊर्जं वा एत रसं पृथिव्या उपदीका उद्दिहन्ति॥१५॥ यद्वल्मीकम्ं। यद्वल्मीकव्पा संम्भारो भवंति। ऊर्जम्व रसं पृथिव्या अवंरुन्धे। अथो श्रोत्रंमेव। श्रोत्र्ड् ह्यंतत्पृथिव्याः। यद्वल्मीकंः। अवंधिरो भवति। य एवं वेदं। इन्द्रों वृत्राय् वज्रमुदंयच्छत्। स यत्रं यत्र पराक्रंमत॥१६॥

तन्नाद्धियत। स पूर्तीकस्तम्बे पराँक्रमत। सौँऽद्धियत। सौँऽब्रवीत्। ऊतिं वै में धा इतिं। तदूतीकांनामूतीकृत्वम्। यदूतीका भवन्ति। यज्ञायैवोतिं देधति। अग्निजा असि प्रजापंते रेत इत्यांह। य एव रसः पृशून्प्राविंशत्॥१७॥

तमेवावंरुन्थे। पश्चैते संम्भारा भंवन्ति। पाङ्को यज्ञः। यावांनेव यज्ञः। तस्य शिरः सम्भरित। यद्ग्राम्याणां पशूनां चर्मणा सम्भरेत्। ग्राम्यान्पशूञ्छुचाऽपंयत्। कृष्णाजिनेन सम्भरित। आर्ण्यानेव पृशूञ्छुचार्पयति। तस्मात्समावंत्पशूनां प्रजायंमानानाम्॥१८॥

आर्ण्याः पृशवः कनीयाः सः। शुचा ह्यंताः। लोमतः सम्भंरति। अतो ह्यंस्य मेध्यम्। परिगृह्या यंन्ति। रक्षंसामपंहत्ये। बहवों हरन्ति। अपंचितिमेवास्मिन्दधित। उद्धंते सिकंतोपोप्ते परिश्रिते निदंधित शान्त्यै। मदंन्तीभिरुपं सृजित॥१९॥

तेजं एवास्मिन्दधाति। मधुं त्वा मधुला कंरोत्वित्यांह। ब्रह्मणैवास्मिन्तेजों दधाति। यद्गाम्याणां पात्रांणां कपालैः स॰सृजत्। ग्राम्याणि पात्रांणि शुचाऽपंयेत्। अर्मकपालैः स॰सृजति। एतानि वा अनुपजीवनीयानि। तान्येव शुचाप्यति। शर्कराभिः स॰सृजति धृत्यैं। अथो शन्त्वायं। अजलोमैः स॰सृजति। एषा वा अग्नेः प्रिया तृनूः। यद्जा। प्रिययैवैनं तृनुवा स॰सृजिति। अथो तेर्जसा। कृष्णाजिनस्य लोमंभिः स॰सृजिति। युज्ञो वै कृष्णाजिनम्। युज्ञेनैव यज्ञ॰ स॰सृजिति॥२०॥

याज्यांये न जुंहुयादविंशद्वेणुः शान्त्ये पुङ्किरांधस्मित्यांह हरित दिहन्ति प्राक्रंमताविंशत् प्रजायंमानानाः स्जिति शुन्त्वायाष्टौ चं॥२॥————[२]

परिश्रिते करोति। ब्रह्मवर्चसस्य परिगृहीत्यै। न कुर्वन्नभि प्राण्यात्। यत्कुर्वन्नभि प्राण्यात्। प्राणाञ्छुचार्पयेत्। अपहाय प्राणिति। प्राणानां गोपीथायं। न प्रवग्यं चादित्यं चान्तरेयात्। यदंन्तरेयात्। दुश्चर्मां स्यात्॥२१॥

तस्मान्नान्तराय्यम्। आत्मनों गोपीथायं। वेणुंना करोति। तेजो वै वेणुंः। तेजंः प्रवर्ग्यः। तेजंसैव तेजः समर्द्धयति। मखस्य शिरोऽसीत्याह। युज्ञो वै मुखः। तस्यैतच्छिरंः। यत्प्रंवर्ग्यः॥२२॥

तस्मदिवमांह। यज्ञस्यं पदे स्थ इत्यांह। यज्ञस्य ह्यंते पदे। अथो प्रतिष्ठित्यै। गायत्रेणं त्वा छन्दंसा करोमीत्यांह। छन्दोभिरेवैनं करोति। त्र्युंद्धिं करोति। त्रयं इमे लोकाः। पुषां लोकानामाध्यै। छन्दोभिः करोति॥२३॥

वीर्यं वै छन्दा रसि। वीर्येणैवैनं करोति। यजुंषा बिलं करोति व्यावृंत्यै। इयं तं करोति। प्रजापंतिना यज्ञमुखेन सम्मितम्। इयं तं करोति। युज्ञपुरुषा सम्मितम्। इयं तं करोति। पृतावृद्वै पुरुषे वीर्यम्। वीर्यसम्मितम्॥२४॥

अपंरिमितं करोति। अपंरिमित्स्यावंरुद्धै। पृरिग्रीवं करोति धृत्यैं। सूर्यस्य हरंसा श्रायेत्यांह। यथायजुरेवैतत्। अश्वश्केनं धूपयति। प्राजापत्यो वा अश्वंः सयोनित्वायं। वृष्णो अश्वंस्य निष्पद्सीत्यांह। असौ वा आंदित्यो वृषाऽश्वंः। तस्य छन्दांश्सि निष्पत्॥२५॥

छन्दोभिरेवैनं धूपयति। अर्चिषं त्वा शोचिषे त्वेत्यांह। तेजं प्वास्मिन्दधाति। वारुणोऽभीद्धंः। मैत्रियोपैति शान्त्यै। सिद्धे त्वेत्यांह। यथायजुरेवैतत्। देवस्त्वां सिव्ततोद्वंपत्वित्यांह। सिवितृप्रंसूत पुवैनं ब्रह्मणा देवतांभिरुद्वंपति। अपंद्यमानः पृथिव्यामाशा दिश् आपृणेत्यांह॥२६॥

तस्मांद्गिः सर्वा दिशोऽनु विभांति। उत्तिष्ठ बृहन्भंवोध्वंस्तिष्ठ ध्रुवस्त्वमित्यांह् प्रतिष्ठित्यै। ईश्वरो वा एषोऽन्धो भवितोः। यः प्रव्वर्यम्नवीक्षंते। सूर्यस्य त्वा चक्षुषाऽन्वीक्ष् इत्यांह। चक्षुषो गोपीथायं। ऋजवें त्वा साधवें त्वा सुक्षित्यै त्वा भूत्यै त्वेत्यांह। इयं वा ऋजुः। अन्तरिक्ष साध्। असौ

सुंक्षितिः॥२७॥

दिशो भूतिं। इमानेवास्मैं लोकान्कंल्पयित। अथो प्रतिष्ठित्ये। इदमहम्मुमांमुष्यायणं विशा पृशुभिंर्ब्रह्मवर्चसेन् पर्यूह्मित्यांह। विशेवनं पृशुभिंर्ब्रह्मवर्चसेन् पर्यूहित। विशेतिं राजन्यंस्य ब्रूयात्। विशेवनं पर्यूहित। पृशुभिरित् वैश्यंस्य। पृशुभिरेवनं पर्यूहित। असुर्यं पात्रमनांच्छृण्णम्॥२८॥

आर्च्छृणित्ति। देवत्राकः। अज्ञक्षीरेणाऽऽच्छृणित्ति। प्रमं वा एतत्पर्यः। यदंजक्षीरम्। प्रमेणैवैनं पयसाऽऽच्छृणित्ति। यज्ञुषा व्यावृत्त्ये। छन्दोभिराच्छृणित्ति। छन्दोभिर्वा एष क्रियते। छन्दोभिरेव छन्दाङ्स्याच्छृणित्ति। छुन्धि वाच्मित्याह। वाचंमेवावंरुन्धे। छुन्ध्यूर्ज्मित्याह। ऊर्जमेवावंरुन्धे। छुन्धि ह्विरित्यांह। ह्विरेवाकंः। देवं पुरश्चर सुघ्यासन्त्वेत्यांह। यथायुजुरेवैतत्॥२९॥

स्याद्यत् प्रवृग्यंश्छन्दोंभिः करोति वीर्यंसम्मित्ं छन्दार्शस निष्पत्पृणेत्यांह सुक्षितिरनांच्छृण्णुञ्छन्दा्र्स्या-

च्छृंणत्त्यष्टौ चं॥३॥————[३]

ब्रह्मन्प्रचेरिष्यामो होतेर्घर्मम्भिष्टुहीत्यांह। एष वा एतर्रह् बृह्स्पतिः। यद्व्रह्मा। तस्मां एव प्रंतिप्रोच्य प्रचेरति। आत्मनोऽनांत्ये। यमायं त्वा मुखाय त्वेत्यांह। एता वा एतस्यं देवताः। ताभिरेवैन् समर्द्धयति। मदन्तीभिः प्रोक्षंति। तेजं एवास्मिन्दधाति॥३०॥ अभिपूर्वं प्रोक्षंति। अभिपूर्वमेवास्मिन्तेजों दधाति। त्रिः प्रोक्षंति। त्र्यांवृद्धि युज्ञः। अथों मेध्यत्वायं। होताऽन्वांह। रक्षंसामपहत्यै। अनवानम्। प्राणाना् सन्तंत्यै। त्रिष्टुभंः स्तीर्गायत्रीरिवान्वांह॥३१॥

गायत्रो हि प्राणः। प्राणमेव यर्जमाने दधाति। सन्तंतमन्वांह। प्राणानांमन्नाद्यंस्य सन्तंत्ये। अथो रक्षंसामपंहत्ये। यत्परिमिता अनुब्रूयात्। परिमित्मवंरुन्धीत। अपिरिमिता अनुब्रूयात्। परिमित्मवंरुन्धीत। अपिरिमिता अनुब्रूयात्। परिमित्मवंरुन्धीत। अपिरिमिता अपिरिमित्स्यावंरुद्धौ। शिरो वा एतद्यज्ञस्यं॥३२॥ यत्प्रंवर्ग्यः। ऊर्ङ्मुआः। यन्मौओ वेदो भवंति। ऊर्जैव यज्ञस्य शिरः समर्द्धयति। प्राणाहुतीर्जुहोति। प्राणानेव यर्जमाने दधाति। सप्त जुंहोति। सप्त वै शीर्ष्णयाः प्राणाः। प्राणानेवास्मिन्दधाति। देवस्त्वां सविता मध्वांऽनिक्कित्यांह॥३३॥

तेर्जसैवैनंमनिक्त। पृथिवीं तपंसस्रायस्वेति हिरंण्यमुपाँस्यति। अस्या अनंतिदाहाय। शिरो वा एतद्यज्ञस्यं। यत्प्रंवर्ग्यः। अग्निः सर्वा देवताः। प्रल्वानादीप्योपाँस्यति। देवतांस्वेव यज्ञस्य शिरः प्रतिद्धाति। अप्रंतिशीणांग्रं भवति। एतद्वर्रहर्ह्यंषः॥३४॥

अर्चिरंसि शोचिर्सीत्यांह। तेर्ज एवास्मिन्ब्रह्मवर्च्सं दंधाति। स॰सींदस्व महा॰ असीत्यांह। महान् ह्येषः। ब्रह्मवादिनो वदन्ति। एते वाव त ऋत्विजः। ये देर्शपूर्णमासयौः। अर्थ कथा होता यजमानायाऽऽशिषो नाशौस्त इति। पुरस्तादाशीः खलु वा अन्यो यज्ञः। उपरिष्टादाशीरुन्यः॥३५॥

अनाधृष्या पुरस्तादिति यदेतानि यज्रूष्ट्रष्याहै। शीर्षत एव यज्ञस्य यजेमान आशिषोऽवंरुन्धे। आर्युः पुरस्तादाह। प्रजां देक्षिणतः। प्राणं पृश्चात्। श्रोत्रंमुत्तरतः। विधृतिमुपरिष्टात्। प्राणानेवास्मै समीची दधाति। ईश्वरो वा एष दिशोऽनून्मंदितोः। यं दिशोऽनुं व्यास्थापयंन्ति॥३६॥

मनोरश्वांसि भूरिपुत्रेतीमाम्भिमृंशित। इयं वै मनोरश्वा भूरिपुत्रा। अस्यामेव प्रतितिष्ठत्यनुन्मादाय। सूप्सदो मे भूया मा मां हिश्सीरित्याहाहिश्सायै। चितंः स्थ परिचित् इत्याह। अपंचितिमेवास्मिन्दधाति। शिरो वा एतद्यज्ञस्यं। यत्प्रवर्ग्यः। असौ खलु वा आंदित्यः प्रवर्ग्यः। तस्यं मुरुतों रश्मयः॥३७॥

स्वाहां मुरुद्धिः परिश्रयस्वत्यांह। अमुमेवादित्यः रृश्मिभिः पर्यूहित। तस्मादसावांदित्योऽमुष्मिं ह्योके रृश्मिभिः पर्यूढः। तस्माद्राजां विशा पर्यूढः। तस्माद्रामणीः संजातेः पर्यूढः। अग्नेः सृष्टस्यं यतः। विकंङ्कतं भा आंर्च्छत्। यद्वैकंङ्कताः परिधयो भवन्ति। भा एवावंरुन्धे। द्वादंश भवन्ति॥३८॥ द्वादंश मासाः संवत्सरः। संवत्सरमेवावंरुन्धे। अस्ति

त्रयोदशो मास इत्यांहुः। यत्रयोदशः पंरिधिर्भवंति। तेनैव त्रयोदशं मासमवंरुन्धे। अन्तरिक्षस्यान्तर्धिरसीत्यांह व्यावृत्त्यै। दिवं तपंसस्रायस्वेत्युपरिष्टाद्धिरंण्यमधि निदंधाति। अमुष्या अनंतिदाहाय। अथों आभ्यामेवैनंमुभयतः परिंगृह्णाति। अर्हंन् बिभर्षि सार्यकानि धन्वेत्यांह॥३९॥ स्तौत्येवैनंमेतत्। गायत्रमंसि त्रैष्टुंभमसि जागंतमसीतिं धवित्राण्यादत्ते। छन्दोभिरेवैनान्यादत्ते। मधु मध्विति धूनोति। प्राणो वै मधुं। प्राणमेव यर्जमाने दधाति। त्रिः परियन्ति। त्रिवृद्धि प्राणः। त्रिः परियन्ति। त्र्यांवृद्धि यज्ञः॥४०॥ अथो रक्षंसामपंहत्यै। त्रिः पुनः परियन्ति। षट्थ्सम्पंद्यन्ते। षड्वा ऋतवंः। ऋतुष्वेव प्रतिंतिष्ठन्ति। यो वै घर्मस्यं प्रियां त्नुवंमा कामंति। दुश्चर्मा वै स भवति। एष ह वा अस्य प्रियां तनुवमाऋांमिति। यत् त्रिः प्रीत्यं चतुर्थं पर्येति। एता १ ह वा अंस्योग्रदेवो राजंनिराचंक्राम॥४१॥

ततो वै स दुश्चर्मां ऽभवत्। तस्मान्तिः प्रीत्य न चंतुर्थं परीयात्। आत्मनों गोपीयायं। प्राणा वै ध्वित्रांणि। अव्यंतिषङ्गं धून्वन्ति। प्राणानामव्यंतिषङ्गाय क्रृष्ट्यै। विनिषद्यं धून्वन्ति। दिक्ष्वंव प्रतिंतिष्ठन्ति। ऊर्ध्वं धून्वन्ति। सुवर्गस्यं लोकस्य समष्ट्ये। सर्वतों धून्वन्ति। तस्मांद्य सर्वतंः पवते॥४२॥

द्धातीवान्वांह यज्ञस्यांहैष उपरिष्टादाशीर्न्या व्यास्थापयन्ति रश्मयो भवन्ति धन्वेत्यांह यज्ञश्चंक्राम्

समंध्ये द्वे चं॥४॥।

[8]

अग्निश्वा वसंभिः पुरस्ताँद्रोचयत् गायत्रेण् छन्दसेत्यांह। अग्निरेवेनं वसंभिः पुरस्ताँद्रोचयति गायत्रेण् छन्दंसा। समांरुचितो रोचयत्यांह। आशिषंमेवेतामाशाँस्ते। इन्द्रंस्त्वा रुद्रैदंक्षिण्तो रोचयत् त्रैष्टुंभेन् छन्दसेत्यांह। इन्द्रं एवेन रं रुद्रैदंक्षिण्तो रोचयत् त्रैष्टुंभेन् छन्दंसा। समांरुचितो रोचयति त्रैष्टुंभेन् छन्दंसा। समांरुचितो रोचयति आशिषंमेवेतामाशाँस्ते। वरुणस्त्वाऽऽदित्यैः पश्चाद्रोचयत् जागंतेन् छन्दंसत्यांह। वरुण एवेनंमादित्यैः पश्चाद्रोचयत् जागंतेन् छन्दंसा॥४३॥

समांरुचितो रोंच्येत्यांह। आशिषंमेवैतामाशाँस्ते। द्युतानस्त्वां मारुतो मुरुद्धिरुत्तर्तो रोंचयत्वानुंष्टुभेन छन्दसेत्यांह। द्युतान एवेनं मारुतो मुरुद्धिरुत्तर्तो रोंचयत्यानुंष्टुभेन छन्दसा। समारुचितो रोंच्येत्यांह। आशिषंमेवैतामाशाँस्ते। बृह्स्पतिंस्त्वा विश्वदिवरुपरिष्टाद्रोचयतु पाङ्केन छन्दसेत्यांह। बृह्स्पतिंरेवैनं विश्वदिवरुपरिष्टाद्रोचयति पाङ्केन छन्दसा। समारुचितो रोंच्येत्यांह। आशिषंमेवैतामाशाँस्ते॥४४॥

रोचितस्त्वं देव घर्म देवेष्वसीत्याह। रोचितो ह्येष देवेषुं। रोचिषीयाहं मनुष्येष्वित्याह। रोचंत एवेष मनुष्येषु। सम्नाङ्घर्म रुचितस्त्वं देवेष्वायुष्मा इस्तेज्ञस्वी ब्रह्मवर्चस्यंसीत्याह। रुचितो ह्येष देवेष्वायुष्मा इस्तेज्ञस्वी ब्रह्मवर्चसी। रुचितोऽहं मनुष्येष्वायुष्मा इस्तेज्ञस्वी ब्रह्मवर्चसी भूयासमित्याह। रुचित एवैष मंनुष्येंष्वायुंष्मा इस्तेज्स्वी ब्रंह्मवर्च्सी भंवति। रुगंसि रुचं मियं धेहि मिये रुगित्याह। आशिषंमेवैतामाशांस्ते। तं यदेतैर्यजुंर्भिररोंचियत्वा। रुचितो धर्म इतिं प्रब्रूयात्। अरोंचुकोऽध्वर्युः स्यात्। अरोंचुको यजंमानः। अथ यदेनमेतैर्यजुंर्भी रोचियत्वा। रुचितो धर्म इति प्राहं। रोचुंकोऽध्वर्युर्भवंति। रोचुंको यजंमानः॥४५॥

पृश्चाद्रोचयित् जागंतेन् छन्दंसा पाङ्कंन् छन्दंसा समारुचितो रोच्येत्यांहाशिषंमेवेतामाशाँस्ते शास्तेऽष्टौ

शिरो वा पृतद्यज्ञस्यं। यत् प्रंवर्ग्यः। ग्रीवा उंप्सदः। पुरस्तांदुप्सदां प्रवर्ग्यं प्रवृंणिक्ता। ग्रीवास्वेव यज्ञस्य शिरः प्रतिद्धाति। त्रिः प्रवृंणिक्ति। त्रयं इमे लोकाः। पृभ्य एव लोकभ्यो यज्ञस्य शिरोऽवंरुन्थे। षट्थ्सम्पंद्यन्ते। षड्वा ऋतवंः॥४६॥

ऋतुभ्यं एव यज्ञस्य शिरोऽवंरुन्थे। द्वादंशकृत्वः प्रवृंणिक्ति। द्वादंश मासाः संवत्सरः। संवत्सरादेव यज्ञस्य शिरोऽवंरुन्थे। चतुंविं शितः सम्पंद्यन्ते। चतुंविं शितरर्द्धमासाः। अर्द्धमासेभ्यं एव यज्ञस्य शिरोऽवंरुन्थे। अथो खलुं। सकृदेव प्रवृज्यः। एक हि शिरंः॥४७॥

अग्निष्टोमे प्रवृंणिक्ति। एतावान् वै यज्ञः। यावांनग्निष्टोमः। यावानेव यज्ञः। तस्य शिरः प्रतिंदधाति। नोक्थ्ये प्रवृंश्यात्। प्रजा वै पृशवं उक्थानिं। यदुक्थ्ये प्रवृश्यात्। प्रजां पृशूनंस्य

निर्देहेत्। विश्वजिति सर्वपृष्ठे प्रवृंणक्ति॥४८॥

पृष्ठानि वा अर्च्युतं च्यावयन्ति। पृष्ठेरेवास्मा अर्च्युतं च्यावियत्वाऽवंरुन्थे। अपंश्यं गोपामित्याह। प्राणो वै गोपाः। प्राणमेव प्रजासु वियातयित। अपंश्यं गोपामित्याह। असौ वा आंदित्यो गोपाः। स हीमाः प्रजा गोपायितं। तमेव प्रजानां गोपारं कुरुते। अनिपद्यमान्मित्यांह॥४९॥

न ह्यंष निपद्यंते। आ च परां च पृथिभिश्चरंन्त्मित्यांह। आ च ह्यंष परां च पृथिभिश्चरंति। स स्प्रीचीः स विषूंचीर्वसान् इत्यांह। स्प्रीचींश्च ह्यंष विषूंचीश्च वसानः प्रजा अभि विपश्यंति। आवंरीवर्ति भुवंनेष्वन्तरित्यांह। आ ह्यंष वंरीवर्ति भुवंनेष्वन्तः। अत्रं प्रावीर्मधु माध्वींभ्यां मधु माधूंचीभ्यामित्यांह। वासंन्तिकावेवास्मां ऋतू कंल्पयति। समग्निरग्निनां गतेत्यांह॥५०॥

ग्रैष्मांवेवास्मां ऋतू कंल्पयति। सम्ग्रिर्ग्निनां गृतेत्यांह। अग्निहींवैषोंऽग्निनां सङ्गच्छंते। स्वाहा सम्ग्निस्तपंसा गृतेत्यांह। पूर्वमेवादितम्। उत्तरेणाभिगृणाति। धूर्ता दिवो विभासि रजंसः पृथिव्या इत्यांह। शारदावेवास्मां ऋतू कंल्पयति॥५१॥

दिवि देवेषु होत्रां युच्छेत्यांह। होत्रांभिरेवेमाँ श्लोकान्त्सन्दंधाति। विश्वांसां भुवां पत् इत्यांह। हैमंन्तिकावेवास्मां ऋतू कंत्पयति। देवश्रस्त्वं देव घर्म देवान्पाहीत्याह। शैशिरावेवास्मां ऋतू कंत्पयति। तुपोजां वाचंमस्मे नियंच्छ देवायुव्मित्याह। या वै मेध्या वाक्। सा तंपोजाः। तामेवावंरुन्थे॥५२॥

गर्भो देवानामित्यांह। गर्भो ह्यंष देवानांम्। पिता मंतीनामित्यांह। प्रजा वै मृतयः। तासांमेष पृव पिता। यत् प्रंवर्ग्यः। तस्मांदेवमांह। पितः प्रजानामित्यांह। पितह्यंष प्रजानांम्। मितः कवीनामित्यांह॥५३॥

मित् ह्यंष कंवीनाम्। सं देवो देवेनं सिवता यंतिष्ट् सं सूर्यणारुक्तेत्यांह। अमुं चैवादित्यं प्रंवर्ग्यं च संश्वास्ति। आयुर्दास्त्वम्समभ्यं घर्म वर्चोदा असीत्यांह। आशिषंमेवेतामाशास्ते। पिता नोंऽसि पिता नों बोधेत्यांह। बोधयंत्येवेनम्। न वै तेंऽवकाशा भंवन्ति। पित्निये दश्मः। नव वै पुरुषे प्राणाः॥५४॥

नाभिर्दश्मी। प्राणानेव यर्जमाने दधाति। अथो दशाँक्षरा विराट। अर्न्न विराट। विराजैवान्नाद्यमवंरुन्धे। यूजस्य शिरौंऽच्छिद्यत। तद्देवा होत्रांभिः प्रत्यंदधः। ऋत्विजोऽवेक्षन्ते। एता वै होत्राः। होत्रांभिरेव यज्ञस्य शिरः प्रतिंदधाति॥५५॥ रुचितमवेक्षन्ते। रुचिताद्वै प्रजापंतिः प्रजा अंसृजत। प्रजानाः सृष्टौं। रुचितमवेक्षन्ते। रुचिताद्वै प्रजन्यों वर्षित। वर्षुंकः पूर्जन्यों भवति। सं प्रजा एंधन्ते। रुचितमवेंक्षन्ते। रुचितं वै ब्रंह्मवर्च्सम्। ब्रह्मवर्चिसेनों भवन्ति॥५६॥

अधीयन्तोऽवेंक्षन्ते। सर्वमायुंर्यन्ति। न पत्यवेंक्षेत। यत्पत्यवेक्षेत। प्रजांयेत। प्रजां त्वंस्यै निर्दहेत्। यन्नावेक्षेत। न प्रजांयेत। नास्यैं प्रजां निर्दहेत्। तिर्स्कृत्य यर्जुर्वाचयित। प्रजांयते। नास्यैं प्रजां निर्दहित। त्वष्टींमती ते सप्येत्यांह। सपाद्धि प्रजाः प्रजायंन्ते॥५७॥

क्तिवो हि शिर् सर्वपृष्टे प्रवृण्क्वितिपद्यमान्मित्यांह गुतेत्यांह शार्वावेवास्मां ऋतू केल्पयित रूथे कर्वानामित्यांह प्राणाः प्रतिदेधात भवन्ति वाचयित च्त्वारि चाहा [६] देवस्ये त्वा सिवृतुः प्रस्व इति रश्नामादेत्ते प्रसूत्यै। अश्विनौर्बाहुभ्यामित्यांह। अश्विनौ हि देवानांमध्वर्यू आस्तांम्। पूष्णो हस्तांभ्यामित्यांह यत्यै। आद्देऽदित्ये रास्नाऽसीत्यांह यज्जंष्कृत्यै। इड एह्यदित एहि सर्स्वत्येहीत्यांह। एतानि वा अस्यै देवनामानि। देवनामेरेवैनामाह्वयित। असावेह्यसावेह्यसावेहीत्यांह। एतानि वा अस्यै प्राप्ति। एतानि वा अस्यै प्रमुष्यनामानि॥ ५८॥

म्नुष्यनामेरेवेनामाह्वंयति। षद्थ्सम्पंद्यन्ते। षङ्घा ऋतवंः। ऋतुभिरेवेनामाह्वंयति। अदित्या उष्णीषंमसीत्यांह। यथायजुरेवेतत्। वायुरंस्यैड इत्यांह। वायुदेवत्यों वे वत्सः। पूषा त्वोपावंसृज्तित्यांह। पौष्णा वे देवतंया पृशवंः॥५९॥ स्वयैवैनं देवतंयोपावंसृजित। अश्विभ्यां प्रदांपयेत्यांह। अश्विनौ वै देवानां भिषजौं। ताभ्यांमेवास्में भेषजं कंरोति। यस्ते स्तनः शश्य इत्यांह। स्तौत्येवैनांम्। उस्रं घर्मः शिर्षोस्रं घर्मं पाहि घर्मायं शिर्षेत्यांह। यथां ब्रूयादमुष्में देहीतिं। ताद्दगेव तत्। बृहुस्पितस्त्वोपं सीद्त्वित्याह॥६०॥

ब्रह्म वै देवानां बृह्स्पतिः। ब्रह्मणैवैनामुपंसीदति। दानंवः स्थ् पेरंव इत्यांह। मेध्यांनेवैनांन्करोति। विष्वुग्वृतो लोहिंतेनेत्यांह् व्यावृत्त्ये। अश्विभ्यां पिन्वस्व सरंस्वत्ये पिन्वस्व पूष्णे पिन्वस्व बृह्स्पतंये पिन्वस्वेत्यांह। पुताभ्यो ह्यंषा देवतांभ्यः पिन्वंते। इन्द्रांय पिन्वस्वेन्द्रांय पिन्वस्वेत्यांह। इन्द्रमेव भांगुधेयेन समर्द्धयति। द्विरिन्द्रायेत्यांह॥६१॥

तस्मादिन्द्रों देवतांनां भूयिष्ठभाक्तंमः। गायत्रोऽसि त्रेष्ठंभोऽसि जागतम्सीति शफोपयमानादंत्ते। छन्दोभिरेवैनानादंत्ते। सहोर्जो भागेनोपमेहीत्यांह। ऊर्ज एवैनं भागमंकः। अश्विनौ वा एतद्यज्ञस्य शिरंः प्रतिदर्धतावब्रूताम्। आवाभ्यांमेव पूर्वाभ्यां वषंद्रियाता इति। इन्द्राश्विना मधुनः सार्घस्येत्यांह। अश्विभ्यांमेव पूर्वाभ्यां वषंद्ररोति। अथो अश्विनांवेव भाग्धेयेन समर्द्धयति॥६२॥

घुमं पात वसवो यजंता विडत्यांह। वसूनेव भागधेयेंन् समर्द्धयति। यद्वंषद्भुर्यात्। यातयांमाऽस्य वषद्भारः स्यात्। यन्न वंषद्भुर्यात्। रक्षा १सि यज्ञ १ हंन्युः। विडत्यांह। प्रोक्षंमेव वषंद्भरोति। नास्यं यातयांमा वषद्भारो भवंति। न यज्ञ १ रक्षा १सि प्रन्ति॥६३॥

स्वाहाँ त्वा सूर्यस्य र्ष्मयं वृष्टिवनंये जुहोमीत्यांह। यो वा अंस्य पुण्यों र्ष्मिः। स वृष्टिवनिः। तस्मां एवैनं जुहोति। मधुं हिवर्सीत्यांह। स्वदयंत्येवैनम्ं। सूर्यस्य तपंस्तपेत्यांह। यथायजुरेवैतत्। द्यावांपृथिवीभ्यां त्वा परिगृह्णामीत्यांह। द्यावांपृथिवीभ्यांमेवैनं परिगृह्णाति॥६४॥

अन्तिरिक्षेण त्वोपंयच्छामीत्यांह। अन्तिरिक्षेणैवैन्मुपंयच्छित। न वा एतं मंनुष्यों भर्तुमर्हित। देवानां त्वा पितृणामनुंमतो भर्तु शकेयमित्यांह। देवैरेवैनं पितृभिरनुंमत आदंत्ते। वि वा एनमेतदंर्द्धयन्ति। यत्पश्चात्प्रवृज्यं पुरो जुह्वंति। तेजोऽसि तेजोऽनु प्रेहीत्यांह। तेजं एवास्मिन्दधाति। दिविस्पृङ्गा मां हिश्सीरन्तिरिक्षस्पृङ्गा मां हिश्सीरत्याहाहि एसिविस्पृङ्गा मां हिश्सीरित्याहाहि एसिविस्पृङ्गा मां

सुवंरिम् सुवंर्मे यच्छ् दिवं यच्छ दिवो मां पाहीत्यांह। आशिषंमेवैतामाशांस्ते। शिरो वा पृतद्यज्ञस्यं। यत्प्रंवर्ग्यः। आत्मा वायुः। उद्यत्यं वातनामान्यांह। आत्मन्नेव यज्ञस्य शिरः प्रतिद्धाति। अनंवानम्। प्राणानाः सन्तंत्यै। पश्चांह॥६६॥ पाङ्को युज्ञः। यावांनेव युज्ञः। तस्य शिरः प्रतिंदधाति। अग्नयै त्वा वसुमते स्वाहेत्यांह। असौ वा आंदित्यौऽग्निर्वसुमान्। तस्मा एवैनं जुहोति। सोमाय त्वा रुद्रवंते स्वाहेत्यांह। चन्द्रमा वै सोमो रुद्रवान्। तस्मा एवैनं जुहोति। वर्रुणाय त्वाऽऽदित्यवंते स्वाहेत्यांह॥६७॥

अप्सु वै वर्रण आदित्यवान्। तस्मां पृवैनं जुहोति। बृह्स्पतंये त्वा विश्वदेंच्यावते स्वाहेत्यांह। ब्रह्म वै देवानां बृह्स्पतिंः। ब्रह्मंणै्वैनं जुहोति। स्वित्रे त्वंर्भुमतें विभुमतें प्रभुमते वाजंवते स्वाहेत्यांह। संवृत्स्रो वै संवितर्भुमान् विभुमान्प्रंभुमान् वाजंवान्। तस्मां पृवैनं जुहोति। यमाय त्वाऽङ्गिरस्वते पितृमते स्वाहेत्यांह। प्राणो वै यमोऽङ्गिरस्वान्पितृमान्॥६८॥

तस्मां पृवैनं जुहोति। पृताभ्यं पृवैनं देवताभ्यो जुहोति। दश् सम्पंचन्ते। दशाक्षरा विराट्। अत्रं विराट्। विराज्ञैवान्नाद्यमवंरुन्थे। रौहिणाभ्यां वे देवाः सुंवर्गं लोकमायन्। तद्रौहिणयों रौहिणा्त्वम्। यद्रौहिणौ भवंतः। रौहिणाभ्यांमेव तद्यजमानः सुवर्गं लोकमंति। अहुर्ज्योतिः केतुनां जुषता सुर्ज्योतिर्ज्योतिषा् स्वाहा रात्रिर्ज्योतिः केतुनां जुषता सुर्ज्योतिर्ज्योतिषा् स्वाहा रात्रिर्ज्योतिः अतुनां जुषता सुर्ज्योतिर्ज्योतिषा् स्वाहा रात्रिर्ज्योतिः अतुनां जुषता सुर्ज्योतिर्ज्योतिषा् स्वाहेत्यांह। आदित्यमेव तदमुष्मिं लोकऽहां प्रस्तां द्वाधार। रात्रिया

अवस्तांत्। तस्मांद्सावांद्तित्यों ऽमुष्मिं श्लोकें ऽहोरात्राभ्यां धृतः॥६९॥

विश्वा आशां दक्षिण्सदित्यांह। विश्वांनेव देवान्प्रीणाति। अथो दुरिष्ट्रा एवेनं पाति। विश्वां देवानंयाडिहेत्यांह। विश्वांनेव देवान्नांग्धेयेंन समर्द्धयति। स्वाहांकृतस्य घर्मस्य मधौः पिबतमिश्वनेत्यांह। अश्विनांवेव भाग्धेयेंन समर्द्धयति। स्वाहाऽग्रयें यज्ञियांय शं यज्जंिभिरत्यांह। अभ्येवेनं घारयति। अथों हिवरेवाकः॥७०॥

अश्विना घृमं पांत हार्दिवानमहंदिवाभिकृतिभिरित्यांह। अश्विनांवेव भागधेयेन समर्द्धयित। अनुं वां द्यावांपृथिवी म स्मातामित्याहानुंमत्ये। स्वाहेन्द्रांय स्वाहेन्द्राविडित्यांह। इन्द्रांय हि पुरो हूयतें। आश्राव्यांह घृमस्यं युजेतिं। वर्षद्वृते जुहोति। रक्षंसामपंहत्ये। अनुंयजित स्वगाकृत्ये। घर्ममंपातमश्विनेत्यांह॥ ७१॥

पूर्वमेवोदितम्। उत्तरेणाभिगृणाति। अनुं वां द्यावापृथिवी अमश्सातामित्याहानुंमत्यै। तं प्राव्यं यथावण्णमों दिवे नर्मः पृथिव्या इत्याह। यथायजुरेवैतत्। दिविधां इमं यज्ञं यज्ञमिमं दिविधा इत्याह। सुवर्गमेवैनं लोकं गंमयति। दिवं गच्छान्तरिक्षं गच्छ पृथिवीं गुच्छेत्याह। पृष्वेवैनं लोकेषु प्रतिष्ठापयति। पश्चं प्रदिशों गुच्छेत्याह॥७२॥

दिक्ष्वेवैनं प्रतिष्ठापयति। देवान्धंर्म्पान्गंच्छ पितृन्धंर्म्पान्गच्छे-त्यांह। उभयेंष्वेवैनं प्रतिष्ठापयति। यत्पिन्वंते। वर्षुकः पूर्जन्यो भवति। तस्मात्पिन्वंमानः पुण्यः। यत्प्राङ्घिन्वंते। तद्देवानांम्। यद्दंक्षिणा। तत्पितृणाम्॥७३॥

यत्प्रत्यक्। तन्मेनुष्योणाम्। यदुदङ्कं। तद्रुद्राणांम्। प्राश्चमुदंश्चं पिन्वयति। देवत्राकंः। अथो खलुं। सर्वा अनु दिशंः पिन्वयति। सर्वा दिशः समेधन्ते। अन्तःपरिधि पिन्वयति॥७४॥

तेज्ञसोऽस्कंन्दाय। इषे पींपिह्यूर्जे पींपि्हीत्यांह। इषंमेवोर्जं यजंमाने दधाति। यजंमानाय पीपि्हीत्यांह। यजंमानायैवैतामा्शिष्माशांस्ते। मह्यं ज्येष्ठ्यांय पीपि्हीत्यांह। आत्मनं एवैतामा्शिष्माशांस्ते। त्विष्यें त्वा द्युम्नायं त्वेन्द्रियायं त्वा भूत्यै त्वेत्यांह। यथायजुरेवैतत्। धर्मासि सुधर्मा मेन्यसमे ब्रह्माणि धारयेत्यांह॥ ७५॥

ब्रह्मेत्रेवैनं प्रतिष्ठापयति। नेत्त्वा वातः स्कन्दयादिति यद्यंभिचरेत्। अमुष्यं त्वा प्राणे सांदयाम्यमुनां सह निर्धं गच्छेति ब्र्याद्यं द्विष्यात्। यमेव द्वेष्टिं। तेनैन सह निर्धं गमयति। पूष्णे शरसे स्वाहेत्याह। या एव देवतां हुतभांगाः।

ताभ्यं पुवैनं जुहोति। ग्रावंभ्यः स्वाहेत्यांह। या पुवान्तरिक्षे वार्चः॥७६॥

ताभ्यं पुवैनं जुहोति। प्रतिरेभ्यः स्वाहेत्यांह। प्राणा वै देवाः प्रतिराः। तेभ्यं पुवैनं जुहोति। द्यावांपृथिवीभ्याः स्वाहेत्यांह। द्यावांपृथिवीभ्यांमेवैनं जुहोति। पितृभ्यों धर्मपेभ्यः स्वाहेत्यांह। ये वै यज्वांनः। ते पितरों धर्मपाः। तेभ्यं पुवैनं जुहोति॥७७॥

रुद्रायं रुद्रहोंत्रे स्वाहेत्यांह। रुद्रमेव भागधेयेन समर्द्धयित। सर्वतः समनिक्ति। सर्वतं एव रुद्रं निरवंदयते। उद्श्रं निरंस्यिति। एषा वै रुद्रस्य दिक्। स्वायांमेव दिशि रुद्रं निरवंदयते। अप उपंस्पृशित मेध्यत्वायं। नान्वीक्षेत। यदन्वीक्षेत॥७८॥

चक्षुंरस्य प्रमायुंक इस्यात्। तस्मान्नान्वीक्ष्यंः। अपीपरो माऽह्यो रात्रिये मा पाह्येषा ते अग्ने समित्तया समिध्यस्वायुंमें दा वर्चसा माञ्जीरित्यांह। आयुंरेवास्मिन्वर्चो दधाति। अपीपरो मा रात्रिया अह्यों मा पाह्येषा ते अग्ने समित्तया समिध्यस्वायुंमें दा वर्चसा माञ्जीरित्यांह। आयुंरेवास्मिन्वर्चो दधाति। अग्निज्योतिज्योतिरग्निः स्वाहा सूर्यो ज्योतिज्योतिः सूर्यः स्वाहेत्यांह। यथायजुरेवेतत्। ब्रह्मवादिनो वदन्ति। होत्व्यंमग्निहोत्रा(३)न्न होत्व्या(३)मिति॥७९॥

समर्द्धयति॥८२॥

यद्यजुंषा जुहुयात्। अयंथापूर्वमाहुंती जुहुयात्। जुंहुयात्। अग्निः पराभवेत्। भूः स्वाहेत्येव होत्व्यम्। यथापूर्वमाहुंती जुहोतिं। नाग्निः परांभवति। हुत १ हविर्मधुं हिवरित्यांह। स्वदयंत्येवैनम्। इन्द्रंतमेऽग्नावित्यांह॥८०॥ प्राणो वा इन्द्रंतमोऽग्निः। प्राण एवैनमिन्द्रंतमेऽग्नौ जुंहोति। पिता नोंऽसि मा मां हिश्सीरित्याहाहिश्सायै। अश्यामं ते देव घर्म् मधुमतो वाजंवतः पितुमत् इत्याह। आशिषंमेवैतामाशाँस्ते। स्वधाविनों ऽशीमहिं त्वा मा मां हि सीरित्याहाहि सायै। तेर्जसा वा एते व्यृध्यन्ते। ये प्रंवर्ग्यंण चरन्ति। प्राश्ञंन्ति। तेजं एवात्मन्दंधते॥८१॥ संवत्सरं न मा १ समेश्जीयात्। न रामामुपेयात्। न मृन्मयेन पिबेत्। नास्यं राम उच्छिंष्टं पिबेत्। तेज एव तत्सङ्श्यंति। देवासुराः संयंत्ता आसन्। ते देवा विजयमुपयन्तः। विभ्राजि सौर्ये ब्रह्मसन्यंदधत। यत्किं चं दिवाकीर्त्यम्। तदेतेनैव व्रतेनांगोपायत्। तस्मांदेतद्वतं चार्यम्। तेजंसो गोपीथायं। तस्मांदेतानि यजू ५ षि विभ्राजंः सौर्यस्येत्यांहुः। स्वाहाँ त्वा सूर्यस्य रश्मिभ्य इति प्रातः स॰सांदयति। स्वाहां त्वा नक्षंत्रेभ्य इतिं सायम्। एता वा एतस्यं देवताः। ताभिरेवैन ध

अक्रुक्श्विनेत्यांह प्रदिशों गुच्छेत्यांह पितृणामंन्तःपरिधि पिन्वयित धार्येत्यांह वाचों घर्म्पास्तेभ्यं एवैनं जुहोत्युन्वीक्षेत होत्व्या(३)मित्युग्नावित्यांह दधतेऽगोपायत्सुप्त चं॥८॥—————————[८] घर्म् या ते दिवि शुगितिं तिस्र आहुंतीर्जुहोति। छन्दोभिरेवास्यैभ्यो लोकेभ्यः शुचमर्वं यजते। इयत्यग्रें जुहोति। अथेयत्यथेयति। त्रयं इमे लोकाः। अनुं नोऽद्यानुंमितिरित्याहानुंमत्यै। दिवस्त्वां पर्स्पाया इत्याह। दिव एवेमाँ ह्योकान्दांधार। ब्रह्मणस्त्वा पर्स्पाया इत्याह॥८३॥

पृष्वेव लोकेषुं प्रजा दांधार। प्राणस्यं त्वा पर्स्पाया इत्यांह। प्रजास्वेव प्राणान्दांधार। शिरो वा एतद्यज्ञस्यं। यत्प्रंवर्ग्यः। असौ खलु वा आंदित्यः प्रंवर्ग्यः। तं यद्दंक्षिणा प्रत्यश्रमुदंश्रमुद्वासर्यंत्। जि्ह्मं यज्ञस्य शिरों हरेत्। प्राश्रमुद्वांसयति। पुरस्तांदेव यज्ञस्य शिरः प्रतिंदधाति॥८४॥

प्राश्चमुद्वांसयित। तस्मांद्सावांदित्यः पुरस्तादुदेति। शफोप्यमान्ध्वित्रांणि धृष्टी इत्यन्ववंहरन्ति। सात्मांनमेवैन्ष् सत्तेनुं करोति। सात्माऽमुष्मिं श्लोके भविति। य एवं वेदं। औदुंम्बराणि भवन्ति। ऊर्ग्वा उंदुम्बरंः। ऊर्जमेवावंरुन्धे। वर्त्मना वा अन्वित्यं॥८५॥

युज्ञ रक्षा रेसि जिघारसन्ति। साम्ना प्रस्तोताऽन्ववैति। साम् वै रेक्षोहा। रक्षंसामपंहत्यै। त्रिर्निधन्मुपैति। त्रयं इमे लोकाः। पृभ्य एव लोकेभ्यो रक्षा इस्यपंहन्ति। पुरुषा निधन्मुपैति। पुरुषः पुरुषो हि रेक्षस्वी। रक्षंसामपंहत्यै॥८६॥ यत्पृंथिव्यामुंद्वासयैत्। पृथिवी श्रुचा ऽर्पयेत्। यद्प्सु। अपः शुचार्पयेत्। यदोषंधीषु। ओषंधीः शुचा ऽर्पयेत्। यद्वनस्पतिषु। वनस्पतीं ञ्छुचार्पयेत्। हिरंण्यं निधायोद्वांसयित। अमृतं वै हिरंण्यम्॥८७॥

अमृतं एवैनं प्रतिष्ठापयति। वृत्गुरंसि शं युधाया इति त्रिः पंरिषिश्चन्पर्येति। त्रिवृद्वा अग्निः। यावांनेवाग्निः। तस्य श्चरं शमयति। त्रिः पुनः पर्येति। षट्थ्सम्पंद्यन्ते। षड्वा ऋतवंः। ऋतुभिरेवास्य शुचरं शमयति। चतुंः स्रक्तिर्नाभिर्ऋतस्येत्यांह॥८८॥

इयं वा ऋतम्। तस्यां एष एव नाभिः। यत् प्रवार्यः। तस्मादेवमाह। सदों विश्वायुरित्याह। सदो हीयम्। अप द्वेषो अप ह्वर् इत्याह् भ्रातृंव्यापनुत्त्यै। घर्मैतत्तेऽन्नंमेतत्पुरींषमिति द्वा मंधुमिश्रेणं पूरयति। ऊर्ग्वा अन्नाद्यं दिधे। ऊर्जेवैनंमन्नाद्येन समर्द्धयति॥८९॥

अनंशनायुको भवति। य एवं वेदं। रन्तिर्नामांसि दिव्यो गंन्ध्रवं इत्यांह। रूपमेवास्यैतन्महिमान् रन्तिं बन्धुतां व्याचंष्टे। सम्हमायुषा सं प्राणेनेत्यांह। आशिषंमेवैतामाशांस्ते। व्यंसौ यांऽस्मान्द्वेष्टि यं चं व्यं द्विष्म इत्यांह। अभिचार एवास्यैषः। अचिंकदृष्ट्वा हरिरित्यांह। वृषा ह्यंषः॥९०॥

वृषा हरिः। महान्मित्रो न दंर्शत इत्यांह। स्तौत्येवैनंमेतत्।

चिदंसि समुद्रयोनिरित्यांह। स्वामेवैनं योनिं गमयति। नमंस्ते अस्तु मा मां हिश्सीरित्याहाहिश्सायै। विश्वावंसुश् सोम गन्ध्वंमित्यांह। यदेवास्यं क्रियमांणस्यान्त्यंन्तिं। तदेवास्यैतेना प्यांययति। विश्वावंसुर्भि तन्नों गृणात्वित्यांह॥९१॥

पूर्वमेवोदितम्। उत्तरेणाभि गृंणाति। धियों हिन्वानो धिय इन्नों अव्यादित्यांह। ऋतूनेवास्में कल्पयति। प्राऽऽसां गन्धवीं अमृतांनि वोचदित्यांह। प्राणा वा अमृताः। प्राणानेवास्में कल्पयति। एतत्त्वं देव धर्म देवो देवानुपांगा इत्यांह। देवो ह्यंष सं देवानुपैतिं। इदमहं मनुष्यों मनुष्यांनित्यांह॥९२॥

मनुष्यों हि। एष सन्मनुष्यांनुपैतिं। ईश्वरो वे प्रंवर्ग्यमुद्वासयन्। प्रजां प्रशून्त्सोमपीथमंनूद्वासः सोमं पीथानुमेहिं। सह प्रजयां सह रायस्पोषेणत्याह। प्रजामेव प्रशून्त्सोमपीथमात्मन्यंत्ते। सुमित्रा न आप ओषंधयः सन्त्वत्याह। आशिषंमेवेतामाशांस्ते। दुर्मित्रास्तस्में भूयासुर्यों उस्मान्द्वेष्टि यं चं व्यं द्विष्म इत्यांह। अभिचार एवास्येषः। प्र वा एषों उस्माल्लोकाच्यंवते। यः प्रंवर्ग्यमुद्वासयितं। उदुत्यं चित्रमितिं सौरीभ्यांमृग्भ्यां पुन्रेत्य् गार्हंपत्ये जुहोति। अयं वे लोको गार्हंपत्यः। अस्मिन्नेव लोके प्रतिंतिष्ठति। असौ खलु वा आंदित्यः सुंवर्गो लोकः। यत्सौरी भवंतः। तेनैव सुंवर्गाल्लोकान्नेतिं॥९३॥

ब्रह्मणस्त्वा पर्स्पाया इत्यांह दधात्यन्वित्यं रक्ष्मंची रक्ष्मंसामपंहत्ये वे हिरंण्यमाहार्द्धयित ह्यंष गृणात्वित्यांह मनुष्यांनित्यांहास्येषाँऽष्टो चं॥९॥————[९]

प्रजापंतिं वै देवाः शुक्रं पयोंऽदुह्नन्। तदेंभ्यो न व्यंभवत्। तद्ग्निर्व्यंकरोत्। तानि शुक्रियाणि सामान्यभवन्। तेषां यो रसोऽत्यक्षंरत्। तानिं शुक्रयज्ञू इष्यंभवन्। शुक्रियाणां वा पुतानि शुक्रियाणि। सामप्यसं वा पुतयोंर्न्यत्। देवानांमन्यत्पर्यः। यद्गोः पर्यः॥९४॥

तत्साम्नः पर्यः। यद्जायै पर्यः। तद्देवानां पर्यः। तस्माद्यत्रैतैर्यजुंर्भिश्चरंन्ति। तत्पर्यसा चरन्ति। प्रजापंतिमेव तत्पर्यसाऽन्नाद्येन समर्द्धयन्ति। एष ह त्वै साक्षात्प्रंवर्ग्यं भक्षयति। यस्यैवं विदुषंः प्रवर्ग्यः प्रवृज्यते। उत्तर्वेद्यामुद्धांस-येत्तेजंस्कामस्य। तेजो वा उत्तरवेदिः॥९५॥

तेर्जः प्रवर्ग्यः। तेर्जसैव तेजः समर्द्धयित। उत्तर्वेद्यामुद्वांसये-दन्नेकामस्य। शिरो वा एतद्यज्ञस्यं। यत्प्रंवर्ग्यः। मुखंमुत्तरवेदिः। शीर्ष्णैव मुख्र सन्दंधात्यन्नाद्यांय। अन्नाद एव भवित। यत्र खलु वा एतमुद्वांसितं वयार्श्स पूर्यासंते। परि वै तार समां प्रजा वयार्श्स्यासते॥९६॥

तस्मादुत्तरवेद्यामेवोद्वांसयेत्। प्रजानां गोपीथायं। पुरो वां पृश्चाद्वोद्वांसयेत्। पुरस्ताद्वा एतज्योतिरुदेंति। तत्पृश्चान्निम्नोचित। स्वामेवैनं योनिमनूद्वांसयित। अपां मध्य उद्वांसयेत्। अपां वा पुतन्मध्याञ्चोतिंरजायत। ज्योतिः प्रवृग्यः। स्वयैवेनं योनौ प्रतिष्ठापयति॥९७॥

यं द्विष्यात्। यत्र् स स्यात्। तस्यां दिश्युद्वांसयेत्। एष वा अग्निवैश्वान्रः। यत्प्रंवर्ग्यः। अग्निनैवैनं वैश्वान्रेणाभि प्रवंतयिति। औदंम्बर्या्र् शाखायामुद्वांसयेत्। ऊर्ग्वा उंदुम्बरः। अत्रं प्राणः। शुग्धर्मः॥९८॥

ड्दम्हम्मुष्यांमुष्यायणस्यं शुचा प्राणमपिं दहामीत्यांह। शुचैवास्यं प्राणमपिं दहित। ताजगार्तिमार्च्छति। यत्रं दर्भा उपदीकंसन्तताः स्यः। तदुद्वांसयेद्वृष्टिंकामस्य। एता वा अपामनूज्झावंयों नामं। यद्दर्भाः। असौ खलु वा आंदित्य इतो वृष्टिमुदींरयित। असावेवास्मां आदित्यो वृष्टिं नियंच्छिति। ता आपो नियंता धन्वंना यन्ति॥९९॥

गोः पर्यं उत्तरवेदिरांसते स्थापयित घर्मो यन्ति॥१०॥_____[१०]

प्रजापंतिः सिम्भ्रियमाणः। सम्राट्थ्सम्भृतः। घर्मः प्रवृंक्तः। महावीर उद्वांसितः। असौ खलु वावैष आदित्यः। यत्प्रंवर्ग्यः। स एतानि नामान्यकुरुत। य एवं वेदं। विदुरेनं नाम्ना। ब्रह्मवादिनो वदन्ति॥१००॥

यो वै वसीया १ सं यथाना मर्पुप्चरित। पुण्याँ तिं वै स तस्मैं कामयते। पुण्याँ तिमस्मै कामयन्ते। य एवं वेदे। तस्मदिवं विद्वान्। घुर्म इति दिवाऽऽचंक्षीत। सुम्राडिति नक्तम्। एते वा एतस्यं प्रिये तनुवौं। एते अंस्य प्रिये नामंनी। प्रिययैवैनं तनुवां॥१०१॥

प्रियेण नाम्ना समर्द्धयित। कीर्तिरंस्य पूर्वागंच्छिति जनतांमायतः। गायत्री देवेभ्योऽपांकामत्। तां देवाः प्रंवर्ग्यंणैवानु व्यंभवन्। प्रवर्ग्यंणाप्रुवन्। यचंतुर्विर्शित्कृत्वंः प्रवर्ग्यं प्रवृणिक्तं। गायत्रीमेव तदनु विभवति। गायत्रीमांप्रोति। पूर्वाऽस्य जनं यतः कीर्तिर्गच्छिति। वैश्वदेवः सर्संन्नः॥१०२॥ वसंवः प्रवृंक्तः। सोमोऽभिकीर्यमांणः। आश्विनः पर्यस्यानीयमांने। मारुतः कथन्। पौष्ण उदन्तः। सारुस्वतो विष्यन्दंमानः। मैत्रः शरो गृहीतः। तेज उद्यंतः। वायुर्हियमांणः। प्रजापंतिरह्यमांनो वाग्युतः॥१०३॥

असौ खलु वावैष आंदित्यः। यत्प्रंवर्ग्यः। स एतानि नामान्यकुरुत। य एवं वेदं। विदुरंनं नाम्नां। ब्रह्मवादिनों वदन्ति। यन्मृन्मयमाहंतिं नाश्जुतेऽथं। कस्मादेषोंऽश्जुत इतिं। वागेष इतिं ब्रूयात्। वाच्येव वाचं दधाति॥१०४॥ तस्मादश्जुते। प्रजापंतिर्वा एष द्वांदश्धा विहितः। यत्प्रंवर्ग्यः। यत्प्रागंवकाशेभ्यः। तेनं प्रजा अंसृजत। अवकाशेर्देवासुरानंसृजत। यदूर्ध्वमंवकाशेभ्यः। तेनान्नंम-सृजत। अन्नं प्रजापंतिः। प्रजापंतिर्वावैषः॥१०५॥ ब्द्रित् त्त्व स्रमंत्रे ह्यमंत्रे वायुते देशत्येषः॥१॥———[११]
स्विता भूत्वा प्रंथमेऽह्न्प्रवृंज्यते। तेन् कामा एति।
यद्वितीयेऽहंन्प्रवृज्यते॥ अग्निर्भूत्वा देवानेति। यत्तृतीयेऽहंन्प्रवृज्यते॥ वायुर्भूत्वा प्राणानेति। यचंतुर्थेऽहंन्प्रवृज्यते॥
आदित्यो भूत्वा र्ष्ट्मीनेति। यत्पंश्चमेऽहंन्प्रवृज्यते॥
भूत्वा नक्षंत्राण्येति॥१०६॥

यत्षष्ठेऽहंन्प्रवृज्यतें। ऋतुर्भूत्वा संवत्स्रमंति। यत्संप्तमेऽहंन्प्र-वृज्यतें। धाता भूत्वा शक्वंरीमेति। यदंष्ट्रमेऽहंन्प्रवृज्यतें। बृह्स्पतिंर्भूत्वा गांयत्रीमंति। यत्नंवमेऽहंन्प्रवृज्यतें। मित्रो भूत्वा त्रिवृतं इमाँ ह्लोकानंति। यद्दंश्मेऽहंन्प्रवृज्यतें। वर्रुणो भूत्वा विराजंमेति॥१०७॥

यदेकाद्शेऽहंन्प्रवृज्यतें। इन्द्रों भूत्वा त्रिष्टुभंमेति। यद्वांद्शेऽहंन्प्रवृज्यतें। सोमों भूत्वा सुत्यामेति। यत्पुरस्तांदुप्सदांं प्रवृज्यतें। तस्मांदितः परांङ्मूँ छोका इ-स्तपंत्रेति। यदुपरिष्टादुप्सदांं प्रवृज्यतें। तस्मांद्मुतोऽर्वा-ङिमाँ छोका इस्तपंत्रेति। य पुवं वेद। ऐव तंपति॥१०८॥

नक्षंत्राण्येति विराजंमेति तपति॥१२॥_____[१२]

ॐ शं नुस्तन्नो मा हांसीत्॥ ॐ शान्तिः शान्तिः॥



॥षष्ठः प्रश्नः॥

ॐ सन्त्वां सिश्चामि यजुषां प्रजामायुर्धनं च॥ ॐ शान्तिः शान्तिः शान्तिः॥

प्रेयुवारसं प्रवती महीरनुं बहुभ्यः पन्थांमनपस्पशानम्। वैवस्वतर सङ्गमंनं जनांनां यमर राजांनर ह्विषां दुवस्यत। इदं त्वा वस्त्रं प्रथमन्वागृत्रपैतदूंह यदिहाबिंभः पुरा। इष्टापूर्तमनु सम्पंश्य दक्षिणां यथां ते दत्तं बंहुधा विबन्धुष्। इमौ युनज्मि ते वृह्णी असुनीथाय वोढवें। याभ्यां यमस्य सादंनर सुकृतां चापि गच्छतात्। पूषा त्वेतश्च्यांवयतु प्रविद्वाननंष्टपशुर्भुवंनस्य गोपाः। स त्वैतेभ्यः परिददात्पितृभ्योऽग्निर्देवेभ्यः सुविदत्रेंभ्यः। पूषेमा आशा अनुवेद सर्वाः सो अस्मार अभयतमेन नेषत्। स्वस्तिदा अर्घृणिः सर्ववीरोऽप्रयुच्छन्पुर एतु प्रविद्वान्॥१॥

आयुंर्विश्वायुः परिपासित त्वा पूषा त्वां पातु प्रपंथे पुरस्तांत्। यत्रासंते सुकृतो यत्र ते ययुस्तत्रं त्वा देवः संविता दंधातु। भुवंनस्य पत इदः ह्विः। अग्नयं रियमते स्वाहां। पुरुषस्य सयावर्यपेद्घानिं मृज्महे। यथां नो अत्र नापंरः पुरा जरस् आयंति। पुरुषस्य सयाविर् वि ते प्राणमंसि स्नसम्। शरीरेण महीमिहिं स्वधयेहिं पितृनुपं प्रजयाऽस्मानिहावंह। मैवं माङ् स्ता प्रियेऽहं देवी सती पितृतोकं यदैषिं। विश्ववांरा नभंसा

संव्ययन्त्युभौ नो लोकौ पर्यसाऽभ्यावंवृत्स्व॥२॥

इयं नारीं पितिलोकं वृंणाना निपंद्यत् उपं त्वा मर्त्य् प्रेतम्। विश्वं पुराणमन् पालयंन्ती तस्यै प्रजां द्रविणं चेह धेहि। उदींष्वं नार्यिभ जींवलोकमितासुंमेतमुपंशेष एहिं। ह्स्तुग्राभस्यं दिधिषोस्त्वमेतत्पत्युंर्जनित्वम्भि सम्बंभूव। सुवर्ण् हस्तांदाददांना मृतस्यं श्रिये ब्रह्मंणे तेजंसे बलाय। अत्रैव त्विमह वय सुशेवा विश्वाः स्पृधीं अभिमांतीर्जयम। धनुरहस्तांदाददांना मृतस्यं श्रिये क्षुत्रायौजंसे बलाय। अत्रैव त्विमह वय सुशेवा विश्वाः स्पृधीं अभिमांतीर्जयम। मणि ह हस्तांदाददांना मृतस्यं श्रिये विशे पृष्टमे बलाय। अत्रैव त्विमह वय सुशेवा विश्वाः स्पृधीं अभिमांतीर्जयम॥३॥

इममंग्ने चम्सं मा विजींह्वरः प्रियो देवानांमुत सोम्यानांम्।
एष यश्चंमसो देवपान्स्तस्मिन्देवा अमृतां मादयन्ताम्।
अग्नेर्वर्म् पिर् गोभिर्व्ययस्व सं प्रोण्ंष्व मेदंसा पीवंसा
च। नेत्त्वां धृष्णुरहरंसा जर्हंषाणो दधिह्यक्ष्यन्पर्यङ्खयाते।
मैनमग्ने विदेहो माऽभिशोंचो माऽस्य त्वचं चिक्षिपो
मा शरीरम्। यदा शृतं करवों जातवेदोऽथेंमेनं
प्रिहंणुतात्पितृभ्यः। शृतं यदा करिसं जातवेदोऽथेंमेनं
परिंदत्तात्पितृभ्यः। यदा गच्छात्यसुनीतिमेतामथां देवानां
वश्नीर्भवाति। सूर्यं ते चक्षुर्गच्छत् वातंमात्मा द्यां च

गच्छं पृथिवीं च धर्मणा। अपो वो गच्छ् यदि तत्रं ते हितमोषंधीषु प्रतितिष्ठा शरीरेः। अजो भागस्तपंसा तं तंपस्व तं ते शोचिस्तंपतु तं ते अर्चिः। यास्ते शिवास्तनुवीं जातवेदस्ताभिविहेम स्कृतां यत्रं लोकाः। अयं वै त्वमस्मादिध त्वमेतद्यं वै तदस्य योनिरिस। वैश्वानरः पुत्रः पित्रे लोककुञ्जांतवेदो वहंम स्कृतां यत्रं लोकाः॥४॥

विद्वानभ्यावंवृत्स्वाभिमांतीर्जयेम् शरींरैश्चत्वारिं च॥१॥------[१]

य एतस्यं पृथो गोप्तार्स्तेभ्यः स्वाह् य एतस्यं पृथो रिक्षितार्स्तेभ्यः स्वाहां य एतस्यं पृथोभिऽरंक्षितार्स्तेभ्यः स्वाहांऽऽख्यात्रे स्वाहांऽपाख्यात्रे स्वाहांऽभिलालंपते स्वाहांऽपृलालंपते स्वाहांऽप्रये कर्मकृते स्वाहा यमत्र नाधीमस्तस्मै स्वाहां। यस्तं इध्मं ज्ञभरंत्सिष्विदानो मूर्धानं वात् तपंते त्वाया। दिवो विश्वंस्मात्सीमघायत उरुष्यः। अस्मात्त्वमधि जातोऽसि त्वद्यं जांयतां पुनः। अग्नये वेश्वान्रायं सुवर्गायं लोकाय स्वाहां॥५॥

य पुतस्य त्वत्पर्श्व॥२॥————[२]

प्र केतुनां बृह्ता भाँत्यग्निराविर्विश्वांनि वृष्भो रोरवीति। दिवश्चिदन्तादुप मामुदानंडपामुपस्थे महिषो वंवर्ध। इदं त एकं प्र ऊत् एकं तृतीयेन ज्योतिषा संविंशस्व। संवेशनस्तनुवै चारुरेधि प्रियो देवानां पर्मे स्थस्थे। नाके सुप्णमुप् यत्पतंन्तर हृदा वेनंन्तो अभ्यचंक्षत त्वा। हिरंण्यपक्षं वरुणस्य दूतं यमस्य योनौ शकुनं भुर्ण्युम्। अतिंद्रव सारमेयौ श्वानौ चतुरक्षौ श्वलौ साधुनां प्था। अर्था पितृन्त्सुंविदत्रार् अपींहि यमेन ये संध्मादं मदन्ति। यौ ते श्वानौ यमरिक्षतारौ चतुरक्षौ पंथिरक्षी नृचक्षंसा। ताभ्यार् राज्न्परि देह्येन इस्विस्त चौस्मा अनमीवं चे धेहि॥६॥

उरुणसार्वसृत्पांवुलुम्बलौ यमस्यं दूतौ चंरतो वशा अन्।
तावस्मभ्यं दृशये सूर्याय पुनर्दत्ता वसुंमुद्येह भुद्रम्। सोम्
एकैभ्यः पवते घृतमेक उपांसते। येभ्यो मधुं प्रधावंति
ता अश्वेदेवापि गच्छतात्। ये युध्यंन्ते प्रधनेषु शूरांसो ये
तंनुत्यजः। ये वां सहस्रंदक्षिणास्ता अश्वेदेवापि गच्छतात्।
तपसा ये अनाधृष्यास्तपंसा ये सुवंग्ताः। तपो ये
चंकिरे महत्ता अश्वेदेवापि गच्छतात्। अश्मंन्वती रेवतीः
स रंभध्वमुत्तिष्ठत् प्रतंरता सखायः। अत्रां जहाम् ये
अस्त्रशेवाः शिवान् व्यम्भि वाजान्तरंरम॥७॥

यद्वै देवस्यं सिवतुः प्वित्र सहस्रंधारं वितंतम्नतिरक्षे। येनापुनादिन्द्रमनार्तमार्त्ये तेनाहं मा स्वितंनुं पुनामि। या राष्ट्रात्पन्नादप् यन्ति शाखां अभिमृता नृपितिमिच्छमानाः। धातुस्ताः सर्वाः पर्वनेन पूताः प्रजयास्मात्र्य्या वर्चसा सश्सृंजाथ। उद्वयं तमंस्स्परि पश्यंन्तो ज्योति्रत्तंरम्। देवं देवत्रा सूर्यमगंनम् ज्योतिंरुत्तमम्। धाता पुंनातु सविता पुंनातु। अग्नेस्तेजंसा सूर्यस्य वर्चसा॥८॥

धेह्यत्तरिमाष्टौ चं॥३॥———[3]

यन्ते अग्निममंन्थाम वृष्भायेव पक्तेव। इमन्तर शंमयामसि क्षीरेणं चोदकेनं च। यन्त्वमंग्ने समदंहस्त्वमु निर्वापया पुनंः। क्याम्बूरत्रं जायतां पाकदूर्वा व्यंत्कशा। शीतिके शीतिकावित ह्रादुंके ह्रादुंकावित। मण्डूक्यां सुसङ्गमयेम स्वंग्निर शमयं। शं ते धन्वन्या आपः शम् ते सन्त्वनूक्याः। शं ते समुद्रिया आपः शम् ते सन्तु वर्ष्याः। शं ते स्रवंन्तीस्तुनुवे शम् ते सन्तु कूप्याः। शन्ते नीहारो वंर्षतु शमु पृष्वाऽवंशीयताम्॥९॥

अवं सृज पुनंरग्ने पितृभ्यो यस्त आहुंत्श्चरंति स्वधाभिः। आयुर्वसान् उपं यातु शेष् सङ्गेच्छतां तनुवां जातवेदः। सङ्गेच्छस्व पितृभिः सङ् स्वधाभिः सिमेष्टापूर्तेनं पर्मे व्योमन्। यत्र भूम्ये वृणसे तत्रं गच्छ तत्रं त्वा देवः संविता दंधातु। यत्ते कृष्णः शंकुन आंतुतोदं पिपीलः सर्प उत वा श्वापंदः। अग्निष्टद्विश्वांदनृणं कृणोतु सोमंश्च्यो ब्रांह्मणमांविवेशं। उत्तिष्ठातंस्तनुव् सम्भंरस्व मेह गात्रमवंहा मा शरीरम्। यत्र भूम्ये वृणसे तत्रं गच्छ तत्रं त्वा देवः संविता दंधातु। इदं त एकं पर ऊत एकं तृतीयेन ज्योतिषा संविशस्व। संवेशनस्तनुवै चारुरिध

प्रियो देवानां पर्मे स्थस्थें। उत्तिष्ठ प्रेह् प्रद्रवौकः कृणुष्व पर्मे व्योमन्। यमेन त्वं यम्यां संविदानोत्तमन्नाक्मिधं रोहेमम्। अश्मन्वती रेवतीर्यद्वे देवस्यं सिवृतः प्वित्रं या राष्ट्रात्पन्नादुद्वयं तमंस्स्पिरं धाता पुनात्। अस्मात्त्वमिधं जातौंऽस्ययं त्वदिधंजायताम्। अग्नयं वैश्वान्रायं सुवृर्गायं लोकाय स्वाहां॥१०॥

अवंशीयता सधस्थे पश्चं च॥४॥=

[8]

आयांतु देवः सुमनांभिरूतिभिर्यमो हंवेह प्रयंताभिर्क्ता। आसींदता सप्रयतेह ब्रहिष्यूर्जाय जात्यै ममं शत्रुहत्यैं। यमे इंव यत्नेमाने यदेतं प्रवाम्भरन्मानुषा देवयन्तेः। आसींदत् स्वमुं लोकं विदाने स्वास्स्थे भंवत्मिन्दंवे नः। यमाय सोम सुनुत यमायं जुहुता ह्विः। यम हं यज्ञो गंच्छत्यग्निद्तेतो अर्रङ्कृतः। यमायं घृतवंद्धविर्जुहोत् प्र चं तिष्ठत। स नो देवेष्वायंमदीर्घमायुः प्र जीवसें। यमाय मधुंमत्तम् राज्ञे ह्व्यं जुंहोतन। इदं नम् ऋषिंभ्यः पूर्वजेभ्यः पूर्वेभ्यः पिथकृद्धः॥११॥

योऽस्य कौष्ठ्य जगंतः पार्थिवस्यैकं इद्वशी। यमं भंज्ञाश्रवो गांय यो राजानप्रोध्यः। यमङ्गायं भङ्गाश्रवो यो राजानप्रोध्यः। येनापो नद्यो धन्वानि येन द्यौः पृथिवी दृढा। हिर्ण्यकक्ष्यान् सुधुरान् हिर्ण्याक्षानयः शुफान्। अश्वाननश्यंतो दानं यमो राजािम् तिष्ठंति। यमो दांधार पृथिवीं यमो विश्वमिदं जगंत्। यमाय सर्विमित्रंस्थे यत् प्राणद्वायुरिक्षितम्। यथा पञ्च यथा षड्यथा पञ्चं दशर्षंयः। यमं यो विद्यात्स ब्रूंयाद्यथैक ऋषिर्विजानते॥१२॥

त्रिकंद्रुकेभिः पर्ताते षडुर्वीरेकिमिद्धृहत्। गायत्री त्रिष्टुप्छन्दार्रस् सर्वा ता यम आहिता। अहंरहुर्नयंमानो गामश्वं पुरुषं जगंत्। वैवंस्वतो न तृंप्यति पश्चंभिर्मानंवैर्यमः। वैवंस्वते विविंच्यन्ते यमे राजंनि ते जनाः। ये चेह सत्येनेच्छंन्ते य उ चानृंतवादिनः। ते रांजित्रिह विविंच्यन्तेऽथा यंन्ति त्वामुपं। देवाङ्श्च ये नंमस्यन्ति ब्राह्मणाङ्श्चापचित्यंति। यस्मिन्वृक्षे सुंपलाशे देवैः सम्पिबंते यमः। अत्रां नो विश्पतिः पिता पुंराणा अनुंवेनित॥१३॥

पृथिकृद्धों विजानुतेऽनुं वेनति॥५॥•

_[५]

वैश्वानरे ह्विरिदं जुंहोमि साह्स्रमृत्सर् शृतधारमेतम्। तस्मिन्नेष पितरं पितामृहं प्रपितामहं बिभर्त्पिन्वंमाने। द्रप्सश्चंस्कन्द पृथिवीमन् द्यामिमं च योनिमन् यश्च पूर्वः। तृतीयं योनिमन् स्थरन्तं द्रप्सं जुंहोम्यन् स्प्त होन्नाः। इमर् संमुद्र शृतधारमुत्संव्यच्यमानं भृवंनस्य मध्यै। घृतं दुहानामिदितिं जनायाग्ने मा हिर्स्सीः पर्मे व्योमन्। अपेत वीत वि चं सर्पतातो येऽत्र स्थ पुराणा ये च नूतंनाः। अहोभिरद्भिरक्तिभिर्व्यक्तं यमो दंदात्ववसानमस्मै।

स्वितैतानि शरीराणि पृथिव्यै मातुरूपस्थ आदेधे। तेभिर्युज्यन्तामघ्नियाः॥१४॥

शुनं वाहाः शुनं नाराः शुनं कृषतु लाङ्गलम्। शुनं वर्त्रा बध्यन्ता शुनमष्ट्रामुदिङ्गय शुनांसीरा शुनम्स्मासुं धत्तम्। शुनांसीराविमां वाचं यद्दिवि चंक्रथुः पर्यः। तेनेमामुपं सिश्रतम्। सीते वन्दांमहे त्वाऽर्वाचीं सुभगे भव। यथां नः सुभगा संसि यथां नः सुफला संसि। स्वितैतानि शरीराणि पृथिव्ये मातुरुपस्थ आद्धे। तेभिरदिते शं भंव। विमुंच्यध्वमिष्ट्रया देवयाना अतांरिष्म तमंसस्पारम्स्य। ज्योतिरापाम सुवंरगन्म॥१५॥

प्र वाता वान्तिं प्तयंन्ति विद्युत् उदोषंधीर्जिहते पिन्वंते सुवंः। इरा विश्वंस्मै भुवंनाय जायते यत्पर्जन्यः पृथिवी १ रेत्साऽवंति। यथां यमायं हार्म्यमवंपन्पश्चं मान्वाः। एवं वंपामि हार्म्यं यथासाम जीवलोके भूर्रयः। चितः स्थ परिचितं ऊर्ध्वचितः श्रयध्वं पितरो देवता। प्रजापंतिर्वः सादयतु तयां देवत्या। आप्यांयस्व सन्ते॥१६॥

अघ्निया अंगन्म सप्त चं॥६॥∎

[દ્વ]

उत्तें तभ्रोमि पृथिवीं त्वत्परीमं लोकं निदध्नमो अहर रिषम्। एताइ स्थूणांं पितरों धारयन्तु तेऽत्रां यमः सादनात्ते मिनोतु। उपंसर्प मातर् भूमिमेतामुंरुव्यचेसं पृथिवीर सुशेवाम्। ऊर्णम्रदा युवृतिर्दक्षिणावत्येषा त्वां पातु निर्ऋत्या उपस्थें। उष्ट्रंश्चस्व पृथिवि मा विबाधिथाः सूपायनास्में भव सूपवश्चना। माता पुत्रं यथांसिचाभ्येनं भूमि वृण्। उष्ट्रश्चमाना पृथिवी हि तिष्ठंसि सहस्रं मित् उप हि श्रयंन्ताम्। ते गृहासो मधुश्चतो विश्वाहाँस्मै शर्णाः सन्त्वत्रं। एणींर्धाना हरिणीरर्जुनीः सन्तु धेनवंः। तिलंबत्सा ऊर्जमस्मै दुहांना विश्वाहां सन्त्वनपंस्फुरन्तीः॥१७॥

पृषा ते यमसादंने स्वधा निधीयते गृहे। अक्षितिर्नामं ते असौ। इदं पितृभ्यः प्रभेरेम ब्रहिर्देवेभ्यो जीवन्त उत्तरं भरेम। तत्त्वंमारोहासो मेघ्यो भवं यमेन त्वं यम्यां संविदानः। मा त्वां वृक्षौ सम्बाधिष्टां मा माता पृंथिवि त्वम्। पितृन् हि यत्र गच्छास्येधांसं यमराज्यें। मा त्वां वृक्षौ सम्बाधिथां मा माता पृंथिवी मही। वैवस्वत हि गच्छांसि यमराज्ये विराजिस। नळं प्रवमारोहैतं नळेनं पृथोऽन्विंहि। स त्वं नळप्रंवो भूत्वा सन्तर् प्रतरोत्तर॥१८॥

स्वितैतानि शरींराणि पृथिव्ये मातुरुपस्थ आदेधे। तेभ्यंः पृथिवि शं भंव। षड्ढांता सूर्यं ते चक्षुंर्गच्छतु वातंमात्मा द्यां च गच्छं पृथिवीं च धर्मणा। अपो वां गच्छ यदि तत्रं ते हितमोषंधीषु प्रतितिष्ठा शरींरैः। परं मृत्यो अनुपरेहि पन्थां यस्ते स्व इतरो देवयानांत्। चक्षुंष्मते शृण्वते ते ब्रवीमि मा नंः प्रजा रीरिषो मोत वीरान्। शं वातः शर हि ते घृणिः

शर्मु ते सन्त्वोषेधीः। कल्पेन्तां मे दिशः शग्माः। पृथिव्यास्त्वां लोके सांदयाम्यमुष्य शर्मासि पितरों देवतां। प्रजापंतिस्त्वा सादयतु तयां देवतंया। अन्तरिक्षस्य त्वा दिवस्त्वां दिशां त्वा नाकंस्य त्वा पृष्ठे ब्रध्नस्यं त्वा विष्टपं सादयाम्यमुष्य शर्मासि पितरों देवता। प्रजापंतिस्त्वा सादयतु तयां देवतंया॥१९॥ अपूपवाँन्घृतवा ईश्चरुरेह सींदतूत्तभुवन् पृथिवीं द्यामुतोपिर। योनिकृतः पथिकृतः सपर्यत ये देवानां घृतभागा इह स्थ। एषा ते यमसादेने स्वधा निधीयते गृहें उसौ। दशाँक्षरा ता रक्षस्व तां गोपायस्व तां ते परिददामि तस्यां त्वा मा दंभन्पितरों देवतां। प्रजापंतिस्त्वा सादयतु तयां देवतया। अपूपवाञ्छृतवान क्षीरवान्दिधवान्मधुमाः श्रकरेह सींदतूत्तभुवन् पृथिवीं द्यामुतोपरि। योनिकृतः पथिकृतः सपर्यत् ये देवाना रे शृतभागाः क्षीरभागा दिधिभागा मधुभागा इह स्थ। एषा तें यमसादंने स्वधा निधीयते गृहेंऽसौ। शताक्षरा सहस्रौक्षरायुतौक्षराऽच्युंताक्षरा ता र रेक्षस्व तां गोपायस्व तां ते परिंददामि तस्यां त्वा मा दंभन्पितरों देवतां। प्रजापंतिस्त्वा सादयतु तयां देवतंया॥२०॥

प्तास्ते स्वधा अमृताः करोमि यास्ते धानाः परिकिराम्यत्रे। तास्ते यमः पितृभिः संविदानोऽत्रं धेनूः कामृदुधाः करोतु। त्वामर्जुनौषंधीनां पयो ब्रह्माण इद्विदुः। तासां त्वा मध्यादादंदे चरुभ्यो अपिधातवे। दूर्वाणाई स्तम्बमाहंरैतां प्रियतंमां ममं। इमां दिशं मनुष्यांणां भूयिष्ठानु वि रोहतु। काशांनाइ स्तम्बमाहंर रक्षंसामपंहत्ये। य एतस्ये दिशः प्राभंवन्नघायवो यथा तेनाभंवान्पुनंः। दर्भाणाई स्तम्बमाहंर पितृणामोषंधीं प्रियाम्। अन्वस्यै मूर्लं जीवादनु काण्डमथो फलम्॥२१॥

लोकं पृंण् ता अस्य सूदंदोहसः। शं वातः शं हि ते घृणिः शम् ते सन्त्वोषधीः। कल्पन्तां ते दिशः सर्वाः। इदमेव मेतोऽपंगमार्तिमाराम् काश्चन। तथा तदिश्वभ्यां कृतं मित्रेण् वर्रुणेन च। वर्णो वार्यादिदं देवो वनस्पतिः। आर्त्ये निर्ऋत्ये द्वेषांच वनस्पतिः। विधृतिरिस् विधारयासमद्घा द्वेषां से शम शमयासमद्घा द्वेषां से यव यवयासमद्घा द्वेषां सि। पृथिवीं गंच्छान्तरिक्षं गच्छ दिवं गच्छ दिशों गच्छ सुवंगंच्छ सुवंगंच्छ दिशों गच्छ दिवं गच्छान्तरिक्षं गच्छ पृथिवीं गंच्छाऽऽपो वां गच्छ यदि तत्रं ते हितमोषधीषु प्रतितिष्ठा शरीरैः। अश्मन्वती रेवतीर्यद्वै देवस्यं सिवतः प्वितं या गुष्टात्पन्नादृद्वयं तमंसस्परि धाता पुनातु॥२२॥

हर्लं पुनातु॥८॥**———————**[८

आ रोह्ताऽऽयुंर्ज्रसं गृणाना अनुपूर्वं यतमाना यितृष्ट। इह त्वष्टां सुजनिमा सुरत्नों दीर्घमायुः करतु जीवसे वः। यथाऽहाँन्यनुपूर्वं भवंन्ति यथर्तवं ऋतुभिर्यन्तिं क्रुप्ताः। यथा न पूर्वमपंरो जहाँत्येवा धांतरायू ५ षि कल्पयैषाम्। न हिं ते अग्ने तनुवैं कूरं चकार मर्त्यः। कपिर्बभस्ति तेर्जनं पुनर्जरायु गौरिंव। अपं नः शोशुंचद्घमग्नें शुशुध्या र्यिम्। अपं नुः शोशुंचदघं मृत्यवे स्वाहां। अनुङ्गाहंमुन्वारंभामहे स्वस्तयें। स नु इन्द्रं इव देवेभ्यो वहिंः सम्पारंणो भव॥२३॥ इमे जीवा विं मृतैरावंवर्तिन्नभूँद्भद्रा देवहूंतिं नो अद्य। प्राञ्जोगामानृतये हसाय द्राघीय आर्युः प्रतरां दर्धानाः। मृत्योः पदं योपयंन्तो यदैम् द्राघीय आर्युः प्रत्रां दर्धानाः। आप्यार्यमानाः प्रजया धर्नेन शुद्धाः पूता भेवथं यज्ञियासः। इमं जीवेभ्यः परिधिं दंधामि मा नोऽनुंगादपंरो अर्धमेतम्। शतं जीवन्तु शरदेः पुरूचीस्तिरो मृत्युं देद्महे पर्वतेन। इमा नारीरविधवाः सुपत्नीराञ्जनेन सूर्पिषा सम्मृंशन्ताम्। अनश्रवों अनमीवाः सुशेवा आरोहन्तु जनयो योनिमग्रे। यदाञ्जनं त्रैककुदं जातः हिमवंतस्परिं। तेनामृतंस्य मूलेनारांतीर्जम्भयामसि। यथा त्वमुंद्भिनत्स्योषधे पृथिव्या अधि। एविम्म उद्भिन्दन्तु कीत्या यशंसा ब्रह्मवर्चसेनं। अजोंऽस्यजास्मदघा द्वेषा ५सि यवोऽसि यवयास्मदघा द्वेषा ५सि॥२४॥

अपं नः शोशंचद्घमग्नं शृशुध्या र्यिम्। अपं नः शोशंचद्घम्। सुक्षेत्रिया सुंगात्या वंसूया चं यजामहे। अपं नः शोश्चंवद्घम्। प्रयद्भन्दिष्ठ एषां प्रास्माकांसश्च सूर्यः। अपं नः शोश्चंवद्घम्। प्रयद्ग्नेः सहंस्वतो विश्वतो यन्तिं सूर्यः। अपं नः शोश्चंवद्घम्। प्रयत्तें अग्ने सूरयो जायेमिहि प्र तें वयम्। अपं नः शोश्चंवदघम्॥२५॥

त्वः हि विश्वतोमुख विश्वतः परिभूरसिं। अपं नः शोश्चंचद्घम्। द्विषों नो विश्वतोमुखाऽतिं नावेवं पारय। अपं नः शोश्चंचद्घम्। स नः सिन्धंमिव नावयातिं पर्षा स्वस्तयें। अपं नः शोश्चंचद्घम्। आपंः प्रवणादिंव यतीरपास्मत्स्यंन्दताम्घम्। अपं नः शोश्चंचद्घम्। उद्वनादुंदकानीवापास्मत्स्यंन्दताम्घम्। अपं नः शोश्चंचद्घम्। आन्नदायं प्रमोदाय पुनरागाः स्वान्गृहान्। अपं नः शोश्चंचद्घम्। शोश्चंचद्घम्। न व तत्र प्रमीयते गौरश्वः पुरुषः पृशः। यत्रेदं ब्रह्मं क्रियते परिधिर्जीवंनायकमपं नः शोश्चंचद्घम्॥२६॥

अघमघं चत्वारिं च॥१०॥______[१०]

अपंश्याम युवितमाचरंन्तीं मृतायं जीवां परिणीयमानाम्। अन्थेन या तमंसा प्रावृंताऽसि प्राचीमवांचीमवयन्नरिष्ठौ। मयैतां मा्ड्स्तां भ्रियमांणा देवी सती पितृलोकं यदैषि। विश्ववारा नमंसा संव्ययन्त्युभौ नों लोकौ पयसाऽऽवृंणीहि। रियष्ठामुग्निं मधुंमन्तमूर्मिणमूर्जः सन्तं त्वा पयसोप् सर्श्सदेम। सर्र रय्या समु वर्चसा सर्चस्वा नः स्वस्तयै। ये जीवा ये चं मृता ये जाता ये च जन्त्याः। तेभ्यों घृतस्यं धारियतुं मधुंधारा व्युन्दती। माता रुद्राणां दुहिता वसूना इं स्वसांदित्यानां ममृतंस्य नाभिः। प्रणुवोचं चिकितुषे जनाय मागामनां गामिदंतिं विधिष्ट। पिबंतूदकं तृणां न्यतु। ओमुत्सृजत॥२७॥

विधिष्ट द्वे चं॥११॥------[१९]

सन्त्वां सिश्चामि यजुषां प्रजामायुर्धनं च॥ ॐ शान्तिः शान्तिः शान्तिः॥

सुमङ्गलीरियं वधूरिमा संमेत पश्यंत । सौभाँग्यम्स्यै दत्त्वायाथास्तं वि परेतन। इमां त्विमेन्द्र मीद्वः सुपुत्रा स्मुभगाँ कुरु। दशाँस्यां पुत्राना धेहि पतिमेकाद्शं कृषि॥ आवहंन्ती वितन्वाना। कुर्वाणा चीरमात्मनंः। वासा सि मम् गावश्च। अन्नपाने चं सर्वदा। ततों मे श्रियमावह।

ॐ शान्तिः शान्तिः शान्तिः॥



॥सप्तमः प्रश्नः — शीक्षावल्ली॥

शं नो मित्रः शं वर्रणः। शं नो भवत्वर्यमा। शं न इन्द्रो बृह्स्पतिः। शं नो विष्णुंरुरुक्रमः। नमो ब्रह्मणे। नमस्ते वायो। त्वमेव प्रत्यक्षं ब्रह्मांसि। त्वमेव प्रत्यक्षं ब्रह्मं विद्ध्यामि। ऋतं वंदिष्यामि। सृत्यं वंदिष्यामि। तन्मामंवतु। तद्वक्तारंमवतु। अवंतु माम्। अवंतु वृक्तारम्। ॐ शान्तिः शान्तिः शान्तिः॥१॥

स्त्यं वंदिष्यामि पश्चं चाशा——[१] शीक्षां व्यांख्यास्यामः। वर्णः स्वरः। मात्रा बलम्। सामे सन्तानः। इत्युक्तः शीक्षाध्यायः॥२॥

सह नौ यशः। सह नौ ब्रंह्मवर्चसम्। अथातः स॰हिताया उपनिषदं व्यांख्यास्यामः। पश्चस्वधिकंरणेषु। अधिलोकमधि-ज्यौतिषमधिविद्यमधिप्रजंमध्यात्मम्। ता महास॰हिता इंत्याचृक्षते। अथांधिलोकम्। पृथिवी पूर्वरूपम्। द्यौरुत्तंररूपम्। आकांशः सन्धिः॥३॥

वार्युः सन्धानम्। इत्यंधिलोकम्। अथांधिज्यौतिषम्। अग्निः पूर्वरूपम्। आदित्य उत्तररूपम्। आपः सन्धिः। वैद्युतंः सन्धानम्। इत्यंधिज्यौतिषम्। अथांधिविद्यम्। आचार्यः पूर्वरूपम्॥४॥

अन्तेवास्युत्तंररूपम्। विद्या सुन्धिः। प्रवचन ५ सन्धानम्।

इत्यंधिविद्यम्। अथाधिप्रजम्। माता पूँर्वरूपम्। पितोत्तंररूपम्। प्रंजा सुन्धिः। प्रजननर् सन्धानम्। इत्यधिप्रजम्॥५॥

अथाध्यात्मम्। अधराहनुः पूँर्वरूपम्। उत्तराहनुरुत्तंररूपम्। वाक्सन्धिः। जिह्वां सन्धानम्। इत्यध्यात्मम्। इतीमा मंहास्रहिताः। य एवमेता महास्रहिता व्याख्यांता वेद। सन्धीयते प्रजंया पृशुभिः। ब्रह्मवर्चसेनान्नाद्येन सुवर्ग्यणं लोकेन॥६॥

सन्धिराचार्यः पूर्वरूपमित्यधिप्रजं लोकेन॥३॥=

[3]

यश्छन्दंसामृष्भो विश्वरूपः। छन्दोभ्योऽध्यमृताँत्सम्बभूवं। स मेन्द्रो मेधयाँ स्पृणोतु। अमृतंस्य देव धारंणो भूयासम्। शरीरं मे विचंर्षणम्। जिह्वा मे मधुंमत्तमा। कर्णांभ्यां भूरि विश्वंवम्। ब्रह्मणः कोशोऽसि मेधयापिंहितः। श्रुतं में गोपाय। आवहंन्ती वितन्वाना॥७॥

कुर्वाणा चीरंमात्मनंः। वासां स्सि मम् गावंश्व। अन्नपाने चं सर्वदा। ततों मे श्रियमावंह। लोमशां पृश्भिः सह स्वाहाँ। आ मां यन्तु ब्रह्मचारिणः स्वाहाँ। वि मांऽऽयन्तु ब्रह्मचारिणः स्वाहाँ। प्र मांऽऽयन्तु ब्रह्मचारिणः स्वाहाँ। दमायन्तु ब्रह्मचारिणः स्वाहाँ। शमायन्तु ब्रह्मचारिणः स्वाहाँ॥८॥ यशो जनेऽसानि स्वाहाँ। श्रेयान् वस्यंसोऽसानि स्वाहाँ। तं त्वां भग प्रविंशानि स्वाहाँ। स मां भग प्रविंश स्वाहाँ। तस्मिन्त्सहस्रंशाखे। निभंगाहं त्वियं मृजे स्वाहाँ। यथाऽऽपः प्रवंता यन्ति। यथा मासां अहर्जुरम्। एवं मां ब्रह्मचारिणः। धात्रायन्तु सर्वतः स्वाहाँ। प्रतिवेशोऽसि प्र मां भाहि प्र मां पद्यस्व॥९॥

[8]

भूर्भुवः सुवरिति वा एतास्तिस्रो व्याह्रंतयः। तासांमुहस्मै तां चंतुर्थीम्। माहांचमस्यः प्रवेदयते। मह् इतिं। तद्वह्मं। स आत्मा। अङ्गांन्यन्या देवताः। भूरिति वा अयं लोकः। भुव इत्यन्तरिक्षम्। सुवरित्यसौ लोकः॥१०॥

मह् इत्यांदित्यः। आदित्येन् वाव सर्वे लोका महीयन्ते। भूरिति वा अग्निः। भुव इतिं वायुः। सुव्रित्यांदित्यः। मह् इतिं चन्द्रमाः। चन्द्रमंसा वाव सर्वाणि ज्योती १षि महीयन्ते। भूरिति वा ऋचः। भुव इति सामानि। सुव्रिति यज्र १षि॥११॥

मह् इति ब्रह्मं। ब्रह्मंणा वाव सर्वे वेदा महींयन्ते। भूरिति वै प्राणः। भुव इत्यंपानः। सुव्रितिं व्यानः। मह् इत्यन्नम्। अन्नेन वाव सर्वे प्राणा महींयन्ते। ता वा पृताश्चंतस्रश्चतुर्धा। चतंस्रश्चतस्रो व्याहंतयः। ता यो वेदं। स वेंद् ब्रह्मं। सर्वेंऽस्मै देवा बुलिमावंहन्ति॥१२॥ स य एषों उन्तर्हंदय आकाशः। तस्मिन्नयं पुरुषो मनोमर्यः। अमृंतो हिर्ण्मयः। अन्तरेण तालुंके। य एष स्तर्न इवावलम्बंते। सेंन्द्रयोनिः। यत्रासौ केंशान्तो विवर्तते। व्यपोह्यं शीर्षकपाले। भूरित्युग्नौ प्रतितिष्ठति। भुव इतिं वायौ॥१३॥

सुव्रित्यंदित्ये। मह् इति ब्रह्मंणि। आप्नोति स्वारांज्यम्। आप्नोति मनंस्स्पितम्। वाक्पंतिश्वक्षंष्पितिः। श्रोत्रंपतिर्वि-ज्ञानंपितः। एतत्ततों भवति। आकाशशंरीरं ब्रह्मं। स्त्यात्मंप्राणारांम् मनं आनन्दम्। शान्तिंसमृद्धमृतम्। इतिं प्राचीनयोग्योपांस्व॥१४॥

व्यावमृत्मेकं चाहा [६]

पृथिव्यंन्तिरक्षं द्यौर्दिशोंऽवान्तरिद्याः। अग्निर्वायुरित्य-श्चन्द्रमा नक्षंत्राणि। आप ओषंधयो वनस्पतंय आकाश आत्मा। इत्यंधिभूतम्। अथाध्यात्मम्। प्राणो व्यानोंऽपान उंदानः संमानः। चक्षुः श्रोत्रं मनो वाक्तक्। चर्म मार्स्स स्नावास्थि मुजा। एतदिधि विधायर्षिरवोचत्। पाङ्कं वा इदर सर्वम्। पाङ्कंनैव पाङ्कः स्पृणोतीति॥१५॥

सर्वुमेक च॥७॥______[9]

ओमिति ब्रह्मं। ओमितीद सर्वम्ं। ओमित्येतदंनुकृति ह स्म वा अप्योश्रांवयेत्याश्रांवयन्ति। ओमिति सामांनि गायन्ति। ओश्शोमितिं शस्त्राणिं शश्सन्ति। ओमित्यंध्वर्युः प्रंतिग्रं प्रतिंगृणाति। ओमिति ब्रह्मा प्रसौति। ओमित्यंग्निहोत्रमन्जानाति। ओमितिं ब्राह्मणः प्रंवुक्ष्यन्नांह ब्रह्मोपांप्रवानीतिं। ब्रह्मैवोपांप्रोति॥१६॥

भोन्दर्शं॥८॥————[८]

ऋतं च स्वाध्यायप्रवंचने च। सत्यं च स्वाध्यायप्रवंचने च। तपश्च स्वाध्यायप्रवंचने च। शमश्च स्वाध्यायप्रवंचने च। शमश्च स्वाध्यायप्रवंचने च। अग्नरश्च स्वाध्यायप्रवंचने च। अग्निहोत्रं च स्वाध्यायप्रवंचने च। अतिथयश्च स्वाध्यायप्रवंचने च। मानुषं च स्वाध्यायप्रवंचने च। प्रजा च स्वाध्यायप्रवंचने च। प्रजा च स्वाध्यायप्रवंचने च। प्रजातिश्च स्वाध्यायप्रवंचने च। प्रजातिश्च स्वाध्यायप्रवंचने च। सत्यमिति सत्यवचां राथीतरः। तप इति तपोनित्यः पौरुशिष्टः। स्वाध्यायप्रवचने एवेति नाकों मौद्गल्यः। तिद्धि तपंस्तिद्धि तपः॥१७॥

प्रजा च स्वाध्यायप्रवंचने च षद्वं॥९॥•••••••[९]

अहं वृक्षस्य रेरिवा। कीर्तिः पृष्ठं गिरेरिव। ऊर्ध्वपंवित्रो वाजिनीव स्वमृतंमस्मि। द्रविण् सर्वर्चसम्। सुमेधा अमृतोक्षितः। इति त्रिशङ्कोर्वेदानुवचनम्॥१८॥

अहर षट्॥१०॥**———————[१०**]

वेदमनूच्याचार्योऽन्तेवासिनमंनुशास्ति। सत्यं वद। धर्मं चर। स्वाध्यायानमा प्रमदः। आचार्याय प्रियं धनमाहृत्य प्रजातन्तुं मा व्यंवच्छेत्सीः। सत्यान्न प्रमंदितव्यम्। धर्मान्न प्रमंदित्व्यम्। कुशलान्न प्रमंदित्व्यम्। भूत्यै न प्रमंदित्व्यम्। स्वाध्यायप्रवचनाभ्यां न प्रमंदितव्यम्॥१९॥

देविपतृकार्याभ्यां न प्रमंदित्व्यम्। मातृंदेवो भव। पितृंदेवो भव। आचार्यदेवो भव। अतिथिंदेवो भव। यान्यनवद्यानिं कर्माणि। तानि सेविंतव्यानि। नो इंतराणि। यान्यस्माकः सुचेरितानि। तानि त्वयोपास्यानि॥२०॥

नो इंतराणि। ये के चास्मच्छ्रेया स्मो ब्राह्मणाः। तेषां त्वयाऽऽसनेन प्रश्वंसित्व्यम्। श्रद्धंया देयम्। अश्रद्धंयाऽदेयम्। श्रिंया देयम्। हिंया देयम्। भिंया देयम्। संविंदा देयम्। अथ यदि ते कर्मविचिकित्सा वा वृत्तविचिकित्सा वा स्यात्॥२१॥

ये तत्र ब्राह्मणाः सम्मर्शिनः। युक्तां आयुक्ताः। अलूक्षां धर्मकामाः स्युः। यथा ते तत्रं वर्तेरन्। तथा तत्रं वर्तेथाः। अथाभ्यांख्यातेषु। ये तत्र ब्राह्मणाः सम्मर्शिनः। युक्तां आयुक्ताः। अलूक्षां धर्मकामाः स्युः। यथा ते तेषुं वर्तेरन्। तथा तेषुं वर्तेथाः। एषं आदेशः। एष उपदेशः। एषा वेदोपनिषत्। एतदंनुशासनम्। एवमुपांसित्व्यम्। एवमु चैतंदुपास्यम्॥२२॥

स्वाध्यायप्रवचनाभ्यान्न प्रमंदित्व्यं तानि त्वयोपास्यानि स्यात्तेषुं वर्तेरन्त्सप्त चं॥११॥———[१९]

शं नो मित्रः शं वर्रणः। शं नो भवत्वर्यमा। शं

न् इन्द्रो बृह्स्पतिः। शं नो विष्णुंरुरुक्रमः। नमो ब्रह्मणे। नमंस्ते वायो। त्वमेव प्रत्यक्षं ब्रह्मांसि। त्वामेव प्रत्यक्षं ब्रह्मांसि। त्वामेव प्रत्यक्षं ब्रह्मांविषम्। ऋतमंवादिषम्। सत्यमंवादिषम्। तन्मामांवीत्। तद्वक्तारंमावीत्। आवीन्माम्। आवींद्वक्तारम्। ॐ शान्तिः शान्तिः शान्तिः॥२३॥

सत्यमंवादिषं पश्चं च॥१२॥=

[१२]

॥ अष्टमः प्रश्नः — ब्रह्मानन्दवल्ली॥

ॐ सह नांववतु। सह नौं भुनक्तु। सह वीर्यं करवावहै। तेज्ञस्वि नावधीतमस्तु मा विद्विषावहैं। ॐ शान्तिः शान्तिः शान्तिः॥

ब्रह्मविदाँप्रोति परम्ँ। तदेषाभ्यंक्ता। सत्यं ज्ञानमंनन्तं ब्रह्मं। यो वेद निहितं गुहांयां परमे व्योमन्। सौंऽश्रुते सर्वान्कामान्त्सह। ब्रह्मंणा विपश्चितेतिं। तस्माद्वा एतस्मादात्मनं आकाशः सम्भूतः। आकाशाद्वायुः। वायोरग्निः। अग्नेरापंः। अद्भः पृंथिवी। पृथिव्या ओषंधयः। ओषंधीभ्योऽन्नम्। अन्नात्पुरुषः। स वा एष पुरुषोऽन्नरस्मयः। तस्येदंमेव शिरः। अयं दक्षिणः पृक्षः। अयमुत्तंरः पृक्षः। अयमात्मां। इदं पुच्छं प्रतिष्ठा। तदप्येष श्लोको भ्वति॥१॥

अन्नाद्वै प्रजाः प्रजायंन्ते। याः काश्चं पृथिवी श्रिताः।

अथो अन्नेनैव जीवन्ति। अथैनदिपं यन्त्यन्ततः। अन्नर

हि भूतानां ज्येष्ठम्। तस्मौत्सर्वौष्धमुंच्यते। सर्वं वै तेऽन्नमाप्रुवन्ति। येऽन्नं ब्रह्मोपासंते। अनु हि भूतानां ज्येष्ठम्। तस्मात्सर्वीष्धमुंच्यते। अन्नाद्भूतानि जायंन्ते। जातान्यन्नेन वर्धन्ते। अद्यतेऽत्ति च भूतानि। तस्मादन्नं तदुच्यंत इति। तस्माद्वा एतस्मादन्नंरसमयात्। अन्योऽन्तर आत्मां प्राणुमयः। तेनैष पूर्णः। स वा एष पुरुषविध एव। तस्य पुरुषविधताम्। अन्वयं पुरुषविधः। तस्य प्राणं एव शिरः। व्यानो दक्षिणः पक्षः। अपान उत्तरः पक्षः। आकांश आत्मा। पृथिवी पुच्छं प्रतिष्ठा। तदप्येष श्लोंको भवति॥२॥ प्राणं देवा अनु प्राणंन्ति। मनुष्याः प्शवंश्च ये। प्राणो हि भूतानामार्युः। तस्मौत्सर्वायुषमुंच्यते। सर्वमेव त् आयुंर्यन्ति। ये प्राणं ब्रह्मोपासंते। प्राणो हि भूतानामायुः। तस्मात्सर्वायुषमुच्यंत इति। तस्यैष एव शारीर आत्मा। यंः पूर्वस्य। तस्माद्वा एतस्मौत् प्राणमयात्। अन्योऽन्तर आत्मां मनोमयः। तेनैष पूर्णः। स वा एष पुरुषविध एव। तस्य पुरुषविधताम्। अन्वयं पुरुषविधः। तस्य यज्रीरेव शिरः। ऋग्दक्षिणः पक्षः। सामोत्तरः पक्षः। आदेश आत्मा। अथर्वाङ्गिरसः पुच्छं प्रतिष्ठा। तदप्येष श्लोको भवति॥३॥ यतो वाचो निवंर्तन्ते। अप्रांप्य मनंसा सह। आनन्दं ब्रह्मंणो विद्वान्। न बिभेति कदांचनेति। तस्यैष एव शारीर आत्मा। यंः पूर्वस्य। तस्माद्वा एतस्मौन्मनोमयात्। अन्योऽन्तर आत्मा विज्ञान्मयः। तेनैष पूर्णः। स वा एष पुरुषविध एव। तस्य पुरुषविधताम्। अन्वयं पुरुषविधः। तस्य श्रंद्धैव शिरः। ऋतं दक्षिणः पृक्षः। सत्यमुत्तंरः पृक्षः। योग आत्मा। महः पुच्छं प्रतिष्ठा। तदप्येष श्लोंको भवति॥४॥

विज्ञानं युज्ञं तंनुते। कर्माणि तनुतेऽपि च। विज्ञानं देवाः सर्वे। ब्रह्म ज्येष्ठमुपांसते। विज्ञानं ब्रह्म चेद्वेदं। तस्माचेन्न प्रमाद्यंति। शरीरे पाप्मंनो हित्वा। सर्वान्कामान्त्समश्रुंत इति। तस्येष एव शारीर आत्मा। यः पूर्वस्य। तस्माद्वा एतस्माद्विज्ञानमयात्। अन्योऽन्तर आत्मांऽऽनन्दमयः। तेनैष पूर्णः। स वा एष पुरुषविध एव। तस्य पुरुषविधताम्। अन्वयं पुरुषविधः। तस्य प्रियंमेव शिरः। मोदो दक्षिणः पृक्षः। प्रमोद उत्तरः पृक्षः। आनंन्द आत्मा। ब्रह्म पुच्छं प्रतिष्ठा। तदप्येष श्लोको भ्वति॥५॥

असंत्रेव सं भवति। अस्द्रह्मेति वेद चेत्। अस्ति ब्रह्मेतिं चेद्वेद। सन्तमेनं ततो विंदुरिति। तस्यैष एव शारीर आत्मा। यः पूर्वस्य। अथातोऽनुप्रश्ञाः। उता विद्वानुमुं लोकं प्रेत्यं। कश्चन गंच्छुती(३)॥ आहों विद्वानुमुँ लोकं प्रेत्यं। कश्चन गंच्छुती(३)॥ आहों विद्वानुमुँ लोकं प्रेत्यं। कश्चित्समंश्जुता(३) उ। सोऽकामयत। बहु स्यां प्रजांयेयेतिं। स तपोऽतप्यत। स तपंस्तृष्त्वा। इदश् सर्वमसृजत। यदिदं किं चं। तत्सृष्ट्वा। तदेवानु प्राविंशत्।

तदंनुप्रविश्यं। सच् त्यचांभवत्। निरुक्तं चानिंरुक्तं च। निलयनं चानिंलयनं च। विज्ञानं चाविंज्ञानं च। सत्यं चानृतं च संत्यम्भवत्। यदिंदं किं च। तत्सत्यमिंत्याचृक्षते। तदप्येष श्लोंको भवति॥६॥

अस्द्वा इदमग्रं आसीत्। ततो वै सदंजायत। तदात्मानः स्वयंमकुरुत। तस्मात्तत्सुकृतमुच्यंत इति। यद्वें तत्सुकृतम्। रंसो वै सः। रसः ह्येवायं लब्ध्वाऽऽनंन्दी भवति। को ह्येवान्यांत्कः प्राण्यात्। यदेष आकाश आनंन्दो न स्यात्। एष ह्येवानंन्दयाति। यदा ह्यंवेष एतस्मिन्नदृश्येऽनात्म्येऽनिरुक्तेऽनिलयनेऽभयं प्रतिष्ठां विन्दते। अथ सोऽभयं गंतो भवति। यदा ह्यंवेष एतस्मिन्नदृश्येऽनात्म्येऽनिरुक्तेऽनिलयनेऽभयं प्रतिष्ठां विन्दते। अथ सोऽभयं गंतो भवति। यदा ह्यंवेष एतस्मिन्नदृरमन्तंरं कुरुते। अथ तस्य भयं भवति। तत्त्वेव भयं विदुषोऽमंन्वानस्य। तदप्येष श्लोंको भवति॥७॥

भीषाऽस्माद्वातंः पवते। भीषोदंति सूर्यः। भीषाऽस्मादिग्नं-श्चेन्द्रश्च। मृत्युर्धावति पश्चंम इति। सेषाऽऽनन्दस्य मीमा भवति। युवा स्यात्साधु युवाऽध्यायकः। आशिष्ठो दिढेष्ठो बिल्ष्टः। तस्येयं पृथिवी सर्वा वित्तस्यं पूर्णा स्यात्। स एको मानुषं आन्नदः। ते ये शतं मानुषां आन्नदाः। स एको मनुष्यगन्धर्वाणांमान्नदः। श्लोत्रियस्य चाकामंहत्स्य। ते ये शतं मनुष्यगन्धर्वाणांमान्नदाः। स एको देवगन्धर्वाणांमान्नदः। श्लोत्रियस्य चाकामंहत्स्य।

ते ये शतं देवगन्धर्वाणांमानुन्दाः। स एकः पितृणां चिरलोकलोकार्नामानन्दः। श्रोत्रियस्य चाकार्महतस्य। ते ये शतं पितृणां चिरलोकलोकानांमानन्दाः। स एक आजानजानां देवानांमानन्दः। श्रोत्रियस्य चाकामंहतस्य। ते ये शतमाजानजानां देवानांमानन्दाः। स एकः कर्मदेवानां देवानांमानन्दः। ये कर्मणा देवानंपियन्ति। श्रोत्रियस्य चाकामहतस्य। ते ये शतं कर्मदेवानां देवानांमानन्दाः। स एको देवानामानुन्दः। श्रोत्रियस्य चाकामहत्स्य। ते ये शतं देवानामानन्दाः। स एक इन्द्रस्यानन्दः। श्रोत्रियस्य चाकामंहतस्य। ते ये शतमिन्द्रंस्यानुन्दाः। स एको बृहस्पतेरानन्दः। श्रोत्रियस्य चाकामंहतस्य। ते ये शतं बृहस्पतेरानन्दाः। स एकः प्रजापतेरानन्दः। श्रोत्रियस्य चाकामंहतस्य। ते ये शतं प्रजापतेंरानन्दाः। स एको ब्रह्मणं आनन्दः। श्रोत्रियस्य चाकामंहतस्य। स यश्चायं पुरुषे। यश्चासावादित्ये। स एकः। स यं एवंवित्। अस्माल्लोकात्प्रेत्य। एतमन्नमयमात्मानमुपंसङ्कामति। एतं प्राणमयमात्मानमुपंसङ्कामित। एतं मनोमयमात्मानमुपं-सङ्कामित। एतं विज्ञानमयमात्मानमुपंसङ्कामित। एतमानन्द-मयमात्मानमुपंसङ्कामित। तदप्येष श्लोंको भवति॥८॥

यतो वाचो निवंर्तन्ते। अप्रौप्य मनंसा सह। आनन्दं ब्रह्मणो विद्वान्। न बिभेति कुतंश्चनेति। एत ह वावं न तपति।

किमहर सार्धु नाक्रवम्। किमहं पापमकर्रविमृति। स य एवं विद्वानेते आत्मान इस्पृणुते। उभे ह्येवैष् एते आत्मान इ स्पृणुते। य एवं वेदं। इत्युंपनिषंत्॥ ९॥

सह नांववतु। सह नौं भुनक्तु। सह वीर्यं करवावहै। तेजस्व नावधीतमस्तु मा विद्विषावहैं। ॐ शान्तिः शान्तिः॥



॥ नवमः प्रश्नः — भृगुवल्ली॥

ॐ सह नांववतु। सह नौं भुनक्तु। सह वीर्यं करवावहै। तेज्ञस्वि नावधीतमस्तु मा विद्विषावहैं। ॐ शान्तिः शान्तिः शान्तिः॥

भृगुर्वे वांरुणिः। वर्रणं पितंर्मुपंससार। अधीहि भगवो ब्रह्मेतिं। तस्मां एतत्प्रोवाच। अन्नं प्राणं चक्षुः श्रोत्रं मनो वाच्मितिं। त॰ होवाच। यतो वा इमानि भूतांनि जायंन्ते। येन जातांनि जीवंन्ति। यत्प्रयंन्त्यभि संविंशन्ति। तद्विजिंज्ञासस्व। तद्वह्मेतिं। स तपोंऽतप्यत। स तपंस्तस्वा॥१॥

अत्रं ब्रह्मेति व्यंजानात्। अन्नास्यंव खिल्वमानि भूतांनि जायंन्ते। अन्नंन जातांनि जीवंन्ति। अन्नं प्रयंन्त्यभि संविशन्तीति। तिद्वज्ञायं। पुनर्वे वर्रणं पितर्मुपंससार। अधींहि भगवो ब्रह्मेति। त॰ होवाच। तपंसा ब्रह्म विजिंज्ञासस्व। तपो ब्रह्मेति। स तपोऽतप्यत। स तपंस्तस्वा॥२॥

प्राणो ब्रह्मेति व्यंजानात्। प्राणाद्धेव खिल्वमानि भूतांनि जायंन्ते। प्राणेन जातांनि जीवंन्ति। प्राणं प्रयंन्त्यभि संविशन्तीति। तिद्वज्ञायं। पुनरेव वरुणं पितर्मुपंससार। अधींहि भगवो ब्रह्मेति। त॰ होवाच। तपंसा ब्रह्म विजिंज्ञासस्व। तपो ब्रह्मेतिं। स तपोंऽतप्यत। स तपंस्तस्वा॥३॥

मनो ब्रह्मेति व्यंजानात्। मनंसो ह्यंव खिल्वमानि भूतांनि जायंन्ते। मनंसा जातांनि जीवंन्ति। मनः प्रयंन्त्यभि संविशन्तीति। तिद्वज्ञायं। पुनर्वे वर्रणं पितर्मुपंससार। अधीहि भगवो ब्रह्मेति। त॰ होवाच। तपंसा ब्रह्म विजिंज्ञासस्व। तपो ब्रह्मेति। स तपोऽतप्यत। स तपंस्तुम्वा॥४॥

विज्ञानं ब्रह्मेति व्यंजानात्। विज्ञाना्द्येव खिल्वमानि भूतांनि जायंन्ते। विज्ञानंन जातांनि जीवंन्ति। विज्ञानं प्रयंन्त्यमि संविंशन्तीति। तद्विज्ञायं। पुनरेव वर्रणं पितंरमुपंससार। अधीहि भगवो ब्रह्मेतिं। त॰ होवाच। तपंसा ब्रह्म विजिंज्ञासस्व। तपो ब्रह्मेतिं। स तपोऽतप्यत। स तपंस्तस्वा॥५॥

आन्नदो ब्रह्मेति व्यंजानात्। आनन्दास्येव खिल्वमानि भूतानि जायन्ते। आनन्देन जातानि जीवन्ति। आनन्दं प्रयन्त्यिभ संविश्वन्तीति। सैषा भाँगीवी वांरुणी विद्या। प्रमे व्योमन् प्रतिष्ठिता। य एवं वेद प्रतितिष्ठति। अन्नवानन्नादो भवति। महान्भवति प्रजयां प्शुभिर्ब्रह्मवर्चसेनं। महान्कीर्त्या॥६॥

अत्रुं न निन्द्यात्। तद्वृतम्। प्राणो वा अन्नम्। शरीरमन्नादम्।

प्राणे शरीरं प्रतिष्ठितम्। शरीरे प्राणः प्रतिष्ठितः। तदेतदन्नमन्ने प्रतिष्ठितम्। स य एतदन्नमन्ने प्रतिष्ठितं वेद् प्रतितिष्ठति। अन्नवानन्नादो भवति। महान्भवति प्रजयां पृश्भिर्वह्मवर्चसेने। महान्कीर्त्या॥७॥

अत्रं न परिचक्षीत। तद्भृतम्। आपो वा अन्नम्। ज्योतिरन्नादम्। अप्सु ज्योतिः प्रतिष्ठितम्। ज्योतिष्यापः प्रतिष्ठिताः। तदेतदन्नमन्ने प्रतिष्ठितम्। स य एतदन्नमन्ने प्रतिष्ठितं वेद प्रतितिष्ठति। अन्नवानन्नादो भवति। महान्भवित प्रजयां पृश्भिर्ष्रह्मवर्चसेनं। महान्कीर्त्या॥८॥

अन्नं बहु कुंवीत। तद्भृतम्। पृथिवी वा अन्नम्। आकाशोऽन्नादः। पृथिव्यामांकाशः प्रतिष्ठितः। आकाशे पृथिवी प्रतिष्ठिता। तदेतदन्नमन्ने प्रतिष्ठितम्। स य पृतदन्नमन्ने प्रतिष्ठितं वेद प्रतितिष्ठति। अन्नंवानन्नादो भंवति। महान्भंवति प्रजयां पृशुभिर्ब्रह्मवर्चसने। महान्कीत्या॥९॥

न कश्चन वसतौ प्रत्यांचक्षीत। तद्वृतम्। तस्माद्यया कया च विधया बह्वंत्रं प्राप्नुयात्। अराध्यस्मा अन्निमंत्याचक्षते। एतद्वै मुखतौंऽन्नश्र राद्धम्। मुखतोऽस्मा अन्नश्र राध्यते। एतद्वै मध्यतौंऽन्नश्र राद्धम्। मध्यतोऽस्मा अन्नश्र राध्यते। एतद्वा अन्ततौंऽन्नश्र राद्धम्। अन्ततोऽस्मा अन्नश्र राध्यते। य एवं वेद। क्षेम इति वाचि। योगक्षेम इति प्राणापानयोः। कर्मेति हस्तयोः। गतिरिति पादयोः। विमुक्तिरिति

पायौ। इति मानुषीः समाज्ञाः। अथ दैवीः। तृप्तिरिंति वृष्टौ। बलमिति विद्युति। यश इति पृशुषु। ज्योतिरिति नंक्षत्रेषु। प्रजातिरमृतमानन्द इंत्युपस्थे। सर्वमिंत्याकाशे। तत्प्रतिष्ठेत्युंपासीत। प्रतिष्ठांवान्भवति। तन्मह इत्युंपासीत। मंहान्भवति। तन्मन इत्युंपासीत। मानंवान्भवति। तन्नम इत्युंपासीत। नम्यन्तें ऽस्मै कामाः। तद्वह्मेत्युंपासीत। ब्रह्मंवान्भवति। तद्भह्मणः परिमर इत्युंपासीत। पर्येणं म्रियन्ते द्विषन्तंः सपत्नाः। परि येंऽप्रियां भ्रातृव्याः। स यश्चीयं पुरुषे। यश्चासांवादित्ये। स एकः। स यं एवंवित्। अस्माल्लोकात्प्रेत्य। एतमन्नमयमात्मानमुपंसङ्कम्य। एतं प्राणमयमात्मानमुपंसङ्कम्य। एतं मनोमयमात्मानमुपं-सङ्कम्य। एतं विज्ञानमयमात्मानमुपंसङ्कम्य। एतमानन्दमय-मात्मानमुपंसङ्कम्य। इमाँ श्लोकान्कामान्नी कामरूप्यंनुसश्चरन्। एतत्साम गांयन्नास्ते। हा(३) वु हा(३) वु हा(३) वुं। अहमन्नमहमन्नमह्मन्नम्। अहमन्नादो(२)ऽहमन्नादो(२)-ऽहमन्नादः। अहङ् श्लोकुकुद्हङ् श्लोकुकुद्हङ् श्लोकुकृत्। अहमस्मि प्रथमजा ऋता(३) स्यु। पूर्वं देवेभ्यो अमृतस्य ना(३) भाइ। यो मा ददाति स इदेव मा(३) वाः। अहमन्नमन्नमदन्तमा(३) द्यि। अहं विश्वं भुवनमभ्यंभवाम्। सुवर्न ज्योतीः। य एवं वेदं। इत्युंपनिषंत्॥१०॥

सह नांववतु। सह नौं भुनक्तु। सह वीर्यं करवावहै। तेजस्व

नावधीतमस्तु मा विद्विषावहैं। ॐ शान्तिः शान्तिः॥

॥दशमः प्रश्नः — महानारायणोपनिषत्॥

ॐ सह नांववतु। सह नौं भुनक्तु। सह वीर्यं करवावहै। तेजस्वि नावधीतमस्तु मा विद्विषावहैं। ॐ शान्तिः शान्तिः शान्तिः॥

॥अम्भस्य पारे॥

अम्भस्यपारे भुवनस्य मध्ये नाकस्य पृष्ठे महितो महीयान्। शुक्रेण ज्योती ५षि समनुप्रविष्टः प्रजापंतिश्चरति गर्भे अन्तः॥ यस्मिन्निद सं च विचैति सर्वं यस्मिन्देवा अधि विश्वे निषेदुः। तदेव भूतं तदु भव्यमा इदं तदक्षरे पर्मे व्योमन्॥ येनांवृतं खं च दिवं महीं च येनांदित्यस्तपंति तेजसा भाजसा च। यमन्तः संमुद्रे कवयो वयंन्ति यदक्षरे परमे प्रजाः॥ यतः प्रसूता जगतः प्रसूती तोयेन जीवान्व्यसंसर्ज् भूम्याम्। यदोषंधीभिः पुरुषाँन्पशूङ्श्च विवेश भूतानि चराचराणि॥ अर्तः परं नान्यदणीयसं हि परौत्परं यन्महितो महान्तम्। यदेकमव्यक्तमनेन्तरूपं विश्वं पुराणं तमेसः परेस्तात्॥१॥ तदेवर्तं तदुं सत्यमांहुस्तदेव ब्रह्मं पर्मं केवीनाम्। इष्टापूर्तं बंहुधा जातं जायमानं विश्वं बिंभर्ति भुवंनस्य नाभिः॥ तदेवाग्निस्तद्वायुस्तत्सूर्यस्तदं चन्द्रमाः। तदेव शुक्रममृतं तद्वह्म तदापः स प्रजापंतिः॥ सर्वे निमेषा जिज्ञरे विद्युतः पुरुषादिधि। कुला मुहूर्ताः काष्ठांश्चाहोरात्राश्चं सर्वृशः॥

अर्द्धमासा मासां ऋतवंः संवत्सरश्चं कल्पताम्। स आपंः प्रदुघे उभे इमे अन्तरिक्षमथो सुवंः॥ नैनंमूर्ध्वं न तिर्यश्चं न मध्ये परिजग्रभत्। न तस्येशे कश्चन तस्यं नाम महद्यशंः॥२॥

न सुन्हशे तिष्ठति रूपंमस्य न चक्षुंषा पश्यित कश्चनैनम्ं। ह्दा मंनीषा मनंसाऽभिक्षृंप्तो य एंनं विदुरमृंतास्ते भवन्ति॥ अद्धः सम्भूंतो हिरण्यग्भं इत्यृष्टौ॥ एष हि देवः प्रदिशोनु सर्वाः पूर्वो हि जातः स उ गर्भे अन्तः। स विजायंमानः स जिन्ष्यमाणः प्रत्यङ्गुखांस्तिष्ठति विश्वतोमुखः॥ विश्वतंश्वक्षुरुत विश्वतोमुखो विश्वतोहस्त उत विश्वतंस्पात्। सं बाहुभ्यां नमंति सं पतंत्रैर्द्यावांपृथिवी जनयंन्देव एकः॥ वेनस्तत्पश्यन्विश्वा भवंनानि विद्वान् यत्र विश्वं भवत्येकंनीळम्। यस्मित्रिदः सं च विचैकः स ओतः प्रोतंश्व विभुः प्रजास्ं। प्र तद्वोचे अमृतं नु विद्वान्गंन्थर्वे नाम् निहितं गुहांसु॥३॥

त्रीणि पदा निहिता गुहांसु यस्तद्वेदं सिवतुः पिताऽसंत्। स नो बन्धुंर्जिनिता स विधाता धामांनि वेद भुवंनानि विश्वा। यत्रं देवा अमृतंमानशानास्तृतीये धामांन्यभ्यैरंयन्त। परि द्यावांपृथिवी यंन्ति सद्यः परि लोकान् परि दिशः परि सुवंः। ऋतस्य तन्तुं विततं विचृत्य तदंपश्यत्तदंभवत् प्रजासुं। प्रीत्यं लोकान्परीत्यं भूतानि

प्रीत्य सर्वाः प्रदिशो दिशंश्च। प्रजापंतिः प्रथम्जा ऋतस्य ऽऽत्मन् ऽऽत्मानं मृभिसम्बंभूव। सदंस्पित् मद्भंतं प्रियमिन्द्रंस्य काम्यम्। सिनं मेधामं यासिषम्। उद्दीं प्यस्व जातवेदो ऽपुष्ठित्र र्ऋतिं ममं॥४॥

प्शू श्र्य मह्यमावंह जीवंनं च दिशों दिश। मा नों हिरसीजातवेदो गामश्वं पुरुषं जगंत्। अविंभ्रदग्न आगंहि श्रिया मा परिंपातय।

॥ गायत्रीमन्त्राः॥

पुरुषस्य विद्य सहस्राक्षस्यं महादेवस्यं धीमहि। तन्नों रुद्रः प्रचोदयाँत्। तत्पुरुषाय विद्यहें महादेवायं धीमहि। तन्नों रुद्रः प्रचोदयाँत्। तत्पुरुषाय विद्यहें वक्रतुण्डायं धीमहि। तन्नों दिन्तः प्रचोदयाँत्। तत्पुरुषाय विद्यहें वक्रतुण्डायं धीमहि। तन्नों दिन्तः प्रचोदयाँत्। तत्पुरुषाय विद्यहें चक्रतुण्डायं धीमहि॥५॥

तन्नो नन्दिः प्रचोदयाँत्। तत्पुरुंषाय विद्यहें महासेनायं धीमिह। तन्नेः षण्मुखः प्रचोदयाँत्। तत्पुरुंषाय विद्यहें सुवर्णपक्षायं धीमिह। तन्नो गरुडः प्रचोदयाँत्। वेदात्मनायं विद्यहें हिरण्यगर्भायं धीमिह। तन्नों ब्रह्मं प्रचोदयाँत्। नारायणायं विद्यहें वासुदेवायं धीमिह। तन्नो विष्णुः प्रचोदयाँत्। वृज्जन्खायं विद्यहें तीक्ष्णद्रष्ट्रष्ट्रायं धीमिह॥६॥ तन्नों नारिस हः प्रचोदयाँत्। भास्करायं विद्यहें

महद्युतिक्रायं धीमहि। तन्नों आदित्यः प्रचोदयाँत्। वैश्वान्रायं विद्महें लालीलायं धीमहि। तन्नों अग्निः प्रचोदयाँत्। कात्यायनायं विद्महें कन्यकुमारिं धीमहि। तन्नों दुर्गिः प्रचोदयाँत्।

॥ दूर्वासूक्तम्॥

सहस्रपरंमा देवी शतमूंला शताङ्कुरा। सर्वर् हरतुं मे पापं दूर्वा दुःस्वप्रनाशंनी। काण्डांत्काण्डात् प्ररोहंन्ती परुषः परुषः परि॥७॥

एवानों दूर्वे प्रतंनु सहस्रेण श्तेनं च। या श्तेनं प्रत्नोषिं सहस्रेण विरोहंसि। तस्यांस्ते देवीष्टके विधेमं ह्विषां व्यम्। अश्वंक्रान्ते रंथक्रान्ते विष्णुक्रांन्ते वसुन्धंरा। शिरसां धारियष्यामि रक्षस्व मां पदे पदे।

॥ मृत्तिकासूक्तम्॥

भूमिर्धेनुर्धरणी लोकधारिणी। उद्धृतांऽसि वंराहेण कृष्णेन शंतबाहुना। मृत्तिके हनं मे पापं यन्मया दुष्कृतं कृतम्। मृत्तिके ब्रह्मदत्ताऽसि काश्यपेनाभिमन्त्रिता। मृत्तिके देहिं मे पुष्टिं त्विय संवं प्रतिष्ठितम्॥८॥

मृत्तिके प्रतिष्ठिते सर्वं तन्मे निर्णुद मृत्तिके। तयां हतेने पापेन् गुच्छामि पंरमां गतिम्।

॥ रात्रुजयमन्त्राः ॥

यतं इन्द्र भयांमहे ततों नो अभयं कृधि। मघंवन्छुग्धि तव् तन्नं ऊतये विद्विषो विमृधों जिहि। स्वस्तिदा विशस्पतिर्वृत्रहा विमृधों वृशी। वृषेन्द्रंः पुर एंतु नः स्वस्तिदा अभयङ्करः। स्वस्ति न इन्द्रों वृद्धश्रंवाः स्वस्ति नंः पूषा विश्ववेदाः। स्वस्ति नस्ताक्ष्यों अरिष्टनेमिः स्वस्ति नो बृह्स्पतिर्दधातु। आपान्तमन्युस्तृपलेप्रभर्मा धुनिः शिमीवाञ्छ्ररुमा स्रजीषी। सोमो विश्वान्यत्सावनानि नार्वागिन्द्रं प्रतिमानानिदेभुः॥९॥

ब्रह्मंजज्ञानं प्रंथमं पुरस्ताद्विसीमृतः सुरुची वेन आवः।
सबुध्रियां उपमा अस्य विष्ठाः सृतश्च योनिमस्तश्च विवः।
स्योना पृथिवि भवांऽनृक्षरा निवेशनी। यच्छांनः शर्मं सृप्रथाः।
गन्धद्वारां दुराधर्षां नित्यपृष्टां करीषिणीम्। ईश्वरीः
सर्वभूतानां तामिहोपंह्वये श्रियम्। श्रीमें भृजतु। अलक्ष्मीमें
नृश्यतु। विष्णुंमुखा वे देवाश्छन्दोभिरिमाँ ह्योकानंनपज्ययम्भ्यंजयन्।
महाः इन्द्रो वज्रबाहः षोडशी शर्म यच्छतु॥१०॥

स्वस्ति नों मघवां करोतु हन्तुं पाप्मानं योंऽस्मान् द्वेष्टिं। सोमान् स्वरंणं कृणुहि ब्रंह्मणस्पते। कृक्षीवंन्तं य औशिजम्। शरीरं यज्ञशमलं कुसीदं तस्मिन्त्सीदतु योंऽस्मान् द्वेष्टिं। चरणं पवित्रं वितंतं पुराणं येनं पूतस्तरंति दुष्कृतानिं। तेनं पवित्रंण शुद्धेनं पूता अतिं पाप्मान्मरांतिं तरेम। सुजोषां इन्द्र सगंणो मुरुद्धिः सोमंं पिब वृत्रहञ्छूर

विद्वान्। ज्रिह शत्रूष्ट्र रप् मृधों नुद्स्वाथाभंयं कृणुहि विश्वतों नः। सुमित्रा न आप् ओषंधयः सन्तु दुर्मित्रास्तस्में भूयासुर्यों ऽस्मान् द्वेष्ट्रि यं चं व्यं द्विष्मः। आप्रो हि ष्ठा मंयो भुवस्ता नं ऊर्जे दंधातन॥११॥

म्हेरणांय चक्षंसे। यो वंः शिवतंमो रसस्तस्यं भाजयते ह नंः। उशतीरिव मातरंः। तस्मा अरंङ्ग मामवो यस्य क्षयांय जिन्वंथ। आपो जनयंथा च नः।

॥ अघमर्षणसूक्तम्॥

हिरंण्यशृङ्गं वर्रुणं प्रपंद्ये तीर्थं में देहि याचितः। यन्मयां भुक्तम्साधूनां पापेभ्यंश्च प्रतिग्रंहः। यन्मे मनसा वाचा कर्मणा वा दुष्कृतं कृतम्। तन्न इन्द्रो वर्रुणो बृह्स्पतिः सिवता चं पुनन्तु पुनः पुनः। नमोऽग्नयेंऽप्सुमते नम् इन्द्रांय नमो वर्रुणाय नमो वारुण्ये नमोऽज्ञ्यः॥१२॥

यद्पां क्रूरं यदंमेध्यं यदंशान्तं तदपंगच्छतात्। अत्याशनादंतीपानाद्यच उग्रात् प्रंतिग्रहाँत्। तन्नो वरुणो राजा पाणिनां ह्यवमर्शत्। सोऽहमपापो विरजो निर्मुक्तो मुंक्तिकिल्बषः। नाकंस्य पृष्ठमारुंह्य गच्छेद्बह्मंसलोकताम्। यश्चाप्सु वरुणः स पुनात्वघमर्षणः। इमं में गङ्गे यमुने सरस्वति शुतुंद्वि स्तोम सचता परुष्णिया। असिक्रिया मरुद्विधे वितस्त्याऽऽर्जीकीये श्रुणह्या सुषोमया। ऋतं चं

सृत्यं चाृभींद्धाृत्तप्सोऽध्यंजायत। ततो रात्रिरजायत् ततः समुद्रो अर्णुवः॥१३॥

समुद्रादेर्ण्वादिधे संवत्सरो अंजायत। अहोरात्राणि विद्धिक्षेस्य मिष्तो वृशी। सूर्याचन्द्रमसौ धाता यथापूर्वमंकत्पयत्। दिवं च पृथिवीं चान्तरिक्षमथो सुवंः। यत्पृथिव्याः रजंस्व मान्तरिक्षे विरोदंसी। इमाइस्तदापो वंरुणः पुनात्वंघमर्षणः। पुनन्तु वसंवः पुनातु वर्रुणः पुनात्वंघमर्षणः। एष भूतस्य मध्ये भुवंनस्य गोप्ता। एष पुण्यकृतां लोकानेष मृत्योर्हिर्ण्मयम्। द्यावांपृथिव्योर्हिर्ण्मयः सङ्श्रितः सुवंः॥१४॥

स नः सुवः सर्शिशाधि। आर्द्रं ज्वलंति ज्योतिरहमंस्मि। ज्योतिर्ज्वलंति ब्रह्माहमंस्मि। योऽहमंस्मि ब्रह्माहमंस्मि। अहमेवाहं मां जुंहोमि स्वाहाँ। अकार्यकार्यवकीणीं स्तेनो भ्रूणहा गुंरुतल्पगः। वर्रुणोऽपामघमर्षणस्तस्माल्पापात् प्रमुच्यते। रजो भूमिस्त्वमार रोदंयस्व प्रवंदन्ति धीराः। पुनन्तु ऋषंयः पुनन्तु वसंवः पुनातु वर्रुणः पुनात्वंघमर्षणः। आक्रान्त्समुद्रः प्रथमे विधंमं जनयंन्प्रजा भुवंनस्य राजाः। वृषां प्वित्रे अधि सानो अव्ये बृहत्सोमो वावृधे सुवान इन्दुः॥१५॥

[१]

जातवेंदसे सुनवाम सोमंमरातीयतो निजंहाति वेदंः। स नंः पर्षदितं दुर्गाणि विश्वां नावेव सिन्धुं दुरिताऽत्यग्निः। तामुग्निवंणां तपंसा ज्वलन्तीं वैरोचनीं केर्मफलेषु जुष्टांम्। दुर्गां देवी र शरणमहं प्रपद्ये सुतर्रसि तरसे नर्मः। अग्ने त्वं पारया नव्यो अस्मान्त्स्वस्तिभिरति दुर्गाणि विश्वां। पूर्श्व पृथ्वी बहुला नं उर्वी भवां तोकाय तनयाय शं योः। विश्वानि नो दुर्गहा जातवेदः सिन्धुं न नावा दुरिताति पर्षि। अग्ने अत्रिवन्मनंसा गृणानौं ऽस्माकं बोध्यविता तनूनांम्। पृतनाजित् सहंमानम् भ्रिमुग्र ह्वेम पर्मात्सधस्थात्। स नेः पर्षदिते दुर्गाणि विश्वा क्षामद्वेवो अति दुरिताऽत्यग्निः। प्रत्नोषिं कमीड्यों अध्वरेषुं सुनाच् होता नव्यंश्च सित्सं। स्वाश्रीग्ने तनुवं पिप्रयंस्वास्मभ्यं च सौभंगमायंजस्व। गोभिर्जुष्टमयुँजो निषिक्तं तवैन्द्र विष्णोरनुसश्चरेम। नाकस्य पृष्ठमभि संवसानो वैष्णवीं लोक इह मादयन्ताम्॥१६॥

॥ व्याहृतिहोमन्त्राः॥

भूरग्नयें पृथिव्यै स्वाहा भुवों वायवेऽन्तरिक्षाय स्वाहा सुवंरादित्यायं दिवे स्वाहा भूर्भुवः सुवंश्चन्द्रमंसे दिग्भ्यः स्वाहा नमों देवेभ्यः स्वधा पितृभ्यो भूर्भुवः सुव्रोम्॥१७॥ भूरन्नम् प्रये पृथिव्ये स्वाह्य भुवोऽन्नं वायवेऽन्तरिक्षाय् स्वाह्य सुव्रन्नमादित्यायं दिवे स्वाह्य भूर्भुवः सुव्रन्नं चन्द्रमसे दिग्भ्यः स्वाह्य नमो देवेभ्यः स्वधा पितृभ्यो भूर्भुवः सुवरन्नमोम्॥१८॥

[४]

भूरग्नयें च पृथिव्यै चं मह्ते च स्वाहा भुवों वायवें चान्तरिक्षाय च मह्ते च स्वाहा सुवंरादित्यायं च दिवे चं मह्ते च स्वाहा भूर्भुवः सुवश्चन्द्रमंसे च नक्षेत्रेभ्यश्च दिग्भ्यश्चं मह्ते च स्वाहा नमों देवेभ्यः स्वधा पितृभ्यो भूर्भुवः सुवृर्मह्रोम्॥१९॥

_[५]

॥ ज्ञानप्राप्त्यर्थहोममन्त्राः॥

पाहि नो अग्न एनंसे स्वाहा। पाहि नो विश्ववेदंसे स्वाहा। यज्ञं पाहि विभावंसो स्वाहा। सर्वं पाहि शतक्रेतो स्वाहा॥२०॥

[ھ

पाहि नो अग्न एकंया। पाह्यंत द्वितीयंया। पाह्यूर्जं तृतीयंया। पाहि गीर्भिश्चं तुसृभिवसो स्वाहाँ॥२१॥

[し]

॥वेदविस्मरणाय जपमन्त्राः॥

यश्छन्दंसामृष्भो विश्वरूपश्छन्दौभ्यश्छन्दा ईस्याविवेशं। सतार शिकाः पुरोवाचोपिन्षिदिन्द्रौ ज्येष्ठ इंन्द्रियाय

[2]

ऋषिंभ्यो नमों देवेभ्यः स्वधा पितृभ्यो भूर्भुवः सुवरोम्॥२२॥

नम् ब्रह्मणे धारणं मे अस्त्विनराकरणं धारियता भूयास्ं कर्णयोः श्रुतं मा च्यौंद्वं ममामुष्य ओम्॥२३॥

____[*S*]

॥ तपः प्रशंसा॥

ऋतं तर्पः सत्यं तर्पः श्रुतं तर्पः शान्तं तर्पो दानं तर्पो यज्ञस्तर्पो भूर्भुवः सुवुर्ब्रह्मैतदुर्पांस्यैतत्तर्पः॥२४॥

—[१०]

॥ विहिताचरणप्रशंसा निषिद्धाचरणनिन्दा च॥

यथां वृक्षस्यं सम्पुष्पितस्य दूराद्गन्थो वाँत्येवं पुण्यंस्य कर्मणों दूराद्गन्थो वांति यथांऽसिधारां कर्तेऽवंहितामवृक्तामेद्यद्युवे युवे ह वां विह्वदिंष्यामि कर्तं पंतिष्यामीत्येवम्नृतांदात्मानं जुगुप्सेत्॥२५॥

[88]

॥ दहरविद्या॥

अणोरणीयान्मह्तो महीयानात्मा गुहायां निहितोऽस्य जन्तोः। तमंक्रतुं पश्यति वीतशोको धातुः प्रसादौन्महिमानं-मीशम्। सप्त प्राणाः प्रभवंन्ति तस्मौत्सप्तार्चिषंः समिधंः सप्त जिह्वाः। सप्त इमे लोका येषु चरंन्ति प्राणा गुहाशंयां निहिताः सप्तसंप्त। अतः समुद्रा गिरयंश्च सर्वेऽस्मात्स्यन्दंन्ते सिन्धंवः सर्वरूपाः। अतंश्च विश्वा ओषंधयो रसांश्च येनैष भूतस्तिष्ठत्यन्तरात्मा। ब्रह्मा देवानां पद्वीः कंवीनामृषिर्विप्राणां मिहृषो मृगाणांम्। श्येनो गृध्राणा्ड् स्विधतिर्वनांना्ड् सोमः प्वित्रमत्यंति रेभन्। अजामेकां लोहितशुक्ककृष्णां बह्वीं प्रजां जनयंन्ती्ड् सरूपाम्। अजो ह्येको जुषमांणोऽनुशेते जहाँत्येनां भुक्तभोगामजौऽन्यः॥२६॥

ह्र्सः शुंचिषद्वसुंरन्तिरक्षसद्धोतां वेदिषदितिथिर्दुरोण्सत्।
नृषद्वरसहंत्सद्धोमसद्बा गोजा ऋंत्जा अद्विजा
ऋतं बृहत्। घृतं मिंमिक्षिरे घृतमंस्य योनिर्घृते श्रितो
घृतमुंवस्य धामं। अनुष्वधमावंह मादयंस्व स्वाहांकृतं
वृषभ विक्ष ह्व्यम्। समुद्रादूर्मिमधुंमार् उदांरदुपार्शुना
समंमृत्त्वमांनद्। घृतस्य नाम् गृह्यं यदस्ति जिह्वा
देवानांममृतंस्य नाभिः। वयं नाम् प्रब्रंवामा घृतेनास्मिन्
यज्ञे धारयामा नमोभिः। उपं ब्रह्मा शृंणवच्छ्रस्यमांनं चतुः
शृङ्गोवमीद्रौर पृतत्। चत्वारि शृङ्गा त्रयो अस्य पादा द्वे
शीर्षे सप्त हस्तांसो अस्य। त्रिधां बद्धो वृष्भो रोरवीति
महो देवो मर्त्यार् आविवेश॥२७॥

त्रिधां हितं पृणिभिर्गुह्यमानं गविं देवासों घृतमन्वंविन्दन्।

इन्द्र एक् ५ सूर्य एकं जजान वेनादेक ५ स्वधया निष्टंतक्षुः। यो देवानां प्रथमं पुरस्ताद्विश्वाधियों रुद्रो महर्षिः। हिर्ण्युगर्भं पंश्यत जायमानः स नो देवः शुभया स्मृत्या संयुनक्ता यस्मात्परं नापर्मस्त किश्चिद्यस्मान्नाणीयो न ज्यायौऽस्ति कश्चित्। वृक्ष इंव स्तब्यो दिवि तिष्ठत्येकस्तेनेदं पूर्णं पुरुषेण सर्वम्। न कर्मणा न प्रजया धर्नेन त्यार्गेनैके अमृतत्वमानशुः। परेण नाकं निहितं गुहायां विभाजते यद्यतंयो विशन्ति। वेदान्तविज्ञानसुनिश्चितार्थाः सन्यासयोगाद्यतयः शुद्धसत्त्वाः। ते ब्रह्मलोके तु परौन्तकाले परोमृतात्परिमुच्यन्ति सर्वे। दहं विपापं परमे शमभूतं यत्पुंण्डरीकं पुरमध्यस इस्थम्। तत्रापि दहं गगनं विशोकस्तस्मिन् यदन्तस्तदुपांसितव्यम्। यो वेदादौ स्वंरः प्रोक्तो वेदान्तं च प्रतिष्ठिंतः। तस्यं प्रकृतिंलीनस्य यः परंः स महेश्वंरः॥२८॥

-[१२]

॥ नारायणसूक्तम्॥

सहस्रशीर्षं देवं विश्वाक्षं विश्वशंम्भुम्। विश्वं नारायंणं देवमुक्षरं पर्मं पदम्। विश्वतः परमान्नित्यं विश्वं नारायणः हिरम्। विश्वंमेवदं पुरुष्ट्तिक्ष्वमुपंजीवति। पतिं विश्वंस्यऽऽत्मेश्वंर्र् शाश्वंतः शिवमंच्युतम्। नारायणं

महाज्ञेयं विश्वात्मानं प्रायणम्। नारायणपरो ज्योतिरात्मा नारायणः परः। नारायण परं ब्रह्म तत्त्वं नारायणः परः। नारायणपरो ध्याता ध्यानं नारायणः परः। यचं किश्चित्रंगत्सर्वं दृश्यते श्रूयतेऽपि वा॥ अन्तर्व्वहिश्चं तत्सर्वं व्याप्य नारायणः स्थितः॥२९॥

अनन्तमव्ययं क्वि॰ संमुद्रेऽन्तं विश्वशंम्भुवम्। पुद्मकोश प्रंतीकाश् हदयंं चाप्यधोमुंखम्। अधों निष्ट्या वितस्त्यान्ते नाभ्यामुंपरि तिष्ठंति। ज्वालुमालाकुंलं भाती विश्वस्यऽऽयत्नं मंहत्। सन्तंतः शिलाभिंस्तु-लम्बंत्याकोशसन्निभम्। तस्यान्ते सुषिर सूक्ष्मं तस्मिन्त्सर्वं प्रतिष्ठितम्। तस्य मध्ये महानंग्निर्विश्वार्चिर्विश्वतांम्खः। सोऽग्रंभुग्विभंजन्तिष्ठन्नाहारमजरः कविः। तिर्यगूर्ध्वमंधः शायी रश्मयंस्तस्य सन्तंता। सन्तापयंति स्वं देहमापदितलमस्तंकः। तस्य मध्ये वहिंशिखा अणीयौर्ध्वा व्यवस्थितः। नीलतीयदं-मध्यस्थाद्विद्युष्ट्रंखेव भास्वंरा। नीवार्शूकंवत्तन्वी पीता भाँस्वत्यणूर्पमा। तस्याः शिखाया मध्ये परमात्मा व्यवस्थितः। स ब्रह्म स शिवः स हरिः सेन्द्रः सोऽक्षरः परमः स्वराट्॥३०॥

नारायणः स्थितो व्यवस्थितश्चलारि च॥१३॥-----[१३]

॥ आदित्यमण्डले परब्रह्मोपासनम्॥

आदित्यो वा एष एतन्मुण्डलं तपंति तत्र ता

ऋचस्तदृचां मण्डल् स ऋचां लोकोऽथ य एष एतस्मिन्मण्डलेऽर्चिर्दीप्यते तानि सामानि स साम्नां मण्डल् स साम्नां लोकोऽथ य एष एतस्मिन्मण्डलेऽर्चिषि पुरुषस्तानि यजूर्रेषि स यजुषां मण्डल् स यजुषां लोकः सैषा त्रय्येवं विद्या तंपति य एषोंऽन्तरांदित्ये हिर्ण्मयः पुरुषः॥३१॥

-[88]

॥ आदित्यपुरुषस्य सर्वात्मकत्वप्रदर्शनम्॥

आदित्यो वै तेज् ओजो बलं यश्रश्वक्षुः श्रोत्रमात्मा मनों मन्युर्मनुंर्मृत्युः सत्यो मित्रो वायुरांकाशः प्राणो लोकपालः कः किं कं तत्सत्यमन्नमायुर्मृतों जीवो विश्वः कत्मः स्वयम्भुः प्रजापंतिः संवत्सर इति संवत्सरोऽसावांदित्यो य एष पुरुष एष भूतानामधिपतिर्ब्रह्मणः सायुंज्य स्सलोकतांमाप्रोत्येतासांमेव देवतांना सायुंज्य समानलोकतांमाप्रोति य एवं वेदैत्युपनिषत्॥ ३२॥

<u>-</u>[१५]

॥ शिवोपासनमन्त्राः॥

निधंनपतये नमः। निधंनपतान्तिकाय नमः। ऊर्ध्वाय नमः। ऊर्ध्वलिङ्गाय नमः। हिरण्याय नमः। हिरण्यलिङ्गाय नमः। सुवर्णाय नमः। सुवर्णलिङ्गाय नमः। दिव्याय नमः। दिव्यलिङ्गाय नमः। भवाय नमः। भवलिङ्गाय नमः। शर्वाय नमः। शर्विलिङ्गाय् नमः। शिवाय् नमः। शिविलिङ्गाय् नमः। ज्वलाय् नमः। ज्वलिङ्गाय् नमः। आत्माय् नमः। आत्मिलङ्गाय् नमः। परमाय् नमः। परमिलङ्गाय् नमः। एतत्सोमस्यं सूर्यस्य सर्विलङ्गः स्थाप्यति पाणिमन्नं पवित्रम्॥३३॥

____[१६]

॥ पश्चिमवऋ-प्रतिपाद्क-मन्त्रः॥

सद्योजातं प्रंपद्यामि सद्योजाताय वै नमो नर्मः। भवे भवे नातिं भवे भवस्व माम्। भवोद्भंवाय नर्मः॥३४॥

<u> [१७</u>]

॥ उत्तरवऋ-प्रतिपादक-मन्त्रः॥

वामदेवाय नमों ज्येष्ठाय नमें श्रेष्ठाय नमों रुद्राय नमः कालाय नमः कलंविकरणाय नमो बलंविकरणाय नमो बलाय नमो बलंप्रमथनाय नमः सर्वभूतदमनाय नमो मनोन्मनाय नमः॥३५॥

[38]

॥ दक्षिणवऋ-प्रतिपादक-मन्त्रः॥

अघोरैभ्योऽथ घोरैभ्यो घोरघोरंतरेभ्यः। सर्वेभ्यः सर्वशर्वेभ्यो नर्मस्ते अस्तु रुद्ररूपेभ्यः॥३६॥

[१९]

॥ प्राग्वऋ-प्रतिपादक-मन्त्रः॥

तत्पुरुषाय विदाहें महादेवायं धीमहि। तन्नों रुद्रः प्रचोदयाँत्॥३७॥

[२०]

॥ ऊर्ध्ववऋ-प्रतिपादक-मन्त्रः॥

ईशानः सर्वविद्यानामीश्वरः सर्वभूतानां ब्रह्माधिपतिब्रह्मणो-ऽधिपतिब्रह्मां शिवो में अस्तु सदाशिवोम्॥३८॥

-[२१]

॥ नमस्कारमन्त्राः॥

नमो हिरण्यबाहवे हिरण्यवर्णाय हिरण्यरूपाय हिरण्यपतये-ऽम्बिकापतय उमापतये पशुपतये नमो नमः॥३९॥

_[२२]

_[२३]

सर्वो वै रुद्रस्तस्मै रुद्राय नमो अस्तु। पुरुषो वै रुद्रः सन्महो नमो नमः। विश्वं भूतं भुवंनं चित्रं बहुधा जातं जायमानं च यत्। सर्वो ह्येष रुद्रस्तस्मै रुद्राय नमो अस्तु॥४१॥

[28]

कद्रुद्राय प्रचेतसे मीुढुष्टंमाय तव्यंसे। वो चेम् शन्तंम १ हृदे।

_[२९]

सर्वो ह्यंष रुद्रस्तस्मै रुद्राय नमो अस्तु॥४२॥ ॥ अग्निहोत्रहवण्याः उपयुक्तस्य वृक्षविशेषस्याभिधानम्॥ यस्य वैकंङ्कत्यग्निहोत्रहवंणी भवति प्रतिष्ठिताः प्रत्येवास्याहुंतय-स्तिष्ठन्त्यथो प्रतिष्ठित्यै॥४३॥ ___[२६] कृणुष्व पाज इति पश्चं॥४४॥ ____[२७] ॥ भूदेवताकमन्त्रः॥ अदितिर्देवा गंन्धर्वा मंनुष्याः पितरोऽसुरास्तेषा ५ सर्वभूतानां माता मेदिनीं महती मही सांवित्री गांयत्री जगंत्युवी पृथ्वी बंहुला विश्वां भूता कतमा का या सा सत्येत्यमृतेतिं वसिष्ठः॥४५॥ .[२८] ॥ सर्वदेवता आपः॥ आपो वा इद सर्वं विश्वां भूतान्यापं प्राणा वा आपंः पशव आपोऽमृंतमापोऽन्नमापंः सम्राडापों विराडापंः स्वराडापुश्छन्दा इस्यापो ज्योती इष्यापेः सत्यमापः सर्वा

देवता आपो भूर्भुवः सुवराप ओम्॥४६॥

॥ सन्ध्यावन्दनमन्त्राः॥

आपंः पुनन्तु पृथिवीं पृथिवी पूता पुनातु माम्। पुनन्तु ब्रह्मण्स्पित् ब्रह्मण्स्पित् ब्रह्मण्स्पित् प्रता पुनातु माम्। यदुच्छिष्टमभौज्यं यद्वी दुश्चिरितं ममं। सर्वं पुनन्तु मामापोऽस्तां चं प्रतिग्रह्ड् स्वाहां॥४७॥

[३०]

अग्निश्च मा मन्युश्च मन्युपतयश्च मन्युंकृतेभ्यः। पापेभ्यों रक्षन्ताम्। यदह्रा पापंमकारिषम्। मनसा वाचां हस्ताभ्याम्। पद्मामुदरेण शि्ष्ञा। अह्स्तदंवलुम्पत्। यत्किं चं दुरितं मिये। इदमहं माममृंतयोनौ। सत्ये ज्योतिषि जुहोंिम स्वाहा॥४८॥

[38]

सूर्यश्च मा मन्युश्च मन्युपतयश्च मन्युंकृतेभ्यः। पापेभ्यों रक्षन्ताम्। यद्रात्रिया पापंमकारिषम्। मनसा वाचां हस्ताभ्याम्। पद्भामुदरेण शि्षञा। रात्रिस्तदंवलुम्पत्। यत्किं चं दुरितं मियं। इदमहं माममृतयोनौ। सूर्ये ज्योतिषि जुहोंमि स्वाहा॥४९॥

_[३२]

॥प्रणवस्य ऋष्यादिविवरणम्॥

ओमित्येकाक्षेरं ब्रह्म। अग्निर्देवता ब्रह्मं इत्यार्षम्। गायत्रं

छन्दं परमात्मं सरूपम्। सायुज्यं विनियोगम्॥५०॥

ं३३ े

॥ गायत्र्यावाहनमन्त्राः॥

आयांतु वरंदा देवी अक्षरं ब्रह्मसम्मितम्। गायत्रीं छन्दंसां मातेदं ब्रह्म जुषस्वं मे॥५१॥

ओजोंऽसि सहोंऽसि बलंमसि भ्राजोंऽसि देवानां धाम नामांसि विश्वंमसि विश्वायुः सर्वमिस सर्वायुरिभभूरों गायत्रीमावांहयामि सावित्रीमावांहयामि सरस्वतीमावांह-यामि छन्दऋषीनावांहयामि श्रियमावांहयामि गायत्रिया गायत्रीच्छन्दो विश्वामित्र ऋषिः सविता देवताऽग्निर्मुखं ब्रह्मा शिरो विष्णुर्हृदय रुद्रः शिखा पृथिवी प्राणापानव्यानोदानसमाना सप्राणा साङ्ख्यायनसगोत्रा गायत्री चतुर्वि शत्यक्षरा त्रिपदां षद्भक्षिः पश्चशीर्षोपनयने विनियोग ओं भूः। ओं भुवः। ओ॰ सुवः। ओं महः। ओं जनः। ओं तपः। ओ॰ सत्यम्। ओं तत्संवितुर्वरैंण्यं भर्गो देवस्यं धीमहि। धियो यो नंः प्रचोदयात्। ओमापो ज्योतीरसोऽमृतं ब्रह्म भूर्भुवः सुवरोम्॥५२॥

॥गायत्री उपस्थानमन्त्राः॥

उत्तमें शिखंरे जाते भूम्यां पंवतमूर्धनि। ब्राह्मणैभ्योऽभ्यंनुज्ञाता गच्छ देवि यथासुंखम्। स्तुतो मया वरदा वेदमाता प्रचोदयन्ती पवने द्विजाता। आतुः पृथिव्यां द्रविणं ब्रह्मवर्चसं मह्यं दत्वा प्रजातुं ब्रह्मलोकम्॥५३॥

[३६]

॥ आदित्यदेवतामन्त्रः॥

घृणिः सूर्यं आदित्यो न प्रभां वात्यक्षंरम्। मधुं क्षरन्ति तद्रंसम्। सत्यं वै तद्रसमापो ज्योतीरसोऽमृतं ब्रह्म भूर्भवः सुवरोम्॥५४॥

[३७]

॥ त्रिसुपर्णमन्त्राः॥

ब्रह्मंमेतु माम्। मधुंमेतु माम्। ब्रह्मंमेव मधुंमेतु माम्। यास्ते सोम प्रजावत्सोभि सो अहम्। दुःस्वंप्रहन्दुंरुष्ष्रह। यास्ते सोम प्राणाः स्तां जुंहोमि। त्रिसुंपर्णमयांचितं ब्राह्मणायं दद्यात्। ब्रह्महृत्यां वा एते घ्रंन्ति। ये ब्राह्मणास्त्रिसुंपर्णं पठंन्ति। ते सोमं प्राप्नुंवन्ति। आस्ह्स्रात्पङ्किं पुनंन्ति। ओम्॥५५॥

[३८]

ब्रह्मं मेधयाँ। मधुं मेधयाँ। ब्रह्मंमेव मधुं मेधयाँ। अद्या नों

देव सवितः प्रजावंत्सावीः सौभंगम्। पर्रा दुष्वप्नियः सुव। विश्वांनि देव सवितर्दुरितानि पर्रा सुव। यद्भद्रं तन्म आ सुव। मधु वातां ऋतायते मधुं क्षरन्ति सिन्धंवः। माध्वींर्नः सन्त्वोषंधीः। मधु नक्तंमुतोषसि मधुंमृत्पार्थिवः रजः। मधु द्यौरंस्तु नः पिता। मधुंमान्नो वनस्पित्मधुंमाः अस्तु सूर्यः। माध्वीर्गावो भवन्तु नः। य इमं त्रिसुंपर्णमयांचितं ब्राह्मणायं दद्यात्। भ्रूणहृत्यां वा एते घ्रंन्ति। ये ब्राह्मणास्त्रिसुंपर्णं पठन्ति। ते सोमं प्राप्नुवन्ति। आसहस्रात्पङ्किः पुनंन्ति। ओम्॥५६॥

[३९]

ब्रह्मं मेधवां। मधुं मेधवां। ब्रह्मंमेव मधुं मेधवां। ब्रह्मा देवानां पद्वीः कंवीनामृषि्विप्रांणां महिषो मृगाणांम्। श्येनो गृध्रांणा्ड् स्विधितिर्वनांना्ड् सोमंः प्वित्रमत्येति रेभन्। ह्रसः श्रुंचिषद्वस्रं रन्तिरक्षसद्धोतां वेदिषदितिथिर्दरोणसत्। नृषद्वं रसदंतसद्धोमसद्जा गोजा ऋतजा अद्विजा ऋतं बृहत्। य इमं त्रिसुंपर्णमयांचितं ब्राह्मणायं दद्यात्। वीरहत्यां वा एते घ्रन्ति। ये ब्राह्मणास्त्रसुंपर्णं पठन्ति। ते सोमं प्राप्नुंवन्ति। आसहस्रात्पङ्कः पुनन्ति। ओम्॥५७॥

-[४०]

॥ मेधासूक्तम्॥

मेधा देवी जुषमांणा न आगाँद्विश्वाची भुद्रा सुमन्स्यमाना।

त्वया जुष्टां जुषमांणा दुरुक्तांन्बृहद्वंदेम विदथें सुवीराः॥ त्वया जुष्टं ऋषिर्भवति देवि त्वया ब्रह्मांऽऽगृतश्रीरुत त्वयां। त्वया जुष्टंश्चित्रं विंन्दते वसु सा नों जुषस्व द्रविंणो न मेधे॥५८॥

-[88]

मेथां म् इन्द्रीं ददातु मेथां देवी सरस्वती। मेथां में अश्विनांवुभावार्धत्तां पुष्कंरस्रजा॥५९॥

_[४२]

अप्सरासुं च या मेधा गंन्ध्वेषुं च यन्मनः। दैवीं मेधा सरंस्वती सा मां मेधा सुरभिर्जुषता्ड् स्वाहाँ॥६०॥

-[83]

आ मां मेधा सुरभिर्विश्वरूपा हिरंण्यवर्णा जगंती जगम्या। ऊर्जस्वती पर्यसा पिन्वमाना सा मां मेधा सुप्रतीका जुषन्ताम्॥६१॥

[88]

॥ मृत्युनिवारणमन्त्राः॥

अपैतु मृत्युर्मृतंं न आगंन्वैवस्वतो नो अभयं कृणोतु। पूर्णं वनस्पतेरिवाभिनः शीयता रियः स च तान्नः शचीपतिः॥६२॥

.[૪५]

| परंं मृत्यो अनु परेंहि पन्थां यस्ते स्व इतरो देवयानाँत्। चक्षुंष्मते शृण्वते तें ब्रवीमि मा नंः प्रजाः रींरिषो मोत वीरान्॥६३॥ |
|---|
| वार्तं प्राणं मनसाऽन्वा रंभामहे प्रजापंतिं यो भुवंनस्य गोपाः। स नों मृत्योस्रायतां पात्वश्हंसो ज्योग्जीवा जरामंशीमहि॥६४॥ |
| [४७] अमुत्र भूयादध् यद्यमस्य बृहंस्पते अभिशंस्तेरम्॑श्चः। प्रत्यौहतामृश्विनां मृत्युमंस्माद्देवानांमग्ने भिषजा शचींभिः॥६५। |
| हिर् हर्गन्तमनुंयन्ति देवा विश्वस्येशांनं वृष्मं मंतीनाम्। ब्रह्म सरूपमनुंमेदमागादयंनं मा विवंधीर्विक्रंमस्व॥६६॥ [४९] |
| शल्कैर्ग्निमिन्धान उभौ लोकौ संनेम्हम्। उभयौर्लोकयोर्- ऋध्वाऽति मृत्युं तराम्यहम्॥६७॥ ——————————————————————————————————— |
| मा छिंदो मृत्यो मा वंधीर्मा मे बलं विवृहो मा प्रमोंषीः। प्रजां मा में रीरिष् आयुंरुग्र नृचक्षंसं त्वा ह्विषां विधेम॥६८॥ ——————————————————————————————————— |

मा नो महान्तंमुत मा नो अर्भकं मा न उक्षंन्तमुत मा ने उक्षितम्। मा नोऽवधीः पितरं मोत मातरं प्रिया मा नंस्तनुवों रुद्र रीरिषः॥६९॥

_____[*५*२]

मा नंस्तोके तनंये मा न आयंषि मा नो गोषु मा नो अश्वेषु रीरिषः। वीरान्मा नो रुद्र भामितोऽवंधीर्ह्विष्मंन्तो नमंसा विधेम ते॥७०॥

____[*\gamma*3]

॥ प्रजापतिप्रार्थनामन्त्रः॥

प्रजापते न त्वदेतान्यन्यो विश्वां जातानि परिता बंभूव। यत्कामास्ते जुहुमस्तन्नों अस्तु वयः स्याम् पत्यो रयीणाम्॥७१॥

<u> [</u>48]

॥ इन्द्रप्रार्थनामन्त्रः॥

स्वस्तिदा विशस्पतिवृत्रहा विमृधों वृशी। वृषेन्द्रः पुर एंतु नः स्वस्तिदा अभयङ्करः॥७२॥

[५५]

॥ मृत्युञ्जयमन्त्राः॥

त्र्यम्बकं यजामहे सुगुन्धिं पुष्टिवर्धनम्। उर्वारुकिमिव बन्धनान्मृत्योर्मुक्षीय माऽमृतात्॥७३॥

_[५६]

ये ते सहस्रम्युतं पाशा मृत्यो मर्त्याय हन्तंवे। तान् युज्ञस्यं मायया सर्वानवं यजामहे॥७४॥

मृत्यवे स्वाहां मृत्यवे स्वाहां॥७५॥

<u>[46]</u>

॥पापनिवारक-मन्त्राः॥

देवकृंत्स्यैनंसोऽवयजनंमिस् स्वाहाँ। मृनुष्यंकृत्स्यैनंसो-ऽवयजनंमिस् स्वाहाँ। पितृकृंत्स्यैनंसोऽवयजनंमिस् स्वाहाँ। आत्मकृंत्स्यैनंसोऽवयजनंमिस् स्वाहाँ। अस्मत्कृंत्स्यैनंसो-अन्यकृंत्स्यैनंसोऽवयजनंमिस् स्वाहाँ। अस्मत्कृंत्स्यैनंसो-ऽवयजनमिस् स्वाहाँ। यिद्वा च नक्तं चैनंश्चकृम तस्यांवयजनमिस् स्वाहाँ। यत्स्वपन्तंश्च जाग्रंत्श्चेनंश्चकृम तस्यांवयजनमिस् स्वाहाँ। यत्सुषुप्तंश्च जाग्रंत्श्चेनंश्चकृम तस्यांवयजनमिस् स्वाहाँ। यिद्वद्वाः स्थाविद्वाः स्थ्रेनंश्चकृम तस्यांवयजनमिस् स्वाहाँ। यिद्वद्वाः स्थाविद्वाः स्थ्रेनंश्चकृम तस्यांवयजनमिस् स्वाहाँ। एनस एनसोऽवयजनमिस् स्वाहा॥७६॥

[५९]

॥ वसुप्रार्थनामन्त्रः ॥

यद्वो देवाश्चकृम जिह्नयां गुरुमनंसो वा प्रयंती देव हेर्डनम्। अरांवा यो नो अभि दंच्छुनायते तस्मिन्तदेनो वसवो निधेतन

स्वाहाँ॥७७॥

<u>[ξο]</u>

॥कामोऽकार्षीत्-मन्युरकार्षीत् मन्त्रः॥

कामोऽकार्षीं त्रमो नमः। कामोऽकार्षीत्कामः करोति नाहं करोमि कामः कर्ता नाहं कर्ता कामः कार्यिता नाहं कार्यिता एष ते काम कामाय स्वाहा॥७८॥

_____[ξ?]

मन्युरकार्षीं त्रमो नमः। मन्युरकार्षीन्मन्युः करोति नाहं करोमि मन्युः कर्ता नाहं कर्ता मन्युः कार्यिता नाहं कार्यिता एष ते मन्यो मन्यंवे स्वाहा॥७९॥

_[६२]

॥ विराजहोममन्त्राः॥

तिलाञ्जहोमि सरसार सपिष्टान् गन्धार मम चित्ते रमेन्तु स्वाहा। गावो हिरण्यं धनमन्नपानर सर्वेषाइ श्रिये स्वाहा। श्रियं च लक्ष्मीं च पुष्टिं च कीर्तिं चानृण्यताम्। ब्रह्मण्यं बंहुपुत्रताम् । श्रद्धामेधे प्रजाः सन्ददांतु स्वाहा॥८०॥

_[६३]

तिलाः कृष्णास्तिलाः श्वेतास्तिलाः सौम्या विशानुगाः। तिलाः पुनन्तुं मे पापं यत्किश्चिद्दुरितं मीय स्वाहा। चोर्स्यान्नं निवश्राद्धं ब्रह्महा गुरुतल्पगः। गोस्तेय सुरापानं भ्रूणहत्या तिला शान्ति । श्रमयंन्तु स्वाहा। श्रीश्च लक्ष्मीश्च पृष्टीश्च कीर्तिं चानृण्यताम् । ब्रह्मण्यं बंहुपुत्रताम् । श्रद्धामेधे प्रज्ञा तु जातवेदः सन्दर्दातु स्वाहा॥८१॥

[६૪]

प्राणापानव्यानोदानसमाना में शुद्धान्तां ज्योतिंरहं विरजां विपाप्मा भूयास् स्वाहाँ। वाङ्गनश्वक्षःश्रोत्रजिह्वाघ्राणरेतो- बुद्धाकृतिःसङ्कल्पा में शुद्धान्तां ज्योतिंरहं विरजां विपाप्मा भूयास् स्वाहाँ। त्वक्रममा स्मरुधिरमेदोमञ्जास्नायवो- उस्थीनि में शुद्धान्तां ज्योतिंरहं विरजां विपाप्मा भूयास् स्वाहाँ। शिरःपाणिपादपार्श्वपृष्ठोरूदरजङ्घाशिश्रोपस्थपायवो में शुद्धान्तां ज्योतिंरहं विरजां विपाप्मा भूयास् स्वाहाँ। उत्तिष्ठ पुरुष हरित पिङ्गल लोहिताक्षि देहि देहि ददापियता में शुद्धान्तां ज्योतिंरहं विरजां विपाप्मा भूयास् स्वाहाँ॥ ४ स्वाहाँ॥ १ स्वाहाँ॥ १

[६५]

पृथिव्यप्तेजोवायुराकाशा में शुद्धान्तां ज्योतिंर्हं विरजां विपाप्मा भूयास्ड् स्वाहाँ। शब्दस्पर्शरूपरसगन्धा में शुद्धान्तां ज्योतिंर्हं विरजां विपाप्मा भूयास्ड् स्वाहाँ। मनोवाक्कायकर्माणि में शुद्धान्तां ज्योतिंर्हं विरजां विपाप्मा भूयास्ड् स्वाहाँ। अव्यक्तभावैर्रहङ्कारैज्योतिंर्हं विरजां विपाप्मा भूयास्ड् स्वाहाँ। अव्यक्तभावैर्रहङ्कारैज्योतिंर्हं विरजां विपाप्मा भूयास्ड् स्वाहाँ। आत्मा में शुद्धान्तां ज्योतिंरहं

विरजां विपाप्मा भूयास् स्वाहाँ। अन्तरात्मा में शुद्धान्तां ज्योतिरहं विरजां विपाप्मा भूयास् स्वाहाँ। परमात्मा में शुद्धान्तां ज्योतिरहं विरजां विपाप्मा भूयास् स्वाहाँ। क्षुधे स्वाहाँ। क्षुत्यंपासाय स्वाहाँ। विविद्ये स्वाहाँ। ऋग्विधानाय स्वाहाँ। कृषोंत्काय स्वाहाँ। ओइ स्वाहाँ। क्षुत्यिपासामेलं ज्येष्ठामुलक्ष्मीर्नाशयाम्यहम्। अभूतिमसंमृद्धिं च सर्वात्रिणुंद मे पाप्मान स्वाहा। अन्नमय-प्राणमय-मनोमय-विज्ञानमय-मानन्दमय-मात्मा में शुद्धान्तां ज्योतिरहं विरजां विपाप्मा भूयास स्वाहाँ॥८३॥

[६६]

॥ वैश्वदेवमन्त्राः॥

अग्नये स्वाहाँ। विश्वेंभ्यो देवेभ्यः स्वाहाँ। ध्रुवायं भूमाय स्वाहाँ। ध्रुविक्षितंये स्वाहाँ। अच्युतिक्षितंये स्वाहाँ। अग्नयें स्विष्टकृते स्वाहाँ॥ धर्माय स्वाहाँ। अधर्माय स्वाहाँ। अन्न्यः स्वाहाँ। ओषधिवनस्पतिभ्यः स्वाहाँ॥८४॥

रक्षोदेवजनेभ्यः स्वाहाँ। गृह्याँभ्यः स्वाहाँ। अवसानेँभ्यः स्वाहाँ। अवसानंपतिभ्यः स्वाहाँ। सर्वभूतेभ्यः स्वाहाँ। कामांय स्वाहाँ। अन्तरिक्षाय स्वाहाँ। यदेजंति जगंति यच चेष्टंति नाम्नो भागोऽयं नाम्ने स्वाहाँ। पृथिव्यै स्वाहाँ। अन्तरिक्षाय स्वाहाँ॥८५॥

दिवे स्वाहाँ। सूर्याय स्वाहाँ। चन्द्रमंसे स्वाहाँ। नक्षंत्रेभ्यः स्वाहाँ। इन्द्राय स्वाहाँ। बृह्स्पतंये स्वाहाँ। प्रजापंतये स्वाहाँ। ब्रह्मणे स्वाहाँ। स्वधा पितृभ्यः स्वाहाँ। नमो रुद्रायं पशुपतंये स्वाहाँ॥८६॥

देवेभ्यः स्वाहाँ। पितृभ्यः स्वधाऽस्तुं। भूतेभ्यो नर्मः।
मनुष्येभ्यो हुन्तां। प्रजापंतये स्वाहां। प्रमेष्ठिने स्वाहां।
यथा कूपः शतधांरः सहस्रंधारो अक्षितः। एवा में अस्तु
धान्यः सहस्रंधारमिक्षितम्। धनंधान्ये स्वाहां। ये भूताः
प्रचरंन्ति दिवानक्तं बिलिमिच्छन्तों वितुदंस्य प्रेष्याः।
तेभ्यों बिले पृष्टिकामों हरामि मिय पृष्टिं पृष्टिपतिर्दधातु
स्वाहां॥८७॥

[し3]

ओं तद्घ्रह्म। ओं तद्घ्रायुः। ओं तद्ग्रत्मा। ओं तत्स्त्यम्। ओं तत्सर्वम्। ओं तत्पुरोर्नमः॥ अन्तश्चरितं भूतेषु गृहायां विश्वमूर्तिष्। त्वं यज्ञस्त्वं वषद्कारस्त्विमन्द्रस्त्वः रुद्रस्त्वं विष्णुस्त्वं ब्रह्म त्वं प्रजापितः। त्वं तंदाप् आपो ज्योती रसोऽमृतं ब्रह्म भूर्भुवस्सुवरोम्॥८८॥

[६८]

॥ प्राणाहुतिमन्त्राः ॥

श्रुद्धायां प्राणे निविष्टोऽमृतं जुहोमि। श्रुद्धायांमपाने

निर्विष्टोऽमृतंं जुहोमि। श्रृद्धायां व्याने निर्विष्टोऽमृतंं जुहोमि। श्रृद्धायां समाने निर्विष्टोऽमृतंं जुहोमि। ब्रह्मणि म आत्माऽमृंतत्वाय॥ अमृतोपस्तरंणमिस॥ श्रृद्धायां प्राणे निर्विष्टोऽमृतंं जुहोमि। श्रिवो मां विशाप्रंदाहाय। प्राणाय स्वाहां॥ श्रृद्धायां मपाने निर्विष्टोऽमृतंं जुहोमि। शिवो मां विशाप्रंदाहाय। अपानाय स्वाहां॥ श्रृद्धायां व्याने निर्विष्टोऽमृतंं जुहोमि। शिवो मां विशाप्रंदाहाय। श्रृद्धायां मुदाने निर्विष्टोऽमृतंं जुहोमि। शिवो मां विशाप्रंदाहाय। उदानाय स्वाहां॥ श्रृद्धायां समाने निर्विष्टोऽमृतंं जुहोमि। शिवो मां विशाप्रंदाहाय। उदानाय स्वाहां॥ श्रृद्धायां समाने निर्विष्टोऽमृतंं जुहोमि। शिवो मां विशाप्रंदाहाय। अस्वायां समाने मिर्विष्टोऽमृतंं जुहोमि। शिवो मां विशाप्रंदाहाय। समानाय स्वाहां॥ ब्रह्मणि म आत्माऽमृंतत्वायं। अमृताप्रिधानमंसि॥८९॥

<u> </u>[ξς]

॥ भुक्तान्नाभिमन्त्रणमन्त्राः॥

श्रृद्धायां प्राणे निविंश्यामृत हुतम्। प्राणमन्नेनाप्यायस्व। श्रृद्धायां मपाने निविंश्यामृत हुतम्। अपानमन्नेनाप्यायस्व। श्रृद्धायां व्याने निविंश्यामृत हुतम्। व्यानमन्नेनाप्यायस्व। श्रृद्धायां मुदाने निविंश्यामृत हुतम। उदानमन्नेनाप्यायस्व। श्रृद्धाया समाने निविंश्यामृत हुतम्। समानमन्नेनाप्या-यस्व॥९०॥ _____[৩°]

॥भोजनान्ते आत्मानुसन्धानमन्त्राः॥

अङ्गुष्ठमात्रः पुरुषोऽङ्गुष्ठं चं समाश्रितः। ईशः सर्वस्य जगतः प्रभुः प्रीणातिं विश्वभुक्॥॥९१॥

_____[**9

॥ अवयवस्वस्थता-प्रार्थनामन्त्रः॥

वाङ्कं आसन्। नृसोः प्राणः। अक्ष्योश्चर्धुः। कर्णयोः श्रोत्रम्। बाहुवोर्बलम्। ऊरुवोरोजः। अरिष्टा विश्वान्यङ्गानि तृनूः। तुनुवां मे सह नर्मस्ते अस्तु मा मां हिश्सीः॥९२॥
[७२]

॥ इन्द्रसप्तर्षि-संवादमन्त्रः॥

वयः सुपूर्णा उपं सेदुरिन्द्रं प्रियमेधा ऋषयो नाधमानाः। अपं ध्वान्तमूर्णुहि पूर्धि चक्षुंर्मुमुग्ध्यंस्मान्निधयेऽव बुद्धान्।

____[り३]

॥ हृदयालम्भनमन्त्रः॥

प्राणानां ग्रन्थिरसि रुद्रो मां विशान्तकः। तेनान्नेनांप्या-यस्व॥९३॥

[8*0*].

॥ देवताप्राणनिरूपणमन्त्रः॥

नमो रुद्राय विष्णवे मृत्युंर्मे पाहि॥९४॥

.[७५]

॥ अग्निस्तुतिमन्त्रः॥

त्वमंग्रे द्युभिस्त्वमांशुशुक्षणिस्त्वमुद्धस्त्वमश्मंनस्परि। त्वं वनेभ्यस्त्वमोषंधीभ्यस्त्वं नृणां नृपते जायसे शुचिः॥९५॥

[タセ]_

॥ अभीष्टयाचनामन्त्राः॥

शिवने मे सन्तिष्ठस्व स्योनेन मे सन्तिष्ठस्व सुभूतेन मे सन्तिष्ठस्व ब्रह्मवर्चसेन मे सन्तिष्ठस्व यज्ञस्यर्धिमनु सन्तिष्ठस्वोपं ते यज्ञ नम् उपं ते नम् उपं ते नमः॥९६॥

[しの]

॥ परतत्त्व-निरूपणम्॥

सृत्यं परं परं सृत्यं सृत्यं न स्वां क्षिक्षे कार्च्यं वन्ते कृदाचन सृतां हि सृत्यं तस्मांत्सृत्ये रंमन्ते तप इति तपो नानश्नात्परं यि परं तपस्तदुर्द्धर्षं तदुर्ग्धर्षं तस्मात्तपंसि रमन्ते दम इति नियंतं ब्रह्मचारिणस्तस्मादमे रमन्ते शम इत्यरंण्ये मुनयस्तस्माच्छमे रमन्ते दानिमिति सर्वाणि भूतानि प्रशर्मन्ति दानान्नाति दुष्करं तस्माद्दाने रंमन्ते धर्म इति धर्मण् सर्वमिदं परिगृहीतं धर्मान्नाति दुश्चरं तस्माद्द्वि रंमन्ते प्रजन् इति भूयां स्तरमाद्द्विष्ठाः

प्रजायन्ते तस्माद्भूयिष्ठाः प्रजनंने रमन्तेऽग्नय इत्यांह् तस्मांद्ग्नय आधांतव्या अग्निहोत्रमित्यांह् तस्मांदग्निहोत्रे रमन्ते यज्ञ इति यज्ञो हि देवास्तस्माँद्यज्ञे रमन्ते मानसमिति विद्वा स्मस्तस्मांद्विद्वा स्मं एव मानसे रमन्ते न्यास इति ब्रह्मा ब्रह्मा हि परः परो हि ब्रह्मा तानि वा एतान्यवंराणि परा सम एवात्यंरेचयद्य एवं वेदैत्युपनिषत्॥९७॥

[७८]

॥ ज्ञानसाधन-निरूपणम्॥

प्राजापत्यो हार्रुणिः सुपूर्णेयः प्रजापंतिं पितरमुपंससार किं भंगवन्तः पंरमं वंदन्तीति तस्मै प्रोवाच सत्येन वायुरावांति सत्येनांऽऽदित्यो रोंचते दिवि सत्यं वाचः प्रतिष्ठा सत्ये सर्वं प्रतिष्ठितं तस्मौत्सत्यं पर्मं वदन्ति तपंसा देवा देवतामग्रं आयन्तपसर्षयः सुवरन्वविन्दं तपंसा सपत्नान् प्रणुंदामारातीस्तपंसि सर्वं प्रतिष्ठितं तस्मात्तपंः पर्मं वदंन्ति दमेन दान्ताः किल्बिषंमवधून्वन्ति दमेन ब्रह्मचारिणः सुवेरगच्छन्दमो भूतानां दुराधर्षन्दमे सर्वं प्रतिष्ठितं तस्माइमः परमं वदन्ति शमेन शान्ताः शिवमाचरंन्ति शमेन नाकं मुनयोऽन्वविन्दुञ्छमो भूतानां द्राधर्षञ्छमे सर्वं प्रतिष्ठितं तस्माच्छमः पर्मं वदन्ति दानं यज्ञानां वरूथं दक्षिणा लोके दातार र सर्वभूतान्युंपजीवन्ति दानेनारातीरपांनुदन्त दानेनं द्विषन्तो मित्रा भंवन्ति दाने

सर्वं प्रतिष्ठितं तस्मौद्दानं पेरमं वदेन्ति धर्मो विश्वेस्य जगेतः प्रतिष्ठा लोके धर्मिष्ठं प्रजा उंपसर्पन्तिं धर्मेणं पापमंपनुदंति धर्मे सर्वं प्रतिष्ठितं तस्मौद्धर्मं परमं वदन्ति प्रजननं वै प्रतिष्ठा लोके साधु प्रजायाँस्तन्तुं तन्वानः पितृणामनृणो भवंति तदेव तस्यानृणं तस्मात् प्रजनंनं परमं वदेन्त्यग्रयो वै त्रयीं विद्या देवयानः पन्थां गार्हपत्य ऋक्पृंथिवी रंथन्तरमंन्वाहार्यपर्चनो यजुरन्तरिक्षं वामदेव्यमाहवनीयः सामं सुवर्गो लोको बृहत्तस्मादग्रीन्पर्मं वर्दन्त्यग्निहोत्र श सायं प्रातर्गृहाणां निष्कृतिः स्विष्ट सुहुतं यज्ञकतूनां प्रायंण र सुवर्गस्यं लोकस्य ज्योतिस्तस्मादिग्निहोत्रं पंरमं वदंन्ति यज्ञ इति यज्ञो हि देवानां यज्ञेन हि देवा दिवं गता युज्ञेनासुरानपानुदन्त युज्ञेन द्विषन्तो मित्रा भवन्ति यज्ञे सर्वं प्रतिष्ठितं तस्मौद्यज्ञं पंरमं वदेन्ति मानसं वै प्रांजापत्यं पवित्रं मानसेन मनसा साधु पंश्यति मानसा ऋषंयः प्रजा अंसृजन्त मानसे सर्वं प्रतिष्ठितं तस्मौन्मानसं पंरमं वदन्ति न्यास इत्याहंर्मनीषिणौं ब्रह्माणं ब्रह्मा विश्वः कतमः स्वंयम्भः प्रजापंतिः संवत्सर इतिं संवत्सरोऽसावांदित्यो य एष आंदित्ये पुरुषः स पंरमेष्ठी ब्रह्मात्मा याभिरादित्यस्तपंति रश्मिभस्ताभिः पर्जन्यो वर्षति पर्जन्येनौषधिवनस्पतयः प्रजायन्त ओषधिवनस्पतिभिरन्नं भवत्यन्नेन प्राणाः प्राणैर्बलं बलेन तपस्तपंसा श्रद्धा श्रद्धयां मेधा मेधयां मनीषा

मंनीषया मनो मनंसा शान्तिः शान्त्यां चित्तं चित्तेन स्मृति इ स्मृत्या स्मार्ड् स्मारेण विज्ञानं विज्ञानंनात्मानं वेदयति तस्मोदन्नं ददन्त्सर्वाण्येतानि ददात्यन्नौत् प्राणा भवन्ति भूतानां प्राणैर्मनो मनसश्च विज्ञानं विज्ञानांदानुन्दो ब्रह्मयोनिः स वा एष पुरुषः पश्चधा पंश्चात्मा येन सर्विमिदं प्रोतं पृथिवी चान्तरिक्षं च द्यौश्च दिशंश्चावान्तरदिशाश्च स वै सर्विमिदं जगत्स च भूत र स भव्यं जिज्ञासकृप्त ऋतजा रियष्ठाः श्रुद्धा सत्यो महंस्वान्तपसो वरिष्ठाद्भात्वां तमेवं मनंसा हृदा च भूयों न मृत्युमुपंयाहि विद्वान्तस्मौन्यासमेषां तपंसामतिरिक्तमाहुंर्वसुरुण्वों विभूरंसि प्राणे त्वमसिं सन्धाता ब्रह्मं त्वमंसि विश्वसृक्तें जोदास्त्वमंस्यग्नेर्वर्चोदास्त्वमंसि सूर्यस्य द्युम्रोदास्त्वमंसि चन्द्रमंस उपयामगृहीतोऽसि ब्रह्मणै त्वा महस ओमित्यात्मानं युञ्जीतैतद्वे मंहोपनिषंदं देवानां गुह्यं य पुवं वेदं ब्रह्मणों महिमानमाप्नोति तस्मौद्रह्मणों महिमानंमित्युपनिषंत्॥९८॥

[99]

॥ ज्ञानयज्ञः॥

तस्यैवं विदुषों यज्ञस्यात्मा यजंमानः श्रद्धा पत्नी शरीरमिध्ममुरो वेदिलीमांनि ब्र्हिर्वेदः शिखा हृदंयं यूपः काम आज्यं मृन्युः पृशुस्तपोऽग्निः शंमियता दक्षिणा वाग्घोतां

प्राण उद्गाता चक्षुंरध्वर्युर्मनो ब्रह्मा श्रोत्रंमुग्नीद्यावृद्धियंते सा दीक्षा यदश्ञांति यत्पिबंति तदस्य सोमपानं यद्रमंते तदुंपसदो यत्सश्चरंत्युपविशंत्युत्तिष्ठंते च स प्रवर्ग्यो यन्म्खं तदाहवनीयो यदंस्य विज्ञानं तज्जुहोति यत्सायं प्रातरंत्ति तत्सिमधो यत्सायं प्रातर्मध्यं दिनं च तानि सर्वनानि ये अंहोरात्रे ते दंर्शपूर्णमासौ येंऽर्द्धमासाश्च मासांश्च ते चांतुर्मास्यानि य ऋतवस्ते पंशुबन्धा ये संवत्सराश्चं परिवत्सराश्च तेऽहंर्गणाः सर्ववेदसं वा एतत्सत्रं यन्मरंणं तदंवभृथं एतद्वै जंरामर्यमग्निहोत्र सत्रं य एवं विद्वानुंद्गयंने प्रमीयंते देवानांमेव मंहिमानं गुत्वाऽऽदित्यस्य सायुंज्यं गच्छत्यथ यो दंक्षिणे प्रमीयंते पितृणामेव मंहिमानं गत्वा चन्द्रमंसः सायुंज्यं गच्छत्येतौ वै सूर्याचन्द्रमसौर्मिहिमानौ ब्राह्मणो विद्वानभिजंयति तस्मांद्वह्मणो महिमानंमाप्नोति तस्मौद्बह्मणों महिमानंमित्युपनिषंत्॥९९॥

[८०]

ॐ सह नांववतु। सह नौं भुनक्तु। सह वीर्यं करवावहै। तेज्ञस्वि नावधीतमस्तु मा विद्विषावहैं। ॐ शान्तिः शान्तिः शान्तिः॥

॥ॐ शान्तिः शान्तिः शान्तिः॥ हरिः ओम्॥



॥ कृष्णयजुर्वेदीयतैत्तिरीय-काठकम्॥

॥प्रथमः प्रश्नः॥

संज्ञानं विज्ञानं प्रज्ञानं जानदंभिजानत्। सङ्कल्पंमानं प्रकल्पंमानमुपंकल्पंमानमुपंक्कृतं क्रुप्तम्। श्रेयो वसीय आयत्सम्भूतं भूतम्। चित्रः केतुः प्रभानाभान्त्सम्भान्। ज्योतिष्माङ्क्तेजेस्वानातपङ्क्तपंत्रभितपन्। रोचनो रोचमानः शोभनः शोभमानः कल्याणः। दर्शां दृष्टा दर्शता विश्वरूपा सुदर्शना। आप्यायंमाना प्यायंमाना प्यायं सूनृतेरां। आपूर्यमाणा पूर्यमाणा पूर्यन्ती पूर्णा पौर्णमासी। दाता प्रदाताऽऽनन्दो मोदंः प्रमोदः॥१॥

आवेशयंत्रिवेशयंन्त्संवेशंनः संशान्तः शान्तः। आभवंन्प्रभवंन्त्-सम्भवन्त्सम्भूतो भूतः। प्रस्तुतं विष्टुत् सं स्तुतं कल्याणं विश्वरूपम्। शुक्रम्मृतं तेज्ञस्वि तेज्ञः सिमंद्धम्। अरुणं भानुमन्मरीचिमदभितपत्तपंस्वत्। स्विता प्रंसिवता दीप्तो दीपयन्दीप्यंमानः। ज्वलं अविता तपंन्वतपंन्त्सन्तपन्। रोचनो रोचंमानः शुम्भूः शुम्भंमानो वामः। सुता सुन्वती प्रसुता सूयमानाऽभिषूयमाणा। पीतीं प्रपा सम्पा तृप्तिंस्तर्पयंन्ती॥२॥

कान्ता काम्या कामजाताऽऽयुंष्मती कामृदुघाँ। अभिशास्ताऽनुमन्ताऽऽनुन्दो मोद्गः प्रमोदः। आसादयंत्रिषा- दयँन्त्स् १ सार्वनः स १ संन्नः स् न्नः। आभूर्विभूः प्रभूः शम्भूर्भृवंः। प्वित्रं पवियिष्यन्यूतो मेध्यः। यशो यशंस्वानायुर्मृतः। जीवो जीविष्यन्त्स्वर्गो लोकः। सहंस्वान्त्सहीयानोजंस्वान्त्सहंमानः। जयंन्नभिजयंन्त्सु-द्रविणो द्रविणोदाः। आर्द्रपंवित्रो हरिकेशो मोदः प्रमोदः॥३॥

अरुणोंऽरुणरंजाः पुण्डरींको विश्वजिदंभिजित्। आर्द्रः पिन्वमानोऽन्नेवान्नसंवानिरांवान्। सर्वोष्धः संम्भरो महंस्वान्। एजत्का जोंवत्काः। क्षुष्ठकाः शिंपिविष्टकाः। सरिस्तराः सुशेरंवः। अजिरासो गमिष्णवंः। इदानीं तदानीमेतर्हि क्षिप्रमंजिरम्। आशुर्निमेषः फणो द्रवन्नितद्रवन्। त्वर्ङ्स्त्वरंमाण आशुराशीयाञ्चवः। अग्निष्टोम उक्थ्योऽतिरात्रो द्विरात्रस्निरात्रश्चंतूरात्रः। अग्निर्ऋतुः सूर्यं ऋतुश्चन्द्रमां ऋतुः। प्रजापंतिः संवत्सरो महान्कः॥४॥

भूरिग्नें चे पृथिवीं च मां चे। त्री इश्चे लोकान्त्संवत्सरं चे।
प्रजापितिस्त्वा सादयत्। तयां देवतंयाऽङ्गिर्स्वद्भुवा सींद।
भुवों वायुं चान्तिरक्षं च मां चे। त्री इश्चे लोकान्त्संवत्सरं चे।
प्रजापितिस्त्वा सादयत्। तयां देवतंयाऽङ्गिर्स्वद्भुवा सींद।
स्वरादित्यं च दिवं च मां चे। त्री इश्चे लोकान्त्संवत्सरं चे।
प्रजापितिस्त्वा सादयत्। तयां देवतंयाऽङ्गिर्स्वद्भुवा सींद।

भूर्भुवः स्वश्चन्द्रमेसं च दिशश्च मां चे। त्री इश्चे लोकान्त्संवत्स्रं चे। प्रजापितिस्त्वा सादयतु। तयां देवतंयाऽङ्गिर्स्वद्भुवा सीद॥५॥

[२]

त्वमेव त्वां वैत्थ योऽसि सोऽसिं। त्वमेव त्वामंचैषीः। चितश्चासि सिश्चेतश्चास्यग्ने। पृतावाङ्श्चासि भूयाङ्श्चास्यग्ने। यत्ते अग्ने न्यूनं यदु तेऽतिरिक्तम्। आदित्यास्तदिङ्गिरस-श्चिन्वन्तु। विश्वे ते देवाश्चितिमापूरयन्तु। चितश्चासि सिश्चेतश्चास्यग्ने। पृतावाङ्श्चासि भूयाङ्श्चास्यग्ने। मा ते अग्ने च येन माऽति च येनाऽऽयुरावृंश्चि। सर्वेषां ज्योतिषां ज्योतिर्यद्दावुदेति । तपंसो जातमिनभृष्टमोर्जः। तत्ते ज्योतिरिष्टके। तेनं मे तप। तेनं मे ज्वल। तेनं मे दीदिहि। यावद्देवाः। यावदसांति सूर्यः। यावदुतापि ब्रह्मं॥६॥

[३]

संवत्सरोऽसि परिवत्सरोऽसि। इदावत्सरोऽसीदुवत्सरोऽसि। इद्वावत्सरोऽसीदुवत्सरोऽसि। इद्वावत्सरोऽसि। वस्तरोऽसि। तस्यं ते वस्नतः शिरंः। ग्रीष्मो दक्षिणः पृक्षः। वर्षाः पुच्छम्। शरदुत्तरः पृक्षः। हेम्नतो मध्यम्। पूर्वपृक्षाश्चित्यः। अपरुपृक्षाः पुरीषम्॥७॥

अहोरात्राणीष्टंकाः। ऋष्भोऽसि स्वर्गो लोकः। यस्यौं दिशि महीयंसे। ततों नो महु आवंह। वायुर्भूत्वा सर्वा दिश् आवांहि। सर्वा दिशोऽनुविवांहि। सर्वा दिशोऽनुसंवांहि। चित्त्या चितिमापृण। अचित्त्या चितिमापृण। चिदंसि समुद्रयोंनिः॥८॥

इन्दुर्दक्षः श्येन ऋतावाँ। हिरंण्यपक्षः शकुनो भृंर्ण्युः। महान्त्स्थस्थे ध्रुव आनिषंत्तः। नमस्ते अस्तु मा मां हि॰सीः। एति प्रेति वीति समित्युदितिं। दिवं मे यच्छ। अन्तरिक्षं मे यच्छ। पृथिवीं में यच्छ। पृथिवीं में यच्छ। अन्तरिक्षं मे यच्छ। दिवं मे यच्छ। अह्य प्रसारय। रात्र्या समंच। रात्र्या प्रसारय। अह्य समंच। काम् प्रसारय। काम॰ समंच॥९॥

[8]

भूर्भुवः स्वः। ओजो बलम्। ब्रह्मं क्षुत्रम्। यशो महत्। सृत्यं तपो नामं। रूपमृतम्। चक्षुः श्रोत्रम्। मन् आयुः। विश्वं यशो महः। समं तपो हरो भाः। जातवेदा यदि वा पावकोऽसि। वैश्वानरो यदि वा वैद्युतोऽसि। शं प्रजाभ्यो यजमानाय लोकम्। ऊर्जं पृष्टिं दददभ्यावंवृत्स्व॥१०॥

[لو]

राज्ञी विराज्ञी। सम्राज्ञी स्वराज्ञी। अर्चिः शोचिः। तपो हरो भाः। अग्निरिन्द्रो बृह्स्पतिः। विश्वे देवा भुवनस्य गोपाः। ते मा सर्वे यशंसा सर्सृजन्तु॥११॥

[६]

असंवे स्वाह् वसंवे स्वाहाँ। विभुंवे स्वाहा विवंस्वते स्वाहाँ। अभिभुवे स्वाहाऽधिपतये स्वाहाँ। दिवां पतंये स्वाहाऽईहस्पत्याय स्वाहाँ। चाक्षुष्मत्याय स्वाहाँ। उयोतिष्मत्याय स्वाहाँ। राज्ञे स्वाहां विराज्ञे स्वाहाँ। सम्माज्ञे स्वाहाँ स्वराज्ञे स्वाहाँ। शूषांय स्वाहाँ। सूर्याय स्वाहाँ। चन्द्रमंसे स्वाहा ज्योतिषे स्वाहाँ। सूर्सपाय स्वाहां कल्याणांय स्वाहाँ। अर्जुनाय स्वाहाँ॥१२॥

。[り]

विपश्चिते पर्वमानाय गायत। मही न धाराऽत्यन्थों अर्षित। अहिंर्ह जीणांमितिंसपिति त्वचम्। अत्यो न क्रीडंन्नसर्द्वृषा हिरेः। उपयामगृंहीतोऽिस मृत्यवे त्वा जुष्टं गृह्णामि। एष ते योनिंर्मृत्यवे त्वा। अपंमृत्युमपृक्षुधम्। अपेतः शप्थं जिह। अधां नो अग्र आवंह। रायस्पोष सहस्रिणम्॥१३॥

ये ते सहस्रम्युतं पाशाः। मृत्यो मर्त्यायं हन्तंवे। तान् यज्ञस्यं माययाः। सर्वानवयजामहे। भृक्षाःऽस्यमृतभृक्षः। तस्यं ते मृत्युपीतस्यामृतंवतः। स्वगाकृतस्य मधुंमतः। उपहूत्स्योपहूतो भक्षयामि। मन्द्राऽभिभूतिः कृतुर्यज्ञानां वाक्। असावेहिं॥१४॥

अन्धो जागृंविः प्राण। असावेहिं। बिधिर आंक्रन्दयितरपान। असावेहिं। अहुस्तोस्त्वा चक्षुंः। असावेहिं। अपादाशो मनंः। असावेहिं। कवे विप्रंचित्ते श्रोत्रं। असावेहिं॥१५॥

सुह्स्तः सुंवासाः। शूषो नामाँस्यमृतो मर्त्येषु। तं त्वाऽहं तथा वेदं। असावेहिं। अग्निर्मे वाचि श्रितः। वाग्यृदंये। हृदंयं मिये। अहम्मृतें। अमृतं ब्रह्मंणि। वायुर्में प्राणे श्रितः॥१६॥ प्राणो हृदंये। हृदंयं मिये। अहम्मृतें। अमृतं ब्रह्मंणि। सूर्यो मे चक्षंषि श्रितः। चक्षुर्हृदंये। हृदंयं मिये। अहम्मृतें। अहम्मृतें। अमृतं ब्रह्मंणि। चन्द्रमां मे मनंसि श्रितः॥१७॥

मनो हृदये। हृदयं मिये। अहम्मृतें। अमृतं ब्रह्मणि। दिशों मे श्रोत्रें श्रिताः। श्रोत्र हृदये। हृदयं मिये। अहम्मृतें। अमृतं ब्रह्मणि। आपों मे रेतिस श्रिताः॥१८॥

रेतो हृदये। हृदयं मिये। अहम्मृतें। अमृतं ब्रह्मणि। पृथिवी मे शरीरे श्रिता। शरीर्॰ हृदये। हृदयं मिये। अहम्मृतें। अमृतं ब्रह्मणि। ओष्धिवनस्पतयों मे लोमंसु श्रिताः॥१९॥ लोमानि हृदये। हृदयं मिये। अहम्मृतें। अमृतं ब्रह्मणि। इन्द्रों मे बलें श्रितः। बल्॰ हृदये। हृदयं मिये। अहम्मृतें। अमृतं ब्रह्मणि। पूर्जन्यों मे मूर्धि श्रितः॥२०॥

मूर्धा हृदये। हृदयं मिये। अहम्मृतें। अमृतं ब्रह्मणि। ईशांनो मे मृन्यौ श्रितः। मृन्युर्हृदये। हृदयं मिये। अहम्मृतें। अमृतं ब्रह्मणि। आत्मा मे आत्मिनि श्रितः॥२१॥ आत्मा हृदये। हृदयं मिये। अहम्मृतें। अमृतं ब्रह्मणि। पुनर्म आत्मा पुन्रायुरागाँत्। पुनंः प्राणः पुनराकूंतमागाँत्। वैश्वान्रो रश्मिभवविधानः। अन्तस्तिष्ठत्वमृतंस्य गोपाः॥२२॥

[८]

प्रजापंतिर्देवानंसृजत। ते पाप्मना सन्दिता अजायन्त। तान्व्यंद्यत्। यद्यद्यत्। तस्माद्विद्युत्। तमंवृश्चत्। यदवृश्चत्। तस्माद्वृष्टिः। तस्माद्यत्रैते देवते अभिप्राप्नुंतः । वि चं है्वास्य तत्रं पाप्मानं द्यतः॥२३॥

वृश्चतंश्च। सेषा मीमा साऽग्निंहोत्र एव संम्पन्ना। अथों आहुः। सर्वेषु यज्ञकृतुष्वितिं। होष्यंत्रूप उपंस्पृशेत्। विद्यंदिस् विद्यं मे पाप्मान्मितिं। अथं हुत्वोपंस्पृशेत्। वृष्टिंरिस् वृश्चं मे पाप्मान्मितिं। यक्ष्यमांणो वेष्ट्वा वां। वि चं हैवास्यैते देवतें पाप्मानं द्यतः॥२४॥

वृश्चतंश्च। अत्युर्हो हाऽऽर्रुणिः। ब्रह्मचारिणे प्रश्नान्प्रोच्यु प्रजिंघाय। परेहि। प्रक्षं दय्यांम्पातिं पृच्छ। वेत्थं सावित्रा(३)त्र वेत्था(३) इतिं। तमागत्यं पप्रच्छ। आचार्यो मा प्राहैषीत्। वेत्थं सावित्रा(३)त्र वेत्था(३) इतिं। सहोवाच वेदेतिं॥२५॥

स कस्मिन्प्रतिष्ठित इतिं। प्रोरंज्सीतिं। कस्तद्यत्परोरंजा इतिं। एष वाव स प्रोरंजा इतिं होवाच। य एष तपंति। एषोंऽर्वाग्रंजा इतिं। स कस्मिन्त्वेष इतिं। सत्य इतिं। किं तत्सत्यमितिं। तप इतिं॥२६॥ कस्मिन्न तप् इतिं। बल् इतिं। किं तद्वल्मितिं। प्राण इतिं। मा स्मं प्राणमितिपृच्छ् इतिं माऽऽचार्यौऽब्रवीदितिं होवाच ब्रह्मचारी। स होवाच प्रक्षो दय्याँम्पातिः। यद्वै ब्रह्मचारिन्प्राणमत्यंप्रक्ष्यः। मूर्धा ते व्यपंतिष्यत्। अहम्तंत आचार्याच्छ्रेयाँ-भविष्यामि। यो मां सावित्रे समवादिष्टेतिं॥२७॥

तस्मौत्सावित्रे न संबंदित। स यो हु वै सांवित्रं विदुषां सावित्रे स्वदंते। सहाँस्मिञ्छ्रियं दधाति। अनुं हु वा अस्मा असौ तप्ञ्छियं मन्यते। अन्वंस्मै श्रीस्तपों मन्यते। अन्वंस्मै तपो बलं मन्यते। अन्वंस्मै बलं प्राणं मन्यते। स यदाहं। संज्ञानं विज्ञानं दर्शां दृष्टेति। एष एव तत्॥२८॥

अथ् यदाहं। प्रस्तुंतं विष्टुंत स्नुता सुंन्वतीति। एष एव तत्। एष ह्यंव तान्यहांनि। एष रात्रंयः। अथ् यदाहं। चित्रः केतुर्दाता प्रंदाता संविता प्रंसविताऽभिंशास्ताऽनुंम्नतेतिं। एष एव तत्। एष ह्यंव तेऽह्यं मुहूर्ताः। एष रात्रैः॥२९॥

अथ् यदाहं। प्वित्रं पवियष्यन्त्सहंस्वान्त्सहीयानरुणीं-ऽरुणरंजा इतिं। एष एव तत्। एष ह्यंव तेंऽर्धमासाः। एष मासाः। अथ् यदाहं। अग्निष्टोम उक्थ्योंऽग्निर्ऋतुः प्रजापंतिः संवत्स्र इतिं। एष एव तत्। एष ह्यंव ते यंज्ञऋतवंः। एष ऋतवंः॥३०॥ पृष संवत्सरः। अथ यदाहं। इदानीं तदानीमिति। पृष पृव तत्। पृष ह्यंव ते मृंहूर्तानां मृहूर्ताः। जनको ह वैदेहः। अहोरात्रेः समाजंगाम। त॰ होचुः। यो वा अस्मान् वेदं। विजहंत्पाप्मानंमेति॥३१॥

सर्वमायुरिति। अभि स्वर्गं लोकं जंयित। नास्यामुष्मिं लोकं उन्नं क्षीयत् इति। विजहंद्ध वै पाप्मानंमेति। सर्वमायुरित। अभि स्वर्गं लोकं जंयित। नास्यामुष्मिं लोकं उन्नं क्षीयते। य एवं वेदं। अहीना हाऽऽश्वंथ्यः। सावित्रं विदां चंकार॥३२॥ स हं हु सो हिंरण्मयों भूत्वा। स्वर्गं लोकिर्मियाय। आदित्यस्य सायुं उपम्। हु सो ह् वै हिंरण्मयों भूत्वा। स्वर्गं लोकिर्मियाय। स्वर्गं लोकिर्मित। आदित्यस्य सायुं उपम्। य एवं वेदं। देवभागो हं श्रौतर्षः। सावित्रं विदां चंकार। त हु वागर्दंश्यमानाऽभ्यंवाच॥३३॥

सर्वं बत गौत्मो वेदं। यः सांवित्रं वेदेतिं। स होवाच। कैषा वाग्सीतिं। अयमहर सांवित्रः। देवानांमुत्तमो लोकः। गृह्यं महो बिश्रदितिं। एतावंति ह गौत्मः। युज्ञोपवीतं कृत्वाऽधो निपंपात। नमो नम इतिं॥३४॥

स होवाच। मा भैषीर्गौतम। जितो वै ते लोक इति। तस्माद्ये के चे सावित्रं विदुः। सर्वे ते जितलोकाः। स यो हु वै सावित्रस्याष्टाक्षेरं पुदङ् श्रियाऽभिषिक्तं वेदे। श्रिया हैवाभिषिंच्यते। घृणिरिति द्वे अक्षरें। सूर्य इति त्रीणिं। आदित्य इति त्रीणिं॥३५॥

पृतद्वै सांवित्रस्याष्टाक्षरं पृद श्रियाऽभिषिक्तम्। य पृवं वेदं। श्रिया हैवाभिषिंच्यते। तदेतदृचाऽभ्यंक्तम्। ऋचो अक्षरं पर्मे व्योमन्। यस्मिन्देवा अधि विश्वे निषेदुः। यस्तं न वेद किमृचा कंरिष्यति। य इत्तद्विदुस्त इमे समांसत् इतिं। न ह वा पृतस्यूचा न यजुंषा न साम्राऽथौंऽस्ति। यः सांवित्रं वेदं॥३६॥

तदेतत्पंरि यद्देवच्क्रम्। आर्द्रं पिन्वंमानः स्वर्गे लोक एति। विजहिद्धश्वां भूतानि सम्पश्यंत्। आर्द्रो ह वै पिन्वंमानः। स्वर्गे लोक एति। विजहिन्वश्वां भूतानि सम्पश्यन्। य एवं वेदं। शूषो ह वै वार्ष्ण्यः। आदित्येनं समाजंगाम। तः होवाच। एहिं सावित्रं विद्धि। अयं वै स्वर्ग्योऽग्निः पारियष्णुरमृतात्सम्भूत् इतिं। एष वाव स सावित्रः। य एष तपंति। एहि मां विद्धि। इतिं हैवेनं तद्वाच॥३७॥

[8]

ड्यं वाव स्रघां। तस्यां अग्निरेव सार्घं मधुं। या एताः पूर्वपक्षापरपक्षयो रात्रयः। ता मधुकृतः। यान्यहांनि। ते मधुवृषाः। स यो ह वा एता मधुकृतंश्च मधुवृषा इश्च वेदं। कुर्वन्तिं हास्यैता अग्नौ मधुं। नास्येष्टापूर्तं धंयन्ति। अथ् यो न वेदं॥३८॥ न हाँस्यैता अग्नौ मध्रं कुर्वन्ति। धर्यन्त्यस्येष्टापूर्तम्। यो ह् वा अंहोरात्राणां नाम्धेयांनि वेदं। नाहोरात्रेष्वार्तिमार्च्छंति। संज्ञानं विज्ञानं दर्शां दृष्टेतिं। एतावंनुवाकौ पूर्वपक्षस्यां-होरात्राणां नाम्धेयांनि। प्रस्तुंतं विष्टंत स्तुता सुन्वतीति। एतावंनुवाकावंपरपक्षस्यांहोरात्राणां नाम्धेयांनि। नाहोरात्रेष्वार्तिमार्च्छंति। य एवं वेदं॥३९॥

यो हु वै मुंहूर्तानां नाम्धेयांनि वेदं। न मुंहूर्तेष्वार्तिमार्च्छंति। चित्रः केतुर्दाता प्रंदाता संविता प्रंसिवताऽभिंशास्ताऽनुं-मन्तेतिं। एतंऽनुवाका मुंहूर्तानां नाम्धेयांनि। न मुहूर्तेष्वार्तिमार्च्छंति। य एवं वेदं। यो हु वा अर्धमासानां च मासानां च नाम्धेयांनि वेदं। नार्धमासेषु न मासेष्वार्तिमार्च्छंति। प्वित्रं पवियिष्यन्त्सहं-स्वान्त्सहीयानरुणोऽरुणरंजा इतिं। एतेऽनुवाका अर्धमासानां च मासानां च नाम्धेयांनि॥४०॥

नाधंमासेषु न मासेष्वार्तिमार्च्छति। य एवं वेदं। यो ह वै यंज्ञकतूनां चंर्तूनां चं संवत्सरस्यं च नामधेयांनि वेदं। न यंज्ञकृतुषु नर्तुषु न संवत्सर आर्तिमार्च्छति। अग्निष्टोम उक्थ्यौऽग्निर्ऋतुः प्रजापंतिः संवत्सर इति। एतेऽनुवाका यंज्ञकतूनां चंर्तूनां चं संवत्सरस्यं च नामधेयांनि॥४१॥ न यंज्ञऋतुषु नर्तुषु न संवत्सर आर्तिमार्च्छंति। य एवं वेदं। यो ह वै मृंहूर्तानां मृहूर्तान् वेदं। न मृंहूर्तानां मृहूर्तेष्वार्तिमार्च्छंति। इदानीं तदानीमितिं। एते वै मृंहूर्तानां मृहूर्तां न मृंहूर्तानां मृहूर्तेष्वार्तिमार्च्छंति। य एवं वेदं। अथो यथां क्षेत्रज्ञो भूत्वाऽनुंप्रविश्यात्रमितिं। एवमेवैतान्क्षेत्रज्ञो भूत्वाऽनुंप्रविश्यात्रमिति। एवमेवैतान्क्षेत्रज्ञो भूत्वाऽनुंप्रविश्यात्रमिति। स एतेषांमेव संलोकता सायुंज्यमश्रुते। अपं पुनर्मृत्युं ज्यिति। य एवं वेदं॥४२॥

[80]

कश्चिंद्ध वा अस्माल्लोकात्प्रेत्यं। आत्मानं वेद। अयमृहम्स्मीतिं। कश्चित्स्वं लोकं न प्रतिप्रजानाति। अग्निम्ग्यो हैव धूमतान्तः। स्वं लोकं न प्रतिप्रजानाति। अथ् यो हैवैतमृग्नि॰ सांवित्रं वेदं। स एवास्माल्लोकात्प्रेत्यं। आत्मानं वेद। अयमृहमुस्मीतिं॥४३॥

स स्वं लोकं प्रतिप्रजानाति। एष उं वेवैनं तत्सांवित्रः। स्वर्गं लोकम्भिवंहति। अहोरात्रेवां इदः स्युग्भिः क्रियते। इतिरात्रायांदीक्षिषत। इतिरात्रायं व्रतमुपांगुरिति। तानिहानेवं विदुषंः। अमुष्मिं लोके शेव्धिं ध्यन्ति। धीतः हैव स शेव्धिमनु परैति। अथु यो हैवैत्मग्निः सांवित्रं वेदं॥४४॥

तस्यं हैवाहों रात्राणि। अमुष्मिं लोके शेविधं न धंयन्ति।

अधीत १ हैव स शेवधिमनु परैति। भ्रद्धांजो ह त्रिभिरायुंर्भिर्ब्रह्मचर्यमुवास। त१ हु जीर्णि १ स्थविंर १ शयांनम्। इन्द्रं उप्व्रज्योवाच। भरंद्वाज। यत्ते चतुर्थमायुंर्द्द्याम्। किमेनेन कुर्या इतिं। ब्रह्मचर्यमेवैनेन चरेयमितिं होवाच॥४५॥

त १ ह् त्रीन्गिरिरूपानविज्ञातानिव दर्श्यां चंकार। तेषा १ है कैंकस्मान्मुष्टिनाऽऽदंदे। स होवाच। भरंद्वाजेत्यामन्त्र्यं। वेदा वा एते। अनुन्ता वै वेदाः। एतद्वा एतेस्त्रिभिरायंर्भिरन्वं-वोचथाः। अर्थत् इतंर्दनंनूक्तमेव। एहीमं विद्धि। अयं वै संविवद्येति॥४६॥

तस्मैं हैतम्ग्निश् सांवित्रमुंवाच। तश्स विदित्वा। अमृतों भूत्वा। स्वर्गं लोकिमियाय। आदित्यस्य सायुंज्यम्। अमृतों हैव भूत्वा। स्वर्गं लोकमेति। आदित्यस्य सायुंज्यम्। य एवं वेदे। एषो एव त्रयीं विद्या॥४७॥

यार्वन्तर हु वै त्रय्या विद्ययां लोकं जंयित। तार्वन्तं लोकं जंयित। य एवं वेदं। अग्नेर्वा एतानि नामधेयांनि। अग्नेरेव सायुंज्यर सलोकतांमाप्नोति। य एवं वेदं। वायोर्वा एतानि नामधेयांनि। वायोरेव सायुंज्यर सलोकतांमाप्नोति। य एवं वेदं। इन्द्रंस्य वा एतानि नामधेयांनि॥४८॥

इन्द्रंस्यैव सायुंज्य सलोकतांमाप्नोति। य एवं वेदं।

बृह्स्पतेर्वा प्तानि नाम्धेयांनि। बृह्स्पतेरे्व सायुंज्यश् सलोकतांमाप्नोति। य एवं वेदं। प्रजापंतेर्वा एतानि नाम्धेयांनि। प्रजापंतेरे्व सायुंज्यश् सलोकतांमाप्नोति। य एवं वेदं। ब्रह्मणो वा एतानि नाम्धेयांनि। ब्रह्मण एव सायुंज्यश् सलोकतांमाप्नोति। य एवं वेदं। स वा एषोंऽग्निरंपक्षपुच्छो वायुरे्व। तस्याग्निर्मुखम्। असावांदित्यः शिरंः। स यदेते देवते अन्तरेण। तत्सर्वश् सीव्यति। तस्मात्सावित्रः॥४९॥

[88]

॥इति कृष्णयजुर्वेदीयतैत्तिरीयकाठके प्रथमः प्रश्नः समाप्तः॥१॥

॥द्वितीयः प्रश्नः॥

लोकों ऽसि स्वर्गों ऽसि। अनुन्तों ऽस्यपारों ऽसि। अक्षिंतो-ऽस्यक्षय्यों ऽसि। तपंसः प्रतिष्ठा। त्वयीदम्नतः। विश्वं यक्षं विश्वं भूतं विश्वं सुभूतम्। विश्वंस्य भूतां विश्वंस्य जनयिता। तं त्वोपंदधे काम्दुघमिश्वंतम्। प्रजापंतिस्त्वा सादयतु। तयां देवतयां ऽङ्गिर्स्वद्भुवा सींद॥१॥

तपोंऽसि लोके श्रितम्। तेजंसः प्रतिष्ठा। त्वयीदम्नतः। विश्वं यक्षं विश्वं भूतं विश्वं सुभूतम्। विश्वंस्य भूतृं विश्वंस्य जनयितृ। तत्त्वोपंदधे काम्दुघ्मक्षितम्। प्रजापंतिस्त्वा सादयतु। तयां देवतयांऽङ्गिर्स्वद्भुवा सींद॥२॥

तेजोंऽसि तपंसि श्रितम्। समुद्रस्यं प्रतिष्ठा। त्वयीदम्नतः। विश्वं यक्षं विश्वं भूतं विश्वं सभूतम्। विश्वंस्य भूतृं विश्वंस्य जनियृत्। तत्त्वोपंदधे काम्दुघमक्षितम्। प्रजापंतिस्त्वा सादयत्। तयां देवतंयाऽङ्गिर्स्वद्भवा सींद॥३॥

समुद्रोऽसि तेजंसि श्रितः। अपां प्रतिष्ठा। त्वयीदम्नतः। विश्वं यक्षं विश्वं भूतं विश्वं सुभूतम्। विश्वंस्य भूतां विश्वंस्य जनयिता। तं त्वोपंदधे काम्दुघ्मक्षितम्। प्रजापंतिस्त्वा सादयतु। तयां देवतंयाऽङ्गिर्स्वद्भवा सींद॥४॥

आपंः स्थ समुद्रे श्रिताः। पृथिव्याः प्रंतिष्ठा युष्मास्। इदम्नतः। विश्वं यक्षां विश्वं भूतं विश्वः स्भूतम्। विश्वंस्य भूत्रों विश्वंस्य जनियृत्र्यः। ता व उपंदधे काम्दुघा अक्षिताः। प्रजापंतिस्त्वा सादयत्। तयां देवतयांऽङ्गिर्स्वद्भुवा सीद॥५॥

पृथिव्यंस्यप्सु श्रिता। अग्नेः प्रंतिष्ठा। त्वयीदम्नतः। विश्वं यक्षं विश्वं भूतं विश्वं स्भूतम्। विश्वंस्य भूत्री विश्वंस्य जनयित्री। तां त्वोपंदधे काम्दुघामिक्षंताम्। प्रजापंतिस्त्वा सादयतु। तयां देवतंयाऽङ्गिर्स्वद्भवा सीद॥६॥

अग्निरंसि पृथिव्याः श्रितः। अन्तरिक्षस्य प्रतिष्ठा।

त्वयीदम्नतः। विश्वं यक्षं विश्वं भूतं विश्वं सुभूतम्। विश्वंस्य भूतां विश्वंस्य जनयिता। तं त्वोपंदधे कामृदुघ्मक्षितम्। प्रजापंतिस्त्वा सादयतु। तयां देवतंयाऽङ्गिर्स्वद्भुवा सींद॥७॥

अन्तरिक्षमस्युग्नौ श्रितम्। वायोः प्रतिष्ठा। त्वयीदम्नतः। विश्वं यक्षं विश्वं भूतं विश्वं स्म्भूतम्। विश्वंस्य भूतृं विश्वंस्य जनियत्। तत्त्वोपंदधे काम्दुघमिश्वंतम्। प्रजापंतिस्त्वा सादयत्। तयां देवतंयाऽङ्गिर्स्वद्भुवा सींद॥८॥

वायुरंस्यन्तिरक्षे श्रितः। दिवः प्रंतिष्ठा। त्वयीदम्नतः। विश्वं यक्षं विश्वं भूतं विश्वं सुभूतम्। विश्वंस्य भूतां विश्वंस्य जनियता। तं त्वोपंदधे कामृदुघमिश्वंतम्। प्रजापंतिस्त्वा सादयत्। तयां देवतंयाऽङ्गिर्स्वद्भवा सीद॥९॥

द्यौरंसि वायौ श्रिता। आदित्यस्यं प्रतिष्ठा। त्वयीदम्नतः। विश्वं यक्षं विश्वं भूतं विश्वं स्मभूतम्। विश्वंस्य भूत्री विश्वंस्य जनियत्री। तां त्वोपंदधे काम्दुघामिश्वंताम्। प्रजापंतिस्त्वा सादयत्। तयां देवतंयाऽङ्गिर्स्वद्भवा सींद॥१०॥

आदित्योऽसि दिवि श्रितः। चन्द्रमंसः प्रतिष्ठा। त्वयीदम्नतः। विश्वं यक्षं विश्वं भूतं विश्वं स्मभूतम्। विश्वंस्य भूतां विश्वंस्य जनयिता। तं त्वोपंदधे कामदुघमिश्वंतम्। प्रजापंतिस्त्वा सादयतु। तयां देवतंयाऽङ्गिर्स्वद्भवा सींद॥११॥ चन्द्रमां अस्यादित्ये श्रितः। नक्षंत्राणां प्रतिष्ठा। त्वयीदम्नतः। विश्वं यक्षं विश्वं भूतं विश्वं स्मूतम्। विश्वंस्य भूतां विश्वंस्य जनियता। तं त्वोपंदधे कामृदुघमिश्वंतम्। प्रजापंतिस्त्वा सादयत्। तयां देवतंयाऽङ्गिर्स्वद्भवा सींद॥१२॥

नक्षंत्राणि स्थ चन्द्रमंसि श्रितानिं। संवृत्स्रस्यं प्रतिष्ठा युष्मासुं। इदम्नतः। विश्वं यक्षं विश्वं भूतं विश्वं सुभूतम्। विश्वंस्य भृतॄंणि विश्वंस्य जनियृतॄणिं। तानिं व उपंदधे काम्दुघान्यक्षितानि। प्रजापंतिस्त्वा सादयत्। तयां देवतंयाऽङ्गिर्स्वद्भवा सीद॥१३॥

संवत्सरोऽसि नक्षेत्रेषु श्रितः। ऋतूनां प्रतिष्ठा। त्वयीदम्नतः। विश्वं यक्षं विश्वं भूतं विश्वं स्मूतम्। विश्वंस्य भूतां विश्वंस्य जनियता। तं त्वोपंदधे काम्दुघ्मिश्वंतम्। प्रजापंतिस्त्वा सादयत्। तयां देवतंयाऽङ्गिर्स्वद्भवा सींद॥१४॥

ऋतवेः स्थ संवत्सरे श्रिताः। मासानां प्रतिष्ठा युष्मास्। इदम्नतः। विश्वं यक्षं विश्वं भूतं विश्वं स्भूतम्। विश्वंस्य भूतारो विश्वंस्य जनियतारंः। तान् व उपंदधे काम्दुघानिक्षंतान्। प्रजापंतिस्त्वा सादयतु। तयां देवतंयाऽङ्गिर्स्वद्भुवा सीद॥१५॥

मासाः स्थर्तषुं श्रिताः। अर्धमासानां प्रतिष्ठा युष्मासुं। इदमन्तः। विश्वं यक्षं विश्वं भूतं विश्वरं सुभूतम्। विश्वंस्य भूर्तारो विश्वंस्य जनयितारंः। तान् व उपंदधे कामृदुघानक्षितान्। प्रजापंतिस्त्वा सादयतु। तयां देवतयाऽङ्गिर्स्वद्भवा सीद॥१६॥

अर्धमासाः स्थं मासु श्रिताः। अहोरात्रयोः प्रतिष्ठा युष्मासं। इदम्नतः। विश्वं यक्षं विश्वं भूतं विश्वं स्भूतम्। विश्वंस्य भूतारो विश्वंस्य जनियतारः। तान् व उपंदधे काम्दुघानिक्षंतान्। प्रजापंतिस्त्वा सादयतु। तयां देवतंयाऽङ्गिर्स्वद्भवा सींद॥१७॥

अहोरात्रे स्थौंऽर्धमासेषुं श्रिते। भूतस्यं प्रतिष्ठे भव्यंस्य प्रतिष्ठे। युवयोरिदम्नतः। विश्वं यक्षं विश्वं भूतं विश्वं सुभूतम्। विश्वंस्य भूर्व्यो विश्वंस्य जनिय्त्र्यौ। ते वामुपंदधे कामृदुधे अक्षिते। प्रजापंतिस्त्वा सादयत्। तयां देवतंयाऽङ्गिर्स्वद्भुवा सीद॥१८॥

पौर्णमास्यष्टंकाऽमावास्यां। अन्नादाः स्थांन्नद्घों युष्मास्ं। इदम्नतः। विश्वं यक्षं विश्वं भूतं विश्वं सुभूतम्। विश्वंस्य भूर्यो विश्वंस्य जनियृत्र्यः। ता व उपंदधे काम्दुघा अक्षिंताः। प्रजापंतिस्त्वा सादयत्। तयां देवतंयाऽङ्गिर्स्वद्भुवा सींद॥१९॥

राडंसि बृहती श्रीर्सीन्द्रंपत्नी धर्मपत्नी। विश्वं भूतमनुप्रभूता।

त्वयीदम्नतः। विश्वं यक्षं विश्वं भूतं विश्वं सुभूतम्। विश्वंस्य भूत्री विश्वंस्य जनयित्री। तां त्वोपंदधे काम्दुघामिश्वंताम्। प्रजापंतिस्त्वा सादयत्। तयां देवतंयाऽङ्गिर्स्वद्भुवा सीद॥२०॥

ओजोंऽसि सहोंऽसि। बलंमिस भ्राजोंऽसि। देवानां धामामृतम्। अमंर्त्यस्तपोजाः। त्वयीदम्नतः। विश्वं यक्षं विश्वं भूतं विश्वं सुभूतम्। विश्वंस्य भूतां विश्वंस्य जनयिता। तं त्वोपंदधे काम्दुघ्मिक्षंतम्। प्रजापंतिस्त्वा सादयतु। तयां देवतंयाऽङ्गिर्स्वद्भवा सींद॥२१॥

[8]

त्वमंग्ने रुद्रो असुंरो महो दिवः। त्वः शर्धो मार्रतं पृक्ष ईशिषे। त्वं वातैररुणैर्यासि शङ्ग्यः। त्वं पूषा विधृतः पांसि न त्मनां। देवां देवेषुं श्रयध्वम्। प्रथंमा द्वितीयेषु श्रयध्वम्। द्वितीयास्तृतीयेषु श्रयध्वम्। तृतीयाश्चतुर्थेषुं श्रयध्वम्। चृतुर्थाः पश्चमेषुं श्रयध्वम्। पश्चमाः षष्ठेषुं श्रयध्वम्॥२२॥

षष्ठाः संप्तमेषुं श्रयध्वम्। स्प्तमा अष्टमेषुं श्रयध्वम्। अष्टमा नेवमेषुं श्रयध्वम्। नवमा दंशमेषुं श्रयध्वम्। दशमा एंकाद्शेषुं श्रयध्वम्। एकाद्शा द्वांदशेषुं श्रयध्वम्। द्वाद्शास्त्रयोद्शेषुं श्रयध्वम्। त्रयोद्शाश्चंतुर्दशेषुं श्रयध्वम्। चतुर्दशाः पंश्रद्शेषुं श्रयध्वम्। पृश्चद्शाः षोंडुशेषुं श्रयध्वम्॥२३॥ षोड्शाः संप्तद्शेषुं श्रयध्वम्। स्प्तद्शा अष्टाद्शेषुं श्रयध्वम्। अष्टाद्शा एंकान्नविद्शेषुं श्रयध्वम्। एकान्नविद्शोषुं श्रयध्वम्। एकविद्शोषुं श्रयध्वम्। एकविद्शा एंकविद्शोषुं श्रयध्वम्। एकविद्शा द्वांविद्शोषुं श्रयध्वम्। द्वाविद्शोषुं श्रयध्वम्। द्वाविद्शोषुं श्रयध्वम्। न्रयोविद्शोधुं श्रयध्वम्। चतुर्विद्शाः पंश्रविद्शोषुं श्रयध्वम्। पृश्रविद्शाः पंश्रविद्शाः प्रयाविद्शाः प्रयाविद्याविद्याविद्याविद्याविद्याविद्याविद्याविद्याविद्याविद्याविद्य

षिड्वे १ शाः संप्तिवि १ शेषुं श्रयध्वम्। स्प्तिवि १ शेषुं श्रयध्वम्। अष्टावि १ श्रयध्वम्। अष्टावि १ श्रयध्वम्। प्रकान्नि १ शेषुं श्रयध्वम्। प्रकान्नि १ शेषुं श्रयध्वम्। प्रकान्नि १ शेषुं श्रयध्वम्। प्रकाने १ शेषुं श्रयध्वम्। प्रकाने १ शेषुं श्रयध्वम्। प्रकाने १ शेषुं श्रयध्वम्। देवां स्त्रिरेकादशास्त्रिस्त्रं यस्त्रि १ शाः। उत्तरे भवत। उत्तरवर्त्मान् उत्तरसत्त्वानः। यत्कां म इदं जुहोिमं। तन्मे समृध्यताम्। वय १ स्यां म प्तयो रयीणाम्। भूर्भुवः स्वंः स्वाहां॥ २ ५॥

[२]

अग्नांविष्णू स्जोषंसा। इमा वंधन्तु वां गिरं। द्युम्नैर्वाजेंभिरागंतम्। राज्ञीं विराज्ञीं। सम्माज्ञीं स्वराज्ञीं। अर्चिः शोचिः। तपो हरो भाः। अग्निः सोमो बृह्स्पतिः। विश्वे देवा भुवंनस्य गोपाः। ते सर्वे सङ्गत्यं। इदं मे प्रावंता वर्चः। वयः स्यांम् पत्यो रयीणाम्। भूर्भुवः स्वंः स्वाहां॥२६॥

[३]

अन्नप्तेऽन्नस्य नो देहि। अनुमीवस्यं शुष्मिणः। प्र प्रंदातारं तारिषः। ऊर्जं नो धेहि द्विपदे चतुंष्पदे। अग्ने पृथिवीपते। सोमं वीरुधां पते। त्वष्टंः समिधां पते। विष्णंवाशानां पते। मित्रं सत्यानां पते। वरुण धर्मणां पते॥२७॥

मुरुतो गणानां पतयः। रुद्रं पशूनां पते। इन्द्रौजसां पते। बृहंस्पते ब्रह्मणस्पते। आ रुचा रोचेऽह स्वयम्। रुचा रुचे रोचंमानः। अतीत्यादः स्वराभरेह। तस्मिन् योनौ प्रजनौ प्रजायेय। वय स्थाम् पत्रयो रयीणाम्। भूर्भुवः स्वः स्वाहां॥२८॥

[8]

सप्त तें अग्ने समिधंः सप्त जिह्वाः। सप्तर्षयः सप्त धामं प्रियाणिं। सप्त होत्रां अनुविद्वान्। सप्त योनीरापृंणस्वा घृतेनं। प्राची दिक्। अग्निर्देवतां। अग्निर स दिशां देवं देवतांनामृच्छत्। यो मैतस्यै दिशोंऽभिदासंति। दक्षिणा दिक्। इन्द्रों देवतां॥२९॥

इन्द्रभ् स दिशां देवं देवतांनामृच्छतु। यो मैतस्यैं दिशोंऽभिदासंति। प्रतीची दिक्। सोमों देवतां। सोम्भ् स दिशां देवं देवतांनामृच्छतु। यो मैतस्यैं दिशोंऽभिदासंति। उदींची दिक्। मित्रावर्रुणो देवतां। मित्रावर्रुणो स दिशां देवौ देवतांनामृच्छतु। यो मैतस्यैं दिशोंऽभिदासंति॥३०॥ कुर्ध्वा दिक्। बृहस्पतिंदेवतां। बृहस्पतिक् स दिशां देवं

देवतांनामृच्छत्। यो मैतस्यै दिशों ऽभिदासंति। इयं दिक्। अदिंतिर्देवतां। अदिंति स् स दिशां देवीं देवतांनामृच्छत्। यो मैतस्यै दिशों ऽभिदासंति। पुरुषो दिक्। पुरुषो मे कामान्त्समंध्यत्॥ ३१॥

अन्धो जागृंविः प्राण। असावेहिं। बिधिर आँकन्दयितरपान। असावेहिं। उषसंमुषसमशीय। अहमसो ज्योतिंरशीय। अहमसोऽपोंऽशीय। वय स्यांम् पतंयो रयीणाम्। भूर्भृवः स्वंः स्वाहां॥३२॥

[५]

यत्तेऽचितं यदं चितं ते अग्ने। यत्तं ऊनं यद् तेऽतिरिक्तम्। आदित्यास्तदिङ्गिरसिश्चन्वन्तु। विश्वं ते देवाश्चितिमापूरयन्तु। चितश्चासि सिश्चंतश्चास्यग्ने। एतावाङ्श्चासि भूयांङ्श्चास्यग्ने। लोकं पृण च्छिद्रं पृण। अथों सीद शिवा त्वम्। इन्द्राग्नी त्वा बृह्स्पतिंः। अस्मिन् योनांवसीषदन्॥३३॥

तयां देवतंयाऽङ्गिर्स्वद्भुवा सींद। ता अस्य सूदंदोहसः। सोमई श्रीणन्ति पृश्नंयः। जन्मं देवानां विशः। त्रिष्वा रोचने दिवः। तयां देवतंयाऽङ्गिर्स्वद्भुवा सींद। अग्ने देवाः इहाऽऽवंह। जज्ञानो वृक्तबंर्हिषे। असि होतां न ईड्यः। अगन्म महा मनसा यविष्ठम्॥३४॥

यो दीदाय सिमंद्ध स्वे दुंरोणे। चित्रभांनू रोदंसी अन्तरुवीं। स्वांहुतं विश्वतः प्रत्यश्चम्। मेधाकारं विदर्थस्य प्रसार्धनम्।

अग्निश् होतांरं परिभूतंमं मृतिम्। त्वामर्भस्य ह्विषंः समानमित्। त्वां महो वृंणते नरो नान्यं त्वत्। मृनुष्वत्त्वा निधीमहि। मनुष्वत्सिमधीमहि। अग्ने मनुष्वदंङ्गिरः॥३५॥

देवान्देवायते यंजा अग्निर्हि वाजिनं विशे। ददांति विश्वचंर्षणिः। अग्नी राये स्वाभुवम्। स प्रीतो यांति वार्यम्। इष स्तोत्भ्य आभर। पृष्टो दिवि पृष्टो अग्निः पृथिव्याम्। पृष्टो विश्वा ओषंधीराविवेश। वैश्वानुरः सहंसा पृष्टो अग्निः। स नो दिवा स रिषः पांतु नक्तम्॥३६॥

[६]

अयं वाव यः पवंते। सोंंऽग्निर्नाचिकेतः। स यत्प्राङ् पवंते। तदंस्य शिरंः। अथ् यद्दंक्षिणा। स दक्षिणः पृक्षः। अथ् यत्प्रत्यक्। तत्पुच्छम्। यदुदङ्ङ्ं। स उत्तरः पृक्षः॥३७॥

अथ् यत्स्वाति। तदंस्य समर्श्वनं च प्रसारंणं च। अथों सम्पदेवास्य सा। स॰ हु वा अंस्मै स कार्मः पद्यते। यत्कांमो यजंते। योंऽग्निं नांचिकेतं चिनुते। य उं चैनमेवं वेदं। यो हु वा अग्नेर्नाचिकेतस्याऽऽयतंनं प्रतिष्ठां वेदं। आयतंनवान्भवति। गच्छंति प्रतिष्ठाम्॥३८॥

हिरंण्यं वा अग्नेर्नाचिकेतस्याऽऽयतंनं प्रतिष्ठा। य एवं वेदं। आयतंनवान्भवति। गच्छंति प्रतिष्ठाम्। यो हु वा अग्नेर्नाचिकेतस्य शरीरं वेदं। सशंरीर एव स्वर्गं लोकमेति। हिरंण्यं वा अग्नेर्नाचिकेतस्य शरीरम्। य एवं वेदं। सर्शरीर एव स्वर्गं लोकमेति। अथो यथां रुका उत्तंप्तो भाय्यात्॥३९॥

पृवमेव स तेर्जसा यशंसा। अस्मिङ्श्चं लोकंऽमुष्मिंङ्श्च भाति। उरवों हु वै नामैते लोकाः। येऽवंरेणाऽऽदित्यम्। अथं हैते वरीया एसो लोकाः। ये परेणाऽऽदित्यम्। अन्तंवन्त १ हु वा एष क्ष्रय्यं लोकं जंयित। योऽवंरेणाऽऽदित्यम्। अथं हैषोंऽनन्तमंपारमंक्ष्रय्यं लोकं जंयित। यः परेणाऽऽदित्यम्॥४०॥ अनन्त १ हु वा अंपारमंक्ष्रय्यं लोकं जंयित। योंऽग्निं नांचिकेतं चिनुते। य उं चैनमेवं वेदं। अथो यथा रथे तिष्ठन्पक्षंसी पर्यावर्तमाने प्रत्यपेक्षते। एवमहोरात्रे प्रत्यपेक्षते। नास्याहोरात्रे लोकमांप्रतः। योंऽग्निं नांचिकेतं चिनुते। य उं चैनमेवं वेदं॥४१॥

[り]

उशन् हु वै वांजश्रव्सः संविवेदसं दंदौ। तस्यं हु निचंकिता नामं पुत्र आंस। त॰ हं कुमार॰ सन्तम्। दक्षिणासु नीयमानासु श्रृद्धाऽऽविवेश। स होवाच। तत् कस्मै मां दांस्यसीति। द्वितीयंं तृतीयम्। त॰ हु परीत उवाच। मृत्यवैं त्वा ददामीति। त॰ ह स्मोत्थितं वाग्भिवंदति॥४२॥

गौतंम कुमारमितिं। स होंवाच। परेंहि मृत्योर्गृहान्। मृत्यवे

वै त्वांऽदामितिं। तं वै प्रवसंन्तं गुन्तासीतिं होवाच। तस्यं स्म तिस्रो रात्रीरनांश्वान्गृहे वंसतात्। स यदिं त्वा पृच्छेत्। कुमांर् कित रात्रीरवात्सीरितिं। तिस्र इति प्रतिंब्रूतात्। किं प्रथमा रात्रिमाश्रा इतिं॥४३॥

प्रजां त् इतिं। किं द्वितीयामितिं। प्रशू इतिं। किं तृतीयामितिं। साधुकृत्यां त् इतिं। तं वै प्रवसन्तं जगाम। तस्यं ह तिस्रो रात्रीरनांश्वान्गृह उंवास। तमागत्यं पप्रच्छ। कुमार कित रात्रीरवात्सीरिति। तिस्र इति प्रत्युंवाच॥४४॥

किं प्रंथमा रात्रिमाश्रा इति। प्रजां त इति। किं द्वितीयामिति। पृश्क्रस्त इति। किं तृतीयामिति। साधुकृत्यां त इति। नमस्ते अस्तु भगव इति होवाच। वरं वृणीष्वेति। पितरमेव जीवंत्रयानीति। द्वितीयं वृणीष्वेति॥४५॥

इष्टापूर्तयोर्मेऽक्षितिं ब्रूहीतिं होवाच। तस्मैं हैतम्िग्नें नांचिकेतम्ंवाच। ततो वै तस्येष्टापूर्ते ना क्षीयेते। नास्येष्टापूर्ते क्षीयेते। योऽग्निं नांचिकेतं चिनुते। य उं चैनमेवं वेदं। तृतीयंं वृणीष्वेतिं। पुनुर्मृत्योर्मेऽपंचितिं ब्रूहीतिं होवाच। तस्मैं हैतम्िग्नें नांचिकेतम्ंवाच। ततो वै सोऽपं पुनर्मृत्युमंजयत्॥४६॥

अपं पुनर्मृत्युं जंयित। योंऽग्निं नांचिकेतं चिंनुते। य उं चैनमेवं वेदं। प्रजापंतिर्वे प्रजाकांमस्तपोंऽतप्यत। स हिरण्यमुदाँस्यत्। तद्ग्नौ प्रास्यंत्। तदंस्मै नाच्छंदयत्। तद्वितीयं प्रास्यंत्। तदंस्मै नैवाच्छंदयत्। तत्तृतीयं प्रास्यंत्॥४७॥

तदंस्मे नैवाच्छंदयत्। तदात्मन्नेव हृंदय्येंऽग्नौ वैंश्वान्रे प्रास्यंत्। तदंस्मा अच्छदयत्। तस्माद्धिरंण्यं किर्निष्ठं धनानाम्। भुञ्जत्प्रियतंमम्। हृद्युज हि। स व तमेव नाविंन्दत्। यस्मै तां दक्षिणामनेष्यत्। ता इस्वायैव हस्तांय दक्षिणायानयत्। तां प्रत्यंगृह्णात्॥४८॥

दक्षांय त्वा दक्षिणां प्रतिगृह्णां सोऽदक्षत् दक्षिणां प्रतिगृह्णं। दक्षेते हु वै दक्षिणां प्रतिगृह्णं। य एवं वेदं। एतर्ष्ट्रं स्म वै तद्विद्वा स्मों वाजश्रवसा गोतंमाः। अप्यंनूदेश्यां दिश्वेणां प्रतिगृह्णन्ति। उभयेन वयं दिश्वेष्यामह एव दिश्वेणां प्रतिगृह्णेते। तेऽदक्षन्त् दिश्वेणां प्रतिगृह्णे। दक्षेते हु वै दक्षिणां प्रतिगृह्णे। य एवं वेदं। प्र हान्यं द्वीनाति॥४९॥

[2]

त १ हैतमे के पशुबन्ध एवोत्तं रवेद्यां चिंन्वते। उत्तर्वेदिसंम्मित
एषों ऽग्निरिति वदंन्तः। तन्न तथां कुर्यात्। एतमृग्निं कामेन्
व्यर्धयेत्। स एनं कामेन् व्यृद्धः। कामेन् व्यर्धयेत्। सौम्ये
वावैनं मध्वरे चिंन्वीत। यत्रं वा भूयिष्ठा आहुं तयो हू येरन्।
एतमृग्निं कामेन् समर्धयित। स एनं कामेन् समृद्धः॥५०॥
कामेन् समर्धयित। अर्थ हैनं पुरर्षयः। उत्तर्वेद्यामेव

स्त्रियंमचिन्वत। ततो वै तेऽविंन्दन्त प्रजाम्। अभि स्वर्गं लोकमंजयन्। विन्दतं एव प्रजाम्। अभि स्वर्गं लोकं जयति। योंऽग्निं नांचिकेतं चिंनुते। य उं चैनमेवं वेदं। अथं हैनं वायुर्ऋद्धिंकामः॥५१॥

यथान्युप्तमेवोपंदधे। ततो वै स एतामृद्धिंमार्भ्रोत्। यामिदं वायुर्ऋद्धः। एतामृद्धिंमृश्नोति। यामिदं वायुर्ऋद्धः। योऽग्निं नांचिकेतं चिनुते। य उं चैनमेवं वेदं। अर्थं हैनं गोब्लो वार्ष्णः पृशुकांमः। पाङ्कंमेव चिंक्ये। पश्चं पुरस्तांत्॥५२॥

पश्चं दक्षिण्तः। पश्चं पृश्चात्। पश्चौत्तर्तः। एकां मध्यै। ततो वै स सहस्रं पृश्नम्प्राप्नौत्। प्र सहस्रं पृश्नाप्नोति। यौऽग्निं नांचिकेतं चिनुते। य उं चैनमेवं वेदं। अथं हैनं प्रजापंति ज्यैष्ठमंकामो यशंस्कामः प्रजनंनकामः। त्रिवृतंमेव चिक्ये॥५३॥

स्प्त पुरस्तांत्। तिस्रो देक्षिणतः। स्प्त पृश्चात्। तिस्र उत्तर्तः। एकां मध्यें। ततो वे स प्र यशो ज्येष्ठ्यंमाप्नोत्। एतां प्रजातिं प्राजांयत। यामिदं प्रजाः प्रजायंन्ते। त्रिवृद्वे ज्येष्ठ्यम्। माता पिता पुत्रः॥५४॥

त्रिवृत्प्रजनंनम्। उपस्थो योनिर्मध्यमा। प्र यशो ज्यैष्ठ्यमाप्नोति। एतां प्रजातिं प्रजायते। यामिदं प्रजाः प्रजायन्ते। यौऽग्निं नांचिकेतं चिनुते। य उं चैनमेवं वेदं। अर्थ हैन्मिन्द्रो ज्यैष्ठमंकामः। ऊर्ध्वा एवोपंदधे। ततो वै स ज्यैष्ठमंमगच्छत्॥५५॥

ज्यैष्ठमं गच्छति। योंऽग्निं नांचिकेतं चिंनुते। य उं चैनमेवं वेदं। अथं हैनम्सावांदित्यः स्वर्गकांमः। प्राचींरेवोपंदधे। ततो वै सोंऽभि स्वर्गं लोकमंजयत्। अभि स्वर्गं लोकं जयति। योंऽग्निं नांचिकेतं चिंनुते। य उं चैनमेवं वेदं। स यदीच्छेत्॥५६॥

तेज्स्वी यंशस्वी ब्रह्मवर्च्सी स्यामिति। प्राङाहोतुर्धिष्णया-दुत्संपेत्। येयं प्रागाद्यशंस्वती। सा मा प्रोणीत्। तेजंसा यशंसा ब्रह्मवर्च्सेनेति। तेज्स्व्येव यंशस्वी ब्रह्मवर्च्सी भंवति। अथ् यदीच्छेत्। भूयिष्ठं मे श्रद्दंधीरन्। भूयिष्ठा दक्षिणा नयेयुरिति। दक्षिणासु नीयमानासु प्राच्येहि प्राच्येहीति प्राची जुषाणा वेत्वाज्यंस्य स्वाहेति स्रुवेणोपहत्यांऽऽहव्नीये जुहुयात्॥५७॥

भूयिष्ठमेवास्मै श्रद्दंधते। भूयिष्ठा दक्षिणा नयन्ति। पुरीषमुप्धायं। चितिक्कृप्तिभिरिभेमृश्यं। अग्निं प्रणीयोप-समाधायं। चतंस्र एता आहुंतीर्जुहोति। त्वमंग्ने रुद्र इतिं शतरुद्रीयंस्य रूपम्। अग्नांविष्णू इतिं वसोर्धारांयाः। अन्नपत् इत्यंन्नहोमः। सप्त ते अग्ने स्मिधंः स्प्त जिह्वा इतिं विश्वप्रीः॥५८॥

[8]

यां प्रथमामिष्टंकामुप्दधांति। इमं तयां लोकम्भिजंयति। अथो या अस्मिँ छोके देवताः। तासा स् सायुंज्य स् सलोकतांमाप्रोति। यां द्वितीयां मुप्दधांति। अन्तिरक्षिलोकं तयाऽभिजंयति। अथो या अन्तिरक्षिलोके देवताः। तासा स् सायुंज्य सलोकतांमाप्रोति। यां तृतीयां मुप्दधांति। अमुं तयां लोकमभिजंयति॥ ५९॥

अथो या अमुष्मिँ छोके देवताँः। तासा क्रम्यंज्य क्रम्लोकतां माप्रोति। अथो या अमूरितंरा अष्टादंश। य एवामी उरवंश्च वरीया क्रम्योरुषुं च वरीयः सु च लोकेषुं भवति। याँ ऽग्निं नांचिकेतं चिनुते। य उं चैनमेवं वेदं। संवत्सरो वा अग्निर्माचिकेतः। तस्यं वसन्तः शिरंः॥६०॥

ग्रीष्मो दक्षिणः पृक्षः। वर्षा उत्तरः। श्रत्पुच्छम्। मासाः कर्मकाराः। अहोरात्रे शंतरुद्रीयम्। पूर्जन्यो वसोर्धारां। यथा वै पूर्जन्यः सुवृष्टं वृष्ट्वा। प्रजाभ्यः सर्वान्कामान्त्सम्पूरयंति। प्वमेव स तस्य सर्वान्कामान्त्सम्पूरयंति। योऽग्निं नांचिकेतं चिनुते॥६१॥

य उं चैनमेवं वेदं। संवृत्सरो वा अग्निर्नाचिकेतः। तस्यं वस्तः शिरंः। ग्रीष्मो दक्षिणः पृक्षः। वृर्षाः पुच्छम्। श्ररदुत्तंरः पृक्षः। हेमन्तो मध्यम्। पूर्वपृक्षाश्चितंयः। अपुरपृक्षाः पृरीषम्। अहोरात्राणीष्टंकाः। एष वाव सौंऽग्निरंग्निमयंः

पुनर्णवः। अग्निमयो हु वै पुनर्णवो भूत्वा। स्वर्गं लोकमेति। आदित्यस्य सायुंज्यम्। योंऽग्निं नांचिकेतं चिंनुते। य उं चैनमेवं वेदे॥६२॥

[१०]

॥इति कृष्णयजुर्वेदीयतैत्तितरीय काठके द्वितीयः प्रश्नः समाप्तः॥२॥

॥ तृतीयः प्रश्नः॥

तुभ्यं ता अंङ्गिरस्तमाऽश्याम् तं कामंमग्ने। आशांनां त्वा विश्वा आशाः। अनुं नोऽद्यानुंमित्रिरिन्वदंनुमते त्वम्। कामो भूतस्य काम्स्तदग्रें। ब्रह्मं जज्ञानं पिता विराजांम्। यज्ञो रायोऽयं यज्ञः। आपो भूद्रा आदित्पंश्यामि। तुभ्यं भरिन्त् यो देह्यः। पूर्वं देवा अपंरेण प्राणापानौ। हृव्यवाहु इस्विष्टम्॥१॥

-[8]

देवेभ्यो वै स्वर्गो लोकस्तिरोऽभवत्। ते प्रजापंतिमब्रुवन्। प्रजापते स्वर्गो वै नों लोकस्तिरोऽभूत्। तमन्विच्छेतिं। तं यंज्ञऋतुभिरन्वैच्छत्। तं यंज्ञऋतुभिर्नान्वंविन्दत्। तमिष्टिंभिरन्वैच्छत्। तमिष्टिंभिरन्वंविन्दत्। तदिष्टींनामिष्टित्वम्। एष्टंयो हु वै नामं। ता इष्टंय इत्याचंक्षते प्रोक्षंण। प्रोक्षंप्रिया इव हि देवाः॥२॥ तमाशाँऽब्रवीत्। प्रजांपत आशया वै श्राँम्यसि। अहमु वा आशाँऽस्मि। मां नु यंजस्व। अथं ते सृत्याऽऽशां भविष्यति। अनुं स्वर्गं लोकं वेत्स्यसीति। स एतम्ग्रये कामांय पुरोडाशंमृष्टाकंपालं निरंवपत्। आशायै चुरुम्। अनुंमत्ये चुरुम्। ततो वै तस्यं सृत्याऽऽशांऽभवत्। अनुं स्वर्गं लोकमंविन्दत्। सृत्या हु वा अस्यऽऽशां भवति। अनुं स्वर्गं लोकं विन्दति। य एतेन हुविषा यजंते। य उं चैनदेवं वेदं। सोऽत्रं जुहोति। अग्रये कामांय स्वाहाऽऽशाये स्वाहाँ। अनुंमत्ये स्वाहाँ प्रजापंतये स्वाहाँ। स्वर्गायं लोकाय स्वाहाऽग्रयें स्विष्टकृते स्वाहेतिं॥३॥

तं कामोंऽब्रवीत्। प्रजांपते कामेंन वै श्रांम्यसि। अहमु वै कामोंऽस्मि। मां नु यंजस्व। अर्थ ते सृत्यः कामों भविष्यति। अनुं स्वर्गं लोकं वेत्स्यसीति। स एतम्ग्रये कामांय पुरोडाशंमृष्टाकंपालं निरंवपत्। कामांय चरुम्। अनुंमत्ये चरुम्। ततो वे तस्यं सृत्यः कामोंऽभवत्। अनुं स्वर्गं लोकमंविन्दत्। सृत्यो हु वा अंस्य कामों भवति। अनुं स्वर्गं लोकं विन्दति। य एतेन हिवषा यजंते। य उं चैनदेवं वेदं। सोऽत्रं जुहोति। अग्नये कामांय स्वाहा कामांय स्वाहाँ। अनुंमत्ये स्वाहाँ प्रजापंतये स्वाहाँ। स्वर्गाय लोकाय स्वाहाऽग्नये स्विष्टकृते स्वाहेति॥४॥

तं ब्रह्मांब्रवीत्। प्रजांपते ब्रह्मणा वै श्रांम्यसि। अहमु

वै ब्रह्माँस्मि। मां नु यर्जस्व। अर्थ ते ब्रह्मण्वान् युज्ञो भीविष्यति। अनुं स्वृगं लोकं वेत्स्यसीति। स एतम्ग्रये कामाय पुरोडाशंमृष्टाकंपालं निरंवपत्। ब्रह्मणे चुरुम्। अनुंमत्ये चुरुम्। ततो वै तस्यं ब्रह्मण्वान् युज्ञोऽभवत्। अनुं स्वृगं लोकमंविन्दत्। ब्रह्मण्वान् हु वा अस्य युज्ञो भविति। अनुं स्वृगं लोकं विन्दति। य एतेनं हृविषा यज्ञते। य उं चैनदेवं वेदे। सोऽत्रं जुहोति। अग्रये कामाय स्वाहा ब्रह्मणे स्वाहाँ। अनुंमत्ये स्वाहाँ प्रजापंतये स्वाहाँ। स्वृगाय लोकाय स्वाहाऽग्रयें स्विष्टकृते स्वाहेति॥५॥

तं युज्ञौऽब्रवीत्। प्रजांपते युज्ञेन वै श्राम्यसि। अहमु वै युज्ञौऽस्मि। मां नु यंजस्व। अर्थ ते सृत्यो युज्ञो भिविष्यति। अनुं स्वर्गं लोकं वेत्स्यसीति। स एतम् अये कामाय पुरोडाशंमृष्टाकंपालं निरंवपत्। युज्ञायं चुरुम्। अनुंमत्ये चुरुम्। ततो वै तस्यं सृत्यो युज्ञोऽभवत्। अनुं स्वर्गं लोकमंविन्दत्। सृत्यो हु वा अंस्य युज्ञो भंवति। अनुं स्वर्गं लोकं विन्दति। य एतेनं हृविषा यज्ञते। य उं चैनदेवं वेदं। सोऽत्रं जुहोति। अग्रये कामाय स्वाहां युज्ञाय स्वाहां। अनुंमत्ये स्वाहां प्रजापंतये स्वाहां। स्वर्गायं लोकाय स्वाहाऽग्रयें स्विष्टकृते स्वाहेति॥६॥

तमापौंऽब्रुवन्। प्रजापतेऽप्सु वै सर्वे कामाः श्रिताः। वयमु वा आपः स्मः। अस्मानु यंजस्व। अथ त्वयि सर्वे कामाः

श्रियष्यन्ते। अनुं स्वर्गं लोकं वेत्स्यसीति। स एतम्ग्रये कामाय पुरोडाशंमृष्टाकंपालं निरंवपत्। अन्ध्रश्वरुम्। अनुंमत्ये च्रुम्। ततो वे तस्मिन्त्सर्वे कामां अश्रयन्त। अनुं स्वर्गं लोकमंविन्दत्। सर्वे हु वा अस्मिन्कामाः श्रयन्ते। अनुं स्वर्गं लोकं विन्दति। य एतेनं हुविषा यजंते। य उं चैनदेवं वेदे। सोऽत्रं जुहोति। अग्रये कामाय स्वाहाऽन्धः स्वाहाँ। अनुंमत्ये स्वाहाँ प्रजापंतये स्वाहाँ। स्वर्गायं लोकाय स्वाहाऽग्रयें स्विष्टकृते स्वाहेति॥७॥

तम्भिर्बिल्मानंब्रवीत्। प्रजांपतेऽग्नये वै बंलिमते सर्वाणि भूतानिं बुलि॰ हंरन्ति। अहम् वा अग्निर्बिल्मानंस्मि। मां नु यंजस्व। अथं ते सर्वाणि भूतानिं बुलि॰ हंरिष्यन्ति। अनुं स्वर्गं लोकं वेत्स्यसीतिं। स एतम्ग्नये कामांय पुरोडाशंमृष्टाकंपालं निरंवपत्। अग्नयं बिल्मते चुरुम्। अनुंमत्ये चुरुम्। ततो वै तस्मै सर्वाणि भूतानिं बुलिमहरन्। अनुं स्वर्गं लोकमंविन्दत्। सर्वाणि भूतानिं बुलिमहरन्। अनुं स्वर्गं लोकमंविन्दत्। सर्वाणि ह् वा अस्मै भूतानिं बुलि॰ हंरन्ति। अनुं स्वर्गं लोकं विन्दति। य एतेनं हिवषा यजते। य उं चैनदेवं वेदं। सोऽत्रं जुहोति। अग्नये कामांय स्वाहाऽग्नये बिल्मते स्वाहाँ। अनुंमत्ये स्वाहाँ प्रजापंतये स्वाहाँ। स्वर्गायं लोकाय स्वाहाऽग्नये स्विष्टकृते स्वाहेति॥८॥

तमनुंवित्तिरब्रवीत्। प्रजांपते स्वर्गं वै लोकमनुंविवित्सिस्। अहमु वा अनुंवित्तिरिस्मा मां नु यंजस्व। अर्थ ते स्त्याऽनुंवित्तिर्भविष्यिति। अनुं स्वर्गं लोकं वेत्स्यसीति। स एतम्ग्रये कामांय पुरोडाशंम्ष्टाकंपालं निरंवपत्। अनुंवित्त्यै चरुम्। अनुंमत्ये चरुम्। ततो वे तस्यं सत्याऽनुंवित्तिरभवत्। अनुं स्वर्गं लोकमंविन्दत्। सत्या हु वा अस्यानुंवित्तिरभवति। अनुं स्वर्गं लोकं विन्दति। य एतेनं हुविषा यजंते। य उं चैनदेवं वेदं। सोऽत्रं जुहोति। अग्रये कामांय स्वाहाऽनुंवित्त्ये स्वाहाँ। अनुंमत्ये स्वाहाँ प्रजापंतये स्वाहाँ। स्वर्गायं लोकाय स्वाहाऽग्रये स्विष्टकृते स्वाहेति॥९॥

ता वा एताः सप्त स्वर्गस्यं लोकस्य द्वारंः। दिवःश्येनयोऽनुं-वित्तयो नामं। आशाँ प्रथमाः रक्षिति। कामों द्वितीयाँम्। ब्रह्मं तृतीयाँम्। यज्ञश्चंतुर्थीम्। आपंः पश्चमीम्। अग्निर्बलिमान्त्षष्ठीम्। अनुंवित्तिः सप्तमीम्। अनुं ह् वै स्वर्गं लोकं विन्दिति। कामचारौंऽस्य स्वर्गे लोके भविति। य एताभिरिष्टिभिर्यजंते। य उं चैना एवं वेदं। तास्वंन्विष्टि। पष्ठौहीवरां दंद्यात्कुर्सं चं। स्त्रियैं चाऽऽभारः समृंस्त्रै॥१०॥

[२]

तपंसा देवा देवतामग्रं आयन्। तप्सर्षयः स्वरन्वंविन्दन्। तपंसा सपत्नान्प्रणुदामारातीः। येनेदं विश्वं परिभूतं यदस्ति। प्रथम्जं देव हिवर्षां विधेम। स्वयम्भु ब्रह्मं पर्मं तपो यत्। स एव पुत्रः स पिता स माता। तपों ह यक्षं प्रथम सम्बंभूव। श्रद्धया देवो देवत्वमंश्रुते। श्रद्धा प्रतिष्ठा लोकस्यं देवी॥११॥

सा नो जुषाणोपं यज्ञमागाँत्। कार्मवत्साऽमृतं दुहांना। श्रद्धा देवी प्रथमजा ऋतस्यं। विश्वंस्य भूत्री जगंतः प्रतिष्ठा। ता श्रद्धा ह्विषां यजामहे। सा नो लोकम्मृतं दधातु। ईशांना देवी भुवंनस्याधिपत्नी। आगांत्सत्य ह्विरिदं जुंषाणम्। यस्माँद्देवा जंजिरे भुवंनं च विश्वं। तस्मै विधेम ह्विषां घृतेनं॥१२॥

यथां देवैः संधुमादं मदेम। यस्यं प्रतिष्ठोर्वन्तिरंक्षम्। यस्माँद्वेवा जंजिरे भुवंनं च सर्वे। तत्सत्यमर्चदुपं यज्ञं न आगात। ब्रह्माऽऽहंतीरुपमोदंमानम्। मनसो वशे सर्वमिदं बंभूव। नान्यस्य मनो वश्मान्वंयाय। भीष्मो हि देवः सहंसः सहीयान्। स नो जुषाण उपं यज्ञमागात्। आकृतीनामधिपतिं चेतंसां च॥१३॥

सङ्कल्पजूंतिं देवं विपश्चिम्। मनो राजांनिमृह वर्धयंन्तः। उपहुवैंऽस्य सुमृतौ स्यांम। चरंणं प्वित्रं वितंतं पुराणम्। येनं पूतस्तरंति दुष्कृतानिं। तेनं प्वित्रंण शुद्धेनं पूताः। अतिं पाप्मान्मरांतिं तरेम। लोकस्य द्वारंमिर्चिमत्पवित्रम्ं।

ज्योतिष्मुद्भाजीमानं महीस्वत्। अमृतिस्य धारी बहुधा दोहीमानम्। चरेणं नो लोके सुधितां दधातु। अग्निर्मूर्धा भुविः। अनु नोऽद्यानुमितिरन्विदेनुमते त्वम्। हृव्यवाह् इ स्विष्टम्॥१४॥

[٤].

देवेभ्यो वै स्वर्गो लोकस्तिरोऽभवत्। ते प्रजापंतिमब्रुवन्। प्रजापते स्वर्गो वै नो लोकस्तिरोऽभूत्। तमन्विच्छेति। तं यंज्ञऋतुभिरन्वैच्छत्। तं यंज्ञऋतुभिर्नान्वंविन्दत्। तिमिष्टिभि-रन्वैच्छत्। तिमिष्टिभिरन्वंविन्दत्। तिदिष्टीनामिष्टित्वम्। एष्टंयो ह् वै नामं। ता इष्टंय इत्याचंक्षते प्रोक्षेण। प्रोक्षंप्रिया इव हि देवाः॥१५॥

तं तपौंऽब्रवीत्। प्रजांपते तपंसा वै श्रांम्यसि। अहमु वै तपौंऽस्मि। मां न यंजस्व। अथं ते सत्यं तपों भविष्यति। अनुं स्वर्गं लोकं वेत्स्यसीतिं। स एतमाँग्नेयमृष्टाकंपालं निरंवपत्। तपंसे चरुम्। अनुंमत्यै चरुम्। ततो वै तस्यं सत्यं तपोंऽभवत्। अनुं स्वर्गं लोकमंविन्दत्। सत्य ह वा अस्य तपों भवति। अनुं स्वर्गं लोकं विन्दति। य एतेनं ह्विषा यजंते। य उं चैनदेवं वेदं। सोऽत्रं जुहोति। अग्नये स्वाहा तपंसे स्वाहां। अनुंमत्यै स्वाहां प्रजापंतये स्वाहां। स्वर्गायं लोकाय स्वाहाऽग्नयें स्विष्टकृते स्वाहेतिं॥१६॥

त इश्रद्धा ऽब्रंवीत्। प्रजापते श्रद्धया वै श्राम्यसि। अहम् वै

श्रद्धाऽस्मि। मां नु यंजस्व। अथं ते स्तया श्रद्धा भंविष्यति। अनुं स्वर्गं लोकं वेत्स्यसीति। स एतमाँग्नेयमृष्टाकंपालं निरंवपत्। श्रद्धायें चरुम्। अनुंमत्ये चरुम्। ततो वे तस्य स्त्या श्रद्धाऽभंवत्। अनुं स्वर्गं लोकमंविन्दत्। स्त्या हु वा अस्य श्रद्धा भंवति। अनुं स्वर्गं लोकं विन्दति। य एतेनं ह्विषा यजंते। य उं चैनदेवं वेदं। सोऽत्रं जुहोति। अग्नये स्वाहां श्रद्धाये स्वाहां। अनुंमत्ये स्वाहां प्रजापंतये स्वाहां। स्वर्गायं लोकाय स्वाहाऽग्नयें स्विष्टकृते स्वाहेति॥१७॥

तः स्त्यमंत्रवीत्। प्रजापते स्त्येन् वै श्राम्यसि। अहमु वै स्त्यमंस्मि। मां नु यंजस्व । अथं ते स्त्यः स्त्यं भंविष्यति। अनुं स्वृगं लोकं वेत्स्यसीति। स पृतमांग्नेयमृष्टाकंपालं निरंवपत्। स्त्यायं चुरुम्। अनुंमत्यै चुरुम्। ततो वै तस्यं स्त्यः स्त्यमंभवत्। अनुं स्वृगं लोकमंविन्दत्। सत्यः हु वा अस्य स्त्यं भंवति। अनुं स्वृगं लोकं विन्दति। य पृतेनं हृविषा यज्ते। य उं चैनदेवं वेदं। सोऽत्रं जुहोति। अग्नये स्वाहां स्त्याय स्वाहां। अनुंमत्ये स्वाहां प्रजापंतये स्वाहां। स्वृगायं लोकाय स्वाहाऽग्नये स्विष्टकृते स्वाहतिं॥१८॥

तं मनों ऽब्रवीत्। प्रजांपते मनसा वै श्रांम्यसि। अहमु वै मनों ऽस्मि। मां नु यंजस्व। अर्थ ते सृत्यं मनों भविष्यति। अनुं स्वृगं लोकं वेत्स्यसीतिं। स एतमां ग्रेयमृष्टाकंपालुं निरंवपत्। मनंसे चुरुम्। अनुंमत्यै चुरुम्। ततो वै तस्यं सत्यं मनों उभवत्। अनुं स्वृगं लोकमंविन्दत्। सृत्यः हु वा अस्य मनों भवति। अनुं स्वृगं लोकं विन्दति। य एतेनं हृविषा यजते। य उं चैनदेवं वेदं। सोऽत्रं जुहोति। अग्रये स्वाहा मनंसे स्वाहां। अनुंमत्यै स्वाहां प्रजापंतये स्वाहां। स्वृगायं लोकाय स्वाहाऽग्रयें स्विष्ट्कृते स्वाहेतिं॥१९॥

तं चरणमब्रवीत्। प्रजांपते चरणेन् वै श्रांम्यसि। अहम् वै चर्रणमस्मि। मां नु यंजस्व। अर्थ ते स्त्यं चर्रणं भविष्यति। अनुं स्वर्गं लोकं वेत्स्यसीति। स एतमाँग्नेयमृष्टाकंपालं निरंवपत्। चर्रणाय च्रम्। अनुंमत्ये च्रम्। ततो वै तस्यं स्त्यं चर्रणमभवत्। अनुं स्वर्गं लोकमंविन्दत्। स्त्यः ह् वा अस्य चर्रणं भवति। अनुं स्वर्गं लोकं विन्दति। य एतेनं ह्विषा यजते। य उं चैनदेवं वेदं। सोऽत्रं जुहोति। अग्नये स्वाहा चर्रणाय स्वाहां। अनुंमत्ये स्वाहां प्रजापंत्रये स्वाहां। स्वर्गायं लोकाय स्वाहाऽग्नयें स्विष्टकृते स्वाहेति॥२०॥

ता वा एताः पश्चं स्वर्गस्यं लोकस्य द्वारंः। अपांघा अनुवित्तयो नामं। तपंः प्रथमा र रक्षिति। श्रुद्धा द्वितीयाँम्। सत्यं तृतीयाँम्। मनश्चतुर्थीम्। चरणं पश्चमीम्। अनुं हु वै स्वर्गं लोकं विन्दति। कामुचारों उस्य स्वर्गे लोके भंवति। य एताभिरिष्टिंभिर्यजंते। य उ चैना एवं वेदं। तास्वन्विष्टि। पृष्ठौहीव्ररां दंद्यात्कर्सं चं। स्त्रियें चाऽऽभार र समृद्धौ॥२१॥ ब्रह्म वै चतुंर्होतारः। चतुंर्होतृभ्योऽधियज्ञो निर्मितः। नैन र् श्रमम्। नाभिचंरितमागंच्छति। य एवं वेदं। यो हृ वै चतुंर्होतृणां चतुर्होतृत्वं वेदं। अथो पश्चंहोतृत्वम्। सर्वा हास्मै दिशः कल्पन्ते। वाचस्पतिर्होता दशंहोतॄणाम्। पृथिवी होता चतुंर्होतॄणाम्॥२२॥

अग्निर्होता पश्चेहोतॄणाम्। वाग्घोता षह्वोतॄणाम्। महाहंवि्रहोतां सप्तहोतॄणाम्। एतद्वे चतुंर्होतृणां चतुर्होतृत्वम्। अथो पश्चेहोतृत्वम्। सर्वा हास्मै दिशेः कल्पन्ते। य एवं वेदे। एषा वै संविवद्या। एतद्वेषुजम्। एषा पङ्किः स्वर्गस्यं लोकस्यांश्वसाऽयंनिः स्रुतिः॥२३॥

एतान् योऽध्यैत्यछंदिर्द्रशे यावंत्तरसम्। स्वंरेति। अनुपृब्रवः सर्वमायुरेति। विन्दते प्रजाम्। रायस्पोषं गौपृत्यम्। ब्रह्मवर्चसी भंवति। एतान् योऽध्यैति। स्पृणोत्यात्मानम्। प्रजां पितृन्। एतान् वा अंरुण औपवेशिर्विदां चंकार॥२४॥

एतैरंधिवादमपांजयत्। अथो विश्वं पाप्मानम्। स्वंर्ययो। एतान्योऽध्यैतिं। अधिवादं जयति। अथो विश्वं पाप्मानम्। स्वंरेति। एतैर्ग्निं चिन्वीत स्वर्गकांमः। एतैरायुंष्कामः। प्रजापृशुकांमो वा॥२५॥

पुरस्ताद्दशंहोतार्मुदंश्चमुपंदधाति यावत्पदम्। हृदंयं यजुंषी

पत्यौ च। दक्षिणतः प्राश्चं चतुर्होतारम्। पश्चादुर्दश्चं पश्चेहोतारम्। उत्तर्तः प्राश्चन् षड्ढोतारम्। उपिरेष्टात्प्राश्चन्ं सप्तहोतारम्। हृदंयं यजून्षि पत्यश्च । यथावकाशं ग्रहान्। यथावकाशं प्रतिग्रहाँ ह्यों कं पृणाश्चं। सर्वा हास्यैता देवताः प्रीता अभीष्टां भवन्ति॥२६॥

सदेवम्भिं चिंनुते। र्थसंम्मितश्चेत्व्यंः। वज्रो वै रथंः। वज्रेणैव पाप्मानं भ्रातृंव्यः स्तृणुते। पृक्षः संम्मितश्चेत्व्यंः। एतावान् वै रथंः। यावंत्पृक्षः। र्थसंम्मितमेव चिंनुते। इममेव लोकं पंशुबन्धेनाभिजंयति। अथो अग्निष्टोमेनं॥२७॥

अन्तरिक्षमुक्थ्येन। स्वरितरात्रेणं। सवौँ होकार्नहीनेनं। अथों स्त्रेणं। वरो दक्षिणा। वरेणैव वर ईस्पृणोति। आत्मा हि वरेः। एकंवि श्वितिदक्षिणा ददाति। एकवि श्वो वा इतः स्वर्गो लोकः। प्रस्वर्गं लोकमाँ प्रोति॥ २८॥

असार्वादित्य एंकविश्वाः। अमुमेवाऽऽदित्यमाँप्नोति। शृतं ददाति। शृतायुः पुरुषः शृतेन्द्रियः। आयुंष्येवेन्द्रिये प्रतितिष्ठति। सहस्रं ददाति। सहस्रंसम्मितः स्वर्गो लोकः। स्वर्गस्यं लोकस्याभिजित्ये। अन्विष्टकं दक्षिणा ददाति। सर्वाणि वयाश्सा २९॥

सर्वस्याऽऽध्यै। सर्वस्यावंरुद्धै। यदि न विन्देतं। मन्थानेतावतो दंद्यादोदनान् वाँ। अश्रुते तं कामम्। यस्मै कार्मायाग्निश्चीयतें। पृष्ठौहीं त्वन्तर्वतीं दद्यात्। सा हि सर्वाणि वया रेसि। सर्वस्याऽऽस्यै। सर्वस्यावंरुद्धौ॥३०॥

हिरंण्यं ददाति। हिरंण्यज्योतिरेव स्वर्गं लोकमेति। वासों ददाति। तेनऽऽयुः प्रतिरते। वेदितृतीये यंजेत। त्रिषंत्या हि देवाः। स संत्यमृग्निं चिनुते। तदेतत्पंशुब्न्धे ब्राह्मणं ब्रूयात्। नेतरेषु युज्ञेषुं। यो ह वै चतुरहोतॄननुसव्नं तंपियत्व्यान् वेदं॥३१॥

तृप्यंति प्रजयां पृशुभिः। उपैन सोमपीथो नंमति। एते वै चतुंरहोतारोऽनुसव्नं तंपियत्व्याः। ये ब्राह्मणा बंहुविदः। तेभ्यो यद्दक्षिणा न नयेत्। दुरिष्ट स्यात्। अग्निमंस्य वृश्जीरन्। तेभ्यो यथाश्रद्धं दंद्यात्। स्विष्टमेवेतित्क्रंयते। नास्याग्निं वृंञ्जते॥३२॥

हिर्ण्येष्टको भंवति। यावंदुत्तममंङ्गुलिकाण्डं यंज्ञप्रुषा सिमंतम्। तेजो हिर्ण्यम्। यदि हिर्ण्यं न विन्देत्। शर्करा अक्ता उपंदध्यात्। तेजो घृतम्। सतेजसमेवाग्निं चिनुते। अग्निं चित्वा सौत्रामण्या यंजेत मैत्रावरुण्या वाँ। वीर्येण वा एष व्यृध्यते। योऽग्निं चिनुते॥३३॥ यावंदेव वीर्यम्। तदंस्मिन्दधाति। ब्रह्मणः सायुंज्यश् सलोकतामाप्नोति। एतासामेव देवतानाः सायुंज्यम्। सार्षिताः समानलोकतामाप्नोति। य एतम्ग्निं चिनुते।

य उं चैनमेवं वेदं। एतदेव सांवित्रे ब्राह्मणम्। अथों नाचिकेते॥३४॥

[٤]

यचामृतं यच मर्त्यम्। यच प्राणिति यच न। सर्वास्ता इष्टंकाः कृत्वा। उपं कामृद्घां दधे। तेनर्षिणा तेन ब्रह्मंणा। तयां देवतंयाऽङ्गिर्स्वद्भुवा सींद। सर्वाः स्त्रियः सर्वांन्पुर्सः। सर्वं न स्त्रीपुमं च यत्। सर्वास्ताः। यावंन्तः पार्सवो भूमैः॥३५॥ सङ्घांता देवमाययां। सर्वास्ताः। यावंन्तः ऊषाः पशूनाम्। पृथिव्यां पृष्टिर्हिताः। सर्वास्ताः। यावंतीः सिकंताः सर्वाः। अप्स्वंन्तश्च याः श्रिताः। सर्वास्ताः। यावंतीः शकंरा धृत्यै। अस्यां पृथिव्यामधि॥३६॥

सर्वास्ताः। यावन्तोऽश्मांनोऽस्यां पृंथिव्याम्। प्रतिष्ठासु प्रतिष्ठिताः। सर्वास्ताः। यावंतीर्वीरुधः सर्वाः। विष्ठिताः पृथिवीमन्। सर्वास्ताः। यावंतीरोषंधीः सर्वाः। विष्ठिताः पृथिवीमन्। सर्वास्ताः॥३७॥

यार्वन्तो वनस्पतंयः। अस्यां पृथिव्यामिषं। सर्वास्ताः। यार्वन्तो ग्राम्याः पृशवः सर्वै। आरुण्याश्च ये। सर्वास्ताः। ये द्विपादश्चतुंष्पादः। अपादं उदरसपिणः। सर्वास्ताः। यावदाञ्जनमुच्यते॥३८॥

देवत्रा यर्च मानुषम्। सर्वास्ताः॥ यावंत्कृष्णायंसु सर्वम्।

देवत्रा यर्च मानुषम्। सर्वास्ताः। यावेश्लोहायंस् सर्वम्। देवत्रा यर्च मानुषम्। सर्वास्ताः। सर्वर् सीस्र सर्वं त्रपुं। देवत्रा यर्च मानुषम्॥३९॥

सर्वास्ताः। सर्वे १ हिरंण्य १ रज्तम्। देवत्रा यर्च मानुषम्। सर्वास्ताः। सर्वे १ सुर्वर्णे १ हिरंतम्। देवत्रा यर्च मानुषम्। सर्वास्ता इष्टंकाः कृत्वा। उपं कामदुघां दधे। तेनर्षिणा तेन ब्रह्मणा। तयां देवतयाऽङ्गिरस्बद्धवा सींद॥४०॥

[६]

सर्वा दिशों दिक्षु। यचान्तर्भूतं प्रतिष्ठितम्। सर्वास्ता इष्टंकाः कृत्वा। उपं कामदुघां दधे। तेनर्षिणा तेन् ब्रह्मणा। तयां देवतंयाऽङ्गिरस्बद्धुवा सींद। अन्तरिक्षं च केवंलम्। यचास्मिन्नंन्तराहितम्। सर्वास्ताः। आन्तरिक्ष्यंश्च याः प्रजाः॥४१॥

गन्धर्वाप्सरसंश्च ये। सर्वास्ताः। सर्वानुदारान्त्स्लिलान्। अन्तरिक्षे प्रतिष्ठितान्। सर्वास्ताः। सर्वानुदारान्त्संलिलान्। स्थावराः प्रोष्यांश्च ये। सर्वास्ताः। सर्वां धुनिष् सर्वान्ध्वष्टसान्। हिमो यर्च शीयते॥४२॥

सर्वास्ताः। सर्वान्मरीचीन् वितंतान्। नीहारो यर्च शीयतें। सर्वास्ताः। सर्वा विद्युतः सर्वान्त्स्तनियृत्न्। ह्रादुनीर्यचे शीयतें। सर्वास्ताः। सर्वाः स्रवंन्तीः स्रितंः। सर्वमप्सुच्रं च् यत्। सर्वास्ताः॥४३॥

याश्च कूप्या याश्चं नाद्याः समुद्रियाः। याश्चं वैश्नन्तीरुत प्रांस्चीर्याः। सर्वास्ताः। ये चोत्तिष्ठंन्ति जीमूताः। याश्च वर्षन्ति वृष्टयः। सर्वास्ताः। तप्स्तेजं आकाशम्। यचांऽऽकाशे प्रतिष्ठितम्। सर्वास्ताः। वायुं वयार्ससे सर्वाणि॥४४॥

अन्तिरिक्षचरं च यत्। सर्वास्ताः। अग्निश् सूर्यं चन्द्रम्। मित्रं वर्रुणं भगम्। सर्वास्ताः। सृत्यः श्रुद्धां तपो दमम्। नामं रूपं च भूतानाम्। सर्वास्ता इष्टंकाः कृत्वा। उपं कामृदुघां दधे। तेनर्षिणा तेन ब्रह्मणा। तयां देवतंयाऽङ्गिर्स्वद्भुवा सीद॥४५॥

[0]

सर्वान्दिव् सर्वान्देवान्दिवि। यचान्तर्भूतं प्रतिष्ठितम्। सर्वास्ता इष्टंकाः कृत्वा। उपं कामदुघा दधे। तेनर्षिणा तेन् ब्रह्मणा। तयां देवत्याऽङ्गिर्स्वद्भुवा सीद। यावंतीस्तारंकाः सर्वाः। वितंता रोचने दिवि। सर्वास्ताः। ऋचो यजूर्षेषि सामानि॥४६॥

अथर्वाङ्गिरसंश्च ये। सर्वास्ताः। इतिहासपुराणं चं। सर्पदेवजनाश्च ये। सर्वास्ताः। ये चं लोका ये चांलोकाः। अन्तर्भूतं प्रतिष्ठितम्। सर्वास्ताः। यच् ब्रह्म यचाँब्रह्म। अन्तर्ब्रह्मन्प्रतिष्ठितम्॥४७॥ सर्वास्ताः। अहोरात्राणि सर्वाणि। अर्धमासाः श्च केवंलान्। सर्वास्ताः। सर्वानृतून्त्सर्वान्मासान्। संवृत्सरं च केवंलम्। सर्वास्ताः। सर्वं भूतः सर्वं भव्यम्। यचातोऽधिभविष्यति। सर्वास्ता इष्टंकाः कृत्वा। उपं कामदुघां दधे। तेनर्षिणा तेन ब्रह्मणा। तयां देवतंयाऽङ्गिर्स्वद्भुवा सीद॥४८॥

| ८ |

ऋचां प्राचीं मह्ती दिगुंच्यते। दक्षिंणामाहुर्यजुंषामपाराम्। अर्थवणामङ्गिरसां प्रतीचीं। साम्नामुदींची मह्ती दिगुंच्यते। ऋग्भिः पूर्वाह्ने दिवि देव ईयते। यजुर्वेदे तिष्ठति मध्ये अहंः। साम्वेदेनांऽस्तम्ये महींयते । वेदैरशूंन्यस्त्रिभिरेति सूर्यः। ऋग्भ्यो जाता र संव्शो मूर्तिमाहः। सर्वा गतिंयांजुषी हैव शर्श्वत्॥४९॥

सर्वं तेजः सामरूप्य हं शश्वत्। सर्व हेदं ब्रह्मणा हैव सृष्टम्। ऋग्भ्यो जातं वैश्यं वर्णमाहः। युजुर्वेदं क्षंत्रियस्यां ऽऽहुर्योनिम्। सामवेदो ब्राह्मणानां प्रसूतिः। पूर्वे पूर्वेभ्यो वर्च एतदूचः। आदर्शमृग्निं चिन्वानाः। पूर्वे विश्वसृजोऽमृताः। शृतं वर्षसहस्राणि। दीक्षिताः सत्रमांसत॥५०॥

तपं आसीद्गृहपंतिः। ब्रह्मं ब्रह्माऽभंवत्स्वयम्। सृत्य ५

ह् होतैषामासीत्। यद्विश्वसृज् आसंत। अमृतंमेभ्य उदंगायत्। सहस्रं परिवत्सरान्। भूत १ हं प्रस्तोतैषामासीत्। भविष्यत्प्रतिं चाहरत्। प्राणो अध्वर्युरंभवत्। इद १ सर्व १ सिषांसताम्॥५१॥

अपानो विद्वानावृतंः। प्रतिप्रातिष्ठदध्वरे। आर्तवा उपगातारंः। सदस्यां ऋतवोऽभवन्। अर्धमासाश्च मासाश्च। चमसाध्वर्यवोऽभवन्। अश्ररंसद्वह्मणस्तेजाः। अच्छावाकोऽभवद्यशः। ऋतमेषां प्रशास्ताऽऽसीत्। यद्विश्वसृज आसंत॥५२॥

ऊर्ज्ञाजांनमुदंवहत्। ध्रुवगोपः सहोऽभवत्। ओजोऽभ्यंष्टौ-द्वाव्यणंः। यद्विश्वसृज् आसंत। अपंचितिः पोत्रीयांमयजत्। नेष्ट्रीयांमयज्ञित्विषिः। आग्नीद्वाद्विदुषीं सत्यम्। श्रद्धा हैवायंजत्स्वयम्। इरा पत्नी विश्वसृजांम्। आकूंतिरिपन-डृविः॥५३॥

इध्म १ ह क्षुचैंभ्य उग्रे। तृष्णा चाऽऽवंहतामुभे। वागेषा १ सुब्रह्मण्याऽऽसींत्। छुन्दोयोगान् विजान्ती। कुल्पृतृत्राणिं तन्वानाऽहंः। सृङ्स्थाश्चं सर्वशः । अहोरात्रे पंशुपाल्यौ। मुहूर्ताः प्रेष्यां अभवन्। मृत्युस्तदंभवद्धाता। शृमितोग्रो विशां पतिः॥५४॥

विश्वसृजंः प्रथमाः स्त्रमांसत। सहस्रंसम् प्रस्तेन यन्तंः। ततो ह जज्ञे भुवंनस्य गोपाः। हिर्ण्मयः शुकुनिर्ब्रह्म

.[3]

नामं। येन सूर्यस्तपंति तेजंसेद्धः। पिता पुत्रेणं पितृमान् योनियोनौ। नावेदविन्मनुते तं बृहन्तम्। सूर्वानुभुमात्मान र सम्पराये। एष नित्यो महिमा ब्राह्मणस्यं। न कर्मणा वर्धते नो कनीयान्॥५५॥

तस्यैवाऽऽत्मा पंद्वित्तं विदित्वा। न कर्मणा लिप्यते पापंकेन। पश्चंपश्चाशतिः संवत्स्राः। पश्चंपश्चाशतिः विश्वंस्रुजाः। विश्वंस्रुजाः सहस्रंसंवत्सरम्। एतेन् वै विश्वंस्रुजं इदं विश्वंमसृजन्त। यद्विश्वमसृंजन्त। तस्माद्विश्वस्रुजंः। विश्वंमेनानन् प्रजायते। ब्रह्मणः सायुंज्यः सलोकतां यन्ति। एतासामेव देवतानाः सायुंज्यम्। सार्थिताः समानलोकतां यन्ति। य एतद्पयन्ति। ये चैन्त्प्राहुः। येभ्यंश्चेन्त्प्राहुः॥५६॥ ॐ॥

॥इति कृष्णयजुर्वेदीयतैत्तिरीयकाठके तृतीयः प्रश्नः समाप्तः॥३॥ ॥इति कृष्णयजुर्वेदीयतैत्तिरीयकाठकं समाप्तम्॥ हरिः ॐ॥